بسم الله الرحمن الرحيم

मुसम्मा बेहि

जा-अल-हक़

व-ज़हक़ल बातिल

1403 हिजरी

फ़ैसल-ए-मसाइल

मुकम्मल दोनों हिस्से

जिसमें मौजूदा ज़माना के आम इख़्तिलाफ़ी मसाइल का निहायत तहक़ीक़ी और दलील के साथ फ़ैसला कर दिया गया है

लेखक

हज़रत मौलाना मुफ़्ती

अहमद यार ख़ाँ

साहब नईमी अलैहिर्रहमा

प्रकाशक

रज़वी किताब घर

425, उर्दू मार्किट, मटिया महल, जामा मस्जिद,

दिल्ली-110006 Phone : 011 - 23264524

ISBN 81-89201-16-9

नाम किताब	:	जा-अल-हक़ व ज़हक़ल-बातिल
प्रकाशक	:	मौलाना मुफ़्ती अहमद यार ख़ाँ नईमी
नाशिर	:	रज़वी किताब घर, दिल्ली-6
बाएहतेमाम	:	हाफ़िज़ मुहम्मद क़मरुद्दीन रज़वी
हिन्दी कर्ता	:	मंज़ूरुल हक़ जलाल निज़ामी
हिन्दी एडीशन	:	पहली बार 2010
कम्पोज़िंग	:	रज़वी कम्प्यूटर प्वाइंट, दिल्ली-6
सफ़हात	:	624
तादाद	:	1100
क़ीमत	:	240

प्रकाशक

रज़वी किताब घर

425, उर्दू मार्किट, मटिया महल, जामा मस्जिद,
दिल्ली-110006 Phone : 011 - 23264524

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

उनवान सफ़ा

उनवान सफ़ा

उनवान सफ़ा

दूसरा हिस्सा

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

अल्हम्दुलिल्लाहि रब्बिल-आलमीन। ख़ालिक़िस्समावाति वल-अर्दीना वस्सलातु वस्सलामु अला मन काना नबीयन व आदमु बैनल-माइ वत्तैय्यिबीन। अज्मलिल-अजमलीन। अकमलिल-अकमलीना सैयदिना मुहम्मदिन व आलेही व अस्हाबेही व अह्ले बैतेही अज्मईन।

दीबाचा

दीने इस्लाम को दुनिया में तशरीफ़ लाए हुए आज तक़रीबन पौने चौदह सौ बरस गुज़रे। इस अरसा में इस पाक दीन ने हज़ारहा बलाओं से मुक़ाबला किया। हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इस लहलहाते हुए चमन पर बहुत सी तेज़ आंधियाँ आईं और अपना-अपना ज़ोर दिखा कर चली गईं। मगर अल्हम्दुलिल्लाह कि यह चमन इसी तरह सर सब्ज़ व शादाब रहा। इस आफ़ताब पर बारहा काले बादल और ग़ुबार आए। मगर यह आफ़ताब इसी तरह चमकता रहा, और क्यों न होता कि रब्ब तआला ख़ुद इस दीन का हाफ़िज़ व नासिर है। ख़ुद फ़रमाता है। **इन्ना नहनु नज़्ज़लनज़्ज़िक्रा व इन्ना लहू लहाफ़िज़ून।** हमने ही क़ुरआन उतारा और हम ही इसके मुहाफ़िज़ हैं।

कभी इस पर यज़ीदी बादल आए और कभी हुज्जाजी ग़ुबार, कभी मामूनी ताक़त ने इसके सामने आने की जुरअत की। और कभी तातारी क़ुव्वतें इससे टकराईं। कभी ख़ार्जी हमले ने इससे मुक़ाबला किया और कभी रफ़्ज़ की ताक़त ने इसको ज़ेर करने की कोशिश की मगर वह सब की सब इस पहाड़ से टकरा कर पाश-पाश हो गईं। और यह पहाड़ इसी तरह अपनी जगह मज़बूती से क़ायम रहा। **व अक़ामहल्लाहु व अदामहा अल्लाह तआला** इसको दाइम व क़ायम रखे।

मगर इन तमाम फ़ित्नों में ज़बरदस्त फ़ित्ना और तमाम मुसीबतों में ख़तरनाक मुसीबत वहाबियों नज्दियों का फ़ित्ना था जिसकी ख़बर मुख़बिरे सादिक़ नबी-ए-अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पहले ही दी थी। और तरह-तरह से इस फ़ित्ना से मुसलमानों को आगाह कर दिया था। चुनांचे मिश्कात जिल्द दोम **बाब ज़िक्रिल-यमने वश्शाम** (सफ़ा 582) में बुख़ारी के हवाले से रिवायत है कि हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि एक दिन दरिया-ए-रहमत मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जोश में है। बारगाहे इलाही में हाथ उठा कर दुआ फ़रमाई जा रही है **अल्लाहुम्मा बारिक लना फ़ी शामिना** ऐ अल्लाह! हमारे लिए हमारे शाम

में बरकत दे **अल्लाहुम्मा बारिक लना फ़ी यमीनेना** ऐ अल्लाह! हमको हमारे यमन में बरकत दे। हाज़िरीन में से कुछ ने अर्ज़ किया **व फ़ी नज्दिना** या रसूलल्लाह! दुआ फरमाएं कि हमारे नज्द में बरकत दे फिर हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने वही दुआ फरमाई। शाम और यमन का जिक्र फ़रमाया मगर नज्द का नाम न लिया। उन्होंने फिर तवज्जोह दिलाई कि **व फ़ी नज्दिना** हुज़ूर यह भी दुआ फरमाए कि नज्द में बरकत हो। ग़रज़ तीन बार यमन और शाम के लिए दुआएं फरमाए। बार-बार तवज्जोह दिलाने पर नज्द को दुआ न फरमाई। बल्कि आख़िर में फरमाया मैं इस अज़्ली महरूम ख़ित्ता को दुआ किस तरह फरमाऊँ। वहाँ तो ज़लज़ले और फ़ित्ने होंगे। और वहाँ शैतानी गरोह पैदा होगा। इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर सैयदे आलम सल्ललल्लाहु अलैहि व सल्लम की निगाहे पाक में दज्जाल के फ़ित्ना के बाद नज्द का फ़ित्ना था। जिससे इस तरह ख़बर दे दी।

इसी तरह मिश्कात जिल्द अव्वल **किताबुल-क़िसास बाब क़त्लु अह्लिर्रदे** (स०309) में ब-हवाला नसाई हज़रत अबू बरज़ह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम एक बार कुछ माले ग़नीमत तक़्सीम फ़रमा रहे हैं। एक शख़्स ने पीछे से अर्ज़ किया या मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) आपने इस तक़्सीम में इंसाफ़ न किया। हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने ग़ज़बनाक होकर फ़रमाया कि हमारे बाद तुमको हम से बढ़ कर कोई आदिल न मिलेगा। फ़िर फ़रमाया कि आख़िर ज़माना में एक क़ौम इससे पैदा होगी जो कुरआन पढ़ेंगे मगर कुरआन उनके हलक़ से नीचे न उतरेगा और इस्लाम से ऐसे निकल जाएंगे जैसे तीर शिकार से। फिर फ़रमाया।

तरजमा :

यानी उनकी पहचान सर मुंडाना है यह निकलते ही रहेंगे यहाँ तक कि उनकी आख़िरी जमाअत दज्जाल के साथ होगी। अगर तुम उन से मिलो तो जान लो कि वह तमाम ख़िल्क़त में बदतर हैं। उसमें उनकी पहचान फरमाई गई है सर मुंडाना, आज भी वहाबी इससे खाली मुश्किल ही से मिलेंगे। कहीं फरमाया कि बुत परस्तों को छोड़ेंगे और मुसलमानों को क़त्ल करेंगे। देखो बुख़ारी जिल्द अव्वल किताबुल-अंबिया मुत्तसिल क़िस्सा याजूज व माजूज। मुस्लिम और मिश्कात बाबुल-मोजज़ात फ़स्ले अव्वल। इसी जगह मिश्कात में यह भी है **लइन अदरकतुहुम ल-अक़्तुलन्नहुम क़त्ला आदिन** अगर उन्हें हम पाते तो क़ौमे आद की तरह क़त्ल फरमा देते आज भी देवबन्दी आम तौर पर हिन्दुओं के साथ हैं। मगर नफ़रत करते हैं तो मुसलमानों से और उनके हमले हमेशा मुसलमानों पर ख़ास कर अह्ले हरमैन पर ही हुए।

इस फरमाने आली के मुताबिक़ बारहवीं सदी में नज्द से मुहम्मद बिन

अब्दुलवह्हाब पैदा हुआ। उसने क्या क्या अह्ले हरमैन व दीगर मुसलमानों पर ज़ुल्म किए। उसकी दास्तान तो सैफुल-जब्बार और बवारिक़े मुहम्मदिया अला अरग़मातुन्नजदीया वग़ैरह कुतुबे तवारीख़ में देखा। उनके कुछ ज़ुल्म अल्लामा शामी ने अपनी किताब रद्दुल-मुख़्तार जिल्द सोम बाबुल-बुग़ात के शुरू में इस तरह ब्यान फरमाए हैं।

तरजमा : जैसे कि हमारे ज़माना में अब्दुलवहाब के मानने वालों का वाक़या हुआ कि यह लोग नज्द से निकले और मक्का व मदीना शरीफ़ पर उन्होंने ग़ल्बा कर लिया। अपने को हंबली मज़्हब की तरफ़ मन्सूब करते थे। लेकिन उनका अक़ीदा यह था कि सिर्फ़ हम ही मुसलमान हैं। और जो हमारे अक़ीदे के ख़िलाफ़ है वह मुश्रिक है। इसलिए उन्होंने अह्ले सुन्नत व जमाअत का क़त्ल जाइज़ समझा और उनके उलमा को क़त्ल किया। यहाँ तक कि अल्लाह ने वहाबियों की शौकत तोड़ी और उनके शहरों को वीरान कर दिया। और इस्लामी लश्करों को उन पर फ़तह दी। यह वाक़या 1233 हिजरी में हुआ।

सैफुल-जब्बार वग़ैरह में उनके ज़ुल्म बे-शुमार ब्यान फरमाए कि मक्का मुकर्रमा व मदीना तैयबा में बे-गुनाहों को बे-दरेग़ क़त्ल किया और हरमैन शरीफ़ैन के रहने वालों की औरतों और लड़कियों से ज़िना किया। उनको ग़ुलाम बनाया उनकी औरतों को अपनी लौंडियाँ, सादाते किराम को बहुत क़त्ल व ग़ारत किया। मस्जिदे नब्वी शरीफ़ के तमाम क़ालीन और झाड़ व फ़ानूस उठा कर नज्द ले गए। तमाम सहाब-ए-किराम और अह्ले बैते इज़ाम की क़ब्रों को गिरा कर ज़मीन से मिला दिया यहाँ तक कि यह भी इरादा किया कि ख़ास गुंबदे ख़ज़रा जिसके गिर्द रोज़ाना सुबह व शाम मलाइका सलात व सलाम पढ़ते हैं उसको भी गिरा दिया जाए मगर जो शख़्स इस बुरी नीयत से रौज़-ए-पाक पर गया उस पर ख़ुदा-ए-पाक ने एक साँप मुक़र्रर फरमा दिया, जिसने उसको हलाक किया। और रब्बुल-आलमीन ने अपने नबी की इस आख़िरी आरामगाह को उन से महफ़ूज़ रखा। ग़र्ज़कि उनके ज़ुल्म बेहद तक्लीफ़ देह हैं जिनके ब्यान से कलेजा मुँह को आता है। यज़ीद ने अह्ले बैत की दुश्मनी उनकी ज़िन्दगी में ही की मगर तेरह सौ बरस के बाद सहाब-ए-किराम और अह्ले बैते इज़ाम को उनकी क़ब्रों में सताना उन वहाबियों के हाथ से हुआ। अब भी जो कुछ इब्ने सऊद ने हरमैन शरीफ़ैन में किया वह हर हाजी पर रौशन है, कि मक्का मुकर्रमा में मैंने ख़ुद अपनी आँखों से देखा कि किसी सहाबी की क़ब्र शरीफ़ का निशान भी नहीं मिलता कि कोई फ़ातेहा भी पढ़ ले। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जाए विलादत में मैंने एक शामियाना लगा हुआ देखा जहाँ कि कुत्ते और गधे

बेतकल्लुफ़ फिर रहे थे। उस जगह पहले एक कुब्बा बना हुआ था जहाँ लोग जाकर नमाज़ें पढ़ते थे और उसकी ज़ियारत करते थे। यह हज़रत आमिना ख़ातून का मकान था और उसी जगह इस्लाम का आफ़ताब चमका। मगर अब उसकी यह बेहुरमती की गई।

यह तो थे अरब के वाक़ियात लेकिन हमको इस वक़्त हिन्दुस्तान से गुफ़्तगू करनी है। दिल्ली में एक शख़्स पैदा हुआ जिसका नाम था मौलवी इस्माईल। उसने मुहम्मद बिन अब्दुल-वहाब नज्दी की **किताबुत्तौहीद** का उर्दू में खुलासा किया। जिसका नाम रखा तक़्वियतुल-ईमान और उसकी हिन्दुस्तान में इशाअत की। वहाबी भी उन्हें शहीद कहते हैं क्योंकि यह हज़रत इसी तक़्वियतुल-ईमान की बदौलत सरहदी पठानों के हाथों क़त्ल हुए। देखो अनवारे आफ़ताब सदाक़त। मगर मश्हूर किया कि सिखों के हाथों मरे।

आला हज़रत रहमतुल्लाह अलैह ने फरमाया :

वह वहाबिया ने जिसे दिया है लक़ब शहीद व ज़बीह का
वह शहीद लैल-ए-नज्द था वह ज़बीहे तेग़े ख़्यार है

अगर सिखों के हाथों क़त्ल हुए होते तो अमृतसर या मश्रिक़ी पंजाब के किसी और शहर में मारे जाते क्योंकि यही जगह सिखों का मरकज़ था। सरहद तो पठानों का मुल्क है वहाँ यह मारे गए। मालूम हुआ कि उन्हें मुसलमानों ने क़त्ल किया और उनकी लाश भी ग़ायब कर दी। इसीलिए उनकी क़ब्र ही नहीं।

इस्माईल के मोतक़ेदीन दो गरोह बने। एक तो वह जिन्होंने इमामों की तक़्लीद का इंकार किया। जो ग़ैर मुक़ल्लिद या वहाबी कहलाते हैं। दूसरे वह हिन्होंने देखा कि इस तरह अपने को ज़ाहिर करने से मुसलमान हम से नफ़रत करते हैं उन्होंने अपने को हन्फ़ी ज़ाहिर किया। नमाज़ रोज़े में हमारी तरह हमारे सामने आए उनको कहते हैं गुलाबी वहाबी या देवबन्दी। भला मेरे आक़ा व मौला महबूबे किब्रिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मोजज़ा तो देखो कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया था कि वहाँ से **क़रनुश्शैतान** यानी शैतानी गरोह निकलेगा। उर्दू में **क़रनुश्शैतान** का तरजमा है देवबन्द। उर्दू में देव कहते हैं शैतान को और बन्द का मतलब गिरोह ताबेदार। या यह इज़ाफ़त मक़्लूबी है यानी बन्द देव शैतान की जगह यानी लेकिन इन दोनों फ़िर्क़ों के अक़ीदे बिल्कुल एक हैं। आमाल में कुछ ज़ाहिरी इख़्तिलाफ़ है दोनों मुहम्मद बिन अब्दुलवहाब को अच्छा जानते हैं। उसके अक़ाइद के हामी। चुनांचे देवबन्दियों के पेशवा मौलवी रशीद अहमद गंगोही अपने फ़तावा रशीदिया जिल्द अव्वल किताबुत्तक़्लीद सफ़ः 119 में लिखते हैं :

“मुहम्मद इब्ने अब्दुलवहाब के मुक़्तदियों को वहाबी कहते हैं। उनके

अक़ाइद उम्दा थे और मज़्हब उनका हंबली था। अल्बत्ता उनके मिज़ाज में शिद्दत थी। और उनके मुक़्तदी अच्छे हैं मगर हाँ जो हद से बढ़ गए उनमें फ़साद आ गया है और अक़ाइद सबके मुत्तहिद हैं। आमाल में फ़र्क़ हन्फ़ी, शाफ़ई, मालिकी, हंबली है।" (रशीद अहमद)

लेकिन मौजूदा ज़माना में ब-मुक़ाबला ग़ैर मुक़ल्लेदीन के ज़्यादा ख़तरनाक देवबन्दी हैं। क्योंकि आम मुसलमान उनको पहचान नहीं सकते। उन लोगों ने अपनी किताबों में हुज़ूर अलैहिस्सलाम की ऐसी तौहीनें कीं कि कोई खुला हुआ मुश्रिक भी नहीं कर सकता। मगर फिर भी मुसलमानों के पेशवा बनते हैं। और इस्लाम के अकेले ठेकेदार।

मौलवी अशरफ़ अली साहब थानवी ने हिफ़्ज़ुल-ईमान में हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म को जानवरों के इल्म की तरह बताया। मौलवी ख़लील अहमद साहब अंबेठी ने अपनी किताब बराहीने क़ातेआ में शैतान और मलकुल-मौत का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म से ज़्यादा बताया। मौलवी इस्माईल साहब देहलवी ने नमाज़ में हुज़ूर अलैहिस्सलाम के ख़्याल को गधे और बैल के ख़्याल से बदतर लिखा। मौलवी क़ासिम साहब नानौतवी ने **तहज़ीरुन्नास** में हुज़ूर अलैहिस्सलाम को ख़ातमुन्नबीयीन यानी आख़िरी नबी मानने से इंकार किया और कहा कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के बाद अगर और भी नबी आ जाएं तब भी ख़ातमीयत में कुछ फ़र्क़ न आएगा। ख़ातम के माना हैं असल नबी। दीगर नबी हैं नबी आर्ज़ी। यही मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी ने कहा कि मैं बरोज़ी नबी हूँ। ग़र्ज़ेकि मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद इस मसला में उनका शागिर्द रशीद हुआ।

इन साहिबों के यहाँ तौहीद के माना हैं अंबिया की तौहीन जैसे कि रवाफ़िज़ के यहाँ हुब्बे अली के माना हैं बुग्ज़ सहाब-ए-किराम। हालांकि यह तौहीद तो शैतानी तौहीद है। उसने हज़रत आदम की अज़मत से इंकार किया ग़ैरे ख़ुदा के सामने न झुका। फिर जो उसका हश्र हुआ वह आज तक लोग देख रहे हैं कि हर जगह उसकी **ला हौला** से ख़ातिर की जाती है।

इस्लामी तौहीद है अल्लाह तआला को एक जानना, उसके महबूबों की इज़्ज़त व अज़मत करना जिसकी तालीम है **ला इलाहा इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह** पहले हिस्से में अल्लाह की वहदानियत का इक़रार है, दूसरे में अज़्मते मुस्तफ़ा का इज़्हार। आजकल जिस जगह भी देखा गया मुसलमानों में अह्ले सुन्नत और देवबन्दियों में झगड़े पड़े हुए हैं। हर जगह ख़ाना जंगी है हर कारे ख़ैर को रोकने की कोशिश। कहीं इल्मे ग़ैब पर बहस है तो कहीं हुज़ूर अलैहिस्सलाम के हाज़िर व नाज़िर होने पर तकरार। कहीं महफ़िले मीलाद व फ़ातिहा पर बहस कहीं मज़ाराते औलिया अल्लाह पर क़ुब्बा बनाने पर मुनाज़रा। अगरचे उनमें से हर एक मसाइल में अह्ले सुन्नत

ने आला दरजा की किताबें शाए फ़रमाईं जैसे मसलए तक़्लीद में इंतिसारुल-हक़ मुसन्निफ़ा हज़रत मौलाना इरशाद हुसैन साहब रहमतुल्लाह अलैह। मसलए इल्मे ग़ैब में **अल-कलिमतुल-उलिया** मुसन्निफ़ा हज़रत सदरुल–अफ़ाज़िल उस्ताज़ी व मुर्शिदी मौलाना अल-हाज सैयद मुहम्मद नईमुद्दीन साहब मुरादाबादी। तीजा फ़ातिहा वग़ैरह में अनवारे सातिआ मुसन्निफ़ा हज़रत मौलाना अब्दुस्समी साहब बेदिल राम पुरी और मसला हाज़िर व नाज़िर उर्स व ज़ियारते कुबूर व तमाम मसाइल में तस्नीफ़ाते आला हज़रत मुजद्दिद मीअते हाज़िरह मौलाना अहमद रज़ा ख़ाँ साहब बरैलवी क़ुद्देस सिर्रहुल-अज़ीज़ वग़ैरह। मगर ख़्याल यह था कि कोई किताब ऐसी लिखी जाए जो कि इन तमाम बहसों की जामे हो। जिसके पास वह किताब हो वह तक़रीबन हर मसअले में मुख़ालिफ़ से गुफ़्तगू कर सके और मुसलमानों के अक़ाइद को उन लोगों से बचा सके। इसलिए मैंने **हस्बतन लिल्लाहि** इस काम की हिम्मत की। हिम्मत तो कर दी मगर अपनी कम इल्मी और बे बज़ाअती का मुझको पूरा पूरा अहसास है। शुरू करना मेरा काम है और इसको अंजाम पर पहुँचाना मेरे रब के करम पर ही है।

मैं अपने मोहतरम दोस्त जनाब मुंशी अहमद दीन साहब सेक्रेट्री अंजुमन ख़ुद्दामुस्सूफ़िया गुजरात का तहे दिल से मश्कूर हूँ जिन्होंने इस काम में मेरी पूरी-पूरी इमदाद फरमाई कि इसके छपवाने का इंतिज़ाम फरमा दिया। ख़ुदा तआला उनके माल व औलाद व ईमान में बरकतें दे।

इस किताब में हर मसला पर मुख़्तसर मगर मुकम्मल बहस की गई है जिन लोगों को ज़्यादा तफ़सील मन्ज़ूर हो तो वह मसलए इल्मे ग़ैब में अल्कलिमतुल-उलिया का मुताला करें कि ऐसी किताब इस मसला में आज तक नहीं लिखी गई। इसी तरह दीगर बहसों में आला हज़रत बरैलवी क़ुद्देस सिर्रहुल-अज़ीज़ की किताबों का मुताला करें।

हिदायात :– इस किताब में इन बातों का लिहाज़ रखा गया है।

(1) अपने दावा की वज़ाहत।

(2) उसके दलाइल क़ुरआन व हदीस और बुज़ुर्गाने दीन, मुहद्देसीन व मुफ़स्सेरीन के अक़्वाल से।

(3) उसकी ताईद मुख़ालिफ़ीन की किताबों से।

(4) मुख़ालिफ़ीन के एतराज़ात आयाते क़ुरआनिया और अहादीस व अक़्वाले फ़ुक़हा से।

(5) एतराज़ात के जवाबात क़ुरआन व अहादीस व अक़्वाले उल्मा की रौशनी में।

(6) अपने दावा के अक़्ली दलाइल।

(7) मुख़ालिफ़ीन के अक़्ली एतराज़ात।
(8) उनके अक़्ली जवाबात।
(9) इस बात का भी लिहाज़ रखा गया है कि जहां तक हो सके किताबों का सफ़ः न नक़्ल किया जाए क्योंकि सफ़ः बदल जाते हैं बल्कि बाब और फ़स्ल और अगर तफ़्सीर का हवाला हो तो पारा, सूरत और आयत।

नोट : मगर प्रुफ़ के वक़्त बहुक्म मौलाना अब्दुल-हकीम शरफ़ क़ादरी बुख़ारी व मुस्लिम जिल्द अव्वल और मिश्कात शरीफ़ का सफ़ः नम्बर दे दिया गया है। हवाले में फ़ारुक़िया बुक डिपो के मत्बूआत से मदद ली गई है।

नाज़िरीन : अगर ग़ौर से इस किताब का मुताला करेंगे तो इंशाअल्लाह तआला इसको एक समुन्द्र पाएंगे जिससे बेश क़ीमत मोती हासिल होंगे। इस किताब में सख़्त अल्फ़ाज़ी और कज बहसी से परहेज़ किया गया है अह्ले इंसाफ़ से उम्मीद है कि हक़ क़बूल करें और बातिल से बचें कि इसी में दीन व दुनिया की भलाई है **वमा तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाहे अलैहि तवक्कल्तु व इलैहि उनीब।**

इस किताब का नाम हज़रत क़िब्लाए आलम अमीरे मिल्लत शैखुल-मशाइख़ क़ुतुबुल-वक़्त आलिमे रब्बानी पीर सैयद जमाअत अली शाह साहब मुहद्दिस अली पूरी दामत बरक़ातुहुम अल-क़ुदसिया ने **जा-अल-हक़ व ज़हक़ल-बातिल** तज्वीज़ फरमाया है। मैं निहायत फ़ख़्र से इस किताब को इसी नाम से मौसूम करता हूँ और अपने रब से उम्मीद करता हूँ कि इस किताब को इस्म बा-मुसम्मा फरमाए और अपने फ़ज़्ल व करम से इसको क़बूल फरमाएं मेरे लिए कफ़्फ़ाराए सैय्यिात बनाए और हुस्ने ख़ातिमा नसीब फरमाए। आमीन!

नोट : मुसलमानों का बहुत कहना हुआ कि इस किताब में तीन बहसें और ज़्यादा की जाएं। सलतनते मुस्तफ़ा, इस्मते अंबिया, बीस रकाअत तरावीह, चुनांचे इससे पहले एडीशन में यह तीन बहसें बढ़ा दी गईं। और भी दलाइल की ज़्यादती की गई है। अल्लाह तआला क़बूल फरमाए।

नाचीज़

अहमद यार ख़ाँ उझानवी बदायूंनी

मुदर्रिस मदरसा ख़ुद्दामुर्रसूल, गुजरात, पंजाब

3 शाबानुल मुअज़्ज़म 1361 हिजरी

इस एडीशन में मज़ामीन और दलाइल बहुत से ज़्यादा किए गए और एक रिसाला **तलाक़ी अल-अदिल्लहू फ़ी हुक्मे तलाक़ अस्सलासह** बढ़ाया गया जिसमें दलाइल से साबित किया गया है कि एक दम तीन तलाक़ें तीन ही होंगी न कि एक। रब्ब तआला क़बूल फरमाए।

(अहमद यार ख़ाँ नईमी)

मुक़द्दमा

चूंकि इस किताब में हर मसला के मुतअल्लिक़ कुरआनी आयात पेश की जाएंगी और उन आयात की तफ़सीर भी ब्यान होगी। इसलिए तफ़्सीरे कुरआन के मुतअल्लिक़ नीची लिखी बातें लिहाज़ में रखना ज़रूरी हैं।

एक तो है कुरआन की तफ़्सीर। दूसरी कुरआन की तावील। तीसरी कुरआन की तहरीफ़। उनकी अलग अलग तारीफ़ें हैं और अलग अलग अहकाम।

(1) कुरआन की तफ़्सीर अपनी राय से करना हराम है। बल्कि उसके लिए नक़्ल की ज़रूरत है। कुरआन की जाइज़ तावील अपने इल्म व मारिफ़त से करना जाइज़ और बाइसे सवाब है। कुरआन पाक की तहरीफ़ करना कुफ़्र है।

तफ़्सीर उसे कहते कि कुरआने करीम के वह अहवाल ब्यान करना जो कि अक़्ल से मालूम न हो सकें। नक़्ल की उनमें ज़रूरत हो जैसे आयात का शाने नुज़ूल या आयात का नासिख़ व मन्सूख़ होना। अगर कोई शख़्स बग़ैर हवाला नक़्ल किए अपनी राय से कह दे कि फलां आयत मन्सूख़ है या फलां आयत की यह शाने नुज़ूल है तो यह मोतबर नहीं। और कहने वाला गुनहगार है।

(१) मिश्कात किताबुल-इल्म फ़स्ले दोम (सफा 35) में है **मन क़ाला फ़िल-कुरआने बेरायही फ़ल्यतबव्वु मक़अदहू मिनन्नारे।** जो शख़्स कुरआन में अपनी राय से कुछ कहे वह अपनी जगह जहन्नम में बना ले। मिश्कात में उसी जगह है **मन क़ाला फ़िल-कुरआने बेरायिही फ़असाबा फ़क़द अख़्तआ** जिस शख़्स ने कुरआन में अपनी राय से कुछ कहा पस सही कह गया तो भी उस ने ग़लती की।

अब तफ़्सीरे कुरआन के चन्द मरतबे हैं। तफ़्सीरे कुरआन बिल–कुरआन। यह सब से पहले है इसके बाद तफ़्सीर कुरआन बिल-अहादीस, क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम साहिबे कुरआन हैं। उनकी तफ़्सीरे कुरआन निहायत ही आला। फिर कुरआन की तफ़्सीर सहाब-ए-किराम के क़ौल से ख़ुसूसन फुक़हा-ए-सहाबा और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन की तफ़्सीर।

रही तफ़्सीरे कुरआन ताबईन या तबा ताबईन के क़ौल से। यह अगर रिवायत से है तो मोतबर वरना ग़ैर मोतबर माख़ूज़ अज़ ऐला-ए-कलिमतुल्लाह लिल-अल्लामा गोलड़वी कुद्देस सिर्रहू।

(२) तावीले कुरआन यह है कि आयाते कुरआनिया के मज़ामीन और उसकी बारीकियाँ ब्यान करे और सर्फ़ी व नहवी क़वाइद से इसमें तरह-तरह से निकात निकाले। यह अह्ले इल्म के लिए जाइज़ है। उनमें नक़्ल की

ज़रूरत नहीं इसका सुबूत कुरआनी आयात और अहादीसे नब्वीया व अक़्वाले फुक़हा से है।

रब्बे करीम फ़रमाता है :

तर्जमा :

तो क्या यह कुरआन में ग़ौर नहीं करते। अगर यह ग़ैर ख़ुदा के पास से होता तो ज़रूर इसमें बहुत इख़्तिलाफ़ पाते। (पारा 5 सूरे निसा)

तफ़्सीर रूहुल-ब्यान में इस आयत के मातहत **यतदब्बरूना** की तफ़्सीर में फरमाते हैं **यतअम्मलूना व यतबस्सरूना मा फ़ीहे**। यानी क्यों नहीं ग़ौर करते इसके माना में और क्यों नहीं ताम्मुल से देखते इन ख़ूबियों को जो कुरआन में हैं।

मिश्कात किताबुल-क़िसास फ़स्ल अव्वल (सफ़ा **300**) में है कि किसी साहब ने हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से दरयाफ़्त किया कि क्या आपके पास कुरआन के सिवा कुछ और भी अतीय-ए-मुस्तफ़ा अलैहिस्सलातु वस्सलाम है तो फ़रमाया कि **मा इन्दना इल्ला मा फ़िल-कुरआने इल्ला फ़हमन यूता रजुलुन फ़ी किताबेही** हमारे पास इस कुरआन के सिवा और कुछ नहीं। हाँ वह इल्म व फ़हम है जो किसी को किताबे इलाही के मुतअल्लिक़ अता कर दी जाती है।

इसी हदीस के मातहत मिर्क़ात में है। **वल-मुरादु मिन्हु मा युस्तंबतु बेहिल-मआनी व युदरिकु बेहिल-इशारातु वल-उलूमुल-ख़फ़ीयतु**। इस फ़हम से मुराद वह इल्म है जिससे कुरआन के मानी निकाले जाएं और जिससे इशारात मालूम हों और छुपे हुए इल्म का पता लगे।

इस आयत और हदीस से मालूम हुआ कि कुरआनी मायने में ग़ौर करना और इल्म व अक़्ल से काम लेना इससे मसाइल का निकालना जाइज़ है। हर जगह नक़्ल की ज़रूरत नहीं।

जुमल हाशियाए जलालैन में है :

तर्जमा : तफ़्सीर के लुग्वी मायने हैं ज़ाहिर करना और तावील के मायना हैं लौटना और इल्मे तफ़्सीर कुरआन पाक के उन हालात का जानना है जो अल्लाह की मुराद को बताएं, ताक़ते इंसानी के मुताबिक़। फिर इसकी दो क़िस्में हैं। एक तो तफ़्सीर और तफ़्सीर वह है जो नक़्ल के बग़ैर न मालूम हो सके। और एक तावील, और तावील वह है जिसको अरबी काइदों से मालूम कर सकें। लिहाज़ा तावील का तअल्लुक़ फ़हम (समझ) से है। और तावील की राय से जाइज़ होने में और तफ़्सीर के राय से नाजाइज़ होने में राज़ यह है कि तफ़्सीर तो ख़ुदा-ए-पाक पर गवाही देना है और इसका यक़ीन करना है कि रब तआला ने इस कलिमा के यही मायना मुराद लिए

हैं। और यह बग़ैर बताए जाइज़ नहीं। इसीलिए हाकिम ने फ़ैसला कर दिया कि सहाबी की तफ़्सीर मरफ़ूअ हदीस के हुक्म में है और तावील चन्द एहतमालात में से कुछ को तरजीह दे देने का नाम है, वह भी बिला यक़ीन।

मिर्क़ात शरह मिश्कात किताबुल-इल्म फ़स्ल दोम में **मन क़ाला फ़िल-कुरआने बेरायही** के तहत फरमाते हैं।

तरजमा : यानी हदीस का मतलब यह है कि कुरआन के मानी या उसकी क़िरात में अपनी तरफ़ से कलाम करे लुग़त और ज़बान जानने वाले इमामों के क़ौल को तलाश न करे। शरई क़ाइदों का लिहाज़ न रखे बल्कि इस तरह कह दे जिसको उसकी अक़्ल चाहे हालांकि यह मानी ऐसे हों कि जिनका समझना नक़्ल पर मौक़ूफ़ हो जैसे कि शाने नुज़ूल और नासिख़ व मंसूख़।

तिर्मिज़ी जिल्द दोम किताबुत-तफ़्सीर के शुरू में है।

तरजमा : कुछ अहले इल्म सहाब-ए-किराम वग़ैरह से यही रिवायत है कि वह हज़रात इसमें बहुत सख़्ती करते थे कि कुरआन की तफ़्सीर बग़ैर इल्म की जाए।

इस हदीस के हाशिया में मज्मा-उल-बिहार से नक़्ल फरमाया।

तर्जमा : यह तो जाइज़ नहीं कि इस इबारत की यह मुराद हो कि कोई भी कुरआन में बग़ैर सुने हुए कुछ कलाम ही न करे। क्योंकि सहाब-ए-किराम ने कुरआन की तफ़्सीरें कीं और आपस में बहुत तरह उनमें इख़्तिलाफ़ रहा। और उनकी हर बात तो सुनी हुई न थी। नीज़ फिर हुज़ूर अलैहिस्सलाम का यह दुआ फरमाना बेकार होगा कि ऐ अल्लाह! इनको दीनी फ़िक्हः दे और इनको तावील सिखा दे।

और हज़रत इमाम ग़ज़ाली ने इहया-उल-उलूम बाबे हश्तुम में फ़स्ल चहारुम इस मक़सद के लिए मुक़र्रर की है कि कुरआन का समझना बग़ैर नक़्ल भी जाइज़ है। वह फरमाते हैं कि कुरआन के एक ज़ाहिरी मतलब हैं और एक बातिनी। उलमा ज़ाहिरी मतलब की तहक़ीक़ करते हैं और सूफ़िया-ए-किराम बातिनी की। हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि अगर मैं चाहूं तो सूरह फ़ातिहा की तफ़्सीर से 70 ऊंट भर दूँ। और हज़रत अली ने फरमाया कि जो शख़्स कुरआन समझ लेता है वह तमामी उलूम को बयान कर सकता है फिर जो हदीस में यह आया कि जो शख़्स

अपनी राय से कुरआन में कहे वह ख़ताकार है। इसका मतलब यही है कि जिन बातों का इल्म बग़ैर नक़्ल नहीं हो सकता उनको राय से ब्यान करना हराम है। देखो इसकी पूरी बहस इहया-उल-उलूम शरीफ़ के उसी बाब में उसी फ़स्ल में और अइम्म-ए-दीन का कुरआनी आयात में बड़ा इख़्तिलाफ़ रहता है। एक साहब किसी जगह वक़्फ़ करते हैं तो दूसरे और जगह। एक साहब उसी एक आयत से एक मसला निकालते हैं। दूसरे साहब उसके ख़िलाफ़ जैसे कि तोहमते ज़िना लगाने वाले की गवाही। मुतशाबिहात का इल्म वग़ैरह। तो अगर आप अपने इल्म से कलामे इलाही में बिल्कुल कलाम नहीं कर सकते। हर हर बात के लिए नक़्ल की ज़रूरत है तो यह इख़्तिलाफ़ कैसा?

(3) तहरीफ़ यह है कि कुरआन के ऐसे माना या मतलब ब्यान करे जो कि इज्मा-ए-उम्मत या अक़ीद-ए-इस्लामिया या इज्मा-ए-मुफ़स्सेरीन के ख़िलाफ़ हो। या खुद तफ़सीरे कुरआन के ख़िलाफ़ हो। और कहे कि इस आयत के वह मानी नहीं हैं बल्कि यह मानी हैं कि जो मैंने कहे। यह खुला हुआ कुफ़्र है जैसे कि आयाते कुरआनिया और क़िराते मुतवातिरह का इंकार कुफ़्र है। ऐसे ही कुरआन के मुतवातिर माना का इंकार कुफ़्र जैसे कि मौलवी क़ासिम साहब ने ख़ातमुन्नबीयीन के माना किए असली नबी। और माना आख़िरी नबी को ख़्याले अवाम यानी ग़लत कहा। और नबुव्वत की दो क़िस्में कर डालीं। असली और आर्ज़ी हांलाकि उम्मत का इज्मा और अहादीस का इत्तिफ़ाक़ इस पर है कि ख़ातमुन्नबीयीन के माना हैं आख़िरी नबी और हुज़ूर अलैहिस्सलाम के ज़माना में या बाद कोई नया नबी नहीं आ सकता। यह तहरीफ़ है। इसी तरह कुरआन की जिन आयतों में ग़ैरल्लाह को पुकारने की मुमानिअत की गई है वहाँ मुफ़स्सेरीन का इत्तिफ़ाक़ है कि इससे मुराद ग़ैरे खुदा को पूजना है जैसे **वला तदओ मिन दूनिल्लाहि मा ला यन्फ़उका वला यज़ुर्रुका** खुदा के सिवा उन को न पुकारो जो नफ़ा व नुक़्सान न पहुँचा सकें।

और कुरआने करीम खुद इसकी तफ़सीर फरमाता है **व मन यदओ मअल्लाहे इलाहन आख़िरा** जो शख़्स खुदा के साथ दूसरे माबूद को पुकारे। अब इस तफ़सीर और इज्मा मुफ़स्सेरीन के होते हुए जो कहे कि ग़ैरल्लाह को पुकारना मना है वह कुरआन में तहरीफ़ करता है इस बहस को ख़ूब अच्छी तरह ख़्याल में रखना चाहिए बहुत फ़ायदा मन्द है और आइंदा काम आएगी।

तक़्लीद की बहस

तक़्लीद के बाब में पाँच बातें ख़्याल में रहना ज़रूरी हैं। (1) तक़्लीद के माना और इसकी क़िस्में (2) तक़्लीद कौन सी ज़रूरी है और कौन सी मना (3) तक़्लीद किस पर लाज़िम है और किस पर नहीं (4) तक़्लीद के वाजिब होने के दलाइल (5) तक़्लीद पर एतराज़ात और उनके मुकम्मल जवाबात। इसलिए इस बहस के पाँच बाब किए जाते हैं।

बाब अव्वल

तक़्लीद के माना और इसके अक़्साम में

तक़्लीद के दो माना हैं। (1) एक तो मानाए लुग़वी। (2) दूसरा शरई। लुग़वी माना हैं गले में हार या पट्टा डालना। तक़्लीद के शरई माना यह हैं कि किसी के कहने व करने को अपने ऊपर लाज़िमे शरई जानना यह समझ कर कि उसका कलाम और उसका काम हमारे लिए हुज्जत है क्योंकि यह शरई मुहक़्क़िक़ है जैसे कि हम मसाइले शरईया में इमाम साहब का क़ौल व फ़ेअल अपने लिए दलील समझते हैं और दलाइले शरईया में नज़र नहीं करते।

हाशिया हुसामी बाब मुताबिअत रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम में सफा 86 पर शरह मुख़्तसरुल-मनार से नक़्ल किया।

यही इबारत नूरुल-अनवार बहस तक़्लीद में भी है। तक़्लीद के माना हैं किसी शख़्स का अपने ग़ैर की इताअत करना इसमें जो इसको कहते हुए या करते हुए सुन ले यह समझ कर कि वह अह्ले तहक़ीक़ में से है कि बग़ैर दलील में नज़र किए हुए। और इमाम ग़ज़ाली किताबुल-मुस्तस्फ़ा जिल्द दोम सफा 387 में फरमाते हैं : **अत्तक़्लीदु हुवा क़बूलु क़ौलिन बिला हुज्जतिन।** मुसल्लमुस सुबूत में है **अत्तक़्लीदुल-अमलु बेक़ौलिल-ग़ैरे मिन ग़ैरे हुज्जतिन।** तर्जमा वही जो ऊपर ब्यान हुआ। इस तारीफ़ से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम की इताअत करने को तक़्लीद नहीं कह सकते क्योंकि उनका हर क़ौल व फ़ेअल दलीले शरई है। तक़्लीद में होता है दलीले शरई को न देखना। लिहाज़ा हम हुज़ूर अलैहिस्सलाम के उम्मती कहलाएंगे न कि मुक़ल्लिद। इसी तरह सहाब-ए-किराम व अइम्म-ए-दीन हुज़ूर अलैहिस्सलाम के उम्मती हैं न कि मुक़ल्लिद। इसी तरह आलिम की इताअत जो आम मुसलमान करते हैं इसको भी तक़्लीद न कहा जाएगा। क्योंकि कोई भी इन आलिमों की बात या उनके काम को अपने लिए हुज्जत नहीं बताता। बल्कि यह समझ कर उनकी बात मानता है कि यह मौलवी आदमी हैं। किताब से देख कर कह रहे होंगे। अगर साबित हो जाए कि फ़त्वा ग़लत था। किताब

के ख़िलाफ़ था तो कोई भी न माने बख़िलाफ़ क़ौले इमाम अबू हनीफ़ा के कि अगर वह हदीस या कुरआन या इज्मा-ए-उम्मत को देख कर मसला फ़रमा दें तो भी क़बूल। और अपने क़्यास से हुक्म दें तो भी क़बूल होगा। यह फ़र्क़ ज़रूर याद रहे।

तक़्लीद दो तरह की है। तक़्लीदे शरई और ग़ैर शरई। तक़्लीदे शरई तो शरीअत के अहकाम में किसी की पैरवी करने को कहते हैं। जैसे नमाज़ रोज़े, हज, ज़कात वग़ैरह के मसाइल में अइम्म-ए-दीन की इताअत की जाती है और तक़्लीदे ग़ैर शरई है दुनियावी बातों में किसी की पैरवी करना। जैसे तबीब लोग इल्मे तिब में बू अली सीना की और शाइर लोग दाग़, अमीर, या मिर्ज़ा ग़ालिब की या नहवी व सर्फ़ी लोग सीबवह और ख़लील की पैरवी करते हैं इसी तरह हर पेशा वर अपने पेशा में उस फ़न के माहिरीन की पैरवी करते हैं। यह तक़्लीदे दुनियावी है।

सूफ़िया-ए-किराम जो वज़ाइफ़ व आमाल में अपने मशाइख़ के क़ौल व फ़ेअल की पैरवी करते हैं वह तक़्लीदे दीनी तो है मगर तक़्लीदे शरई नहीं बल्कि तक़्लीद फ़ित्तरीक़त है इसलिए कि यह शरई मसाइल हराम व हलाल में तक़्लीद नहीं। हां जिस चीज़ में तक़्लीद है वह दीनी काम है।

तक़्लीदे ग़ैर शरई अगर शरीअत के ख़िलाफ़ में है तो हराम है और अगर ख़िलाफ़े इस्लाम न हो तो जाइज़ है। बूढ़ी औरतें अपने बाप दादाओं की ईजाद की हुई शादी ग़मी की उन रस्मों की पाबन्दी करें जो ख़िलाफ़े शरीअत हैं तो हराम है। और तबीब लोग जो तिब्बी मसाइल में बू अली सीना वग़ैरह की पैरवी करें जो कि मुख़ालिफ़े इस्लाम न हों तो जाइज़ है इसी पहली क़िस्म की हराम तक़्लीद के बारे में कुरआन करीम जगह जगह मना फ़रमाता है और ऐसी तक़्लीद करने वालों की बुराई फ़रमाता है।

तर्जमा : और उसका कहना न मानो जिसका दिल हमने अपनी याद से ग़ाफ़िल कर दिया और वह अपनी ख़्वाहिश के पीछे चला। और उसका काम हद से गुज़र गया। **व इन जाहदाका अला अन तुश्रिका बी मा लैसा लका बेही इल्मुन फ़ला तुतिअहुमा** और अगर वह तुझ से कोशिश करें कि तू मेरा शरीक ठहरा। उसको जिसका तुझको इल्म नहीं तो उनका कहना न मान।

तर्जमा : और जब उन से कहा जाए कि आओ इस तरफ जो अल्लाह ने उतारा और रसूल की तरफ कहें हमको वह बहुत है जिस पर हमने अपने बाप दादा को पाया। क्या अगरचे उनके बाप दादा न कुछ जानें और राह पर हों।

तर्जमा : और जब उनसे कहा जाए कि अल्लाह के उतारे हुए पर चलो तो कहेंगे बल्कि हम तो उस पर चलेंगे जिस पर अपने बाप दादा को पाया।

इन में और इन जैसी आयतों में इसी तक़्लीद की बुराई फरमाई गई है

जो शरीअत के मुक़ाबला में जाहिल बाप दादों के हराम कामों में की जाए कि चूंकि हमारे बाप दादा ऐसा करते थे हम भी ऐसा करेंगे चाहे यह काम जाइज़ हो या ना जाइज़।

रही शरई तक़्लीद और अइम्म-ए-दीन की इताअत। इस से इन आयात का कोई तअल्लुक़ नहीं। इन आयतों से तक़्लीदे अइम्मा को शिर्क या हराम कहना महज़ बेदीनी है। इसका बहुत ख़्याल रहे।

दूसरा बाब

किन मसाइल में तक़्लीद की जाती है किन में नहीं

तक़्लीदे शरई में कुछ तफ़्सील है। शरई मसाइल तीन तरह के हैं। (1) अक़ाइद (2) वह अहकाम जो साफ़–साफ़ कुरआन पाक या हदीस शरीफ़ से साबित हों इज्तिहाद को उनमें दख़ल न हो। (3) वह अहकाम जो कुरआन या हदीस से ग़ौर व खोज करके निकाले जाएं।

अक़ाइद में किसी की तक़्लीद जाइज़ नहीं। तफ़्सीरे रुहुल-बयान आख़िर सूरः हूद ज़ेरे आयत **नसीबहुम ग़ैरा मन्क़ूसिन** में है।

तर्जमा : अगर कोई हम से पूछे कि तौहीद व रिसालत वग़ैरह तुमने कैसे मानी। तो यह न कहा जाएगा कि हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के फरमाने से या कि फ़िक्हे अक्बर से बल्कि दलाइले तौहीद व रिसालत से क्योंकि अक़ाइद में तक़्लीद नहीं होती।

मुक़द्दमा शामी **बहसु तक़्लीदुल-मफ़्ज़ूल मअल-अफ़्ज़ल** में है।

तर्जमा : यानी जिनका हम एतक़ाद रखते हैं फ़रई मसाइल के अलावा कि जिनका एतक़ाद रखना हर मुकल्लफ़ पर बग़ैर किसी की तक़्लीद के वाजिब है वह अक़ाइद वही हैं जिन पर अह्ले सुन्नत व जमाअत हैं। वह अह्ले सुन्नत अशाइरह और मा तुरीदिया हैं और तफ़्सीरे कबीर पारा दस ज़ेरे आयत **फ़अजिरहु हत्ता यस्मआ कलामल्लाहे** में है।

ज़ाहिरी अहकाम में भी किसी की तक़्लीद जाइज़ नहीं। पाँच नमाज़ें, नमाज़ की रकअतें, तीस रोज़े, रोज़े में खाना पीना हराम होना, यह वह मसाइल हैं जिनका सुबूत नस से सराहतन है इसलिए यह न कहा जाएगा कि नमाज़ें पाँच इसलिए हैं या रोज़े एक माह के इसलिए हैं कि फ़िक्हः अक्बर में लिखा है या इमाम अबू हनीफ़ा ने फरमाया है बल्कि इसके लिए कुरआन व हदीस से दलाइल दिए जाएंगे।

जो मसाइल कुरआन व हदीस या इज्मा-ए-उम्मत से इज्तिहाद व इस्तिंबात करके निकाले जाएं उनमें ग़ैर मुज्तहिद पर तक़्लीद करना वाजिब

है। मसाइल की जो हमने तक़सीम कर दी और बता दिया कि कौन से मसाइल तक़लीद यह हैं और कौन से नहीं। इसका बहुत लिहाज़ रहे। बहुत से मौक़ा पर ग़ैर मुक़ल्लिद एतराज़ करते हैं कि मुक़ल्लिद को हक़ नहीं होता कि दलाइल से मसाइल निकाले। फिर तुम लोग नमाज़ व रोज़े के लिए कुरआनी आयतें या अहादीस क्यों पेश करते हो इसका जवाब भी इस बात में आ गया कि रोज़ा व नमाज़ की फ़र्ज़ीयत तक़लीदी मसाइल से नहीं। यह भी मालूम हुआ कि सिवाए अहकामे ख़बर वग़ैरह में तक़लीद न होगी जैसे कि मसलए कुफ़्रे यज़ीद वग़ैरह। और क़्यासी मसाइल में फुक़हा का कुरआन व हदीस से दलाइल पेश करना सिर्फ़ माने हुए मसाइल की ताईद के लिए होता है। वह मसाइल पहले ही से क़ौले इमाम से माने हुए होते हैं। तो बिला नज़र फ़िद्दलील के यह मानी नहीं कि मुक़ल्लिद दलाइल देखे ही नहीं। बल्कि यह दलाइल से मसाइल हल न करे।

तीसरा बाब

किस पर तक़लीद करना वाजिब है और किस पर नहीं

मुकल्लफ़ मुसलमान दो तरह के हैं एक मुज्तहिद, दूसरे ग़ैर मुज्तहिद। मुज्तहिद वह है जिसमें इस क़द्र इल्मी लियाक़त और क़ाबलीयत हो कि कुरआनी इशारात व राज़ों को समझ सके। और कलाम के मक़सद को पहचान सके। इससे मसाइल निकाल सके। नासिख़ व मंसूख़ का पूरा इल्म रखता हो। इल्मे सर्फ़ व नह्व व बलाग़त वग़ैरह में उसको पूरी महारत हासिल हो। अहकाम की तमाम आयतों और अहादीस पर उसकी नज़र हो। इसके अलावा ज़की और खुश फ़हम हो। देखो तफ़्सीराते अहमदिया वग़ैरह और जो कि इस दरजा पर न पहुँचा हो वह ग़ैर मुज्तहिद या मुक़ल्लिद है। ग़ैर मुज्तहिद पर तक़लीद ज़रूरी है मुज्तहिद के लिए तक़लीद मना, मुज्तहिद के छे: तब्क़े हैं।

(1) मुज्तहिद फ़िश शरअ् (2) मुज्तहिद फ़िल–मज़हब (3) मुज्तहिद फ़िल–मसाइल (4) अस्हाबुत्तख़रीज (5) अस्हाबुत्तर्जीह (6) अस्हाबुत्तमीज़ (मुक़द्दमा शामी बहस तब्क़ातुल–फुक़हा)

(1) **मुज्तहिद फ़िश शरअ्** : वह हज़रात हैं जिन्होंने इज्तिहाद करने के क़वाइद बनाए जैसे चारों इमाम अबू हनीफ़ा, शाफ़ई, मालिक, अहमद बिन हंबल रज़ि अल्लाहु अन्हुम अज्मईन।

(2) **मुज्तहिद फ़िल-मज़्हब** : वह हज़रात हैं जो इन उसूल में तक़लीद करते हैं। और इन उसूल से मसाइले शरईया फ़रईया खुद निकाल सकते हैं। जैसे इमाम अबू यूसुफ़ व मुहम्मद व इब्ने मुबारक रहमहुल्लाह अज्मईन

कि यह क़वाइद में हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के मुक़ल्लिद हैं और मसाइल में ख़ुद मुज्तहिद।

(3) **मुज्तहिद फ़िल-मसाइल** : वह हज़रात हैं जो क़वाइद और मसाइले फ़रईया दोनों में मुक़ल्लिद हैं मगर वह मसाइल जिनके मुतअल्लिक़ अइम्मा की वज़ाहत नहीं मिलती उनको क़ुरआन व हदीस वग़ैरह दलाइल से निकाल सकते हैं जैसे इमाम तहावी और क़ाज़ी ख़ाँ, शम्सुल-अइम्मा सरख़सी वग़ैरा।

(4) **अस्हाबे तख़्रीज** : वह हज़रात हैं तो इज्तिहाद तो बिल्कुल नहीं कर सकते। हां अइम्मा में से किसी के मुख़्तसर क़ौल की तफ़्सील फ़रमा सकते हैं। जैसे इमाम करख़ी वग़ैरह।

(5) **अस्हाबे तरजीह** : वह हज़रात हैं जो इमाम साहब की चन्द रिवायात में से बाज़ को तरजीह दे सकते हैं यानी अगर किसी मसला में हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के दो क़ौल रिवायत में आए तो उनमें किस को तरजीह दें वह कर सकते हैं। इसी तरह जहाँ इमाम साहब और साहिबैन का इख़्तिलाफ़ हो तो किसी के क़ौल को तरजीह दे सकते है कि हाज़ा औला या हाज़ा असह वग़ैरह जैसे साहिबे क़ुदूरी और साहिबे हिदायह।

(6) **अस्हाबे तमीज़** : वह हज़रात हैं जो ज़ाहिरे मज़हब और रिवायाते नादिरह इसी तरह क़ौले ज़ईफ़ और क़वी और ज़्यादा मज़बूत में फ़र्क़ कर सकते हैं कि अक़वाले रद्दशुदा और रिवायाते ज़ईफ़ा को तर्क कर दें। और सही रिवायात और मोतबर क़ौल को लें। जैसे कि साहिबे कन्ज़ और साहिबे दुर्रे मुख़्तार वग़ैरह।

जिनमें इन छेः वस्फ़ों में से कुछ भी न हों। वह मुक़ल्लिद महज़ हैं। जैसे हम और हमारे ज़माना के आम उलमा उनका सिर्फ़ यही काम है कि किताब से मसाइल देख कर लोगों को बताएं।

हम पहले अर्ज़ कर चुके हैं कि मुज्तहिद को तक़्लीद करना हराम है। तो इन छेः तब्क़ों में जो साहब जिस दरजा के मुज्तहिद होंगे वह इस दरजा में किसी की तक़्लीद न करेंगे और इससे ऊपर वाले दरजा में मुक़ल्लिद होंगे जैसे इमाम अबू यूसुफ़ व मुहम्मद रहमहुल्लाहु तआला कि यह हज़रात उसूल व क़वाइद में तो इमाम आज़म रहमतुल्लाह अलैहि के मुक़ल्लिद हैं और मसाइल में चूंकि ख़ुद मुज्तहिद हैं इसलिए उनमें मुक़ल्लिद नहीं।

हमारी इस तक़रीर से ग़ैर मुक़ल्लिदों का यह सवाल भी उठ गया कि जब इमाम अबू यूसुफ़ व मुहम्मद अलैहिमर्रहमाः हन्फ़ी हैं और मुक़ल्लिद हैं तो इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैहि की जगह-जगह मुख़ालफ़त क्यों करते हैं। तो यही कहा जाएगा कि उसूल व क़वाइद में यह हज़रात

मुक़ल्लिद हैं इसमें मुख़ालिफ़त नहीं करते और फ़ुरूई मसाइल में मुख़ालफ़त करते हैं। उनमें ख़ुद मुज्तहिद हैं वह किसी के मुक़ल्लिद नहीं।

यह सवाल भी उठ गया कि तुम बहुत से मसाइल में साहिबैन के क़ौल पर फ़तवा देते हो। और इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह के क़ौल को छोड़ते हो फिर तुम हन्फ़ी कैसे? जवाब आ गया कि बाज़ दरजा के फ़ुक़हा अस्हाबे तरजीह भी हैं जो चन्द क़ौलों में से बाज़ को तरजीह देते हैं इसीलिए हम को उन फ़ुक़हा का तरजीह दिया हुआ जो क़ौल मिला उस पर फ़तवा दिया गया।

यह सवाल भी उठ गया कि तुम अपने को हन्फ़ी फिर क्यों कहते हो? यूसुफ़ी या मुहम्मदी या इब्ने मुबारकी कहो! क्योंकि बहुत सी जगह तुम उनके क़ौल पर अमल करते हो इमाम अबू हनीफ़ा का क़ौल छोड़ कर। जवाब यही हुआ कि चूंकि अबू यूसुफ़ व मुहम्मद व इब्ने मुबारक रहमहुमुल्लाह तआला के तमाम अक़्वाल इमाम अबू हनीफ़ा अलैहिर्रहमाः के उसूल और क़वानीन पर बने हैं। लिहाज़ा इनमें से किसी भी क़ौल को लेना दरहक़ीक़त इमाम साहब ही के क़ौल को लेना है। जैसे हदीस पर अमल दरहक़ीक़त क़ुरआन पर ही अमल है कि रब तआला ने इसका हुक्म दिया है। मसलन इमाम आज़म रहमतुल्लाह अलैह फरमाते हैं कि कोई हदीस सही साबित हो जाए तो वही मेरा मज़्हब है। अब अगर कोई मुज्तहिद फ़िल-मज़हब कोई सही हदीस पाकर उस पर अमल करे तो वह इससे ग़ैर मुक़ल्लिद न होगा बल्कि हन्फ़ी ही रहेगा। क्योंकि उसने हदीस पर इमाम साहब के इस क़ाइदे से अमल किया। यह पूरी बहस देखो मुक़द्दमा शामी मतलब **सह्हा अनिल-इमामे इज़ा सह्हल-हदीस फ़हुवा मज़्हबी** इमाम साहब के इस क़ौल का मतलब यह भी हो सकता है कि जब कोई हदीस सही साबित हुई है तो वह मेरा मज़्हब बनी यानी हर मसला और हर हदीस में मैं ने बहुत जिरह क़दह और तहक़ीक़ की है। तब उसे इख़्तियार किया। चुनांचे हज़रत इमाम के यहाँ हर मसला की बड़ी छान बीन होती थी। मुज्तहिद शागिर्दों से निहायत तहक़ीक़ी गुफ़्तगू के बाद इख़्तियार फरमाया जाता था।

अगर यह मुख़्तसर तक़रीर ख़्याल में रखी गई तो बहुत मुश्किलों को इंशाअल्लाह हल कर देगी, और बहुत काम आएगी।

कुछ ग़ैर मुक़ल्लिद कहते हैं कि हम में इज्तिहाद करने की कुव्वत है लिहाज़ा हम किसी की तक़्लीद नहीं करते। इसके लिए बहुत तवील गुफ़्तगू की ज़रूरत नहीं। सिर्फ़ यह दिखाना चाहता हूँ कि इज्तिहाद के लिए किस क़द्र इल्म की ज़रूरत है और इन हज़रात को वह कुव्वते इल्मी हासिल है या नहीं।

हज़रत इमाम राज़ी, इमाम ग़ज़ाली वग़ैरह इमाम तिर्मिज़ी और इमाम

दाऊद वग़ैरह हुज़ूर ग़ौसे पाक, हज़रत बायज़ीद बुस्तामी, शाह वहा-उल-हक़ नक़्शबन्द इस्लाम में ऐसे पाए के उलमा और मशाइख़ गुज़रे कि इन पर अह्ले इस्लाम जिस क़द्र भी फ़ख़ करें कम है। मगर इन हज़रात में से कोई साहब भी मुज्तहिद न हुए बल्कि सब मुक़ल्लिद हुए। ख़्वाह इमाम शाफ़ई के मुक़ल्लिद हों या इमाम अबू हनीफ़ा के रज़ि अल्लाहु अन्हुम अज्मईन। ज़माना मौजूदा में कौन उनकी क़ाबलीयत का है। जब उनका इल्म मुज्तहिद बनने के लिए काफ़ी न हुआ तो जिन बेचारों को अभी हदीस की किताबों के नाम लेना भी न आते हों वह किस शुमार में हैं।

एक साहब ने दावा इज्तिहाद किया था। मैंने उनसे सिर्फ़ इतना पूछा कि सूरः तकासुर से किस क़द्र मसाइल आप निकाल सकते हैं। और इसमें हक़ीक़त, मजाज़, सरीह व किनाया ज़ाहिर व नस कितने हैं। इन बेचारों ने इन चीज़ों के नाम भी न सुने थे।

चौथा बाब
तक़्लीद वाजिब होने के दलाइल में

इस बाब में हम दो फ़स्लें लिखते हैं। पहली फ़स्ल में तो सिर्फ़ तक़्लीद के दलाइल हैं। दूसरी में तक़्लीदे शख़्सी के दलाइल।

फ़स्ले अव्वल : तक़्लीद का वाजिब होना क़ुरआनी आयात और अहादीसे सहीहा और अमले उम्मत और अक़्वाले मुफ़स्सेरीन से साबित है। तक़्लीद मुतलक़न भी और तक़्लीदे मुज्तहेदीन भी एक तक़्लीद का सुबूत है। *इह्दिनस सिरातल मुस्तक़ीम सिरातल्लज़ी न अनअमत अलैहिम।* **(सूरः फ़ातिहा)**

तरजमा : हम को सीधा रास्ता चला, उनका रास्ता जिन पर तूने एहसान किया।

इससे मालूम हुआ कि सिराते मुस्तक़ीम वही है जिस पर अल्लाह के नेक बन्दे चले हों। और तमाम मुफ़स्सेरीन, मुहद्देसीन, फ़ुक़हा, औलिया अल्लाह, ग़ौस व क़ुतुब व अब्दाल अल्लाह के नेक बन्दे हैं वह सब ही मुक़ल्लिद गुज़रे लिहाज़ा तक़्लीद ही सीधा रास्ता हुआ। कोई मुहद्दिस व मुफ़स्सिर, वली ग़ैर मुक़ल्लिद न गुज़रा। ग़ैर मुक़ल्लिद वह है जो मुज्तहिद न हो फिर तक़्लीद न करे। जो मुज्तहिद हो कर तक़्लीद न करे वह ग़ैर मुक़ल्लिद नहीं। क्योंकि मुज्तहिद को तक़्लीद करना मना है।

(2) **ला युकल्लिफ़ुल्लाहु नफ़्सन इल्ला वुस्अहा** (सूरः बक़र)

तरजमा : अल्लाह किसी जान पर बोझ नहीं डालता मगर उसकी ताक़त भर। इस आयत से मालूम हुआ कि ताक़त से ज़्यादा काम की ख़ुदा तआला किसी को तक्लीफ़ नहीं देता। तो जो शख़्स इज्तिहाद न कर सके और क़ुरआन से मसाइल न निकाल सके उससे तक़्लीद न कराना और उससे

इस्तिंबात (मसाइल निकालना) कराना ताक़त से ज़्यादा बोझ डालना है। जब ग़रीब आदमी पर ज़कात और हज फ़र्ज़ नहीं है तो बे-इल्म पर मसाइल व इस्तिंबात करना क्यों कर ज़रूरी होगा।

(3) **वस्साबिकूनल-अव्वलून मिनल-मुहाजिरीना वल-अंसारे वल्लज़ीना तबऊहुम बे-एहसानिन रज़ि अल्लाहु अन्हुम व रज़ू अन्हु** और सब में अगले पिछले मुहाजिर व अंसार और जो भलाई के साथ उनके पैरू हुए अल्लाह उन से राज़ी और वह अल्लाह से राज़ी।

मालूम हुआ कि अल्लाह उनसे राज़ी है जो मुहाजिरीन और अंसार की इत्तेबा यानी तक़्लीद करते हैं। यह भी तक़्लीद हुई।

(4) **अतीउल्लाहा व अतीउर्रसूला व ऊलिल अम्रे मिन्कुम।** इताअत करो अल्लाह की और इताअत करो रसूल की और हुक्म वालों की जो तुम में से हों।

इस आयत में तीन ज़ातों की इताअत का हुक्म दिया गया। अल्लाह की (कुरआन) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की (हदीस) अम्र वालों की (फ़िक़हः व इस्तिंबात के उलमा) मगर कलिमा **अतीउल्लाह** दो जगह लाया गया। अल्लाह के लिए एक और रसूल अलैहिस्सलाम और हुक्म वालों के लिए एक। क्योंकि अल्लाह की सिर्फ़ उसके फ़रमाने में ही इताअत की जाएगी न कि उसके फ़ेअल में और न उसके सुकूत में। वह कुफ़्फ़ार को रोज़ी देता है कभी उनको ज़ाहिरी फ़तह देता है वह कुफ़्र करते हैं मगर उनको फ़ौरन अज़ाब नहीं भेजता। हम इसमें रब तआला की पैरवी नहीं कर सकते कि कुफ़्फ़ार की इमदाद करें ब-ख़िलाफ़ नबी अलैहिस्सलाम व इमाम मुज्तहिद के, कि उनका हर हुक्म उनका हर काम और उनका किसी को कुछ काम करते हुए देख कर ख़ामोश होना तीनों चीज़ों में पैरवी की जाएगी। इस फ़र्क़ की वजह से दो जगह **अतीऊ** फरमाया। अगर कोई कहे कि अम्र वालों से मुराद सुल्ताने इस्लामी है तो सुल्ताने इस्लामी की इताअत शरई अहकाम में की जाएगी न कि ख़िलाफ़े शरअ चीज़ों में। और सुल्तान वह शरई अहकाम उलमा मुज्तहेदीन ही से मालूम करेगा। हुक्म तो असल में फ़क़ीह का होता है। इस्लामी सुल्तान महज़ उसका जारी करने वाला होता है। तमाम रिआया का हाकिम बादशाह और बादशाह का हाकिम आलिम मुज्तहिद। लिहाज़ा नतीजा वही निकला कि **ऊलिल-अम्रे** उलमा-ए-मुज्तहेदीन ही हुए। और अगर बादशाहे इस्लामी भी मुराद लो जब भी तक़्लीद तो साबित हो ही गई आलिम की न हुई बादशाह की हुई।

यह भी ख़्याल रहे कि आयत में इताअत से मुराद शरई इताअत है।

एक नुक्ता इस आयत में यह भी है कि अहकाम तीन तरह के हैं साफ़--साफ़ कुरआन से साबित जैसे कि जिस औरत ग़ैर हामिला का शौहर

मर जाए तो उसकी इद्दत चार माह दस दिन है। उनके लिए हुक्म हुआ। **अतीउल्लाहा** दूसरे दो जो साफ़–साफ़ हदीस से साबित हैं। जैसे कि चांदी सोने का ज़ेवर मर्द को पहनना हराम है इसके लिए फरमाया व **अतीउर्रसूला** तीसरे वह जो न तो सराहतन (साफ़–साफ़) कुरआन से साबित हैं न हदीस से जैसे कि औरत से इग़लाम करने की हुर्मते क़तई उसके लिए फरमाया गया **ऊलिल-अम्रे मिन्कुम** तीन तरह के अहकाम और तीन हुक्म।

(5) **फ़स्अलू अह्लज़्ज़िक्रे इन कुन्तुम ला तालमून।** तो ऐ लोगो! इल्म वालों से पूछो अगर तुमको इल्म नहीं।

इस आयत से मालूम हुआ कि जो शख़्स जिस मसला को न जानता हो वह अह्ले इल्म से दरयाफ़्त करे। वह इज्तिहादी मसाइल जिनके निकालने की हम में ताक़त न हो मुज्तहेदीन से दरयाफ़्त किए जाएंगे। कुछ लोग कहते हैं कि इससे मुराद तारीख़ी वाक़ेआत हैं जैसा कि ऊपर की आयत से साबित है लेकिन यह सही नहीं। इसलिए कि इस आयत के कलिमात मुतलक़ बग़ैर क़ैद के हैं और पूछने की वजह है न जानना। तो जिस चीज़ को हम न जानते हों उसका पूछना लाज़िम है।

(6) **वत्तबिअ सबीला मन अनाबा इलैया** और उसकी राह चल जो मेरी तरफ रुजू लाया।

इस आयत से भी मालूम हुआ कि अल्लाह की तरफ रुजू करने वालों की इत्तेबा (तक़्लीद) ज़रूरी है। यह हुक्म भी आम है। क्योंकि आयत में कोई क़ैद नहीं।

(7) **तरजमा** : और वह जो अर्ज़ करते हैं कि ऐ हमारे रब हमको दे हमारी बीवियों और हमारी औलाद से आँखों में ठंडक और हमको परहेज़गारों का पेशवा बना।

इस आयत की तफ़्सीर में तफ़्सीर मुआलिमुत्तंज़ील में है **फ़नक़्तदी बिल-मुत्तक़ीना व यक़्तदी बिनल-मुत्तकून।** हम परहेज़गारों की पैरवी करें और परहेज़गार हमारी पैरवी करें।

इस आयत से भी मालूम हुआ कि अल्लाह वालों की पैरवी और उनकी तक़्लीद ज़रूरी है।

(8) **तरजमा** : तो क्यों न हुआ कि उनके हर गरोह में से एक जमाअत निकले कि दीन की समझ हासिल करें और वापस आकर अपनी क़ौम को डर सुनाएं इस उम्मीद पर कि वह बचें।

इस आयत से मालूम हुआ कि हर शख़्स पर मुज्तहिद बनना ज़रूरी नहीं। बल्कि कुछ तो फ़क़ीह बनें और कुछ दूसरों की तक़्लीद करें।

(9) **तरजमा** : और अगर इसमें रसूल और अम्र वाले लोगों की तरफ रुजू करते तो ज़रूर इनमें से उसकी हक़ीक़त जान लेते वह जो इस्तिंबात

करते हैं।

इससे साफ़ तौर पर मालूम हुआ कि अहादीस और अख़्बार कुरआनी आयात को पहले इस्तिंबात करने वाले उलमा के सामने पेश करें। फिर जिस तरह वह फरमा दें उस पर अमल करे। ख़बर से बढ़ कर कुरआन व हदीस है। लिहाज़ा इसका मुज्तहिद पर पेश करना ज़रूरी है।

(10) **यौमा नदऊ कुल्ला उनासिन बिइमामेहिम** जिस दिन हर जमाअत को उसके इमाम के साथ बुलाएंगे।

इसकी तफ़्सीर में तफ़्सीर रूहुल-ब्यान में है **औ मुक़द्दमिन फ़िद्दीने फ़युक़ालु या हनफ़ीयुन या शाफ़ईयुन** या इमाम दीनी पेशवा है पस क़्यामत में कहा जाएगा कि ऐ हन्फ़ी ऐ शाफ़ई।

इससे मालूम हुआ कि क़्यामत के दिन हर इंसान को उसके इमाम के साथ बुलाया जाएगा। यूं कहा जाएगा कि ऐ हन्फ़ीयो, ऐ शाफ़इयो! ऐ मालकीयो! चलो तो जिसने इमाम ही न पकड़ा उसको किसके साथ बुलाया जाएगा उसके बारे में सूफ़िया-ए-किराम फरमाते हैं कि जिसका कोई इमाम नहीं उसका इमाम शैतान है।

(11) **तरजमा** : यानी जब उन से कहा जाता है कि ऐसा ईमान लाओ जैसा यह मुख़्लिस मोमिन ईमान लाए तो कहते हैं कि हम ऐसा ईमान लाएं जैसा यह बेवक़ूफ़ ईमान लाए।

मालूम हुआ कि ईमान भी वही मोतबर है जो सालेहीन का सा हो। तो मज़्हब भी वही ठीक है जो नेक बन्दों की तरह हो और वह तक़्लीद है।

अक़्वाले मुफ़स्सेरीन व मुहद्देसीन

दारमी बाबुल-इक़्तिदा बिल-उलमा में है।

तरजमा : ख़बर दी हमको याला ने उन्होंने कहा कि मुझसे कहा अब्दुल-मलिक ने उन्होंने अता से रिवायत की कि इताअत करो अल्लाह की और इताअत करो रसूल की और अपने में से अम्र वालों की फ़रमाया अता नें ऊलुल-अम्र इल्म और फ़िक़्ह वाले हज़रात हैं।

तफ़्सीर ख़ाज़िन जेरे आयत :

तरजमा : तुम उनसे पूछो जो मोमिन हैं और कुरआन जानने वाले उलमा हैं।

तफ़्सीर दुर्रे मन्सूर इसी आयत **फ़स्अलू अह्लज़्ज़िक्रे** की तफ़्सीर में है।

तरजमा : इब्ने मरदुव्विया ने हज़रत अनस से रिवायत की फरमाते हैं कि मैंने हुज़ूर अलैहिस्सलाम से सुना कि फरमाते थे कि बाज़ शख़्स नमाज़ पढ़ते हैं, रोज़े रखते हैं, हज और जिहाद करते हैं, हालांकि वह मुनाफ़िक़ होते हैं। अर्ज़ की कि या रसूलल्लाह! किस वजह से इनमें निफ़ाक़ (नाइत्तेफ़ाक़ी) आ गया। फ़रमाया कि अपने इमाम पर तअना करने की वजह से। इमाम कौन

है फरमाया कि रब ने फरमाया **फ़स्अलू अल-आयत।**

तफ़्सीर सावी सूरः कहफ **वज़्कुर रब्बेका इज़ा नसीता** की तफ़्सीर में है।

यानी चार मज़्हबों के सिवा किसी की तक़्लीद जाइज़ नहीं। अगरचे वह सहाबा के क़ौल और सहीह हदीस और आयत के मुवाफ़िक़ ही हो। जो इन चार मज़्हबों से ख़ारिज है वह गुमराह और गुमराह करने वाला है। क्योंकि हदीस व क़ुरआन के महज़ ज़ाहिरी मानी लेना कुफ़्र की जड़ है।

अहादीस : मुस्लिम जिल्द अव्वल सफ़ः 54 **बाब बयान इन्नदीना अन्नसीहतु** में है।

तरजमा : तमीम दारी से मरवी है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फरमाया कि दीन ख़ैर ख़्वाही है हमने अर्ज़ किया किस की? फरमाया अल्लाह की और उसकी किताब और उसके रसूल की और मुसलमानों के इमामों की और आम मोमिनीन की।

इस हदीस की शरह नुववी में है।

तरजमा : यह हदीस उन इमामों को भी शामिल है जो उलमा-ए-दीन हैं और उलमा की ख़ैर ख़्वाही से है उनकी रिवायत की हुई अहादीस का क़बूल करना और उनके अहकाम में तक़्लीद करना और उनके साथ नेक गुमान करना।

दूसरी फ़स्ल तक़्लीदे शख़्सी के बयान में

मिश्कात किताबुल-इमारह में बहवाला मुस्लिम है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमाते हैं।

तरजमा : जो तुम्हारे पास आवे हालांकि तुम एक शख़्स की इताअत पर मुत्तफ़िक़ हो वह चाहता हो कि तुम्हारी लाठी तोड़ दे और तुम्हारी जमाअत को मुतफ़र्रिक़ कर दे तो उसको क़त्ल कर दो। (सफ़ 320)

इसमें मुराद इमाम और उलमा-ए-दीन हैं क्योंकि हाकिमे वक़्त की इताअत ख़िलाफ़े शरअ् में जाइज़ नहीं है।

मुस्लिम ने **किताबुल-इमारह** में एक बाब बांधा **बाब वजूबे ताअतिल-अमराए फ़ी ग़ैरे मासियतिन** यानी अमीर की इताअत ग़ैर मासियत में वाजिब है इससे मालूम हुआ कि एक ही की इताअत ज़रूरी है।

मिश्कात शरीफ़ **किताबुल-बुयूअ़ बाबुल-फ़राइज़** में बरिवायते बुख़ारी है कि हज़रत अबू मूसा अशअरी ने हज़रत इब्ने मअऊद के बारे में **ला तस्अलूनी मादामा हाज़ल-हिबरू फ़ीकुम** जब तक कि यह अल्लामा तुम में रहें मुझसे मसाइल न पूछो मालूम हुआ कि अफ़्ज़ल के होते हुए मफ़्ज़ूल की इताअत न करे और हर मुक़ल्लिद की नज़र में अपना इमाम अफ़्ज़ल होता है।

फ़त्हुल-क़दीर में है।

तरजमा : जो शख़्स मुसलमानों की हुकूमत का मालिक हो फिर उन पर किसी को हाकिम बनाए हालांकि जानता हो कि मुसलमानों में इस से ज़्यादा मुस्तहिक़ और कुरआन व हदीस का जानने वाला है तो उसने अल्लाह व रसूल अलैहिस्सलाम और आम मुसलमानों की ख़्यानत की। मिश्कात **किताबुल-इमारह** फ़स्ल अव्वल में है **मन माता व लैसा फ़ी उनुक़िही बैअतुन माता मैतता जाहीलीयतिन** जो मर जाए हालांकि उसके गले में किसी की बैअत न हो, वह जहालत की मौत मरा। इसमें इमाम की बैअत यानी तक़्लीद और बैअते औलिया सब ही दाख़िल हैं। वरना बताओ फ़ी ज़माना हिन्दुस्तानी वहाबी किस सुल्तान की बैअत में हैं।

यह तो चन्द आयात व अहादीस थीं। इसके अलावा और भी पेश की जा सकती हैं। मगर इख़्तिसारन इसी पर क़नाअत की गई। अब उम्मत का अमल देखो तो तबा ताबईन के ज़माना से अब तक सारी उम्मते मरहूमा इसी तक़्लीद की आमिल है कि जो ख़ुद मुज्तहिद न हो, वह एक मुज्तहिद की तक़्लीद करे। और इज्मा-ए-उम्मत पर अमल करना कुरआन व हदीस से साबित है और ज़रूरी है। कुरआन फ़रमाता है।

तरजमा : और जो रसूल की मुख़ालिफ़त करे बाद इसके कि हक़ रास्ता उस पर खुल चुका और मुसलमानों की राह से जुदा रास्ता चले हम उसको उसकी हालत पर छोड़ देंगे और उसको दोज़ख़ में दाख़िल करेंगे और क्या ही बुरी जगह पलटने की है।

जिस से मालूम हुआ कि जो रास्ता आम मुसलमानों का हो उसको इख़्तियार करना फ़र्ज़ है और तक़्लीद पर मुसलमानों का इज्मा है।

मिश्कात बाबुल-एतसाम बिल–किताबे वस्सुन्नते सफ़: **30**, में है। **इत्तबे-उस्सवादेल-आज़मा फ़इन्नहू मन शज़्ज़ा शुज़्ज़ा फ़िन्नारे** बड़े गरोह की पैरवी करो क्योंकि जो जमाअत मुस्लेमीन से अलग रहा वह अलग करके जहन्नम में भेजा जाएगा। और हदीस में आया है **मा रआहुल-मुमिनूना हसनन फ़हुवा इन्दल्लाहे हसनुन**। जिसको मुसलमान अच्छा जानें वह अल्लाह के नज़दीक भी अच्छा है। अब देखना यह है कि आज भी और इससे पहले भी आम मुसलमान तक़्लीदे शख़्सी ही को अच्छा जानते आए और मुक़ल्लिद ही हुए। आज भी अरब व अजम में मुसलमान तक़्लीदे शख़्सी ही करते हैं। और जो ग़ैर मुक़ल्लिद हुआ वह इज्मा का मुन्किर हुआ। अगर इज्तेमा का एतबार न करो तो ख़िलाफ़ते सिद्दीक़ी व फ़ारूक़ी किस तरह साबित करोगे। वह भी तो इज्माए उम्मत से ही साबित हुई। यहाँ तक कि जो शख़्स इन दोनों ख़िलाफ़तों में से किसी का भी इन्कार करे वह काफ़िर है। देखो शामी वग़ैरह। इसी तरह तक़्लीद पर भी इज्मा हुआ।

तफ़सीर ख़ाज़िन ज़ेरे आयत व **कूनू मअस्सादेक़ीन** है कि अबू बकर रज़ि

अल्लाहु अन्हु ने अंसार से फरमाया कि कुरआन शरीफ़ ने मुहाजिरीन को **सादेक़ीन** कहा **ऊलाइका हुमुस्सादिकून** और फिर फरमाया **व कूनू मअस्सादेक़ीन** सच्चों के साथ रहो। लिहाज़ा तुम भी अलग ख़िलाफ़त न क़ाइम करो। हमारे साथ रहो ऐसे ही मैं ग़ैर मुक़ल्लिदों से कहता हूँ कि सच्चों ने तक़्लीद की है तुम भी उनके साथ रहो मुक़ल्लिद बनो।

अक़्ली दलाइल : दुनिया में इंसान कोई भी काम बग़ैर दूसरे की पैरवी के नहीं कर सकता। हर हुनर और इल्म के क़वाइद सब में उसके माहिरीन की पैरवी करना होती है। दीन का मामला तो दुनिया से कहीं ज़्यादा मुश्किल है। इसमें भी उसके माहिरीन की पैरवी करना होगी इल्मे हदीस में भी तक़्लीद है कि फ़लां हदीस इस लिए ज़ईफ़ है कि बुख़ारी ने या फ़ुलां मुहद्दिस ने फ़ुलां रावी को ज़ईफ़ कहा है। उसका क़ौल मानना यही तो तक़्लीद है। कुरआन की क़िरात में क़ारियों की तक़्लीद है। कि फ़ुलां ने इस तरह इस आयत को पढ़ा है कुरआन के एराब, आयात सब में तक़्लीद ही तो है। नमाज़ में जब जमाअत होती है तो इमाम की तक़्लीद ही सब मुक़्तदी करते हैं। हुकूमते इस्लामी में तमाम मुसलमान एक बादशाह की तक़्लीद करते हैं। रेल में बैठते हैं तो एक इंजन की सारी रेल वाले तक़्लीद करते हैं। ग़र्ज़ेकि इंसान हर काम में मुक़ल्लिद है। और ख़्याल रहे कि इन सब सूरतों में तक़्लीदे शख़्सी है। नमाज़ के इमाम दो नहीं। बादशाहे इस्लाम दो नहीं तो शरीअत के इमाम एक शख़्स दो किस तरह मुक़र्रर कर सकता है।

मिश्कात किताबुल जिहाद बाब आदाबिस्सफ़र सफ़ः 339, में है **इज़ा काना सलासतुन फ़ी सफ़रिन फ़ल्यूमिरू अहदहुम** जबकि तीन आदमी सफर में हों तो एक को अपना अमीर बना लें।

पांचवा बाब

तक़्लीद पर एतराज़ात और जवाबात के बयान में

मसलए तक़्लीद पर मुख़ालिफ़ीन के एतराज़ात दो तरह के हैं। एक वाहियात ताने और तमस्ख़ुर उनके जवाबात ज़रूरी नहीं। दूसरे वह जिन से मुक़ल्लेदीन को ग़ैर मुक़ल्लिद धोखा देते हैं। और आम मुक़ल्लेदीन ६ धोखा खा लेते हैं। वह हस्बे ज़ैल हैं।

सवाल : (1) अगर तक़्लीद ज़रूरी थी तो सहाब-ए-किराम किसी के मुक़ल्लिद क्यों न हुए।

जवाब : सहाब-ए-किराम को किसी की तक़्लीद की ज़रूरत न थी। वह तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम की सोहबत की बरकत से तमाम मुसलमानों के इमाम और पेशवा हैं कि अइम्म-ए-दीन इमाम अबू हनीफ़ा व शाफ़ई वग़ैरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा उनकी पैरवी करते हैं। मिश्कात बाब

फ़ज़ाइलुस्सहाबा सफ़: 554, में है **अस्हाबी कन्नुजूमे फ़बेअय्यिहिम इक़्तदैतुम इहतदैतुम** मेरे सहाबा सितारों की तरह हैं तुम जिनकी पैरवी करोगे हिदायत पा लोगे **अलैकुम बिसुन्नती व सुन्नतिल-खुलफ़ाए अर्राशिदीन** (मिश्कात यही बाब) तुम लाज़िम पकड़ो मेरी और मेरे ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत को। यह सवाल तो ऐसा है जैसे कोई कहे कि हम किसी के उम्मती नहीं। क्योंकि हमारे नबी अलैहिस्सलाम किसी के उम्मती न थे। तो उम्मती न होना सुन्नते रसूलुल्लाह है। इससे यही कहा जाएगा कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ख़ुद नबी हैं। सब आपकी उम्मत हैं। वह किस के उम्मती होते। हमको उम्मती होना ज़रूरी है। ऐसे ही सहाब-ए-किराम तमाम मुसलमानों के इमाम हैं। उनका कौन मुसलमान इमाम होता।

नहर से पानी उस खेत को दिया जाएगा जो दरिया से दूर हो। मुकब्बेरीन की आवाज़ पर वही नमाज़ पढ़ेगा जो इमाम से दूर हो। लबे दरिया के खेतों को नहर की ज़रूरत नहीं। सफ़े अव्वल के मुक़्तदियों को मुकब्बेरीन की ज़रूरत नहीं सहाब-ए-किराम सफ़े अव्वल के मुक़्तदी हैं वह बिला वास्ता सीनए पाक मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम से फ़ैज़ लेने वाले हैं। हम चूंकि इस दरिया से दूर हैं। लिहाज़ा नहर के हाजत मन्द हैं। फिर समुन्द्र से हज़ारहा दरिया जारी होते हैं जिन सब में पानी तो समुन्द्र ही का है। मगर इन सब के नाम और रास्ते जुदा हैं। कोई गंगा कहलाता है कोई जमुना। ऐसे ही हुज़ूर अलैहिस्सलाम। आप रहमत के समुन्द्र हैं। इस सीना में से जो नहर इमाम अबू हनीफ़ा के सीना से होती हुई आई उसे हन्फ़ी कहा गया जो इमाम मालिक के सीना से आई। वह मज़हब मालकी कहलाया। पानी सबका एक है मगर नाम जुदागाना। और इन नहरों की हमें ज़रूरत पड़ी। न कि सहाब-ए-किराम को जैसे कि हदीस की सनदें हमारे लिए है सहाब-ए-किराम के लिए नहीं।

सवाल : (2) रहबरी के लिए कुरआन व हदीस काफ़ी हैं। इनमें क्या नहीं जो कि फ़िक़्ह से हासिल करें कुरआन फ़रमाता है **व ला रतबिन वला याबिसिन इल्ला फ़ी किताबिम मुबीन**। और न है कोई तर और ख़ुश्क चीज़ जो एक रौशन किताब में लिखी न हो। और बेशक हमने कुरआन याद करने के लिए आसान फरमा दिया तो है कोई याद करने वाला। इन आयतों से मालूम हुआ कि कुरआन में सब है और कुरआन सब के लिए आसान भी है। फिर किस लिए मुज्तहिद के पास जावें?

जवाब : कुरआन व हदीस बेशक राहबरी के लिए काफ़ी हैं और इन में सब कुछ है मगर इन से मसाइल निकालने की क़ाबलीयत होना चाहिए। समुन्द्र में मोती हैं मगर उनको निकालने के लिए ग़ोता ख़ोर की ज़रूरत है। अइम्मा दीन इस समुन्द्र के ग़ोता ज़न हैं। तिब की किताबों में सब कुछ लिखा

है। मगर हम को हकीम के पास जाना और उससे नुस्ख़ा मुक़र्रर कराना ज़रूरी है। अइम्म-ए-दीन तबीब हैं। **वलक़द यस्सरनल** क़ुरआन में फ़रमाया है कि हमने क़ुरआन को हिफ़्ज़ करने के लिए आसान किया है न कि इससे मसाइल निकालने के लिए। मगर मसाइल निकालना आसान है तो फिर हदीस की भी क्या ज़रूरत है। क़ुरआन में सब कुछ है और क़ुरआन आसान है और फिर क़ुरआन सिखाने के लिए नबी क्यों आए। क़ुरआन में है और वह नबी उनको किताबुल्लाह और हिक्मत की बातें सिखाते हैं। क़ुरआन व हदीस रूहानी दवाएं हैं इमाम रूहानी तबीब।

सवाल : (3) क़ुरआने करीम ने तक़्लीद करने वालों की बुराइयां फरमाई हैं फरमाता है उन्होंने अपने पादरियों और जोगियों को अल्लाह के सिवा ख़ुदा बना लिया। फिर अगर तुम में किसी बात का झगड़ा उठे तो उसको अल्लाह और रसूल की तरफ रूजू करो और यह कि यही मेरा सीधा रास्ता है तो इस पर चलो और राहें न चलो कि तुमको उसकी राह से जुदा कर देंगी। तो कहेंगे बल्कि हम तो उस पर चलेंगे जिस पर अपने बाप दादा को पाया। इन आयात और इन जैसी दूसरी आयात से मालूम होता है कि अल्लाह व रसूल के हुक्म के सामने इमामों की बात मानना तरीक़-ए-कुफ़्फ़ार है। और सीधा रास्ता एक ही है। चार रास्ता हन्फ़ी, शाफ़ई वग़ैरह टेढ़े रास्ते हैं वग़ैरह।

जवाब : जिस तक़्लीद की क़ुरआने करीम ने बुराई फरमाई है उसको हम पहले बाब में ब्यान कर चुके हैं (**व ला तत्तबेउस सुबुला**) में यहूदीयत या नस्रानियत वग़ैरह ख़िलाफ़े इस्लाम रास्ते मुराद हैं। हन्फ़ी, शाफ़ई वग़ैरह चन्द रास्ते नहीं। बल्कि एक स्टेशन की चार सड़कें या एक दरिया की चार नहरें हैं। वरना फिर तो ग़ैर मुक़ल्लेदीन की जमाअतें सनाई और ग़ज़्नवी का क्या हुक्म है। चन्द रास्ते होते हैं अक़ाइद बदलने से। चारों मज़्हब के अक़ाइद एक जैसे हैं। सिर्फ़ आमाल में फ़ुरूई इख़्तिलाफ़ है। जैसा कि ख़ुद सहाब-ए-किराम में इख़्तिलाफ़ रहा।

सवाल : (4)

होते हुए मुस्तफ़ा की गुफ़्तार
मत मान किसी का क़ौल व किरदार
दीने हक़ रा चार मज़्हब साख़्तन्द
फ़ितना दर दीन नबी अन्दाख़्तन्द

जवाब : यह शेअर असल में चकड़ालवियों का है –

होते हुए किब्रिया की गुफ़्तार
मत मान नबी का क़ौल व किरदार
दूसरा शेअर भी इस तरह है –

मस्जिद दो ख़िश्त अलाहिदा साख़्तन्द
फ़ितना दर दीन नबी अन्दाख़्तन्द

चार मज़हब का जवाब हमने अपने दीवान में दो शेअरों में इस तरह दिया है –

चार रुसुल चार फ़रिश्ते चार कुतुब हैं दीन चार
सिलसिले दोनों चार–चार लुत्फ़ अजब है चार में
आतिश व आब व ख़ाक व बाद सब का उन्हीं से है सबात
चार का सारा माजरा ख़त्म है चार यार में

चार का अदद तो ख़ुदा को बड़ा ही प्यारा है। किताबें भी चार भेजीं और दीन भी चार ही बनाए। इंसान का ख़मीर भी चार ही चीज़ों से किया वग़ैरह। जब मक़्सूद के चारों रास्ते घिर गए तो फिर वहाँ पहुँचना ना-मुम्किन। क्योंकि रास्ते चार ही हो सकते हैं। ख़ान-ए-काबा के इर्द गिर्द चार तरफ नमाज़ होती है। मगर रुख़ सबका काबा तो ऐसे ही हुज़ूर अलैहिस्सलाम तो क़ाबा ईमान हैं। चारों मज़्हबों ने चारों रास्ते घेर लिए। वहाँ क़िस रास्ता से पहुँचेंगे?

जिस तरह कुरआन के होते हुए हदीस की ज़रूरत है। इसी तरह हदीस के होते हुए फ़िक्हः की ज़रूरत है। फ़िक़हः कुरआन व हदीस की तफ़्सीर है। और जो हुक्म कि हम को न हदीस में मिले न कुरआन में उसको फ़िक़हः ही ब्यान फरमाता है।

सवाल : (5) तक़्लीद में ग़ैर ख़ुदा को अपना हकम बनाना है। और यह शिर्क है। लिहाज़ा तक़्लीदे शख़्सी शिर्क है रब तआला फरमाता है **इनिल-हुक्मु इल्ला लिल्लाह** नहीं है हुक्म मगर अल्लाह का।

अगर ग़ैर ख़ुदा को हकम या पंच बनाना शिर्क है। तो हदीस मानना भी शिर्क हुआ। और सारे मुहद्देसीन व मुफ़स्सेरीन मुश्रिक हो गए क्योंकि तिर्मिज़ी, अबू दाऊद व मुस्लिम वग़ैरह हज़रात तो मुक़ल्लिद हैं और इमाम बुख़ारी वग़ैरह मुक़ल्लिदों के शागिर्द। देखो ऐनी शरह बुख़ारी। हमने दीवाने सालिक में इस सवाल का यह जवाब दिया।

जो तेरी तक़्लीद शिर्क होती मुहद्देसीन सारे होते मुश्रिक
बुख़ारी मुस्लिम व इब्ने माजा इमाम आज़म अबू हनीफ़ा
कि जितने फ़ुक़हा मुहद्देसीन हैं तुम्हारे ख़िरमन ख़ूशा चीं हैं
हों वास्ते से कि बेवसीला इमामा आज़म अबू हनीफ़ा

जिस रिवायत में एक फ़ासिक़ रावी आ जाए वह रिवायत ज़ईफ़ या मौज़ू है। तो जिस रिवायत में कोई मुक़ल्लिद आ जाए तो मुश्किर आ गया। लिहाज़ा वह भी बातिल। फिर तिर्मिज़ी व अबू दाऊद तो ख़ुद मुक़ल्लिद हैं मुश्रिक हुए। उनकी रिवायत ख़त्म हुई। बुख़ारी वग़ैरह पहले ही ख़त्म हो चुकी कि वह मुश्रिकों के शागिर्द हैं। अब हदीस कहाँ से लाओगे। कुरआन पाक फ़रमाता है

और अगर तुमको मियाँ बीवी के झगड़े का ख़ौफ़ हो तो एक हकम मर्द वालों की तरफ़ से भेजो और एक पंच औरत वालों की तरफ से भेजो।

हज़रत अली व मुआविया रज़ि अल्लाहु अन्हुमा ने जंगे सिफ़्फ़ीन में हकम बनाया। ख़ुद हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने बनी कुरैज़ा के मामले में हज़रत सअद इब्ने मआज़ रज़ि अल्लाहु अन्हु को हकम बनाया। आयत के माना यह हैं कि हक़ीक़ी हुक्म ख़ुदा-ए-पाक ही का है और जो उसके सिवा के अहकाम हैं उलमा फ़ुक़हा और मशाइख़ के। इसी तरह अहकामे हदीस यह तमाम बिल-वास्ता ख़ुदा-ए-तआला ही के हकम हैं। अगर यह मानी हों कि किसी का हुक्म सिवाए ख़ुदा के मानना शिर्क है तो आज तमाम दुनिया जज का फ़ैसला कचहरियों के मुक़द्दमात को मानती है सब ही मुश्रिक हो गए।

सवाल : (6) क़्यासे मुज्तहिद गुमान है। और गुमान करना गुनाह है। क़ुरआन इससे मना करता है। क़ुरआन फरमाता है।

तरजमा : ऐ ईमान वालो बहुत गुमानों से बचो। बेशक कोई गुमान गुनाह हो जाता है और ऐब न ढूँढो। और एक दूसरे की ग़ीबत न करो। लिहाज़ा दीन में सिर्फ़ किताब व सुन्नत पर अमल चाहिए।

जवाब : इसका जवाब ख़ात्मा में आएगा कि क़्यास किसे कहते हैं और इसके अहकाम क्या हैं?

सवाल : (7) इमाम हनीफ़ा फ़रमाते हैं कि जो हदीस सही साबित हो जाए वही मेरा मज़्हब है। लिहाज़ा हमने उनके क़ौले हदीस के ख़िलाफ़ पाकर छोड़ दिए। इंशाअल्लाह ग़ैर मुक़ल्लिदों को इससे ज़्यादा दलाइल न मिलेंगे। उन्हीं को बना बिगाड़ कर या बढ़ा चढ़ा कर ब्यान करते हैं।

जवाब : बेशक इमाम साहब का यह हुक्म है कि अगर मेरा क़ौल किसी हदीस सहीह के मुक़ाबिल आ जाए तो हदीस पर अमल करना मेरे मज़्हब पर अमल करना है। यह इमाम साहब का इंतिहाई तक़्वा है और वाक़या भी यह है कि क़्यास मुज्तहिद वहाँ होता है जहाँ क़ुरआन व हदीस मौजूद न हो। लेकिन सवाल यह है कि इस ज़माने में दुनिया में ऐसा कौन मुहद्दिस है जो अहादीस का इस क़द्र ज़्यादा इल्म रखता हो कि तमाम अहादीस फिर उसकी तमाम सनदों पर इत्तला रखता हो। और यह भी जानता हो कि इमाम साहब ने यह हुक्म किस हदीस से लिया है। हम लोगों की नज़र सहाहे सित्ता से आगे नहीं होती। फिर किस तरह फ़ैसला कर सकते हैं कि इमाम का यह फ़रमान किसी हदीस से माख़ूज़ नहीं यूं तो हदीस में भी आता है कि –

तरजमा : जब तुमको मेरी कोई हदीस पहुँचे तो उसको किताबुल्लाह पर पेश करो। अगर उसके मुवाफ़िक़ हो तो क़बूल कर लो वरना रद कर दो। (मुक़द्दमा तफ़सीराते अहमदिया सफ़ा 4) तो अगर कोई चकड़ालवी कहे कि बहुत हदीस चूंकि ख़िलाफ़े क़ुरआन हैं इसलिए हम हदीस को छोड़ते हैं।

कुरआन में है कि मीरास तक़सीम करो। हदीस में है कि नबी की मीरास तक़सीम नहीं होती। जिस तरह यह कलाम रदशुदा है तुम्हारा क़ौल भी रद है।

सवाल : (8) इमामे आज़म को हदीस नहीं आती थी। इसलिए उनकी रिवायात बहुत कम हैं और जो हैं वह सब ज़ईफ़।

जवाब : इमाम आज़म बहुत बड़े मुहद्दिस थे। बग़ैर हदीस दानी इस क़दर मसाइल कैसे इस्तिंबात (निकल) हो सकते थे उनकी किताब मुसनद अबू हनीफ़ा और इमाम मुहम्मद की किताब मुअत्ता इमाम मुहम्मद से उनकी हदीस दानी मालूम होती है हज़रत सिद्दीक़े अक्बर की रिवायात बहुत कम मिलती हैं। तो क्या वह मुहद्दिस न थे। कमी रिवायत एहतियात की वजह से है। इमाम साहब की तमाम रिवायात सहीह हैं। क्योंकि उनका ज़माना हुज़ूर से बहुत क़रीब है। बाद में कुछ रिवायात में ज़ुअफ़ पैदा हुआ। बाद का ज़ुअफ़ हज़रत इमाम को नुक़सानदेह नहीं। जिस क़दर सनदें बढ़ी ज़ुअफ़ भी पैदा हुआ।

लतीफ़ा : बाज़ लोग यह भी कहते हैं कि तुम कहते हो कि चारों मज़्हब हक़ हैं यह किस तरह हो सकता है। हक़ तो सिर्फ़ एक ही होगा। इमाम अबू हनीफ़ा फरमाते हैं कि इमाम के पीछे सूर-ए-फ़ातिहा पढ़ना मक्रूहे तहरीमी है। इमाम शाफ़ई फरमाते हैं कि वाजिब है तो या तो वाजिब होगी या मक्रूह। दोनों मसले सही किस तरह हो सकते हैं।

जवाब : यह है कि हक़ के मानी यहाँ सही या कि वाक़या के मुवाफ़िक़ नहीं है। बल्कि मतलब यह है कि चारों मज़्हब में से किसी की पैरवी कर लो खुदा के यहाँ पकड़ न होगी क्योंकि मुज्तहिद की ख़ता भी माफ़ है। अमीर मुआविया और मौला अली। इसी तरह आइशा सिद्दीक़ा और हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हुम अज्मईन में जंग भी हुई और हक़ पर एक ही साहब थे। मगर दोनों को हक़ पर कहा जाता है। यानी किसी की पकड़ अल्लाह के यहां नहीं होगी। जंगल में एक शख़्स को ख़बर नहीं कि क़िब्ला किधर है। उसने अपनी राय से चार रकाअत चार तरफ़ पढ़ीं। क्योंकि रांय बदलती रही। यह भी मुँह फ़ेरता रहा। क़िब्ला तो एक ही तरफ था। मगर नमाज़ सहीह हो गई। चारों क़िब्ला दुरुस्त हैं बल्कि मुज्तहिद ख़ता भी करे तो भी एक सवाब पाता है। कुरआन करीम ने हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम की इज्तिहादी ख़ता और हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम की दुरुस्ती राय बयान फरमाई। मगर किसी पर इताब न फरमाया। बल्कि फरमायाः **कुल्ला आतैना हुक्मन व इल्मन।**

मिश्कात किताबुल-इमारह बाबुल-अमल फ़िल-क़ज़ाए सफ़ः 324, में है। **इज़ा हकमल-हाकिमु फ़ज्तहदा व असाबा फ़लहू व अज्राने व इज़ा हकमा फ़इज्तहदा फ़अख़्तआ फ़लहू अज्रुन वाहिदुन।** (मुत्तफ़क़ अलैह) जबकि हाकिम फ़ैसला करे तो इज्तिहाद करे और सहीह करे तो दो सवाब हैं। और जब फ़ैसला करे और इज्तिहाद करे और ख़ता करे तो उसको एक सवाब

है। इससे यह एतराज़ भी उठ गया कि अगर शाफ़ई रफ़ा यदैन करे तो ठीक है और अगर ग़ैर मुक़ल्लिद करे तो जुर्म है। क्योंकि शाफ़ई हाकिमे शरअ् मुज्तहिद से फ़ैसला करा कर रफ़ा यदैन कर रहा है। और अगर ग़लती करता है तो भी माफ़ है और चूंकि ग़ैर मुक़ल्लिद ने किसी मुज्तहिद से फ़सैला न कराया। लिहाज़ा अगर सही भी करता है तो भी ख़ताकार है। जैसे कि आज हाकिम के बग़ैर फ़ैसला कोई शख़्स ख़ुद ही क़ानून को हाथ में लेकर कोई काम करता है मुजिरम है। लेकिन अगर हाकिम कचहरी से फ़ैसला करा कर वही काम किया तो उस पर जुर्म नहीं। हाकिम जवाब देह है। अगर हाकिम ने ग़लती की तो भी उसकी पकड़ नहीं। देखो हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने बदर के क़ैदियों से महज़ क़्यास पर फ़िदिया लिया। फिर आयत इसके ख़िलाफ़ आई। मालूम हुआ कि इस क़्यास से रब राज़ी नहीं मगर वह फ़िदिया का रुपया वापस न कराया गया। बल्कि इरशाद हुआ कि **फ़कुलू मिम्मा ग़निम्तुम हलालन तैय्यिबन** वह माल खा लो हलाल तैय्यिब, मालूम हुआ कि ख़ताए इज्तिहादी पर कोई पकड़ नहीं।

ख़ातिमा-क़्यास की बहस : में शरीअत के दलाइल चार हैं। कुरआन, हदीस इज्मा-ए-उम्मत और क़्यास। इज्मा के दलाइल तो हम ब्यान कर चुके कि कुरआन का भी हुक्म है और हदीस का भी कि आम जमाअते मुस्लेमीन के साथ रहो। जो इससे अलग हुआ वह जहन्नमी है।

क़्यास के माना लुग़त में अंदाज़ा लगाना और शरीअत में किसी फ़रई मसला को असल मसला से इल्लत और हुक्म में मिला देना यानी एक मसला ऐसा दर पेश आ गया जिसका सुबूत कुरआन व हदीस में नहीं मिलता तो उसकी तरह कोई वह मसला लिया जो कुरआन व हदीस में है। इसके हुक्म की वजह मालूम करके यह कहा कि चूंकि वह वजह यहाँ भी है लिहाज़ा उसका हुक्म यह है। जैसे किसी ने पूछा कि औरत के साथ इग़लाम करना कैसा है? हमने जवाब दिया कि हालते हैज़ में औरत से जिमा हराम है। क्यों? गंदगी की वजह से। और इसमें भी गंदगी है। लिहाज़ा यह भी हराम है। किसी ने पूछा कि जिस औरत से किसी के बाप ने ज़िना किया वह उसके लिए हलाल है या नहीं? हमने कहा कि जिस औरत से किसी का बाप निकाह करे वह बेटे को हराम है। वती या जुज़्ईयत की वजह से। लिहाज़ा यह औरत भी हराम है। इसको क़्यास कहते हैं। मगर शर्त यह है कि क़्यास करने वाला मुज्तहिद हो। हर कस व नाकस का क़्यास मोतबर नहीं। क़्यास असल में हुक्मे शरीअत को ज़ाहिर करने वाला है। ख़ुद मुस्तक़िल हुक्म का मुसीबत नहीं। यानी कुरआन व हदीस का ही हुक्म होता है। मगर क़्यास उसको यहाँ ज़ाहिर करता है। क़्यास का सुबूत कुरआन व हदीस व अफ़आले सहाबा से है। कुरआन फरमाता है। **फ़ातबेरू या ऊलिल-अब्सार** तो इबरत लो ऐ

निगाह वालो। यानी कुफ़्फ़ार के हाल पर अपने को क़्यास करो अगर तुमने ऐसी हरकात कीं तो तुम्हारा भी यही हाल होगा।

और कुरआन ने क़्यामत के होने को नींद पर इसी तरह खेती के ख़ुश्क होकर सर सब्ज़ होने पर क़्यास फरमा कर बताया है। अव्वल से आख़िर तक कुफ़्फ़ार की मिसालें बयान फरमाई हैं यह भी क़्यास है। बुख़ारी किताबुल-ऐतसाम सफ़: 1088, जिल्द दोम में एक बाब बांधा है। जो किसी मालूम शुदा क़ायदे को ऐसे क़ाइदे से तश्बीह दे जिसका हुक्म ख़ुदा ने ब्यान फरमा दिया है ताकि पूछने वाला इससे समझ ले।

इसमें एक हदीस नक़्ल की जिस में हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने एक औरत को क़्यास से हुक्म फरमाया।

तरजमा : एक औरत हुज़ूर अलैहिस्सलाम की ख़िदमत में हाज़िर हुई और अर्ज़ किया कि मेरी वालिदा ने हज की नज़्र मानी थी। क्या मैं उसकी तरफ़ से हज करूं? फरमया वहाँ हज करो। कहा अगर तुम्हारी मां पर क़र्ज़ होता तो तुम उसको अदा करतीं। अर्ज़ किया हां। फरमाया वह क़र्ज़ भी अदा करो जो अल्लाह का है क्योंकि अल्लाह अदा-ए-क़र्ज़ का ज़्यादा मुस्तहिक़ है। (जिल्द दोम सफ़ा 1088)

मिश्कात किताबुल-इमारत बाब मा अलल-विलाते सफ़: 324, और तिर्मिज़ी जिल्द अव्वल शुरू अबवाबुल-अहकाम और दारमी में है कि जब हज़रत मआज़ इब्ने जबल को हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने यमन का हाकिम बना कर भेजा तो पूछा कि किस चीज़ से फ़ैसला करोगे? अर्ज़ किया किताबुल्लाह से फरमाया कि अगर इसमें न पाओ तो अर्ज़ किया कि उसके रसूल की सुन्नत से, फरमाया कि अगर इसमें भी न पाओ तो अर्ज़ किया कि अपनी राय से इज्तिहाद करूंगा। रावी ने फरमाया कि फिर हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने उनके सीने पर हाथ मारा और फरमाया कि उस ख़ुदा का शुक्र है जिसने रसूलुल्लाह के क़ासिद को उसकी तौफ़ीक़ दी जिससे रसूलुल्लाह राज़ी हैं। सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम।

इस से क़्यास का पुर ज़ोर सुबूत हुआ। चूंकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम की ज़ाहिरी हयात में इज्मा नहीं हो सकता इसलिए इज्मा का ज़िक्र हज़रत मआज़ रज़ि अल्लाहु अन्हु ने न किया। इसी तरह सहाब-ए-किराम ने बहुत से अहकाम अपने क़्यास से दिए। हज़रत इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु ने उस औरत को क़्यास फरमा कर महर मिस्ल दिलवाया जो बग़ैर महर निकाह में आई। और शौहर मर गया (देखो नसाई जिल्द दोम सफ़: 88)

अब वह एतराज़ जो ग़ैर मुक़ल्लिद करते हैं **इज्तिनिबू कसीरन मिनज़्ज़न्नि** कि बहुत ज़न से बचो। इसमें ज़न से मुराद बद गुमानियां हैं यानी मुसलमानों पर बद गुमानियां न किया करो। इसी लिए इस आयत में उसके बाद ग़ीबत

वग़ैरह की मनाही है। वरना क़्यास और ग़ीबत में क्या तअल्लुक़। जैसे कि रब तआला फरमाता है **इन्नमन्नजवा मिनश्शैताने** मशवरा करना शैतान की तरफ़ से है। तो क्या हर मशवरा शैतानी काम है। नहीं बल्कि जो इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ मश्वरे हों वह शैतानी हैं। ऐसे ही यह है। और जो क़्यास की बुराइयां आई हैं वह क़्यास है जो हुक्म ख़ुदा के मुक़ाबला में किया जाए जैसा कि शैतान ने हुक्म सज्दा पाकर क़्यास किया। और हुक्मे इलाही को रद कर दिया। यह कुफ़्र है। ग़ैर मुक़ल्लिद यह भी कहते हैं कि क़ुरआन फरमाता है **इन्नमा अत्तबेओ मा यूहा इलैया इन्नमा** हस्र के लिए है। जिससे मालूम हुआ कि सिवाए वह्य के और किसी चीज़ की पैरवी न की जाए न इज्मा की न क़्यास की। सिर्फ़ क़ुरआन व हदीस की पैरवी हो। मगर उन्हें मालूम होना चाहिए कि इज्मा व क़्यास पर अमल भी क़ुरआन व हदीस पर ही अमल है कि क़्यास मज़्हर है।

आख़िर में मैं मुन्केरीन क़्यास से दरयाफ़्त करता हूँ कि जिन चीज़ों की तस्रीह क़ुरआन व हदीस में न मिले या बज़ाहिर अहादीस में तआरुज़ मौजूद हो वहाँ क्या करोगे? मसलन हवाई जहाज़ में नमाज़ पढ़ना कैसा है? इसी तरह अगर जुमा की नमाज़ में रकाअत अव्वल में जमाअत थी, रकाअत दोम में जमाअत पीछे से भाग गई। अब ज़ुहर पढ़ें या जुमा? इसी तरह दीगर मसाइले क़्यासिया में क्या जवाब होगा। इसलिए बेहतर है कि किसी इमाम का दामन पकड़ लो। अल्लाह तौफ़ीक़ दे।

बहस इल्मे ग़ैब

इसमें एक मुक़द्दमा है और दो बाब और एक ख़ातमा बेमन्नेही व करमेही

मुक़द्दमा

इसमें चन्द फ़स्लें हैं

पहली फ़स्ल

ग़ैब की तारीफ़ और इसकी क़िस्मों के बयान में

ग़ैब वह छुपी हुई चीज़ है जिसको इंसान न तो आँख, नाक, कान वग़ैरह हवास से महसूस कर सके और न बिला दलील ख़ुद बख़ुद अक़्ल में आ सके। लिहाज़ा पंजाब वाले के लिए बम्बई ग़ैब नहीं। क्योंकि वह या तो आँख से देख आया है या सुन कर कह रहा है कि बम्बई भी एक शहर है यह हवास से इल्म हुआ। इसी तरह खानों की लज़्ज़तें और उनकी ख़ुश्बू वग़ैरह ग़ैब नहीं क्योंकि यह चीज़ें अगरचे आँख से छुपी हैं मगर दूसरे हवास से मालूम हैं

जिन्न और मलाइका और जन्नत व दोज़ख़ हमारे लिए इस वक़्त ग़ैब हैं क्योंकि न उनको हवास से मालूम कर सकते हैं और न बिला दलाइल अक़्ल से। ग़ैब दो तरह का है। एक वह जिस पर कोई दलील क़ाइम हो सके। यानी दलाइल से मालूम हो सके। दूसरा वह जिसको दलील से भी मालूम न कर सकें। पहले ग़ैब की मिसाल जैसे जन्नत व दोज़ख़ और ख़ुदाए पाक की ज़ात व सिफ़ात, कि आलम की चीज़ें और क़ुरआन की आयात देख कर उनका पता चलता है। दूसरे ग़ैब की मिसाल जैसे क़्यामत का इल्म, कि कब होगी। इंसान कब मरेगा और औरत के पेट में लड़का है या लड़की बदबख़्त है या नेक बख़्त। कि इनको दलाइल से भी मालूम नहीं कर सकते इसी तरह के ग़ैब को मफ़ातीहुल-ग़ैब कहा जाता है और इसको परवरदिगारे आलम ने फरमाया **फ़ला युज़हिरु अला ग़ैबिहि अहादन इल्ला मनिर्तज़ा मिर्रसूलिन** तफ़्सीर बैज़ावी में **यूमिनूना बिल-ग़ैबे** के मातहत है। ग़ैब से मुराद वह छुपी हुई चीज़ है जिसको हवास न पा सकें और न ख़ुद बख़ुद उसको अक़्ल चाहे।

तफ़्सीरे कबीर सूरः बक़र के शुरू में इसी आयत के मातहत है।

आम मुफ़स्सेरीन का क़ौल है कि ग़ैब वह है जो हवास से छुपा हुआ हो। फिर ग़ैब की दो क़िस्में होती हैं। एक तो वह जिस पर दलील है। दूसरे वह जिस पर कोई दलील नहीं। तफ़्सीरे रूहुल-ब्यान में शुरू सूरः बक़र **यूमिनूना बिल-ग़ैबे** के मातहत है।

तरजमा : ग़ैब वह है जो हवास और अक़्ल से पूरा-पूरा छुपा हुआ हो इस तरह कि किसी ज़रिया से भी इब्तिदाअन खुल्लम खुल्ला मालूम न हो सके। ग़ैब की दो क़िस्में हैं। एक वह क़िस्म जिस पर कोई दलील न हो वही क़िस्म इस आयत से मुराद है कि अल्लाह तआला के पास ग़ैब की कुंजियां हैं। दूसरी क़िस्म वह जिस पर दलील क़ायम हो जैसे अल्लाह तआला और उसकी सिफ़ात। वही इस जगह मुराद है।

फ़ायदा : रंग आँख से देखा जाता है और बू नाक से सूंघी जाती है और लज़्ज़त ज़बान से, आवाज़ कान से महसूस होती है, तो रंगत ज़बान व कान के लिए ग़ैब है और बू, आँख के लिए ग़ैब। अगर कोई अल्लाह का बन्दा बू और लज़्ज़त को इन शक्लों में आँख से देख ले वह भी इल्मे ग़ैब इज़ाफ़ी है। जैसे आमाले क़्यामत में मुख़्तलिफ़ शक्लों में नज़र आएंगे। अगर कोई इन शक्लों में यहाँ देख ले तो यह भी इल्मे ग़ैब है। हुज़ूर ग़ौसे पाक फरमाते हैं।

कोई महीना और कोई ज़माना आलम में नहीं गुज़रता मगर वह हमारे पास होकर इजाज़त लेकर गुज़रता है।

इसी तरह जो चीज़ फ़िल्हाल मौजूद न होने या बहुत दूर होने या अंधेरे में होने की वजह से नज़र न आ सके वह भी ग़ैब है। और उसका जानना इल्मे ग़ैब। जैसे हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने आइंदा पैदा होने वाली चीज़ों

को मुलाहिज़ा फरमा लिया या हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने नहावन्द में हज़रत सारिया को मदीना पाक से देख लिया। और उन तक अपनी आवाज़ पहुँचा दी। इसी तरह कोई पंजाब में बैठ कर मक्का मुअज़्ज़मा या दीगर दूर दराज़ मुल्कों को हाथ की हथेली की तरह देखे यह सब गैब ही में दाख़िल हैं।

आलात के ज़रीये जो छुपी हुई चीज़ मालूम की जाए वह इल्मे ग़ैब नहीं मसलन किसी आला के ज़रिया से औरत के पेट का बच्चा मालूम करते हैं, या कि टेलीफोन, रेडियो से दूर की आवाज़ सुन लेते हैं इसको इल्मे ग़ैब न कहेंगे क्योंकि ग़ैब की तारीफ़ में अर्ज़ कर दिया गया कि जो हवास से मालूम न हो सके, और टेलीफ़ोन या रेडियो में से जो आवाज़ निकली वह आवाज़ हवास से मालूम होने के क़ाबिल है। आला से जो पेट के बच्चा का हाल मालूम हुआ यह भी ग़ैब का इल्म न हुआ। जबकि आला ने उसको ज़ाहिर कर दिया तो अब ग़ैब कहाँ रहा।

ख़ुलासा यह कि अगर कोई आला छुपी हुई चीज़ को ज़ाहिर कर दे फिर ज़ाहिर हो चुकने के बाद हम उसको मालूम कर लें। यह तो इल्मे ग़ैब नहीं।

दूसरी फ़स्ल

ज़रूरी फ़ायदों के बयान में

इल्मे ग़ैब के मसअले में गुफ़्तगू करने से पहले यह चन्द बातें ख़ूब ख़्याल में रखी जाएं तो बहुत फ़ाइदा होगा और बहुत से एतराज़ात ख़ुद-ब-ख़ुद ही दफ़ा हो जाएंगे।

(1) नफ़्से इल्म किसी चीज़ का भी हो बुरा नहीं, हां बुरी बातों का करना या करने के लिए सीखना बुरा है। हां यह हो सकता है कि कुछ इल्म दूसरे इल्मों से ज़्यादा अफ़ज़ल हूँ, जैसे इल्म अक़ाइद, इल्मे शरीअत, इल्मे तसव्वुफ़ दूसरे इल्मों से अफ़ज़ल हों। मगर कोई इल्म फ़ी नफ़्सेही बुरा नहीं। जैसे कुछ आयाते कुरआनिया कुछ से ज़्यादा सवाब रखती हैं। **कुल हुवल्लाहु** में तिहाई क़ुरआन का सवाब है मगर **तब्बत यदा** में यह सवाब नहीं (देखो रूहुल-ब्यान) ज़ेरे आयत –

व लव काना मिन इन्दे ग़ैरिल्लाहि तवजदु फ़ीहि इख़्तिलाफ़न कसीरा।

लेकिन कोई आयत बुरी नहीं। इसलिए कि अगर (1) कोई बुरा इल्म होता तो ख़ुदा को भी वह हासिल न होता, कि ख़ुदा हर बुराई से पाक है।

(2) और फ़रिश्तों को ख़ुदा की ज़ात व सिफ़ात का इल्म तो था मगर हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को आलम की सारी अच्छी बुरी चीज़ों का इल्म दिया, और वही इल्म उनकी अफ़्ज़लीयत का सुबूत हुआ। इस इल्म की वजह से वह मलाइका के उस्ताद क़रार पाए। अगर बुरी चीज़ों का इल्म बुरा होता

तो हज़रत आदम को यह इल्म देकर उस्ताद न बनाया जाए।

(3) और दुनिया में सबसे बदतर चीज़ कुफ़्रे व शिर्क। मगर फ़ुक़हा फ़रमाते हैं कि इल्म हसद व बुग्ज़ और अल्फ़ाज़ कुफ़्रिया व शिर्किया का जानना फ़र्ज़ है ताकि इससे बचे। इसी तरह जादू सीखना फ़र्ज़ है दफ़ाए जादू के लिए। शामी के मुक़द्दमा में है।

यानी इल्मे रिया और हसद व हराम और कुफ़्रिया कल्मों का सीखना फ़र्ज़ है। और वल्लाह यह बहुत ही ज़रूरी है।

इसी मुक़द्दमा शामी बहस इल्मे नुजूम और रमल में फ़रमाते हैं। **वफ़ी ज़ख़ीरतिन्नाज़िरते तअल्लुमुहू फ़रज़ुन लेरद्दे साहिरिन अह्लिल-हर्बे** ज़ख़ीरा नाज़िरा में लिखा है कि जादू सीखना फ़र्ज़ है अह्ले हर्ब के जादू को दफ़ा करने के लिए। इह्या-उल-उलूम जिल्द अव्वल बाब अव्वल फ़स्ले सोम, बुरे उलूम के ब्यान में है इल्म की बुराई ख़ुद इल्म होने की वजह से नहीं बल्कि बन्दों के हक़ में तीन वज्हों से है।

इस बयान से बख़ूबी वाज़ेह हुआ कि नफ़्स इल्म किसी चीज़ का बुरा नहीं। अब मुन्केरीन का वह सवाल उठ गया कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को बुरी चीज़ों जैसे चोरी, ज़िना, जादू, अशआर का इल्म नहीं था क्योंकि उनका जानना ऐब है। बताओ ख़ुदा को भी उनका इल्म है या नहीं? इसी लिए उन्होंने शैतान और मलकुल-मौत का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलाम से ज़्यादा माना। यह तो ऐसा हुआ जैसे मजूसी कहते हैं कि ख़ुदाए पाक बुरी चीज़ों का ख़ालिक़ नहीं है क्योंकि बुरी चीज़ों का पैदा करना भी बुरा है। **नऊज़ु बिल्लाह।** अगर इल्म जादू बुरा है तो उसकी तालीम के लिए रब की तरफ़ से दो फ़रिश्ते हारूत व मारूत क्यों ज़मीन पर उतरे, मूसा अलैहिस्सलाम के जादूगरों ने जादू के इल्म के ज़रिया से मूसा अलैहिस्सलाम की हक़्क़ानियत पहचानी और आप पर ईमान लाए। देखो इल्मे जादू ईमान का ज़रिया बन गया।

(2) सारे अंबिया और सारी मख़्लूक़ के उलूम हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अता हुए। उसको मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब नानौतवी ने तहज़ीरुन्नास में माना है जिसके सारे हवाले आते हैं। तो जिस चीज़ का इल्म किसी मख़्लूक़ को भी है वह हुज़ूर अलैहिस्सलाम को ज़रूर है। बल्कि सबको जो इल्म मिला वह हुज़ूर अलैहिस्सलाम ही की तक़्सीम से मिला। जो इल्म शागिर्द उस्ताद से ले ज़रूरी है कि उस्ताद भी उसको जानने वाला हो। अंबिया में हज़रत आदम अलैहिस्सलाम भी हैं इसलिए हम हज़रत आदम व हज़रत ख़लीलुल्लाह अलैहिमस्सलाम के इल्म से भी बहस करेंगे।

(3) कुरआन और लौहे महफ़ूज़ में सारे वाक़यात **कुल मा काना वमा यकूनु** हैं और इस पर मलाइका और कुछ औलिया व अंबिया की नज़रें हैं।

और हर वक़्त वह हुज़ूर अलैहिस्सलाम के पेशे नज़र है। इसके हवाला भी आते हैं। इसी लिए हम लौहे महफ़ूज़ और कुरआनी उलूम का भी ज़िक्र कर देंगे। इसी तरह कातिबे तक़्दीर फ़रिश्ता के उलूम का भी ज़िक्र कर देंगे यह तमाम बहसें इल्मे मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम के साबित करने को होंगे।

तीसरी फ़स्ल

इल्मे ग़ैब के मुतअल्लिक़ अक़ीदा और इल्मे ग़ैब के मरातिब के बयान में

इल्मे ग़ैब की तीन सूरतें हैं और इनके अलग अलग अहकाम।

(अज़ ख़ालिसुल-एतक़ाद सफ़: 5)

(1) अल्लाह अज़्ज़ा व जल्ल आलिम बिज़्ज़ात है, उसके बग़ैर बताए कोई एक हर्फ़ भी नहीं जान सकता।

(2) हुज़ूर अलैहिस्सलाम और दीगर अंबिया-ए-किराम को रब तआला ने अपने कुछ ग्यूब का इल्म दिया।

(3) हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म सारी ख़िल्क़त से ज़्यादा है, हज़रत आदम व ख़लील अलैहिमस्सलाम और मलकुल-मौत व शैतान भी ख़िल्क़त हैं। यह तीन बातें ज़रूरियाते दीन में से हैं। इनका इंकार कुफ़्र है।

(1) **क़िस्मे दोम** : औलिया-ए-किराम को भी बिल-वास्ता अंबिया-ए-किराम कुछ उलूमे ग़ैब मिलते हैं।

(2) अल्लाह तआला ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को पांच ग़ैबों में से बहुत से जुज़्इयात का इल्म दिया जो इस क़िस्म दोम का मुन्किर है वह गुमराह और बद मज़हब है कि सैकड़ों अहादीस का इंकार करता है।

(1) **क़िस्म सौम :** हुज़ूर अलैहिस्सलाम को क़यामत का इल्म मिला कि कब होगी।

(2) तमाम गुज़िश्ता और आइंदा वाक़यात जो लौहे महफ़ूज़ में हैं उनका बल्कि उन से भी ज़्यादा का इल्म दिया गया।

(3) हुज़ूर अलैहिस्सलाम को हक़ीक़ते रूह और कुरआन के सारे मुतशाबिहात का इल्म दिया गया।

चौथी फ़स्ल

जब इल्मे ग़ैब का मुन्किर अपने दावा पर दलील क़ायम करे तो चार बातों का ख़्याल रखना ज़रूरी है, **(इज़ाहतुल-ग़ैबे** सफ़ : 4)

(1) वह आयत क़तईयुद्दलालह हो, जिसके माना में चन्द शक्लें न निकल सकती हों। और हदीस हो तो मुतवातिर हो।

(2) इस आयत या हदीस से इल्म के अता की नफ़ी हो कि हमने नहीं दिया। या हुज़ूर अलैहिस्सलाम फरमाएं। मुझको यह इल्म नहीं दिया गया।

(3) सिर्फ़ किसी बात का ज़ाहिर न फरमाना काफ़ी नहीं। मुम्किन है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इल्म तो हो मगर किसी मस्लेहत से ज़ाहिर न किया हो। इसी तरह हुज़ूर अलैहिस्सलाम का यह फरमाना कि ख़ुदा ही जाने। अल्लाह के सिवा कोई नहीं जानता। या मुझे क्या मालूम; वग़ैरह काफ़ी नहीं। कि यह कलिमात कभी इल्मे ज़ाती की नफ़ी और मुख़ातब को ख़ामोश करने के लिए होते हैं।

(4) जिसके लिए इल्म की नफ़ी (इंकार) की गई हो वह वाक़या हो और क़यामत तक का हो। वरना कुल सिफ़ाते इलाहिया और बाद क़यामत के तमाम वाक़यात के इल्म का हम भी दावा नहीं करते। यह चार फ़स्लें ख़ूब ख़्याल में रखी जाएं।

पहला बाब

इल्मे ग़ैब के सुबूत के बयान में

इसमें छः फ़स्लें हैं। पहली फ़स्ल में आयाते क़ुरआनिया से सुबूत। दूसरी में अहादीस से सुबूत। तीसरी में अहादीस के शारेहीन के। चौथी में उलमा-ए-उम्मत और फ़ुक़हा के अक़वाल। पाँचवें में ख़ुद मुन्केरीन की किताबों से सुबूत। छठी में अक़्ली दलाइल और औलिया अल्लाह के इल्मे ग़ैब का बयान।

पहली फ़स्ल

आयाते क़ुरआनिया में

(1) **व अल्लमा आदमल-अस्माआ कुल्लहा सुम्मा अरज़हुम अलल-मलाइकते।** और अल्लाह तआला ने आदम को तमाम चीज़ों के नाम सिखाए, फिर सब चीज़ें मलाइका पर पेश कीं। तफ़्सीर मदारिक में इसी आयत के मातहत है।

हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को तमाम चीज़ों के नाम बताने के माना यह हैं कि रब ताआला ने उनको वह तमाम जिन्सें दिखा दीं जिसको पैदा किया है और उनको बता दिया कि इसका नाम घोड़ा और उसका नाम ऊँट और इसका नाम फ़ुलां। हज़रत इब्ने अब्बास से मरवी है कि उनको हर चीज़ के नाम सिखा दिए। यहाँ तक कि प्याला और डोई के भी।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन में इसी आयत में यही मज़्मून बयान फ़रमाया, इतना और भी ज़्यादा फ़रमाया कहा गया है कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को तमाम फ़रिश्तों के नाम सिखा दिए और कहा गया है कि उनकी औलाद के

नाम। और कहा गया है कि उनको तमाम ज़बानें सिखा दीं।

तफ़्सीरे कबीर में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : आदम अलैहिस्सलाम को तमाम चीज़ों के औसाफ़ और उनके हालात सिखा दिए। और यही मशहूर है कि मुराद मख़्लूक़ में से हर हादिस की जिन्स के सारे नाम हैं जो मुख़्तलिफ़ ज़बानों में होंगे जिनको औलादे आदम आज तक बोल रही है अरबी, फ़ारसी, रूमी वग़ैरह।

तफ़्सीर अबू-अअस्सऊद में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : कहा गया है कि हज़रत आदम को गुज़िश्ता और आइंदा चीज़ों के नाम बता दिए। और कहा गया है कि अपनी सारी मख़्लूक़ के नाम बता दिए अक़्ली, हिस्सी, ख़्याली, वहमी चीजें बता दीं और उन चीज़ों की ज़ात, उनके नाम, उनके ख़ास्से, उनकी पहचान, इल्म के क़वाइद, हुनरों के क़ानून, उनके औज़ारों की तफ़्सील और उनके इस्तेमाल के तरीक़े का इल्म हज़रत आदम को इल्हाम फरमाया।

तफ़्सीर रूहुल—बयान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : और हज़रत आदम को चीज़ों के हालात सिखाए और जो कुछ उन में दीनी व दुनियावी नफ़ा हैं वह बताए, और उनको फ़रिश्तों के नाम, उनकी औलाद और हैवानात और जमादात के नाम बताए, और हर चीज़ का बनाना बताया, तमाम शहरों और गाँवों के नाम, परिन्दों और दरख़्तों के नाम जो हो चुका या जो कुछ भी होगा, उनके नाम और जो क़यामत तक पैदा फरमाएगा उनके नाम और खाने पीने की चीज़ों के नाम, जन्नत की हर नेमत ग़र्ज़ेकि हर चीज़ के नाम बता दिए, हदीस में है कि हज़रत आदम को सात लाख ज़बानें सिखाई गईं।

इन तफ़्सीरों से इतना मालूम हुआ कि **मा काना** और **मा यकूनु** के सारे उलूम हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को दिए गए। ज़बानें चीज़ों के नफ़ा व नुक़्सान बनाने के तरीक़े आलात का इस्तेमाल सब दिखा दिए। लेकिन अब मेरे आक़ा व मौला सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के उलूम को तो देखो, हक़ यह है कि यह इल्मे आदम मेरे आक़ा के इल्म के दरिया का एक क़तरा या मैदान का एक ज़र्रा है।

शैख़ इब्ने अरबी फ़ुतूहाते मक्किया बाबे दहुम में फरमाते हैं। **अव्वला नाइबिन काना लहू सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम व ख़लीफ़तुहू आदमा अलैहिस्सलाम।** हुज़ूर अलैहिस्सलाम के पहले ख़लीफ़ा और नाइब आदम अलैहिस्सलाम हैं। मालूम हुआ कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम हुज़ूर अलैहिस्सलाम के ख़लीफ़ा हैं। ख़लीफ़ा उसको कहते हैं जो असल की ग़ैर मौजूदगी में उसकी जगह काम करे। हुज़ूर अलैहिस्सलाम की पैदाइशे पाक से पहले सारे अंबिया हुज़ूर अलैहिस्सलाम के नाइब थे। यह मौलवी क़ासिम

साहब ने भी तहज़ीरुन्नास में लिखा है। जैसा कि हम बयान करेंगें ख़लीफ़ा के इल्म का यह हाल है।

नसीमुर्रियाज़ शरह शिफ़ा क़ाज़ी अयाज़ में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम पर सारी मख़्लूक़ात अज़ हज़रत आदम ता रोज़ क़यामत पेश की गई। पस उन सब को पहचान लिया। जैसे कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को सब नाम सिखाए। इस इबारत से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम सबको जानते पहचानते हैं। (२) **व यकूनर्रसूलु अलैकुम शहीदा** और यह रसूल तुम्हारे निगहबान व गवाह हों।

तफ़्सीरे अज़ीज़ी में इसी आयत के मातेहत हैं।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम अपने नूरे नबुव्वत की वजह से हर दीनदार के दीन को जानते हैं कि दीन के किस दरजा तक पहुँचा है। और उसके ईमान की हक़ीक़त क्या है। और कौन सा हिजाब उसकी तरक़्क़ी से माने है। लिहाज़ा हुज़ूर अलैहिस्सलाम तुम्हारे गुनाहों को और तुम्हारे ईमानी दरजात को और तुम्हारे नेक व बद आमाल और तुम्हारे इख़्लास और निफ़ाक़ को पहचानते हैं। लिहाज़ा उनकी गवाही दुनिया में बहुक्मे शरअ़ उम्मत के हक़ में क़बूल और वाजिबुल-अमल है।

तफ़्सीरे रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : यह इस बिना पर है कि कलिमा शहीद में मुहाफ़िज़ और ख़बरदार के माना भी शामिल हैं और इस माना के शामिल करने में इस तरफ़ इशारा है कि किसी को आदिल कहना और सफ़ाई की गवाही देना गवाह के हालात पर बाख़बर होने से हो सकता है और हुज़ूर अलैहिस्सलाम की मुसलमानों पर गवाही देने के मानी यह हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम हर दीनदार के दीनी मरतबा को पहचानते हैं। पस हुज़ूर अलैहिस्सलाम मुसलमानों के गुनाहों को उनके ईमान की हक़ीक़त को उनके अच्छे बुरे आमाल को उनके इख़्लास और निफ़ाक़ वग़ैरह को नूरे हक़ से पहचानते हैं और हुज़ूर अलैहिस्सलाम की उम्मत भी क़यामत में सारी उम्मतों के यह हालात जानेगी मगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम के नूर से।

तफ़्सीर ख़ाज़िन में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : फिर क़यामत में हुज़ूर अलैहिस्सलाम को बुलाया जाएगा और रब तआला हुज़ूर अलैहिस्सलाम से आपकी उम्मत के हालात पूछेगा तो आप उनकी सफ़ाई की गवाही देंगे और उनकी सच्चाई की गवाही देंगे।

तफ़्सीर मदारिक पारा 2 सूरः बक़र में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : फिर हुज़ूर अलैहिस्सलाम को बुलाया जाएगा और आपकी उम्मत के हाल पूछे जाएंगे पस आप अपनी उम्मत की सफ़ाई बयान करेंगे और उनके आदिल होने की गवाही देंगे। लिहाज़ा हुज़ूर तुम्हारी हालत को

जानते हैं।

इस आयत और इन तफ़ासीर में यह फरमाया गया कि क़्यामत के दिन दूसरे अंबिया-ए-किराम की उम्मतें बारगाहे इलाही में अर्ज़ करेंगी कि हमारे पास तेरा कोई पैग़म्बर न पहुँचा। उन उम्मतों के नबी अर्ज़ करेंगे कि ख़ुदाया हम इन में गए, तेरे अहकाम पहुँचाए मगर इन लोगों ने क़बूल न किए। रब तआला का अंबिया को हुक्म होगा कि चूंकि तुम मुद्दई हो अपना कोई गवाह लाओ। वह अपनी गवाही के लिए उम्मते मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम को पेश फरमाएंगे मुसलमान गवाही देंगे कि ख़ुदाया तेरे पैग़म्बर सच्चे हैं, उन्होंने तेरे अहकाम पहुँचाए थे।

अब दो बातें तहक़ीक़ के लाइक़ हैं। अव्वल यह कि यह मुसलमान गवाही के क़ाबिल हैं या नहीं (फ़ासिक़ व फ़ाजिर और काफिर की गवाही क़बूल नहीं होती, मुसलमान परहेज़गार की गवाही क़बूल है) दूसरे यह कि उन लोगों ने अपने से पहले पैग़म्बरों का ज़माना देखा न था फिर गवाही किस तरह दे रहे हैं। मुसलमान अर्ज़ करेंगे कि ख़ुदाया हम से तेरे महबूब मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया था कि पहले पैग़म्बरों ने तब्लीग़ की थी, उसको सुन कर हम गवाही दे रहे हैं। तब हुज़ूर अलैहिस्सलाम को बुलया जाएगा और हुज़ूर अलैहिस्सलाम दो बातों की गवाही देंगे, एक यह कि यह लोग फ़ासिक़ या काफ़िर नहीं हत्ताकि उनकी गवाही क़बूल न हो बल्कि मुसलमान और परहेज़गार हैं। दूसरे यह कि हां हमने इन से कहा था कि पहले नबियों ने अपनी क़ौम तक अकहामे इलाहिया पहुँचाए तब उन पैग़म्बरों के हक़ में डिग्री होगी।

इस वाक़या से चन्द बातें हासिल हुईं, एक यह कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम क़्यामत तक के मुसलमान के ईमान, आमाल, रोज़ा व नीयत से बिल्कुल ख़बरदार हैं। वरना पहली यानी सफ़ाई की गवाही कैसी, मुम्किन नहीं कि एक मुसलमान का भी कोई हाल आप से छुपा रहे। हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम की आने वाली नस्ल का हाल मालूम फरमा लिया। कि ख़ुदाया उनकी औलाद भी अगर हुई तो काफ़िर होगी। **वला यलिदू इल्ला फ़ाजिरन कफ़्फ़ारा** लिहाज़ा तू उनको ग़र्क़ कर दे। हज़रत ख़िज़्र अलैहिस्सलाम ने जिस बच्चा को क़त्ल फरमाया, उसका आइंदा का हाल मालूम कर लिया था कि अगर आइंदा ज़िन्दा रहा तो सर कश होगा। तो सैयदुल-अंबिया अलैहिस्सलाम पर क़िसी का हाल क्योंकर छुप सकता है। दूसरे यह कि पिछले पैग़म्बरों और उनकी उम्मतों के हालात हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने नूरे नुबुव्वत से देखे थे। और आपकी गवाही देखी हुई थी। अगर सुनी हुई होती तो ऐसी गवाही तो इस से पहले मुसलमान भी दे चुके थे। सुनी गवाही की इंतिहा देखी गवाही पर होती है। तीसरे यह भी मालूम हुआ कि रब तआला

तो जानता है कि नबी सच्चे हैं मगर फिर भी गवाहियां लेकर फ़ैसला फरमाता है। इसी तरह अगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम मुक़द्दमात में तहक़ीक़ फ़रमा दें और गवाहियाँ वग़ैरह ले लें तो इससे लाज़िम यह नहीं आता कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को ख़बर न हो। बल्कि मुक़द्दमात का क़ाइदा यही होता है और ज़्यादा तहक़ीक़ इसकी देखना हो तो हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान बिह आयतिल-कुरआन में देखो। इसी गवाही का ज़िक्र आइंदा आयात में भी है।

(3) **व जिअना बिका अला हाउलाइ शहीदा** और ऐ महबूब तुम को उन सब पर निगहबान बना कर लाएंगे।

तफ़्सीर नीशापुरी में इसी आयत के मातहत है।

इसलिए कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम की रूहे मुबारक तमाम रूहों और दिलों और नफ़्सों को देखने वाली है क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फरमाया कि अल्लाह ने जो पहले पैदा फरमाया, वह मेरा नूर है।

तफ़्सीर रूहुल-ब्यान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम पर आपकी उम्मत के आमाल सुबह व शाम पेश किए जाते हैं। लिहाज़ा आप उम्मत को उनकी अलामात से जानते हैं और उनके आमाल को भी। इसलिए आप उन पर गवाही देंगे।

तफ़्सीरे मदारिक में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम गवाह हैं मोमिनों पर उनके ईमान के और काफिरों पर उनके कुफ्र के और मुनाफ़िक़ों पर उनके निफ़ाक़ के।

इस आयत और इन तफासीर से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम अज़ अव्वल ता रोज़े क़यामत तमाम लोगों के कुफ़्र व ईमान व निफ़ाक़ व आमाल वग़ैरह सबको जानते हैं। इसीलिए आप सबके ही गवाह हैं। यही तो इल्मे गैब है।

तरजमा : वह कौन है जो उसके यहाँ शफ़ाअत करे बग़ैर उसके हुक्म के जानता है जो कुछ उनके आगे है और जो कुछ उनके पीछे है।

तफ़्सीरे नीशापुरी में इस आयत के मातहत है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम मख़्लूक़ के पहले अव्वलीन मामलात भी जानते हैं। और जो मख़्लूक़ के बाद क़यामत के अहवाल हैं वह भी जानते हैं।

रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलमा मख़्लूक़ के पहले के हालात को जानते हैं, अल्लाह तआला के मख़्लूक़ात को पैदा करने के पहले के वाक़ेआत और उनके पीछे के हालात भी जानते हैं। क़यामत के अहवाल मख़्लूक़ की घबराहट और रब तआला का ग़ज़ब वग़ैरह।

इस आयत और इन तफ़ासीर से मालूम हुआ कि आयतुल-कुर्सी में मन **जल्लज़ी** से लेकर **इल्ला बेमा शाआ** तक तीन सिफ़ात हुज़ूर अलैहिस्सलाम

के बयान हुए। बाक़ी अव्वल व आख़िर में सिफ़ाते इलाहिया हैं। इसमें फ़रमाया गया है, कि ख़ुदा तआला के पास कोई बग़ैर इजाज़त किसी की शफ़ाअत नहीं कर सकता, और जिनको शफ़ाअत की इजाज़त है वह हुज़ूर अलैहिस्सलाम हैं और शफ़ी के लिए ज़रूरी है कि गुनहगारों के अंजाम और उनके हालात से वाक़िफ़ हो ताकि ना अह्ल की शफ़ाअत न हो जाए। और मुस्तहिक़े शफ़ाअत इससे महरूम न रह जाएं जैसे तबीब के लिए ज़रूरी है कि क़ाबिले इलाज और ला इलाज मरीज़ों को जाने तो फरमाया गया **यालमु मा बैना ऐदीहिम** और जिसको हमने शफ़ी बनाया है उसको तमाम का इल्म भी दिया है, क्योंकि शफ़ाअते कुबरा के लिए इल्मे ग़ैब लाज़िम है।

इससे मालूम हुआ कि जो कहते हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम क़्यामत में मुनाफ़ेक़ीन को न पहचानेंगे या हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अपनी भी ख़बर नहीं कि मेरा अंजाम क्या होगा महज़ ग़लत और बेदीनी है। जैसा कि आइंदा आता है। **वला युहीतूना बशैइन मिन इल्मेही इल्ला बेमा शाआ** और वह नहीं पाते उसके इल्म में से मगर जितना वह चाहे।

तफ़्सीरे रूहुल-ब्यान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : एहतमाल यह भी है कि इस ज़मीर से हुज़ूर **अलैहिस्सलाम** मुराद हों, यानी हुज़ूर अलैहिस्सलाम लोगों के हालात के मुशाहदा **फरमाने** वाले हैं और उनके सामने के हालात जानते हैं, उनके अख़लाक़, **उनके** मामलात, औन उनके क़िस्से, वग़ैरह और उनके पीछे के हालात भी **जानते हैं।** आख़िरत के अहवाल, जन्नती, दोज़ख़ी लोगों के हालात और वह लोग हुज़ूर अलैहिस्सलाम के मालूमात में से कुछ भी नहीं जानते मगर इसी क़दर जितना कि हुज़ूर चाहें, औलिया अल्लाह का इल्म, इल्मुल अंबिया के सामने **ऐसा है** जैसे एक क़तरा सात समुन्द्रों के सामने और अंबिया का **इल्म हुज़ूर** अलैहिस्सलाम के इल्म के सामने इसी दरजा का है और **हमारे हुज़ूर** अलैहिस्सलाम का इल्म रब्बुल-आलमीन के इल्म के सामने इसी **दरजा का।** लिहाज़ा हर नबी और हर रसूल और हर वली अपनी-अपनी सलाहियत **और** क़ाबलीयत के मुताबिक़ हुज़ूर से ही लेते हैं, और किसी को यह **मुम्किन नहीं** कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम से आगे बढ़ जाए।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन में इसी आयत के मातहत है यानी –

तरजमा : यानी ख़ुदा तआला उनको अपने इल्म पर इत्तिला **देता है और** वह अंबिया व रसूल हैं ताकि उनका इल्म ग़ैब पर बाख़बर होना **उनकी** नबुव्वत की दलील हो जैसे रब ने फरमाया है कि पस नहीं ज़ाहिर **फ़रमाता** अपने ग़ैब ख़ास पर किसी को सिवाए उस रसूल के जिससे **रब राज़ी है।**

तफ़्सीर मुआलिमुत्तंज़ील में इसी आयत के मातहत **है यानी** –

तरजमा : यानी यह लोग इल्मे ग़ैब को **नहीं घेर सकते मगर जिस क़दर**

कि ख़ुदा चाहे जिसकी ख़बर रसूलों ने दी।

इस आयत और इन तफ़ासीर से इतना मालूम हुआ कि इस आयत में या तो ख़ुदा का इल्म मुराद है कि ख़ुदा का इल्म किसी को हासिल नहीं, हां जिसको रब ही देना चाहे तो उसको इल्मे ग़ैब हासिल होता है और रब ने तो अंबिया को दिया और अंबिया के ज़रिया से कुछ मोमिनीन को दिया, लिहाज़ा उनको भी बह अताए इलाही इल्मे ग़ैब हासिल हुआ, कितना दिया, इसका ज़िक्र आइंदा आएगा।

या यह मुराद है कि हुज़ूर अलैहिस्सलमा के इल्म को कोई नहीं पा सकता, मगर जिसको हुज़ूर अलैहिस्सलाम ही देना चाहें तो अता फरमा दें। लिहाज़ा अज़ हज़रत आदम ता रोज़े क़्यामत जिसको जिस क़दर इल्म मिला, वह हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म के दरिया का क़तरा है इसमें हज़रत आदम अलैहिस्सलाम और फ़रिश्तों वग़ैरह का इल्म भी शामिल है और हज़रत आदम अलैहिस्सलाम के इल्म की वुस्अत हम **अल्लम आदम** की आयत के तहत बयान कर चुके हैं।

तरजमा : और अल्लाह की शान यह नहीं है कि ऐ आम लोगो तुमको ग़ैब का इलम दे। हां अल्लाह चुन लेता है अपने रसूलों में से जिसको चाहे।

तफ़्सीर बैज़ावी में इस आयत के मा तहत है।

तरजमा : ख़ुदा तआला तुम में से किसी को इल्मे ग़ैब नहीं देने का कि बाख़बर करे इस कुफ़्र व ईमान पर जो कि दिलों में होता है। लेकिन अल्लाह तआला अपनी पैग़म्बरी के लिए जिसको चाहता है चुन लेता है पस उसकी तरफ वही फरमाता है और बाज़ ग़ुयूब की उनको ख़बर देता है या उनके लिए ऐसे दलाइल क़ायम फरमाता है जो ग़ैब पर राहबरी करें।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन में है –

तरजमा : लेकिन अल्लाह चुना लेता है अपने रसूलों में से जिसको चाहता है उनको ख़बरदार करता है बाज़ इल्मे ग़ैब पर।

तफ़्सीरे कबीर में इसी आयत के मातहत है –

लेकिन इन बातों का बतरीक़ ग़ैब पर मुत्तला होने के जान लेना यह अंबिया-ए-किराम की खुसूसियत है। (जुमल) **अल-माना लाकिन्नल्लाह** मानी यह हैं कि अल्लाह अपने रसूलों में से जिसको चाहता है चुन लेता है पस उनको ग़ैब पर मुत्तला करता है। (जलालैन)

तरजमा : ख़ुदा ताआला तुमको ग़ैब पर मुत्तला नहीं करने का ताकि फ़र्क़ करने से पहले मुनाफ़िक़ों को जान लो लेकिन अल्लाह जिसको चाहता है छांट लेता है तो उसको अपने ग़ैब पर बाख़बर फ़रमाता है जैसा कि नबी अलैहिस्सलाम को मुनाफ़ेक़ीन के हाल पर बाख़बर फ़रमा दिया।

रूहुल-बयान में है –

तरजमा : क्योंकि हक़ीक़तों और हालात के ग़ैब नहीं ज़ाहिर होते तो बग़ैर रसूल अलैहिस्सलाम के वास्ते से।

इस आयते करीमा और इन तफ़ासीर से मालूम हुआ कि ख़ुदा का ख़ास इल्मे ग़ैब पैग़म्बर पर ज़ाहिर होता है, कुछ मुफ़स्सेरीन ने जो फरमाया कि कुछ ग़ैब इससे मुराद है इल्मे इलाही के मुक़ाबला में बाज़ और कुल मा कान व मा यकूनु भी ख़ुदा के इल्म का बाज़ है।

तरजमा : और तुमको सिखा दिया जो कुछ तुम न जानते थे। और अल्लाह का तुम पर बड़ा फ़ज़्ल है। (जलालैन) **ऐ मिनल-अहकामे वल-ग़ैबि** यानी अहकाम और इल्मे ग़ैब (तफ़्सीरे कबीर) अल्लाह ने आप पर **क़ुरआन** उतारा और हिक्मत उतारी और आपको उनके भेदों पर बाख़बर **फ़रमाया** और उनकी हक़ीक़तों पर वाक़िफ़ किया (ख़ाज़िन)

तरजमा : यानी शरीअत के अहकाम और दीन की बातें सिखाईं और कहा गया है कि आपको इल्मे ग़ैब में से वह बातें सिखाईं जो आप न जानते थे और कहा गया है कि इसके माना यह हैं कि आपको छुपी चीज़ें सिखाईं, और दिलों के राज़ पर मुत्तला फरमाया, और मुनाफ़ेक़ीन के मक्र व फरेब आपको बता दिए (मदारिक) **मिन उमूरिद्दीने वश्शिराए औ मिन ख़फ़ीय्यातिल-उमूरे व ज़माइरिल-क़ुलूबे।** दीन और शरीअत के उमूर सिखाए और छुपी हुई बातें दिलों के राज़ बताएं।

तफ़्सीर हुसैनी बहरुल हक़ाइक़ से इसी आयत के मातहत नक़्ल फरमाते हैं यह माकाना और मायकूनु का इल्म है कि हक़ तआला ने शबे मेअ्राज में हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अता फ़रमाया। चुनांचे मेअ्राज की हदीस में है कि हम अर्श के नीचे थे कि एक क़तरा हमारे हलक़ में डाला, लिहाज़ा हमने सारे गुज़श्ता और आइंदा के वाक़ेआत मालूम कर लिए।

जामेउल-बयान **क़ब्ला नुज़ूले ज़ालिका मिन ख़फ़ीयातिल-उमूरे** यानी आपको वह सब बातें बता दीं जो क़ुरआन के नुज़ूल से पहले आप न जानते थे।

इस आयत और इन तफ़ासीर से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को तमाम आइंदा और गुज़िश्ता वाक़ेआत की ख़बर दे दी गई। कलिमा मा अरबी ज़बान में उमूम के लिए होता है, तो आयत से यह मालूम हुआ कि शरीअत के अहकाम दुनिया के सारे वाक़ेआत लोगों के ईमानी हालात वग़ैरह जो कुछ भी आपके इल्म में न था सब ही बता दिया इसमें यह क़ैद लगाना कि इससे मुराद सिर्फ़ अहकाम हैं अपनी तरफ से क़ैद है। जो क़ुरआन व हदीस और उम्मत के अक़ीदे के ख़िलाफ़ है जैसा कि आइंदा बयान होगा।

(7) **मा फर्रतना फ़िल-किताबे मिन शैइन** हमने इस किताब में कुछ उठा न रखा (ख़ाज़िन) **इन्नल-क़ुरआना मुश्तमेलुन** अला **जमीइल-अहवाले** क़ुरआने करीम तमाम हालात पर शामिल है।

तफ़्सीरे अनवारुत्तंज़ील में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : किताब से मुराद लौहे महफ़ूज़ है, क्योंकि यह लौहे महफ़ूज़ उन तमाम बातों पर मुश्तमिल है जो आलम में होता है हर ज़ाहिर और बारीक इसमें किसी हैवान और जमाद का मामला छोड़ा न गया। तफ़्सीर अराइसुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : यानी इस किताब में मख़्लूक़ात में से किसी का ज़िक्र न छोड़ा है। लेकिन इस ज़िक्र को कोई नहीं देख सकता मगर वह जिनकी मारिफ़त के अनवार से ताईद की गई हो।

इमाम शोरानी तबक़ाते कुबरा में फ़रमाते हैं माख़ूज़ अज़ इद ख़ालस्सेनाने सफ़: 155

अगर ख़ुदा तआला तुम्हारे दिलों के बन्द कुफ़्ल (ताले) खोल दे तो तुम उन इल्मों पर बाख़बर हो जाओ जो कुरआन में हैं और तुम कुरआन के सिवा दूसरी चीज़ से बेपरवाह हो जाओ। क्योंकि कुरआन में तमाम वह चीज़ें हैं जो वजूद के पेजों में लिखी हैं। रब तआला फ़रमाता है **मा फ़र्रतना फ़िल-किताबे मिन शैइन।**

इस आयत और इन तफ़्सीरों से मालूम हुआ कि किताब में दुनिया व आख़िरत के सारे हालात मौजूद हैं। अब किताब से मुराद या तो कुरआन है या लौहे महफ़ूज़। और कुरआन भी हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म में है और लौहे महफ़ूज़ भी। जैसा कि आइंदा आएगा। तो नतीजा यह निकला कि तमाम दुनिया व आख़िरत के हालात हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म में हुए क्योंकि सारे उलूम कुरआन और लौहे महफ़ूज़ में हैं और कुरआन व लौहे महफ़ूज़ हुज़ूर के इल्म में।

(8) वला रतबिन वला याबेसिन इल्ला फ़ी किताबिम मुबीन। और नहीं है कोई तर और ख़ुश्क जो रौशन किताब में न लिखा हो। (रूहुल-ब्यान)

तरजमा : वह लौहे महफ़ूज़ है कि अल्लाह ने उसमें सारी हो सकने वाली चीज़ें जमा फ़रमा दीं इन फ़ाइदों की वज्हों से जो बन्दों की तरफ़ लौटते हैं उनको उलमा-ए-रब्बानी जानते हैं।

तफ़्सीरे कबीर यही आयत

तरजमा : इस लिखने में चन्द फ़ाइदे हैं एक यह कि अल्लाह तआला ने इन हालात को लौहे महफ़ूज़ में इसलिए लिखा था ताकि मलाइका ख़बरदार हो जायें इन मालूमात में इल्मे इलाही जारी होने पर, लिहाज़ा यह बात उन फ़रिश्तों के लिए पूरी-पूरी इबरत बन जाए जो लौहे महफ़ूज़ पर मुक़र्रर हैं। क्योंकि वह फ़रिश्ते उन वाक़ेआत का इस तहरीर से मुक़ाबला करते हैं जो आलम में नए नए होते रहते हैं तो इसको लौहे महफ़ूज़ के मुवाफ़िक़ पाते हैं।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन यही आयत

तरजमा : दूसरा खुलासा यह है कि किताबे मुबीन से मुराद लौहे महफ़ूज़ है क्योंकि अल्लाह तआला ने उसमें जो कुछ होगा और जो कुछ आसमान व ज़मीन की पैदाइश से पहले हो चुका सबका इल्म लिख दिया और उन तमाम चीज़ों के लिखने से इस किताब में फाइदा यह है कि फ़रिश्ते इसके इल्म के जारी करने पर वाक़िफ़ हो जाएं।

तफ़्सीरे मदारिक यही आयत – **वहुवा इल्मुल्लाहे अविल्लौहे** वह किताब या तो इल्मे इलाही है या लौहे महफ़ूज़।

तफ़्सीरे तनवीरुल-क़्यास फ़ी तफ़्सीरे इब्ने अब्बास में इसी आयत के मातहत है। **कुल्लु ज़ालिका फ़िल्लौहिल-महफ़ूज़े मुबैय्यिनुन मिक़्दारुहा व वक़्तुहा** यह तमाम चीज़ें लौहे महफ़ूज़ में हैं कि इनकी मिक़्दार और इनका वक़्त बयान कर दिया गया है।

इस आयत और इन तफ़ासीर से मालूम हुआ कि लौहे महफ़ूज़ में हर ख़ुश्क व तर अदना व आला चीज़ है और लौहे महफ़ूज़ को फ़रिश्ते और अल्लाह के ख़ास बन्दे जानते हैं। और इल्मे मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम इन सबको मुहीत (घेरे हुए) है। लिहाज़ा यह तमाम उलूम इल्मे मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम के दरिया के क़तरे हैं।

(9) **नज़्ज़लना अलैकल-किताबा तिबयानन लेकुल्ले शैइन।** और हमने तुम पर यह कुरआन उतारा कि हर चीज़ का रौशन बयान है।

हमने आप पर यह किताब कुरआन दीन व दुनिया की हर चीज़ का रौशन बयान बना कर भेजी तफ़्सीली व इजमाली।

तफ़्सीरे रूहुल-बयान यही आयत **यतअल्लक़ु बेउमूरिद्दीने व मिन ज़ालिका अहवालुल-उममे व अंबियाएहिम।** इसके ब्यान के लिए जो दीनी चीज़ों से तअल्लुक़ रखती हों और उसमें से उम्मतों और उनके पैग़म्बरों के हालात हैं।

तफ़्सीरे इतक़ान यही आयत –

तरजमा : हज़रत मुजाहिद ने एक दिन फरमाया कि आलम में कोई चीज़ ऐसी नहीं जो कुरआन में न हो, तो उन से कहा गया कि सरायों का ज़िक्र कहां है उन्होंने फरमाया कि इस आयत में है कि तुम पर गुनाह नहीं कि तुम उन घरों में दाख़िल हो जिसमें कोई रहता न हो, और तुम्हारा वहाँ सामान हो।

इस आयत और इन तफ़ासीर से मालूम हुआ कि कुरआन करीम में हर अदना व आला चीज़ है और कुरआन रब तआला ने महबूब अलैहिस्सलाम को सिखाया **अर्रहमानु अल्लमल-कुरआन।** यह तमाम चीज़ें इल्मे मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम में आईं।

(10) **व तफ़्सीलल-किताबे ला रैबा फ़ीहे** और लौहे महफ़ूज़ में जो कुछ लिखा है कुरआन सबकी तफ़्सील है इसमें कुछ शक नहीं।

जलालैन यही आयत **तफ़्सीलल-किताबे युबैय्यिनु मा कतबल्लाहु तआला मिनल अहकामे व ग़ैरिहा।** यह तफ़्सीली किताब है इसमें वह अहकाम और इनके सिवा दूसरी चीज़ें बयान की जाती हैं जो अल्लाह तआला ने लिख दीं।

जमल यही आयत **ऐ फ़िल्लौहिल-महफ़ूज़े** यानी लौहे महफ़ूज़ में तमाम तफ़्सील है।

रूहुल-बयान यही आयत

तरजमा : यानी यह कुरआन उन शरई और हक़ीक़त की चीज़ों की तफ़्सील है जो साबित की जा चुकी हैं, और तावीलाते नज्मीया में है कि उस तमाम की तफ़्सील (खुलासा) है जो तक़्दीर में आ चुकी हैं और इस किताब में लिखी जा चुकी हैं, जिसमें रद्दो बदल नहीं होता क्योंकि वह किताब अज़ली व अबदी है।

इस आयत व तफ़्सीर से साबित हुआ कि कुरआने करीम में अहकामे शरईया और तमाम उलूम मौजूद हैं।

इस आयत से पता लगा कि कुरआन में सारे लौहे महफ़ूज़ की तफ़्सील है और लौहे महफ़ूज़ में सारे उलूम हैं। **वला रतबिन वा याबेसिन इल्ला फ़ी किताबिन मुबीन।** और कुरआन हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म में है **अर्रहमानु अल्लमल-कुरआन** लिहाज़ा सारी लौहे महफ़ूज़ हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म में है क्योंकि कुरआन लौहे महफ़ूज़ की तफ़्सील है।

(11) **मा काना हदीसन युफ़्तरा वला किन्ना तस्दीक़ल्लज़ी बैना यदैहे व तफ़्सीला कुल्ले शैइन।** यह कोई बनावट की बात नहीं अपने से अगले कलामों की तस्दीक़ है और हर चीज़ का मुफ़स्सल (खुला हुआ) बयान।

तरजमा : यानी इस कुरआन में जो आप पर उतारा गया ऐ मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हर उस चीज़ की तफ़्सील है, जिसकी आपको ज़रूरत हो, हलाल और हराम, सज़ाएं और अहकाम और क़िस्से और नसीहतें और मिसालें। इनके अलावा और वह चीज़ें जिनकी बन्दों को अपने दीनी व दुनियावी मामलात में ज़रूरत पड़ती है।

तफ़्सीरे हुसैनी **व तफ़्सीला कुल्ले शैइन व** यानी इस कुरआन में हर उस चीज़ का बयान है जिसकी दीन व दुनिया में ज़रूरत हो।

किताबुल-ऐजाज़ लेइब्ने सुराक़ा **मा मिन शैइन फ़िल-इल्मे इल्ला हुवा फ़ी किताबिल्लाहे तआला।** आलम में कोई चीज़ ऐसी नहीं जो कुरआन में न हो।

(12) **अर्रहमानु अल्लामल-कुरआन। ख़लक़ल-इंसाना अल्लमहुल-बयान।** रहमान ने अपने महबूब को कुरआन सिखाया, इंसानियत की जान मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को पैदा किया **मा काना वमा यकूनु** का बयान

उनको सिखाया।

तफ़सीरे मआलिमुत्तंज़ील व हुसैनी यही आयत **ख़लक़ल-इंसाना ऐ मुहम्मदन अलैहिस्सलामु अल्लमहुल्लाहुल-बयान, यानी बयाना मा काना व मायकूनू**

तरजमा : अल्लाह ने इंसान यानी मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को पैदा फरमाया और उनको बयान यानी सारी अगली पिछली बातों का बयान सिखा दिया।

तफ़सीरे ख़ाज़िन यही आयत –

तरजमा : कहा गया है कि इंसान से मुराद मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं कि उनको अगले पिछले उमूर का बयान सिखा दिया गया क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अगलों और पिछलों की और क़यामत के दिन की ख़बर दे दी गई।

रूहुल-बयान यही आयत

तरजमा : यानी हमारे नबी अलैहिस्सलाम को रब तआला ने कुरआन और अपनी रबूबियत के भेद सिखा दिए जैसा कि ख़ुद रब तआला ने फरमाया कि आपको सिखा दीं वह बातें जो आप न जानते थे।

तफ़सीरे मदारिक यही आयत

तरजमा : इंसान से मुराद जिंसे इंसानी है या आदम अलैहिस्सलाम या हुज़ूर अलैहिस्सलाम।

मआलिमुत्तंज़ील यही आयत ....

तरजमा : कहा गया है कि इस आयत में इंसान से मुराद हुज़ूर अलैहिस्सलाम हैं और बयान से मुराद है कि आपको वह तमाम बातें सिखाई जो न जानते थे।

तफ़सीरे हुसैनी यही आयत या मुराद है कि पैदा फरमाया हुज़ूर अलैहिस्सलाम की ज़ात को और सिखाया उनको जो हो चुका है या होगा।

इन आयतों और तफ़ासीर से मालूम हुआ कि कुरआन में सब कुछ है और इसका सारा इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को दिया गया।

(13) **मा अन्ता बेनेअमते रब्बिका बेमज्नून**। तुम अपने रब के फ़ज़्ल से मज्नून नहीं।

तफ़सीरे रूहुल-बयान यही आयत –

तरजमा : यानी आपसे वह बातें छुपी हुई नहीं हैं जो अज़ल में थीं और वह जो अबद तक होंगी क्योंकि जुन के माना हैं छुपाना बल्कि आप उसको जानते हैं जो हो चुका और ख़बरदार हैं उससे जो होगा।

इस आयत व तफ़सीर से इल्मे ग़ैब कुल्ली साबित हुआ। (यानी अबद तक का 12/ अल-जीलानी)

(14) और ऐ महबूब अगर तुम उन से पूछोगे तो कहेंगे कि हम तो यूं ही हंसी खेल में थे।

तफ़्सीरे दुर्रे मन्सूर व तबरी यही आयत –

इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है इस आयत के नुज़ूल के बारे में **वलइन सअल्तहुम** कि एक मुनाफ़िक़ ने कहा था कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ख़बर देते हैं कि फ़लां की ऊंटनी फलां जंगल में है, उनको ग़ैब की क्या ख़बर।

इस आयत और तफ़्सीर से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के ग़ैब का इनकार करना मुनाफ़ेक़ीन का काम था जिसको कुरआन ने कुफ्र क़रार दिया।

तरजमा : तू अपने ग़ैब पर किसी को मुसल्लत नहीं करता सिवाए अपने पसन्दीदा रसूलों के।

तफ़्सीरे कबीर यही आयत –

तरजमा : यानी क़्यामत के आने का वक़्त उन ग़ैबों में से है जिसको अल्लाह ने किसी पर ज़ाहिर नहीं फरमाया पस अगर कहा जाए कि जब तुमने इस ग़ैब को क़्यामत पर महमूल कर लिया तो अब रब तआला ने यह कैसे फरमाया मगर पसन्दीदा रसूलों को हालांकि यह ग़ैब तो किसी पर ज़ाहिर नहीं किया जाता, तो हम कहेंगे कि रब तआला क़्यामत के क़रीब ज़ाहिर फरमा देगा।

तफ़्सीरे अज़ीज़ी, सफ़ा १७३ –

तरजमा : जो चीज़ तमाम मख़्लूक़ात से ग़ायब हो वह ग़ायबे मुतलक़ है जैसे क़्यामत के आने का वक़्त और रोज़ाना और हर शरीअत के पैदाइशी और शरई अहकाम और जैसे परवरदिगार की ज़ात व सिफ़ात बर तरीक़े तफ़्सील। इस क़िस्म को रब तआला का ख़ास ग़ैब कहते हैं पस अपने ख़ास पर किसी को मुत्तला (बाख़बर) नहीं करता उसके सिवा जिसको पसन्द फरमाए और वह रसूल होते हैं ख़्वाह फ़रिश्ते की जिन्स से हों या इंसान की जिन्स से जैसे हज़रत मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम उन पर अपने कुछ ख़ास ग़ैब को ज़ाहिर फरमाता है।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन यही आयत –

तरजमा : सिवा उसके जिसको अपनी नबुव्वत और रिसालत के लिए चुन ले पस ज़ाहिर फरमाता है जिस पर चाहता है ग़ैब। ताकि उनकी नुबूव्वत पर दलील पकड़ी जाए उन ग़ैब चीज़ों से जिसकी वह ख़बर देते हैं, पस यह उनका मोजज़ा होता है।

रूहुल-बयान यही आयत –

तरजमा : इब्ने शैख़ ने फरमाया कि रब तआला उस ग़ैब पर जो उससे

ख़ास हैं किसी को मुत्तला (बाख़बर) नहीं फरमाता सिवाए वरगुज़ीदा रसूल के और जो ग़ैब कि रब से ख़ास नहीं उस पर ग़ैरे रसूल को भी मुत्तला (बाख़बर) फ़रमा देता है।

इस आयत और इन तफ़ासीर से मालूम हुआ कि ख़ुदाए कुद्दूस का ख़ास इल्मे ग़ैब हत्ता कि क़्यामत का इल्म भी हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अता फरमाया गया। अब क्या चीज़ है जो इल्मे मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम से बाक़ी रह गई।

(16) **फ़औहा इला अब्देही मा औहा।** अब वही फरमाई अपने बन्दे को जो वही फरमाई।

मदारिजुन्नबुव्वह जिल्द अव्वल वसल रूयते इलाही में है।

तरजमा : मेअराज में रब ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम पर जो सारे उलूम और मारिफ़त और बशारतें और इशारे और ख़बरें और करामतें व कमालात वही फरमाए वह इस इबहाम में दाख़िल हैं और सबको शामिल हैं। उनकी ज़्यादती और अज़मत ही की वजह से उन चीज़ों को बतौर इबहाम ज़िक्र किया बयान न फरमाया। इसमें इस तरफ़ भी इशारा है कि उन उलूमे ग़ैबिया को सिवाए रब तआला और महबूब अलैहिस्सलाम के कोई नहीं एहाता कर सकता। हां जिस क़दर हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने ब्यान फरमाया वह मालूम है।

इस आयत और इबारत से मालूम हुआ कि मेअराज में हुज़ूर अलैहिस्सलाम को वह वह उलूम अता हुए जिनको न कोई ब्यान कर सकता है और न किसी के ख़्याल में आ सकते हैं। **मा काना वमा यकून** तो सिर्फ़ बयान के लिए है वरना उससे भी कहीं ज़्यादा की अता हुई।

(17) **वमा हुवा अलल-ग़ैबि बेज़नीन** और यह नबी ग़ैब बताने में बख़ील नहीं।

यह जब ही हो सकता है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को इल्मे ग़ैब हो और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम लोगों को इससे मुत्तला फरमा देते हों।

मआलिमुत्तंज़ील यही आयत –

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम ग़ैब पर और आसमानी ख़बरों पर और उन ख़बरों और क़िस्सों पर बख़ील (कंजूस) नहीं हैं। मुराद यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के पास इल्मे ग़ैब आता है पस वह उसमें तुम पर बुख़्ल नहीं करते बल्कि तुमको सिखाते हैं और तुमको ख़बर देते हैं जैसे कि काहिन छुपाते हैं वैसे नहीं छुपाते।

ख़ाज़िन यही आयत –

यक़ूलु इन्नहू अलैहिस्सलामु यातीहे इल्मुल-ग़ैबि फ़ला यब्ख़लु बेही अलैकुम बल युअल्लेमुकुम। मुराद यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के पास इल्मे ग़ैब आता

है तो तुम पर उसमें बुख़्ल नहीं फरमाते बल्कि तुमको सिखाते हैं।

इस आयत व इबारात से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम लोगों को इल्मे ग़ैब सिखाते हैं और सिखाएगा वही जो ख़ुद जानता होगा।

(18) **व अल्लमनाहु मिन लदुन्ना इल्मन।** और उनको अपना इल्मे लदुन्नी अता किया यानी हज़रत ख़िज़्र को।

बैज़ावी यही आयत –

ऐ मिम्मा यख़्तस्सु नबाहु ला यालमु इल्ला बेतौफ़ीक़ेना वहुवा इल्मुल-ग़ैवि। हज़रत ख़िज़्र को वह इल्म सिखाए जो हमारे साथ ख़ास हैं बग़ैर हमारे बताए कोई नहीं जानता और वह इल्मे ग़ैब है।

तफ़्सीरे इब्ने जुरैर में सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से रिवायत किया।

तरजमा : हज़रत ख़िज़्र ने फरमाया था मूसा अलैहिस्सलाम से कि तुम मेरे साथ सब्र न कर सकोगे वह ख़िज़्र इल्मे ग़ैब जानते थे कि उन्होंने यह जान लिया।

रूहुल-बयान यही आयत –

तरजमा : हज़रत ख़िज़्र को जो इल्मे लदुन्नी सिखाया गया वह इल्मे ग़ैब है, और उस ग़ैब के मुतअल्लिक़ ख़बर देना है ख़ुदा के हुक्म से जैसा कि इस तरफ इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हुमा गए हैं।

तफ़्सीरे मदारिक यही आयत –

तरजमा : यानी हज़रत ख़िज़्र को ग़ैब की ख़बरें दीं और कहा गया है कि इल्मे लदुन्नी वह होता है जो बन्दे को इल्हाम के तरीक़ा पर हासिल हो।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन यही आयत **ऐ इल्मल-बातिने इल्हामन।** यानी हज़रत ख़िज़्र को इल्मे बातिन इल्हाम के तरीक़ा पर अता फ़रमाया।

इस आयत और तफ़्सीरी इबारतों से मालूम हुआ कि रब तआला ने हज़रत ख़िज़्र को भी इल्मे ग़ैब अता फ़रमाया था जिससे लाज़िम आया कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को भी अता हुआ क्योंकि आप तमाम मख़्लूक़े इलाही से ज़्यादा आलिम हैं और ख़िज़्र भी मख़्लूक़ हैं।

तरजमा : और इसी तरह हम इब्राहीम को दिखाते हैं सारी बादशाही आसमानों और ज़मीन की।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन यही आयत –

तरजमा : हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को सख़रा पर खड़ा किया गया और उनके लिए आसमान खोल दिए गए यहाँ तक कि उन्होंने अर्श व कुर्सी और जो कुछ आसमानों में है देख लिया और आपके लिए ज़मीन खोली गई यहाँ तक कि उन्होंने ज़मीनों की नीची ज़मीन और उन अजाइबात को देख लिया जो ज़मीनों में हैं।

तफ़्सीरे मदारिक यही आयत –

तरजमा : मुजाहिद ने फरमाया कि इब्राहीम अलैहिस्सलाम के लिए सातों आसमान खोल दिए गए पस उन्होंने देख लिया जो कुछ आसमानों में है यहाँ तक कि उनकी नज़र अर्श तक पहुँच गई, और उनके लिए सात ज़मीनें खोली गईं कि उन्होंने वह चीज़ें देख लीं जो ज़मीनों में हैं।

रूहुल-बयान यही आयत –

तरजमा : इब्राहीम अलैहिस्सलाम को आसमान व ज़मीन की अजाइबात व ग़राइबात दिखाए और अर्श की बुलन्दी से तहतुस्सरा तक खोल दिया।

तफ़्सीर इब्ने जुरैर इब्ने अबी हातिम में उसी आयत के मातहत है **इन्नहू जलालहुल-अमरू सिर्रुहू व अलानीय्यतुहू फ़लम यख़्फ़ा अलैहि शैयुन मिन आमालिल-ख़लाइक़े।** हज़रत इब्राहीम पर खुली व पोशीदा तमाम चीज़ें खुल गईं। पस उन पर मख़्लूक़ के आमाल में से कुछ भी हो छुपा न रहा।

तफ़्सीरे कबीर यही आयत –

तरजमा : अल्लाह तआला ने हज़रत इब्राहीम के लिए आसमानों को चीर दिया यहाँ तक कि उन्होंने अर्श व कुर्सी और जहाँ तक जिसमानी आलम की फ़ौक़ियत ख़त्म होती है देख लिया और वह अजीब व ग़रीब चीज़ें भी देख लीं जो आसमानों में हैं और वह अजीब व ग़रीब चीज़ें भी देख लीं जो ज़मीन के पेट में हैं।

इस आयत और इन तफ़्सीरी इबारात से मालूम हुआ कि अज़ अर्श ता तहतुस्सरा हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को दिखाए गए और मख़्लूक़ के आमाल की भी उनको ख़बर दी गई और हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म उन से कहीं ज़्यादा तो मानना पड़ेगा कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को भी यह उलूम अता हुए।

ख़्याल रहे कि अर्श के इल्म में लौहे महफ़ूज़ भी आ गई। और लौहे महफ़ूज़ में क्या लिखा है उसको हम पहले बयान कर चुके हैं, लिहाज़ा **मा काना वमा यकूनु** का इल्म तो उनको भी हासिल हुआ और इल्मे इब्राहीमी और इल्मे हज़रत आदम अलैहिस्सलाम हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म के दरिया का क़तरा है।

(20) हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने फरमाया था **ला यातीकुमा तआमुन तुरज़क़ानेही इल्ला नब्बातुकुमा बेतावीलेही।** इसकी तफ़्सीर में रूहुल-बयान व कबीर व ख़ाज़िन में है कि इसके मानी यह हैं कि मैं तुम्हें खाने के गुज़श्ता व आइंदा के सारे हालात बता सकता हूँ कि ग़ल्ला कहाँ से आया और अब कहाँ जाएगा। तफ़्सीर कबीर ने तो फरमाया कि यह भी बता सकता हूँ कि यह खाना नफ़ा देगा या नुक़सान, यह चीज़ें वही बता सकता है जो हर ज़र्रा की ख़बर रखता हो फिर फरमाते हैं **ज़ालिकुमा मिम्मा अल्लमनी रब्बी।** यह इल्म तो मेरे उलूम का कुछ हिस्सा है। अब बताओ कि

हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म कितना होगा इल्मे यूसुफ़ी तो इल्मे मुस्तफ़ा के समुन्द्र का क़तरा है।

और ईसा अलैहिस्सलाम ने फरमाया –

व उनब्बेउकुम बेमा ताकुलूना वमा तद्दख़ेरूना फ़ी ब्यूतेकुम। मैं तुम्हें बता सकता हूँ जो कुछ तुम अपने घरों में खाते हो और जो कुछ जमा करते हो।

देखो खाना घर में खाया और रखा गया जहाँ ईसा अलैहिस्सलाम मौजूद नहीं थे और उसकी ख़बर आप बाहर दे रहे हैं, यह है इल्मे ग़ैब।

आख़िरी बात : मुख़ालेफ़ीन से इन दलाइल के जवाब कुछ नहीं बनते। सिर्फ़ यह कह देते हैं कि जिन आयात में **कुल्लु शैइन** का ज़िक्र हुआ या फरमाया गया **मालम तकुन तअलम** उनमें मुराद शरीअत के अहकाम हैं न और चीज़ें। इसके लिए चन्द दलाइल लाते हैं।

(1) **कुल्लु शैइन** ग़ैर मुतनाही (बे इंतेहा) हैं। और ग़ैर मुतनाही चीज़ों का इल्मे ख़ुदा के सिवा किसी को होना मंतिक़ी क़ाइदे से बिल्कुल बातिल है दलीले तसलसुल (लगातार) से।

(2) बहुत से मुफ़स्सेरीन ने भी **कुल्लु शैइन** के माना किए हैं। **मिन उमूरिद्दीने।** यानी दीन के अहकाम जैसे जलालैन वग़ैरह।

(3) कुरआन पाक में बहुत सी जगह **कुल्लु शैइन** फरमाया गया है मगर इससे कुछ चीज़ें मुराद हैं। जैसे **व ऊतियत मिन कुल्ले शैइन** बिल्क़ीस को **कुल्लु शैइन** दी गई। हालांकि बिल्क़ीस को कुछ चीज़ें दी गई थीं।

मगर यह दलाइल नहीं सिर्फ़ ग़लत फ़हमी है और धोखा। उनके जवाबात यह हैं।

अरबी ज़बान में क़लिमा कुल और कलिमा मा उमूम के लिए आते हैं। और कुरआन का एक-एक कलिमा क़तई है इसमें कोई क़ैद लगाना महज़ अपनी क़्यास से जाइज़ नहीं। कुरआन पाक के आम कलिमात को हदीस व आहाद से भी ख़ास नहीं बता सकते चे जाएकि महज़ अपनी राय से।

(१) **कुल्लु शैइन** ग़ैर मुतनाही नहीं बल्कि मुतनाही हैं। तफ़्सीर कबीर ज़ेरे आयत –

तरजमा : इसमें शक नहीं कि अदद से शुमार करना मुतनाही चीज़ में हो सकता है। लेकिन लफ़्ज़ **कुल्लु शैइन** इस **शैइन** के ग़ैर मुतनाही होने पर दलालत नहीं करता क्योंकि हमारे नज़्दीक **शैइन** मौजूद है और मौजूद चीज़ें मुतनाही में शुमार हैं।

तफ़्सीर रूहुल-बयान में इसी आयत – **व अहसा कुल्ला शैइन** के मातहत फरमाया।

तरजमा : इस आयत से उस पर बड़ी दलील पकड़ी जाती है कि मअदूम (ग़ैर मौजूद) चीज़ नहीं है क्योंकि अगर वह भी चीज़ होती तो चीज़ें

ग़ैर मुतनाही (बेइंतिहा) हो जातीं। और चीज़ों का शुमार में आना चाहता है कि चीज़ें मुतनाही हों क्योंकि अदद से शुमार मुतनाही की हो सकती है।

(2) अगर बहुत से मुफ़स्सेरीन ने **कुल्लु शैइन** से सिर्फ़ शरीअत के अहकाम मुराद लिए हैं तो बहुत से मुफ़स्सेरीन ने कुल्ली इल्मे ग़ैब भी मुराद लिया है और जब कि बाज़ दलाइल नफी के हों और बाज़ सुबूत के तो सुबूत वालों को ही इख़्तियार किया जाता हैं।

नूरुल-अनवार बहस तआरुज़ में है। साबित करने वाले दलाइल इंकार करने वाले से ज़्यादा बेहतर हैं, तो जिन तफ़्सीरों के हवाला हम पेश कर चुके हैं चूंकि इनमें ज़्यादा का सुबूत है लिहाज़ा वही क़ाबिले क़बूल हैं। और **कुल्लु शैइन** की तफ़्सीर खुद अहादीस और उलमा-ए-उम्मत के अक़्वाल से हम ब्यान करेंगे कि कोई ज़र्रा कोई क़तरा ऐसा नहीं जो हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म में न आ गया हो और मुक़द्दमा किताब में लिख चुके हैं कि तफ़्सीर कुरआन बिल-हदीस और तफ़्सीरों से बेहतर है लिहाज़ा हदीस ही की तफ़्सीर मानी जाएगी।

और जिन मुफ़स्सेरीन ने उमूरे दीन से तफ़्सीर की उन्होंने भी दूसरी चीज़ों की नफी तो न की। लिहाज़ा तुम नफी कहाँ से निकालते हो? किसी चीज़ के ज़िक्र न करने से उसकी नफी कैसे होगी। कुरआने करीम फरमाता है **तक़ीकुमुल-हर्रा** यानी तुम्हारे कपड़े तुमको गर्मी से बचाते हैं तो क्या कपड़े सर्दी से नहीं बचाते? मगर एक चीज़ का जिक्र न फरमाया।

और दीन तो सब ही को शामिल है। आलिमे दीन की कौन सी चीज़ ऐसी है जिस पर दीन के अहकाम हराम व हलाल वग़ैरह जारी नहीं होते। तो उनका यह फरमाना कि दीनी इल्म मुकम्मल कर दिया सबको शामिल है।

(3) बिल्क़ीस वग़ैरह के क़िस्सा में जो **कुल्लु शैइन** आया है वहाँ क़रीना मौजूद है जिससे मालूम होता है कि वहाँ **कुल्लु शैइन** से मुराद सलतनत के कारोबार की कुल चीज़ें हैं। इसलिए वहाँ गोया मजाज़ी माना मुराद लिए गए यहाँ कौन सा क़रीना है जिसकी वजह से **कुल्लु शैइन** के हक़ीक़ी माना छोड़ कर मजाज़ी माना मुराद लिए जाएं। ख़्याल रहे कि कुरआन करीम ने हुद हुद का कौल नक़्ल फरमाया कि उसने कहा **ऊतियत मिन कुल्ले शैइन** बिल्क़ीस को हर चीज़ दी गई खुद रब ने यह ख़बर न दी। हुद हुद समझा कि बिल्क़ीस को दुनिया भर की तमाम चीज़ें मिल गईं। मगर मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम के लिए खुद रब तआला ने फरमाया **तिबयानन लेकुल्ले शैइन**। हुद हुद ग़लती कर सकता है। रब का कलाम ग़लत नहीं हो सकता। **उसने तो यह भी कहा था वलहा अरशुन अज़ीम** क्या तख़्ते बिल्क़ीस अर्शे अज़ीम था। **बल्कि कुरआन** की और आयतें तो बता रही हैं कि **कुल्लु शैइन** से मुराद **यहाँ आलम** की तमाम चीज़ें हैं फरमाता है **वला रतबिन वला**

याबेसिन इल्ला फ़ी किताबिम मुबीन। कोई ख़ुश्क और तर चीज़ ऐसी नहीं जो लौहे महफ़ूज़ या क़ुरआने करीम में न हो। फिर आने वाली अहादीस और उलमा और मुहद्दसीन के क़ौल भी इसी की ताईद करते हैं कि आलम की हर चीज़ का हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इल्म दिया गया। हम हाज़िर व नाज़िर की बहस में इंशाअल्लाह बताएंगे कि तमाम आलम मलकुल-मौत के सामने ऐसा है जैसा एक तश्त और इबलीस आन की आन में तमाम ज़मीन का चक्कर लगा लेता है। और यह देवबन्दी भी तस्लीम करते हैं कि सारी मख़्लूक़ात से ज़्यादा हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म है। लिहाज़ा साबित हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को भी इन चीज़ों का इल्म हो। हज़रत आदम और कातिबे तक़्दीर फ़रिश्ता का इल्म हम उलूमे ख़मसा (पांच) की बहस में बताएंगे जिससे मालूम होगा कि सारे उलूमे ख़मसा उनको हासिल होते हैं और हुज़ूर अलैहिस्सलाम तो सारी मख़्लूक़ से ज़्यादा आलिम। लिहाज़ा हुज़ूर अलैहिस्सलाम को भी यह उलूम बल्कि इससे भी ज़्यादा मानना पड़ेंगे। हमारा मुद्दआ हर हाल में साबित है। **वलिल्लाहिल-हम्द।**

दूसरी फ़स्ल

इल्मे ग़ैब की अहादीस के बयान में

इस फस्ल में हम नम्बर वार अहादीस ब्यान करते हैं फिर उसी नम्बरों की तर्तीब से तीसरी फ़स्ल में उन हदीसों की शरह बयान करेंगे।

(1) बुख़ारी **किताबु बदइल-ख़ल्क़े** (जिल्द अव्वल, स० 453) और मिश्कात जिल्द दोम। **बाब बदइल-ख़ल्क़े** व **ज़िक्रुल-अंबिया** में हज़रत फारूक़ से रिवायत है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलमा ने हम में एक जगह क़याम फ़रमाया और हमको इब्तिदा-ए-पैदाइश की ख़बर दे दी यहाँ तक कि जन्नती लोग अपनी मंज़िलों में पहुँच गए और जहन्नमी अपनी मंज़िलों में, जिसने याद रखा उसने याद रखा और जो भूल गया वह भूल गया।

इस जगह हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने दो क़िस्म के वाक़ेआत की ख़बर दी। (1) आलम की पैदाइश की शुरूआत किस तरह हुई। (2) फिर आलम की इंतिहा किस तरह होगी यानी अज़ रोज़े अव्वल ता क़यामे क़यामत एक-एक ज़र्रा व क़तरा ब्यान कर दिया।

(2) मिश्कात **बाबुल-मोजज़ात** में मुस्लिम से बरिवायत अमर बिन अख़तब इसी तरह मंक़ूल है मगर इसमें इतना और है। **फ़अख़्बरना बेमा हुवा काइनुन इला यौमिल-क़यामते फ़आलमुना अहफ़ज़ुना।** हमको तमाम उन **वाक़ेआत** की ख़बर दे दी जो क़यामत तक होने वाले हैं। लिहाज़ा हम में **बड़ा आलिम** वह है जो ज़्यादा इन बातों का हाफ़िज़ है।

(3) मिश्कात बाबुल-फ़ितन (स० 461) में बुख़ारी व मुस्लिम से वरिवायत हज़रत हुज़ैफ़ा है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने उस जगह क़्यामत तक की कोई चीज़ न छोड़ी मगर उसकी ख़बर दे दी जिसने याद रखा, याद रखा जो भूल गया वह भूल गया।

(4) मिश्कात **बाब फ़ज़ाइले सैयदुल-मुरसलीन** में मुस्लिम से बरिवायत सौबान रज़ि अल्लाहु है अल्लाह ने मेरे लिए ज़मीन समेट दी लिहाज़ा मैंने ज़मीन के मश्रिक़ों और मग़्रिबों को देखा।

(5) मिश्कात **बाबुल-मजासिद** में अब्दुर्रहमान बिन आइश से रिवायत है।

तरजमा : हमने अपने रब को अच्छी सूरत में देखा। रब तआला ने अपने दस्त कुदरत हमारे सीना पर रखा जिसकी ठंडक हमने अपने क़ल्ब में पाई पस तमाम आसमान व ज़मीन की चीज़ों को हमने जान लिया।

(6) शरह मवाहिबु लदुनिया लिज़्ज़ुरक़ानी में हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर की रिवायत से है।

तरजमा : अल्लाह तआला ने हमारे सामने सारी दुनिया को पेश फ़रमा दिया पस हम इस दुनिया को और जो इस में क़्यामत तक होने वाला है इस तरह देख रहे हैं जैसे अपने इस हाथ को देखते हैं।

(7) मिश्कात **बाबुल-मसाजिद** (स० 72) बरिवायत तिर्मिज़ी है। पस हमारे लिए हर चीज़ ज़ाहिर हो गई और हमने पहचान लिया।

(8) मुसनद अहमद बिन हंबल में बरिवायत अबू ज़र ग़फ़्फ़ारी रज़ि अल्लाहु अन्हु है।

तरजमा : हमको हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने इस हाल पर छोड़ा कि कोई परिन्दा अपने पर भी नहीं हिलाता मगर उसका हमको इल्म बता दिया।

(9) मिश्कात **बाबुल-फ़ितन** फ़स्ले सानी सफ़: 463, में हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है।

नहीं छोड़ा हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने किसी फ़ित्ना चलाने वाले को दुनिया के ख़त्म होने तक जिनकी तादाद तीन सौ या ज़्यादा तक पहुँचेगी मगर हमको उसका नाम उसके बाप का नाम उसके क़बीले का नाम बता दिया।

(10) मिश्कात **बाब ज़िक्रुल-अंबिया** सफ़: 508, में बुख़ारी से बरिवायत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु है।

हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम पर कुरआन (ज़बूर) को इस क़दर हल्का कर दिया गया था कि वह अपने घोड़ों को ज़ीन लगाने का हुक्म देते थे तो आप उनकी ज़ीन से पहले ज़बूर पढ़ लेते थे।

यह हदीस इस जगह इसलिए बयान की गई कि अगर हुज़ूर **अलैहिस्सलाम ने** एक वअज़ **में अज़ अव्वल ता आख़िर वाक़ेआत** ब्यान फ़रमा **दिए तो यह**

भी आपका मोजज़ा था जैसा कि हज़रत दाऊद आन की आन में सारी ज़बूर शरीफ़ पढ़ लेते थे।

(11) मिश्कात **बाब मनाक़िबे अह्लुल-बैत।** सफ़: **572,** में है। हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने ख़बर दी कि फ़ातिमा ज़हरा के फ़रज़न्द पैदा होगा जो तुम्हारी परवरिश में रहेगा।

(12) बुख़ारी बाब अस्बाते अज़ाबिल-क़ब्रे सफ़: **184,** में हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से नक़्ल है।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम दो क़ब्रों पर गुज़रे जिनमें अज़ाब हो रहा था तो फ़रमाया कि उन दोनों शख़्सों को अज़ाब दिया जा रहा है और किसी दुश्वार बात में अज़ाब नहीं हो रहा है। इनमें से एक तो पेशाब से न बचता था और दूसरा चुग़ली किया करता था, फिर एक तर शाख़ लेकर उसको आधा-आध ा चीरा। फिर हर क़ब्र में एक-एक गाड़ दिया। और फ़रमाया कि जब तक यह टुकड़े ख़ुश्क न होंगे उन दोनों शख़्सों से अज़ाब में कमी की जाएगी।

(13) बुख़ारी **किताबुल-ऐतसाम बिल-किताबे वस्सुन्ना** (ज़िल्द दौम, स० **1083**) और तफ़्सीर ख़ाज़िन में ज़ेरे आयत —

हुज़ूर अलैहिस्सलाम मिंबर पर खड़े हुए पस क़यामत का ज़िक्र फ़रमाया कि इससे पहले बड़े-बड़े वाक़ेआत हैं फिर फ़रमाया कि जो शख़्स जो बात पूछना चाहे पूछ ले क़सम ख़ुदा की जब तक हम इस जगह यानी मिंबर पर हैं तुम कोई बात हम से न पूछोगे मगर हम तुमको उसकी ख़बर देंगे, एक शख़्स ने खड़े हो कर अर्ज़ किया कि मेरा ठेकाना कहाँ है? फ़रमाया जहन्नम में। अब्दुल्लाह इब्ने हुज़ाफ़ा ने खड़े हो कर दरयाफ़्त किया कि मेरा बाप कौन है? फ़रमाया हुज़ाफ़ा। फिर बार-बार फ़रमाते रहे कि पूछो पूछो।

ख़्याल रहे कि जहन्नमी या जन्नती होना उलूमे ख़म्सा में से है कि सईद है या शक़ी, इसी तरह कौन किसका बेटा है। यह ऐसी बात है कि जिसका इल्म सिवाए उसकी मां के और किसी को नहीं हो सकता। क़ुरबान उनके निगाहों के जो कि अंधेरे उजाले, दुनिया व आख़िरत सबको देखती हैं।

(14) मिश्कात **बाब मनाक़िबे अली** सफ़: **563,** में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने ख़ैबर के दिन फ़रमाया कि हम कल यह झण्डा उसको देंगे जिसके हाथ पर अल्लाह ख़ैबर फ़तह फ़रमा देगा। और वह अल्लाह और उसके रसूल से मुहब्बत करता है।

(१५) मिश्कात **बाबुल-मसाजिद** सफ़: **69,** में अबू ज़र ग़फ़्फ़ारी रज़ि अल्लाहु अन्हु से है।

हम पर हमारी उम्मत के आमाल पेश किए गए अच्छे भी और बुरे भी, हमने उनके आमाले हसना में वह तक्लीफ देह चीज़ भी पाई जो रास्ते से हटा दी जाए।

(16) मुस्लिम जिल्द दौम **किताबुल-जिहाद बाब ग़ज़्व-ए-बद्र** में हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फरमाया कि यह फ़लां शख़्स के गिरने की जगह है और अपने दस्ते मुबारक को इधर-उधर ज़मीन पर रखते थे। रावी ने फरमाया कि कोई भी मक़्तूलीन में से हुज़ूर अलैहिस्सलाम के हाथ की जगह से ज़रा भी न हटा।

ख़्याल रहे कि कौन किस जगह मरेगा यह उलूमे ख़म्सा में से है जिसकी ख़बर हुज़ूर अलैहिस्सलाम जंगे बदर में एक रोज़ पहले दे रहे हैं।

(17) मिश्कात **बाबुल-मोजज़ात** सफ़ः **541**, में हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है।

शिकारी आदमी ने कहा कि मैंने आज की तरह कभी न देखा कि भेड़िया बातें कर रहा है तो भेड़िया बोला कि इससे अजीब बात यह है कि एक साहब (हुज़ूर अलैहिस्सलाम) दो मैदानों के दरम्यानी नख़्लिस्तान (मदीना) में हैं और तुमको गुज़िश्ता और आइंदा की ख़बरें दे रहे हैं।

(18) तफ़्सीर ख़ाज़िन पारा **4** ज़ेरे आयत –

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फरमाया कि हम पर हमारी उम्मत पेश फरमाई गई अपनी-अपनी सूरतों में मिट्टी में जिस तरह कि हज़रत आदम पर पेश हुई थी हमको बता दिया गया कौन हम पर ईमान लाएगा और कौन कुफ़्र करेगा यह ख़बर मुनाफ़ेक़ीन को पहुँची तो वह हंस कर कहने लगे कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम फरमाते हैं कि उन लोगों की पैदाइश से पहले ही काफ़िर व मोमिन की ख़बर हो गई हम तो उनके साथ हैं और हमको नहीं पहचानते यह ख़बर हुज़ूर अलैहिस्सलाम को पहुँची तो आप मिंबर पर खड़े हुए और ख़ुदा की हम्द व सना की, फिर फरमाया कि क़ौमों का क्या हाल है कि हमारे इल्म में तअने करते हैं अब से क़्यामत तक की किसी चीज़ के बारे में जो भी तुम हम से पूछोगे हम तुमको ख़बर देंगे।

इस हदीस से दो बातें मालूम हुईं, एक यह कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म में तअने करना मुनाफ़िक़ों का तरीक़ा है, दूसरे यह कि क़्यामत के वाक़ेआत सारे हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म में हैं।

(19) मिश्कात **किताबुल-फ़ितन बाबुल-मलाहिम** सफ़ः **467**, फ़स्ले अव्वल में मुस्लिम से बरिवायत इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु है।

हम उन (दज्जाल से जिहाद की तैयारी करने वालों) के नाम उनके बाप दादों के नाम उनके घोड़ों के रंग पहचानते हैं वह रूए ज़मीन पर बेहतरीन सवार हैं।

(20) मिश्कात शरीफ़ बाब मनाक़िबे अबी बकर व उमर में है कि हज़रत आइशा सिद्दीक़ा ने बारगाहे रिसालत में अर्ज़ किया कि कोई ऐसा भी है

जिसकी नेकियाँ तारों के बराबर हों फरमाया हां वह उमर हैं।

इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को क़यामत तक सारे लोगों के तमाम ज़ाहिरी और पोशीदा आमाल की पूरी ख़बर है और आसमानों के तमाम ज़ाहिर व पोशीदा तारों का भी तफ़्सीली इल्म है हालांकि बहुत से तारे अब तक फ़लासफ़ा को साइंसी आलात से मालूम न हो सके। हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने उन दोनों चीज़ों को मुलाहिज़ा फरमा कर फरमाया कि उमर की नेकियाँ तारों के बराबर हैं। दो चीज़ों की बराबरी या कमी बेशी वही बता सकता है जिसे दोनों चीज़ों का इल्म भी हो और मिक़्दार भी मालूम हो।

इनके अलावा और बहुत सी अहादीस पेश की जा सकती हैं मगर इख़्तिसारन इसी क़दर पर किफ़ायत की गई इन अहादीस से इतना मालूम हुआ कि तमाम आलम हुज़ूर अलैहिस्सलाम के सामने इस तरह है जैसे अपनी कफ़े दस्त (हाथ की हथेली)। ख़्याल रहे कि आलम कहते हैं मा सिवा अल्लाह को तो आलमे अजसाम, आलमे अरवाह, आलमे अम्र, आलमे इमकान, आलमे मलाइका, अर्श व फ़र्श ग़र्ज़कि हर चीज़ पर हुज़ूर अलैहिस्सला की नज़र है। और आलम में लौहे महफ़ूज़ भी है। जिसमें सारे हालात हैं। दूसरे यह मालूम हुआ कि अगले पिछले सारे वाक़ेआत पर भी इत्तिला रखते हैं तीसरे यह मालूम हुआ कि तारीक रातों में तन्हाई के अन्दर जो काम किए जाएं वह भी निगाहे मुसतफ़ा अलैहिस्सलाम से पोशीदा नहीं। कि अब्दुल्लाह के वालिद हुज़ाफ़ा को बता दिया। चौथे यह मालूम हुआ कि कौन कब मरेगा, कहाँ मरेगा, किस हाल में मरेगा, काफिर या मोमिन, औरत के पेट में क्या है यह भी मेरे हुज़ूर अलैहिस्सलाम पर मख़्फ़ी (छुपा) नहीं। ग़र्ज़ेकि ज़र्रा-ज़र्रा और क़तरा-क़तरा इल्म में है। सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम।

तीसरी फ़स्ल

इल्म ग़ैब के बारें में शारेहीने अहादीस के अक़्वाल

(1) ऐनी शरह बुख़ारी फ़तहुल-बारी इरशादुस्सारी शरह बुख़ारी, मिरक़ात शरह मिश्कात में हदीस नम्बर 1 के मातेहत है।

इस हदीस में दलालत है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने एक ही मज्लिस में सारी मख़्लूक़ात के सारे हालतों की शुरू से आख़िर तक की ख़बर दे दी।

(2) मिर्क़ात शरह मिश्कात और शरह शिफ़ा मुल्ला अली क़ारी व ज़रक़ानी शरह मवाहिब। नसीमुर्रियाज़ शरह शिफ़ा में हदीस नम्बर ४ में है।

इस हदीस का ख़ुलासा यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के लिए ज़मीन समेट दी गई और उसको ऐसा जमा फरमा दिया गया जैसे एक हाथ में आईना हो और वह शख़्स उस पूरे आईना को देखता हो। और ज़मीन को इस

तरह समेटा कि दूरे वाली को क़रीब कर दिया और उसके क़रीब की तरफ़। यहाँ तक कि हमने देख लिया उन तमाम चीज़ों को जो ज़मीन में हैं।

(ꕔ) मिर्क़ात शरह मिश्क़ात में हदीस नम्बर 5 के मातहत है।

तरजमा : इस फ़ैज़ के पहुँचने से हमने तमाम वह चीज़ें जान लीं और आसमानों और ज़मीन में हैं यानी आसमानों व ज़मीन में वह चीज़ें जो अल्लाह ने बताई फरिश्ते और दरख़्त वग़ैरह यह आपके उस वसी इल्म का बयान है जो अल्लाह तआला ने आप पर ज़ाहिर फरमाया। इबने हजर ने फरमाया कि जान ली वह तमाम मख़्लूक़ात जो आसमानों (बल्कि जो उसके ऊपर है जैसा कि हदीसे मेअराज से मालूम होता है) और ज़मीन में है और तमाम वह चीज़ें जो सातों ज़मीन बल्कि जो उससे नीचे हैं जैसा कि इन हदीसों से मालूम होता है जिनमें हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने गाय और मछली की ख़बर दी है जिन पर ज़मीनें क़ायम हैं।

अश्इतुल-लमआत शरह मिश्कात में इसी हदीस नम्बर ५ के मातहत है तमाम जुज़ई व कुल्ली के इल्मों हासिल होने और उसके एहाता का ब्यान है।

(7) **अश्अतुल-लमआत** में हदीस नम्बर 7 के मातहत बयान फरमाया "हम पर हर किस्म का इल्म ज़ाहिर हो गया और हमने सबको पहचान लिया।

अल्लामा ज़रक़ानी शरह मवाहिब में इसी हदीस नम्बर 7 के मातहत फ़रमाते हैं।

तरजमा : यानी हमारे सामने दुनिया ज़ाहिर की गई और खोली गई कि हमने उसकी तमाम चीज़ों का एहाता (महसूस) कर लिया पस हम इस दुनिया को और जो कुछ इसमें क्यामत तक होने वाला है इस तरह देख रहे हैं जैसे अपने इस हाथ को। इसमें इस तरफ इशारा है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने हक़ीक़तन मुलाहिज़ा फरमाया। यह शक दफा हो गया कि नज़र से मुराद इल्म है।

(8) इमाम अहमद क़स्तलानी मवाहिब शरीफ़ में ज़ेरे हदीस नम्बर ८ फरमाते हैं।

इसमें शक नहीं कि अल्लाह ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इससे भी ज़्यादा पर मुत्तला (बाख़बर) फ़रमाया और आपको सारे अगले पिछले हज़रात का इल्म दिया।

मुल्ला अली क़ारी मिर्क़ात में हदीस नम्बर १७ के तहत फ़रमाते हैं।

तुमको हुज़ूर अलैहिस्सलाम अगलों की गुज़री हुई ख़बरें देते हैं और जो कुछ तुम्हारे बाद पिछलों की ख़बरें हैं वह भी बताते हैं, दुनियावी हालात और आख़िरत के सारे हालात।

(१६) मिर्क़ात में हदीस नम्बर १६ के मा तहत फरमाते हैं।

इस हदीस में मोजज़ा होने के साथ ही साथ इस पर भी दलालत है कि

हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म कुल्ली और जुज़ई वाक़ेआत को घेरे हुए है।

मुहद्देसीन के इन इशारात से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम तमाम आलम को और उसमें अज़ अज़ल ता अबद होने वाले वाक़ेआत को इस तरह मुलाहिज़ा फरमा रहे हैं जैसे कोई अपने हाथ में आईना लेकर उसको देखता है इस आलम में लौहे महफ़ूज़ भी है। दूसरे यह मालूम हुआ कि तमाम अव्वलीन व आख़िरीन यानी अंबिया व मलाइका व औलिया का इल्म आपको अता फरमाया गया। अंबिया में हज़रत आदम व हज़रत ख़लील व हज़रत ख़िज़्र अलैहिमुस्सलाम दाख़िल हैं और मलाइका में हामिलीने अर्श (अर्श उठाने वाले) और हाज़िरीन लौहे महफ़ूज़ भी शामिल हैं और उनका इल्म तो सारे **मा काना वमा यकूना** को मुहीत है तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म का क्या पूछना। इस वुस्अते इल्म में उलूमे ख़मसा भी आ गए।

चौथी फ़स्ल

इल्म ग़ैब के बारे में उलमा-ए-उम्मत के अक़वाल

मदारिजुन्नबुव्वह के ख़ुतबा में शैख़ अब्दुल-हक़ मुहद्दिस देहलवी अलैहिर्रमा फरमाते हैं। वही अव्वल है वही आख़िर वही ज़ाहिर है वही छुपी हुई और वह हर चीज़ को जानता है।

यह ख़ुदा की हम्द भी है और नअते मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम भी। चुनांचे फरमाते हैं "हुज़ूर अलैहिस्सलाम तमाम चीज़ों के जानने वाले हैं ज़ाते इलाही के शिवनात के सिफ़ात, हक़ के अहकाम के नामों के काम के आसार के और सारे ज़ाहिरी बातनी अव्वल व आख़िर के उलूम का एहाता फरमा लिया है।

इसी मदारिज जिल्द अव्वल बाब पंजुम दर ज़िक्र फ़ज़ाइल आं हज़रत सफ: 144 में है।

हज़रत आदम अलैहिस्सलाम से सूर फूंकने तक तमाम हुज़ूर अलैहिस्सलाम पर ज़ाहिर फरमा दिया ताकि अव्वल से आख़िर तक के सारे हालात आपको मालूम हो जाएं। और हुज़ूर अलैहिस्लाम ने कुछ हालात की ख़बर अपने सहाबा को भी दी।

अल्लामा ज़रक़ानी शरह मवाहिबे लदुनिया में फरमाते हैं।

अहादीस इस पर मुतवातिर हैं, और इनके मानी इस पर मुत्तफ़िक़ हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को ग़ैब पर इत्तिला है और यह मसला उन आयतों के ख़िलाफ़ नहीं जो इस पर दलालत करती हैं कि ख़ुदा के सिवा कोई ग़ैब नहीं जानता क्योंकि जिसकी नफ़ी है वह इल्म बग़ैर वास्ता है। (ज़ाती) लेकिन हुज़ूर अलैहिस्सलाम का ग़ैब पर मुत्तला (बाख़बर) होना अल्लाह के बताने से वह साबित हैं रब के इस क़ौल से कि सिवाए पसनदीदा रसूल के।

शिफ़ा शरीफ़ में क़ाज़ी अलैहिर्रहमा फरमाते हैं (माख़ूज़ अज़ ख़रपूती

शरह क़सीदा बुर्दा)।

अल्लाह ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को ख़ास फरमाया तमाम दीनी व दुनियावी मसलेहतों पर मुत्तला (बाख़बर) फ़रमा कर और अपनी उम्मत की मसलेहत और गुज़िश्ता उम्मतों के वाक़ेआत और अपनी उम्मत के अदना से अदना वाक़या पर ख़बरदार फरमा दिया और तमाम मारिफ़त के फुनून पर मुत्तला फरमा दिया जैसे दिल के हालात, फ़राइज़ इबादात और इल्मे हिसाब।

क़सीदए बुर्दा में है।

दुनिया व आख़िरत आप ही के करम से है और लौह व क़लम का इल्म आपके इल्म का कुछ हिस्सा है।

शरह क़सीदा बुर्दा मुसन्नेफ़ा अल्लामा इब्राहीम बाजोरी में इस शेअर के मातहत है।

अगर कहा जाए कि जब लौह व क़लम का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलाम के उलूम का बाज़ हुआ तो दूसरे बाज़ कौन से उलूम हैं, जवाब दिया जाएगा कि वह बाज़ आख़िरत के हालात का इल्म है जिसकी अल्लाह तआला ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को ख़बर दी, क्योंकि क़लम ने तो लौह में वही लिखा है जो क़्यामत तक होने वाला है।

मुल्ला अली क़ारी हल्लुल-अक़ीदा शरह क़सीदा बुर्दा में इसी शेअर के मातहत फरमाते हैं।

तरजमा : और लौह व क़लम के उलूम हुज़ूर अलैहिस्सलाम के उलूम के कुछ इसलिए हैं कि हुज़ूर के उलूम मुनक़सिम हैं जुज़ईयात और कुल्लियात और हक़ाइक़ और मारिफ़त और उन मारिफ़तों की तरफ जिनका तअल्लुक़ ज़ात और सिफ़ात से है लिहाज़ा लौह व क़लम का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म के दरियाओं की एक नहर है और हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म की लाइनों का एक हरफ़।

इन इबारतों ने फ़ैसला फरमा दिया कि वह लौह व क़लम जिनके उलूम को कुरआन ने फरमाया कि **वला रतबिन वला याबेसिन इल्ला फ़ी किताबिन मुबीन**। कोई ख़ुश्क व तर चीज़ ऐसी नहीं जो लौहे महफ़ूज़ में न हो इसके उलूम इल्मे मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के समुन्द्रों का एक क़तरा है तो मालूम हुआ कि **मा काना वमा यकूनु** का इल्म हुज़ूर अलैहिमुस्सलाम के दफ़्तर का एक नुक़्ता है।

इमाम बूसेरी साहबे क़सीदाए बुर्दा अपने दूसरे क़सीदा उम्मुल-क़ुर्रा में फ़रमाते हैं।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने अपने इल्म व अख़्लाक़ से जहानों को घेर लिया पस आप ऐसे समुन्द्र हैं कि इसको घेरने वाले न घेर सके।

शैख़ सुलेमान जमल इस शेअर की शरह में फ़ुतूहाते अहमदीया में फरमाते हैं।

तरजमा : यानी आपका इल्म तमाम जहानों यानी जिन्न व इंसान और फ़रिश्तों के इल्म को घेरे हुए है, क्योंकि रब तआला ने आपको तमाम आलम पर ख़बरदार फरमाया पस अगले पिछलों का इल्म सिखाया और **मा काना वमा यकूनु** बताया और हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म के लिए इल्मे कुरआन काफ़ी है, कि ख़ुदा तआला फरमाता है हमने इस किताब में कोई चीज़ उठा न रखी।

इमाम इब्ने हजर मक्की इस शेअर की शरह में अफ़्ज़लुल-कुरा में फरमाते हैं।

क्योंकि अल्लाह तआला ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को तमाम जहान पर ख़बरदार फरमाया। और आपने अव्वीन व आख़िरीन को और जो कुछ हो चुका और जो कुछ होगा उसको जान लिया।

इन इबारतों से मालूम हुआ कि सारे जहान वालों का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलाम को दिया गया, जहान वालों में हज़रत आदम व मलाइका व मलिकुल-मौत व शैतान हैं। मलिकुल-मौत व शैतान के लिए इल्मुल-ग़ैब तो देवबन्दी भी मानते हैं।

इमाम बूसेरी क़सीदा बुर्दा में फरमाते हैं

तरजमा : तमाम रसूल हुज़ूर अलैहिस्सलाम से ही लेने वाले हैं समुन्द्र से एक चुल्लू या तेज़ बारिश से छींटा।

अल्लामा ख़रपोती शरह क़सीदा बुर्दा में इस शेअर के मातहत फरमाते हैं।

तरजमा : हर नबी ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम के उस इल्म से मांगा और लिया जो वुस्अत में समुन्द्र की तरह है और सबने करमे हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इस करम से हासिल किया जो तेज़ बारिश की तरह है, क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम फ़ैज़ देने वाले हैं और वह नबी फ़ैज़ लेने वाले क्योंकि रब तआला ने अव्वलन हुज़ूर अलैहिस्सलाम की रूह पैदा फरमाई, फिर इस रूह में नबियों के और **मा काना वमा यकूनु** के उलूम रखे फिर उन रसूलों को पैदा फरमाया पस इन सबने अपने उलूम हुज़ूर अलैहिस्सलाम से लिए।

हाफ़िज़ अहमद इब्ने मुबारक अब्रेज़ शरीफ़ सफ़: 270 में फरमाते हैं।

तरजमा : हमारे नज़्दीक हुज़ूर अलैहिस्सलाम अर्श से फ़र्श तक को जानते हैं और जो कुछ उनमें है उसकी ख़बर रखते हैं और आपसे ऊपर कोई नहीं और यह सारे उलूम हुज़ूर अलैहिस्सलाम की निसबत से ऐसे हैं जैसे अलिफ़ 60 जुज़्व की निसबत से जो कुरआने करीम हैं।

इमाम क़स्तलानी मवाहिब में फरमाते हैं।

नुबूव्वत बिना से मुश्तक़ है जिसके माना हैं ख़बर यानी अल्लाह ने उनको

ग़ैब पर ख़बरदार फ़रमाया।

मवाहिबे लदुनिया जिल्द दोम सफ़: 192।

इसमें शक नहीं कि अल्लाह तआला ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इससे भी ज़्यादा पर इत्तिला दी और आप पर अगलों पिछलों का इल्म पेश कर दिया।

हज़रत मुजद्दिद अल्फ़े सानी मक्तूबात शरीफ़ जिल्द अव्वल मक्तूब 310 में फ़रमाते हैं। "जो इल्म रब तआला के साथ ख़ास है उस पर ख़ास रसूलों को इत्तिला देते हैं।

मदारिजुन्नबुव्वह जिल्द अव्वल में है।

तरजमा : कुछ उलमा-ए-सालेहीन से सुना गया है कि कुछ आरेफ़ीन ने कोई किताब लिखी है जिसमें साबित किया है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को तमाम उलूमे इलाहिया मालूम करा दिए गए थे। यह कलाम बज़ाहिर तो बहुत से दलाइल के ख़िलाफ़ है न मालूम कि क़ाइल ने इससे क्या मुराद ली है।

यह इबारत यहाँ इसलिए पेश की गई कि बाज़ लोगों ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म ख़ुदा के इल्म के बराबर माना और फ़र्क़ सिर्फ़ ज़ाती व अताई का जाना। मगर शैख़ अब्दुल-हक़ ने उनको मुश्रिक न फ़रमाया बल्कि आरिफ़ कहा। मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के लिए इल्मे ग़ैब मानना शिर्क नहीं।

मौलाना बहरुल-उलूम अब्दुल-अली लखनवी अलैहिर्रहमा ख़ुतबा हवाशी मीर ज़ाहिद रिसाला में फ़रमाते हैं।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम को रब ने वह उलूम सिखाए जिन पर क़लम आला भी मुश्तमिल नहीं और जिसके घेरने पर लौहे महफ़ूज़ क़ादिर नहीं। न तो आपका मिस्ल ज़माने में पैदा हुआ अज़ल से और न अबद तक हो और आसमानों व ज़मीन में कोई आपका हमसर नहीं।

अल्लामा शनवाई जमउन्निहाया में फ़रमाते हैं।

यह वारिद हो चुका है कि अल्लाह तआला ने नबी अलैहिस्सलाम को दुनिया से न निकाला यहाँ तक कि आपको हर चीज़ पर बाख़बर फ़रमा दिया।

शरह अक़ाइद नसफ़ी सफ़: 175 में है।

ख़ुलास-ए-कलाम यह है कि ग़ैब जानना एक ऐसी बात है जो ख़ुदा से ख़ास है बन्दों को उस तक कोई राह नहीं बग़ैर रब के बताए या इल्हाम फ़रमाए मोजज़े या करामत के तरीक़ा पर।

दुर्रे मुख़्तार शुरू किताबुल-हज में है।

तरजमा : हज सन 9 हिज. में फ़र्ज़ हुआ और हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने उसको 10 हिज. तक मुअख़्ख़र फ़रमाया किसी उज़्र की वजह से और हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अपनी ज़िन्दगी पाक के बाक़ी रहने का इल्म भी था, ताकि तबलीग़ पूरी हो जाए।

इस इबारत से मालूम हुआ कि कब वफ़ात होगी इसका जानना उलूमे खमसा से है मगर हुज़ूर अलेहिस्सलाम को अपनी वफ़ात की ख़बर थी कि 9 हिज. में न होगी। इसीलिए इस साल हज न फरमाया वरना हज फ़र्ज़ होते ही उसका अदा करना ज़रूरी है क्योंकि हमको मौत की खबर नहीं।

खरपोती ने शरह क़सीदा बुर्दा में इस शेअर के मातहत बयान फरमाया।

तरजमा : हज़रत अमीर मुआविया से हदीस मरवी है कि वह हुज़ूर अलैहिस्सलाम के सामने लिखा करते थे पस हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने उनको फरमाया कि दवात इस तरह रखो, क़लम को फेरो, ब को सीधा करो, सीन में फ़र्क़ करो और मीम को टेढ़ा न करो। बावजूद यह कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने न लिखना सीखा और न अगलों की किताब पढ़ी।

तफ़्सीरे रूहुल-बयान में ज़ेरे आयत –

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम ख़तों को जानते थे और उसकी ख़बर भी देते थे।

इस से साबित हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम इल्मे ख़त भी बख़ूबी जानते थे। इसकी पूरी तहक़ीक़ हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान बेआयातुल-कुरआन में देखो। मसनवी शरीफ़ में है।

यानी हम सारे जहान को उस वक़्त से देख रहे हैं जब आदम व हव्वा पैदा भी न हुए थे। और ऐ काफिर क़ैदियो! हमने तुम्हें मीसाक़ के दिन मोमिन और नमाज़ी देखा था। इसलिए तुम्हें क़ैद किया है कि तुम ईमान लाओ। जिस आसमान बेसुतून वग़ैरह की पैदाइश हमने देखी है इससे कुछ न ज़्यादा हुआ।

उल्मा-ए-किराम के इन अक़वाल से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को रब तआला ने सारे अंबिया मलाइका से ज़्यादा उलूम अता फरमाए। लौहे महफ़ूज़ व क़लम के उलूम हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्मों का क़तरा हैं और आलम की कोई चीज़ ऐसी नहीं जो इस चश्मे हक़ बीं से मख़्फ़ी रही हो।

तीसरी फ़स्ल

मुख़ालेफ़ीन की ताईद के बयान में

अब तक तो मुवाफ़ेक़ीन की इबारात से इल्मे ग़ैब हुज़ूर अलैहिस्सलाम के लिए साबित किया गया। अब मुख़ालेफ़ीन के अकाबिर की वह इबारात पेश की जाती हैं जिन से मसला इल्मे ग़ैब बख़ूबी हल हो जाता है।

हाजी इमदादुल्लाह साहब शमाइमे इमदादिया सफ़: ।10 में फरमाते हैं कि लोग कहते हैं कि इल्मे ग़ैब अंबिया व औलिया को नहीं होता। मैं कहता हूँ कि अह्ले हक़ जिस तरफ नज़र करते हैं दरयाफ़्त व इदराके मुग़ीबात उनको होता है। असल में यह इल्म हक़ है। आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम

को हुदैबिया और हज़रत आइशा के मामला की ख़बर न थी उसको दलील अपने दावा की समझते हैं यह ग़लत है क्योंकि इल्म के वास्ते तवज्जोह ज़रूरी है।

(माख़ूज़ अज़ अनवारे ग़ैबिया सफ़: 25)

मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही लताइफ़े रशीदीया सफ़: 27 में फ़रमाते हैं। अंबिया अलैहिमुस्सलाम को हर दम मुशाहिदा उमूरे ग़ैबिया और तयक्कुज़ व हुज़ूरे हक़ तआला का रहता है।

(अनवारे ग़ैबिया सफ़: 32)

मौलवी अशरफ़ अली थानवी तक्मीलुल–यक़ीन मत्बूआ हिन्दुस्तान प्रिंटिंग प्रेस सफ़: 135 में फ़रमाते हैं कि शरीअत में वारिद हुआ है कि रुसुल व औलिया ग़ैब और आइंदा की ख़बर दिया करते हैं क्योंकि जब ख़ुदा ग़ैब और आइंदा के हवादिसात को जानता है इसलिए कि हर हादिस उसके इल्म से उसी के इरादे के मुताअल्लिक़ होने से उसी के फ़ेअल से पैदा होता है तो फिर इससे कौन अम्र रोकने वाला हो सकता है कि यही ख़ुदा उन रुसुल व औलिया में से जिसे चाहे उसे ग़ैब या आइंदा की ख़बर दे दे। अगरचे हम इसके क़ायल हैं कि फ़ितरते इंसानी का यह मुक़्तज़ी नहीं कि वह बज़ातेही और ख़ुद मुग़ीबात में से किसी चीज़ को जान सके। लेकिन अगर ख़ुदा किसी को बता दे तो उसको कौन रोक सकता है। लिहाज़ा उन लोगों को जो कुछ मालूम होता है वह ख़ुदा के बताने से ही मालूम होता है और फिर वह लोग औरों को ख़बर दे देते हैं उनमें से ऐसा कोई नहीं जो ख़ुद ही इल्मे ग़ैब का दावा करता है। चुनांचे शरीअते मुहम्मदीया बिज़्ज़ात इल्मे ग़ैब के दावा करने को आला दरजा के मम्नूआत (जिनको मना किया) में शुमार करती है। और जो इसका दावा करे उसको काफ़िर बताती है।

मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब नानौतवी **तहज़ीरुन्नास** के सफ़: 4 पर लिखते हैं "उलूमे अव्वलीन मसलन और हैं और उलूमे आख़ेरीन और। लेकिन वह सब इल्मे रसूलुल्लाह में मुज्तमे (जमा) हैं। इसी तरह से आलिमे हक़ीक़ी रसूलुल्लाह हैं और अंबिया बाक़ी और औलिया बिलअर्ज़ हैं।

इस आख़िरी इबारत पर ग़ौर करना चाहिए कि मौलवी क़ासिम साहब ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम में अव्वलीन और आख़िरीन का इल्म जमा माना है। और अव्वलीन में हज़रत आदम व हज़रत ख़िज़ व हज़रत इब्राहीम अलैहिमुस्सलाम इसी तरह सारे मलाइका हामिलाने अर्श व हाज़िरीने लौहे महफ़ूज़ भी शामिल हैं। लिहाज़ा इन सबके उलूम से हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म ज़्यादा होना चाहिए। हज़रत आदम अलैहिस्सलाम के इल्म को हम बयान कर चुके हैं।

छठी फ़स्ल

इल्मे ग़ैब के अक़्ली दलाइल और औलिया के इल्मे ग़ैब के बयान में

चन्द अक़्ली दलाइल से भी इल्म **मा काना वमा यकूनु** का सुबूत है। वह दलाइल हसबे ज़ैल हैं।

(1) हुज़ूर सैय्यदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सलतनते इलाहिया के वज़ीरे आज़म बल्कि ख़लीफ़ए आज़म हैं। हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को **ख़लीफ़तुल्लाह** बनाया गया। तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम इस सलतनत के ख़लीफ़-ए-आज़म और ज़मीन में नायबे रब्बुल-आलमीन हैं। और सलतनत के मुक़र्रर कर्दा हाकिम में दो वस्फ़ लाज़िम हैं। एक तो इल्म दूसरे इख़्तियारात। इस दुनियावी सलतनत के हुक्काम जिस क़दर बड़ा दरजा रखते हैं उसी क़दर उनकी मालूमात और इख़्तियारात ज़्यादा होते हैं कलक्टर को सारे ज़िला का इल्म व इख़्तियारात, वाइसराए को सारे मुल्क के मुतअ़ल्लिक़ इल्म व इख़्तियारात ज़रूरी हैं, कि इन दो वसफ़ों के बग़ैर वह हुकूमत कर ही नहीं सकता और सुलतानी क़ानून रिआया में जारी नहीं कर सकता। इसी तरह हज़राते अंबिया हैं जिनका जिस क़दर बड़ा दरजा उसी क़दर उनके इख़्तियारात और इल्म ज़्यादा। हज़रत आदम अलैहिस्सलाम की ख़िलाफ़त को रब्बुल-आलमीन ने उनके इल्म ही से साबित फरमाया कि चूंकि इतना ज़्यादा इल्म दिया है वही ख़िलाफ़ते इलाहिया के लिए मौज़ूं हैं फिर मलाइका से सज्दा कराना उनके इख़्तियाराते ख़ुसूसिया का सुबूत था कि मलाइका भी उनके सामने झुक गए। चूंकि नबीए करीम अलैहिस्सलाम सारे आलम के नबी और अर्श व फ़र्श के लोग आपके उम्मती हैं। लिहाज़ा ज़रूरी था कि आपको तमाम अंबिया से ज़्यादा इल्म और ज़्यादा इख़्तियारात दिए जाएं। इसीलिए बहुत से मोजज़ात दिखाए गए। चांद इशारे से फाड़ा, डूबा हुआ सूरज वापस फरमाया, बादल को हुक्म दिया, पानी बरसा, फिर हुक्म दिया खुल गया यह सब अपने ख़ुदा दाद इख़्तियारात का इज़हार था।

(2) मौलवी क़ासिम साहब नानौतवी ने **तहज़ीरुन्नास** में लिखा है कि "अंबिया उम्मत से उलूम ही में मुम्ताज़ होते हैं। रहा अमल। इसमें बज़ाहिर कभी उम्मती नबी से बढ़ जाते हैं।" जिससे मालूम हुआ कि अमल में उम्मती नबी से बढ़ सकते हैं। मगर इल्म में नबी का ज़्यादा होना ज़रूरी है, और हुज़ूर अलैहिस्सलाम के उम्मती तो मलाइका भी हैं। **लेयकूना लिल-आलमीना नज़ीरा।** तो इल्म में हुज़ूर अलैहिस्सलाम का मलाइका से ज़्यादा होना ज़रूरी है वरना फिर हुज़ूर अलैहिस्सलाम किस वस्फ़ में उम्मत से अफ़ज़ल होंगे, और मलाइका हाज़िरीने लौहे महफ़ूज़ को तो **मा काना वमा यकूना** का इल्म है

लिहाज़ा ज़रूरी है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इससे भी ज़्यादा इल्म हो।

(3) चन्द साल कामिल उस्ताज़ की सोहबत में रह कर इंसान आलिम बन जाता है हुज़ूर अलैहिस्सलाम क़ब्ल विलादते पाक करोड़ों बरस रब तआला की बारगाहे ख़ास में हाज़िर रहे तो हुज़ूर क्यों न कामिल आलिम हों। रूहुल-बयान ने **लक़द जाअकुम** की तफ़्सीर में फरमाया कि हज़रत जिब्रील ने बारगाहे नबुव्वत में अर्ज़ किया कि एक तारा सत्तर हज़ार साल बाद चमकता है और मैंने उसे बहत्तर हज़ार दफ़ा चमकते देखा। फरमाया वह तारा हम ही थे। हिसाब लगा लो कितने करोड़ बरस दरबारे ख़ास में हाज़िरी रही।

(4) अगर शागिर्द के इल्म में कुछ कमी रहे तो उसकी सिर्फ़ चार ही वजह हो सकती हैं। अव्वलन तो यह कि शागिर्द ना अहल था उस्ताज़ से पूरा फ़ैज़ ले न सका। दोम यह कि उस्ताज़ कामिल न था कि मुकम्मल सिखा न सका। सोम यह कि उस्ताज़ या तो बख़ील था कि पूरा-पूरा इल्म उस शागिर्द को न दिया, या उससे ज़्यादा कोई और प्यारा शागिर्द था कि उसको सिखाना चाहता है। चौथे यह कि जो किताब पढ़ाई वह नाक़िस थी। इन चार वजहों के सिवा और कोई वजह हो ही नहीं सकती। यहाँ सिखाने वाला परवरदिगार, सीखने वाला महबूब अलैहिस्सलाम। क्या सिखाया कुरआन और अपने ख़ास उलूम। बताओ या रब तआला कामिल उस्ताज़ नहीं या रसूल अलैहिस्सलाम लाइक़ शागिर्द नहीं? या हुज़ूर अलैहिस्सलाम से ज़्यादा कोई और प्यारा है? या कि कुरआन मुकम्मल नहीं? जब इनमें से कोई बात नहीं। रब तआला कामिल अता फरमाने वाला, महबूब अलैहिस्सलाम कामिल लेने वाले, कुरआने करीम कामिल किताब **अर्रहमानु अल्लमल-कुरआन** वही सबसे ज़्यादा मक़्बूल बारगाह। फिर इल्म क्यों नाक़िस (कमज़ोर) हो।

(5) रब तआला ने हर बात लौहे महफ़ूज़ में क्यों लिखी? लिखना या तो अपनी याद दाश्त के लिए होता है कि भूल न जाएं, या दूसरों को बताने के लिए। रब तआला तो भूल से पाक, लिहाज़ा उसने दूसरों ही के लिए लिखा और हुज़ूर अलैहिस्सलाम तो दूसरों से ज़्यादा महबूब, लिहाज़ा वह तहरीर हुज़ूर अलैहिस्सलाम के लिए है।

(6) ग़ैबों की ग़ैब रब तआला की ज़ात है, कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने दीदार की तमन्ना फरमाई तो फरमा दिया गया **लन तरानी** तुम हमको देख न सकोगे। जब महबूब अलैहिस्सलाम ने रब ही को मेअराज में अपनी उन ज़ाहिरी मुबारक आंखों से देख लिया। तो आलम क्या चीज़ है जो आपसे छुप सके।

और कोई ग़ैब क्या तुमसे निहां हो भला
जब न ख़ुदा ही छुपा तुम पे करोड़ों दरूद

दीदारे इलाही की बहस हमारी किताब शान हबीबुर्रहमान में देखो।

मिर्क़ात शरह मिश्कात **बाबुल-ईमान बिल-क़द्र फ़स्ले अव्वल** के आख़िर में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने दुनिया में रब को देखा क्योंकि खुद नूर हो गए थे।

(7) शैतान दुनिया का गुमराह करने वाला है और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दुनिया के हादी। गोया शैतान वबाई बीमारी है और नबी अलैहिस्सलाम तबीबे मुतलक़। रब तआला ने शैतान को गुमराह करने के लिए इतना ज़्यादा इल्म दिया कि दुनिया का कोई शख़्स उसकी निगाह से ग़ायब नहीं, फिर उसे यह भी ख़बर है कि कौन गुमराह हो सकता है कौन नहीं और जो गुमराह हो सकता है वह किस हीला से। ऐसे ही वह हर दीन के हर मसला से ख़बरदार है इसलिए हर नेकी से रोकता है हर बुराई कराता है उसने रब तआला से अर्ज़ किया था। **लउग़वियन्नहुम अज्मईना इल्ला इबादका मिन्हुमुल-मुख़्लसीन।** जब गुमराह करने वाले को इतना इल्म दिया गया तो ज़रूरी है कि दुनिया के तबीब मुतलक़ सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हिदायत देने के लिए उससे कहीं ज़्यादा इल्म वाले हैं, कि आप हर शख़्स को उसकी बीमारी को उसकी इस्तेदाद को उसके इलाज को जानें, वरना हिदायत मुकम्मल न होगी। और रब तआला पर एतराज़ पड़ेगा कि उसने गुमराह करने वाले को क़वी (मज़बूत) किया और हादी को कमज़ोर रखा। लिहाज़ा गुमराही तो कामिल रही और हिदायत नाक़िस।

(8) रब तआला ने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को नबी के ख़िताब से पुकारा **या ऐयुहन्नबीयु** और नबी के माना हैं ख़बर देने वाला। अगर इस ख़बर से सिर्फ़ दीन की ख़बर मुराद हो तो हर मौलवी नबी है। और अगर दुनिया के वाक़ेआत मुराद हों तो हर अख़्बार, रेडियो, ख़त, तार भेजने वाला नबी हो जाए। मालूम हुआ कि नबी में ग़ैबी ख़बरें मोतबर हैं यानी फ़रिश्तों को अर्श की ख़बर देने वाला जहाँ तार, अख़्बार काम न आ सकें वहाँ नबी का इल्म होता है। मालूम हुआ कि इल्मे ग़ैब नबी के माना में दाख़िल है।

यहाँ तक तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्मे ग़ैब की बहस थी। अब यह भी जानना चाहिए कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के सदक़े से औलियाए किराम को भी इल्मे ग़ैब दिया जाता है। मगर उनका इल्म नबी अलैहिस्सलाम के वास्ते से होता है और उनके इल्म के समुन्द्र का क़तरा।

मिर्क़ात शरह मिश्कात में किताब अक़ाइदे तालीफ शैख़ अबू अब्दुल्लाह शीराज़ी से नक़्ल फरमाते हैं। बन्दा हालात में मुन्तक़िल होता रहता है यहाँ तक कि रूहानियत की सिफ़त पा लेता है पस ग़ैब जानता है।

इसी मिर्क़ात में किताबे अक़ाइद से नक़्ल फरमाया।

कामिल बन्दा चीज़ों की हक़ीक़तों पर मुत्तला (बाख़बर) हो जाता है और उस पर ग़ैबुल-ग़ैब खुल जाते हैं।

मिर्क़ात जिल्द दौम सफ़ः 6 बाबुस्सलाते अलन्नबी व फ़ज़्लेहा में फ़रमाते हैं।

तरजमा : पाक व साफ़ नफ़्स जब कि बदनी इलाक़ों से खाली हो जाते हैं तो तरक़्क़ी करके बज़्म बाला से मिल जाते हैं और उन पर कोई पर्दा बाक़ी नहीं रहता। पस वह तमाम चीज़ों को मिस्ल महसूस व हाज़िर के देखते हैं। ख़्वाह तू अपने आप या फ़रिश्ता के इल्हाम से।

शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब तफ़्सीर अज़ीज़ी सूरः जिन्न में फ़रमाते हैं "लौहे महफ़ूज़ की ख़बर रखना और उसकी तहरीर देखना बहुत से औलिया अल्लाह से भी बतरीक़ तवातुर मन्क़ूल है।

इमाम इब्ने हजर मक्की किताबुल-एलाम में और अल्लामा शामी सलुल-हिसाम में फ़रमाते हैं।

तरजमा : जाइज़ है कि ख़ास-ख़ास हज़रात किसी मामला या फ़ैसले में ग़ैब जान लें जैसा कि बहुत से औलिया अल्लाह से वाक़े हुआ। और यह मश्हूर भी हो गया।

शाह वलीयुल्लाह साहब अल्ताफ़ुल-क़ुदस में फ़रमाते हैं। "आरिफ़ का नफ़्स बिल्कुल जिस्म बन जाता है। और आरिफ़ की ज़ात बजाए रूह के हो जाती है। वह तमाम आलम को इल्मे हुज़ूरी से देखता है।

ज़रक़ानी शरह मवाहिब जिल्द 7 सफ़ः 228 में फ़रमाते हैं।

तरजमा : लताइफ़ुल-मिनन में फ़रमाया कि कामिल बन्दे का अल्लाह के ग़ैबों में से किसी ग़ैब पर मुत्तला हो जाना अजीब नहीं। इस हदीस की वजह से कि मोमिन की दानाई से डरो, क्योंकि वह अल्लाह के नूर से देखता है, और यही इस हदीस के मानी हैं, कि रब फ़रमाता है कि मैं उसकी आँख हो जाता हूँ जिससे वह देखता है, पस उसका देखना हक़ की तरफ़ से होता है, पस उसका ग़ैब पर मुत्तला होना कुछ अजीब बात नहीं।

इमाम शेरानी यवाक़ियत व जवाहिर में फ़रमाते हैं —

लिल-मुज्तहेदीनल-क़दमु फ़ी उलूमिल-ग़ैबि। ग़ैबी उलूम में मुज्तहेदीन का क़दम मज़बूत है।

हुज़ूर ग़ौस पाक फ़रमाते हैं।

हमने अल्लाह के सारे शहरों को इस तरह देख लिया जैसे चन्द राई के दाने मिले हुए हैं।

शैख़ अब्दुल-हक़ मुहद्दिस देहलवी जुब्दतुल-असरार में हुज़ूर ग़ौसे पाक का इरशाद नक़्ल फ़रमाते हैं।

तरजमा : ऐ बहादुरो ऐ फ़र्ज़न्दो! आओ और इस दरिया से कुछ ले लो जिसका किनारा ही नहीं। क़सम है अपने रब की कि तहक़ीक़ नेक बख़्त और बदबख़्त लोग मुझ पर पेश किए जाते हैं और हमारा गोश-ए-चश्म लौहे महफ़ूज़

में रहता है और मैं अल्लाह के इल्मों के समुन्द्रों में गोते लगा रहा हूँ।

हज़रत अज़ीज़ान अलैहिर्रहमा ने फरमाया है कि इस गरोहे औलिया की नज़र में ज़मीन दस्तरख़्वान की तरह है और हम कहते हैं कि नाखुन की तरह है कि कोई चीज़ उनकी नज़र से ग़ायब नहीं है।

इमाम शेअरानी किब्रियते अहमर में फ़रमाते हैं –

तरजमा : हमने अपने शैख़ सैयद अली ख़्वास रज़ि अल्लाहु अन्हु को फरमाते हुए सुना कि हमारे नज़्दीक उस वक़्त तक कोई मर्द कामिल नहीं होता जब तक कि अपने मुरीद की हरकाते नसबी को न जान ले। यौमे मीसाक़ से लेकर उसके जन्नत या दोज़ख़ में दाख़िल होने तक को।

शाह वलीयुल्लाह साहब फ़्यूज़ुल-हरमैन में फरमाते हैं। फिर वह मर्द आरिफ़ बारगाहे हक़ की तरफ जज़्ब हो जाते हैं पस वह अल्लाह के बन्दे होते हैं और उनको हर चीज़ ज़ाहिर हो जाती है।

मिश्कात जिल्द अव्वल **"किताबुद्दावात बाब ज़िक्रुल्लाह वत्तक़र्रुब"** सफ़ः 197, में अबू हुरैरह से रिवायत है।

रब तआला फरमाता है पस जब कि मैं उस बन्दे से मुहब्बत करता हूँ तो उसके कान बन जाता हूँ जिससे वह सुनता है और आंख बन जाता हूँ जिससे वह देखता है और उसका हाथ जिससे वह पकड़ता है और उसका पाँव जिससे वह चलता है।

यह भी ख़्याल रहे कि हज़रत ख़िज़्र अलैहिस्सलाम व इल्यास अलैहिस्सलाम इस वक़्त ज़मीन पर ज़िन्दा हैं और यह हज़रात अब उम्मते मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम के वली हैं और हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम जब तशरीफ़ लाएंगे वह भी इस उम्मत के वली की हैसियत से होंगे, उनके उलूम को हम पहले ज़िक्र कर चुके हैं उनके उलूम भी अब हुज़ूर अलैहिस्सलाम की उम्मत के औलिया के उलूम हैं।

दूसरा बाब

इल्मे ग़ैब पर ऐतराज़ के बयान में

इस बाब में चार फ़स्लें हैं। पहली फ़स्ल उन आयाते क़ुरआनिया के बयान में जो मुख़ालेफ़ीन पेश करते हैं। दूसरी फ़स्ल अहादीस के बयान में। तीसरी फ़स्ल अक़्वाले उलमा व फ़ुक़हा के बयान में। चौथी फ़स्ल अक़्ली ऐतराज़ात के ब्यान में।

इस बाब के शुरू से पहले बतौर मुक़द्दमा चन्द ज़रूरी बहसें क़ाबिले ग़ौर हैं।

(1) जिन आयात व अहादीस या अक़्वाले फ़ुक़हा में हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्मे ग़ैब की नफ़ी है उनमें या तो ज़ाती इल्म मुराद है या तमामी मालूमात यानी रब तआला के मालूमात की बराबर अताई इल्म की तो नफ़ी नहीं वरना

फिर उन आयात व अहादीस और इन आयात व अहादीस में जो हम इसबात में बयान कर चुके हैं मुताबेक़त क्यों कर होगी? अल्लाम इब्ने हजर फतावा हदीसीया में इस क़िस्म की तमाम दलाइल के जवाब में फरमाते हैं।

इनके मानी यह हैं कि मुस्तक़िल तौर पर (ज़ाती) और एहाता के तौर पर कोई नहीं जानता सिवाए अल्लाह तआला के लेकिन मोजज़ात और करामात पस वह खुदा के बताने से होते हैं।

मुख़ालेफ़ीन कहते हैं कि जिन दलाइल में इल्मे ग़ैब का सुबूत है इससे मुराद मसाइले दीनीया का इल्म है और जिनमें नफ़ी है इन से मुराद बाक़ी दुनियावी चीज़ों के उलूम हैं। मगर यह तौजीह उन आयाते कुरआनिया और अहादीसे सहीहा व अक़्वाल उलमा-ए-उम्मत के ख़िलाफ़ है जो हमने सुबूत में पेश की हैं।

हज़रत आदम अलैहिस्सलाम का इल्म इसी तरह लौहे महफ़ूज़ का इल्म सब ही चीज़ों को शामिल है, फिर हुज़ूर अलैहिस्सलाम का फरमाना कि तमाम आलम हमारे सामने मिस्ल हाथ के है, लेहाज़ा यह तौजीह (खुलासा) बिल्कुल बातिल (ग़लत) है।

(2) मुख़ालेफ़ीन की पेश कर्दा वह दलाइल कि रब फरमाता है कि ग़ैब अल्लाह के सिवा कोई नहीं जानता, या हुज़ूर फरमाते हैं कि मैं ग़ैब नहीं जानता या फुक़हा फरमाते हैं कि जो ग़ैरे खुदा के लिए ग़ैब माने वह काफिर है। यह खुद मुख़ालेफीन के भी ख़िलाफ़ हैं। क्योंकि कुछ उलूमे ग़ैबिया के तो वह भी क़ाइल हैं। सिर्फ़ **जमीअ माकाना वमा यकून** में इख़्तिलाफ़ है। इन आयात व अक़्वाले फुक़हा से तो वह भी नहीं बच सकते क्योंकि अगर एक बात का भी इल्म माना, इन दलाइल के ख़िलाफ़ हुआ। सालेबा क़ुल्लीया की नक़ीज़े मुजिबे जुज़्ईया होती है।

(3) मुख़ालेफ़ीन कहते हैं कि इन दलाइल में कुल इल्मे ग़ैब की नफी है न कि कुछ की तो झगड़ा ही ख़त्म हो गया क्योंकि **मा काना वमा यकून** इल्मे इलाही के समुन्द्रों का क़तरा है, हम भी हुज़ूर अलैहिस्सलाम के लिए उलूमे इलाहिया के मुक़ाबला में बाज़ ही इल्म के क़ायल हैं।

(4) मुख़ालेफ़ीन कहते हैं कि इल्मे ग़ैब खुदा की सिफ़त है लिहाज़ा ग़ैर ख़ुदा के लिए मानना कुफ़्र है। इस कुफ़्र में वह भी दाख़िल हो गए, क्योंकि सिफ़ते इलाहिया में अगर एक में शिर्कत मानी तो कुफ़्र हुआ सब में मानी तो कुफ़्र हुआ। जो शख़्स आलम की एक चीज़ का ख़ालिक़ किसी बन्दे को माने वह भी बेदीन है। तमाम आलम का ख़ालिक़ किसी को माने तो भी काफिर और वह भी बाज़ इल्मे ग़ैब तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम के लिए साबित करते हैं। फिर कुफ़्र से कैसे बचे हाँ यह कहो कि ज़ाती इल्म खुदा की सिफ़त, अताई इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलाम की सिफ़त, लिहाज़ा शिर्क न हुआ। यही हम कहते हैं।

पहली फ़स्ल
आयाते कुरआनिया के बयान में

(1) **कुल ला अकूलु लकुम इन्दी ख़ज़ाइनुल्लाहे वला आलमुल-ग़ैबे।**

तरजमा : तुम फरमा दो कि मैं तुमसे नहीं कहता कि मेरे पास अल्लाह के ख़ज़ाने हैं और न यह कहूं कि मैं आप ग़ैब जान लेता हूँ।

इस आयत की चार वजहें मुफ़स्सेरीन ने की हैं। **अव्वल :** यह कि इल्मे ग़ैब ज़ाती की नफ़ी है। **दोम :** यह कि तमाम इल्म की नफ़ी है। **सोम :** यह कि कलाम तवाज़ु और इंकिसार के तौर पर बयान फरमा दिया गया है। **चहारुम :** यह कि आयत के मानी हैं कि मैं दावा नहीं करता कि मैं ग़ैब जानता हूँ यानी दावा इल्मे ग़ैब की नफी है न कि इल्मे ग़ैब की, मुलाहिज़ा हों तफ़ासीर।

तफ़्सीरे नीशापुरी में इस आयत के मातहत है।

इस आयत में यह एहतमाल भी है कि **ला आलमु** का अतफ़ **ला अकूला** पर हो यानी ऐ महबूब फरमा दो कि मैं ग़ैब नहीं जानता। तो इसमें दलालत उस पर होगी कि ग़ैब बिल-इस्तिक़्लाल यानी ज़ाती सिवाए ख़ुदा के कोई नहीं जानता।

तफ़्सीरे बैज़ावी यही आयत **ला आलमुल-ग़ैबा मालम यूहा इलैया औ लम यंतसिब अलैहि दलीलुन।** मैं ग़ैब नहीं जानता जब तक उसकी मुझ पर वही न की जाए या कोई दलील उस पर क़ायम न हो।

या इससे मुराद तमाम इल्म की नफ़ी है।

तफ़्सीरे कबीर में इसी आयत के मातहत है।

यह फरमान कि मैं ग़ैब नहीं जानता हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इस इक़रार पर दलालत करता है कि आप सारे मालूमात नहीं जानते।

या यह कलाम बतौर तवाज़ु व इंकिसार फरमाया गया।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने इन चीज़ों की अपनी ज़ाते करीमा से नफ़ी फरमाई रब के लिए आजिज़ी करते हुए और अपनी बन्दगी का इक़रार फरमाते हुए यानी मैं इसमें से कुछ नहीं कहता और किसी चीज़ का दावा नहीं करता।

तफ़्सीरे अराइसुल-ब्यान में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने इंकिसार फरमाया कि अपनी ज़ात को इंसानियत की जगह में रखा वरना आप अर्श से फ़र्श तक सारी मख़्लूक़ में अशरफ़ हैं और मलाइका और रूहानीयीन से ज़्यादा सुथरे हैं। हक़ तआला की शाने जब्बारी के सामने आजिज़ी के तौर पर उसकी सतवत के सामने पस्ती के इज़हार के तरीक़ा पर यह फरमाया।

यह दावा इल्मे ग़ैब की नफ़ी है कि मैं इल्मे ग़ैब का दावा नहीं करता।

तफ़्सीरे नीशापुरी में है।

तरजमा : यानी मैं तमाम मक़्दूरात पर क़ुदरत रखने और तमाम मालूमात के जानने का दावा नहीं करता।

तफ़्सीरे कबीर यही आयत –

तरजमा : यानी मैं अल्लाह के इल्म से मुत्तसिफ़ (मिले) होने का दावा नहीं करता और इन दोनों बातों के मज्मूआ का मतलब यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम खुदा होने का दावा नहीं करते।

रूहुल-बयान यही आयत –

और **ला** ज़ाइदा है नफ़ी का याद दिलाने वाला यानी मैं यह दावा नहीं करता कि खुदा के अफ़आल में ग़ैब जानता हूँ। इस बिना पर कि ख़ज़ाइनुल्लाह मेरे पास तो हैं मगर मैं यह कहता नहीं तो जो शख़्स यह कहे कि नबी अल्लाह ग़ैब नहीं जानते थे उसने ग़लती की इस आयत में जिसमें यह मुसीब था।

तफ़्सीरे मदारिक यही आयत –

इन्दी ख़ज़ाइनतुल्लाह के महल पर अतफ़ की वजह से क्योंकि यह भी कही हुई बात में से है गोया आपने यूं फरमाया कि मैं तुम से न यह कहता हूँ और न यह।

नुक्ता : इस आयत में **ला अक़ूलु** दो जगह है, पहले **ला अक़ूलु** के बाद दो चीज़ों का ज़िक्र है कि मैं नहीं कहता कि मेरे पास अल्लाह के ख़ज़ाने हैं और न यह कहता हूँ कि ग़ैब जानता हूँ। दूसरे **ला अक़ूलु** के बाद सिर्फ़ एक चीज़ का जिक्र है मैं नहीं कहता कि मैं फ़रिश्ता हूँ। इसलिए कि पहले दो में तो दावे की नफ़ी है और मुद्दई का सुबूत और दूसरे क़ौल में दावा और मुद्दई दोनों की नफ़ी है यानी मेरे पास अल्लाह के ख़ज़ाने भी हैं और मैं ग़ैब भी जानता हूँ मगर उनका दावा नहीं करता।

हदीसे पाक में है। **ऊतीतु मफ़ातीहा ख़ज़ाएनिल-अर्ज़े।** (मिश्कात बाब फ़ज़ाइले सैयदुल-मुर्सलीन) यानी मुझको ज़मीन के ख़ज़ानों की कुंजियाँ दे दी गईं और इल्मे ग़ैब की, अहादीस हम पेश कर चुके हैं। और न मैं वाक़े में फ़रिश्ता हूँ और न उसका दावा करता हूँ। अगर यह नुक्ता नहीं तो एक ही जगह **ला अक़ूलु** काफ़ी था। दो जगह क्यों लाया गया। अगर हमारी बयान की हुई तौजीहें न की जाएं तो आयत मुख़ालेफ़ीन के भी ख़िलाफ़ है क्योंकि कुछ इल्मे ग़ैब तो वह भी मानते हैं। और यह बिल्कुल नफ़ी कर रही है। और यहाँ **लकुम** में कुफ़्फ़ार से ख़िताब है यानी ऐ काफ़िरो मैं तुमसे नहीं कहता कि मेरे पास ख़ज़ाने हैं तुम चोर हो। चोरों को ख़ज़ाने नहीं बताए जाते, तुम शैतानों की तरह असरार की चोरी न कर लो। रब तआला ने भी शैतानों को आसमानों पर जाने से इसीलिए रोका कि वह चोर हैं। यह तो सिदीक़ से कहा जाएगा कि मुझे ख़ज़ाइने इलाहिया की कुंजियाँ सुपुर्द हुई

और यहाँ **इन्दी** फरमा कर बताया कि ख़ज़ाना मेरे पास नहीं मेरी मिल्क में हैं क्योंकि ख़ज़ाना ख़जांची के पास और मालिक की मिल्क में होता है। मैं ख़ज़ांची नहीं क्या न देखा कि उनके इशारे पर बादल बरसा। उनकी उंगलियों से चश्मे जारी हुए।

(2) **व लौ कुन्तु आलमुल-ग़ैबा लस्तक्सरतु मिनल-ख़ैरे।** और अगर मैं ग़ैब जान लिया करता तो यूं होता कि मैंने बहुत भलाई जमा कर ली।

इस आयत के भी मुफ़स्सेरीन ने तीन मतलब बताए हैं एक यह कि हुजूर अलैहिस्सलाम का कलाम बतौरे इंकिसार के है। दूसरे यह कि इसमें तमाम मालूमाते इलाहिया जानने की नफ़ी करना असल है। तीसरे यह कि ज़ाती की नफ़ी है।

नसीमुर्रियाज़ में इसी आयत के मातहत है।

इल्मे ग़ैब का मानना इस आयत के ख़िलाफ़ नहीं कि **वलौ कुन्ता आलमुल-ग़ैबे** क्योंकि नफ़ी, इल्म बग़ैर वासता की है लेकिन हुज़ूर अलैहिस्सलाम का ग़ैब पर बाख़बर होना अल्लाह के बताने से यह अम्र वाक़े है। रब तआला के इस फरमान की वजह से कि **फ़ला युज़्हेरू अला ग़ैबेही अल-आयत** या कुल मालूमाते इलाहिया जानने की नफी है।

शरह मवाक़िफ़ में मीर सैयद शरीफ़ फ़रमाते हैं।

तमाम ग़ैबों पर मुत्तला होना नबी के लिए ज़रूरी नहीं, इसी लिए हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया **वलौ कुन्तु आलमुल-ग़ैबा** तमाम ग़ैब ग़ैर मुतनाही हैं।

या यह कलामे इंकिसार के तौर पर है।

सावी हाशिया जलालैन में है यही आयत –

तरजमा : अगर तुम कहो कि यह आयत गुज़श्ता कलाम के ख़िलाफ़ है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को तमाम दीनी व दुनियावी ग़ैबों पर मुत्तला कर दिया गया तो जवाब यह है कि यह कलाम **ला आलमुल-ग़ैबा** बतौर इंकिसार फरमाया है।

तफ़्सीरे खाज़िन में जुमल हाशिया जलालैन से आयत के मातहत नक़्ल किया।

तरजमा : पस अगर तुम कहो कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने बहुत से ग़ैबों की ख़बर दी है और इसके मुतअल्लिक़ बहुत सी अहादीसे सहीहा वारिद हैं और इल्मे ग़ैब तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम का बड़ा मोजज़ा है तो इन बातों में और इस आयत में कि **लौ कुन्ता आलमुल-ग़ैबा** मुताबेक़त किस तरह होगी तो मैं कहूँगा कि यहाँ एहतमाल यह है कि यह कलाम इंकिसार के तरीक़ा पर फरमाया हो और इसके मानी यह हैं कि मैं ग़ैब नहीं जानता बग़ैर ख़ुदा के बताए और यह भी एहतमाल है कि यह कलाम ग़ैब पर बाख़बर होने से

पहले का हो। जब अल्लाह तआला ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को ग़ैब पर मुत्तला फ़रमा दिया तो ख़बरें दीं।

अल्लामा सुलेमान जमल ने फ़ुतूहाते इलाहिया हाशिया जलालैन जिल्द दोम सफ़: 258 में इसी की मिस्ल फ़रमाया।

यानी फ़रमा दो कि मैं ग़ैब नहीं जानता अलख़।

तरजमा : पस इस आयत में इस पर दलालत है कि ग़ैब बिल–इस्तिक़्लाल यानी ज़ाती ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता।

तफ़्सीरे सावी यही आयत –

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्मे ग़ैब जानना न जानने की तरह है क्योंकि आपको उस चीज़ के बदलने पर क़ुदरत नहीं जो अल्लाह तआला ने मुक़द्दर फ़रमा दीं। तो माना यह हुए कि अगर मुझको इल्मे हक़ीक़ी होता इस तरह कि मैं अपनी मुराद के वाक़े करने पर क़ादिर होता तो ख़ैर बहुत सी जमा कर लेता।

यह तौजीह निहायत ही नफ़ीस है क्योंकि आयत के मानी यह हैं कि अगर मैं ग़ैब जानता होता तो बहुत सी ख़ैर जमा कर लेता और मुझको तक्लीफ़ न पहुँचती, और सिर्फ़ किसी चीज़ का जानना ख़ैर जमा करने और मुसीबत से बचने के लिए काफ़ी नहीं। जब तक कि ख़ैर के हासिल करने और मुसीबत से बचने पर क़ुदरत न हो। मुझको इल्म है कि बुढ़ापा आएगा और इससे मुझको यह तकालीफ़ पहुँचेंगी मगर मुझे बुढ़ापे के दफ़ा करने पर क़ुदरत नहीं! मुझे आज ख़बर है कि ग़ल्ला चन्द रोज़ के बाद गिरां हो जाएगा मगर मेरे पास आज रुपया नहीं कि बहुत सा ग़ल्ला ख़रीद लूं ख़रीद नहीं सकता। मालूम हुआ कि ख़ैर हासिल करना, मुसीबत से बचना इल्म और क़ुदरत दोनों पर मौक़ूफ़ है। और यहाँ क़ुदरत का ज़िक्र नहीं। तो इल्मे ग़ैब से वह मुराद है जो क़ुदरत के साथ हो यानी इल्म ज़ाती जो लाज़िमे उलूहियत है जिसके साथ क़ुदरत लाज़िम है। वरना आयत के मानी नहीं दुरुस्त होते क्योंकि मुक़द्दम और ताली में लुज़ूम नहीं रहता और इसके बग़ैर क़यास दुरुस्त नहीं होता।

और देवबन्दी तो इस आयत के यह मानी करते हैं कि अगर मैं ग़ैब जानता तो बहुत ख़ैर जमा कर लेता और मुझे कोई मुसीबत न पहुँचती। मगर चूंकि न मेरे पास ख़ैर है और न मुसीबत से बचाओ लिहाज़ा ग़ैब नहीं जानता।

हम यह तरजमा कर सकते हैं कि ग़ौर कर लो अगर मेरे पास ख़ैर हो और मैं मुसीबत से बचूं तो समझ लो कि मुझे इल्मे ग़ैब भी है। मेरे पास बहुत ख़ैर तो है।

और मैं मुसीबत से भी महफ़ूज़। कि रब तआला ने फ़रमाया।

वल्लाहु या सिमुका मिन्ननास

तरजमा : लिहाज़ा मुझे इल्मे ग़ैब भी है यह आयत तो इल्मे ग़ैब के सुबूत में है न कि इंकार में।

रूहुल-बयान यही आयत –

तरजमा : कुछ मशाइख़ इस तरफ गए हैं कि नबी अलैहिस्सलाम क़यामत का वक़्त भी जानते थे अल्लाह के बताने से। और उनका यह कलाम इस आयत के हसर के ख़िलाफ़ नहीं जैसा कि छुपा नहीं।

(3) **व इन्दहू मफ़ातीहुल-ग़ैबे ला यअलमुहा इल्ला हुआ।** और उसी के पास हैं कुंजियाँ ग़ैब की उनको वही जानता है।

मुफ़स्सेरीन ने फरमाया है कि **मफ़ातीहुल-ग़ैबे** (ग़ैब की कुंजियों) से मुराद या तो ग़ैब के ख़ज़ाने हैं यानी सारे मालूमाते इलाहिया का जानना। या इससे मुराद है ग़ैब को हाज़िर करने यानी चीज़ों के पैदा करने पर क़ादिर होना। क्योंकि कुंजी का काम यही होता है कि इससे कुफ़्ल (ताला) खोला और अन्दर की चीज़ बाहर और बाहर की चीज़ अन्दर कर दी। इसी तरह हाज़िर को ग़ायब और ग़ायब को हाज़िर करना यानी पैदा करने और मौत देने की कुदरत परवरदिग़ार ही को है।

तफ़्सीरे कबीर में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : जबकि परवरदिगार तमाम मालूमात का जानने वाला है तो इस मतलब को इस इबारत से बयान किया और दूसरी सूरत पर मुराद इससे सारे मुम्किनात पर क़ादिर होना है।

तफ़्सीरे रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : इन चीज़ों के नक़्श बांधने का क़लम जो ऐसी क़ुंजी है जिससे इन चीज़ों के पैदाइश का दरवाज़ा खोला जाता है (इनकी मुनासिब सूरतों पर) वही मलकूत है पस हर चीज़ के मलकूत के क़लम से हर चीज़ की हस्ती होती है और मलकूत का क़लम अल्लाह के हाथ में है इसलिए कि ग़ैब से मुराद पैदा करने का जानना है।

तफ़्सीर ख़ाज़िन में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : अल्लाह तआला जब तमाम मालूमात का जानने वाला है तो इस माना को इस इबारत से बयान किया और दूसरी तफ़्सीर पर इसके माना यह होंगे कि अल्लाह के नज़्दीक ग़ैब के ख़ज़ाने हैं और इससे मुराद है हर मुम्किन चीज़ पर कुदरते कामिला।

या इससे मुराद है कि ग़ैब की कुंजियाँ बग़ैर तालीमे इलाही कोई नहीं जानता।

तफ़्सीर **अराइसुल-बयान** में है।

तरजमा : हरीरी ने फरमाया कि इन कुंजियों को सिवाए अल्लाह तआला के और सिवाए उन महबूबों के जिनको अल्लाह ख़बर दार करे कोई नहीं

जानता यानी उनको अगले पिछले अल्लाह के ज़ाहिर फरमाने से पहले नहीं जानते।

तफ़सीर इनायतुल-क़ाज़ी यही आयत –

तरजमा : इन ग़ैब की कुंजियों के ख़ुदा तआला के साथ ख़ास होने की वजह यह है कि जैसी वह हैं इस तरह इब्तिदाअन ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता।

इस आयत के अगर वह मतलब न बयान किए जाएं जो हमने बताए तो यह मुख़ालेफ़ीन के भी ख़िलाफ़ हैं क्योंकि कुछ इल्मे ग़ैब वह भी मानते हैं और इसमें इल्मे ग़ैब की बिल्कुल नफ़ी है।

नुक्ता : कुछ साहिबों ने मुझ से फरमाया कि आला हज़रत कुद्देस सिर्रहू ने इस जगह एक नुक्ता लिखा है वह यह कि इस आयत में है **इन्दहू मफ़ातीहुल-ग़ैबे** दूसरी में है **लहू मक़ालीदुस्समावाते वल-अर्ज़े।** मफ़ातेह और मक़ालीद दोनों के मानी हैं कुंजियां। और अगर मफ़ातेह का अव्वल व आख़िर हरफ यानी मीम ह. लौ और मक़ालीद का अव्वल व आख़िर हरफ यानी मीम, द, लौ, तो बनता है मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) जिससे समझ में आता है कि ज़ाते रसूलुल्लाह ही ज़ुहूरे आलम की कुंजी है। **ला यअलमुहा इल्ला हुवा** में इस तरफ इशारा है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम जैसे हैं वैसा कोई नहीं जानता। हक़ीक़ते मुहम्मदिया को रब ही जाने **मफ़ातीहे** जमा इसलिए बोला कि आपकी हर अदा रहमते इलाही की कुंजी है। आपका नूर आलम की कुंजी कुल्लुल ख़लके मिन नूरी क़्यामत में आपका सज्दा, शफ़ाअत की कुंजी, जन्नत में आपका नाम हर नेअमत की कुंजी और जन्नत में आपका जाना सबके लिए जन्नत के खुलने की कुंजी। देखो हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान।

नुक्ता : इस आयत से यह तो मालूम हुआ कि रब तआला के पास ग़ैब की कुंजियाँ हैं। अब यह सवाल है कि इस कुंजी से किसी के लिए दरवाज़-ए-ग़ैब ख़ोला भी गया या नहीं? या किसी को कोई कुंजी दी गई या नहीं? इसका जवाब कुरआन व हदीस से पूछो, कुरआन फरमाता है। **इन्ना फ़तहना लका फत्हन मुबीना।** हमने आपके लिए ज़ाहिर तौर पर खोल दिया क्या खोल दिया? इसकी नफ़ीस तौजीहें हमारी किताब **शाने हबीबुर्रहमान बेआयातिल-कुरआन** में देखो।

कुफ़्ल और कुंजी में वही चीज़ रखी जाती है जो खोल कर निकालनी हो और जिसे खोल कर निकालना न हो वह ज़मीन में दफन कर दी जाती है पता लगा कि ग़ैब देना था इसलिए कुंजी में रखा।

हदीस में है **ऊतीतु मफ़ातीहा ख़ज़ाइनिल-अर्ज़े** मुझको ज़मीन के ख़ज़ानों की कुंजियाँ दे दी गईं इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम

क़ो कुंजी भी दी गई और आप के लिए फ़तहे बाब भी हुआ।

(4) **कुल ला यअलमु मन फ़िस्समावाते वल-अर्ज़िल-ग़ैबा इल्लल्लाह।** तुम फरमाओ खुद ग़ैब नहीं जानते जो कुछ आसमानों और ज़मीन में हैं मगर अल्लाह।

इस आयत के भी मुफ़स्सेरीन ने दो मतलब बयान फरमाए। ग़ैब ज़ाती कोई नहीं जानता। कुल ग़ैब कोई नहीं जानता।

तफ़्सीरे अनमूज़ज जलील में इसी आयत के मातहत है।

इस आयत के मानी यह हैं कि बग़ैर दलील या बग़ैर बताए या सारे ग़ैब ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता।

तफ़्सीर मदारिक यही आयत –

ग़ैब वह है जिस पर कोई दलील न हो और किसी मख़्लूक़ को इस पर मुत्तला (बाख़बर) न किया गया हो।

मदारिक की इस तौजीह से मालूम हुआ कि इनकी इस्तेलाह में जो इल्म अताई हो वह ग़ैब ही नहीं कहा जाता। ग़ैब सिर्फ़ ज़ाती को क़हते हैं। अब कोई अश्काल (परेशानी) ही नहीं रहा। जिन आयात में ग़ैब की नफ़ी है वह इल्मे जाती की है।

इसी आयत के कुछ आगे है।

जिससे मालूम हुआ कि हर ग़ैब लौहे महफ़ूज़ या कुरआन में मौजूद है।

इमाम इब्ने हजर मक्की फ़तावा–ए–हदीसिया में फ़रमाते हैं।

हमने इस आयत के बारे में जो कुछ कहा उसकी इमाम नुवी ने फ़तावा में तसरीह (खुलासा) की है। उन्होंने कहा कि ग़ैब मुस्तक़िल तौर पर और सारे मालूमाते इलाहिया को कोई नहीं जानता।

शरह **शिफ़ा ख़फ़फ़ाजी** में है।

तरजमा : यह कलाम इन आयात के ख़िलाफ़ नहीं जिनसे मालूम होता है कि ग़ैब ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता क्योंकि नफ़ी बेवास्ता इल्म की है लेकिन अल्लाह की तालीम से जानना यह साबित है।

अगर इस आयत के यह मतलब न माने जाएं तो मुख़ालेफ़ीन के भी ख़िलाफ़ है क्योंकि वह भी बाज़ ग़ैबों का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलाम को मानते हैं और इसमें बिल्कुल की नफी है और उन्होंने शैतान व मलिकुल-मौत को इल्मे ग़ैब माना है। देखो बराहीने क़ातेआ सफ: **50**। फिर इस आयत का क्या मतलब बताएंगे। कुरआने करीम में है। **इनिल-हुक्मे इल्लल्लाह।** हुक्मे ख़ुदा के सिवा नहीं।

ख़ुदा की ही वह तमाम चीज़ें हैं जो आसमान व ज़मीन में हैं। **व कफ़ा बिल्लाहे शहीदा** अल्लाह काफी गवाह है **व कफ़ा बिल्लाहे वकीला।** अल्लाह काफी वकील है। **व कफ़ा बिल्लाहे हसीबा** अल्लाह काफी हिसाब

लेने वाला है।

इन आयात से मालूम हुआ कि हुकमत, मिल्कियत, गवाही, वकालत, हिसाब लेना, सब अल्लाह तआला के साथ ख़ास है। अब बादशाहे इस्लाम को हाकिम, हर शख़्स को अपनी चीज़ों का मालिक, मुशरेकीन को वकील, महासिब और आम लोगों को मुक़द्दमात का गवाह माना जाता है यह क्यों? सिर्फ़ इसलिए कि इन आयात में हुकूमत मिल्कियत वग़ैरह से हक़ीक़ी और ज़ाती मुराद है और दूसरों के लिए यह औसाफ़ ब अताए इलाही माने गए हैं। इसी तरह आयाते ग़ैब में भी तौजीह करना लाज़िम है कि हक़ीक़ी की ग़ैर से नफ़ी (मना) है और अताई का सुबूत।

(5) और हमने इनको शेअर कहना ना सिखाया और न वह उनकी शान के लाइक़ है वह तो नहीं, मगर नसीहत और रौशन क़ुरआन।

मुफ़स्सेरीन ने इस आयत के तीन मतलब बताए हैं अव्वलन यह कि इल्म के चन्द माना हैं। जानना, मलका, (मश्क़ व तजरबा वग़ैरह) इस जगह इल्म के दूसरे माना मुराद हैं। यानी हमने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को शेअर गोई का मलका न दिया। न यह कि उनको अच्छा बुरा सही ग़लत शेअर पहचानने का शुऊर न दिया। **दूसरे** यह कि शेअर के दो माना हैं। एक तो वज़न व क़ाफ़िया वाला कलाम (ग़ज़ल) दूसरे झूठी और वहमी व ख़्याली बातें चाहे नज़्म हों या नसर। इस आयत में यह दूसरे माना ही मुराद हैं। यानी हमने उनको झूठी और वहमी बातें न सिखाईं वह जो कुछ फ़रमाते हैं हक़ है। **तीसरे** यह कि शेअर से मुराद इस जगह इजमाली कलाम है यानी हमने उनको हर चीज़ की तफ़्सील बताई है न कि मुअम्मे और इजमाली बातें **व तफ़्सीलन लेकुल्ले शैइन** इल्म बामाना मलका। क़ुरआन करीम फ़रमाता है। **व अल्लमनाहु सनअता लबूसिन लकुम**। और हमने उनको तुम्हारा एक पहनावा बनाना सिखाया।

दैलमी से हज़रत जाबिर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने रिवायत किया। **अल्लेमू बनीयकुमुर्रमी** यानी अपनी औलाद को तीर अंदाज़ी सिखाओ।

रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : ज़्यादा सही यह है कि आप शेअर बख़ूबी कहते न थे लेकिन अच्छे और रद्दी शेअर में फ़र्क़ फ़रमा लेते थे।

रूहुल-बयान यही मक़ाम **अन्नल-मुहर्रमा अलैहे इन्नमा हुवा इंशाअशेअरू**। आपके लिए शेअर बनाना मना था।

शेअर के मानी हैं झूठा कलाम। कुफ़्फ़ारे मक्का कहा करते थे कि क़ुरआन तो शेअर है और हुज़ूर अलैहिस्सलाम शायर हैं **बल हुवा शाइरुन** इस शेअर से उनकी मुराद थी झूठा कलाम। तो उनके इस बक्वास की तरदीद इसी आयत ने कर दी। क्योंकि फ़रमाया गया है। **इन हुवा इल्ला**

ज़िक्रुन व कुरआनुम मुबीन। वह तो नहीं मगर नसीहत और रौशन कुरआन यहाँ अगर शेअर से मुराद मंज़ूम (नज़्म वाला) कलाम हो तो इस इबारत से आयत का क्या तअल्लुक़ होगा?

मदारिक यही आयत –

तरजमा : यानी हमने नबी अलैहिस्सलाम को शेअर कहना न सिखाया हमने उनको कुरआन की तालीम से शेअर न सिखाया। मतलब यह है कि कुरआने करीम शेअर नहीं।

ख़ाज़िन यही आयत –

तरजमा : जबकि इसकी तरदीद फरमा दी कि कुरआने करीम शेअर की जिन्स से हो तो रब तआला ने फरमा दिया कि नहीं है वह मगर नसीहत और रौशन कुरआन।

ख़ाज़िन –

कहा गया है कि कुफ़्फ़ारे कुरैश ने कहा था कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम शाइर हैं और जो कुछ वह कहते हैं (कुरआन) वह शेअर है। उसके झुठलाने के लिए रब तआला ने यह आयत उतारी।

तंबीह : इस जगह मुख़ालेफ़ीन यह सवाल करते हैं कि रिवायात में आया है कि नबी अलैहिस्सलाम की ज़बाने पाक शेअर के मुवाफ़िक़ न थी यानी आप अगर कोई शेअर पढ़ते थे तो वज़न बिगड़ जाता। देखो इसी ख़ाज़िन में है।

तरजमा : यानी आपको शेअर पढ़ना आसान न था और आपसे दुरुस्त न अदा होता था। अगर किसी शेअर को नज़म फरमाने का इरादा फरमाते तो न हो सकता था।

मदारिक **ऐ जअलनाहु बेहैसु लौ अरादा क़रज़ा शेअरिन लम यतसह्हल।** यानी हमने आपको इस तरह किया है कि अगर शेअर पढ़ने का इरादा फरमाएं तो आसान न हो।

तफ़्सीरे कबीर –

तरजमा : आपको शेअर आसान नहीं यहाँ तक कि अगर किसी शेअर को अदा फरमाने का इरादा फरमाएं तो वह आप से टूटा हुआ सुना जाता है।

इसका जवाब यह है कि शेअर का इल्म और है शेअर का पढ़ना और बड़े बड़े शुअरा अश्आर गा कर पढ़ नहीं सकते। बहुत से नअत ख़्वां और क़व्वाल इल्मे शेअर नहीं रखते मगर शेअर पढ़ने पर पूरे क़ादिर होते हैं। आप रोटी पकाना जानते नहीं मगर अच्छी बुरी, मोटी बारीक ख़ूब जान लेते हैं।

आपकी इन इबारतों से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को शेअर पढ़ने का मलका और मश्क़ न थी न कि शेअर की पहचान न थी। यही हमने कहा

था। हुज़ूर अलैहिस्सलाम को कुछ शेआर पसन्द थे और कुछ ना पसन्द।

रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम को शेआर बहुत पसन्द भी था और निहायत नापसन्द भी। और अहादीस से साबित है कि आपने बाज़ शुअरा के शेअर पढ़े हैं और उनकी तारीफ़ फरमाई है जैसे कि **अला कुल्लु शैइन मा ख़लल्लाहे बातिलुन।** अगर अच्छे बुरे शेअर की पहचान नहीं तो यह तारीफ़ फरमाना कैसा? शेअर से मुराद इजमाली यानी ग़ैर मुफ़स्सल कलाम और मानी हैं।

रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : जानना चाहिए कि शेअर इजमाल और फ़िसलने और इशारों का मक़ाम है। यानी हमने हुज़ूर अलैहिस्सलाम के लिए किसी चीज़ के इशारे न किए और न यह किया कि हम इरादा कुछ फरमाएं और ख़िताब कुछ करें और इन से इस तरह इजमाली कलाम न फरमाया कि समझ में न आए।

(6) इनमें से किसी को अहवाले तुमसे बयान फरमाया और किसी का अहवाल न ब्यान फरमाया।

इस आयत की तफ़्सीर में मुफ़स्सेरीन ने चन्द तौजीहें फरमाई हैं। एक यह कि इसमें तमाम अंबिया के हालात का इल्म देने की नफ़ी नहीं। बल्कि कुरआने करीम में सराहतन (साफ़ साफ़) ज़िक्र की नफ़ी है। यानी कुछ अंबिया के वाक़ेआत सराहतन बयान न फरमाए। दूसरे यह कि ज़िक्रे तफ़्सीली की नफ़ी है। और इजमाली ज़िक्र सबका फरमाया गया है। तीसरे यह कि वही ज़ाहिर में सबका बयान न हुआ। वही नफ़ी में सबका ज़िक्र फरमाया गया।

तफ़्सीर सावी में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम दुनिया से तशरीफ़ न ले गए यहाँ तक कि अंबिया को तफ़्सीलन जान लिया किस लिए कि वह सब पैग़म्बर आप ही से पैदा हुए और शबे मेअराज बैतुल-मक़्दिस में आपके मुक़्तदी बने लेकिन यह इल्म पोशीदा है और उन पैग़म्बरों के क़िस्से छोड़ दिए। उम्मत के लिए उन पर रहमत फरमाए हुए, लिहाज़ा उनको ताक़त से ज़्यादा तक्लीफ़ नहीं देते।

मिर्क़ात शरह मिश्कात जिल्द अव्वल सफ़: 50 में है।

यह कलाम इस आयत के ख़िलाफ़ नहीं कि **मिन्हुम मन लम नक़्सुस अलैका** क्योंकि नफ़ी तो इल्म तफ़्सीली की है और सुबूत इल्मे इजमाली का है या नफ़ी वही ज़ाहिर (कुरआन) की है और सुबूत वह्ये ख़फ़ी (हदीस) का है।

कुरआन करीम फरमाता है।

तरजमा : और सब कुछ हम तुमको रसूलों की ख़बरें सुनाते हैं जिससे तुम्हारा दिल ठहराएं।

(7) **तरजमा :** जिस दिन अल्लाह जमा फरमाएगा रसूलों को, फिर फरमाएगा कि तुमको क्या जवाब मिला, अर्ज़ करेंगे हमें कुछ इल्म नहीं, बेशक तू ही गैबों का ख़ूब जानने वाला है।

मुफ़स्सेरीन ने इस आयते करीमा की तीन तौजीहें फरमाई हैं। **अव्वलन:** यह कि ख़ुदाया तेरे इल्म के मुक़ाबले में हमको इल्म नहीं। **दूसरे :** यह कि अदबन यह अर्ज़ किया गया। **तीसरे : यह** कि क़यामत में जिस वक़्त नफ़्सी-नफ़्सी फरमाने का वक़्त होगा उस वक़्त अंबिया-ए-किराम यह फरमाएंगे। बाद में फिर अर्ज़ करेंगे कि हमने अपनी क़ौम को तबलीग़े अहकाम की मगर उन्होंने न माना। वह कुफ़्फ़ार कहेंगे कि हमको अहकाम न पहुँचे। जिस पर उम्मते मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम अंबिया-ए-किराम की गवाही देगी।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : पस इस क़ौल की बिना पर पैग़म्बरों ने अपनी ज़ात से इल्म की नफ़ी की अरगचे वह जानते थे क्योंकि उनका इल्म अल्लाह के इल्म के सामने मिस्ल न होने के हो गया।

मदारिक **क़ालू ज़ालिका तअद्दुबन ऐ इल्मुना मआ इल्मेका फ़कअन्नहू ला इल्मा लना।** उन अंबिया ने यह अर्ज़ किया अदबन यानी हमारा इल्म तेरे इल्म के साथ साकित है लिहाज़ा गोया हमको इल्म ही नहीं।

तफ़्सीरे कबीर यही आयत –

तरजमा : अंबिया-ए-किराम ने जब कि जान लिया कि अल्लाह आलिम है बेइल्म नहीं। हलीम है सफ़ीया नहीं, इंसाफ़ वाला है ज़ालिम नहीं, तो वह समझ गए कि उनकी यह बात न तो भलाई का फ़ाइदा देगी और न मुसीबत को दफा करे। पस अदब ख़ामोशी में और मामला को अल्लाह के अदल की तरफ सुपुर्द करे देने में है। लिहाज़ा उन्होंने अर्ज़ कर दिया कि हमको इल्म नहीं।

बैज़ावी यही आयत व **क़ीलल-माना ला इल्मा लना इला जन्बे इल्मेका।** कहा गया है कि आयत के मानी यह हैं कि हमको तेरे इल्म के मुक़ाबिल इल्म नहीं।

रूहुल-बयान यही आयत –

तरजमा : यह जवाब क़यामत के कुछ मौक़ों में होगा और इसके बाद मुत्मइन होंगे तो अपनी क़ौम पर गवाही देंगे कि हमने रिसालत की तबलीग़ फरमा दी और हमारी क़ौम ने क्या जवाब दिया। (मुख़्लिसन)

(8) **वमा अदरी मा यफ़्अलु बी वला बेकुम।** और मैं नहीं जानता कि मेरे साथ क्या किया जाएगा और तुम्हारे साथ क्या?

इससे मुख़ालेफ़ीन दलील पकड़ते हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को न तो अपनी ख़बर थी न किसी और की कि क़यामत में हम से क्या मामला किया

जाएगा लेकिन इसकी तफ़्सीर में मुफ़स्सेरीन के दो क़ौल हैं। **अव्वल :** यह कि इस आयत में दिरायत की नफ़ी है न कि इल्म की। दिरायत अटकल और क़यास से जानने को कहते हैं यानी मैं बग़ैर वही अपने क़यास से यह उमूर नहीं जानता वही से जानता हूँ। **दूसरे :** यह कि यह आयत हुज़ूर अलैहिस्सलाम को यह बातें बताने से पहले की है। लिहाज़ा यह मंसूख़ है।

तफ़्सीरे सावी में है यही आयत –

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम दुनिया से तशरीफ़ न ले गए यहाँ तक कि रब तआला ने उनको कुरआन में बता दिया कि उन से और मुमिनीन से और काफ़िरों से दुनिया व आख़िरत में क्या किया जाएगा।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : जब यह आयत नाज़िल हुई तो मुश्रिक ख़ुश हुए और कहने लगे कि लात व उज़्ज़ा की क़सम हमारा और हुज़ूर अलैहिस्सलाम का तो एक हाल है उनको हम पर कोई ज़्यादती और बुज़ुर्गी नहीं। अगर वह कुरआन को अपनी तरफ़ से गढ़ कर न कहते होते तो उनको भेजने वाला ख़ुदा उन्हें बता देता कि उन से क्या मामला करेगा तो रब ने यह आयत उतारी। **लेयग्फ़िरा लकल्लाहु मा तक़द्दमा।** फिर सहाबा किराम ने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह आपको मुबारक हो आपने जान लिया जो आपके साथ होगा हम से क्या मामला किया जाएगा। तो आयत उतरी कि दाख़िल फरमाएगा अल्लाह मुसलमान मर्द और औरतों को जन्नतों में। और यह आयत उतरी कि मुसलमानों को ख़ुशख़बरी दीजिए कि उनके लिए अल्लाह की तरफ से बड़ा फ़ज़्ल है। यह हज़रत अनस और क़तादा व इकरमा का क़ौल है। यह हज़रात फरमाते हैं कि यह आयत इस आयत से पहले ही है जबकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को उनकी मग़्फ़िरत की ख़बर दी गई मग़्फ़िरत की ख़बर आप को हुदैबिया के साल दी गई। तो यह आयत मन्सूख़ हो गई।

अगर कोई कहे कि आयत **ला अदरी** ख़बर है और ख़बर मन्सूख़ नहीं हो सकती। तो इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि बहुत से उलमा नस्ख़े ख़बर जाइज़ कहते हैं जैसे **व इन तुब्दू अल-आयह ला युकल्लिफुल्लाहु नफ़्सन** से मन्सूख़ है। ऐसे ही **ला अदरी** को इब्ने अब्बास व अनस व इब्ने मालिक रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुम ने **इन्ना फ़तहना लका** से मन्सूख़ माना (तफ़्सीर कबीर व दुर्रे मन्सूर व अबू सऊद) दूसरे यह कि यहाँ गोया फरमाया गया **कुल ला अदरी** और **कुल** अम्र है। नस्ख़ का तअल्लुक़ इसी से है। तीसरे यह कि कुछ आयात सूरत में ख़बर और मानी में हुक्म हैं। जैसे **कुतिबा अलैकुमुस्सियामु** या **लिल्लाहे अलन्नासे हिज्जुल-बैते** वग़ैरह इन जैसी ख़बरों का नस्ख़ जाइज़ है। चौथे यह कि यह एतराज़ हम पर नहीं बल्कि उन तफ़ासीर व अहादीस पर है जिन से नस्ख़ साबित है।

अगर इस आयत के मज़्कूरा बाला मतलब न बयान किए जाएं तो सैकड़ों अहादीस की मुख़ालिफ़त होगी। हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फरमाया कि क़यामत के दिन **लिवा-उल-हम्दे** हमारे हाथ होगा। आदम व आदमियान हमारे झण्डे के नीचे होंगे। शफ़ाअते कुबरा हम फरमाएंगे। हमारा हौज़ ऐसा होगा। उसके बर्तन इस तरह के होंगे वग़ैरह-वग़ैरह। अबू बकर जन्नती हैं, हसन व हुसैन जवानाने जन्नत के सरदार हैं, फ़ातिमा ज़हरा ख़ातूनाने जन्नत की सरदार हैं किसी को फ़रमाया कि तू जहन्नमी है। एक शख़्स बहुत अच्छी तरह जिहाद कर रहा है सहाब किराम ने उसकी तारीफ़ की फरमाया कि वह जहन्नमी है। आख़िर कार उसने ख़ुदकुशी की। अगर मआज़ल्लाह हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अपनी भी ख़बर न हो तो अपनी और दीगर हज़रात की यह ख़बरें किस तरह सुना रहे हैं। वह तो जिसके ईमान की रेजिस्ट्री फरमा दें वह कामिल मोमिन है इस जगह बहुत सी मिसालें पेश की जा सकती हैं। मगर इख़्तिसारन इसी पर किफ़ायत करता हूँ। ख़ुदा तआला दुरुस्त समझ अता फरमाए। आमीन!

(9) **ला तअलमुहुम नहनु नअ लमुहुम** तुम उनको नहीं जानते हम उनको जानते हैं।

इस आयत से मुख़ालेफ़ीन दलील लाते हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम दरबार में आने वाले मुनाफ़िक़ों को न पहचानते थे फिर इल्मे ग़ैब कैसा? मगर मुफ़स्सेरीन ने इस आयत की यह तौजीह की है कि इस आयत के बाद यह आयत नाज़िल हुई। **व लतअरिफ़न्नहुम फ़ी लहनिल-क़ौले**। और ज़रूर तुम इनको बात के तरीक़ा से पहचान लोगे। लिहाज़ा यह आयत मन्सूख़ है या यह तौजीह है कि बग़ैर हमारे बताए इनको नहीं पहचानते।

जुमल में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : अगर तुम कहो कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के मुनाफ़िक़ीन का हाल जानने की नफी क्यों की गई हालांकि आयत **व लेतअरिफ़न्नहुम फ़ी लहनिल-क़ौले**। में इसके जानने का सुबूत है। तो इसका जवाब यह है कि नफी की आयत सुबूत की आयत से पहले उतरी है।

इसी जमल में ज़ेरे आयत –

तरजमा : इस आयत के बाद कोई भी मुनाफ़िक़ हुज़ूर अलैहिस्सलाम की ख़िदमत में कलाम न करता था। मगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम उसको पहचान लेते थे और इसके फसादे बातिन और निफ़ाक़ पर दलील पकड़ते थे।

तफ़्सीरे बैज़ावी यही आयत –

तरजमा : आप पर इनका हाल बावजूद आपकी कमाल समझ और सच्ची मर्दुम शनासी के मख़्फ़ी (छुपा) रह गया।

इस तफ़सीर से मालूम हुआ कि इस आयत में अंदाज़े से पता लगाने की नफ़ी है। अगर इस आयत की यह तौजीहें न की जाएं तो इन अहादीस की मुख़ालिफ़त होगी जिन से साबित है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम मुनाफ़िक़ों को पहचानते थे मगर पर्दा पोशी से काम लेते थे।

ऐनी शरह बुख़ारी जिल्द 4 सफ़ः 221 में इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की –

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने जुमा के दिन ख़ुतबा पढ़ा पस फरमाया कि ऐ फ़लां निकल जा क्योंकि तू मुनाफ़िक़ है इनमें से बहुत से आदमियों को रुसवा करके निकाल दिया।

शरह शिफ़ा मुल्ला अली क़ारी जिल्द अव्वल सफ़ः 241 में फरमाते हैं। इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि मुनाफ़ेक़ीन मर्द तीन सौ थे और औरतें एक सौ सत्तर।

हम इस्बाते इल्मे ग़ैब में एक हदीस पेश कर चुके हैं जिसमें हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फरमाया है कि हम पर हमारी उम्मत पेश की गई। लिहाज़ा हमने मुनाफ़िक़ों और कुफ़्फ़ार और मुमिनीन को पहचान लिया इस पर मुनाफ़ेक़ीन ने एतराज़ किया और कुरआन की आयत इसके जवाब के लिए आई। इन सब दलाइल में मुताबिक़त करने के लिए यह तौजीह करना ज़रूरी है।

और यह कलाम इज़हारे ग़ज़ब के लिए होता है। अगर बच्चा को बाप मारने लगे। और कोई बाप से बचाए तो वह कहता है कि इस ख़बीस को तुम नहीं जानते मैं जानता हूँ। इससे इल्म की नफ़ी नहीं।

(10) रब तआला फरमाता है।

वला तुसल्ली ला अहदिम मिन्हुम माता आबदा।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने अब्दुल्लाह इब्ने अबी मुनाफ़िक़ की नमाज़े जनाज़ा या तो पढ़ ली या पढ़ना चाही फ़ारूक़े आज़म ने मना किया। मगर उनकी अर्ज़ न सुनी तब यह आयत उतरी जिसमें आपको मुनाफ़ेक़ीन की नमाज़े जनाज़ा से रोका गया। अगर इल्मे ग़ैब था तो मुनाफ़िक़ का जनाज़ा क्यों पढ़ा? **जवाब :** उस मुनाफ़िक़ का हज़रत अब्बास पर कुछ एहसान था और उसका फ़रज़न्द मुख़्लिस मोमिन और ख़ुद उस मुनाफ़िक़ ने वसीयत की थी कि मेरा जनाज़ा हुज़ूर पढ़ाएं। और उस वक़्त उसकी मुमानेअत न थी। लिहाज़ा दीनी मसलेहत से इजाज़त पर अमल फ़रमाया।

तफ़सीरे कबीर व रूहुल-बयान ने फरमाया कि उसकी वसीयत अलामते तौबा थी। और शरीअत का हुक्म ज़ाहिर पर है जिस पर हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने अमल फरमाया। रब को मंज़ूर न था कि हबीब का दुश्मन ज़ाहिरी इज़्ज़त भी पाए। लिहाज़ा कुरआने करीम ने हज़रत फ़ारूक़ की ताईद फरमा दी।

ग़रज़ कि इस मसला को इल्मे ग़ैब से कोई तअल्लुक़ नहीं उसका मुनाफ़िक़ होना ज़ाहिर था मगर इस नमाज़ में बहुत सी मस्लेहतें थीं। करीम का करम ग़ैर इख़्तियारी होता है।

तरजमा : (11) और तुम से रूह को पूछते हैं तुम फरमाओ कि रूह मेरे रब के हुक्म से एक चीज़ है और तुमको इल्म न मिला मगर थोड़ा।

मुख़ालेफ़ीन इस आयत से दलील लाते हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को रूह का इल्म न था कि रूह क्या चीज़ है लिहाज़ा आपको इल्मे ग़ैब कुल्ली न हुआ। इसमें तीन उमूर क़ाबिले ग़ौर हैं। **अव्वल :** यह कि इस आयत में यह कहाँ है कि हुमने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इल्म नहीं दिया या हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने कहाँ फरमाया कि मुझे रूह का इल्म नहीं मिला लिहाज़ा इस आयत को नफ़ीए इल्मे रूह की दलील बनाना महज़ ग़लत है। इसमें तो पूछने वाले काफ़िरों से फरमाया गया कि तुमको इल्म बहुत थोड़ा दिया गया है तुमको रूह की हक़ीक़त का इल्म नहीं। **दूसरे:** यह कि **कुलिर्रूहु मिन अम्रे रब्बी** के मानी हज़रत क़िब्ला आलम शैख़ महर अली शाह साहब फ़ाज़िल गोलड़वी अलैहिर्रहमा ने सैफ़े चिश्तियाई में हज़रत मुहीयुद्दीन इब्ने अरबी से नक़्ल फरमाया कि **कुलिर्रूहु मिन अम्रे रब्बी** फ़रमा दो कि रूह अम्रे रब से है यानी आलिम बहुत से हैं आलमे अनासिर, आलमे अरवाह, आलमे अम्र, आलमे इमकान वग़ैरह तो रूह आलमे अम्र की चीज़ है और तुम लोग आलमे अनासिर के। तुम उसकी हक़ीक़त को नहीं जान सकते क्योंकि ऐ काफ़िरो तुमको थोड़ा इल्म दिया गया है।

रूहुल-बयान में ज़ेरे आयत –

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम मेअराज की रात आलमे अनासिर से आगे बढ़े फिर आलमे तबीअत से फिर आलमे अरवाह से यहाँ तक कि आलमे अम्र तक पहुँचे और सर की आँख आलमे अजसाम से है पस आप उन तमाम चीज़ों से अलाहिदा हो गए और रब तआला को कुल ज़ात से देखा।

इससे मालूम हुआ कि शबे मेअराज हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने आलमे अम्र की सैर ही नहीं फरमाई। बल्कि ख़ुद भी आलमे अम्र में से बन गए। और अपने रब को देखा। और इसी आलमे अम्र की रूह भी है। फिर आप पर रूह क्योंकर मख़्फ़ी (छुपी) रह सकती है। जिस तरह हम जिस्मों को जानते पहचानते हैं हुज़ूर अलैहिस्सलाम रूह को जानते पहचानते हैं क्योंकि एक ही आलम के हैं। दुनिया में हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम आधे बशर और आधे रूह थे क्योंकि हज़रत मरयम तो बशर थीं और हज़रत जिब्रील रूह **फअरसलना इलैहा रूहना।** हमने हज़रत मरयम के पास अपनी रूह यानी जिब्रील को भेजा। और आपकी पैदाइश हज़रत जिब्रील अलैहिस्सलाम की फूंक से हुई इसलिए दोनों उमूर आपमें मौजूद हैं।

फुतूहाते मक्कीया बाब 575 में शैख़ अकबर फरमाते हैं।

हज़रत मसीह निस्फ़ बशर और निस्फ़ दोम पाक रूह हैं। क्योंकि जिब्रील ने हज़रत मरयम को उनको बख़्शा और उनकी पैदाइश भी हुज़ूर अलैहिस्सलाम के नूर से है तो गोया हुज़ूर अलैहिस्सलाम अज़ सरतापा रूह हैं।

रूहुल-बयान ने इसी आयत –

ला तुदरिक के मातहत लिखा

तरजमा : हक़ीक़ते मुहम्मदीया तमाम हक़ीक़तों की हक़ीक़त है और वही वजूद आम है लिहाज़ा आयत के मानी यह हुए कि रूह वह जो अम्र यानी **कुन** से बिलावास्ता पैदा हो। और वह तो हक़ीक़ते मुहम्मदीया है कि बिलावास्ता उनकी पैदाइश है। और सबकी पैदाइश उनके नूर से है। मतलब यह हुआ कि आलम की रूह हक़ीक़ी में हों।

तफ़्सीरे कबीर ने इस जगह फरमाया कि यहाँ रूह से कुरआन या जिब्रील मुराद हैं। कुफ़्फ़ार ने सवाल किया था कि कुरआन क्या है शेअर या कहानत? या जिब्रील कौन हैं? और कैसे आते हैं? जवाब दिया गया कि कुरआन अम्रे इलाही है न शेअर है न जादू। जिब्रील अम्रे इलाही से आते हैं। जब हुज़ूर अलैहिस्सलाम ख़ुदा को पहचानें तो रूह को क्यों न पहचानें।

तीसरे यह कि मुफ़स्सेरीन व मुहद्देसीन ने तसरीह फरमाई है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को रूह का इल्म था।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन ने इसी आयत के मातहत लिखा।

तरजमा : कहा गया है कि नबी अलैहिस्सलाम को हक़ीक़ते रूह मालूम थी लेकिन इसकी ख़बर न थी। क्योंकि ख़बर न देना आपकी नुबूव्वत की अलामत (निशानी) थी और ज़्यादा सही यह है कि अल्लाह तआला का इल्म रूह से ख़ास है इस इबारत में इल्मे रूह मानने वालों को मुश्रिक न कहा गया और न उनके क़ौल को ग़लत बताया।

तफ़्सीरे रूहुल-बयान इसी आयत की तफ़्सीर में है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम की शान इससे बुलन्द है कि आप रूह से नावाक़िफ़ हों हालांकि आप अल्लाह से वाक़िफ़ है। रब ने आप पर एहसान जता कर फरमाया कि जो कुछ आप न जानते थे वह आपको बता दिया।

तफ़्सीरे मदारिक यही आयत –

तरजमा : कहा गया है कि सवाल रूह की पैदाइश के मुतअल्लिक़ था कि रूह मख़्लूक़ भी है या नहीं और रब का फरमान **मिन अम्रे रब्बी** रूह के मख़्लूक़ होने की दलील है लिहाज़ा यह जवाब हो गया।

इस इबारत से मालूम हुआ कि इस आयत में रूह का इल्म होने न होने से बहस ही नहीं हो रही है यहाँ तो ज़िक्र मख़्लूक़ियते रूह का है।

मदारिजुन्नबुव्वत जिल्द दोम सफ़: 40 वसल ईज़ा रसानी कुफ़्फ़ार फुकरा

सहाबा रा में शैख़ फरमाते हैं।

तरजमा : मोमिन आरिफ़ यह हिम्मत किस तरह कर सकता है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम से हक़ीक़ते रूह के इल्म की नफ़ी करे हालांकि रब ने उनको अपनी ज़ात व सिफ़ात का इल्म दिया है और उनके लिए उलूमे अव्वलीन व आख़रीन खोल दिए। हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म के मुक़ाबिल रूहे इंसानी की क्या हक़क़त है वह तो इस दरिया का एक क़तरा और सहरा का एक ज़र्रा है।

इहया-उल-उलूम में इमाम ग़ज़ाली फरमाते हैं।

तुम यह न गुमान करना यह रूह हुज़ूर अलैहिस्सलाम को ज़ाहिर न थी। क्योंकि जो अपने को न पहचानेगा वह अल्लाह को किस तरह पहचान सकता है यह भी बईद (नामुमकिन) नहीं कि रूह कुछ औलिया व उलमा को ज़ाहिर हो।

इन इबारत से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इल्मे रूह अता हुआ बल्कि हुज़ूर के सदक़ा से बाज़ उलमा और औलिया को भी मिला। कुछ लोगों ने इसका इंकार भी किया। मगर वह बिला दलील है। नीज़ जब सुबूत व नफ़ी के दलाइल हों तो सुबूत को इख़्तियार करना चाहिए जैसा कि हम क़ाइदा उसूल का बयान कर चुके हैं।

(12) **अफ़ल्लाहु अन्का लिमा अज़िन्ता लहुम।** ग़ज़व-ए-तबूक में कुछ मुनाफ़ेक़ीन ने ग़लत बहाना करके शिर्कत न की। हुज़ूर अलैहिस्सलाम को उनकी हीला साज़ी का पता न लगा और उन्हें जिहाद में न जाने की इजाज़त दे दी। इस आयत में आप पर इताब फरमाया गया कि क्यों इजाज़त दी। अगर आपको इल्मे ग़ैब होता तो असल हाल आप पर ज़ाहिर होता। **जवाब** : न इस आयत में आप पर इताब है और न हुज़ूर उनके फ़रेब से बेख़बर थे। बल्कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने उनकी पर्दा पोशी फरमाते हुए इजाज़त दी। रब ने फरमाया कि ऐ मुजिरमों के पर्दा पोश! आपने उनको रुसवा क्यों न किया? इताब ग़लती पर होता है। यहाँ ग़लती कौन सी हुई थी? **अफ़ल्लाहु** कलिम-ए-दुआइया है न कि इताब।

(13) तुम से क़यामत को पूछते हैं कि वह कब के लिए ठेहरी हुई है। तुमको उसके बयान से क्या तअल्लुक़?

इस आयत से मुख़ालेफ़ीन दलील लाते हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को क़यामत का इल्म न था कि कब होगी लिहाज़ा आपको इल्मे ग़ैब कुल्ली न हुआ। मगर सही यह है कि रब तआला ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को यह इल्म भी अता फरमाया। मुफ़स्सेरीन ने इस आयत की चन्द तौजीहें की हैं। एक तो यह कि यह आयत इल्मे क़यामत अता करने से पहले की है। दोम यह कि इस से मक़सूद साइलीन को जवाब देने से रोकना है न कि आपके इल्म की नफ़ी। तीसरे यह कि इस आयत में फरमाया गया **अन्ता मिन ज़िक्राहा**

आप उस क़यामत की निशानियों में से एक हैं आपको देख कर ही जान लेना चाहिए कि क़यामत क़रीब है। चौथे यह कि इसमें फरमाया गया है कि दुनिया में आप यह बातें बताने नहीं भेजे गए।

तफ़्सीरे सावी यही आयत –

यह आयत हुज़ूर अलैहिस्सलाम को क़यामत के वक़्त की ख़बर देने से पहले की है। लिहाज़ा यह इस क़ौल के ख़िलाफ़ नहीं, कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम दुनिया से न गए यहाँ तक कि अल्लाह तआला ने आपको दुनिया व आख़िरत के सारे उलूम दे दिए।

रूहुल-बयान यही आयत –

बाज़ मशाइख़ इधर गए हैं कि नबी अलैहिस्सलाम क़यामत के वक़्त को जानते थे अल्लाह के बताने से। और यह क़ौल इस आयत के हसर के ख़िलाफ़ नहीं।

रूहुल-बयान में यही इबारत पारा नौ ज़ेरे आयत –

यस्सअलून का कअन्नका हफ़ियुल अन्हा

में भी है और वहाँ यह भी है कि दुनिया की कुल उम्र ७० हज़ार साल है। यह बरिवायत सहीहा साबित है। जिससे मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को क़यामत का इल्म है।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन यही आयत –

तरजमा : कहा गया है कि **फ़ीमा** कुफ़्फ़ार के सवाल का इंकार है। यानी उनका सवाल किस शुमार में है। फिर फरमाया कि आप ऐ मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) उस क़यामत की निशानियों में से हैं, क्योंकि आप आख़िरी नबी हैं। उनको यह दलील काफ़ी है क़यामत क़रीब होने पर।

तफ़्सीरे मदारिक यही आयत –

या हुज़ूर अलैहिस्सलाम क़यामत का बहुत ही ज़िक्र फरमाते थे और उसके बारे में सवाल किए जाते थे यहाँ तक कि आयत उतरी लिहाज़ा यह आयते तअज्जुब है आपके ज़्यादा ज़िक्र क़यामत फरमाने पर। अब इस आयत का मतलब यह हुआ कि आप किस क़द्र ज़िक्रे क़यामत फरमाते हैं।

मदारिक यही आयत –

तरजमा : कुफ़्फ़ार के सवाल का इंकार है यानी यह सवाल किस शुमार में है। फिर फरमाया कि आप उस क़यामत की निशानियों में से हैं क्योंकि आप आख़िरी नबी हैं क़यामत की अलामात में से एक अलामत हैं अब उनके क़यामत के पूछने के कोई मानी ही नहीं।

अब इस आयत का मतलब यह हुआ कि उनका क़यामत के मुतअल्लिक़ पूछना लग्व (बेकार) है। आप ख़ुद उसकी अलामत हैं वह क्यों पूछते हैं।

मदारिक यही आयत –

तरजमा : और कहा गया है कि **फ़ीमा अन्ता मिन ज़िक्रहा** सवाल से मिला हुआ है यानी कुफ़्फ़ार से, पूछते हैं कि क़यामत का क़याम कब होगा? और यह भी कहते हैं कि आपको इसका इल्म कहाँ से आया। फिर रब तआला ने अपनी बात शुरू की। **इला रब्बिका।**

अब आयत का मतलब यह हुआ कि कुफ़्फ़ार ने पूछा कि आपको यह इल्म कहाँ से है। रब ने फरमाया कि अल्लाह की तरफ से। तो यह आयत इल्मे क़यामत का सुबूत है।

मदारिक यही आयत –

यानी आप इसलिए नहीं भेजे गए कि उनको क़यामत के वक़्त की ख़बर दें।

अब आयत का मतलब यह हुआ कि कुफ़्फ़ार का यह कहना कि अगर आप क़यामत की ख़बर दे दें तो आप नबी हैं वरना नहीं। महज़ बेहूदा है क्योंकि क़यामत की ख़बर देना नुबुव्वत के फ़राइज़ में से नहीं। नबी के लिए तबलीग़े अहकाम ज़रूरी है।

मदारिजुन्नुबुव्वह जिल्द दोम सफ़: 40 वसल ईज़ा रसानी कुफ़्फ़ार फ़ुक़रा सहाबा रा में है।

यानी बाज़ उलमा ने रूह की तरह हुज़ूर को क़यामत का इल्म भी माना।

(14) तुमसे ऐसा पूछते हैं गोया तुमने उसको ख़ूब तहक़ीक़ कर रखा है तुम फरमाओ कि उसका इल्म तो अल्लाह के पास है।

मुख़ालेफ़ीन इस आयत को पेश करके कहते हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को क़यामत का इल्म नहीं। इसके दो जवाब हैं। एक यह कि इस आयत में यह कहाँ है कि आपको क़यामत का इल्म नहीं। इसमें तो यह है कि उसका इल्म अल्लाह ही को है। देने की नफ़ी नहीं। दोम यह कि यह इल्म क़यामत देने से क़ब्ल की आयत है।

तफ़्सीरे सावी यही आयत –

तरजमा : जिस पर ईमान लाना ज़रूरी है यह है कि नबी अलैहिस्सलाम दुनिया से मुंतक़िल न हुए यहाँ तक कि रब ने आपको तमाम वह ग़ायब चीज़ें बता दीं जो दुनिया व आख़िरत में होंगी जिस तरह कि हैं बेऐने यक़ीन। क्योंकि हदीस में आया कि हमारे सामने दुनिया पेश की गई लिहाज़ा हम इसमें इस तरह नज़र कर रहे हैं जैसे अपने इस हाथ में। यह भी आया है कि आपको जन्नत और वहाँ की नेअ्मतों और दोज़ख़ और वहाँ के अज़ाबों पर इत्तिला दी गई। अलावा अज़ी और मुतावातिर ख़बरें लेकिन कुछ के छुपाने का हुक्म दिया गया।

तफ़्सीरे ख़ाज़िन में इस आयत में है कि उसकी असल इबारत यह है **यरअलूनका अन्हा कअन्नका हफ़ीयुन।** यानी यह लोग आप से इस तरह पूछते हैं गोया आप उन पर बड़े मेहरबान हैं और आप उनको बता ही देंगे हालांकि यह असरारे इलाही में से है। अग़्यार (ग़ैरों) से छुपाना है।

मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को क़यामत का इल्म है मगर इज़हार की इजाज़त नहीं।

(15) लोग तुमसे क़यामत को पूछते हैं तुम फरमाओ कि इसका इल्म तो अल्लाह ही के पास है।

तफ़्सीरे सावी यही आयत –

तरजमा : यानी उस क़यामत पर कोई मुत्तला (बाख़बर) नहीं और यह सवाल के वक़्त था वरना नबी अलैहिस्सलाम तशरीफ़ न ले गए यहाँ तक कि आपको अल्लाह ने तमाम ग़ैबों पर मुत्तला फरमा दिया जिनमें से क़यामत भी है।

रूहुल-बयान यही आयत –

और नबी की शर्तों में से यह नहीं है कि अल्लाह के बग़ैर बताए ग़ैब जाने।

इस आयत में किसी को इल्मे क़यामत देने की नफ़ी नहीं लिहाज़ा इससे हुज़ूर अलैहिस्सलाम के न जानने पर दलील पकड़ना ग़लत है।

तफ़्सीर सावी में ज़ेरे आयत –

तरजमा : माना यह हैं कि क़यामत का इल्म ख़ुदा के सिवा कोई नहीं दे सकता पस यह आयत इसके ख़िलाफ़ नहीं कि नबी अलैहिस्सलाम दुनिया से तशरीफ़ न ले गए यहाँ तक कि रब तआला ने उनको सारे अगले पिछले वाक़ेआत पर बाख़बर फ़रमा दिया। उनमें से क़यामत का इल्म भी है।

मुख़ालेफ़ीन इल्मे क़यामत की नफ़ी की दलील में शुरू मिश्कात की वह रिवायत पेश करते हैं कि हज़रत जिब्रील ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम से अर्ज़ किया **अख़्बिरनी अनिस्साअते** मुझे क़यामत के मुतअल्लिक़ ख़बर दीजिए। तो फरमाया कि **मल-मस्ऊलु अन्हा बेआलमा मिनस्साइले** यानी इस बारे में हम साइल से ज़्यादा जानने वाले नहीं जिससे मालूम हुआ कि आपको क़यामत का इल्म नहीं।

मगर यह दलील भी महज़ लग़व (बेकार) है दो वजह से एक यह कि इसमें हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने अपने जानने की नफ़ी नहीं की बल्कि ज़्यादतीए इल्म की नफ़ी की। वरना फरमाते **ला आलम** मैं नहीं जानता। इतनी दराज़ इबारत क्यों इरशाद फरमाई? इसका मतलब यह हो सकता है कि ऐ जिब्राईल इस मसला में मेरा और तुम्हारा इल्म बराबर है कि मुझको भी ख़बर है और तुमको भी। लेकिन इस मज्मा में यह राज़ ज़ाहिर करना मुनासिब नहीं। दूसरे यह कि यह जवाब सुनकर हज़रत जिब्रील ने अर्ज़ किया कि **फ़अख़्बिरनी अन अमारातिहा** तो क़यामत की निशानियाँ ही बता दीजिए इस पर हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने चन्द निशानियाँ बयान फरमाईं कि औलाद नाफरमान होगी और कमीन लोग इज़्ज़त पाएंगे वग़ैरह वग़ैरह जिसको क़यामत का बिल्कुल ही इल्म न हो उससे उसके निशान पूछना क्या माना?

निशान और पता तो जानने वाले से पूछा जाता है।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने क़यामत क़ाइम होने का दिन बताया। **मिश्कात बाबुल-जुमा** में है **ला तक़ूमुस्साअतु इल्ला फ़ी यौमिल-जुमअते।** क़यामत क़ायम न होगी मगर जुमा के दिन। कलिमा की और बीच की उंगली मिला कर फरमाया **बुइस्तु अना वस्साअतु कहातैने।** हम और क़यामत इस तरह मिले हुए भेजे गए हैं। (मिश्कात बाब ख़ुतबा यौमुल-जुमअते) यानी हमारे ज़माने के बाद बस क़यामत ही है। और इस क़दर अलामाते क़यामत इरशाद फरमाईं कि एक बात भी न छोड़ी। आज मैं क़सम खा कर कह सकता हूँ कि अभी क़यामत नहीं आ सकती। क्योंकि न अभी दज्जाल आया न हज़रत मसीह व मेहदी न आफ़ताब मग़्रिब से निकला। इन अलामात ने क़यामत को बिल्कुल ज़ाहिर फरमा दिया फिर क़यामत का इल्म न होने के क्या माना? पस ज़्यादा से ज़्यादा यह कहा जा सकता है कि सन न बताया कि फ़लां सन में क़यामत होगी। लेकिन हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना पाक में सन मुक़र्रर ही न हुई थी। सन हिजरी अह्दे फ़ारूक़ी में मुक़र्रर हुई कि हिजरत तो रबी-उल-अव्वल में हुई मगर सन हिजरी का आग़ाज़ मुहर्रम से होता है बल्कि उस ज़माना में क़ायदा यह था कि साल में जो भी कोई अहम वाक़या हुआ उससे साल मंसूब कर दिया। साले क़ब्ल, साले फ़तह, साले हुदैबिया वग़ैरह वग़ैरह। तो सन हिजरी किस तरह बताया जा सकता था। उस दिन के अलामात वग़ैरह सब बता दिए और जो ज़ात इस क़दर तफ़्सीली अलामतें (निशानियां) बयान करे वह बेइल्म किस तरह हो सकती है? और हम सुबूत इल्मे ग़ैब में वह हदीस पेश कर चुके हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने क़यामत तक के मिंन व अन वाक़ेआत बयान कर दिए अब कैसे मुम्किन है कि क़यामत का इल्म न हो क्योंकि दुनिया ख़त्म होते ही क़यामत है और हुज़ूर अलैहिस्सलाम को यह इल्म है कि कौन सा वाक़ेया किसके बाद होगा तो जो अख़िरी वाक़ेया इरशाद फरमाया वही दुनिया की इंतिहा है और क़यामत की इब्तिदा दो मिली हुई चीज़ों में से एक की इंतिहा का इल्म दूसरी के इब्तिदा का इल्म होता है। इस पर ख़ूब ग़ौर कर लिया जाए यह निहायत नफ़ीस तहक़ीक़ है जो हज़रत सदरुल-अफ़ाज़िल मुर्शिदी उस्ताज़ी मौलाना सैयद नईमुद्दीन साहब मुरादाबादी ने एक तक़रीर के दौरान में इरशाद फरमाई।

(16) **तरजमा :** बेशक अल्लाह के पास है क़यामत का इल्म और उतारता है बारिश और जानता है जो कुछ माओं के पेट में है और कोई जान नहीं जानती कि कल क्या कमायेगी और कोई जान नहीं जानती कि किस ज़मीन में मरेगी बेशक अल्लाह जानने वाला बताने वाला है।

इस आयत से मुख़ालेफ़ीन कहते हैं कि पाँच चीज़ों का इल्म अल्लाह के

सिवा किसी को नहीं यह अल्लाह की सिफ़त है जो किसी ग़ैर के लिए साबित करे वह मुश्रिक है इसी को उलूमे ख़मसा कहते हैं। क़यामत कब होगी बारिश कब होगी, औरत के पेट में लड़का है या लड़की और कल क्या होगा और कौन कहाँ मरेगा? इस आयत की ताईद में शुरू मिश्कात की रिवायत पेश करते हैं कि हज़रत जिब्रील ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम से क़यामत के मुतअल्लिक़ दरयाफ़्त किया तो फरमाया।

यानी पाँच चीज़ें वह हैं जिनको सिवाए ख़ुदा के कोई नहीं जानता। फिर यही आयत तिलावत फरमाई। हम उलूमे ख़मसा के बारे में निहायत मुंसिफ़ाना तहक़ीक़ करते हैं और नाज़िरीन से इंसाफ़ की तवक़्क़ुअ (उम्मीद) और अपने रब से तमन्ना-ए-क़बूल रखते हैं। **अव्वलन** : इस आयत की तफ़्सीर में मुफ़स्सेरीन के अक़वाल फिर इस हदीस के मुतअल्लिक़ मुहद्देसीन के अक़्वाल पर अपनी तहक़ीक़ पेश करते हैं।

तफ़्सीराते अहमदीया ज़ेरे आयत मज़्कूरा –

तरजमा : और तुम यह भी कह सकते हो कि इन पाँचों बातों को अगर चे ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता। लेकिन जाइज़ है कि ख़ुदा पाक अपने वलियों और महबूबों में जिसको चाहे सिखाए। इस क़ौल के क़रीना से कि अल्लाह जानने वाला बताने वाला है ख़बीर माना मुख़्बिर।

तफ़्सीरे सावी आयत **माज़ा तक्सिबु ग़दन** के तहत फरमाते हैं।

तरजमा : यानी इन बातों को कोई अपने आप नहीं जानता लेकिन किसी बन्दे का अल्लाह के बताने से जानना इससे कोई माने नहीं जैसे अंबिया और कुछ औलिया। रब ने फरमाया कि यह लोग ख़ुदा के इल्म को नहीं घेर सकते मगर जिस क़द्र रब चाहे और फरमाया कि अपने ग़ैब को किसी पर ज़ाहिर नहीं फरमाता सिवाए बरगुज़ीदा रसूलों के पस अगर ख़ुदा तआला अपने कुछ नेक बन्दों को बाज़ ग़ैबों पर मुत्तला फरमा दे तो कोई माने नहीं। पस यह इल्म नबी का मोजज़ा और वली की करामत होगा। इसीलिए उलमा ने फरमाया है कि हक़ यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम दुनिया से तशरीफ़ नहीं ले गए यहाँ तक कि इन पाँच बातों पर रब ने मुत्तला फरमा दिया।

तफ़्सीरे अराइसुल-बयान ज़ेर आयत –

तरजमा : हमने बाज़ औलिया को सुना कि उन्होंने पेट का बच्चा, लड़की या लड़के की ख़बर दी। और हमने अपनी आँखों से वही देखा जिसकी उन्होंने ख़बर दी थी।

तफ़्सीरे रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : और जो ग़ैब की ख़बरें अंबिया औलिया से मरवी हैं पस यह अल्लाह की तालीम से है या वही या इल्हाम के तरीक़ से। और इसी तरह बाज़ औलिया ने बारिश आने की ख़बर दी और कुछ ने रहम के बच्चा लड़के

या लड़की की ख़बर दी। तो वही हुआ जो उन्होंने कहा था।

क़यामत के इल्म की तहक़ीक़ हम इससे पहले कर चुके हैं जो उलूमे ख़म्सा में से है।

इन तफ़ासीर की इबारतों से मालूम हुआ कि रब तआला ने उलूमे ख़म्सा अपने हबीब अलैहिस्सलाम को दिए और इस आयत में ख़बीर बमाना मुख़्बिर है। इसके मुतअल्लिक़ और भी तफ़ासीर की इबारतें पेश की जा सकती हैं मगर इसी पर इख़्तिसार करता हूँ। अब रही मिश्कात शुरू किताबुल–ईमान की हदीस कि यह पाँच चीज़ें कोई नहीं जानता। इसकी शरहें मुलाहिज़ा हों। इमाम क़रतबी, इमाम ऐनी, इमाम क़स्तलानी शरह बुख़ारी में और मुल्ला अली क़ारी मिर्क़ात शरह मिश्कात किताबुल–ईमान फ़सले अव्वल में इसी हदीस के तहत फरमाते हैं।

फिर जो शख़्स इन पाँचों में से किसी चीज़ के इल्म का दावा करे हुज़ूर अलैहिस्सलाम की तरफ बग़ैर निसबत किए हुए वह अपने दावा में झूठा है।

लम्आत में शैख़ अब्दुल-हक़ अलैहिर्रहमा इसी हदीस के मातहत फरमाते हैं।

अल मुरादु ला यालमु बेदूनि तालीमिल्लाहे तआला

मुराद यह है कि इन पाँचों बातों को बग़ैर अल्लाह के बताए कोई नहीं जानता।

अश्इतुल-लमआत में शैख़ अब्दुल-हक़ इसी हदीस की शरह में फरमाते हैं। "मुराद यह है कि इन उमूरे ग़ैब को बग़ैर अल्लाह के बताए हुए अक़्ल के अंदाज़े से कोई नहीं जान सकता क्योंकि इनको ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता। मगर वह जिसको अल्लाह अपनी तरफ से बता दे वही या इल्हाम से।

इमाम क़स्तलानी शरह बुख़ारी किताबुत्तफ़सीर सूरः रअद में फरमाते हैं।

तरजमा : कोई नहीं जानता कि क़यामत कब होगी सिवाए अल्लाह के और पसन्दीदा रसूल के क्योंकि रब तआला उसको अपने ग़ैब पर मुत्तला (बाख़बर) फ़रमाता है और उनका ताबे वली उन से वह ग़ैब ले लेता है।

सिद्दीक़े अक्बर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने अपनी बीवी बिन्ते ख़ारेजा को ख़बर दी कि वह बेटी से हामेला हैं लिहाज़ा सिद्दीक़ की वफ़ात के बाद उम्मे कुलसूम बिन्ते सिद्दीक़ पैदा हुईं पस यह फ़रासत और ज़न (गुमान) है ख़ुदा तआला मोमिन की फ़रासत को सच्चा कर देता है।

सैयद शरीफ़ अब्दुल-अज़ीज़ मसऊद **किताबुल-अबरीज़** में फरमाते हैं। हुज़ूर अलैहिस्सलाम पर इन पाँच मज़्कूरा में से कुछ भी छुपा हुआ नहीं और हुज़ूर पर यह उमूर मख़्फ़ी (छुपे हुए) क्यों हो सकते हैं हालांकि आपकी उम्मत के सात क़ुतुब उनको जानते हैं फिर ग़ौस का क्या पूछना और फिर

सैयदुल-अंबिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का क्या कहना जो हर चीज़ के सबब हैं और जिन से ही हर चीज़ है।

अल्लामा जलालुद्दीन सुयूती "रौज़न्नज़ीर शरह जामे सग़ीर" में इसी हदीस के मुतअल्लक़ फरमाते हैं।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम का फरमाना **इल्ला हुवा** इसके माना यह हैं कि उनको अपने आप ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता लेकिन कभी अल्लाह के बताने से जान लेते हैं क्योंकि यहाँ वह लोग हैं जो जानते हैं हमने बहुत सों को ऐसा पाया जैसे हम ने एक जमाअत को देखा कि वह जान लेते हैं कि कब मरेंगे और जानते हैं शिकम (पेट) के बच्चे को।

यही अल्लामा जलालुद्दीन सुयूती ख़साइस शरीफ़ में फरमाते हैं।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम पर तमाम वह चीज़ें पेश कर दी गई जो आपकी उम्मत में क़यामत तक होने वाली हैं।

अल्लामा इब्राहीम बेजोरी शरह क़सीदा बुर्दा सफ़: 74 में फ़रमाते हैं।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम दुनिया से तशरीफ़ न ले गए मगर इसके बाद कि अल्लाह ने आपको इन पाँचों चीज़ों का इल्म बता दिया।

जम्उन्नहाया में अल्लामा शनवाई फरमाते हैं।

तरजमा : यह साबित है कि अल्लाह तआला ने नबी अलैहिस्सलाम को दुनिया से ख़ारिज न किया यहाँ तक कि हर चीज़ पर बाख़बर कर दिया।

यह ही अल्लामा शनवाई इसी **जामे-उन्नहाया** में फरमाते हैं।

कुछ मुफ़स्सेरीन फ़रमाते हैं कि इन पाँच बातों को ज़ाती तौर पर बिला वास्ता तो ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता पस इस तरह का इल्म ख़ुदा से ख़ास है। लेकिन इल्म बिल-वास्ता वह ख़ुदा से ख़ास नहीं।

फ़ुतूहाते वहबिया शरह अरबईन नुवी में फ़ाज़िल इब्ने अतीया फरमाते हैं।

तरजमा : हक़ वही है जो एक जमाअत ने कहा है कि अल्लाह ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को वफ़ात न दी यहाँ तक कि पोशीदा चीज़ों पर ख़बरदार कर दिया लेकिन बाज़ के छुपाने और बाज़ के बताने का हुक्म दिया।

शाह अब्दुल–अज़ीज़ साहब बुस्तानुल–मुहद्देसीन सफ़: 114 में फरमाते हैं। "नक़्ल है कि शैख़ इब्ने हजर के वालिद का कोई बच्चा न जीता था मलूल दिल हो कर शैख़ की ख़िदमत में हाज़िर हुए शैख़ ने फ़रमाया कि तुम्हारी पुश्त से ऐसा फ़रज़न्द होगा कि अपने इल्म से दुनिया को भर देगा।

यहाँ तक तो उलूमे ख़म्सा के नक़्ली दलाइल थे इसकी अक़्ली दलील यह है कि मुख़ालेफ़ीन भी मानते हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म तमाम मख़्लूक़ से ज़्यादा है जिसका हवाला हम **तहज़ीरुन्नास** से पेश कर चुके हैं अब देखना यह है कि मख़्लूक़ में से किसी को इन पाँच चीज़ों का इल्म दिया गया या नहीं। मिश्काात **किताबुल-ईमान बिल-क़द्र** सफ़: 20 में है कि शिकमे

मादर में बच्चा बनने का जिक्र फरमाते हुए हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फरमाया।

यानी फिर रब तआला एक फ़रिश्ता को चार बातें बता कर भेजता है वह फ़रिश्ता लिख जाता है उसका अमल, उसकी मौत, उसका रिज़्क़, और यह कि नेक बख़्त है, या बदबख़्त, फिर रूह फूंकी जाती है।

यह उलूमे ख़मसा हैं और तमाम मौजूदा और गुज़िश्ता लोगों की यह पाँच बातें वह फ़रिश्ता कातिबे तक़्दीर जानता है।

मिश्कात इसी बाब, सफ़: 19, में है।

अल्लाह ने ज़मीन व आसमान की पैदाइश से पच्चास हज़ार साल पहले मख़्लूक़ात की तक़्दीरें लिख दीं।

मालूम हुआ कि लौहे महफ़ूज़ में उलूमे ख़म्सा हैं तो वह मलाइका जो लौहे महफ़ूज़ पर मुक़र्रर हैं इसी तरह अंबिया व औलिया जिनकी नज़र लौहे महफ़ूज़ पर रहती है उनको यह उलूमे ख़म्सा हासिल हुए।

मिश्कात किताबुल-ईमान बिल-क़द्र में है कि मीसाक़ के दिन हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को तमाम औलादे आदम की रूहें सियाह सफ़ेद रंग में दिखा दी गईं कि सियाह रूहें तो काफ़िरों की हैं और सफ़ेद मुसलमानों की।

मेअराज में हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को इस तरह देखा कि उनके दाहिने जानिब सफ़ेद और बाएं जानिब सियाह रंग की रूहें हैं यानी जन्नती और दोज़ख़ी, लोग मोमिनों को देख कर ख़ुश होते है। और कुफ़्फ़ार को मुलाहज़ा फ़रमा कर ग़मगीन।

इसी मिश्कात **किताबुल-ईमान बिल-क़द्र** में है कि एक दिन हुज़ूर अलैहिस्सलाम अपने दोनों हाथों में दो किताबें लिए हुए मज्माए सहाबा में तशरीफ़ लाए। और दाहिने हाथ की किताब के बारे में फरमाया कि इसमें आम जन्नती लोगों के नाम मअ् उनके क़बीले के नामों के हैं और दूसरी किताब में तमाम दोज़ख़ियों के नाम मअ् उनके क़बाइल के हैं। और आख़िर में उन नामों का टोटल भी लगा दिया गया है कि कुल कितने।

इस हदीस की शरह में मुल्ला अली क़ारी ने मिर्क़ात में फरमाया —

इशारा से यही ज़ाहिर हो रहा है कि वह किताबें देखने में आ रही थीं।

इसी मिश्कात **बाबे अज़ाबिल-क़ब्र** में है कि जब मुर्दा नकीरैन के इम्तिहान में कामयाब या नाकाम होता है तो नकीरैन कहते हैं। **क़द कुन्ना नअलमु अन्नका तक़ूलु हाज़ा** हम तो पहले ही जानते थे कि तू यह कहेगा।

मालूम हुआ कि नकीरैन को इम्तिहाने मैय्यित से पहले ही सआदत और शक़ावत (बुराई) का इल्म होता है इम्तिहान तो फ़क़त पाबन्दि-ए-क़ानून या मोतरिज़ (एतेराज़ करने वाला) का मुँह बन्द करने को होता है।

हदीस में है कि जब किसी नेक आदमी की बीवी उससे लड़ती है तो जन्नत से हूर पुकारती है कि यह तेरे पास चन्द दिन का मेहमान है। फिर

हमारे पास आने वाला है। इससे झगड़ा न कर (मिश्कात किताबु न्निकाह फ़ी अशरतुन्निसा) मालूम हुआ कि हूर को भी ख़बर होती है कि इसका ख़ातमा बिल-ख़ैर होगा।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने जंगे बदर में एक दिन पहले ज़मीन पर निशान लगा कर फरमाया कि यहाँ फलां काफिर मरेगा और यहाँ फलां। मौत की ज़मीन का इल्म हुआ। (मिश्कात किताबुल-जिहाद)

इन अहादीस से मालूम हुआ कि उलूमे ख़मसा का इल्म अल्लाह ने अपने कुछ बन्दों को भी दिया है। फिर हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इल्म इन सबके इल्मों को मुहीत। तो किस तरह मुम्किन है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को उलूमे ख़म्सा हासिल न हों।

इससे यह भी मालूम हुआ कि यह पाँच उलूम अताई हादिस हो कर ख़ुदा की सिफ़त नहीं। वरना किसी को उनमें से एक बात का भी इल्म न होता सिफ़ते इलाही में शिर्कत न तवक्कुलन जाइज़ न बअ़ज़न।

इन दलाइल के जवाब इंशाअल्लाह मुख़ालिफ़ से न बन सकेंगे।

(17) **वमा यअलमु तावीलुहू इल्लल्लाहु** मुताशाबेहत आयात की तावील रब तआला के सिवा कोई नहीं जानता इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को मुतशाबेहात आयात का इल्म न था।

जवाब : इस आयत में यह कहाँ फरमाया गया है कि हमने मुतशाबेहात का इल्म किसी को दिया ही नहीं। रब तआला फरमाता है **अर्रहमानु अल्लमल-कुरआन** अपने हबीब को रहमान ने कुरआन सिखाया। जब रब ने सारा कुरआन हुज़ूर को सिखा दिया तो मुतशाबेहात भी सिखा दिए। इसीलिए हनफ़ी मज़हब का मुत्तफ़ेक़ा अक़ीदा है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम मुतशाबेहात को जानते हैं वरना उनका नाज़िल करना बेकार होगा। शाफ़ईयों के नज़्दीक उलमा भी जानते हैं वह **वर्रासेख़ूना फ़िल-इल्मे** पर वक़्फ़ करते हैं।

दूसरी फ़स्ल

नफ़ीए ग़ैब की अहादीस के बयान में

मुख़ालेफ़ीन नफ़ीए इल्मे ग़ैब के लिए बहुत सी अहादीस पेश करते हैं उन सबका इजमाली जवाब तो यह है कि उन अहादीस में हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने यह न फरमाया कि मुझे रब ने फ़लां चीज़ का इल्म न दिया बल्कि किसी में तो है **अल्लाहु आलम** किसी में है मुझे क्या ख़बर। किसी में है कि फ़लां बात हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने न बताई। किसी में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फलां से यह बात पूछी। और यह तमाम बातें इल्म की नफ़ी साबित नहीं करतीं न बताना या पूछना या **अल्लाहु आलम** फरमाना और बहुत सी मसलेहतों की वजह से भी हो सकता है। बहुत सी बातें ख़ुदा ने बन्दों को

न बताईं। सवाल के बावजूद मख़्फ़ी (छुपाये) रखा। बहुत सी चीज़ों के मुतअल्लिक़ परवरदिगारे आलम फ़रिश्तों से पूछता है क्या उसको भी इल्म नहीं। एक हदीस सही क़तइयुद्दलालत ऐसी लाओ जिसमें अताए इल्मे ग़ैब की नफ़ी हो। मगर इंशाअल्लाह न ला सकेंगे। यह जवाब निहायत काफी था मगर फिर भी उनकी मशहूर अहादीस अर्ज़ करके जवाब अर्ज़ करता हूँ। **वबिल्लाहित्तौफ़ीक़।**

(1) **मिश्कात बाब ऐलानन्निकाह** की पहली हदीस है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम एक निकाह में तशरीफ़ ले गए जहाँ अंसार की कुछ बच्चियाँ दफ बजा कर जंगे बदर के मक़्तूलीन के मरसिया के गीत गाने लगीं। उनमें से किसी ने यह मिसरा पढ़ा **व फ़ीना नबीयुन यालमु मा फ़ी ग़दिन।** हम में ऐसे नबी हैं जो कल की बात जानते हैं तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फरमाया कि यह छोड़ दो, वही गाए जाओ जो पहले गा रही थीं।

इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इल्मे ग़ैब नहीं था अगर होता तो आप इनको यह कहने से न रोक़ते। सच्ची बात से क्यों रोका?

जवाब : अव्वलन तो ग़ौर करना चाहिए कि यह मिसरा ख़ुद उन बच्चियों ने तो बनाया ही नहीं। क्योंकि बच्चियों को शेअर बनाना नहीं आता। और न किसी काफिर व मुश्रिक ने बनाया। वह हुज़ूर अलैहिस्सलाम को नबी नहीं मानते थे। ला मुहाला यह किसी सहाबी का शेअर है। बताओ वह शेअर बनाने वाले सहाबी **मआज़ल्लाह** मुश्रिक हैं या नहीं। फिर हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने न तो इस शेअर बनाने वाले को बुरा कहा न शेअर की मज़म्मत की बल्कि उसको गाने से रोका क्यों रोका? चार वजह से **अव्वलन :** तो यह कि अगर कोई हमारे सामने हमारी तारीफ़ करे तो बतौर इंकिसार कहते हैं, अरे मियाँ! यह बातें छोड़ो, वही बातें करो। यहां भी इंकिसारन फरमाया। **दोम :** यह कि खेल कूद, गाने बजाने के दरम्यान नअत के अश्आर पढ़ने से मुमानअत फरमाई। इसके लिए अदब चाहिए। **तीसरे :** यह कि ग़ैब की निसबत अपनी तरफ करने को ना पसन्द फरमाया। **चौथे :** यह कि मरसिया के दरम्यान नअत होना ना पसन्द फरमाया। जैसा कि आजकल नअत ख़्वाँ करते हैं। कि नअत व मरसिया को मिला कर पढ़ते हैं।

मिर्क़ात में इसी हदीस के मातहत है।

मना फ़रमाया इल्म की निसबत अपनी तरफ करने को क्योंकि इल्मे ग़ैब ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता और रसूल वही ग़ैब जानते हैं जो अल्लाह बताए या यह नापसन्द किया कि आपका ज़िक्र दफ बजाने में या मक़्तूलीन के मरसिया के दरम्यान किया जाए, क्योंकि आपका दरजा इससे आला है।

अश्इतुल्लमआत में इसी हदीस के मातहत है "शारेहीन ने कहा है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम का उसको मना फरमाना इसलिए है कि इसमें इल्मे ग़ैब

की निसबत हुज़ूर की तरफ है। लिहाज़ा आपको नापसन्द आई और कुछ ने फ़रमाया कि आपका ज़िक्र शरीफ़ खेल कूद में मुनासिब नहीं।

(2) मदीना पाक में अंसार बाग़ों में नर दरख़्त की शाख़ मादा दरख़्त में लगाते थे ताकि फल ज़्यादा दे। इस फ़ेअल (काम) से अंसार को हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने मना फरमाया। (इस काम को अरबी में **तल्क़ीह** कहते हैं) अंसार ने **तल्क़ीह** छोड़ दी। ख़ुदा की शान फल घट गए। इसकी शिकायत सरकारे दो आलम की ख़िदमत में पेश हुई। तो फरमाया **अन्तुम आलमु बेउमूरे दुनियाकुम।** अपने दुनियावी मामलात तुम ख़ूब जानते हो। मालूम हुआ कि आपको यह इल्म न था कि **तल्क़ीह** रोकने से फल घट जाएंगे। और अंसार का इल्म आपसे ज़्यादा साबित हुआ।

जवाब : हुज़ूर अलैहिस्सलाम का फरमाना। **अन्तुम आलमु बेउमूरे दुनियाकुम।** इज़हारे नाराज़ी है कि जब तुम सब्र नहीं करते तो दुनियावी मुआमलात तुम जानो जैसे हम किसी से कोई बात कहें और वह इसमें कुछ तअम्मुल करे तो कहते हैं भाई तू जान! इससे नफ़ी इल्म मक़्सूद नहीं।

शरह शिफ़ा मुल्ला अली क़ारी **बहसे मोजज़ात** में फरमाते हैं।

तरजमा : अल्लाह तआला ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को तमाम दीनी व दुनियावी मस्लेहतों पर मुत्तला फरमाने से ख़ास फरमाया। इस पर यह एतराज़ है कि हुज़ूर ने अंसार को दरख़्तों की **तल्क़ीह** करते हुए पाया। तो फरमाया कि तुम इसको छोड़ देते तो अच्छा था। उन्होंने छोड़ दिया तो कुछ फल ही न आया या नाक़िस आया तो फरमाया कि अपने दुनियावी मामलात तुम जानो। शैख़ सनोसी ने फरमाया कि आपने चाहा था कि उनको ख़िलाफ़े आदत काम करके बाबे तवक्कुल तक पहुँचा दें उन्होंने न माना तो फरमा दिया कि तुम जानो। अगर वह यह मान जाते और दो एक साल नुक़्सान बर्दाश्त कर लेते तो इस मेहनत से बच जाते।

मुल्ला अली क़ारी इसी शरह शिफ़ा जिल्द दौम सफ़: 238 में फरमाते हैं।

अगर वह हज़रात हुज़ूर के फरमान पर साबित रहते तो इस फ़न में फ़ौक़ियत ले जाते और उन से तल्क़ीह की मेहनत दूर हो जाती।

फ़सलुल-ख़िताब में अल्लामा क़ैसरी से नक़्ल फरमाया।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म से ज़मीन व आसमान में ज़र्रा भर चीज़ भी पोशीदा नहीं। अगरचे आप फरमाते थे कि दुनियावी काम तुम जानो।

हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने कभी काश्तकारी न की थी और न काश्तकारों की सोहबत हासिल की मगर ज़मान-ए-क़हत आने से पहले हुक्म दिया कि ग़ल्ला ख़ूब काश्त करो और फरमाया **फ़मा हसदतुम फ़ज़रूहु फ़ी सुंबुलेही।** कि जो कुछ काटो उसको बाल ही में रहने दो यानी गेहूँ की हिफ़ाज़त का तरीक़ा सिखाया। आज भी ग़ल्ला को भूसे में रख कर उसकी

हिफ़ाज़त करते हैं उनको खेती बाड़ी का खुफ़िया राज़ किस तरह मालूम हुआ? और फरमाया **इज्अलनी अला खज़ाइनुल-अरज़े इन्नी हफ़ीज़ुन अलीम।** मुझको ज़मीन के ख़ज़ानों पर मुक़र्रर कर दो मैं इसका मुहाफ़िज़ और हर काम जानने वाला हूँ। यह मुल्की इंतिज़ामात वग़ैरह किस से सीखे? तो क्या हुज़ूर अलैहिस्सलाम की दानाई और हुज़ूर का इल्म हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम से भी कम है। **मआज़ल्लाह।**

(3) तिर्मिज़ी **किताबुत्तफ़सीर** सूरः इंआम में है कि हज़रत मस्रूक़ आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा से रिवायत फरमाते हैं कि जो शख़्स कहे कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने अपने रब को देखा या किसी चीज़ को छुपाया वह झूठा है।

और जो कहे कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम कल की बात जानते हैं उसने अल्लाह पर झूठ बांधा।

जवाब : हज़रत सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा की यह तीनों बातें अपने ज़ाहरी माना पर नहीं हैं आपके यह क़ौल अपनी राय से हैं इस पर कोई हदीस मरफ़ू नहीं फरमातीं बल्कि आयात से इस्तिदलाल फरमाती हैं रब तआला को देखने के मुतअल्लिक़ हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु ने रिवायत पेश फरमाई। और अब तक जम्हूर अहले इस्लाम इसको मानते चले आए हैं। देखो इसकी तहक़ीक़ मदारिज और नसीमुर्रियाज़ वग़ैरह में और हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान सूरः वन्नजम में।

इसी तरह हज़रत सिद्दीक़ा का फरमाना कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने कोई चीज़ न छुपाई इससे मुराद अहकामे शरईया तब्लीग़िया हैं वरना बहुत से असरारे इलाहिया पर लोगों को मुत्तला (ख़बरदार) न फ़रमाया।

मिश्कात किताबुल-इल्म फ़स्ल दोम में हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है कि मुझको हुज़ूर अलैहिस्सलाम से दो क़िस्म के उलूम मिले। एक वह जिसकी तबलीग़ कर दी। दूसरे वह कि अगर तुमको बताऊं तो तुम मेरा गला काट दो।

इससे मालूम हुआ कि असरारे इलाहिया ना महरम से छुपा ले गए। इसी तरह हज़रत सिद्दीक़ा का यह फरमान कि कल की बात हुज़ूर अलैहिस्सलाम नहीं जानते थे। इससे मुराद है बिज़्ज़ात न जानना वरना सैकड़ों अहादीस और कुरआनी आयात की मुख़ालिफ़त लाज़िम आएगी। हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने क़यामत की, दज्जाल की, इमाम मेंहदी की और हौज़े कौसर की, शफ़ाअत बल्कि इमाम हुसैन की शहादत की, जंगे बदर होने से पहले कुफ़्फ़ार के क़त्ल की और जगह क़त्ल की ख़बर दी। और अगर हज़रत सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा के फरमान के ज़ाहिरी मानी भी किए जाएं तो मुख़ालेफ़ीन के भी तो ख़िलाफ़ है कि वह भी बहुत से गुयूब का इल्म मानते हैं और इसमें बिल्कुल

नफ़ी है मुझे आज यक़ीन है कि कल पंजशंबा होगा। सूरज निकलेगा, रात आएगी, यह भी तो कल की बात का इल्म हुआ। हज़रत सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा ने मेअराजे जिस्मानी का भी इंकार फ़रमाया। मगर यही कहा जाता है कि वाक़ेया मेअराज उनके निकाह में आने से पहले का है उनके इल्म में न आया।

(4) सिद्दीक़तुल-कुबरा का हार गुम हो गया, जगह जगह तलाश कराया गया न मिला। फिर ऊँट के नीचे से बरामद हुआ। अगर हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इल्म था तो लोगों को उसी वक़्त क्यों न बता दिया कि हार वहाँ है। मालूम हुआ कि इल्म न था।

जवाब : इस हदीस से न बताना मालूम हुआ न कि न जानना और न बताने से सैकड़ों हिक्मतें होती हैं कुछ हज़रात ने चाँद के घटने बढ़ने का सबब दरयाफ़्त किया। रब तआला ने न बताया। तो क्या ख़ुदा-ए-पाक को भी इल्म नहीं? मर्ज़ी इलाही यह थी, कि सिद्दीक़ा का हार गुम हो, मुसलमान उसकी तलाश में यहाँ रुक जाएं, ज़ुहर का वक़्त आ जाए, पानी न मिले, तब हुज़ूर अलैहिस्सलाम से अर्ज़ किया जाए कि अब क्या करें तब यह आयते तयम्मुम नाज़िल हो जिससे हज़रत सिद्दीक़ा की अज़्मत क़यामत तक के मुसलमान मालूम कर लें कि उनके तुफ़ैल हमको तयम्मुम का हुक्म मिला। अगर उसी वक़्त हार बता दिया जाता तो आयते तयम्मुम क्यों नाज़िल होती। रब के काम असबाब से होते हैं, तअज्जुब होता है कि जो आँख क़यामत तक के हालात को मुशाहदा करे उससे ऊँट के नीचे की चीज़ किस तरह मख़्फ़ी (छुपी) है, शाने महबूब अलैहिस्सलाम पहचानने की ख़ुदा तौफ़ीक़ दे।

(5) मिश्कात बाबुल-हौज़ वशफ़ाअत सफ़: 27, में है।

हौज़ पर हमारे पास कुछ क़ौमें आएंगी जिनको हम पहचानते हैं और वह हमको पहचानते हैं। फिर हमारे और उनके दरम्यान आड़ कर दी जाएगी। हम कहेंगे कि यह तो हमारे लोग हैं तो कहा जाएगा कि आप नहीं जानते कि इन्होंने आपके बाद क्या नए काम किए। फिर हम फ़रमाएंगे दूरी हो दूरी हो उसको जो मेरे बाद दीन बदले।

इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को क़यामत में भी अपने पराए और मोमिन व काफ़िर की पहचान न होगी क्योंकि आप मुरतदीन को फ़रमाएंगे कि यह मेरे सहाबा हैं और मलाइका अर्ज़ करेंगे कि आप नहीं जानते।

जवाब : हुज़ूर अलैहिस्सलाम का उनको सहाबी कहना ताने के तौर पर होगा, कि उनको आने दो, यह तो हमारे बड़े मुख़्लिस सहाबा हैं और मलाइका का यह अर्ज़ करना उनको सुना कर ग़मगीन करने के लिए होगा। वरना मलाइका ने उनको यहाँ तक आने ही क्यों दिया। जैसा कि कुरआन करीम

में है कि जहन्नमी काफिर से कहा जाएगा। **ज़ुक़ इन्नका अन्तल-अज़ीज़ुल-करीम।** अज़ाब चख, तू तो इज़्ज़त वाला करम वाला है, हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने सूरज को देख कर फरमाया था **हाज़ा रब्बी** यह मेरा रब है।

फिर ग़ौर की बात तो यह है कि आज तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम इस सारे वाक़ेया को जानते हैं और फरमाते हैं **आरिफ़ुहुम** हम उनको पहचानते हैं क्या उस दिन भूल जाएंगे? और क़यामत के दिन मुसलमानों की चन्द अलामात होंगी। आज़ाए वज़ू का चमकना, चेहरा नूरानी होना, **यौमा तब्यज़्ज़ु वुजूहुन व तस्वद्दु वुजूहुन।** दाहिने हाथ में नाम-ए-आमाल का होना, पेशानी पर सजदा का दाग़ होना, देखो मिश्कात **किताबुस्सलात** और कुफ़्फ़ार की अलामत होगी। उनके ख़िलाफ़ होना और उन लोगों को मलाइका का रोकना, उनकी इरतिदाद की ख़ास अलामत होगी जो आज ब्यान हो रही है फिर क्या वजह है कि इतनी अलामात के होते हुए हुज़ूर उनको न पहचानें। और आज तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने जन्नती व जहन्नमी लोगों की ख़बर दे दी। अशरए मुबश्शरह को बशारत दी, दो किताबें सहाबा किराम को दिखा दीं जिन में जन्नती व जहन्नमी लोगों के नाम हैं। वहाँ न पहचानने के क्या मानी? हुज़ूर अलैहिस्सलाम को तमाम मख़्लूक़ात से ज़्यादा इल्म है। फिर मलाइका को तो ख़बर है कि यह मुर्तद हैं हुज़ूर अलैहिस्सलाम को ख़बर नहीं रब तआला फरमाता है। और फ़रमाता है मालूम हुआ कि क़यामत में नेक व बद लोगों की अलामात चेहरों पर होंगी।

मिश्कात बाबुल-हौज़ वश्शफ़ाअह सफ़: 390 में है कि जन्नती मुसलमान जहन्नमी मुसलमानों को निकालने के लिए जहन्नम में जाएंगे और उनकी पेशानी के दाग़ सज्दा देख कर उनको जल चुकने के बाद निकालेंगे और उन से फरमाया जाएगा। जिसके दिल में राई के बराबर ईमान पाओ उसको निकाल ले जाओ।

देखो जन्नती मुसलमान दोज़ख़ी मुसलमानों के दिल के ईमान को पहचानते हैं बल्कि यह भी जानते हैं कि किसके दिल में किस दरजा का ईमान है। दीनार के बराबर या ज़र्रा के बराबर। लेकिन हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को चेहरा देख कर अलामात देख कर भी ख़बर नहीं होती, कि यह मुसलमान हैं या काफिर। अल्लाह तआला समझ नसीब फरमाए।

(6) बुख़ारी जिल्द अव्वल किताबुल-जनाइज़ सफ़: 166, में हज़रत उम्मुल-उला की रिवायत है। ख़ुदा की क़सम मैं नहीं जानता हालांकि मैं अल्लाह का रसूल हूँ कि मेरे साथ क्या किया जाएगा।

इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अपनी भी ख़बर न थी कि क़यामत में मुझ से क्या मामला होगा।

जवाब : इस जगह इल्म की नफ़ी नहीं बल्कि दिरायतन की नफ़ी है यानी मैं अपने अटकल व क़्यास से नहीं जानता कि मेरे साथ क्या मामला होगा बल्कि इसका तअल्लुक़ वहि-ए-इलाही से है तो ऐ उम्मुल-उला तुम जो उस्मान इब्ने मज़ऊन के जन्नती होने की गवाही महज़ क़्यास से दे रही हो यह मोतबर नहीं।

इसी ग़ैब की ख़बरों में तो अंबिया कराम भी क़्यास नहीं फरमाते। वरना मिश्कात **बाबु फ़ज़ाइले सैयदुल-मुरसलीन** में है कि हम औलादे आदम के सरदार हैं उस रोज़ **लिवा-उल-हम्द** हमारे हाथ में होगा आदम व आदमियान हमारे झण्डे के नीचे होंगे उनकी मुताबिक़त किस तरह की जाएगी।

(७) बुख़ारी जिल्द दोम किताबुल-मग़ाज़ी बाब हदीसे उफ़्क में है कि हज़रत सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा को तोहमत लगी। आप उसमें परेशान तो रहे मगर बग़ैर वही आए हुए कुछ न फरमा सके कि यह तोहमत सही है या ग़लत अगर इल्मे ग़ैब होता तो परेशानी कैसी? और इतने रोज़ तक ख़ामोशी क्यों फरमाई।

जवाब : इसमें भी न बताना साबित है न कि न जानना। न बताने से न जानना लाज़िम नहीं आता। खुद रब ने भी बहुत रोज़ तक उनकी इसमत की आयात न उतारीं तो क्या रब को भी ख़बर न थी। और बुख़ारी की इस हदीस में है मैं अपनी बीवी की पाकदामनी ही जानता हूँ जिससे मालूम होता है कि इल्म है वक़्त से पहले इज़हार नहीं। और यह तो हो सकता ही नहीं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हज़रत आइशा पर बदगुमानी हुई हो क्योंकि रब तआला ने मुसलमानों को इताबन फरमाया।

लौला इज समेअ्तुमूहु ज़न्नल-मुमिनूना वल-मुमिनातु बेअंफ़ुसेहिम ख़ैरन व क़ालू हाज़ा इफ़्कुन मुबीन। यानी मुसलमान मर्दों व औरतों ने अपने दिलों में नेक गुमानी क्यों न की और फौरन क्यों न कहा कि यह खुला हुआ बुहतान है।

पता लगा कि नुज़ूले बराअत से पहले ही मुसलमानों पर नेक गुमानी वाजिब और बदगुमानी हराम थी। और नबी अलैहिस्सलातु वस्सलाम हराम से मासूम हैं। तो आप बदगुमानी हरगिज़ नहीं फरमा सकते। हाँ आपका फौरन यह फरमाना **हाज़ा इफ़्कुन मुबीन।** आप पर वाजिब न था क्योंकि आपके घर का मुआमला था। रही परेशानी और इतना सुकूत, यह क्यों हुआ? परेशानी की वजह मआज़ल्लाह ला इल्मी नहीं है। अगर किसी इज़्ज़त व अज़्मत वाले को ग़लत इल्ज़ाम लगा दिया जाए और वह ख़ुद जानता भी हो कि यह इल्ज़ाम ग़लत है। फिर भी अपनी बदनामी के अन्देशा पर परेशान होता है। लोगों में इस अफ़्वाह का फैलना ही परेशानी का बाइस हुआ। अगर आयात के नुज़ूल का इंतिज़ार न फरमाया जाता और पहले ही से इसमत का

इज़हार फरमाया जाता। तो मुनाफ़ेक़ीन कहते कि अपनी अह्ले खाना की हिमायत की और मुसलमानों को तोहमत के मसाइल न मालूम होते। और फिर मुक़द्दमात की तहक़ीक़ात करने का तरीक़ा न आता और सिद्दीक़तुल-कुबरा को सब्र का वह सवाब न मिलता जब अब मिला। इस ताख़ीर में सैकड़ों हिक्मतें हैं। और यह तो मसला अक़ाइद का है कि नबी की बीवी बदकार नहीं हो सकतीं। रब तआला फरमाता है। **अल्ख़बीसातु लिलख़बीसीना वल-ख़बीसूना लिल-ख़बीसाते** गन्दी औरतें गन्दे मर्दों के लिए हैं और गन्दे मर्द गन्दी औरतों के लिए। इस गन्दगी से मुराद गन्दगी ज़िना है। यानी नबी की बीवी ज़ानिया नहीं हो सकती। हाँ काफिरा हो सकती है कि कुफ्र सख़्त जुर्म है मगर घिनौनी चीज़ नहीं। हर शख़्स उस से आर (शर्मिन्दगी) नहीं करता और ज़िना से हर तबीअत नफ़रत और आर करती है। इसीलिए अंबिया की बीवियों को कभी ख़्वाब में एहतलाम नहीं होता। देखो मिश्कात **किताबुल-गुस्ल** कि हज़रत उम्मे सलमा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा ने इस पर तअज्जुब फरमाया कि औरत को भी एहतलाम होता है और इसकी तहक़ीक़ हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान में भी है। तो क्या हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अक़ीदे का यह मसला भी मालूम नहीं था कि सिद्दीक़ा सैयदुल-अंबिया की ज़ौजा पाक हैं। उन से यह क़ुसूर हो सकता ही नहीं। फिर मर्ज़ी इलाही यह थी कि महबूबा महबूब अलैहिस्सलाम की इसमत की गवाही हम बराहे रास्त दें और कुरआन में यह आयात उतार कर क़यामत तक के मुसलमानों से तमाम दुनिया में उनकी पाकदामनी के ख़ुतबे पढ़वा लें। कि नमाज़ी नमाज़ों में उनकी इफ़्फ़त के गीत गाएं अब अगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम ख़ुद ही बयान फ़रमा देते तो यह ख़ूबियाँ हासिल न होतीं ग़र्ज़ेकि इल्म तो था इज़हार न था।

लुत्फ़ यह है कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को ज़ुलेखा ने तोहमत लगाई। तो रब तआला ने उनकी सफाई ख़ुद बयान न फरमाई बल्कि एक शीर ख़्वार बच्चा के ज़रिआ पाकदामनी से पाकदामनी ज़ाहिर फरमा दी। हज़रत मरयम को तोहमत लगी तो शीर ख़्वार रूहुल्लाह से उनकी इसमत ज़ाहिर की। मगर महबूब अलैहिस्सलाम की महबूबा बीवी को इल्ज़ाम लगा तो किसी बच्चा या फ़रिश्ता से इसमत की गवाही न दिलवाई गई बल्कि यह गवाही ख़ुद ख़ालिक़ ने दी और इस गवाही को कुरआन का हिस्सा बनाया, ताकि यह गवाही ईमान का रुक्न बने और मख़्लूक़ को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की महबूबियत का पता चले।

तंबीह : एक जह्ल है, एक निस्यान है, एक ज़हूल है, जहल न जानना है, निसयान जान कर हाफ़िज़ा से निकल जाना है। ज़हूल यह है कि कोई हाफ़िज़ा में हो मगर इधर तवज्जोह न रहे, एक शख़्स ने कुरआन न पढ़ा

दूसरे ने हिफ़्ज़ करके भुला दिया, तीसरा शख़्स हाफ़िज़े कामिल है अगर किसी वक़्त कोई आयत उससे पूछी बता न सका। तवज्जोह न रही, पहला तो कुरआन से जाहिल, दूसरा नासी, तीसरा ज़ाहिल हुआ।

अंबिया-ए-किराम को बाज़ वक़्त किसी ख़ास चीज़ का निसयान हो सकता है मगर बाद में उस पर क़ायम नहीं रहते। कुरआने करीम सैयदना आदम अलैहिस्सलाम के लिए फरमाता है। **फ़नसिया वलम नजिद लहू अज़्मन।** वह भूल गए हमने उनका इरादा न पाया हज़रत आदम अलैहिस्सलाम की नज़र लौहे महफ़ूज़ पर थी। यह तमाम वाक़ेआत पेशे नज़र थे। मगर इराद-ए-इलाही कि कुछ मुद्दत के लिए निसयान हो गया था। क़्यामत में शफ़ीअ की तलाश में सारे मुसलमान जिनमें मुहद्देसीन व मुफ़स्सेरीन व फुक़हा सब ही हैं अंबिया-ए-किराम के पास जाएंगे कि आप शफ़ाअत फरमाएं। वह शफ़ाअत न तो करेंगे और न शफ़ी-उल-मुज़नेबीन का सहीह पता देंगे। ख़्याल से फरमाएंगे कि हज़रत नूह के पास जाओ वहाँ जाओ, वहाँ जाओ, शायद वह तुम्हारी शफ़ाअत करें। हालांकि दुनिया में सबका अक़ीदा था और है कि क़्यामत में शफ़ी-उल-मुज़नेबीन हुज़ूर अलैहिस्सलाम ही हैं यह हुआ ज़हूल कि इन बातों की तरफ़ तवज्जोह न रही। अगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम किसी वक़्त कोई बात न बताएं तो इसकी वजह ज़हूल (इधर तवज्जोह का न होना) हो सकती है। बेइल्मी साबित न होगी। रब तआला फरमाता है। **व इन कुन्ता मिन क़ब्लेही लमिनल-ग़ाफ़ेलीन।** अगरचे आप इससे पहले वाक़ेया हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम से बेपरवाह थे ग़ाफ़िल फ़रमाया जाहिल न फरमाया। ग़ाफ़िल वह कि वाक़या इल्म में है मगर इधर ध्यान नहीं। शैख़ सअदी गुलिस्तां में फ़रमाते हैं किसी ने हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम से पूछा:

कि आपने हज़रत यूसुफ़ के कुर्ता की ख़ुश्बू मिस्र से तो पाई मगर कनआन के कुएँ में रहे तो आप मालूम न कर सके। जवाब दिया।

फ़रमाया कि हमारा हाल बिजली की तड़प की तरह है कभी ज़ाहिर कभी छुपा हुआ। कुरआनी आयात से मालूम होता है कि हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम को इल्म था कि माहे कनआं मिस्र में तजल्ली दे रहा है फरमाते हैं। **व आलमु मिनल्लाहे मा ला तालमून।** मुझे ख़ुदा की तरफ़ से वह बातें मालूम हैं जो तुमको नहीं मालूम।

रूहुल-बयान पारा बारह ज़ेर आयत – **व लक़द अरसलना नूहन इला क़ौमेही।** में है कि रब तआला को अपने प्यारों का रोना बहुत पसन्द है। हज़रत नूह इतना रोए कि नाम ही नूह हुआ। यानी नौहा और गिरया व ज़ारी करने वाले। हज़रत याक़ूब के रोने के लिए फ़िराक़े यूसुफ़ ज़ाहिरी था। वरना उनका रोना बुलन्दि-ए-दरजात का सबब था। लिहाज़ा उनका यह रोना हज़रत यूसुफ़ से बेख़बरी की वजह से न था।

बिनयामीन को मिस्र में हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने एक हीला से रोक लिया। भाईयों ने आकर क़सम खाई और क़ाफ़िले वालों की गवाही पेश की कि बिनयामीन मिस्र में शाही क़ैदी बना लिए गए मगर फरमाया **बल सव्वलतु लकुम अंफुसकुम अमरन।** कि तुम्हारे नफ़्स ने तुम्हें हीला सिखा दिया यानी यूसुफ़ को भी मेरी औलाद ने ही जुदा किया और बिनयामीन को भी मेरी औलाद यानी हज़रत यूसुफ़ ने हीला से रोका जिससे मालूम होता है कि असल वाक़ेया की ख़बर है। फिर बज़ाहिर मिस्र में याक़ूब अलैहिस्सलाम के दो फ़रज़न्द रह गए थे एक तो बिनयामीन दूसरे यहूदा। मगर फरमाते हैं। **असल्लाहु अन यातीयनी बेहिम जमीआ।** क़रीब है कि अल्लाह उन तीनों को मुझ से मिलाए। तीन कौन थे? तीसरे हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ही तो थे जब ज़ुलेख़ा ने हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम से घर बन्द करके बुरी ख़्वाहिश करनी चाही तो उस बन्द मकान में याक़ूब अलैहिस्सलाम हज़रत यूसुफ़ के पास पहुँचे और और दाँत तले उंगली दबा कर इशारा किया कि हरगिज़ नहीं। ऐ फ़रज़न्द यह काम तुम्हारा नहीं है तुम नबी के बेटे हो। जिसको क़ुरआन फरमाता है। **व हम्मा बेहा लौला अन रआ बुरहाना रब्बेही** वह भी ज़ुलेख़ा का इरादा कर लेते अगर रब की दलील न देख लेते। यह भी ख़्याल रहे कि बिरादराने यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने ख़बर दी कि उनको भेड़िया खा गया और आपको क़मीस और भेड़िए की ख़बर से उनका झूठा होना मालूम हो गया था कि भेड़िए ने अर्ज़ किया था कि हम पर अंबिया का गोश्त हराम है। देखो तफ़्सीरे ख़ाज़िन। रूहुल-बयान सूरः यूसुफ़। फिर आप अपने फ़रज़न्द की तलाश में जंगल क्यों न गए? मालूम हुआ कि बाख़बर थे मगर राज़दार थे, जानते थे कि फ़रज़न्द से मिस्र में मुलाक़ात होगी इसी तरह यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को बहुत से मवाक़े मिले मगर वालिद को अपनी ख़बर न दी। मालूम हुआ कि हुक्म का इंतिज़ार था तो कनआन से बैठे हुए याक़ूब अलैहिस्सलाम अपने फ़रज़न्दों की एक-एक बात तो देख लें मगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम अपनी तैयबा ताहिरा सिद्दीक़ की बेटी हज़रत सिद्दीक़ा के हालात से बेख़बर हों। मगर जो रब कि उनको इतना देता है ताक़ते ज़ब्त भी देता है कि देखते हैं मगर बेमर्ज़ी इलाही राज़ फ़ाश नहीं करते हैं। **अल्लाहु आलूम हैसू यजअलू रिसालता** हमारी यह तक़रीर अगर ख़्याल में रही तो बहुत मुफ़ीद होगी। इंशाअल्लाह!

(8) हदीस शरीफ़ में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने कुछ बीवियों के घर शहद मुलाहिज़ा फरमाया उस पर हज़रत आइशा ने अर्ज़ किया कि या हबीबल्लाह आपके दहन पाक से मग़ाफ़ीर की बू आ रही है तो फरमाया कि हमने मग़ाफ़ीर नहीं इस्तेमाल फरमाया। शहद पिया है। फिर हुज़ूर ने अपने पर शहद हराम कर लिया। जिस पर यह आयत उतरी। **लेमा तुहर्रिमु मा**

अहल्लाहु लका मालूम हुआ कि आपको अपने दहन पाक की बू का भी इल्म न था कि इससे बू आ रही है या नहीं।

जवाब : इसका जवाब इसी आयत में है **तब्तग़ी मरज़ाता अज़्वाजिका** ऐ हबीब यह हराम फरमाना आपकी बेख़बरी से नहीं बल्कि उन मोतरिज़ अज़वाज की रज़ा के लिए है। फिर अपने मुँह की बू ग़ैब नहीं महसूस चीज़ है हर सहीहुद्दिमाग़ महसूस कर लेता है क्या देवबन्दी अंबिया के हवास को भी नाक़िस मानने लगे हैं।

(9) अगर नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इल्मे ग़ैब था तो ख़ैबर में ज़हर मिला हुआ गोश्त क्यों खा लिया? अगर जानते हुए खाया तो यह खुदकुशी की कोशिश है जिससे नबी मासूम हैं।

ज़वाब : उस वक़्त हुज़ूर अलैहिस्सलाम को यह भी इल्म था कि इसमें ज़हर है। और यह भी ख़बर थी कि ज़हर हम पर बहुक्मे इलाही असर न करेगा और यह भी ख़बर थी कि रब तआला की मर्ज़ी यही है कि हम इसे खा लें ताकि बवक़्त वफ़ात इसका असर लौटे और हमको शहादत की वफ़ात अता फरमाई जाए। राज़ी बरज़ा थे।

(10) अगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इल्मे ग़ैब था तो बीरे मऊना के मुनाफ़ेक़ीन धोखे से आप से सत्तर सहाबा किराम क्यों ले गए? जिन्हें वहाँ ले जा कर शहीद कर दिया। इस आफ़त में उन्हें हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने क्यों फंसाया?

जवाब : जी हाँ हुज़ूर अलैहिस्सलाम को यह भी ख़बर थी कि बीरे मऊना वाले मुनाफ़ेक़ीन हैं, और यह भी ख़बर थी कि यह लोग इन सत्तर सहाबा को शहीद कर देंगे, मगर साथ ही यह भी ख़बर थी कि मर्ज़ी-ए-इलाही यही है। और उन सत्तर की शहादत का वक़्त आ गया है। यह भी जानते थे कि रब तआला की रज़ा पर राज़ी रहना बन्दे की शान है, इब्राहीम अलैहिस्सलाम तो मर्ज़ी-ए-इलाही पाकर फ़रज़न्द पर छुरी ले कर तैयार हो गए। क्या यह बेगुनाह पर ज़ुल्म था? बल्कि रज़ाए मौला पर रज़ा थी। अच्छा बताओ रब तआला को तो ख़बर थी कि गोश्त में ज़हर है, और बीरे मऊना वाले उन सत्तर को शहीद कर देंगे उसने वही भेज कर क्यों न रोक दिया। अल्लाह तआला समझ दे।

तीसरी फ़स्ल

इल्मे ग़ैब के ख़िलाफ़ इबाराते फ़ुक़हा के बयान में

(1) फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ में है।

तरजमा : किसी ने बग़ैर गवाहों के निकाह किया तो मर्द और औरत ने कहा कि हमने ख़ुदा और रसूल को गवाह किया। तो लोगों ने कहा है कि

यह कौल कुफ़्र है क्योंकि उसने एतक़ाद किया कि रसूलुल्लाह अलैहिस्सलाम गैब जानते हैं। हालांकि आप तो गैब ज़िन्दगी में न जानते थे चे जाए कि मौत के बाद।

(2) शरह फ़िक़्हे अक्बर में मुल्ला अली क़ारी अलैहिर्रहमा फरमाते हैं।

तरजमा : हन्फ़ियों ने सराहतन ज़िक्र किया है कि यह ऐतक़ाद कि नबी अलैहिस्सलाम गैब जानते थे कुफ़्र है क्योंकि यह अक़ीदा ख़ुदाए–पाक के उस फरमान के ख़िलाफ़ है कि फरमा दो आसमानों और ज़मीनों का गैब ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता।

इन दोनों इबारतों से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इल्मे गैब मानना कुफ़्र है।

जवाब : इन दोनों इबारतों का इजमाली और इल्ज़ामी जवाब तो यह है कि मुख़ालेफ़ीन भी हुज़ूर अलैहिस्सलाम को कुछ इल्मे गैब मानते हैं। लिहाज़ा वह भी काफ़िर हुए क्योंकि इन इबारतों में कुल या थोड़ा का तो ज़िक्र नहीं यह है कि जो भी हुज़ूर को इल्मे गैब माने वह काफिर है। ख़्वाह एक का माने या ज़्यादा का। तो वह भी ख़ैर मनाएं। मौलवी अशरफ़ अली साहब ने " **हिफ़्ज़ुल-ईमान** " में बच्चों, पागलों और जानवरों को बाज़ इल्मे गैब माना है। मौलवी ख़लील अहमद साहब ने **बराहीने क़ातेआ** में शैतान और मलिकुल-मौत को वसीअ इल्मे गैब माना, मौलवी क़ासिम साहब ने **तहज़ीरुन्नास** में कमाल ही कर दिया कि सारी मख़्लूक़ात से हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म ज़्यादा माना। अब इन तीनों साहिबों पर क्या हुक्म लगाया जाएगा? तफ़्सीली जवाब यह है कि क़ाज़ी ख़ाँ की इबारत में हैं **क़ालू** लोगों ने कहा और क़ाज़ी ख़ाँ वग़ैरह फ़ुक़हा की आदत यह है कि वह क़ालू उस जगह बोलते हैं जहाँ उनको यह कौल पसन्द न हो।

शामी जिल्द पंजुम सफ़: 445 में है।

लफ़्ज़ क़ालू वहाँ बोला जाता है जहाँ इख़्तिलाफ़ हो।

क़ाज़ी ख़ाँ का कलाम उनकी नापसन्दीदगी की तरफ इशारा करता है। क्योंकि उन्होंने कहा है **क़ालू अलख़** इनके क़ालू कहने में इशारा इधर है कि यह कौल पसन्दीदा नहीं। और यह इमामों से मरवी नहीं जैसा कि हमने बयान किया। क्योंकि यह फ़ुक़हा की इबारात में शाए है। उसको मालूम है जो उनकी तलाश करे।

दुर्रे मुख़्तार **किताबुन्निकाह** में है।

एक शख़्स ने निकाह किया अल्लाह व रसूल की गवाही से तो नहीं जाइज़ है बल्कि कहा गया है कि वह काफिर हो जाएगा।

इस इबारत के मातहत शामी ने तातार ख़ानिया से नक़्ल किया।

तरजमा : मुल्तक़ित में है कि वह काफिर न होगा क्योंकि तमाम चीज़ें

हुज़ूर अलैहिस्सलाम की रूह पर पेश की जाती हैं और रसूल वाज़ गैब जानते हैं रब ने फरमाया है कि पस नहीं ज़ाहिर फरमाता अपने गैब पर किसी को सिवाए पसन्दीदा रसूल के मैं कहता हूँ कि कुतुबे अक़ाइद में है कि औलिया अल्लाह की करामात में से बअज़ गैबों पर मुत्तला (बाख़बर) होना भी है।

शामी **बाबुल-मुरतदीन** में मसला बज़ाज़िया ज़िक्र फरमा कर फरमाया।

तरजमा : इसका ख़ुलासा यह है कि दावा इल्मे गैब नस्से कुरआनी के ख़िलाफ़ है कि इससे काफ़िर हो गया। मगर जबकि इसको सराहतन या दलालतन किसी सबब की तरफ निसबत कर दे। जैसे कि वही या इल्हाम।

मुज़्मेरात में है कि सहीह यह है कि वह शख़्स काफिर न होगा क्योंकि अंबिया-ए-किराम गैब जानते हैं और उन पर चीज़ें पेश की जाती हैं पस यह कुफ़्र न होगा।

इन इबारात से मालूम हुआ कि अक़ीद-ए-इल्मे गैब पर फ़तवा कुफ़्र लगाना ग़लत है बल्कि फ़ुक़हा का भी अक़ीदा है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इल्मे गैब दिया गया।

मुल्ला अली क़ारी की इबारत पूरी नक़्ल नहीं की गई। असल इबारत यह है जो मतलब वाज़ेह करती है।

तरजमा : फिर जानो कि अंबिया-ए-किराम गैब की चीज़ों को नहीं जानते सिवाए उसके जो उनको अल्लाह ने बता दीं और हन्फ़ियों ने तसरीह की कि जो नबी अलैहिस्सलाम को इल्मे गैब जाने।

अब पूरा मतलब मालूम हुआ कि नबी अलैहिस्सलाम को इल्मे गैब ज़ाती मानने को मुल्ला अली क़ारी कुफ़्र फरमा रहे हैं न कि अताई। क्योंकि अताई को तो मान रहे हैं। और फिर उनकी इबारतें हम सुबूत इल्मे गैब में पेश कर चुके हैं। कि मुल्ला अली क़ारी हुज़ूर अलैहिस्सलाम को तमाम **मा काना वमा यकूनु** का इल्म मानते हैं।

चौथी फ़स्ल

इल्मे गैब पर अक़्ली ऐतराज़ात के बयान में

इल्मे गैब ख़ुदा की सिफ़त है इसमें किसी को शरीक करना शिर्क फ़िस्सिफ़त है लिहाज़ा हुज़ूर अलैहिस्सलाम को गैब मानना शिर्क है।

जवाब : गैब जानना भी ख़ुदा की सिफ़त है। और हाज़िर चीज़ों को जानना भी ख़ुदा की सिफ़त है। **आलिमुल-गैबे वश्शहादते** इसी तरह सुनना देखना, ज़िन्दा होना सब ख़ुदा की सिफ़ात हैं तो अगर किसी को हाज़िर चीज़ का इल्म माना या किसी को **समीअ** या **बसीर** या **हय** माना हर तरह शिर्क हुआ। फ़र्क़ यही किया जाता है कि हमारा सुनना देखना ज़िन्दा रहना ख़ुदा के देने से है और हादिस है। ख़ुदा की यह सिफ़ात ज़ाती और क़दीम फिर

शिर्क कैसा? इसी तरह इल्मे ग़ैब नबी अताई और हादिस और मुतनाही है। रब का इल्म ज़ाती क़दीम और कुल मालूमात ग़ैर मुतनाहिया का है। नीज़ यह शिर्क तो तुम पर भी लाज़िम है क्योंकि तुम हुज़ूर अलैहिस्सलाम के लिए इल्मे ग़ैब मानते हो। थोड़े ही का सही। और ख़ुदा की सिफ़त में कुल्लन और बाज़न हर तरह शरीक करना शिर्क है। और मौलवी हुसैन अली साहब दां भचर वाले जो मौलवी रशीद अहमद साहब के ख़ास शागिर्द हैं अपनी किताब **"बलग़तुल-हैरान"** में लिखते हैं कि ख़ुदा को हर वक़्त मख़्लूक़ात के आमाल का इल्म नहीं होता बल्कि बन्दे जब आमाल कर लेते हैं तब इल्म होता है अब तो इल्मे ग़ैब ख़ुदा की सिफ़त रही ही नहीं फिर किसी को इल्मे ग़ैब मानना शिर्क क्यों होगा।

(2) हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इल्मे ग़ैब कब हासिल हुआ, तुम कभी तो कहते हो कि मेअराज में क़तरा टपकाया गया इससे इल्मे ग़ैब मिला और कभी कहते हो कि ख़्वाब में रब को देखा उसने अपना दस्ते कुदरत हुज़ूर अलैहिस्सलाम के शाना पर रखा जिससे तमाम उलूम हासिल हुए। कभी कहते हो कि कुरआन तमाम चीज़ों का बयान है इसलिए नुज़ूल ख़त्म होने से इल्मे ग़ैब मिला। इसमें कौन सी बात दुरुस्त है। अगर नुज़ूले कुरआन से पहले इल्म मिल चुका था तो कुरआन से क्या मिला। तहसीले हासिल नामुमकिन है।

जवाब : हुज़ूर अलैहिस्सलाम को नफ़्से इल्मे ग़ैब तो विलादत से पहले ही अता हो चुका था क्योंकि आप विलादत से क़ब्ल आलमे अरवाह में नबी थे। और नबी कहते ही उसको हैं जो ग़ैब की ख़बरें दे मगर **मा काना वमा यकूनु** की तक्मील शबे मेअराज में हुई। लेकिन यह तमाम उलूमे शहूदी थे कि तमाम चीज़ों को नज़र से मुशाहिदा फरमाया। फिर कुरआन ने उन ही देखी हुई चीज़ों का बयान फ़रमाया। इसलिए कुरआन में है। **तिबयानन लेकुल्ले शैइन** हर चीज़ का ब्यान और मेअराज में हुआ। **फ़तजल्ला ली कुल्लु शैइन व अरफ़्तु** देखना और है बयान कुछ और। जैसे हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को पैदा फरमा कर उनको तमाम चीज़ें दिखा दीं। बाद में उनके नाम बताए। वह मुशाहिदा था और यह बयान। अगर चीज़ें दिखाई न गई थीं तो **सुम्मा अरज़हुम अलल-मलाइकते।** के क्या माना होंगे यानी उन चीज़ों को मलाइका पर पेश फरमाया। लिहाज़ा दोनों क़ौल सही हैं। कि मेअराज में भी इल्म मिला और कुरआन से भी। अगर कहा जाए कि फिर नुज़ूले कुरआन से फाइदा क्या। सब बातें तो पहले ही से हुज़ूर को मालूम थीं। बताई जाती है ना मालूम चीज़। तो इसका जवाब यह है कि नुज़ूले कुरआन सिर्फ़ हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म के लिए नहीं होता बल्कि इससे

हज़ारहा दीगर फ़ाइदे होते हैं। मसलन यह कि किसी आयत के नुज़ूल से पहले उसके अहकाम जारी न होंगे उसकी तिलावत वग़ैरह न होगी अगर नुज़ूले कुरआन हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म के लिए है तो बाज़ सूरतें दोबार क्यों नाज़िल हुईं। तफ़्सीरे मदारिक में है।

सूरः फ़ातिहा मक्की है और कहा गया है कि मदनी है और सहीह तर यह है कि यह मक्की भी है और मदनी भी। अव्वलन मक्का में नाज़िल हुई फिर मदीना में।

मिश्कात मे हदीसे मेअराज में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को शबे मेअराज में पाँच नमाज़ें और सूरः बक़र की आख़िरी आयात अता हुईं। इस हदीस की शरह में मुल्ला अली क़ारी ने सवाल किया कि मेअराज तो मक्का मुअज़्ज़मा में हुई और सूरः बक़र मदनी है फिर इसकी आयात मेअराज में कैसे अता हुईं? तो जवाब देते हैं।

ख़ुलासा यह कि इसमें वही मुकर्रर हुई हुज़ूर अलैहिस्सलाम की ताज़ीम और आपके इहतिमामे शान के लिए लिहाज़ा अल्लाह ने उस रात बग़ैर वास्ता जिब्रील वही फरमा दी।

इसी हदीस के मातहत लम्आत में है।

शबे मेअराज में यह आयात बग़ैर वास्ते के उतरीं फिर उनको जिब्रील ने उतारा तो कुरआन में रखी गईं।

बताओ कि दो बार नुज़ूल किस लिए हुआ? हुज़ूर अलैहिस्सलाम को तो पहले नुज़ूल से इल्म हासिल हो चुका था और हर साल माहे रमज़ान में जिब्रीले अमीन हुज़ूर अलैहिस्सलाम को सारा कुरआन सुनाते थे।

मुक़द्दमा नूरुल-अनवार तारीफ़े किताब में है। बताओ यह नुज़ूल क्यों था बल्कि कुरआन से मालूम होता है कि हुज़ूर को तमाम आसमानी किताबों का पूरा इल्म था। रब तआला फरमाता है।

तरजमा : यानी ऐ अह्ले किताब तुम्हारे पास हमारे वह रसूल आ गए जो तुम्हारी बहुत सी छुपाई हुई किताब की बातों को ज़ाहिर फरमाते हैं और बहुत से दर गुज़र फरमाते हैं। अगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म में सारी कुतुब आसमानी नहीं तो उनका ज़ाहिर फरमाना या न फरमाना क्या मानी। हक़ीक़त यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम अव्वल ही से कुरआन के आरिफ़ थे मगर कुरआनी अहकाम नुज़ूल से पहले जारी न फ़रमाए। इसीलिए बुख़ारी की पहली हदीस में है कि हज़रत जिब्रील ने ग़ारे हिरा में पहली बार आ कर अर्ज़ किया **इक़रा** आप पढ़िए। यह न अर्ज़ किया कि फ़लां आयत पढ़िए और

पढ़ो उसी से कहते हैं जो जानता हो। हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फरमाया **मा अना बेक़ारेइन** मैं नहीं पढ़ने वाला यानी मैं तो पढ़ाने वाला हूँ। पढ़ तो पहले ही लिया है। लौहे महफूज़ में कुरआन है और लौहे महफूज़ हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म में पहले ही से है। आप विलादत से पहले नबी साहबे कुरआन हैं बग़ैर वही के नुबूव्वत कैसी? लिहाज़ा मानना होगा कि क़ब्ले विलादत ही कुरआन के आरिफ़ हैं।

आज भी बहुत बच्चे हाफ़िज़ पैदा होते हैं। हज़रत ईसा ने पैदा होते ही फरमाया **अतानियल-किताब** रब ने मुझे किताब दी।

मालूम हुआ कि अभी से किताब को जानते हैं। बाज़ पैग़म्बरों के लिए फरमाया **आतैनाहुल-हुक्मा सबीयन।** हमने उन्हें बचपन ही से इल्म व हिक्मत दी। हुज़ूर ने पैदा होते ही सज्दा करके उम्मत की शफ़ाअत की। हालांकि सज्दा और शफ़ाअत हुक्मे कुरआनी है ग़ौस पाक ने माहे रमज़ान में मां का दूध न पिया। यह हुक्मे कुरआनी है। नूरुल-अनवार के ख़ुतबा में ख़ल्क़ की बहस में है।

मालूम हुआ कि कुरआन पर अमल करना हुज़ूर अलैहिस्सलाम की पैदाइशी आदत है। हमेशा हलीमा दाई का एक पिस्तान पाक चूसा। दूसरा भाई के लिए छोड़ा। यह अद्ल व इंसाफ़ भी कुरआनी हुक्म है। अगर इब्तिदा से कुरआन के आरिफ़ नहीं तो यह अमल कैसे फरमा रहे हैं।

देवबन्दियों का एक मशहूर एतराज़ यह भी है कि तुम्हारी पेश कर्दा आयतों के उमूम से लाज़िम आता है कि हुज़ूर का इल्म रब के बराबर हो मगर तुम इन आयतों में क़यामत तक की क़ैद लगाते हो **मा लम तकुन तालम** न तो क़यामत की क़ैद है न **मा काना** और **मा यकूनु** का ज़िक्र। और एक दफ़ा ख़ास होने से आइंदा ख़ुसूस का दरवाज़ा खुल जाता है। देखो कुतुबे उसूल लिहाज़ा हम इन आयतों में अहकामे शरईया की क़ैद लगाते हैं यानी उससे सिर्फ़ शरई अहकाम मुराद हैं।

ज़वाब : इसका यह है कि यहाँ आयत में तख़्सीस नहीं बल्कि अक़्ली इस्तिस्ना है क्योंकि रब का इल्म ग़ैर मुतनाही है मख़्लूक़ का दिमाग़ ग़ैर मुतनाही उलूम नहीं ले सकता बुरहान इब्ताले तसलसुल वग़ैरह से लिहाज़ा मुतनाही होगा। अहादीस से पता लगा कि क़यामत तक की हुज़ूर ने ख़बर दी इसीलिए दावा किया गया। इस्तिस्ना का और हुक्म है तख़्सीस का हुक्म दूसरा। देखो **अक़ीमुस्सलाता** से बच्चा दीवाना, हाइज़ा ख़ारिज है। यह तख़्सीस नहीं बल्कि इस्तिस्ना है।

फ़क़ीर ने यह मुख़्तसर सी तक़रीर इल्मे ग़ैब के मुतअल्लिक़ कर दी इससे ज़्यादा देखना हो तो रिसाल-ए-मुबारकतुल-उलिया का मुताला करो जो कुछ मैंने कहा यह उस बहर की एक लहर है चूंकि मुझे और मसाइल पर भी गुफ़्तगू करना है लिहाज़ा इसी पर इक्तिफ़ा करता हूँ।

हाज़िर व नाज़िर की बहस

इस बहस में एक मुक़द्दमा और दो बाब हैं

मुक़द्दमा हाज़िर व नाज़िर की लुग्वी और शरई माना की तहक़ीक़ में

हाज़िर के लुग्वी मानी हैं जो सामने मौजूद हो यानी ग़ायब न हो।

नाज़िर के चन्द मानी हैं। देखने वाला, आँख का तिल, नज़र, नाक की रग, आँख का पानी।

मुख़्तारुस्सेहाह में इब्ने अबी बकर राज़ी कहते हैं।

जहाँ तक हमारी नज़र काम करे वहाँ तक हम नाज़िर हैं। और जिस जगह तक हमारी दस्तरस हो कि तसर्रुफ़ कर लें वहाँ हम हाज़िर हैं। आसमान तक नज़र काम करती है वहाँ तक हम नाज़िर यानी देखने वाले हैं मगर वहाँ हम हाज़िर नहीं। क्योंकि वहाँ दस्तरस नहीं। और जिस हुजरे या घर में हम मौजूद हैं वहाँ हाज़िर हैं कि उस जगह हमारी पहुँच है। आलम में हाज़िर व नाज़िर के शरई माना यह हैं कि कुव्वते कुदसीया वाला एक ही जगह रह कर तमाम आलम को अपने हाथ की हथेली की तरह देखे और दूर व क़रीब की आवाज़ें सुने या एक आन में तमाम आलम की सैर करे और सैकड़ों कोस पर हाजत मन्दों की हाजत रवाई करे यह रफ़्तार ख़्वाह सिर्फ़ रूहानी हो या जिस्म मिसाली के साथ हो या इसी जिस्म से हो जो क़ब्र में मदफ़ून या किसी जगह मौजूद है। इस सब मानी का सुबूत बुज़ुर्गाने दीन के लिए कुरआन व अहादीस व अक़्वाले उलेमा से है।

पहला बाब

हाज़िर व नाज़िर के सुबूत में इसमें पाँच फ़स्लें हैं

पहली फ़स्ल

आयाते कुरआनिया से सुबूत

(1) **तरजमा :** ऐ ग़ैब की ख़बरें बताने वाले बेशक हमने तुमको भेजा हाज़िर व नाज़िर और ख़ुशख़बरी देता और डर सुनाता और अल्लाह की तरफ़ उसके हुक्म से बुलाता और चमका देने वाला आफ़्ताब।

शाहिद के माना गवाह भी हो सकते हैं और हाज़िर व नाज़िर भी। गवाह को शाहिद इसलिए कहते हैं कि वह मौक़ा पर हाज़िर था। हुज़ूर अलैहिस्सलाम को शाहिद या तो इसलिए फरमाया गया कि आप दुनिया में आलमे ग़ैब को देख कर गवाही दे रहे हैं वरना सारे अंबिया गवाह थे या इसलिए कि क़यामत में तमाम अंबिया की ऐनी गवाही देंगे यह गवाही बग़ैर देखे हुए नहीं हो सकती। इसी तरह आपका **मुबश्शिर व नज़ीर** और **दाई इलल्लाह** होना है कि सारे पैग़म्बरों ने यह काम किए मगर सुनकर। हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने देख कर इसीलिए मेअराज सिर्फ़ हुज़ूर को हुई। **सिराजे मुनीर** आफ़ताब को कहते हैं। वह भी आलम में हर जगह होता है घर घर में मौजूद। आप भी हर जगह मौजूद हैं इस आयत के हर कलिमा से हुज़ूर अलैहिस्सलाम का हाज़िर व नाज़िर होना साबित है।

(2) **तरजमा :** और बात यूं ही है कि हमने तुमको सब उम्मतों में अफ़ज़ल किया कि तुम लोगों पर गवाह हो और यह रसूल तुम्हारे निगहबान और गवाह।

(3) **तरजमा :** तो कैसी होगी जब हम हर उम्मत से एक गवाह लाएं और ऐ महबूब तुमको इन सब पर गवाह व निगहबान बना कर लाएं।

इन आयतों में एक वाक़ेया की तरफ इशारा है कि क़यामत के दिन दीगर अंबिया-ए-किराम की उम्मतें अर्ज़ करेंगी कि हम तक तेरे पैग़म्बरों ने तेरे अहकाम न पहुँचाए थे। अंबिया-ए-किराम अर्ज़ करेंगे कि हमने अहकाम पहुँचा दिए थे और अपनी गवाही के लिए उम्मते मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम को पेश करेंगे उनकी गवाही पर एतराज़ होगा कि तुमने उन पैग़म्बरों का ज़माना न पाया। तुम बग़ैर देखे कैसे गवाही दे रहे हो? यह अर्ज़ करेंगे कि हम से हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया था तब हुज़ूर अलैहिस्सलाम की गवाही ली जाएगी। आप दो गवाहियाँ देंगे एक तो यह कि नबियों ने तबलीग़ की। दूसरी यह कि मेरी उम्मत वाले क़ाबिले गवाही हैं। बस मुक़द्दमा ख़त्म। अंबिया-ए-किराम के हक़ में डिग्री। अगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने गुज़िश्ता अंबिया की तबलीग़ और आइंदा अपनी उम्मत के हालात को ख़ुद चश्मे हक़ बीं से मुलाहिज़ा न फरमाया था तो आपकी गवाही पर जिरह क्यों न हुई? जैसी कि उम्मत की गवाही पर जिरह हुई थी मालूम हुआ कि यह गवाही देखी हुई थी और पहली सुनी हुई। इससे आपका हाज़िर व नाज़िर होना साबित हुआ। इस आयत की तहक़ीक़ हम बहस इल्मे ग़ैब में कर चुके हैं।

(4) **तरजमा :** बेशक तुम्हारे पास तशरीफ़ लाए तुममें से वह रसूल जिन पर तुम्हारा मुशक़्क़त में पड़ना गिराँ है।

इस आयत से तीन तरह हुज़ूर अलैहिस्सलाम का हाज़िर व नाज़िर होना साबित है। एक यह **जाअकुम** में क़यामत तक के मुसलमानों से ख़िताब है कि तुम सबके पास हुज़ूर अलैहिस्सलाम तशरीफ़ लाए। जिससे मालूम हुआ

कि नबी अलैहिस्सलाम हर मुसलमान के पास हैं और मुसलमान तो आलम में हर जगह हैं। तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम भी हर जगह मौजूद हैं। दोम यह फरमाया गया **मिन अंफुसेकुम** तुम्हारे नफ़्सों में से हैं यानी उनका आना तुम में ऐसा है जैसे जान का क़ालिब में आना। कि क़ालिब की रग-रग और रोंगटे-रोंगटे में मौजूद और हर एक से ख़बरदार रहती है ऐसे ही हुज़ूर अलैहिस्सलाम हर मुसलमान के हर फ़ेअल (अमल) से ख़बरदार हैं।

आँखों में हैं लेकिन मिस्ल नज़र यूं दिल में हैं जैसे जिस्म में जाँ
हैं मुझ में व लेकिन मुझ से निहाँ उस शान की जलवा नुमाई है

अगर आयत के सिर्फ़ यह मानी होते कि वह तुम में से एक इंसान हैं तो **मिन्कुम** काफी था **मिन अंफुसिकुम** क्यों इरशाद हुआ? तीसरे यह फरमाया गया **अज़ीज़ुन अलैहि व अनित्तुम** उन पर तुम्हारा मुशक़्क़त में पड़ना गिरां है। जिससे मालूम हुआ कि हमारे राहत व तक्लीफ़ की हर वक़्त हुज़ूर को ख़बर है तब ही तो हमारी तक्लीफ़ से क़ल्बे मुबारक को तक्लीफ़ होती है। वरना अगर हमारी ख़बर ही न हो तो तक्लीफ़ कैसी? यह कलिमा भी हक़ीक़त में **अंफुसिकुम** का ब्यान है कि जिस तरह जिस्म के किसी हिस्से को दुख हो तो रूह को तक्लीफ़। इसी तरह तुमको दुख दर्द हो तो आक़ा को गिरानी। उसके करम के कुरबान सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम।

(5) **तरजमा :** और अगर जब वह अपनी जानों पर ज़ुल्म करें तो ऐ महबूब! तुम्हारे हुज़ूर हाज़िर हूं फिर अल्लाह से माफ़ी चाहें और रसूल उनकी शफ़ाअत फरमावें तो ज़रूर अल्लाह को बहुत तौबा क़बूल वाला मेहरबान पाएं।

इससे मालूम हुआ कि गुनहगारों की बख़्शिश की सबील सिर्फ़ यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम की बारगाह में हाज़िर हो कर शफ़ाअत माँगें और हुज़ूर करम करीमाना से शफ़ाअत फरमा दें। और यह तो मतलब हो सकता नहीं कि मदीना पाक में हाज़िर हों। वरना फिर हम फ़क़ीर परदेसी गुनहगारों की मग़्फ़िरत की क्या सबील होगी। और मालदार भी उम्र में एक दोबार ही पहुँचते हैं और गुनाह दिन रात करते हैं। लिहाज़ा तक्लीफ़ **मा फ़ौक़ुत्ताक़त** होगी। लिहाज़ा मतलब यह हुआ कि वह तो तुम्हारे पास मौजूद हैं तुम ग़ायब हो तुम भी हाज़िर हो जाओ कि इधर मुतवज्जेह हो जाओ।

मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम हर जगह हाज़िर हैं।

(6) **वमा अरसलनाका इल्ला रहमतल-लिल-आलमीन।** और हमने तुमको न भेजा मगर रहमत सारे जहाँ के लिए फिर फरमाता है **व रहमती वसेअत कुल्ला शैइन** और मेरी रहमत हर चीज़ को घेरे है।

मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम जहानों के लिए रहमत हैं और रहमत जहानों को मुहीत। लिहाज़ा हुज़ूर अलैहिस्सलाम जहानों को मुहीत।

ख़्याल रहे कि रब की शान है। रब्बुल-आलमीन। हबीब की शान है।

रहमतुल-लिल-आलमीन। मालूम हुआ कि अल्लाह जिसका रब, हुज़ूर अलैहिस्सलाम उसके लिए रहमत।

(7) **मा कानल्लाहु लेयुअज़्ज़िबहुम व अन्ता फ़ीहिम।** और अल्लाह का काम नहीं कि उन्हें अज़ाब करे जब तक ऐ महबूब तुम उनमें तशरीफ़ फरमा हो यानी अज़ाबे इलाही इसलिए नहीं आता कि उनमें आप मौजूद हैं और आम अज़ाब तो क़्यामत तक किसी जगह भी न आए।

इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम क़्यामत तक हर जगह मौजूद हैं। बल्कि रूहुल-बयान में फरमाया है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम हर सईद व शक़ी के साथ रहते हैं। इसका ज़िक्र तीसरी फ़स्ल में आता है। रब तआला फरमाता है। **वअलमू अन्ना फ़ीकुम रसूलुल्लाहे** जान लो कि तुम सब में रसूलुल्लाह तशरीफ़ फ़रमा हैं। यह तमाम सहाबा किराम से ख़िताब है और सहाब-ए-किराम तो मुख़्तलिफ़ जगह रहते हैं। मालूम हुआ कि हुज़ूर सब जगह उनके पास हैं।

(8) और इसी तरह हम इब्राहीम को दिखाते हैं सारी बादशाही आसमानों और ज़मीन की।

इससे मालूम हुआ कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को रब ने तमाम आलम का बचश्म सर मुलाहिज़ा करा दिया। हुज़ूर अलैहिस्सलाम का दरजा इन से आला है लिहाज़ा ज़रूरी है कि आपने भी आलम को मुशाहिदा फरमाया हो। इस आयत की तहक़ीक़ बहस इल्मे ग़ैब में गुज़र गई।

(9) **तरजमा :** ऐ महबूब क्या तुमने न देखा कि तुम्हारे रब ने उन हाथी वालों का क्या हाल क्या?

(10) **अलम तरा कैफ़ा फ़अ़ला रब्बुका बेआ़दिन।** क्या तुमने न देखा कि तुम्हारे रब ने क़ौमे आद के साथ क्या किया? क़ौमे आद और असहाबे फ़ील का वाक़ेया विलादते पाक से पहले का है। मगर फरमाया जाता है **अलम तरा** क्या आपने न देखा यानी देखा है। अगर कोई कहे कि कुरआने करीम कुफ़्फ़ार के बारे में फरमाता है **अलम यरौ कम अहलकना क़ब्लहुम मिन क़रनिन।** क्या उन्होंने यह न देखा कि हमने उन से पहले कितनी क़ौमें हलाक कर दीं।

कुफ़्फ़ार ने अपने से पहले कुफ़्फ़ार को हलाक होते न देखा था मगर फरमाया गया कि क्या न देखा उन्होंने तो उसका जवाब यह है कि इस आयत में उन कुफ़्फ़ार के उजड़े हुए मुल्क और तबाह शुदा मकानात का देखना मुराद है और चूंकि कुफ़्फ़ारे मक्का अपने सफ़रों में उन मक़ामात से गुज़रते थे। इसलिए फरमाया गया कि यह लोग उन चीज़ों को देख कर इबरत क्यों नहीं पकड़ते। हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने न तो ज़ाहिर में दुनिया की सियाहत फरमाई और न क़ौमे आद वग़ैरह के उजड़े हुए मुल्कों को बज़ाहिर

देखा। इसलिए मानना होगा कि यहाँ नूरे नुबूव्वत से देखना मुराद है।

(11) कुरआने करीम जगह-जगह फरमाता है। **व इज़ क़ाला रब्बुका लिल-मलाइकते।** जबकि आपके रब ने फ़रिश्तों से कहा **व इज़ क़ाला मूसा लेक़ौमेही।** जबकि मूसा अलैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम से कहा वग़ैरह वग़ैरह। इस जगह मुफ़स्सेरीन महज़ूफ़ निकालते हैं उज़्कुर यानी उस वाक़या को याद करो। और याद वह चीज़ दिलाई जाती है जो पहले से देखी भाली हो उधर तवज्जोह न हो। जिससे मालूम होता है कि यह तमाम गुज़िश्ता वाक़ेआत देखे हुए हैं।

रूहुल-बयान ने लिखा है कि हज़रत आदम के सारे वाक़ेआत हुज़ूर अलैहिस्सलाम मुशाहिदा फरमा रहे थे इसका ज़िक्र आगे आता है।

अगर कोई कहे कि बनी इसराईल से भी ख़िताब है। **इज़ नज्जैनाकुम मिन आले फ़िरऔना।** उस वक़्त को याद करो जबकि तुमको आले फ़िरऔन से नजात दी थी। तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम के ज़माना के यहूदी उस ज़माना में कहाँ थे मगर मुफ़स्सेरीन यहाँ भी **उज़्कुरू** महज़ूफ़ निकालते हैं। जवाब दिया जाएगा कि उन बनी इसराईल को तारीख़ी वाक़ेआत मालूम थे कुतुबे तवारीख़ पढ़ी थीं। उस तरफ उनको मुतवज्जेह किया गया। हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने न किसी से पढ़ा, न कुतुबे तवारीख़ का मुताला फरमाया और न किसी मुअर्रिख़ (तारीख़ लिखने वाले)की सोहबत में रहे, न तालीम याफ़्ता क़ौम में परवरिश पाई। अब आपको बजुज़ नूरे नुबूव्वत इल्म का ज़रिआ क्या था।

(12) नबी मुसलमानों से उनकी जानों से क़रीब हैं।

मौलवी क़ासिम साहब बानी मदरसा देवबन्द **तहज़ीरुन्नास** सफ़: 10 में लिखते हैं कि इस आयत में **औला** के मानी क़रीब तर तो आयत के माना हुए नबी मुसलमान से उनकी ज़ान से भी ज़्यादा क़रीब हैं सबसे ज़्यादा क़रीब हम से हमारी जान और जान से ज़्यादा क़रीब नबी अलैहिस्सलाम हैं और ज़्यादा क़रीब चीज़ भी छुपी रहती है। इस ज़्यादती कुर्ब की वजह से आँख से नज़र नहीं आते।

तंबीह : इस जगह कुछ लोग कहते हैं कि तुम मुक़ल्लिद हो और मुक़ल्लिद को आयात या अहादीस से दलील लेना जाइज़ नहीं। वह तो क़ौले इमाम पेश करे लिहाज़ा तुम सिर्फ़ इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह के क़ौल ही पेश कर सकते हो इसका जवाब चन्द तरह से है। एक यह कि आप ख़ुद हाज़िर व नाज़िर न होने का अक़ीदा रखते हैं। इस बारे में इमाम साहब का क़ौल पेश करें। दूसरे यह कि तक़्लीद की बहस में अर्ज़ कर चुके हैं कि मसअल-ए-अक़ाइद में तक़्लीद नहीं होती, बल्कि मसाइले फ़ेक़्हीया इज्तिहादिया में होती है। यह मसला अक़ीदा है। तीसरे यह कि सरीह आयात व अहादीस से मुक़ल्लिद भी इस्तिदलाल कर सकता है हाँ उन से मसाइल का इस्तिंबात

नहीं कर सकता।

तहावी में है –

जो अहकाम ज़ाहिरे नस व मुफ़स्सिर से समझे जाएं वह मुज्तहिद से ख़ास नहीं बल्कि उस पर आम उलमा क़ादिर हैं।

मुसिल्लमुस्सुबूत में है –

और आम आयात से दलील पकड़ना ख़लफ़ व सलफ़ में बग़ैर किसी इंकार के शाए है।

क़ुरआन भी फ़रमाता है। अगर तुम न जानते हो तो ज़िक्र वालों से पूछो। तो इज्तिहादी मसाइल हम नहीं जानते अइम्मा की तक़्लीद करते हैं और खुली आयात का तरजमा जानते हैं इसमें तक़्लीद नहीं।

चौथे यह कि मसला हाज़िर व नाज़िर पर फ़ुक़हा मुहद्देसीन और मुफ़स्सेरीन के अक़्वाल भी आइंदा फ़स्लों में आ रहे हैं। देखो और ग़ौर करो कि हाज़िर व नाज़िर का अक़ीदा सारे मुसलमानों का अक़ीदा है।

दूसरी फ़स्ल

हाज़िर व नाज़िर की अहादीस के बयान में

इसमें तमाम वह अहादीस पेश की जाएंगी जो मसअलए इल्मे ग़ैब में गुज़र चुकी हैं। ख़ुसूसन हदीस नम्बर **6, 7, 18, 19,** जिनका मज़्मून यह है कि हम तमाम आलम को मिस्ल कफ़े दस्त देख रहे हैं। हम पर हमारी उम्मत अपनी सूरतों में पेश हुई और हम उनके नाम, उनके बाप दादों के नाम, उनके घोड़ों के रंग जानते हैं वग़ैरह वग़ैरह। इसी तरह उनकी शरह में मुहद्देसीन के अक़्वाल गुज़र चुके हैं वह पेश किए जाएंगे ख़ुसूसन मिर्क़ात, ज़रक़ानी वग़ैरह की इबारतें इनके अलावा हसबे ज़ैल अहादीस और भी पेश की जाएंगी।

मिश्कात बाब **अस्बाते अज़ाबिल-क़ब्र** (स : 25) में है।

(1) **फ़यक़ूलाने मा कुन्ता तक़ूलु फ़ी हाज़र्रजुले (लेमुहम्मदिन)** नकीरैन मैयत से पूछते हैं कि तुम उनके (मुहम्मद रसूल) के बारे में क्या कहते थे।

अश्इतुल-लमआत में इसी हदीस के मातहत है यानी **हाज़र्रजुल** से मुराद हुज़ूर अलैहिस्सलाम की ज़ाते सतूदा सिफ़ात है।

अश्इतुल-लम्आत में यही हदीस – या क़ब्र में ज़ाहिरी ज़ुहूर आपकी ज़ाते शरीफ़ को हाज़िर करते हैं इस तरह कि क़ब्र में हुज़ूर अलैहिस्सलाम का वजूद मिसाली मौजूद कर देते हैं और उस जगह मुश्ताक़ाने ग़म्ज़दा को बड़ी ख़ुशख़बरी है कि अगर उस शादी की उम्मीद पर जान दे दें और ज़िन्दा क़बरों में चले जाएं तो इसका मौक़ा है।

हाशियाए मिश्कात में यही हदीस –

कहा गया है कि मैयत से हिजाब उठा दिए जाते हैं यहाँ तक कि नबी

करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखता है और यह बड़ी ही खुशख़बरी है।

क़स्तलानी शरह बुख़ारी जिल्द 3 सफ़: 390 **किताबुल-जनाइज़** में है। कहा गया है कि मैयत से हिजाब उठा दिए जाते हैं यहाँ तक कि नबी अलैहिस्सलाम को देखता है और यह मुसलमान के लिए बड़ी ख़ुशख़बरी है अगर ठीक रहे।

कुछ लोग कहते हैं। कि **हाज़र्रजुलु** मअहूदे ज़ेहनी की तरफ इशारा है कि वह मुर्दा से पूछते हैं कि वह जो तेरे ज़ेहन में मौजूद हैं उन्हें तू क्या कहता था? मगर यह दुरुस्त नहीं। क्योंकि अगर ऐसा होता तो काफिर मैयत से यह सवाल न होता क्योंकि वह तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम के तसव्वुर से ख़ालियुज़्ज़ेहन है। फिर काफिर इसके जवाब में यह न कहता। मैं नहीं जानता बल्कि पूछता कि तुम किसके बारे में सवाल करते हो? उसके ला अदरी कहने से मालूम होता है कि वह हुज़ूर को आँखों से देखता है। मगर पहचानता नहीं और यह इशारा ख़ार्जी (बाहरी) है।

इस हदीस और इबारतों से मालूम हुआ कि क़ब्र में हुज़ूर अलैहिस्सलाम का दीदार करा कर सवाल होता है कि तू इस शम्सुज़्ज़ुहा बदरुद्दुजा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जो तेरे सामने जलवा गर हैं क्या कहता था। **हाज़ा** इशारा क़रीब है। मालूम हुआ कि दिखा कर क़रीब करके फिर पूछते हैं। इसीलिए हज़राते सूफ़िया-ए-किराम और उश्शाक़ मौत की तमन्ना करते हैं और क़ब्र की पहली रात को दूल्हा के दीदार की रात कहते हैं। आला हज़रत फरमाते हैं –

जान तो जाते ही जाएगी क़्यामत यह है
कि यहाँ मरने पे ठहरा है नज़ारा तेरा

मौलाना आसी फरमाते हैं –

आज फ़ूले न समाएंगे कफ़न में आसी
जिसके जोयाँ थे है उस गुल की मुलाक़ात की रात

हमने अपने दीवान में अर्ज़ किया है –

मरक़द की पहली शब है दूल्हा की दीद का शब
उस शब के ईद सदक़े इसका जवाब कैसा

इसीलिए बुज़ुर्गाने दीन के विसाल के दिन को रोज़े उर्स कहते हैं। उर्स के मानी हैं शादी, क्योंकि **उरूस** यानी मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दूल्हा के दीदार का दिन है।

और एक वक़्त में हज़ारों मुर्दे दफन होते हैं तो अगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम हाज़िर व नाज़िर नहीं हैं तो हर जगह जलवा गरी कैसी? साबित हुआ कि हिजाब हमारी निगाहों पर है मलाइका इस हिजाब को उठा देते हैं जैसे कि

दिन में कोई ख़ेमा में बैठा हो और आफ़ताब उसकी निगाह से ग़ायब हो किसी ने उस ख़ेमा को ऊपर से हटा कर सूरज दिखा दिया।

(2) मिश्कात **बाबुत्तहरीस अला क्यामिल्लैल** सफ़: 109, में है।

एक शब हुज़ूर अलैहिस्सलाम घबराए हुए बेदार हुए फरमाते थे कि सुब्हानल्लाह इस रात में किस क़दर ख़ज़ाने और किस क़दर फ़ितने उतारे गए हैं।

इससे मालूम हुआ कि आइंदा होने वाले फ़ित्नों को बचश्म मुलाहिज़ा फरमा रहे हैं।

(3) मिश्कात **बाबुल-मोजज़ात** सफ़: 533, में अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ज़ैद और जाफ़र और इब्ने रवाहा की उनकी ख़बर आने से पहले लोगों को ख़बर मौत दे दी। फरमाया कि अब झण्डा ज़ैद ने ले लिया और वह शहीद हो गए। यहाँ तक कि झण्डा अल्लाह की तल्वार यानी ख़ालिद इब्ने वलीद ने लिया। यहाँ तक कि अल्लाह ने उनको फतह दे दी।

इससे मालूम हुआ कि बीरे मऊना जो मदीना मुनव्वरा से बहुत ही दूर है वहाँ जो कुछ हो रहा है उसको हुज़ूर मदीना से देख रहे हैं।

(4) मिश्कात जिल्द दोम **बाबुल-करामात** के बाद बाब वफ़ातुन्नबी अलैहिस्सलाम सफ़: 547, में है।

तुम्हारी मुलाक़ात की जगह हौज़े कौसर है उसको इसी जगह से देख रहा हूँ।

(5) मिश्कात बाबु तस्वियतुस्सफ़ **अक़ीमु सुफूफ़कुम फ़इन्नी अराकुम मिन वराई।** अपनी सफ़ें सीधी रखो क्योंकि हम तुमको अपने पीछे से भी देखते हैं।

(6) तिर्मिज़ी जिल्द दोम बाबुल-इल्मे बाब मा जाआ फ़ी ज़िहाबिल-इल्म में है।

तरजमा : हम हुज़ूर अलैहिस्सलाम के साथ थे कि आपने अपनी नज़र आसमान की तरफ उठाई और फरमाया कि यह वह वक़्त है जबकि इल्म लोगों से छीन लिया जाएगा। हत्ता कि उस पर बिल्कुल क़ाबू न पाएंगे।

इस हदीस की शरह में मुल्लाह अली क़ारी मिर्क़ात **किताबुल-इल्म** में फरमाते हैं।

जब हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने आसमान की तरफ़ देखा तो आप पर आपकी मौत का क़ुर्ब ज़ाहिर हो गया तो उसकी ख़बर दे दी।

(7) मिश्कात **शुरूए बाबुल-फ़ितन** फस्ले अव्वल में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने मदीना पाक की एक पहाड़ी पर खड़े हो कर सहाबाए

किराम से पूछा कि जो मैं देख रहा हूँ क्या तुम भी देखते हो? अर्ज़ किया कि नहीं फरमाया **फ़इन्नी अरल-फ़ित्ना तक़ओ ख़िलाला बुयूतेकुम कवक़अ़िल-मतरे।** मैं तुम्हारे घरों में बारिश की तरह फ़ित्ने गिरते देखता हूँ। मालूम हुआ कि यज़ीदी व हुज्जाजी फ़ित्ने जो अरसे के बाद होने वाले थे उन्हें भी मुलाहिज़ा फरमा रहे थे।

इन अहादीस से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम की चश्मे हक़ में आइंदा के वाक़ेआत और दूर क़रीब हालात और हौज़े कौसर जन्नत व दोज़ख़ वग़ैरह को मुलाहिज़ा फरमाते हैं हुज़ूर अलैहिस्सलाम के तुफ़ैल हुज़ूर के ख़ुद्दाम को भी ख़ुदाए क़ुद्दूस यह क़ुदरत व इल्म अता फरमाता है।

(8) मिश्कात जिल्द दोम **बाबुल-करामात** में है कि उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने एक लश्कर का सरदार सारिया को बना कर नहाविन्द भेजा।

उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु मदीना मुनव्वरा में ख़ुतबा पढ़ते हुए पुकारने लगे कि ऐ सारिया पहाड़ को लो।

कुछ अरसा के बाद उस लश्कर से क़ासिद आए उन्होंने बयान किया कि हमको दुश्मन ने शिकस्त दे दी थी कि हमने किसी पुकारने वाले की आवाज़ सुनी जो कह रहा था कि सारिया पहाड़ को लो। तो हमने पहाड़ को अपनी पुश्त के पीछे लिया। तब ख़ुदा ने उनको शिकस्त दे दी।

(9) इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने फ़िक़हए अकबर और अल्लामा जलालुद्दीन सुयूती ने जामे कबीर में हारिस इब्ने नौमान और हारिसा बिन नौमान रज़ि अल्लाहु अन्हुमा से रिवायत की कि एक बार मैं हुज़ूर अलैहिस्सलाम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो सरकार ने मुझसे सवाल फ़रमाया कि ऐ हारिस तुमने किस हाल में दिन पाया। मैंने अर्ज़ किया कि सच्चा मोमिन होकर फरमाया कि तुम्हारे ईमान की हक़ीक़त क्या है? मैंने अर्ज़ किया।

तरजमा : मैं गोया अर्शे इलाही को ज़ाहिरन देख रहा हूँ और गोया जन्नतियों को एक दूसरे से जन्नत में मिलते हुए और दौज़ख़ियों को दोज़ख़ में शोर मचाते देखता हूँ।

इसी क़िस्सा को मसनवी शरीफ़ में नक़्ल किया है –

तरजमा : मेरे सामने आठ बहिश्त और सात दोज़ख़ ऐसे ज़ाहिर हैं जैसे हिन्दू के सामने बुत। मैं एक मख़्लूक़ को ऐसा पहचानता हूँ जैसे चक्की में जौ और गेहूँ।

कि जन्नती कौन है और दोज़ख़ी कौन। मेरे सामने मछली और चूंटी की तरह हैं।

चुप रहूं या कुछ और कहूं। हुज़ूर ने उनका मुँह पकड़ लिया कि बस।

जब उस आफ़ताब के ज़र्रों की नज़र का यह हाल कि जन्नत व दोज़ख़,

अर्श व फ़र्श, जन्नती व दोज़ख़ी को अपनी आँखों से देखते हैं तो उस आफ़ताबे कौनैन की नज़र का क्या पूछना है।

तीसरी फ़स्ल

हाज़िर व नाज़िर का सुबूत फुक़हा और उलमा-ए-उम्मत के अक़्वाल से

दुर्रे मुख़्तार जिल्द सौम बाबुल-मुरतद बहस करामाते औलिया में है या हाज़िरू या नाज़िरू लैसा बेकुफ़िरन ऐ हाज़िर ऐ नाज़िर कहना कुफ़्र नहीं है।

शामी में इसी के मातहत है।

क्योंकि हुज़ूर बमाना इल्मे मशहूर है। कुरआन में है कि नहीं होता तीन का मशवरा मगर रब उनका चौथा होता है और नज़र बामाना देखना है रब फरमाता है क्या नहीं जानता कि अल्लाह देखता है पस इसके मानी यह हुए कि ऐ आलम ऐ देखने वाले।

दुर्रे मुख़्तार जिल्द अव्वल **बाबु कैफ़ियतुस्सलात** में है।

तरजमा : अत्तहीयात के लफ़्ज़ों में ख़ुद कहने की नीयत करे गोया नमाज़ी रब को तहीयह और ख़ुद नबी अलैहिस्सलाम को सलाम अर्ज़ कर रहा है।

शामी में इसी इबारत के मातहत फरमाते हैं।

तरजमा : यानी अत्तहीयात में मेअराज के उस कलाम के क़िस्सा की नीयत न करे जो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और रब तआला और मलाइका के दरम्यान हुआ।

फुक़हा की इन इबारात से मालूम हुआ कि ग़ैरुल्लाह को हाज़िर व नाज़िर कहना कुफ़्र नहीं है। और अत्तहीयात में हुज़ूर अलैहिस्सलाम को जान कर सलाम अर्ज़ करे। अत्तहीयात के मुतअल्लिक़ और भी इबारात आती हैं। मज्मउल-बरकात में शैख़ अब्दुल-हक़ मुहद्दिस देहलवी फरमाते हैं "हुज़ूर अलैहिस्सलाम उम्मत के हालात व आमाल पर मुत्तला (बाख़बर) हैं और हाज़िरीन बारगाह को फ़ैज़ पहुँचाने वाले और हाज़िर व नाज़िर हैं।

शैख़ अब्दुल-हक़ मुहद्दिस देहलवी अपने रिसाला में फरमाते हैं।

इस इख़्तिलाफ़ व मज़ाहिब के बावजूद जो उलमा-ए-उम्मत में है इसमें किसी का इख़्तिलाफ़ नहीं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम हक़ीक़ी ज़िन्दगी से बग़ैर तावील व मजाज़ के एहतमाल के बाक़ी और दाइम हैं और उम्मत के आमाल पर हाज़िर व नाज़िर हैं और हक़ीक़त के तलबगार और हाज़िरीन बारगाह को फ़ैज़ रसां और मुरब्बी।

शैख़ अब्दुल-हक़ मुहद्दिस देहलवी **शरह फुतूहुल-ग़ैब** सफ़: 333 में फरमाते हैं। "अंबिया अलैहिमुस्सलाम दुनियावी हक़ीक़ी ज़िन्दगी से ज़िन्दा

और बाक़ी और अमल दरआमद फरमाने वाले हैं इसमें कोई कलाम नहीं।

मिर्क़ात **बाब मा युक़ालु इन्दा मन हज़रहुल-मौतु** के आख़िर में है।

यानी औलिया अल्लाह एक आन में चन्द जगह हो सकते हैं और उनके बयक वक़्त अजसाम (जिस्म) हो सकते हैं।

शिफ़ा में है –

जब घर में कोई न हो तो तुम कहो कि ऐ नबी तुम पर सलाम और अल्लाह की रहमतें और बरकतें हों।

इसके मातहत मुल्ला अली क़ारी शरह शिफ़ा में फरमाते हैं।

क्योंकि नबी अलैहिस्सलाम की रूहे मुबारक मुसलमानों के घरों में हाज़िर है।

शैख़ अब्दुल-हक़ देहलवी अलैहिर्रहमा **मदारिजुन्नबुव्वह** में फरमाते हैं।

"हुज़ूर अलैहिस्सलाम को याद करो और दरूद भेजो और हालते ज़िक्र में ऐसे रहो कि हुज़ूर हालते हयात में तुम्हारे सामने हैं और तुम उनको देखते हो अदब और इजलाल और ताज़ीम व हैबत व हया से रहो और जानो कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम देखते हैं और सुनते हैं तुम्हारे कलाम को क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम सिफ़ाते इलाही से मौसूफ़ हैं और अल्लाह की एक सिफ़त यह है कि मैं अपने ज़ाकिर का हमनशीं हूँ।

इमाम इब्ने हाज मदख़ल में और इमाम क़स्तलानी मवाहिब जिल्द दोम सफ़ः 387 फस्ल सानी **ज़ियारतु क़ब्रेही अशरीफ़** में फरमाते हैं।

तरजमा : हमारे उलमा ने फरमाया कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम की ज़िन्दगी और वफ़ात में कोई फ़र्क़ नहीं अपनी उम्मत को देखते हैं और उनके हालात व नीयात और इरादे और दिल की बातों को जानते हैं यह आपको बिल्कुल ज़ाहिर हैं इसमें पोशीदगी नहीं।

मिरक़ात शरह मिश्कात में मुल्ला अली क़ारी फ़रमाते हैं।

इमाम ग़ज़ाली ने फरमाया कि जब तुम मस्जिदों में जाओ तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम को सलाम अर्ज़ करो क्योंकि आप मस्जिदों में मौजूद हैं।

नसीमुर्रियाज़ शरह शिफ़ा क़ाज़ी अयाज़ जिल्द सोम के आख़िर में है।

तरजमा : अंबिया-ए-किराम जिसमानी और ज़ाहिरी तौर पर बशर के साथ हैं और उनके बातिन और रूहानी क़ुव्वतें मलकी हैं इसलिए वह ज़मीन के मश्रिक़ों और मग़्रिबों को देखते हैं और आसमानों की चिड़ चिड़ाहट सुनते हैं और जिब्रील की ख़ुश्बू पा लेते हैं जब वह उन पर उतरते हैं।

दलाइलुल-ख़ैरात के ख़ुतबा में है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम से पूछा गया कि आप से दूर रहने वालों और बाद में आने वालों के दरूदों का आपके नज़्दीक क्या हाल है तो फरमाया कि हम मुहब्बत वालों के दरूद को ख़ुद सुनते हैं और उनको

पहचानते है। और ग़ैर मुहिब्बीन का दरूद हम पर पेश किया जाता है।

शिफ़ा क़ाज़ी अयाज़ जिल्द दोम में है।

अल्क़मा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है कि जब मैं मस्जिद में दाख़िल होता हूँ तो कहता हूँ कि सलाम हो आप पर ऐ नबी और अल्लाह की रहमत और बरकात। इसकी ताईद अबू दाऊद व इब्ने माजा बाबुद्दुआ इन्दा दुख़ूलिल-मस्जिद की हदीस से भी होती हैं।

मदारिजुन्नबुव्वह सफ़: 450 जिल्द दोम क़िस्म चहारुम वस्ले हयाते अंबिया में है।

तरजमा : इसके बाद अगर कहें कि रब तआला ने हुज़ूर के जिस्मे पाक को ऐसी हालत व कुदरत बख़्शी है कि जिस मकान में चाहें तशरीफ़ ले जाएं ख़्वाह बेऐनेही उस जिस्म से ख़्वाह जिस्म मिसाली से ख़्वाह आसमान पर ख़्वाह क़ब्र में तो दुरुस्त है। क़ब्र से हर हाल में ख़ास निस्बत रहती है।

मुसन्निफ़ा शैख़ शहाबुद्दीन सहरवरदी सफ़: 165 में है।

तरजमा : "पस चाहिए कि बन्दा जिस तरह हक़ तआला को हर हाल में ज़ाहिर व बातिन तौर पर वाक़िफ़ जानता है इसी तरह हुज़ूर अलैहिस्सलाम को भी ज़ाहिर व बातिन हाज़िर जाने ताकि आपकी सूरत का देखना आपकी हमेशा ताज़ीमे वक़ार करने और उस बारगाह के अदब की दलील हो जाए। और आपकी ज़ाहिर व बातिन मुख़ालिफ़त से शर्म करे और हुज़ूर अलैहिस्सलाम की सोहबते पाक के अदब का कोई दक़ीक़ा न छोड़े।

फ़ुक़हा व उलमा-ए-उम्मत के इन अक़्वाल से हुज़ूर अलैहिस्सलाम का हाज़िर व नाज़िर होना बख़ूबी वाज़ेह हुआ। अब हम आपको यह दिखाते हैं कि नमाज़ी नमाज़ में हुज़ूर अलैहिस्सलाम के लिए क्या ख़्याल रखे। इसके मुतअल्लिक़ हम दुर्रे मुख़्तार और शामी की इबारतें तो शुरू फ़स्ल में पेश कर चुके हैं। दीगर बुज़ुर्गाने दीन की और इबारतें सुनिए और अपने ईमान को ताज़ा कीजिए।

अश्इतुल-लमआत किताबुस्सलात बाबुत्तशह्हुद और **मदारिजुन्नबुव्वह** जिल्द अव्वल सफ़: 135 बाब पंजुम ज़िक्रे फ़ज़ाइल आं हज़रत में शैख़ अब्दुल-हक़ मुहद्दिस देहलवी फरमाते हैं।

कुछ आरेफ़ीन ने कहा है कि अत्तहीयात में यह ख़िताब इसलिए है कि हक़ीक़ते मुहम्मदीया मौजूदात के ज़र्रा-ज़र्रा में और मुम्किनात की हर फ़र्द में सरायत किए है पस हुज़ूर अलैहिस्सलाम नमाज़ियों की ज़ात में मौजूद और हाज़िर हैं नमाज़ी को चाहिए कि इस मानी से आगाह रहे और इस शुहूद से ग़ाफ़िल न हो। ताकि क़ुर्ब के नूर और मारिफ़त के भेदों से कामयाब हो जाए।

इहया-उल-उलूम जिल्द अव्वल, बाब चहारुम फस्ल सोम नमाज़ की बातिनी शर्तों में इमाम ग़ज़ाली फरमाते हैं।

तरजमा : और अपने दिल में नबी अलैहिस्सलाम को और आपकी ज़ात पाक को हाज़िर जानो और कहो। **अस्सलामु अलैका ऐयुहन्नबीयु व रहमतुल्लाहे व बरकातुहू।**

इसी तरह मिर्क़ात **बाबुत्तशह्हुद** में है।

मिस्कुल-ख़िताम में नवाब सिद्दीक़ हसन ख़ाँ भोपाली वहाबी सफ़: 243 पर वही इबारत लिखते हैं जो हमने अभी इश्अतुल-लमआत की अत्तहीयात के बारे में लिखी कि नमाज़ी को चाहिए कि हुज़ूर को हाज़िर व नाज़िर जान कर अत्तहीयात में सलाम करे। फिर यह शेअर लिखते हैं।

इश्क़ की राह में दूर व क़रीब की मंज़िल नहीं है। मैं तुमको देखता हूँ और दुआ करता हूँ।

अल्लामा शैख़ मुजद्दिद फरमाते हैं।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम को नमाज़ में ख़िताब किया गया गोया कि यह इस तरफ़ इशारा है कि अल्लाह तआला आपकी उम्मत में से नमाज़ियों का हाल आप पर ज़ाहिर फरमा देता है हत्ता कि आप मिस्ल हाज़िर के होते हैं। उसके आमाल को समझने में और इसलिए कि आपकी हाज़िरी का ख़्याल ज़्यादतीए ख़ुशूअ व ख़ुज़ूअ का सबब हो जाए।

मसलए हाज़िर व नाज़िर पर कुछ फ़िक़्ही मसाइल भी मौक़ूफ़ हैं। फ़ुक़हा फरमाते हैं कि ज़ौज (शौहर) मश्रिक़ में हो और ज़ौजा (बीवी) मग़्रिब में और बच्चा पैदा हो। और ज़ौज कहता है कि बच्चा मेरा है तो बच्चा उसी का है कि शायद यह वली अल्लाह हो और करामत से अपनी बीवी के पास पहुँचा हो। देखो शामी जिल्द दोम बाब सुबूतुन्नसब।

शामी जिल्द सौम **बाबुल-मुर्तद** मतलब करामते औलिया में है।

तरजमा : और रास्ता तय करना भी उसी करामत में से है हुज़ूर के फ़रमाने की वजह से कि मेरे लिए ज़मीन समेट दी गई। इस पर वह मसअला दलालत करता है जो फ़ुक़हा ने कहा कि कोई शख़्स मश्रिक़ में हो और मग़्रिब में रहने वाली औरत से निकाह करे फिर वह औरत बच्चा जने तो बच्चा उस मर्द से मुल्हक़ होगा और ततार ख़ानिया में है कि यह मसला इस करामत के जाइज़ होने की ताईद करता है।

शामी यही मक़ाम –

तरजमा : इंसाफ़ की बात वही है जो इमाम नसफ़ी ने उस वक़्त कही जबकि उन से सवाल किया गया कि कहा जाता है कि काबा एक वली की ज़ियारत करने जाता है क्या यह कहना जाइज़ है तो उन्होंने फरमाया कि औलिया अल्लाह के लिए ख़िलाफ़े आदत काम करामत के तरीक़ा पर अह्ले सुन्नत के नज़्दीक जाइज़ है।

इस इबारत से मालूम हुआ कि काबाए मुअज़्ज़मा भी औलिया अल्लाह

की ज़ियारत करने के लिए आलम में चक्कर लगाता है।

तफ़सीरे रूहुल-बयान सूरः मुल्क के आख़िर में है।

तरजमा : इमाम ग़ज़ाली ने फरमाया है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को दुनिया में सैर फरमाने का अपने सहाबा किराम की रूहों के साथ इख़्तियार है आपको बहुत से औलिया अल्लाह ने देखा है।

इंतिबाहुल-अज़्किया फ़ी हयातिल-औलिया में अल्लामा जलालुद्दीन सुयूती सफ़ः 7 पर फरमाते हैं।

तरजमा : अपनी उम्मत के आमाल में निगाह रखना उनके लिए गुनाहों से इस्तिग़फ़ार करना उन से दफ़ए बला की दुआ फरमाना अतराफ़े ज़मीन में आना जाना इसमें बरकत देना और अपनी उम्मत में कोई सालेह आदमी मर जाए तो उसके जनाज़े में जाना यह चीज़ें हुज़ूर अलैहिस्सलाम का मश्ग़ला हैं जैसे कि इस पर अहादीस और आसार आए हैं।

इमाम ग़ज़ाली **अल-मुंक़िज़ु मिनज़्ज़लाले** में फरमाते हैं। "साहिबे दिल हज़रात जागते हुए अंबिया व मलाइका को देखते हैं और उन से बातचीत करते हैं।

इमाम जलालुद्दीन सुयूती शरह सुदूर में फरमाते हैं।

तरजमा : अगर लोग यह अक़ीदा रखें कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम की रूह और आपकी मिसाल मौलूद शरीफ़ पढ़ते में और ख़त्मे रमज़ान और नअ़त ख़्वानी करते वक़्त आती है तो जाइज़ है।

मौलवी अब्दुल-हई साहब रिसाला **तरावीहुल-जनान बेतशरीह हुक्मे शरबुद्दुख़ान** में फरमाते हैं कि एक शख़्स नअ़त ख़्वाँ था और हुक़्क़ा भी पीता था उसने ख़्वाब में देखा कि नबी अलैहिस्सलाम फरमाते हैं कि जब तुम मौलूद शरीफ़ पढ़ते हो तो हम रौनक़े अफ़रोज़ मज्लिस होते हैं मगर जब हुक़्क़ा आ जाता है तो हम फौरन मज्लिस से वापस हो जाते हैं।

इन इबारात से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम की निगाहे पाक हर वक़्त आलम के ज़र्रा-ज़र्रा पर है और नमाज़, तिलावते क़ुरआन, महफ़िले मीलाद शरीफ़ और नअ़त ख़्वानी की मजालिस में इसी तरह सालेहीन की नमाज़े जनाज़ा में ख़ास तौर पर अपने जिस्म पाक से तशरीफ़ फरमा होते हैं।

तफ़सीर रूहुल—बयान पारा 26 सूरः फ़तह ज़ेरे आयत —

तरजमा : चूंकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम अल्लाह की पहली मख़्लूक़ हैं इसलिए उसकी वहदानियत के गवाह हैं और उन चीज़ों को मुशाहदा करने वाले हैं जो अद्म से वजूद में आईं, अरवाह, नुफ़ूस, अजसाम, मअदनियात, नबातात, हैवानात, फ़रिश्ते और इंसान वग़ैरह ताकि आप पर रब के वह असरार और अजाइब मख़्फ़ी (छुपी) न रहें जो किसी मख़्लूक़ के लिए मुम्किन

हैं उसी जगह कुछ आगे चल कर फरमाते हैं।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने हज़रत आदम का पैदा होना उनकी ताज़ीम होना और ख़ता पर जन्नत से अलाहिदा होना और फिर तौबा क़बूल होना आख़िर तक के उनके सारे मुआमलात जो उन पर गुज़रे सबको देखा और इब्लीस की पैदाइश और जो कुछ उस पर गुज़रा उसको भी देखा।

इससे मालूम हुआ कि आलमे ज़ुहूर में जल्वा गरी से पहले हर एक के एक-एक हालात का मुशाहदा फरमाया।

यही साहबे रूहुल-बयान कुछ आगे चल कर उसी मक़ाम पर फरमाते हैं।

तरजमा : कुछ अकाबिर ने फ़रमाया कि हर सईद के साथ हुज़ूर अलैहिस्सलाम की रूह होती है और यही **रक़ीब अतीद** से मुराद है। और जिस वक़्त रूहे मुहम्मदी की तवज्जोह दाइमी हज़रत आदम से हट गई तब उन से निसयान और उसके नताइज हुए। एक हदीस में है कि जब ज़ानी ज़िना करता है तो उससे ईमान निकल जाता है।

रूहुल-ब्यान में उसी जगह है कि ईमान से मुराद तवज्जोह मुस्तफ़ा है यानी जो मोमिन कोई अच्छा काम करता है तो हुज़ूर की तवज्जेह की बरकत से करता है, और जो गुनाह करता है वह उसकी तरफ की बेतवज्जोही की वजह से होता है।

इससे हुज़ूर अलैहिस्सलाम का हाज़िर व नाज़िर होना बख़ूबी साबित हुआ।

इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि. अल्लाहु अन्हु क़सीदए नौमान में फ़रमाते हैं।

तरजमा : जब मैं सुनता हूँ तो आप ही का ज़िक्र सुनता हूँ। और जब देखता हूँ तो आपके सिवा कुछ नज़र नहीं आता।

इमाम साहब कूफ़ा में रह कर हुज़ूर अलैहिस्सलाम को हर तरफ देखते हैं।

चौथी फ़स्ल

हाज़िर व नाज़िर का सुबूत मुख़ालेफ़ीन की किताबों से

तहज़ीरुन्नास सफः 10 में मौलवी क़ासिम साहब बानी मदरसा देवबन्द कहते हैं कि **अन्नबीयु औला बिल-मुमिनीना मिन अंफ़ुसेहिम।** को बाद लिहाज़ सिला **मिन अंफ़ुसेहिम** के देखिए तो यह बात साबित होती है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को अपनी उम्मत के साथ वह क़ुर्ब है कि उनकी जानों को भी उनके साथ हासिल नहीं। क्योंकि औला बमाना अक़रब है।

तर्जमा : सिराते मुस्तक़ीम मुसन्निफ़ा मौलवी इस्माईल देहलवी सफ़: 13 में चौथी हिदायते इश्क़ के बयान में कोयले और आग की मिसाल दे कर कहते हैं। "इसी तरह जब उस तालिब के नफ़्स कामिल को रहमानी कशिश और जज़्ब की मौजे अहदियत के दरियाओं की तह में खींच कर ले जाती हैं तो **अनल-हक़** और **लैसा फ़ी जुब्बती सिवल्लाह।** का आवाज़ा उससे सादिर होने लगता है और यह हदीसे क़ुदसी **कुन्ता सम्अहुल्लज़ी यसमऊ बिहि व बसार हुल्ललज़ी युब्सिरु बिहि व यदहुल लती यक्तिशू बिहा** एक रिवायत के रू से **लेसानहुल्लज़ी यतकल्लमु बेही** इसी हालत की हिकायत है। इस इबारत में साफ़ इक़रार है कि जब इंसान **फ़ना फ़िल्लाह** हो जाता है तो खुदाई ताक़त से देखता सुनता और छूता और बोलता है यानी आलम की हर चीज़ को देखता है हर दूर व नज़्दीक की चीज़ों को पकड़ता है यही हाज़िर व नाज़िर के मानी हैं। और जब मामूली इंसान **फ़ना फ़िल्लाह** होकर उस दरजा में पहुँच जाए तो सैयदुल-इंस वल-जिनान अलैहिस्सलातु वस्सलाम से बढ़ कर **फ़ना फिल्लाह** कौन हो सकता है। तो बदरजा औला हुज़ूर अलैहिस्सलाम हाज़िर व नाज़िर हुए।

इमदादुस्सुलूक सफ़: 10 में मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही लिखते हैं "मुरीद यह भी यक़ीन से जाने कि शैख़ की रूह एक जगह में क़ैद नहीं है मुरीद जहाँ भी हो दूर या नज़्दीक, अगरचे पीर के जिस्म से दूर है लेकिन पीर की रूहानियत दूर नहीं। जब यह बात पुख़्ता हो गई तो हर वक़्त पीर की याद रखे ताकि दिली तअल्लुक़ उससे ज़ाहिर हो और हर वक़्त उससे फ़ाइदा लेता रहे। मुरीद वाक़या की हालत में पीर का मुहताज रहता है शैख़ को अपने दिल में हाज़िर करके ज़बाने हाल से उससे मांगे पीर की रूह अल्लाह के हुक्म से ज़रूर इल्क़ा करेगी मगर पूरा तअल्लुक़ शर्त है और शैख़ से उसी तअल्लुक़ की वजह से दिल की ज़बान गोया हो जाती है और हक़ तआला की तरफ राह खुल जाती है और हक़ तआला उसको साहिबे इल्हाम कर देता है।

इस इबारत में हस्बे ज़ैल फ़ाइदे हैं। (1) पीर का मुरीद के पास हाज़िर व नाज़िर होना। (2) मुरीद का तसव्वुरे शैख़ में रहना। (3) पीर का हाजत रवा होना। (4) मुरीद ख़ुदा को छोड़ कर अपने पीर से मांगे। (5) पीर मुरीद को इल्क़ा करता है। (6) पीर मुरीद का दिल जारी कर देता है।

जब पीर में यह ताक़तें हैं तो जो मलाइका और इंसानों के शैख़ुश शुयूख़ सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उन में यह छेः सिफ़ात मानना क्यों शिर्क है? इस इबारत ने तो मुख़ालेफ़ीन के सारे मज़हब पर पानी ही फेर दिया **वलिल्लाहिल-हम्द** सब तक़्वियतुल-ईमान ख़त्म।

हिफ़्ज़ुल–ईमान सफ़: 7 में मौलवी अशरफ़ अली साहब लिखते हैं कि अबू यज़ीद से पूछा गया. तय ज़मीन की निस्बत। तो आपने फरमाया यह कोई चीज़ कमाल की नहीं। देखो इब्लीस मश्रिक़ से मग़्रिब तक एक लहज़ा में क़तअ कर जाता है।

इस इबारत में साफ इक़रार है कि आनन फानन मश्रिक़ से मग़्रिब तक पहुँच जाना अह्लुल्लाह को तो क्या कुफ़्फ़ार व शयातीन (शैतान) से भी मुम्किन है बल्कि होता रहता है और यह हाज़िर व नाज़िर के मानी हैं। तक़्वियतुल-ईमान के लिहाज़ से शिर्क है।

मिस्कुल-ख़िताम मुसन्निफ़ा नवाब सिदीक़ हसन ख़ाँ भोपाली वहाबी की इबारत हम बहसे सुबूत में पेश कर चुके हैं कि वह कहते हैं कि अत्तहीयात में **अस्सलामु अलैका** से ख़िताब इसलिए है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम आलम के ज़र्रा-ज़र्रा में मौजूद हैं लिहाज़ा नमाज़ी की ज़ात में मौजूद हाज़िर हैं।

इन इबारात से हुज़ूर अलैहिस्सलाम का हाज़िर व नाज़िर होना बख़ूबी वाज़ेह है।

पाँचवीं फ़स्ल

हाज़िर व नाज़िर होने का सुबूत दलाइले अक़्लीया से

अह्ले इस्लाम का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ात जामे कमालात है यानी जिस क़दर कमालात कि दीगर अंबिया-ए-किराम या आइंदा औलिया-ए-इज़ाम या किसी मख़्लूक़ को मिल चुके या मिलेंगे वह सब बल्कि उन से भी ज़्यादा हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अता फ़रमा दिए। बल्कि हुज़ूर ही के ज़रिआ उनको मिले। कुरआने करीम फ़रमाता है **फ़बेहुदा हुमुक़्तदेही** आप उन सब की राह चलो। इसकी तफ़्सीर रूहुल-बयान में है **फ़ज़मअल्लाहु कुल्ला ख़स्लतिन फ़ी हबीबेही अलैहिस्सलाम** अल्लाह ने हर नबी की ख़स्लत हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अता फरमाई।

और मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब **तहज़ीरुन्नास** सफ़: 49 में लिखते हैं और अंबिया रसूलुल्लाह सल्लाहु अलैहि व सल्लम से लेकर उम्मतों को पहुँचाते है। ग़रज़ और अंबिया में जो कुछ है वह ज़िल्ल और अक्से मुहम्मदी हैं। इस क़ायदे पर बहुत से दलाइले कुरआन व अहादीस व अक़्वाल उलमा से पेश किए जा सकते हैं। मगर चूंकि मुख़ालेफ़ीन इसको मानते हैं इसलिए इस पर ज़्यादा ज़ोर देने की ज़रूरत नहीं। तो पहला क़ायदा यह मुसल्लम है कि सिफ़ते कमाल किसी मख़्लूक़ को मिली वह तमाम अला वजहिल-कमाल हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को अता हुई और हर जगह हाज़िर व नाज़िर होना तो बहुत सी मख़्लूक़ात को अता किया गया। मानना पड़ेगा कि यह

सिफ़त भी हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को अता हुई।

अब हम बताते हैं कि हाज़िर व नाज़िर होना किस-किस मख़्लूक़ को अता हुआ। हमने इस बहस हाज़िर व नाज़िर के मुक़द्दमा में अर्ज़ कर दिया है कि हाज़िर व नाज़िर होने के तीन माना हैं। एक जगह रह कर तमाम आलम को मिस्ल कफ़े दस्त के देखना। एक आन में आलम की सैर कर लेना और सैकड़ों कोस पर किसी की मदद कर देना। इस जिस्म या जिस्मे मिसाली का बहुत सी जगह मौजूद होना। यह सिफ़ात बहुत सी मख़्लूक़ात को मिली हैं।

(1) रूहुल-बयान और ख़ाज़िन व तफ़्सीरे कबीर वग़ैरह तफ़ासीर में पारा 7 सूरः इंआम पर ज़ेरे आयत–

तरजमा : यानी मलकुल-मौत के लिए सारी ज़मीन तश्त की तरह कर दी गई

है कि जहाँ से चाहें ले लें।

इसी रूहुल-बयान में उसी जगह है।

मलकुल-मौत पर रूहें क़ब्ज़ करने में कोई दुश्वारी नहीं अगरचे रूहें ज़्यादा हों और मुख़्तलिफ़ जगह में हों।

तफ़्सीर ख़ाज़िन में इसी आयत के मातहत है।

कोई ख़ेमा और मकान वाले नहीं मगर मलकुल-मौत हर रोज़ उनके पास दो बार जाते हैं।

मिश्कात **बाब फ़ज़्लिल-अज़ान** में है कि जब अजान और तक्बीर होती है तो शैतान 36 मील भाग जाता है फिर जहाँ यह ख़त्म हुई कि फिर मौजूद उस नारी (जहन्नमी) की रफ़्तार का यह आलम है।

जब हम सोते हैं तो हमारी एक रूह जिस्म से निकल कर आलम में सैर करती है जिसे रूह सैरानी कहते हैं। जिसका सुबूत कुरआन पाक में है। व **युम्सिकु उख़रा** और जहाँ किसी ने जिस्म के पास खड़े हो कर उसको उठाया वही रूह जो अभी मक्का मुअज़्ज़मा या मदीना में थी आनन फानन जिस्म में आकर दाख़िल हो गई और आदमी बेदार हो गया।

रूहुल-बयान ज़ेरे आयत **वहुवल्लज़ी यतवफ़्फ़ाकुम बिल्लैले** है।

तरजमा : यानी जब इंसान नींद से बेदार होता है तो रूह जिस्म में एक लहज़ा से कम में लौट आती है।

हमारा नूरे नज़र-आन की आन में आसमानों पर जा कर ज़मीन पर आ जाता है हमारा ख़्याल एक–आन में तमाम आलम की सैर कर लेता है। बिजली तार टेलीफोन और लाउडिस्पीकर की कुव्वत का यह आलम है कि आधे सेकण्ड में ज़मीन के क़तर को तय कर लेते हैं। हज़रत जिब्रील की रफ़्तार का यह आलम है कि हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम जब आधे कुएँ से

नीचे चले और हज़रत जिब्रील सिदरा से चले यूसुफ़ अलैहिस्सलाम अभी कुएँ की तह को न पहुँचे थे कि जिब्रील सिदरा से वहाँ पहुँच गए। देखो तफ़सीर रूहुल-बयान ज़ेरे आयत **अन यज्अलूहु फ़ी ग़यावतिल-जुब्बे** हज़रत ख़लील ने हलक़े इस्माईल पर छुरी चलाई अभी छुरी रवाना न हुई थी कि जिब्रील सिदरा से मआ दुंबा, ख़लीलुल्लाह की ख़िदमत में हाज़िर हुए। हज़रत सुलेमान के वज़ीर आसिफ़ इब्ने बर्ख़िया ने एक पलक झपकने से पहले बिल्क़ीस का तख़्त यमन से लाकर शाम में हज़रत सुलेमान की ख़िदमत में हाज़िर कर दिया। जिसका सुबूत कुरआन में है। **अना आतीका वेही क़ब्ला अन यरतद्दा इलैका तरफुका।** मालूम हुआ कि आसिफ़ को यह भी ख़बर थी कि तख़्त कहाँ है। ख़्याल करना चाहिए कि पलक झपकने से पहले यमन गए भी और लौट भी आए और इतना वज़नी तख़्त भी ले आए। रही यह बहस कि हज़रत सुलेमान में तख़्त लाने की ताक़त थी या कि नहीं। वह हम इसी बहस के दूसरे बाब में बयान करेंगे। **इंशाअल्लाह।**

मेअराज में सारे अंबिया ने बैतुल-मुक़द्दस में हुज़ूर अलैहिस्सलाम के पीछे नमाज़ अदा की हुज़ूर बुर्राक़ पर तशरीफ़ ले गए और बुर्राक़ की रफ़्तार का यह आलम कि ता-हद्दे नज़र उसका एक क़दम पड़ता था मगर रफ़्तारे अंबिया का यह आलम कि अभी बैतुल-मुक़द में मुक़्तदी थे और अभी मुख़्तलिफ़ आसमानों पर पहुँच गए। हुज़ूर फरमाते हैं कि हमने फ़लां आसमान पर फ़लां पैग़म्बर से मुलाक़ात की जिससे मालूम हुआ कि बुर्राक़ की बर्क़ रफ़्तारी ख़रामां थी कि दूल्हा घोड़े पर सवार हो कर ख़रामां ही जाया करते थे। और अंबिया की ख़िदमत गुज़ारी का वक़्त था। अभी बैतुल-मुक़द्दस में और भी आसमानों पर।

शैख़ अब्दुल-हक़ मुहद्दिस देहलवी ने **अश्इतुलम्आत बाब ज़ियारतिल-क़ुबूर** में फरमाया कि हर पंजशंबा के दिन मुर्दों की रूहें अपने ख़्वेश व अक़ारिब के यहाँ जा कर उनसे ईसाले सवाब की तमन्ना करती हैं। अब अगर किसी मैयत के अज़ीज़ व अक़ारिब दूसरे ममालिक में भी रहते हैं तो वहाँ ही पहुँचेंगी।

हमारी इस गुफ़्तगू से यह बख़ूबी मालूम हो गया कि सारे आलम पर निगाह रखना, हर जगह की आनन फानन सैर कर लेना, एक वक़्त में चन्द जगह पाया जाना यह वह सिफ़ात हैं कि रब ने अपने बन्दों को अता फरमाई हैं।

इससे दो बातें लाज़िम आईं। एक तो यह कि किसी बन्दे को हर जगह हाज़िर व नाज़िर मानना शिर्क नहीं, कि शिर्क कहते हैं ख़ुदा की ज़ात व सिफ़ात में किसी और को शरीक मानना। यहाँ यह नहीं। दूसरे यह कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के ख़ुद्दाम में हर जगह रहने की ताक़त है तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम

में बदरज-ए-औला यह सिफ़त है।

(2) दुनिया में पानी और दाना हर जगह मौजूद नहीं बल्कि ख़ास-ख़ास जगह है। पानी तो कुएँ और तालाब व दरिया वग़ैरह में है दाना खेत या घरों वग़ैरह में। मगर हवा और धूप आलम के गोशा-गोशा में है कि फ़लासफ़ा के नज़्दीक खुला मुहाल (नामुमकिन) है हर जगह हवा है इसलिए कि हवा और रौशनी की हर वक़्त हर चीज़ को ज़रूरत है और हबीबे ख़ुदा अलैहिस्सलातु वस्सलाम की हर मख़्लूक़े इलाही को हर वक़्त ज़रूरत है जैसा कि हम रूहुल-बयान वग़ैरह के हवाला से साबित कर चुके। तो लाज़िम है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की हर जगह जल्वागरी हो।

(3) हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम तमाम आलम की असल हैं व **कुल्लुल-ख़ल्क़े मिन नूरी** और असल का अपनी फ़रा में माद्दा का सारे मुश्तक़्क़ात में एक का सारे अददों में रहना ज़रूरी है।

दूसरा बाब

मसअला

हाज़िर व नाज़िर पर ऐतराज़ात के बयान में

(१) हर जगह हाज़िर व नाज़िर होना ख़ुदा की सिफ़त है। **अला कुल्ले शैइन शहीद। बेकुल्ले शैइन मुहीत** लिहाज़ा ग़ैर में यह सिफ़त मानना शिर्क फ़िस्सिफ़त है।

जवाब : हर जगह हाज़िर व नाज़िर होना ख़ुदा की सिफ़त हरगिज़ नहीं। ख़ुदाए पाक जगह और मकान से पाक है। कुतुबे अक़ाइद में है। **ला यजरी अलैहि ज़मानुन वला यश्तमिलु अलैहि मकानुन।** ख़ुदा पर न ज़माना गुज़रे क्योंकि ज़माना सुफ़ला जिस्मों पर ज़मीन में रह कर गुज़रता है। उन्हीं की उम्र होती है। चाँद, सूरज, तारे, हूर व ग़िल्मां, फ़रिश्ते बल्कि आसमान पर ईसा अलैहिस्सलाम, मेअराज में हुज़ूर अलैहिस्सलाम ज़माना से अलाहिदा हैं और न कोई जगह ख़ुदा को घेरे ख़ुदा तआला हाज़िर है मगर बग़ैर जगह के। इसीलिए **सुम्मस्तवा अलल-अर्शे** को मुतशाबेहात से माना गया है और **बेकुल्ले शैइन मुहीत** वग़ैरह आयात में मुफ़स्सेरीन फरमाते हैं **इल्मन व कुदरतन** यानी अल्लाह का इल्म और उसकी कुदरत आलम को घेरे हुए है।

वही ला मकां के मकीं हुए सरे अर्श तख़्त नशीं हुए
वह नबी हैं जिनके हैं यह मकां वह ख़ुदा है जिसका मकां नहीं

ख़ुदा को हर जगह में मानना बेदीनी है। हर जगह में होना तो रसूले ख़ुदा ही की शान है और अगर मान भी लिया जाए तो भी हुज़ूर अलैहिस्सलाम की यह सिफ़त अताई, हादिस मख़्लूक़ क़ब्ज़ए इलाही में है और ख़ुदा की यह

सिफ़त ज़ाती क़दीम ग़ैर मख़्लूक़ है किसी के क़ब्ज़े में नहीं इतने फ़र्क़ होते हुए शिर्क कैसा? जैसे कि **हयात समअ, बसर** वग़ैरह।

फ़तावा रशीदीया जिल्द अव्वल **किताबुल-बिदआत** सफ़: 91 में है "फ़ख़्रे दो आलम अलैहिस्सलाम को मौलूद में हाज़िर जानना भी ग़ैर साबित है अगर **ब-आलाम अल्लाह** तआला जानता है तो शिर्क नहीं वरना शिर्क है" यह मज़्मून **बराहीने क़ातेआ** सफ़: 23 में है। मौलवी रशीद अहमद साहब ने रजिस्ट्री फरमा दी कि ग़ैरे ख़ुदा को हर जगह हाज़िर व नाज़िर जानना ब-अताए इलाही शिर्क नहीं। अगर कोई कहे कि इससे लाज़िम आता है कि ख़ालक़ीयत वजूब क़दीम वग़ैरह दीगर सिफ़ाते इलाहिया भी पैग़म्बरों को अताई मान लो और हुज़ूर को ख़ालिक़ वाजिब क़दीम कहा करो। तो इसका जवाब यह है कि चार सिफ़ात क़ाबिले अता नहीं कि उन पर उलूहियत का मदार है। वजूब, क़दीम, ख़ल्क़, न मरना, दीगर सिफ़ात की तजल्ली मख़्लूक़ात में भी हो सकती है। जैसे **समअ बसर हयात** वग़ैरह मगर इनमें बड़ा फ़र्क़ होगा। रब की यह सिफ़ात ज़ाती, वाजिब न मिटने वाली और मख़्लूक़ की अताई, मुम्किन, फ़ानी।

जो होती ख़ुदाई भी देने के क़ाबिल
ख़ुदा बन के आता वह बन्दा ख़ुदा का

(2) कुरआने करीम ने फ़रमाया **वमा कुन्ता लदैहिम इज़ युल्कूना अक़्लामहुम** आप उनके पास न थे जबकि वह लोग अपने-अपने क़लम पानी में डाल रहे थे।

हज़रत मरयम के हासिल करने के लिए **वमा कुन्ता लदैहिम इज़ अज्मऊ अमरहुम।** आप उनके पास न थे जबकि उन्होंने अपने मामला पर इत्तिफ़ाक़ किया **वमा कुन्ता बजानिबिल-ग़रबी इज़ क़ज़ैना इला मूसा।** आप मग़्रिबी किनारा में न थे जबकि हमने हज़रत मूसा की तरफ भेजा **वमा कुन्ता बजानिबित्तूरे इज़ नादैना।** आप तूर की तरफ़ न थे जबकि हमने हज़रत मूसा को आवाज़ दी।

इन आयात से मालूम हुआ कि गुज़िश्ता ज़माना में जो यह मज़्कूरा वाक़ेआत हुए उस वक़्त आप वहाँ मौजूद न थे साफ ज़ाहिर हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम हर जगह हाज़िर व नाज़िर नहीं?

जवाब : यह सवाल इस वजह से है कि मोतरिज़ को हाज़िर व नाज़िर के माना की ख़बर नहीं। हम पहले अर्ज़ कर चुके हैं कि हाज़िर व नाज़िर की तीन सूरतें हैं एक जगह रह कर सारे आलम को देखना। आन की आन में सारे आलम की सैर कर लेना। एक वक़्त में चन्द जगह होना। इन आयात में फ़रमाया गया कि आप इसी जिस्म पाक के साथ वहाँ मौजूद न थे इनमें

यह कहाँ है कि आप उन वाक़ेआत को मुलाहिज़ा भी नहीं फ़रमा रहे थे। इस जस्दे उन्सरी से वहाँ न होना और है और उनके वाक़ेआत को मुशाहदा फरमाना और। बल्कि आयाते मज़्कूरा बाला का मतलब ही यह है कि ऐ महबूब अलैहिस्सलाम आप वहाँ बई जिस्म मौजूद न थे लेकिन फिर आपको उन वाक़ेआत का इल्म और मुशाहदा है जिससे मालूम हुआ कि आप सच्चे नबी हैं। यह आयात तो हुज़ूर का हाज़िर व नाज़िर होना साबित कर रही हैं।

तफ़्सीरे सावी में **वमा कुन्ता बेजानिबित्तूर अल-आयह** की तफ़्सीर में है।

तरजमा : यानी यह फरमाना कि आप मूसा अलैहिस्सलाम के उस वाक़ेया की जगह न थे जिस्मानी लिहाज़ से है आलमे रूहानी की हैसियत से। हुज़ूर अलैहिस्सलाम हर रसूल की रिसालत और आदम अलैहिस्सलाम से लेकर आपके जिस्मानी ज़ुहूर के तमाम वाक़ेआत पर हाज़िर हैं।

और हिजरत के दिन ग़ारे सौर में सिद्दीक़ सिद्क़ को लिए हुए जल्वागर हैं कि कुफ़्फ़ारे मक्का दरवाज़ए ग़ार पर आ पहुँचे हज़रत सिद्दीक़ परेशान हुए। तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया **ला तहज़न इन्नल्लाहा मअ़ना।** ग़म न करो अल्लाह हमारे साथ है क्या इसका मतलब यह है कि अल्लाह हमारे साथ तो है मगर इन कुफ़्फ़ार के साथ नहीं। लिहाज़ा ख़ुदा हर जगह नहीं क्योंकि कुफ़्फ़ार भी तो आलम ही में थे।

फिर ग़ज़वा उहद से फ़ारिग़ हो कर कुफ़्फ़ार से ख़िताब करके फरमाया **अल्लाहु मौलाना वला मौला लकुम** अल्लाह हमारा मौला है तुम्हारा मौला कोई नहीं।

जिससे मालूम हुआ कि अल्लाह की सलतनत व हुकूमत फक़त मुसलमानों पर तो है कुफ़्फ़ार पर नहीं। मौला बामानी वाली तो जिस तरह इन दोनों कलामों में तौजीह करोगे कि पहले कलाम से मुराद है कि अल्लाह रहम व करम से हमारे साथ है और जब्र व क़हर से कुफ़्फ़ार के साथ और दूसरे कलाम में मुराद है कि मददगार वाली हमारा है तुम्हारा वाली तो है मगर नासिर और मेहरबान नहीं। इसी तरह इन आयात में भी कहा जाएगा कि बतरीक़ ज़ाहिर इसी जसदे उन्सरी के साथ आप उस वक़्त उनके पास न थे।

(3) कुरआन फरमाता है – **वमिन अह्लिल मदीनते मरदू अलन्निफ़ाक़े ला तअलमुहुम नहनु नअ़लमुहुम।** और कुछ मदीने वाले उनकी ख़ू हो गई है निफ़ाक़ पर उनको तुम नहीं जानते हम जानते हैं।

इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम हर जगह हाज़िर नहीं वरना आपको मुनाफ़ेक़ीन के अन्दरूनी राज़ों की भी ख़बर होती हालांकि आप उन से बेख़बर थे।

जवाब : इसका तफ़सीली जवाब हम बहस इल्मे गैब में इसी आयत के मा तहत दे चुके हैं।

(4) बुख़ारी **किताबुत्तफ़्सीर** में है कि ज़ैद बिन अरक़म ने अब्दुल्लाह इब्ने उबय की शिकायत की कि वह लोगों से कहता है **ला तुन्फ़िक़ू अला मन इन्दा रसूलिल्लाहे** मुसलमानों को कुछ ख़र्च न दो। अब्दुल्लाह बिन उबय ने बारगाहे आली में आकर झूठी क़सम खा ली कि मैंने यह न कहा था **फ़सद्दक़हुम व क़ज़्ज़बनी** हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने उनको सच्चा मान लिया और मुझको झूठा। अगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम हर जगह हाज़िर नाज़िर हैं तो इब्ने उबय की ग़लत तस्दीक़ क्यों कर दी जब यह आयते करीमा नाज़िल हो कर ज़ैद इब्ने अरक़म की तस्दीक़ की तो यह सच्चे हुए।

जवाब : अब्दुल्लाह इब्ने उबय की तस्दीक़ फ़रमा देने से लाज़िम नहीं कि आपको असल वाक़ेया का इल्म भी न हो शरअन मुक़द्दमा में ज़रूरी है कि या तो मुद्दई गवाह पेश करे वरना मुद्दई अलैह क़सम खा कर मुक़द्दमा जीत लेगा क्योंकि क़ाज़ी का फ़ैसला मुद्दई की गवाही या मुद्दआ अलैह की क़सम पर होता है न कि क़ाज़ी के ज़ाती इल्म पर। ज़ैद बिन अरक़म रज़ि अल्लाहु अन्हु मुद्दई थे कि इब्ने उबय ने तौहीन की और इब्ने उबय मुंकिर चूंकि हज़रत ज़ैद के पास गवाही न थी अब्दुल्लाह की क़सम पर फ़ैसला कर दिया गया। फिर जब क़ुरआन ने ज़ैद की गवाही दी तब उस गवाही से उनकी तस्दीक़ हुई। क़यामत में गुज़िश्ता कुफ़्फ़ार अंबिया की तबलीग़ का इंकार करेंगे और अंबिया दावा। रब्बुल-आलमीन उम्मते मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम से अंबिया के हक़ में गवाही ले कर अंबिया की तस्दीक़ फरमाएगा। इसी तरह कुफ़्फ़ार अर्ज़ करेंगे **वल्लाहि रब्बिना मा कुन्ना मुश्रेकीन**। ख़ुदा की क़सम हम मुश्रिक न थे तब उनके नाम-ए-आमाल और मलाइका बल्कि ख़ुद उनके आज़ा से गवाही लेकर उनके ख़िलाफ़ फ़ैसला होगा। तो क्या रब को भी असल वाक़ेया का पता न था ज़रूर था मगर यह क़ानून की पाबन्दी है **कज़्ज़बनी** के मानी हैं कि मेरी बात न मानी। यह मानी नहीं कि मुझको झूठा फरमाया। क्योंकि झूठा फ़ासिक़ होता है। और तमाम सहाबा आदिल हैं और किसी मुसलमान को बिला दलील फ़ासिक़ नहीं कहा जा सकता। कभी देवबन्दी कहते हैं कि क्या नबी अलैहिस्सलाम गन्दी जगह और दोज़ख़ में भी हाज़िर हैं उनको वहाँ मानना बेअदबी है। इसका जवाब यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम का हर जगह हाज़िर होना ऐसा है जैसे सूरज की शुआएं या नूरे नज़र या फ़रिश्तों का हर जगह होना कि यह चीज़ें हर जगह मौजूद हैं मगर गन्दगी से गन्दी नहीं होतीं। बताओ तुम रब को उन सब जगह हाज़िर मानते हो या नहीं? अगर मानते हो तो उसकी बेअदबी हुई या नहीं। नूरे

आफ़ताब गन्दी जगह पड़ने से नापाक नहीं। तो हक़ीक़ते मुहम्मदीया जिसे रब नूर फरमाए उस पर नापाकी के अहकाम क्यों जारी होंगे।

(5) तिर्मिज़ी में इब्ने मसऊद से रिवायत है।

तरजमा : कोई शख़्स हम से किसी सहाबी की बातें न लगाए हम चाहते हैं कि तुम्हारे पास साफ दिल आया करें।

अगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम हर जगह हाज़िर होते तो ख़बर पहुँचाने की क्या ज़रूरत थी। आपको वैसे ही ख़बर रहती।

जवाब : अंबिया-ए-किराम के इल्मे शुहूदी में हर वक़्त हर चीज़ रहती है। मगर हर चीज़ पर हर वक़्त तवज्जोह रहना ज़रूरी नहीं। इसके मुतअल्लिक़ हम बहस इल्मे ग़ैब में हाजी इम्दादुल्लाह साहब की इबारत पेश कर चुके हैं। अब हदीस का मतलब बिल्कुल साफ़ है कि हम लोगों की बातों की तरफ तवज्जोह दिला कर किसी की तरफ से नाराज़ न बनाओ। एक जगह इरशाद हुआ है। **ज़रूनी मा तरक्तुम** जब तक हम तुमको छोड़े रहें तुम भी छोड़े रहो।

(6) बैहक़ी में है –

जो शख़्स हम पर हमारी क़ब्र के पास दरूद भेजता है तो हम ख़ुद सुनते हैं और जो दूर से दरूद भेजता है तो हमको पहुँचाया जाता है।

इससे मालूम हुआ कि दूर की आवाज़ आप तक नहीं पहुँचती वरना पहुँचाए जाने की क्या ज़रूरत है।

जवाब : इस हदीस में यह कहाँ है कि दूर का दरूद हम नहीं सुनते। मतलब बिल्कुल ज़ाहिर है कि क़रीब वाले का दरूद तो सिर्फ़ ख़ुद सुनते हैं और दूर वाले का दरूद सुनते भी हैं और पहुँचाया भी जाता है। हम हाज़िर व नाज़िर के सुबूत में दलाइलुल-ख़ैरात की वह रिवायत पेश कर चुके हैं कि अह्ले मुहब्बत का दरूद तो हम बनफ़्से नफ़ीस ख़ुद सुन लेते हैं और ग़ैर मुहब्बत वालों का दरूद पहुँचा दिया जाता है। तो दूर क़रीब से मुराद दिली दूर व क़रीब है न कि मसाफ़त के लिहाज़ से।

पहुँचाए जाने से लाज़िम नहीं आता कि आप उसको सुनते ही नहीं। वरना मलाइका बन्दों के आमाल बारगाहे इलाही में पेश करते हैं तो क्या रब को ख़बर नहीं। दरूद की पेशी में बन्दों की इज़्ज़त है कि दरूद पाक की बरकत से उनका यह रुतबा हुआ कि ग़ुलामों का नाम शहंशाहे अनाम की बारगाह में आ गया। सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम।

फ़ुक़्हा फरमाते हैं कि नबी की तौहीन करने वाले की तौबा क़बूल नहीं। देखो शामी **बाबुल-मुर्तद।** क्योंकि यह तौहीन हक़्क़ुल-इबाद है जो तौबा से

माफ़ नहीं होता। अगर तौहीन की हुज़ूर को ख़बर नहीं होती तो यह हक़्कुल-अब्द क्यों कर बनी। गीबत उसी वक़्त हक़्कुल-अब्द बनती है जब उसकी ख़बर उसको हो जाए जिसकी गीबत की गई वरना हक़्कुल्लाह रहती है। देखो शरह फ़िक़ह अकबर मुसन्निफ़ा मुल्ला अली क़ारी।

किताब जला-उल-इफ़हाम मुसन्निफ़ा इब्ने क़ैइम शागिर्द इब्ने तैमिया सफ़: 73 हदीस नम्बर 108 में हदीस नक़्ल है।

यानी कोई कहीं से दरूद शरीफ़ पढ़े मुझे उसकी आवाज़ पहुँचती है यह दस्तूर बाद वफ़ात भी रहेगा।

मौलाना जलालुद्दीन सुयूती सफ़: 222 में फरमाते हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फरमाया।

यानी हर जुमा व पीर को मुझ पर दरूद ज़्यादा पढ़ो मेरी वफ़ात के बाद क्योंकि मैं तुम्हारा दरूद बिला वास्ता सुनता हूँ।

(7) फतावा बज़ाज़िया में है –

जो कहे कि मशाइख़ की रूहें हाज़िर हैं जानती हैं वह काफिर है।

शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब **तफ़्सीर फ़त्हुल-क़दीर** सफ़: 55 में फरमाते हैं।

यानी नबी और पैग़म्बरों के लिए ख़ुदाई सिफ़ात जैसे इल्मे ग़ैब और हर जगह से हर शख़्स की फ़रियाद सुनना और तमाम मुम्किनात पर क़ुदरत साबित करते हैं।

इससे मालूम हुआ कि इल्मे ग़ैब और हर जगह हाज़िर व नाज़िर होना ख़ुदा की सिफ़त है किसी और में मानना सरीह कुफ़्र है बज़ाज़िया फ़िक़्ह की मोतबर किताब है वह हुक्मे कुफ़्र दे रही है।

जवाब : फतावा बज़ाज़िया की ज़ाहिर इबारत के ज़द में तो मुख़ालेफ़ीन भी आते हैं अव्वलन तो इसलिए कि हम इमदादुस्सुलूक मुसन्निफ़ा मौलवी रशीद अहमद साहब की इबारत पेश कर चुके हैं जिसमें उन्होंने निहायत सफ़ाई से शैख़ की रूह को मुरीदीन के पास हाज़िर जानने की तालीम दी है। दूसरे इसलिए कि बज़ाज़िया की इबारत में यह तसरीह (खुलासा) नहीं है कि किस जगह रूहे मशाइख़ को हाज़िर जाने हर जगह या कुछ जगह। इस इतलाक़ से तो मालूम होता है कि अगर कोई मशाइख़ की रूह को एक जगह भी हाज़िर व नाज़िर जाने या एक बात का भी इल्म माने तो काफिर है। अब मुख़ालेफ़ीन भी अरवाहे मशाइख़ को उनकी क़ब्र या मक़ामे इल्लीयीन बर्ज़ख़ वग़ैरह जहाँ वह रहती हैं वहाँ तो हाज़िर मानेंगे ही। पस

कहीं भी माना कुफ़्र हुआ। तीसरे इसलिए कि हम इस बहस हाज़िर व नाज़िर में शामी की इबारत पेश कर चुके हैं कि या हाज़िर या नाज़िर कहना कुफ़्र नहीं है। चौथे यह कि हम अश्इतुल्लमआत और इहया-उल-उलूम बल्कि नवाब सिद्दीक़ हसन खाँ भोपाली वहाबी की इबारात बयान कर चुके हैं जिसमें वह फरमाते हैं कि नमाज़ी अपने क़ल्ब में हुज़ूर अलैहिस्सलाम को हाज़िर जान कर **अस्सलामु अलैका या ऐयुहन्नबीयु** कहे। अब इन अकाबिरे फ़ुक़हा पर बज़ाज़िया का फतवा जारी होगा या नहीं लिहाज़ा मानना होगा कि बज़ाज़िया में जिस हाज़िर व नाज़िर मानने को कुफ़्र फरमाया जा रहा है वह हाज़िर व नाज़िर होना है जो सिफ़ते इलाहिया है यानी ज़ाती, क़दीम, वाजिब, बग़ैर किसी जगह में हुए कि ऐसा हाज़िर होना रब की सिफ़त है वह हर जगह है मगर किसी जगह में नहीं पहले सवाल के जवाब में हम फतावा रशीदिया जिल्द अव्वल **किताबुल-बिदआत** सफः 91 की इबारत और **बराहीने क़ातेआ** सफः 23 की इबारत नक़्ल कर चुके हैं जिससे साबित हुआ कि मौलवी रशीद अहमद व ख़लील अहमद साहिबान भी इस फ़तवा में हम से मुत्तफ़िक़ हैं।

शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब की इबारत बिल्कुल वाज़ेह है कि मशाइख़ व अंबिया की कुदरत तमाम मुक़्दूराते इलाहिया पर अल्लाह की तरह मानना कुफ़्र है वरना ख़ुद शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब **व यकूनुर्रसूलु अलैकुम शहीदा** के मातहत हुज़ूर अलैहिस्सलाम को हाज़िर व नाज़िर मानते हैं। उनकी इबारात हम बहसे इल्मे ग़ैब में इसी आयत मज़्कूरा के तहत लिख चुके हैं।

(8) बाज़ मुख़ालेफ़ीन जब कोई रास्ता नहीं पाते तो कह देते हैं कि हम इब्लीस में हर जगह पहुँच जाने की ताक़त मानते हैं। इसी तरह आसिफ़ इब्ने बर्ख़िया और मलिकुल-मौत और मलाइका में यह ताक़त तस्लीम करते हैं मगर यह नहीं मानते कि दीगर मख़्लूक़ के कमालात पैग़म्बरों में या हुज़ूर अलैहिस्सलाम में जमा हैं।

मौलवी क़ासिम साहब **तहज़ीरुन्नास** में लिखते हैं कि "रहा अमल इसमें बसा औक़ात ग़ैर नबी-नबी से बढ़ जाते हैं।

रुजूमुल-मुज़्नेबीन में मौलवी हुसैन अहमद साहब ने लिखा कि देखो तख़्ते बिल्क़ीस लाने की ताक़त हज़रत सुलेमान में न थी और आसिफ़ में थी वरना आप ख़ुद ही क्यों न ले आते। इसी तरह हुद-हुद ने कहा कि **अहत्तु बेमा लम तुहित बेही खुबरन**। ऐ सुलेमान मैं वह बात मालूम करके आया हूँ जिसकी आपको ख़बर नहीं। और हुद-हुद की आँख ज़मीन के अन्दर का पानी देख लेती है इसीलिए वह हज़रत सुलेमान की ख़िदमत में रहता था कि जंगल में

ज़मीन के अन्दर का पानी बताए और हज़रत सुलेमान को इसकी ख़बर न थी। मालूम हुआ कि अंबिया के इल्म व ताक़त से गै़र नबी बल्कि जानवर का इल्म व ताक़त ज़्यादा हो सकता है।

जवाब : ग़ैर नबी में नबी से ज़्यादा या किसी और नबी में हुज़ूर अलैहिस्सलाम से ज़्यादा कमाल मानना साफ़ आयते कुरआनी और अहादीसे सहीहा और इज्मा-ए-उम्मत के ख़िलाफ़ है। ख़ुद मुख़ालेफ़ीन भी इस बात को तस्लीम करते हैं जिनकी इबारात हम पेश कर चुके हैं।

यह आठवाँ ऐतराज़ ख़ुद अपने मज़हब को छोड़ना है।

शिफ़ा शरीफ़ में है कि अगर कोई कहे कि फ़लां का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से ज़्यादा है वह काफ़िर है। किसी भी कमाल में किसी को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से ज़्यादा मानना कुफ़्र है। कोई ग़ैर नबी नबी से न तो इल्म में बढ़ सकता है न अमल में। अगर किसी की उम्र 8 सौ साल हो और वह इस तमाम मुद्दत में इबादत ही करे और कहे कि मेरी इबादत तो 8 सौ साल की है और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की इबादत कुल पच्चीस बरस की। लिहाज़ा इबादत में हुज़ूर से बढ़ गया। वह बेदीन है। उनके एक सज्दे का जो सवाब है वह हमारी लाखों बरस की इबादात से कहीं बढ़ कर है। सिर्फ़ यह हुआ कि उसकी मेहनत ज़्यादा हुई मगर कुर्बे इलाही, दरजा और सवाब में नबी से उसको कोई निस्बत ही नहीं। शाने नबी तो बहुत बुलन्द व बाला है।

मिश्कात **बाब फ़ज़ाइलिस्सहाबा** में है कि मेरे सहाबी का थोड़े जौ ख़ैरात करना तुम्हारे पहाड़ भर सोना ख़ैरात करने से अफ़ज़ल है। शमऊन बनी इस्राईल ने एक हज़ार माह यानी 83 साल चार माह मुसलसल इबादत की। मुसलमानों को उस पर रश्क हुआ कि हम उसका दरजा कैसे पाएं, तो आयते करीमा उतरी **लैलतुल-क़द्र ख़ैरुन मिन अल्फ़े शहर** शबे क़द्र तो हज़ार माह से भी बेहतर है। यानी ऐ मुसलमानों तुमको हम एक शबे क़द्र देते हैं कि इस शब में इबादत बनी इस्राईल की हज़ार माह की इबादत से बेहतर है। तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की एक-एक साअत लाखों शबे क़द्र से अफ़ज़ल है जिस मस्जिद पाक के एक गोशा में सैयदुल-अंबिया आराम फरमा हैं यानी मस्जिदे नबवी वहाँ की एक रकाअत पच्चास हज़ार के बराबर सवाब रखती है। जिनके क़रीब में हमारी इबादत ऐसी फूलती फलती है तो उनकी इबादत का क्या हाल पूछना है।

इसी तरह यह कहना कि आसिफ़ इब्ने बर्ख़िया में तख़्त लाने की ताक़त थी न कि हज़रत सुलेमान में महज़ बेहूदा बक्वास है कुरआन फरमाता है। **वक़ालल्लज़ी इन्दहू इल्मुन मिनल-किताबे अना आतीका बेही क़ब्ला अन**

यरतद्दा इलैका तरफुका। उसने कहा जिसको किताब का इल्म था कि मैं उस तख़्त बिल्क़ीस को आपके पलक झपकने से पहले हाज़िरे ख़िदमत कर दूँगा मालूम हुआ कि आसिफ़ कि यह कुदरत इल्मे किताब की वजह से थी।

कुछ मुफ़स्सेरीन फरमाते हैं कि उनको इस्मे आज़म दिया था जिससे वह यह तख़्त लाए। उनको यह इल्म हज़रत सुलेमान की बरकत से मिला। फिर यह क्यों कर हो सकता है कि उनमें यह कुदरत हो और उनके उस्ताज़ सैयदना सुलेमान अलैहिस्सलाम में न हो। रहा यह कि फिर आप ख़ुद क्यों न लाए। वजह बिल्कुल ज़ाहिर है कि काम करना ख़ुद्दाम का काम है न कि सलातीन का दबदब-ए-सलतनत चाहता है कि ख़ुद्दाम से काम लिया जाए। बादशाह अपने नौकरों से पानी मंगवा कर पीता है तो क्या ख़ुद उसमें पानी लेने की ताक़त नहीं। रब्बुल-आलमीन दुनिया के सारे काम फ़रिश्तों से कराता है कि बारिश बरसाना, जान निकालना, पेट में बच्चा बनाना सब मलाइका के सुपुर्द है तो क्या ख़ुदा में यह ताक़त नहीं है। क्या फ़रिश्ते ख़ुदा से ज़्यादा ताक़त रखते हैं।

तफ़्सीरे रूहुल-बयान ने ज़ेरे आयत – **फ़सियामु शहरैने मुतताबेऐने** पारा पंजुम सूरः निसा में बयान फरमाया है कि हज़रत सुलेमान का आसिफ़ को बिल्क़ीसी तख़्त लाने का हुक्म देना इसलिए था कि आपने अपने दरजा से उतरना न चाहा यानी यह काम ख़ुद्दाम का है। इसी तरह हुद-हुद का क़ौल कुरआन ने नक़्ल किया कि उसने कहा कि मैं वह चीज़ देख कर आया हूँ जिसकी आपको ख़बर नहीं कुरआन ने कहाँ फरमाया कि वाक़ई उनको ख़बर न थी। हुद-हुद समझा कि शायद उसकी ख़बर हज़रत को न होगी यह कह दिया लिहाज़ा उससे सनद नहीं पकड़ी जा सकती।

फिर हुद-हुद ने अर्ज़ किया कि **अहत्तु बेमा लम तुहित बेही ख़ुबरन।** मैं वह बात देख कर आया हूँ जो आपने न देखी यानी इस मुल्क में आप इसी जिस्म शरीफ़ के साथ मुशाहिदा फरमाने न गए ख़बर की नफ़ी नहीं। हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम को सब कुछ ख़बर थी मगर मंशा इलाही यह था कि इतना बड़ा काम एक हुद-हुद चिड़िया के ज़रिआ हो ताकि मालूम हो जाए कि पैग़म्बर के पास बैठने वाले जानवर वह काम कर दिखाते हैं जो दूसरे इंसानों से नहीं हो सकते। अगर हज़रत सुलेमान को ख़बर न थी तो आसिफ़ इब्ने वर्ख़िया बग़ैर किसी से पता पूछे यमन के शहर सबा में बिल्क़ीस के घर कैसे पहुँचे और आन की आन में तख़्त कैसे ले आए? मालूम हुआ कि सारा मुल्क यमन हज़रत आसिफ़ के सामने था? तो फिर हज़रत सुलेमान से कैसे मख़्फ़ी (छुपा) रह सकता है?

यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को बाप का पता मालूम था मगर वक़्त से पहले

अपनी ख़बर न दी ताकि क़हत साली पड़े और आपकी शान दुनिया को मालूम हो, फिर बाप से मुलाक़ात हो।

और ज़मीन के नीचे का पानी मालूम करना हुद-हुद की यह ख़िदमत थी। सलातीन उन कामों को अपने आप नहीं करते।

मस्नवी शरीफ़ में एक वाक़ेया नक़्ल किया है कि एक बार हुज़ूर अलैहिस्सलाम वुज़ू फरमा रहे थे, मोज़े उतार कर रख दिए कि एक चील ने झपट कर एक मोज़ा उठा लिया और ऊपर ले जा कर उलटा करके फेंक दिया। जिसमें से सांप निकला। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने चील से दरयाफ़्त किया कि तूने मेरा मोज़ा क्यों उठाया। अर्ज़ किया कि जब मैं उड़ती हुई आपके सर मुबारक के मुक़ाबिल आई तो आपके सर से आसमान तक वह नूर था कि उसमें आकर मुझ पर ज़मीन के सातों तबक़े रौशन हो गए। उससे मैंने आपके मोज़े के अन्दर का सांप देख लिया तो इस ख़्याल से उठा लिया कि शायद आप बेतवज्जोही में इसको पहन लें और आपको तक्लीफ़ पहुँच जाए।

हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा ने एक बार अर्ज़ किया कि या हबीबल्लाह आज बहुत तेज़ बारिश आई और आप क़ब्रिस्तान में थे। आपके कपड़े क्यों तर न हुए? फ़रमाया कि आइशा तुमने क्या ओढ़ा है? अर्ज़ किया कि आपका तहबन्द शरीफ़ फरमाया –

ऐ महबूबा इस तहबन्द शरीफ़ की बरकत से तुम्हारी आँखों से ग़ैब के पर्दे खुल गए यह बारिशे नूर थी न कि पानी की बारिश। उसका बादल और आसमान ही दूसरा है। ऐ आइशा यह किसी को नज़र नहीं आया करती। तुमने हमारे तहबन्द की बरकत से उसको देख लिया।

हुद-हुद की आँख को यह ताक़त इब्राहीम अलैहिस्सलाम की आग पर पानी डालने की बरकत से मिली और हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम की सोहबत से।

(9) अगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम हर जगह हाज़िर व नाज़िर हैं तो मदीना पाक हाज़िर होने की क्या ज़रूरत है।

जवाब : जब ख़ुदा हर जगह है तो काबा जाने की क्या ज़रूरत है? और फिर मेअराज में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के अर्श पर जाने का क्या फाइदा था? जनाब मदीना मुनव्वरह दारुस्सलतनत है और ख़ास तजल्ली गाह जैसे कि बर्क़ी ताक़त के लिए पावर हाउस बल्कि औलिया अल्लाह की क़ुबूर मुख़्तलिफ़ पावरों के कुमकुमे हैं उनकी भी ज़्यारत ज़रूरी है।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को बशर या भाई कहने की बहस

इसमें एक मुक़द्दमा और दो बाब हैं.

मुक़द्दमा

नबी की तारीफ़ और उनके दरजात के बयान में

अक़ीदा : नबी वह इंसान मर्द हैं जिनको अल्लाह ने अहकामे शरईया की तबलीग़ के लिए भेजा (शरह अक़ाइद) लिहाज़ा नबी न तो ग़ैर इंसान हो और न औरत। क़ुरआन फरमाता है। **वमा अरसलना मिन क़ब्लिका इल्ला रिजालन नूही इलैहिम।** और हमने आप से पहले न भेजा मगर उन मर्दों को जिनकी तरफ हम वही करते थे।

मालूम हुआ कि जिन्न, फ़रिश्ता, औरत वग़ैरह नबी नहीं हो सकते।

अक़ीदा : नबी हमेशा आला खानदान और आली नसब में से होते हैं और निहायत उम्दा अख़्लाक़ उनको अता होते हैं ज़लील क़ौम और अदना हरकात से महफूज़ (बहारे शरीअत) बुख़ारी जिल्द अव्वल के शुरू में है कि जब हिरक़्ल बादशाहे रोम के पास हुज़ूर अलैहिस्सलाम का फरमाने आली पहुँचा कि **अस्लिम तस्लम** इस्लाम ले आ, सलामत रहेगा। तो हिरक़्ल ने अबू सुफ़ियान को बुला कर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के मुतअल्लिक़ कुछ सवालात किए। पहला सवाल यह था कि **कैफ़ा नसबुहू फ़ीकुम** तुम में उनका खानदान व नसब कैसा है? अबू सुफ़ियान ने कहा **हुवा फ़ीना ज़ू नसबिन।** वह हम में निहायत आला खानदान हैं यानी क़ुरैशी हाशमी व मुत्तलबी हैं सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम। इसके जवाब में हिरक़्ल ने कहा **वकज़ालिकर्रुसुलु तबअ़सु फ़ी क़ौमिहा** हमेशा अंबिया-ए-किराम आला क़ौम व आला खानदान में भेजे जाते हैं।

जिससे मालूम हुआ कि अंबिया-ए-किराम आली खानदान में तशरीफ़ फरमा होते हैं।

तंबीह : कुछ लोग कहते हैं कि हर क़ौम में नबी आए यानी मआज़ल्लाह भंगियों, चमारों, हिन्दुवों, बुद्ध, और जैनी वग़ैरह में उन्हीं की क़ौम से आए। लिहाज़ा लाल गुरू, कृष्ण, गौतम बुद्ध, वग़ैरह चूंकि नबी थे इसलिए उनको बुरा न कहो। क़ुरआन फरमाता है। **लेकुल्ले क़ौमिन हादिन** हर क़ौम में हादी हैं।

और औरतें भी नबी हुई हैं क्योंकि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की वालिदा और हज़रत मरयम को वही हुई और जिसको वही हो वह नबी है व **औहैना इला उम्मे मूसा।** वग़ैरह लिहाज़ा यह औरतें नबी हैं। मगर यह दोनों

क़ौल ग़लत हैं। अव्वल तो इसलिए कि वह आयत पूरी नहीं बयान की और तरजमा भी दुरुस्त नहीं किया। आयत यह है **इन्नमा अन्ता मुंज़िरुन व लेकुल्लि क़ौमिन हादिन** तुम डर सुनाने वाले और हर क़ौम के हादी हो यानी हर क़ौम का हादी होना हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की सिफ़त है और अंबिया ख़ास-ख़ास क़ौमों के नबी होते थे और ऐ महबूब तुम हर क़ौम के नबी हो और अगर मान भी लिया जाए कि इस आयत के यही मानी हैं कि हर क़ौम में हादी हुए तो यह कहाँ है कि हर क़ौम में उस ही क़ौम से हादी हुए। हो सकता है कि अशरफ़ क़ौम में नबी आए। दीगर क़ौमें भी उनके मातहत रहीं। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम कुरैशी हैं मगर पठान, शैख़, सैयद ग़र्ज़ेकि सारी क़ौमों बल्कि सारी मख़्लूक़ के नबी हैं। फिर हादी आम है कि नबी हो या ग़ैर नबी। तो यह मानी भी हो सकते हैं कि हर क़ौम में उस क़ौम में से कुछ कुछ के लिए रहबर हुए।

बल्कि महादेव, कृष्ण वग़ैरह की हस्ती का भी शरई सुबूत नहीं। कुरआन व हदीस ने उनकी ख़बर न दी। सिर्फ़ बुत परस्तों के ज़रिआ उनका पता लगा। वह भी इस तरह कि किसी के चार हाथ, किसी के छेः पाँव, किसी के मुँह पर हाथी की सी सूंड, किस के चूतड़ पर लंगूर की सी दुम, उनके नाम भी गढ़े हुए और उनकी सूरतें भी।

रब ने अरब के बुत परस्तों को फरमाया —

इन हिया इल्ला अस्माउन सम्मैतुमूहा अन्तुम व आबाउकुम यह तुम्हारे और तुम्हारे बाप दादों के गढ़े हुए नाम हैं। जब उनके होने का ही यक़ीन नहीं तो उन्हें नबी मान लेना कौन सी अक़्लमन्दी है।

दूसरा क़ौल इसलिए ग़लत है कि हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की वालिदा माजिदा के दिल में **इल्क़ा** या **इल्हाम** किया गया था जिसे कुरआन ने **औहैना** से ताबीर किया। वही बामाना इल्हाम भी आती है जैसे कुरआन में है **व औहा रब्बुका इलन्नहले** आपके रब ने शहद की मक्खी के दिल में यह बात डाली। यहाँ वही बमाना दिल में डालना है।

हज़रत मरयम को वह वही तबलीग़ी न थी और न वह तबलीग़ी अहकाम के लिए भेजीं गईं।

और फ़रिश्ते का हर कलाम वही नहीं और हर वही तबलीग़ी नहीं। कुछ सहाबा ने मलाइका के कलाम सुने हैं और बवक़्ते मौत और क़ब्र व हशर में सब ही मलाइका से कलाम करेंगे हालांकि सब नबी नहीं उसकी पूरी तहक़ीक़ हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान में देखो।

अक़ीदा : कोई शख़्स अपनी इबादत व आमाल से नुबूव्वत नहीं पा सकता। नुबूव्वत महज़ अताए इलाही है। **अल्लाहु आलमु हैसु यज्अलु रिसालतहू** अल्लाह ख़ूब जानता है कि जहाँ अपनी रिसालत रखे।

और ग़ैर नबी ख़्वाह ग़ौस हो या कुतुब अब्दाल या कुछ और। न तो नबी के बराबर हो सकता है न उससे बढ़ सके। यह चन्द उमूर ख़्याल में रहें।

पहला बाब

इस बयान में कि नबी अलैहिस्सलातु वस्सलाम को बशर या भाई वग़ैरह कहना हराम है

नबी जिंसे बशर में आते हैं और इंसान ही होते हैं जिन्न या फ़रिश्ता नहीं होते। यह दुनियावी अहकाम हैं वरना बशरीयत की इब्तिदा आदम अलैहिस्सलाम से हुई। क्योंकि वही अबुल-बशर हैं और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम उस वक़्त नबी हैं जबकि आदम अलैहिस्सलाम आब व गुल में हैं ख़ुद फरमाते हैं **कुन्तु नबीयन व आदमु बैनल-माए वत्तीने** इस वक़्त हुज़ूर नबी हैं बशर नहीं। सब कुछ सही लेकिन उनको बशर या इंसान कह कर पुकारना या हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को या मुहम्मद या कि ऐ इब्राहीम के बाप या ऐ भाई बाबा वग़ैरह बिरादरी के अल्फ़ाज़ से याद करना हराम है और अगर इहानत (तौहीन) की नीयत से पुकारा तो काफ़िर है।

आलमगीरी वग़ैरह कुतुबे फ़िक़ह में है कि जो शख़्स हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को **हाज़र्रजुलु** यह मर्द इहानत (तौहीन) की नीयत से कहे तो काफिर है बल्कि **या रसूलल्लाहे या हबीबल्लाहे या शफ़ीअल-मुज़नबीन** वग़ैरह अज़्मत के कलिमात से याद करना लाज़िम है। शायर जो अश्आर में या मुहम्मद लिख देते हैं उससे मुराद इल्मी नहीं होते बल्कि लुग़वी मानी के ऐतबार से इस्तेमाल करते हैं। जैसे या मुस्तफ़ा या मुज्तबा।

इसी तरह जो कहते हैं कि –

वाह क्या जूद व करम है शहे बतहा तेरा

यह तेरा इंतिहाई नाज़ का कलिमा है जैसे ऐ आक़ा मैं तेरे कुरबान ऐ मां तू कहाँ है? ऐ अल्लाह तू हम पर रहम फरमा! तू और तेरें की हैसियत और है।

(1) कुरआने करीम फरमाता है।

तरजमा : रसूल के पुकारने को आपस में ऐसा न ठहराओ जैसा कि तुम एक दूसरे को पुकारते हो और उनके हुज़ूर बात चिल्ला कर न कहो जैसे एक दूसरे के सामने चिल्लाते हो कि कहीं तुम्हारे आमाल बर्बाद न हो जाएं और तुम को ख़बर न हो।

ज़ब्ती आमाल कुफ़्र की वजह से होती है। मदारिज जिल्दे अव्वल वस्ल अज़ जुमला रिआयत हुक़ूक़ अव्वलेस्त में है।

या रसूलल्लाह! या नबी अल्लाह! बा अदब व तौक़ीर व तवाज़ु नबी अलैहिस्सलाम को उनका नाम पाक लेकर न बुलाओ जैसे बाज़-बाज़ को

बुलाते हैं बल्कि यूं कहो कि या रसूलल्लाह या नबी अल्लाह तौक़ीर व इज़्ज़त के साथ।

तफ़्सीरे रूहुल-बयान ज़ेरे आयत –

तरजमा : माना यह हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को पुकारना या नाम लेना ऐसा न बनाओ जैसा कि बाज़ लोग बाज़ को नाम से पुकारते हैं जैसे या मुहम्मद और या इब्ने अब्दुल्लाह वग़ैरह लेकिन उनके अज़्मत वाले अल्क़ाब से पुकारो जैसे या नबी अल्लाह या रसूलल्लाह जैसा कि ख़ुद रब तआला फरमाता है। **या ऐयुहन्नबीयु या ऐयुहर्रसूलु।**

इन आयाते कुरआनिया और अक़्वाले मुफ़स्सेरीन व मुहद्देसीन से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम का अदब हर हाल में मल्हूज़ रखा जाए निदा में, कलाम में, हर अदा में।

(2) दुनियावी अज़्मत वालों को भी उनका नाम लेकर नहीं पुकारा जाता। माँ को वालिदा साहिबा बाप को वालिद माजिद, भाई को भाई साहब जैसे अल्फ़ाज़ से याद करते हैं। अगर कोई अपनी माँ को बाप की बीवी या बाप को माँ का शौहर कहे या उसका नाम लेकर पुकारे या उसको भैइया वग़ैरह कहे। तो अगरचे बात तो सच्ची है मगर बेअदब गुस्ताख़ कहा जाएगा कि बराबरी के कलिमात से क्यों याद किया। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम तो **ख़लीफ़तुल्लाहिल-आज़म** हैं उनको नाम से पुकारना या भाई वग़ैरह कहना यक़ीनन हराम है। घर में बहन, माँ, बीवी, बेटी सब ही औरतें हैं मगर उनके नाम व काम व अहकाम जुदागाना जो माँ को बीवी या बीवी को माँ कह कर पुकारे वह बेईमान ही है और जो इन सब को एक निगाह से देखे वह मरदूद है ऐसे ही जो नबी को उम्मती या उम्मती को नबी की तरह समझे वह मल्ऊन है। देवबन्दियों ने नबी को उम्मती का दरजा दिया उनके पेशवा मौलवी इस्माईल ने सैयद अहमद बरैलवी को नबी के बराबर कुर्सी दी। देखो सिराते मुस्तक़ीम का ख़ातमा। **मआज़ल्लाह!**

(3) रब तआला जिसको कोई ख़ास दरजा अता फरमाए उसको आम अल्क़ाब से पुकारना उसके उन मरातिबे आलिया का इंकार करना है अगर दुनियावी सलतनत की तरफ से किसी को नवाब या खान बहादुर का ख़िताब मिले तो उसको आदमी या आदमी का बच्चा या भाई वग़ैरह कहना और इन अल्क़ाब से याद करना जुर्म है कि इसका मतलब तो यह है कि तुम हुकूमत के अता किए हुए इन ख़िताबात से नाराज़ हो तो जिस ज़ाते आली को रब की तरफ से नबी रसूल का ख़िताब मिले उसको इन अल्क़ाब के अलावा भाई वग़ैरह कहना जुर्म है।

(4) ख़ुद परवरदिगारे आलम ने कुरआने करीम में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को या मुहम्मद या अख़ा मुमिनीन से न पुकारा। बल्कि **या**

ऐयुहन्नबीयु या ऐयुहर्रसूलु या ऐयुहल-मुज़्ज़म्मिल या ऐयुहल-मुदस्सिर। वग़ैरह प्यारे अल्फ़ाज़ात से पुकारा। हालांकि वह रब है तो हम ग़ुलामों को क्या हक़ है कि उनको बशर या भाई कह कर पुकारें।

(5) कुरआने करीम ने कुफ़्फ़ारे मक्का का यह तरीक़ा बताया है कि वह अंबिया को बशर कहते थे **क़ालू मा अंतुम इल्ला बशरून मिस्लुना।** काफ़िर बोले नहीं हो तुम मगर हम जैसे बशर **लइन अतअ़तुम बशरन मिस्लुकुम इन्नकुम इज़ल-लख़ासिरून।** अगर तुमने अपने जैसे बशर की पैरवी की तो तुम नुक़सान वाले हो वग़ैरह वग़ैरह।

इस क़िस्म की बहुत सी आयात हैं इसी तरह बराबरी बताना या अंबिया किराम की शान घटाना तरीक़ए इब्लीस है कि उसने कहा **ख़लक़्तनी मिन नारिन व ख़लक़्तहू मिन तीनिन।** ख़ुदाया तूने मुझे आग से और उनको मिट्टी से पैदा फ़रमाया। मतलब यह कि मैं उन से अफ़ज़ल हूँ। इसी तरह अब यह कहना कि हम में और पैग़म्बरों में क्या फ़र्क़ है हम भी बशर वह भी बशर बल्कि हम ज़िन्दा वह मुर्दे। यह सब इब्लीसी कलाम हैं।

दूसरा बाब

मसअलए बशरीयत पर ऐतराज़ात के बयान में

(1) कुरआन फ़रमाता है। **कुल इन्नमा अना बशरुन मिस्लुकुम।** ऐ महबूब फ़रमा दो कि मैं तुम जैसा बशर हूँ।

इस आयते कुरआनिया से मालूम हुआ कि हुज़ूर भी हमारी तरह बशर हैं अगर नहीं हैं तो आयत मआ़ज़ल्लाह झूठी हो जाएगी।

जवाब : इस आयत में चन्द तरह ग़ौर करना लाज़िम है। एक यह कि फ़रमाया गया है **कुल** ऐ महबूब आप फ़रमा दो। तो यह कलिमा फ़रमाने की सिर्फ़ हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को इजाज़त है कि आप बतौर इंकिसार व तवाज़ु फ़रमा दें। यह नहीं कि **कूलू इन्नमा हुवा बशरुन मिस्लुना।** ऐ लोगो! तुम कहा करो कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम हम जैसे बशर हैं बल्कि कुल में इस जानिब इशारा है कि बशर वग़ैरह कलिमात तुम कह दो हम तो न कहेंगे हम तो फ़रमाएंगे। **या ऐयुहल-मुज़म्मिल या ऐयुहल-मुदस्सिर** वग़ैरह हम तो आपकी शान बढ़ाएंगे आप इंकिसारन यह फ़रमा सकते हैं। और इस आयत में कुफ़्फ़ार से ख़िताब है चूंकि हर चीज़ अपनी ग़ैर जिन्स से नफ़रत करती है लिहाज़ा फ़रमाया गया कि ऐ कुफ़्फ़ार तुम मुझ से घबराओ नहीं मैं तुम्हारी जिन्स से हूँ यानी बशर हूँ।

शिकारी जानवरों की सी आवाज़ निकाल कर शिकार करता है। इस से कुफ़्फ़ार को अपनी तरफ़ मायल करना मक़सूद है। अगर देवबन्दी भी कुफ़्फ़ार

में से ही हैं तो उन से भी यह ख़िताब हो सकता है। हम मुसलमानों से फरमाया गया **ऐयुकुम मिस्ली**। तोते के सामने आईना रख कर और खुद आईना के पीछे खड़े हो कर बोलते हैं ताकि तोता अपना अक्स आईना में देख कर समझे कि यह मेरे जिन्स की आवाज़ है। अंबियाए किराम रब का आईना हैं आवाज़ व ज़बान उनकी होती है और कलाम रब का। **गुफ़्त मन आईन-ए-मस्कूल दोस्त**। यह अक्स का लिहाज़ है।

दूसरे इस तरह कि **मिस्लुकुम** पर आयत ख़त्म न हुई बल्कि आगे आ रहा है। **यूहा इलैया यूहा इलैया** की क़ैद ऐसी है जैसे हम कहें ज़ैद दीगर हैवानात की तरह हैवान है मगर नातिक़ है। तो नातिक़ की क़ैद ने ज़ैद और दीगर हैवानात में ज़ाती फ़र्क़ पैदा कर दिया। इस क़ैद से ज़ैद तो अशरफुल-मख़्लूक़ात इंसान हुआ। और दूसरे हैवानात और चीज़। इसी तरह वही की सिफत ने नबी और उम्मती में बहुत बड़ा फ़र्क़ बता दिया। हैवान और इंसान में सिर्फ़ एक दरजा का फ़र्क़ है। मगर बशरीयत और शाने मुस्तफ़वी में 27 दरजा फ़र्क़ है अव्वलन बशर फिर मोमिन फिर शहीद फिर मुत्तक़ी फिर वली फिर अब्दाल फिर औताद फिर कुतुब फिर ग़ौस फिर ग़ौसुल-आज़म फिर ताबई फिर सहाबी फिर मुहाजिर फिर सिद्दीक़ फिर नबी रहमतुल–लिल–आलमीन वग़ैरह यह 27 मरातिब का इजमाली ज़िक्र है। तफ़्सील देखना हो तो हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान में मुलाहज़ा करो। तो आम बशर और मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम में शिर्कत कैसी? यह शिर्कत तो ऐसी भी नहीं जैसी कि जिन्स आली या किसी अर्ज़ आम के अफ़राद को इंसान से है। यह तो ऐसा हुआ कि कोई कहे अल्लाह हमारी तरह मौजूद है अल्लाह हमारी तरह समीअ़ व बसीर है क्योंकि कलिमा मौजूद व अलीम हर जगह बोला जाता है जिस तरह हमारी मौजूदियत और रब की मौजूदियत में कोई निस्बत ही नहीं ऐसे ही हमारी बशरीयत और महबूब अलैहिस्सलाम की बशरीयत में कोई निस्बत नहीं।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की बशरीयत हज़ारहा जिब्राईली हैसियत से आला है।

तीसरे इस तरह कुरआने करीम में है। **मिस्लु नूरेही कमिश्कातिन फ़ीहा मिस्बाहुन**। रब के नूर की मिसाल ऐसी है जैसे एक ताक़ कि उसमें एक चिराग़ है।

इस आयत में भी कलिमा मिस्ल है तो क्या कोई कह सकता है कि नूरे ख़ुदा चिराग़ की तरह रौशनी है।

इसी तरह कुरआन में है –

वमा मिन दाब्बतिन फ़िल-अर्ज़े वला ताइरिन यतीरू बजनाहैहे

इल्ला उम्मुन अम्सालकुम नहीं है कोई जानवर ज़मीन में न कोई परिन्दा जो अपने बाज़ुओं से उड़ता हो मगर तुम्हारी तरह उम्मतें हैं।

यहाँ भी कलिमा इम्साल मौजूद है तो क्या यह कहना दुरुस्त होगा कि हर इंसान गधे उल्लू जैसा है हरगिज़ नहीं।

इन्नमा का हसर इज़ाफ़ी है न कि हक़ीक़ी यानी मैं न ख़ुदा हूँ न ख़ुदा का बेटा बल्कि तुम्हारी तरह ख़ालिस बन्दा हूँ जैसे हारूत व मारूत का कहना। **इन्नमा नहनु फ़ित्नतुन।**

चौथे इस तरह कि ग़ौर करने से मालूम होता है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ईमान, इबादात, मुआमलात ग़र्ज़ेकि किसी चीज़ में हम जैसे नहीं। हर बात में फ़र्क़ अज़ीम है। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का कलिमा है **अना रसूलुल्लाहे** मैं अल्लाह का रसूल हूँ। अगर हम यह कहें तो काफ़िर हो जाएं। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का ईमान देखी हुई चीज़ों पर कि रब को जन्नत व दोज़ख़ को मुलाहिज़ा फ़रमा लिया। हमारा ईमान सुना हुआ है। हमारे लिए अरकाने इस्लाम पाँच, हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के लिए चार यानी आप पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं। देखो शामी शुरू-किताबुज़्ज़कात हम पर पाँच नमाज़ें फ़र्ज़ हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम पर छेः यानी तहज्जुद भी फ़र्ज़ **वमिनल्लैले फतहज्जद बेही नाफ़िलतल्लका।** हमको चार बीवियों की इजाज़त। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के लिए कोई पाबन्दी नहीं जिस क़दर चाहें।

हमारी बीवियाँ हमारे मरने के बाद दूसरे से निकाह कर सकती हैं। मगर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की अज़्वाजे पाक सब मुसलमानों की माएं **व अज़्वाजुहू उम्मुहातुहुम।** किसी के निकाह में नहीं आ सकतीं। **वला तंकिहू अज़्वाजहू मिन बादेही अबदन** हमारे बाद हमारी मीरास तक़्सीम हो हुज़ूर की मीरास न बटे। हमारा पेशाब पाखाना नापाक। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के फ़ुज़्लाते शरीफ़ा उम्मत के लिए पाक। (देखो शामी बाबुल-इंजास) मिर्क़ात बाब अहकामिल-म्याह फ़स्ले अव्वल में है **व मिन सम्मख़्तारा कसीरुन मिन अस्हाबेना तहारता फ़ुज़लातेही** इसी **मिर्क़ात बाबुस्सतर** के शुरू में है **वलेज़ा हजमहू अबवु तैय्यिबता फ़शरेबा दमहू** इसी तरह **मदारिजुन्नबुव्वह** में जिल्द अव्वल वस्ल अर्क़ शरीफ़ सफ़: 25 में भी है। यह तो शरई अहकाम में फ़र्क़ बताए गए वरना लाखों उमूर में फ़र्क़ अज़ीम है। हम को उस ज़ाते करीम से कोई निस्बत ही नहीं यूं समझो कि बेमिस्ल ख़ालिक़ के बेमिस्ल बन्दे हैं।

बेमिस्ली हक़ के मज़हर हो फिर मिस्ल तुम्हारा क्यों कर हो

नहीं कोई तुम्हारा हम रुतबा नहीं कोई तुम्हारा हम पाया
इस क़दर फ़र्क़े अज़ीम होते हुए बराबरी के क्या मानी?

पाँचवें इस तरह कि इस आयत में है **बशरुन मिस्लुकुम** यह नहीं है **इंसानुन मिस्लुकुम** बशर के माना हैं **ज़ू बशरहू** यानी ज़ाहिरी चेहरे मोहरा वाला। **बशरह** कहते हैं ज़ाहिर खाल को। तो मानी यह हुए कि मैं ज़ाहिर रंग व रूप में तुम जैसा मालूम होता हूँ कि आज़ाए बदन देखने में एक जैसे मालूम होते हैं मगर हक़ीक़त यह है **यूहा इलैया** हम साहिबे वही हैं। यह गुफ़्तगू भी फ़क़त ज़ाहिरी तौर पर है वरना हमारे ज़ाहिरी आज़ा को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के आज़ा-ए-मुबारका से कोई निस्बत नहीं। कुदरते इलाही तो देखो कि मुँह का लुआब शरीफ़ खारी कुएँ में पड़े पानी को मीठा कर दे। हुदैबिया के खुश्क कुएँ में पड़ जाए तो पानी पैदा कर दे। हज़रत जाबिर की हाँडी में पड़ कर शोरबा और बोटियाँ बढ़ा दे। आटे में पड़े तो आटे में बरकत दे। सिद्दीक़ के पाँव में पहुँच कर साँप के ज़हर को दफ़ा करे। अब्दुल्लाह इब्ने अतीक के टूटे हुए पाँव में पहुँच कर हड्डी को जोड़ दे। हज़रत अली की दुखती हुई आँख में लगे तो कुहलुल-जवाहिर का काम दे। आज हज़ार रुपया की दवा भी इस क़दर असर नहीं रखती। अगर सरे पाक से क़दमे पाक तक हर उज़्व शरीफ़ की बरकात देखना हो तो हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान का मुताला करो। हमारे हर उज़्व का साया हुज़ूर के किसी उज़्व का साया नहीं। पसीन-ए-पाक में मुश्क व अंबर से बेहतर खुश्बू सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम।

छठे इस तरह कि शैख़ अब्दुलहक़ **मदारिजुन्नबुव्वह** जिल्द अव्वल बाब सोम वस्ल इज़ाला-ए-शुब्हात में फरमाते हैं यह आयात हक़ीक़त में मुताशाबेहात हैं कि उलमा ने इनके मुनासिब मआनी और बेहतर तावीलें करके हक़ की तरफ फेरा है।

इससे मालूम हुआ कि जिस तरह **यदुल्लाहे फ़ौक़ा ऐदीहिम** या **मसलु नूरेही कमिश्कातिन** वग़ैरह आयात जो बज़ाहिर शाने खुदावन्दी के ख़िलाफ़ मालूम होती हैं वह मुतशाबेहात हैं। इसी तरह **इन्नमा अना बशरुन** वग़ैरह वह आयात जो बज़ाहिर शाने मुस्तफ़वी के ख़िलाफ़ हैं मुतशाबेहात हैं लिहाज़ा उनके ज़ाहिर से दलील पकड़ना ग़लत है।

सातवें इस तरह के रोज़-ए-वेसाल के बारे में हुज़ूर ने फरमाया **ऐयुकुम मिस्ली** तुम में हम जैसा कौन है? बैठ कर नफ़्ल के पढ़ने के बारे में फरमाया **लाकिन्नी लस्तु क-अहदिन मिन्कुम** लेकिन हम तुम्हारी तरह नहीं? सहाब-ए-किराम ने बहुत मौक़ों पर फरमाया **ऐयुना मिस्लुहू** हम में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की तरह कौन है? अहादीस तो फरमा रही हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम हम जैसे नहीं और इस आयत से ज़ाहिर होता

है कि हम जैसे ही हैं। इनमें मुताबिक़त करना ज़रूरी है। वह इसी तरह हो सकती है कि आयत में तावील की जाए।

आठवें इस तरह की तफ़्सीरे रूहुल-बयान सूरः मरयम में **क-ह-य-अ-स** के मातहत है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की तीन सूरतें हैं। सूरते बुशरा, सूरते हक़्क़ी, सूरते मल्की। बशरीयत का ज़िक्र **इन्नमा अना बशरुन**। हक़्क़ी का ज़िक्र हुआ **मन रअनी फ़क़द रअल-हक़्क़ा** जिसने हमको देखा हक़ को देखा। सूरते मल्की का ज़िक्र फरमाया : **ली मअल्लाहे वक़्तुन ला यसउनी फ़ीहे मलकुन मुक़र्रबुन वला नबीयुन मुरसलुन।** बाज़ वक़्त हमको अल्लाह से वह कुर्ब होता है कि न उसमें मुक़र्रब फ़रिश्ता की गुंजाइश है न मुरसल नबी की। मेअराज में सिदरा पहुँच कर ताक़ते जिब्रीली ख़त्म हो गई मगर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की बशरी ताक़त की अभी इब्तिदा थी इस आयत में महज़ एक सूरत का ज़िक्र है।

नवीं इस तरह की **बशरुन मिस्लुकुम** में यह तो फरमाया कि हम तुम जैसे बशर हैं यह न फरमाया कि किस वस्फ़ में तुम जैसे हैं यानी जिस तरह तुम महज़ बन्दे हो न ख़ुदा न ख़ुदा के बेटे न ख़ुदा की सिफ़ात से मौसूफ़। इसी तरह मैं अब्दुल्लाह हूँ न अल्लाह हूँ न इब्नुल्लाह। ईसाइयों ने चन्द मोजज़ात देख कर ईसा अलैहिस्सलाम को इब्नुल्लाह कह दिया। तुम हमारे सैकड़ों मोजज़ात देख कर यह न कह देना बल्कि **अब्दुल्लाहे व रसूलुहू।**

तफ़्सीरे कबीर शुरू पारा 12 ज़ेरे आयत **फ़क़ालल-मलउल्लज़ीना कफ़रू।** क़िस्सए नूह में है कि नबी बशर इसलिए होते हैं कि अगर फ़रिश्ता होते तो लोग उनके मोजज़ात को उनकी मल्की ताक़त पर महमूल कर लेते। आप जब बशर हो कर यह मोजज़ात दिखाते हैं तो उनका कमाल मालूम होता है। ग़र्ज़ेकि अंबिया की बशरीयत उनका कमाल है लिहाज़ा आयत का मक़्सूद यह हुआ कि हम तुम जैसे बशर होकर ऐसे कमालात दिखाते हैं तुम तो दिखा दो।

दसवीं इस तरह कि बहुत से अल्फ़ाज़ वह हैं जो पैग़म्बर अपने लिए इस्तेमाल फरमा सकते हैं और वह उनका कमाल है। मगर दूसरा कोई उनकी शान में यह कहे तो गुस्ताख़ी है। देखो आदम अलैहिस्सलाम ने अर्ज़ किया **रब्बना ज़लम्ना अंफुसना** यूनुस अलैहिस्सलाम ने रब से अर्ज़ किया **इन्नी कुन्तु मिनज़्ज़ालेमीन।** हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने फ़िरऔन से फरमाया : **फ़अलतुहा इज़न व अना मिनज़्ज़ाल्लीन।** लेकिन कोई और अगर उन हज़रात को ज़ालिम या ज़ाल (गुमराह) कहे तो ईमान से ख़ारिज होगा। इसी तरह बशर का लफ़्ज़ भी है।

(2) हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपने मुतअल्लिक़ फरमाया **व अक्रेमू अख़ाकुम** तुम अपने भाई (हमारा) एहतराम करो जिससे मालूम हुआ

कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम हमारे भाई हैं मगर बड़े भाई हैं न कि छोटे।

(3) कुरआन फरमाता है :

इन आयात में रब ने अंबिया-ए-किराम को मदयन, समूद और आद का भाई फरमाया। मालूम हुआ कि अंबिया उम्मतियों के भाई होते हैं।

जवाब : हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपने करमे करीमाना से बतौर तवाज़ु व इंकिसार फरमाया अख़ाकुम इस फरमाने से हम को भाई कहने की इजाज़त कैसे मिली? एक बादशाह अपनी रिआया से कहता है मैं आप लोगों का ख़ादिम हूँ तो रिआया को हक़ नहीं कि बादशाह को ख़ादिम कह कर पुकारे। इसी तरह रब ने इरशाद फरमाया कि हज़रत शुऐब व सालेह व हूद अलैहिमुस्सलाम मदयन और समूद और आद क़ौमों में से थे। किसी और क़ौम के न थे। यह बताने के लिए **अख़ाहुम** फरमाया। यह कहाँ फरमाया कि उनकी क़ौम वालों को भाई कहने की इजाज़त दी गई थी। और हम पहले बाब में साबित कर चुके हैं कि अंबिया-ए-किराम को बराबरी के अल्क़ाब से पुकारना हराम है और लफ़्ज़ भाई बराबर का कलिमा है। बाप भी गवारा नहीं करता कि उसका बेटा उसको भाई कहे।

(4) कुरआन कहता है : **इन्नमल-मुमिनूना इख़्वह** मुसलमान आपस में भाई हैं और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम भी मोमिन हैं लिहाज़ा आप भी हम मुसलमानों के भाई हुए। तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को क्यों न भाई कहा जाए।

जवाब : फिर तो खुदा को भी अपना भाई कहो। क्योंकि वह भी मोमिन है। कुरआन में है **अल्मलिकुल-कुद्दूसुस्सलामुल-मुमिनु** और हर मोमिन आपस में भाई। लिहाज़ा खुदा भी मुसलमानों का भाई मआज़ल्लाह। और भाई की बीवी भाभी होती है और इससे निकाह हलाल और नबी की बीवियाँ मुसलमानों की माएं हैं उन से निकाह करना हराम है। (कुरआन करीम) लिहाज़ा नबी हमारे लिए मिस्ल वालिद हुए। वालिद की बीवी माँ है न कि भाई की। जनाब हम तो मोमिन हैं और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ऐन ईमान। क़सीदा बुर्दा शरीफ़ में है। **फ़स्सिदकु फ़िल-ग़ारे वस्सिद्दीक़ु लम यरामा** यानी ग़ारे सौर में सिद्क़ भी था सिद्दीक़ भी थे। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम और आम मुमिनीन में सिर्फ़ लफ़्ज़ मोमिन का इश्तिराक है जैसे रब और आम मुमिनीन में न कि हक़ीक़ते मोमिन में। हम और तरह वह और तरह। इसकी तफ़्सील हम जवाब नम्बर 1 में बयान कर चुके हैं।

(5) हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम औलादे आदम हैं हमारी तरह खाते, पीते, सोते, जागते और ज़िन्दगी गुज़ारते हैं बीमार होते हैं मौत आती है इतनी बातों में शिरकत होते हुए उनको बशर या अपना भाई क्यों न कहा जाए।

जवाब : इसका फ़ैसला मसनवी में ख़ूब फरमा दिया है –

तरजमा : कुफ़्फ़ार ने कहा कि हम और पैग़म्बर बशर हैं क्योंकि हम और वह दोनों खाने सोने में वाबस्ता हैं। अन्धों ने यह न जाना कि अंजाम में बहुत बड़ा फ़र्क़ है। भिड़ और शहद की मक्खी एक ही फूल चूसती है मगर इससे ज़हर और उस से शहद बनता है। दोनों हिरन एक ही दाना पानी खाते पीते हैं और एक से पाखाना दूसरे से मुश्क बनता है। यह जो खाता हे उससे पलीदी बनती है नबी के खाने से नूरे ख़ुदा होता है।

यह सवाल तो ऐसा है जैसे कोई कहे कि मेरी किताब और कुरआन एक जैसे हैं क्योंकि यह दोनों एक ही रौशनाई से एक काग़ज़ पर एक ही क़लम से लिखी गईं। एक ही क़िस्म के हुरूफ़े तहज्जी से दोनों बनीं। एक ही प्रेस में छपी। एक ही जिल्द साज़ ने जिल्द बांधी। एक ही अल्मारी में रखी गईं फिर इनमें फ़र्क़ ही क्या है? मगर कोई बेवक़ूफ़ नहीं कहेगा कि इन ज़ाहिरी बातों से हमारी किताब कुरआन की तरह हो गई। तो हम साहिबे कुरआन की मिस्ल किस तरह हो सकते हैं? यह न देखा कि हुज़ूर का कलिमा पढ़ा जाता है उनको मेअराज हुई। उनको नमाज़ में सलाम करते हैं उन पर दरूद भेजते हैं। तमाम अंबिया व औलिया उनके ख़ुद्दामे बारगाह हैं। यह औसाफ़ मा व शुमा तो क्या मलाइका को भी न मिले।

हुज़ूर अलैहिस्सलाम बशर हैं आम बशर नहीं
याक़ूत पत्थर है मगर आम पत्थर नहीं

कुछ देवबन्दी कहते हैं कि अगर हुज़ूर को बशर कहना हराम है तो चाहिए कि इंसान या बंदा कहना भी हराम हो कि इन सबके माना क़रीब क़रीब हैं फिर तुम कलिमा में **अब्दुहू व रसूलुहू** क्यों कहते हो?

जवाब : यह है कि लफ़्ज़ बशर कुफ़्फ़ार बनीयत तौहीन कहते थे, और नबी को रब ने इंसान या अब्द बतौर ताज़ीम फरमाया **ख़लक़ल-इंसाना अल्लमहुल-बयान** और **असरा बेअब्देही लैलन**। लिहाज़ा यह अल्फ़ाज़ ताज़ीमन कहना जाइज़ और बशर कहना हराम है जैसे **राइना** और **उंज़ुरना** हम माना हैं। मगर **राइना** कहना हराम है कि यह तरीक़-ए-कुफ़्फ़ार है।

डॉक्टर इक़बाल ने क्या ख़ूब फरमाया –

अब्द दीगर अब्दहू चीज़े दीगर
ओ सरापा इंतिज़ार ऐन मुंतज़िर

हुज़ूर की अब्दीयत से रब की शान ज़ाहिर होती है और रब की अज़्मत से हमारी अब्दीयत चमकी। वज़ीर भी शाही ख़ादिम है और सिपाही भी। मगर वज़ीर से बादशाह की शान का ज़ुहूर और शाही नौकरी से सिपाही की इज़्ज़त।

(6) शमाइले तिर्मिज़ी में हज़रत सिद्दीक़ा की रिवायत है कि फरमाती हैं : **काना बशरुन मिनल-बशरे** हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम बशरों में से एक बशर थे। इसी तरह जब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने आइशा सिद्दीक़ा को अपनी ज़ौजियत से मुशर्रफ़ फ़रमाना चाहा। तो सिद्दीक़ रज़ि अल्लाहु अन्हु ने अर्ज़ किया कि मैं आपका भाई हूँ। क्या मेरी दुख़्तर आपको हलाल है। देखो हज़रत आइशा ने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को बशर कहा और सिद्दीक़ ने अपने को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को भाई बताया।

जवाब : बशर या भाई कह कर पुकारना या मुहावरा में नबी अलैहिस्सलातु वस्सलाम को यह क़हना हराम है। अक़ीदा के बयान या दरयाफ़्त मसाइल के और अहकाम हैं। हज़रत सिद्दीक़ा या सिद्दीक़ रज़ि अल्लाहु अन्हुमा गुफ़्तगू में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को भाई या बशर न कहते थे। यहाँ ज़रूरतन इस कलिमा को इस्तेमाल फरमाया है। सिद्दीक़तुल-कुबरा तो यह फरमा रही हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ज़िन्दगी निहायत बेतकल्लुफ़ी और सादगी से आम मुसलमानों की तरह गुज़री कि अपना हर काम अपने हाथ से अंजाम देते थे। इसी तरह हज़रत सिद्दीक़े अकबर ने मसला दरयाफ़्त किया कि हुज़ूर ने मुझे ख़िताबे इख़्वह से नवाज़ा है। क्या इस ख़िताब पर हक़ीक़ी भाई के अहकाम जारी होंगे या नहीं? और मेरी औलाद हुज़ूर को हलाल होगी या नहीं? हम भी अक़ीदे के ज़िक्र में कहते हैं कि नबी बशर होते हैं। हज़रत ख़लील ने एक ज़रूरत पर हज़रत सारा को फरमा दिया **हाज़ेही उख़्ती** यह मेरी बहन हैं हालांकि वह आपकी बीवी थीं। इससे यह लाज़िम नहीं आता। हज़रत सारा अब आपको भाई कह कर पुकारतीं।

हम उन हज़रात का आम मुहावरा दिखाते हैं सब को मालूम है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम रिश्ता में सिद्दीक़ा के ज़ौज (शौहर) और सैयदना अली के भाई हज़रत अब्बास के भाई की औलाद हैं। मगर यह हज़रात जब भी रिवायत हदीस करते हैं तो सिद्दीक़ा यह नहीं फरमातीं कि मेरे ज़ौज (शौहर) ने फ़रमाया, हज़रत अब्बास या हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हुमा यह नहीं कहते कि हमारे भतीजे या हमारे भाई ने यह फरमाया। सब यही फरमाते हैं : **क़ाला रसूलुल्लाहे सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम** तो जो हज़रात रिश्ता के लिहाज़ से भाई हैं वह भी भाई नहीं कहते। तो हम कमीनों गुलामों को क्या हक़ है कि भाई कहें?

जनाब शुरूए इस्लाम में तो यह हुक्म था कि जो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से कुछ अर्ज़ करना चाहे वह पहले कुछ सदक़ा दे दे बाद में अर्ज़ करे। कुरआन फरमाता है।

तरजमा : ऐ ईमान वालो! जब तुम रसूल से कोई बात आहिस्ता अर्ज़ करना चाहो तो अपनी अर्ज़ से पहले कुछ दे लो।

सैयदना अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने इस पर अमल भी किया कि एक दीनार ख़ैरात करके दस मसाइल दरयाफ़्त किएं (तफ़्सीरे ख़ाज़िन यही आयत) फिर यह हुक्म अगरचे मंसूख़ हो गया। मगर महबूब अलैहिस्सलाम की अज़्मते शान का तो पता लग गया कि नमाज़ में रब से हम कलाम हो तो सिर्फ़ वुज़ू करो लेकिन हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से अर्ज़ मअरूज़ करना हो तो सदक़ा करो। फिर भाई कहना कहाँ रहा?

बहस निदा या रसूलल्लाह या नअ़र-ए-या रसूलल्लाह

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को दूर या नज़्दीक से पुकारना जाइज़ है उनकी ज़ाहिरी ज़िन्दगी पाक में भी और बाद वफ़ात शरीफ़ भी ख़्वाह एक ही शख़्स अर्ज़ करे, या रसूलल्लाह या एक जमाअत मिल कर नअ़र-ए-रिसालत लगाए या रसूलल्लाह हर तरह जाइज़ है। इस बहस को हम दो बाब में तक़्सीम करते हैं।

पहला बाब

निदा या रसूलल्लाह के सुबूत में

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को निदा करना क़ुरआने करीम, फ़ेअ़ले मलाइका, फ़ेअ़ले सहाबा किराम और अमले उम्मत से साबित है। क़ुरआन करीम ने बहुत मक़ामात में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को निदा फ़रमाई।

या ऐयुहन्नबीयु या ऐयुहर्रसूलु या एयुहलमज़म्मिल या ऐयुहलमुदस्सिर

वग़ैरह इन तमाम आयात में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को पुकारा गया है। हाँ दीगर अंबिया-ए-किराम को उनके नाम से पुकारा। या मूसा, या ईसा या यह्या या इब्राहीम या आदम वग़ैरह मगर महबूब अलैहिस्सलाम को प्यारे-प्यारे अल्क़ाब से निदा फ़रमाई।

बल्कि क़ुरआन ने आम मुसलमानों को भी पुकारा **या ऐयुहल्लज़ीना आमनू** और मुसलमानों को हुक्म दिया कि हमारे महबूब अलैहिस्सलाम को पुकारो मगर अच्छे अल्क़ाब से **ला तज्अलू दुआअर्रसूले बैनकुम क-दुआए बाज़ेकुम बाज़न**। इसमें हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को पुकारने से नहीं रोका गया बल्कि फ़रमाया गया है कि औरों की तरह न पुकारो। क़ुरआन ने फ़रमाया : **उदऊहुम लेआबाइहिम** उनको उनके बाप की तरफ़ निस्बत करके पुकारो। इस आयत में इजाज़त है कि ज़ैद इब्ने हारसा रज़ि अल्लाहु अन्हु को पुकारो। मगर उनको इब्ने हारसा कहो इब्ने रसूलुल्लाह न कहो। इसी तरह कुफ़्फ़ार को इजाज़त दी गई कि वह अपने मददगारों को अपनी इम्दाद के लिए बुला लें।

वदऊ शुहदाअकुम मिन दूनिल्लाहे इन कुन्तुम सादेक़ीन।

मिश्कात पहली हदीस (स० : 11) में है कि हज़रत जिब्रील ने अर्ज़ किया **या मुहम्मद अख़्बिरनी अनिल-इस्लाम** निदा पाई गई। मिश्कात **बाब वफ़ातिन्नबी** में है कि बवक़्ते वफ़ात मलकुल-मौत ने अर्ज़ किया : **या मुहम्मद इन्नल्लाहा अरसलनी इलैका** निदा पाई गई। इब्ने माजा **बाब सलातिल हाजा** में हज़रत इब्ने हनीफ़ ने रिवायत है कि एक नाबीना बारगाहे रिसालत में हाज़िर हो कर तालिबे दुआ हुए। उनको यह दुआ इरशाद हुई।

तरजमा : ऐ अल्लाह! मैं तुझसे माँगता हूँ और तेरी तरफ़ हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम नबीयुर्रहमा के साथ मुतवज्जेह होता हूँ। या मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मैंने आपके ज़रिया से अपने रब की तरफ अपनी इस हाजत में तवज्जोह की ताकि हाजत पूरी हो। ऐ अल्लाह मेरे लिए हुज़ूर की शफ़ाअत क़बूल फरमा अबू इसहाक़ ने कहा कि यह हदीस सहीह है। यह दुआ क़यामत तक के मुसलमानों को सिखाई गई है। इसमें निदा भी है और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से मदद भी माँगी है।

आलमगीरी जिल्द अव्वल किताबुल-हज्ज आदाबे ज़ियारत क़ब्रे नबी अलैहिस्सलाम में है।

तरजमा : ऐ नबी आप पर सलाम हो मैं गवाही देता हूँ कि आप अल्लाह के नबी हैं। फिर फरमाते हैं :

यानी सिद्दीक़े अकबर को यूं सलाम पेश करे कि आप पर सलाम हो ऐ अल्लाह के सच्चे जांनशीन, आप पर सलाम हो ऐ रसूलल्लाह के ग़ार के साथी और हज़रत फ़ारूक़ को यूं सलाम करे आप पर सलाम हो ऐ मुसलमानों के अमीर आप पर सलाम हो ऐ इस्लाम को चमकाने वाले, आप पर सलाम हो ऐ बुतों को तोड़ने वाले रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा। इसमें हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को भी निदा है और हुज़ूर के पहलू में आराम फरमाने वाले हज़रत सिद्दीक़ व फ़ारूक़ को भी। अकाबिरे उम्मत औलिया मिल्लते मशाइख़ व बुज़ुर्गाने दीन अपनी दुआओं और वज़ाइफ़ में यारसूलल्लाह कहते हैं। क़सीदा बुर्दा में है।

तरजमा : ऐ बेहतरीन मख़्लूक़ आपके सिवा मेरा कोई नहीं कि मुसीबते आम्मा के वक़्त जिसकी पनाह लूं।

इमाम ज़ैनुल-आबेदीन फरमाते हैं अपने क़सीदा में –

या रहमतल-लिल-आलमीना अदरिक लेज़ीनिल-आबेदीना

ऐ रहमतुल्लिल-आलमीन ज़ैनुल-आबेदीन की मदद को पहुँचो

महबूसु ऐदिज़्ज़ालेमीना फ़ी मौकेबिन वल-मुज़्देहिम

वह इस इज़्देहाम में ज़ालिमों के हाथों में क़ैद है

मौलाना जामी अलैहिर्रहमा फरमाते हैं।

तरजमा : जुदाई से आलम की जान निकल रही है। या नबी रहम फरमाओ रहम फरमाओ। क्या आप रहमतुल-लिल-आलमीन नहीं हैं? फिर हम मुज्रिमों से फ़ारिग़ क्यों हो बैठे।

हज़रत अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह अपने क़सीदा नौमान में फरमाते हैं।

अपने पेशवाओं के पेशवा मैं दिली इरादे से आपके हुज़ूर आया हूँ आपकी रज़ा का उम्मीदवार हूँ। और अपने आपको आपकी पनाह में देता हूँ। इन अश्आर में हुज़ूर को निदा भी है और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से इस्तेआनत (मदद) भी और यह निदा दूर से बाद वफ़ात शरीफ़ है। तमाम मुसलमान नमाज़ में कहते हैं **अस्सलामु अलैका या ऐयुहन्नबीयु व रहमतुल्लाहे व बरकातुहू।** यहाँ हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को पुकारना वाजिब है। अत्तहीयात के मुतअल्लिक़ हम शामी और अश्इतुल्लम्आत की इबारतें हाज़िर व नाज़िर की बहस में पेश कर चुके हैं वहाँ देखो। यह गुफ़्तगू थी तन्हा-तन्हा या रसूलल्लाह कहने की। अगर बहुत लोग मिल कर नअर-ए-रिसालत लगाएं तो भी जाइज़ है। क्योंकि जब हर शख़्स को या रसूलल्लाह कहना जाइज़ हुआ तो एक साथ मिल कर भी कहना जाइज़ है। चन्द जायज़ चीज़ों को मिलाने से मज्मूआ जायज़ ही होगा जैसे बिरयानी हलाल है। इसलिए कि हलाल चीज़ों का मज्मूआ है। और इसका सुबूत साफ़ भी है।

मुस्लिम आख़िर जिल्द दोम **बाब हदीसिल-हिजरते** में हज़रत बरा रज़ि अल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि जब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम हिजरत फरमा कर मदीना पाक दाख़िल हुए।

तरजमा : तो औरतें और मर्द घरों की छतों पर चढ़ गए और बच्चे और गुलाम गली कूचों में मुतफ़र्रिक़ हो गए नारे लगाते थे या मुहम्मद या रसूलल्लाह या मुहम्मद या रसूलल्लाह।

इस हदीस मुस्लिम से नार-ए-रिसालत का साफ़ सुबूत हुआ और मालूम हुआ कि तमाम सहाब-ए-किराम नारा लगाया करते थे। इसी हदीसे हिजरत में है कि सहाबा किराम ने जुलूस भी निकाला है और जब भी हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम सफर से वापस मदीना पाक तशरीफ़ लाते तो अह्ले मदीना हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का इस्तिक़्बाल करते और जुलूस निकालते। (देखो मिश्कात व बुख़ारी वग़ैरह) जलसा के मानी हैं बैठक या

नशिस्त, जुलूस इसकी जमा है। जैसे जिल्दा की जमा जुलूद। बमाना कोड़ा। नमाज़ ज़िक्रे इलाही का जलसा है कि एक ही जगह अदा होती है। और हज ज़िक्र का जुलूस कि इसमें घूम फिर कर ज़िक्र होता है। कुरआन से साबित है कि ताबूते सकीना को मलाइका बशक्ले जुलूस लाए। बवक़्ते विलादत पाक और मेअराज में फ़रिश्तों ने हुज़ूर का जुलूस निकाला। और अच्छों की नक़्ल करना भी बाइसे सवाब है। लिहाज़ा यह जुलूस उस असल की नक़्ल है और बाइसे सवाब है।

दूसरा बाब

निदाए या रसूलल्लाह पर ऐतराज़ के बयान में

कुरआने करीम फरमाता है : **वला तदउ मिन दूनिल्लाहे माला यंफ़ऊका वला यज़ुर्रुका।** अल्लाह के सिवा उनको न पुकारो जो तुमको नफ़ा व नुक़सान न पहुँचा सकें। मालूम हुआ कि ग़ैर ख़ुदा का पुकारना मना है। **व यदऊना मिन दूनिल्लाहे मा-ला यंफ़उहुम व ला यज़ुर्रुहुम।** ख़ुदा के सिवा उनको पुकारते हैं जो उनके लिए नाफ़े व मुज़िर नहीं। साबित हुआ कि ग़ैरे ख़ुदा को पुकारना बुत परस्तों का काम है।

जवाब : इन जैसी आयतों में जहाँ भी लफ़्ज़ **दुआ** है इससे मुराद बुलाना नहीं बल्कि पूजना है। (देखो जलालैन और दीगर तफ़ासीर) मानी यह हैं कि अल्लाह के सिवा किसी को मत पूजो। दूसरी आयात इस माना की ताईद करती हैं। रब फरमाता है : **वमन यदउ मअल्लाहे इलाहन आख़रा** जो ख़ुदा के साथ दूसरे माबूद को पुकारे (इबादत करे) मालूम हुआ कि ग़ैरे ख़ुदा को ख़ुदा समझ कर पुकारना शिर्क है। क्योंकि यह ग़ैरे ख़ुदा की इबादत है अगर इन आयात के यह मानी न किए जाएं तो हम ने जो आयात व अहादीस और उलमा-ए-दीन के अक़्वाल पेश किए जिनमें ग़ैरे ख़ुदा को पुकारा गया है सब शिर्क होगा। फिर ज़िन्दा को पुकारो या मुर्दा को, सामने वाले को पुकारो या दूर वाले को, सब ही शिर्क होगा। (रोज़ाना हम लोग बहन, दोस्त, आशना को पुकारते ही हैं) तो आलम में कोई भी शिर्क से न बचा और शिर्क कहते हैं ग़ैरे ख़ुदा को ख़ुदा की ज़ात या सिफ़ात में शामिल करना। किसी को आवाज़ देना पुकारना इसमें कौन सी सिफ़ते इलाही में दाख़िल करना है फिर यह शिर्क क्यों हुआ?

(2) **फ़ज़्कुरुल्लाहा क़्यामन व कुऊदन व अला जुनूबिकुम।** पस अल्लाह को खड़े बैठे और अपनी करवटों पर याद करो। इससे मालूम हुआ कि उठते बैठते ग़ैरे ख़ुदा का नाम जपना शिर्क है। सिर्फ़ ख़ुदा ही का ज़िक्र चाहिए।

जवाब : इस आयत से ज़िक्रे रसूलुल्लाह को हराम या शिर्क समझना नादानी है। आयत तो यह फरमा रही है कि जब तुम नमाज़ से फ़ारिग़ हो जाओ। तो हर हाल में हर तरह ख़ुदा का ज़िक्र कर सकते हो यानी नमाज़ में तो पाबन्दी थी कि बग़ैर वज़ू न हो। सज्दा रुकूअ़ और क़अ़दा में तिलावते कुरआन करीम न हो। बिला उज़्र बैठ कर या लेट कर न हो मगर जब नमाज़ से फ़ारिग़ हो चुके तो यह पाबन्दियाँ उठ गईं। अब खड़े बैठे लेटे हर तरह ख़ुदा को याद कर सकते हो।

इस आंयत में चन्द उमूर क़ाबिले ग़ौर हैं एक यह कि यह अम्र **फ़ज़्कुरुल्लाह** वजूब के लिए नहीं। सिर्फ़ जवाज़ के लिए है कि नमाज़ के अलावा चाहे ख़ुदा को याद करो ख़्वाह ग़ैरे ख़ुदा को, ख़्वाह बिल्कुल ख़ामोश रहो। हर बात की इजाज़त है। दूसरे यह कि अगर यह अम्र वजूब के लिए भी हो तो भी ज़िक्र ग़ैरुल्लाह ज़िक्रुल्लाह की नक़ीज़ (मुमानअत) नहीं। ताकि ज़िक्रुल्लाह के वाजिब होने से यह हराम हो जाए बल्कि ज़िक्रुल्लाह की नक़ीज़ अदमे ज़िक्रुल्लाह है। तीसरे यह कि अगर ज़िक्रुल्लाह की नक़ीज़ ज़िक्र ग़ैरुल्लाह मान भी ली जाए तब भी एक नक़ीज़ (नफ़ी) के वाजिब होने से दूसरी नक़ीज़ ज़्यादा से ज़्यादा हराम होगी न कि शिर्क। मगर ख़्याल रहे कि हराम या फ़र्ज़ होना फ़ेअ़ल की सिफ़त है, न कि अदमे फ़ेअ़ल की। चौथे यह कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का ज़िक्र बिल-वास्ता ख़ुदा ही का ज़िक्र है। **मन युतिइर्रसूला फ़क़द अताअल्लाह।** जिसने रसूल की फरमांबरदारी की उसने अल्लाह की फरमांबरदारी की जब कलिमा, नमाज़, हज, दरूदे व ख़ुतबा अज़ान ग़र्ज़कि सारी इबादात में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का ज़िक्र दाख़िल। और ज़रूरी है तो नमाज़ से ख़ारिज उनका ज़िक्र उठते बैठते क्यों हराम होगा। जो शख़्स हर हाल में उठते बैठते दरूद शरीफ़ या कलिमा पढ़े तो हुज़ूर का ज़िक्र कर रहा है सवाब का मुस्तहिक़ है। पाँचवें इस तरह कि **तब्बत यदा अबी लहबिन।** और सूरः मुनाफ़िक़ून और वह आयात जिनमें कुफ़्फ़ार या बुतों का ज़िक्र है। उनका पढ़ना ज़िक्रुल्लाह है या नहीं। ज़रूर है क्योंकि यह कुरआनी आयात हैं हर कलिमा पर सवाब है। अगरचे इन आयात में मज़्कूर कुफ़्फ़ार या बुत हैं मगर कलाम तो अल्लाह का है। कलामे इलाही का ज़िक्र तो ज़िक्रुल्लाह होता है। मगर रहमते इलाही या नूरे इलाही मुहम्मद रसूलुल्लाह का ज़िक्र ज़िक्रुल्लाह न हो। यह क्या इंसाफ़ है? कुरआन में है **क़ाला फ़िरऔनु** फ़िरऔन ने कहा क़ाला पढ़ने पर तीस सवाब और लफ़्ज़ **फ़िरऔन** पढ़ने पर पचास सवाब, क्योंकि हर हर्फ़ के दस सवाब हैं। तो फिरऔन का नाम कुरआन में पढ़ा गया पचास नेकियाँ मिलीं। और मुहम्मद रसूलुल्लाह का नाम लिया तो मुश्रिक हो गया, यह क्या अक़्ल है?

सातवें इस तरह कि हज़रत याकूब अलैहिस्सलाम फ़िराके हज़रत यूसुफ़ में उठते बैठते हज़रत यूसुफ़ के नाम की रट फरमाते थे और उनकी याद में इस क़दर रोए कि आँखें सफ़ेद हो गईं। इसी तरह हज़रत आदम फ़िराके हज़रत हव्वा में। हज़रत ज़ैनुल-आबेदीन फ़िराक़ इमाम हुसैन में उठते बैठते उनके नाम जपा करते थे।

बताओ उन पर यह हुक्मे शिर्क जारी होगा या नहीं? अगर नहीं तो आज जो आशिक़ हर हाल में अपने नबी की याद करे वह क्यों मुश्रिक होगा? एक ताजिर दिन रात तिजारत का ज़िक्र करता है, तालिबे इल्म दिन रात हर हाल में सबक़ याद करता है वह भी ग़ैरे खुदा का नाम जप रहा है वह क्यों मुश्रिक नहीं?

नोट : दीना नगर पंजाब में हमारा और मौलवी सनाउल्लाह अमृतसरी का इसी मसला निदाए या रसूलल्लाह पर मुनाज़रा हुआ, सनाउल्लाह साहब ने यही आयत पेश की, हमने सिर्फ़ तीन सवाल किए, एक यह कि कुरआन में अम्र कितने मानी में आया है और यहाँ कौन से मानी में इस्तेमाल हुआ? दूसरे यह कि एक नक़ीज़ के वाजिब होने से दूसरी नक़ीज़ हराम होगी या नहीं? तीसरे यह कि ज़िक्रुल्लाह की नक़ीज़ क्या है? ज़िक्र ग़ैरुल्लाह या अदमे ज़िक्रुल्लाह? जिसका जवाब यह दिया कि आपने इन सवालात में उसूले फ़ेक़ह और मंतिक़ को दख़ल दिया है। दोनों इल्म बिदअत हैं यानी जाहिल रहना सुन्नत है। फिर उन से सवाल किया कि बिदअत की सहीह तारीफ़ ऐसी कर दो जिससे महफ़िले मीलाद तो हराम रहे और अख़्बार अह्ले हदीस निकालना सुन्नत हो? यह सवालात अब तक उन पर क़ाइम हैं अभी वह ज़िन्दा हैं कोई साहब उन से जवाबात दिलवा दें हम मश्कूर हूँगे। अफ़्सोस कि सनाउल्लाह साहब तो बग़ैर जवाब दिए दुनिया से चले गए काश कोई उनके मोतक़िद साहब जवाब दे कर उनकी रूह को खुश करें।

(3) बुख़ारी जिल्द दोम **किताबुल-इस्तीज़ान बहस मुसाफ़हा बाबुल-अख़ज़े बिल-यदैन।** (स० 926) में हज़रत इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हमको हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अत्तहीयात में –

अस्सलामु अलैका ऐय्युहन्नबीयु व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू। सिखाया **फ़लम्मा कुबिज़ कुलना अस्सलामु अला** यानी **अलन्नबीय सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम** जब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की वफ़ात हो गई तो हमने अत्तहियात में यूं पढ़ा **अस्सलामु अलन्नबीय**। ऐनी शरह बुख़ारी में इस हदीस के मातहत फ़रमाते हैं।

हदीस के ज़ाहिरी मानी यह हैं कि सहाबा किराम हुज़ूरे अकरम की ज़िन्दगी पाक में **अस्सलामु अलैका** काफ़ ख़िताब से कहते थे लेकिन जबकि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की वफ़ात हो गई तो ख़िताब छोड़ दिया और लफ़्ज़ ग़ायब से ज़िक्र किया और कहने लगे **अस्सलामु अलन्नबीये।**

इस हदीस और शरह की इबारत से मालूम हुआ कि अत्तहीयात में **अस्सलामु अलैका** कहना ज़िन्दगी पाक मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम में था। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की वफ़ात के बाद अत्तहीयात में भी निदा को छोड़ दिया गया। तो जब सहाबा किराम ने अत्तहीयात में से निदा को निकाल दिया तो जो शख़्स नमाज़ के ख़ारिज में या रसूलल्लाह वग़ैरह कहे तो बिल्कुल ही मुश्रिक है।

जवाब : बुख़ारी और ऐनी की यह इबारात तो आपके भी ख़िलाफ़ हैं क्योंकि आज तक किसी इमाम मुज्तहिद ने अत्तहीयात के बदलने का हुक्म न दिया। इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु ने हज़रत इब्ने मसऊद की और इमाम शाफ़ई ने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हुम की अत्तहीयात इख़्तियार फरमाई मगर दोनों अत्तहीयात में **अस्सलामु अलैका ऐयुहन्नबी** है। ग़ैर मुक़ल्लिद भी ख़्वाह सनाई हों या ग़ज़नवी यही ख़िताब वाली अत्तहीयात पढ़ते हैं जिससे मालूम होता है कि कुछ सहाबाए किराम ने अपने इज्तिहाद से अत्तहीयात को बदला। और हदीस मरफ़ूअ के मुक़ाबिल इज्तिहाद सहाबी क़बूल नहीं और इन सहाबा किराम ने भी इसलिए तब्दील न किया कि निदाए ग़ैब हराम है वरना ज़िन्दगी पाक में दूर रहने वाले सहाबा ख़िताब वाली अत्तहीयात न पढ़ते। आख़िर यमन, ख़ैबर, मक्का मुकर्रमा, नज्द, इराक़ तमाम जगह नमाज़ होती थी। तो उसमें वही अत्तहीयात पढ़ी जाती थी। निदा ग़ैब बराबर होती थी क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम तो हिजाज़ में तशरीफ़ फ़रमा थे और निदा वाली अत्तहीयात हर जगह पढ़ी जा रही थी न हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने मना फरमाया न सहाबाए किराम ने कुछ शुबह किया। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अत्तहीयात सिखाते वक़्त यह न फरमाया था कि यह अत्तहीयात सिर्फ़ हमारी ज़िन्दगी पाक में है और हमारी वफ़ात शरीफ़ के बाद दूसरी पढ़ना।

फ़तावा रशीदीया जिल्द अव्वल **किताबुल-अक़ाइद** (सफ: 17) में है। "लिहाज़ा लफ़्ज़े ख़िताब को बदलना ज़रूरी नहीं और इसमें तक़्लीद कुछ सहाबा की ज़रूरी नहीं। वरना ख़ुद हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम फरमाते कि बाद मेरे इंतिक़ाल के ख़िताब न करना। बहरहाल लफ़्ज़े ख़िताब रखना औला है। असल तालीम इसी तरह है "ख़ुलासा जवाब यह हुआ कि बाज़ सहाबा का यह फ़ेअ़ल हुज्जत नहीं वरना लाज़िम आएगा कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना पाक में शिर्क होता रहा। और मना न फरमाया गया। बाद में भी बाज़ ने बदला न कि कुल ने। बल्कि मिर्क़ात **बाबुत्तशह्हुद** अख़ीर फ़स्ल में है।

इससे मालूम हुआ कि सहाबा किराम ने अत्तहीयात हरगिज़ न बदली यह सिर्फ़ रावी की फ़हम है न कि असल वाक़या (4) कुछ वहाबी कहते हैं कि

किसी नबी या वली को दूर से यह समझ कर पुकारना कि वह हमारी आवाज़ सुनते हैं शिर्क है क्योंकि दूर की आवाज़ सुनना तो ख़ुदा ही की सिफ़त है। ग़ैरे ख़ुदा में यह ताक़त मानना शिर्क है। अगर यह अक़ीदा न हो तो या रसूलल्लाह या ग़ौस वग़ैरह कहना जाइज़ है। जैसे हवा को निदा दिया करते हैं "सुन ऐ बादे सबा" वग़ैरह कि वहाँ यह ख़्याल नहीं होता कि हवा सुनती है। आजकल आम वहाबी यही उज़्र पेश करते हैं। (फ़तावा रशीदीया वग़ैरह) में भी इसी पर ज़ोर दिया है।

जवाब : दूर से आवाज़ सुनना हरगिज़ ख़ुदा की सिफ़त नहीं क्योंकि दूर से आवाज़ तो वह सुने जो पुकारने वाले से दूर हो। रब तआला तो शहे रग से भी ज़्यादा क़रीब है। ख़ुद फ़रमाता है : **नहनु अक़्रबु इलैहि मिन हब्लिल-वरीद।** हम तो शहे रग से भी ज़्यादा क़रीब हैं व **इज़ा सअलका इबादी अन्नी फ़इन्नी क़रीब।** जब मेरे बन्दे आप से मेरे बारे में पूछें तो फ़रमा दो कि हम क़रीब हैं। **नहनु अक़्रबु इलैहि मिन्कुम वलाकिन ला तुब्सेरून।** हम उस बीमार से बमुक़ाबला तुम्हारे ज़्यादा क़रीब हैं मगर तुम देखते नहीं। लिहाज़ा परवरदिगार तो क़रीब ही की आवाज़ सुनता है हर आवाज़ उससे क़रीब ही होती है कि वह ख़ुद क़रीब है। और अगर मान लिया जाए कि दूर की आवाज़ सुनना उसकी सिफ़त है तो क़रीब से आवाज़ सुनना भी तो उसकी सिफ़त है। लिहाज़ा चाहिए कि क़रीब वाले को भी सामे समझ कर न पुकारो, वरना मुश्रिक हो जाओगे सबको बहरा जानो। और जिस तरह दूर की आवाज़ सुनना ख़ुदा की सिफ़त है। इसी तरह दूर की चीज़ देखना, दूर की ख़ुशबू पा लेना भी तो सिफ़ते इलाही है। और हम इल्मे ग़ैब और हाज़िर व नाज़िर की बहस में साबित कर चुके हैं कि औलिया अल्लाह के लिए दूर व नज़्दीक यक्सां हैं। जब उनकी नज़र दूर व क़रीब को यक्सां देख सकती है तो अगर उनके कान दूर व क़रीब की आवाज़ सुन लें तो क्यों शिर्क हुआ? यह वस्फ़ उनको बअता-ए-इलाही हासिल हुआ अब हम दिखाते हैं कि दूर की आवाज़ अंबिया व औलिया सुनते हैं।

हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम ने कनआन में बैठे हुए हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की क़मीस की ख़ुशबू पाली और फ़रमाया : **इन्नी ला जीदो रीहा यूसुफ़ा** बताओ यह शिर्क हुआ या नहीं? हज़रत उमर रज़ि. अल्लाहु तआला अन्हु ने मदीना पाक से हज़रत सारिया को आवाज़ दी जो मक़ामे नहावन्द में जंग कर रहे थे और हज़रत सारिया ने वह आवाज़ सुन ली। (देखो मिश्कात बाबुल-करामात फ़स्ल सालिस) हज़रत फ़ारूक़ की आँख ने दूर से देखा। हज़रत सारिया के कान ने दूर से सुना। तफ़्सीर रूहुल-बयान व जलालैन व मदारिक वग़ैरह तफ़ासीर में ज़ेरे आयत **व अज़्ज़िन फ़िन्नासे बिल-हज्जे** कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने ख़ाना काबा बना कर पहाड़

पर खड़े होकर तमाम रूहों को आवाज़ दी कि ऐ अल्लाह के बन्दो चलो क़्यामत तक जो भी पैदा होने वाले हैं सबने वह आवाज़ सुन ली। जिसने **लब्बैक** कह दिया वह ज़रूर हज करेगा। और जो रूह ख़ामोश रही वह कभी हज नहीं कर सकती। कहिए यहाँ तो दूर के अलावा पैदाइश से पहले सबने हज़रत ख़लील की आवाज़ सुन ली यह शिर्क हुआ या नहीं? इसी तरह हज़रत ख़लील ने बारगाहे रब्बे जलील में अर्ज़ किया कि मौला मुझे दिखा दे, कि तू मुर्दे किस तरह ज़िन्दा फरमाएगा तो हुक्म हुआ कि चार परिन्दों को ज़िबह करके उनके गोश्त चार पहाड़ों में रखो **सुम्मदउहुन्ना यातीनका सअ़यन**। तुम उन्हें पुकारो दौड़ते हुए आएंगे। देखो मुर्दा जानवरों को पुकारा गया और वह दौड़े। तो क्या औलिया अल्लाह उन जानवरों से भी कम हैं? आज एक शख़्स लन्दन में बैठ कर बज़रियए टेलीफ़ोन हिन्दुस्तान के आदमी से बात करता है और यह समझ कर कि उसको पुकारता है कि हिन्दुस्तान का आदमी इस आला के ज़रिए मेरी बात सुनता है यह पुकारना शिर्क है कि नहीं? तो अगर किसी मुसलमान का अक़ीदा यह हो कि कुव्वते नुबुव्वत टेलीफोन की कुव्वत से ज़्यादा है तो हज़रात अंबिया इस कुव्वत ख़ुदा दाद से हर एक की आवाज़ सुनते हैं। फिर पुकारे **या रसूलल्लाहिल-ग़्यासु** तो क्यों शिर्क हुआ? हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम ने एक सफ़र में जाते हुए एक जंगल में च्यूंटी की आवाज़ दूर से सुनी वह कहती है :

ऐ च्यूंटियों अपने घरों में चली जाओ, तुम्हें कुचल न डालें सुलेमान और उनका लश्कर बेख़बरी में। (पारा 19 सूरः नमल) तफ़्सीरे रूहुल-बयान वग़ैरह में इसी आयत के मातहत है कि आपने तीन मील से च्यूंटी की यह आवाज़ सुनी। ख़्याल तो करो कि च्यूंटी की आवाज़ और तीन मील का फ़ासिला। कहिए यह शिर्क हुआ या कि नहीं? मिश्कात **बाब इस्बाते अज़ाबिल-क़ब्र** में है कि दफ़न के बाद मैयत क़ब्र में से बाहर वालों के पाँव की आवाज़ सुनता है और ज़ाइरीन को देखता और पहचानता है। इसीलिए क़ब्रिस्तान में जाकर अह्ले कुबूर को सलाम करना चाहिए। इस क़द्र मिट्टी के नीचे हो कर इतनी आहिस्ता आवाज़ को सुनना किस क़दर दूर की आवाज़ को सुनना है। कहो शिर्क हुआ या कि नहीं? हम बहस इल्मे ग़ैबे औलिया अल्लाह में मिश्कात **किताबुद्दावात** की हदीस नक़्ल कर चुके हैं, कि अल्लाह का वली ख़ुदाई ताक़त से देखता, सुनता और छूता है। जिसको ख़ुदा तआला अपनी कुव्वत अता फरमा दे। वह अगर दूर से सुन ले तो क्यों शिर्क है? मुख़ालेफ़ीन के मोतमद और मोतबर आलिम मौलवी अब्दुल-हई साहब लखनवी फतावा अब्दुलहई **किताबुल-अक़ाइद** सफ़ः 43 में इस सवाल के जवाब में कि एक शख़्स कहता है कि **लम यलिद वलम यूलद** हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की शान है और **कुल हुवल्लाहु अहद** हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की सिफ़त है। एक हदीस नक़्ल फरमाते हैं।

हज़रत अब्बास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने पूछा कि या रसूलल्लाह चाँद आपके साथ क्या मुआमला करता था जबकि आप चालीस दिन के थे। आपने फरमाया कि मादरे मुश्फ़ेक़ा ने मेरा हाथ मज़्बूत बाँध दिया था। उसकी अज़ीयत से मुझको रोना आता था और चाँद मना करता था। हज़रत अब्बास ने अर्ज़ किया कि उन दिनों आप चेहल रोज़ा (चालीस दिन) के थे। यह हाल क्योंकर मालूम हुआ? फरमाया लौहे महफ़ूज़ पर क़लम चलता था और मैं सुनता था हालांकि शिकमे मादर में था और फ़रिश्ते अर्श के नीचे तस्बीह करते थे। और मैं उनकी तस्बीह की आवाज़ सुनता था हालांकि शिकमे मादर में था। इस रिवायत से तो साबित हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम वालिदा माजिदा के शिकम में ही अर्श व फ़र्श की तमाम आवाज़ें सुनते थे। हदीस में है कि जब कोई औरत अपने शौहर से लड़े तो जन्नत से हूर पुकार कर उसे मलामत करती है। मालूम हुआ कि घर की कोठरी की जंग को हूर इतनी दूर से देखती और सुनती है और फिर उसे इल्मे ग़ैब भी। कि उस आदमी का अंजाम बख़ैर होगा। दूरबीन से दूर की चीज़ें देखते हैं रेडियो व टेलीफोन से दूर की आवाज़ सुनते हैं तो क्या नूरे नुबुव्वत व विलायत की ताक़त बिजली की ताक़त से भी कम है। मेअराज में हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने जन्नत में हज़रत बिलाल के क़दम की आहट सुनी। हालांकि बिलाल को मेअराज न हुई थी और अपने घर ही में थे। यहाँ नमाज़े तहज्जुद के लिए चल फिर रहे होंगे। वहाँ आहट सुनी जा रही थी। और अगर हज़रत बिलाल भी बजिस्मे मिसाली जन्नत में पहुँचे तो हाज़िर व नाज़िर का सुबूत हुआ।

इन सब बातों के मुतअल्लिक़ मुख़ालिफ़ यही कहेगा कि वह तो ख़ुदा ने सुनाया तो उन हज़रात ने सुन लिया। बस हम भी यही कहते हैं कि अंबिया व औलिया को ख़ुदा दूर की आवाज़ें सुनाता है तो यह सुनते हैं। ख़ुदा तआला की यह सिफ़त ज़ाती, उनकी अताई, ख़ुदा की यह सिफ़त क़दीम, उन हज़रात की हादिस, ख़ुदा की यह सिफ़त किसी के क़ब्ज़ा में नहीं, उनकी यह सिफ़त ख़ुदा के क़ब्ज़ा में। ख़ुदा का सुनना बग़ैर कान वग़ैरह हिस्से के। उनका सुनना कान से इतने फ़र्क़ होते हुए शिर्क कैसा? इस निदा के मुतअल्लिक़ और बहुत कुछ कहा जा सकता है मगर इसी क़दर पर ही किफ़ायत है।

बहस औलिया अल्लाह व अंबिया से मदद माँगना

औलिया अल्लाह और अंबिया-ए-किराम से मदद माँगना जाइज़ है जबकि उसका अक़ीदा यह हो कि हक़ीक़ी इम्दाद तो रब तआला ही की है। यह हज़रात उसके मज़हर हैं। और मुसलमान का यही अक़ीदा होता है कोई जाहिल भी किसी वली को ख़ुदा नहीं समझता। इस बहस में दो बाब हैं।

पहला बाब

ग़ैरुल्लाह से मदद माँगने के सुबूत में

ग़ैरुल्लाह से मदद माँगने का सुबूत कुरआनी आयात और अहादीसे सहीहा और अक़्वाले फ़ुक़हा व मुहद्देसीन और ख़ुद मुख़ालेफ़ीन के अक़्वाल से है। हम हर एक को अलाहिदा अलाहिदा बयान करते हैं। कुरआने करीम फरमाता है। **वदऊ शुहादाअकुम मिन दूनिल्लाहि इन कुन्तुम सादेक़ीन।** और अल्लाह के सिवा अपने सारे हिमायतियों को बुला लो। इसमें कुफ़्फ़ार को दावत दी गई है कि कुरआन की मिस्ल एक सूरत बना कर ले आओ और अपनी इम्दाद के लिए अपने हिमायतियों को बुला लो। ग़ैरुल्लाह से मदद लेने की इजाज़त दी गई। **क़ाला मन अंसारी इलल्लाहे क़ालल-हवारीयूना नहनु अंसारुल्लाहे।** कहा मसीह ने कौन है जो मदद करे मेरी तरफ़ अल्लाह के दीन में कहा हवारियों ने हम मदद करेंगे अल्लाह के दीन की। इसमें फरमाया गया कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम ने अपने हवारियों से ख़िताब करके फरमाया कि मेरा मददगार कौन है? हज़रत मसीह ने ग़ैरुल्लाह से मदद तलब की।

मदद करो एक दूसरे की ऊपर नेक कामों के और तक़्वा के और न मदद करो एक दूसरे की ऊपर गुनाह और ज़्यादती के। इस आयत में एक दूसरे की मदद करने का हुक्म दिया गया। **इन तंसुरुल्लाहा यंसुरकुम।** अगर मदद करोगे तुम अल्लाह के दीन की मदद करेगा वह तुम्हारी। इसमें ख़ुद रब तआला ने जो कि ग़नी है अपने बन्दों से मदद तलब फरमाई। रब तआला ने मीसाक़ के दिन अरवाहे अंबिया से हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के बारे में अहद लिया **लतुमिनुन्ना बेही वलतंसुरुन्नहू** कि तुम उन पर ईमान लाना और उनकी मदद करना मालूम हुआ कि अल्लाह के बन्दों की मदद का मीसाक़ के दिन से हुक्म है। **वस्तईनू बिस्सब्रे वस्सलाते** मदद तलब करो साथ सब्र और नमाज़ के। इस आयत में मुसलमानों को हुक्म दिया गया कि नमाज़ और सब्र से मदद हासिल करो। और नमाज़ व सब्र भी तो ग़ैरुल्लाह हैं। **व आयीनूनी बेकुव्वतिन** मदद करो मेरी साथ कुव्वत के। इससे मालूम हुआ कि हज़रत ज़ुल-क़रनैन ने दीवार आहिनी बनाते वक़्त लोगों से मदद तलब फरमाई। रब तआला फरमाता है : **ऐयदका बेनस्रेही व बिल-मुमिनीना।** ऐ नबी रब ने आपको अपनी मदद और मुसलमानों के ज़रिया कुव्वत बख़्शी। फरमाता है : **या ऐयुहन्नबीयु हस्बुकल्लाहु व मनित्तबअका मिनल-मुमिनीना।** ऐ नबी आपको अल्लाह और आपके मुतीअ (फ़रमां बर्दार) मुसलमान काफी हैं। फरमाता है: **फ़इन्नल्लाहा हुवा मौलाहु व जिब्रीलु व सालेहुल-मुमिनीना वल-मलाइकतु बअदा ज़ालिका ज़हीरुन।** यानी रसूल के मददगार अल्लाह

और जिब्रील और मुत्तक़ी मुसलमान हैं। बाद में फ़रिश्ते उनके मददगार हैं। फरमाता है।

तरजमा : यानी ऐ मुसलमानों तुम्हारा मददगार अल्लाह और रसूल और वह मुसलमान हैं जो ज़कात देते हैं नमाज़ पढ़ते हैं। फरमाता है **वल-मुमिनूना वल-मुमिनातु बाजुहुम औलियाओ बाज़िन।** दूसरी जगह फरमाता है **नहनु औलियाउकुम फ़िल-हयातिदुनिया व फ़िल-आख़िरते।** मालूम हुआ कि रब तुम्हारा भी मददगार और मुसलमान भी आपस में एक दूसरे के। मगर रब तआला बिज़्ज़ात मददगार और यह बिल-अर्ज़।

मूसा अलैहिस्सलाम को जब तबलीग़ के लिए फिरऔन के पास जाने का हुक्म हुआ। तो अर्ज़ किया।

ख़ुदाया मेरे भाई को नबी बना कर मेरा वज़ीर कर दे मेरी पुश्त को उनकी मदद से मज़्बूत कर दे। रब तआला ने यह न फरमाया कि तुमने मेरे सिवा का सहारा क्यों लिया मैं काफी नहीं। बल्कि उनकी दरख़्वास्त मंज़ूर फरमा ली। मालूम हुआ कि बन्दों का सहारा बनना सुन्नते अंबिया है।

मिश्कात **बाबुस्सुजूद व फ़ज़्लेही** में रबीआ इब्ने कअब अस्लमी से बरिवायत मुस्लिम हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने मुझसे फरमाया।

तरजमा : कुछ माँग लो मैंने कहा कि मैं आपसे जन्नत में आपकी हमराही माँगता हूँ। फरमाया कुछ और माँगना है। मैंने कहा सिर्फ़ यही, फरमाया कि अपने नफ़्स पर ज़्यादा नवाफ़िल से मेरी मदद करो।

इससे साबित हुआ कि हज़रत रबीआ ने हुज़ूर से जन्नत माँगी। तो यह न फरमाया कि तुमने ख़ुदा के सिवा मुझसे जन्नत माँगी तुम मुश्रिक हो गए। बल्कि फरमाया वह तो मंज़ूर है कुछ और भी माँगो। यह ग़ैरे ख़ुदा से मदद माँगना है फिर लुत्फ़ यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम भी फरमाते हैं आनी ऐ रबीआ तुम भी इस काम में मेरी इतनी मदद करो कि ज़्यादा नवाफिल पढ़ा करो। यह भी ग़ैरुल्लाह से तलबे मदद है।

सवाल को मुतलक़ फरमाने से कि फरमाया कि कुछ माँग लो। किसी ख़ास चीज़ से मुक़ैयद न फ़रमाया। मालूम होता है कि सारा मुआमला हुज़ूर ही के प्यारे हाथ में है। जो चाहें जिसको चाहें अपने रब के हुक्म से दे दें। क्योंकि दुनिया व आख़िरत आप ही की सख़ावत से है और लौह व क़लम का इल्म आपके उलूम का एक हिस्सा है अगर दुनिया व आख़िरत की ख़ैर चाहते हो तो उनके आस्ताने पर आओ और जो चाहो माँग लो।

ख़ानए काबा में 360 बुत रहे और तीन सौ साल तक रहे। फिर हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़रिया काबा पाक हुआ। रब तआला ने बता

दिया कि जब मेरा घर काबा बग़ैर मेरे महबूब की इम्दाद के पाक नहीं हो सकता तो तुम्हारा दिल उनकी नज़रे करम के बग़ैर पाक नहीं हो सकता।

नूरुल-अनवार के ख़ुतबा में ख़ल्क़ की बहस में है। **हुवल-जूदु बिल-कौनैने वत्तवज्जोहु इला ख़ालेक़ेहिमा।** यानी दोनों जहान औरों को बख़्श देना और खुद ख़ालिक़ की तरफ मुतवज्जेह हो जाना हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का खुल्क़ है और ज़ाहिर है दोनों जहान दूसरों को वही बख़्शेगा जो खुद उनका मालिक होगा मिल्कीयत साबित हुई।

शैख़ अब्दुल-हक़ की इस इबारत ने फ़ैसला कर दिया कि दुनिया व आख़िरत की तमाम नेअमतें हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से माँगो। औलाद माँगो, माल माँगो, जन्नत माँगो, जहन्नम से पनाह माँगो। बल्कि अल्लाह को माँगो। एक सूफ़ी शाइर ख़ूब फरमाते हैं।

या रसूलल्लाह मैं आप से अल्लाह को माँगता हूँ
और ऐ अल्लाह मैं तुझसे रसूलुल्लाह को माँगता हूँ

हज़रत क़िब्लए आलमे मुहद्दिस अली पूरी दामा ज़िल्लहुम ने फरमाया कि रब तआला फरमाता है।

इसका तरजमा है कि अगर यह लोग अपनी जानों पर ज़ुल्म करके आपकी बारगाह में आ जाते फ़िर ख़ुदा से अपनी मग़्फ़िरत माँगते और यह रसूल भी उनके लिए दुआ-ए-मग़्फ़िरत करते तो यह लोग आपके पास अल्लाह को पा लेते। मगर किस शान में **तौवाबन रहीमा** तौबा क़बूल फरमाने वाला मेहरबान यानी आपके पास आने से उनको खुदा मिल जाता।

अल्लाह को भी पाया मौला तेरी गली में

अश्इतुल्लम्आत की तरह मिर्क़ात शरह मिश्कात में इसी हदीस के मातहत फरमाया है। **फ़युअ्ती लेमन शाआ मा शाआ।** हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम जिसको जो चाहें दे दें। तफ़्सीरे कबीर जिल्द सोम पारा 7 सूरः इंआम ज़ेरे आयत –

तरजमा : तीसरे उनमें अंबिया हैं यह वह हज़रात हैं जिनको रब ने उलूम और और मआरिफ़ इस क़दर दिए हैं जिन से वह मख़्लूक़ की अन्दरूनी हालत और उनकी रूहों पर तसर्रुफ़ कर सकते हैं और उनको इस क़द्र कुदरत व कुव्वत दी है जिससे मख़्लूक़ के ज़ाहिर पर तसर्रुफ़ कर सकते हैं।

इसी तफ़्सीरे कबीर पारा **अलम वइज़ क़ाला रब्बुका लिल-मलाइकते** की तफ़्सीर में है कि अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है कि जो कोई जंगल में फंस जाए तो कहे **अईनूनी इबादल्लाहे यरहमुकमुल्लाहु** ऐ अल्लाह के बन्दो मेरी मदद करो रब तुम पर रहम

फ़रमाए। तफ़्सीरे रूहुल-ब्यान सूरः माइदा पारा 6 ज़ेरे आयत व **यस्ऊना फ़िल-अर्ज़े फ़सादा।** कि शैख़ सलाहुद्दीन फरमाते हैं कि मुझको रब ने कुदरत दी है कि मैं आसमान को ज़मीन पर गिरा दूँ। अगर मैं चाहूँ तो तमाम दुनिया वालों को हलाक कर दूँ अल्लाह की कुदरत से लेकिन हम इस्लाह की दुआ करते हैं। मसनवी शरीफ़ में है।

औलिया को अल्लाह से यह कुदरत मिली है
कि छूटा हुआ तीर वापस करें

अश्इतुल्लम्आत शुरूअ़ **बाब ज़ियारतिल-कुबूर** में है।

इमाम ग़ज़ाली ने फरमाया कि जिससे ज़िन्दगी में मदद माँगी जाती है उस से उनकी वफ़ात के बाद भी मदद माँगी जाए एक बुज़ुर्ग ने फरमाया कि चार शख़्सों को हमने देखा कि वह क़ब्रों में भी वही अमलदर आमद करते हैं जो कि ज़िन्दगी में करते थे या ज़्यादा। एक जमाअत कहती है कि ज़िन्दा की मदद ज़्यादा मज़बूत है और मैं कहता हूँ कि मुर्दा की मदद ज़्यादा मज़बूत। औलिया की हुकूमत जहानों में है और यह नहीं हैं मगर उनकी रूहों को अरवाह बाक़ी में। हाशियाए मिश्कात **बाब ज़ियारतिल-कुबूर** में है।

नबी अलैहिस्सलाम व दीगर अंबिया-ए-किराम के अलावा और अह्ले कुबूर से दुआ माँगने का बहुत से फुक़हा ने इंकार किया और मशाइख़े सूफ़िया और कुछ फुक़हा ने इसको साबित किया है इमाम शाफ़ई फरमाते हैं कि मूसा काज़िम की क़ब्र क़बूलियते दुआ के लिए आज़मूदा तिरयाक़ है और इमाम मुहम्मद ग़ज़ाली ने फरमाया कि जिस से ज़िन्दगी में मदद माँगी जा सकती है उससे बाद वफ़ात भी मदद माँगी जा सकती है। इस इबारत से मालूम हुआ कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम व दीगर अंबिया-ए-किराम से मदद माँगने में तो किसी का इख़्तिलाफ़ नहीं। कुबूर औलिया अल्लाह से मदद माँगने में इख़्तिलाफ़ है। उलमा-ए-ज़ाहेरीन ने इंकार किया सूफ़िया किराम और फुक़हा अह्ले कश्फ़ ने जाइज़ फरमाया।

हिस्ने हिसीन सफः 202 में है।

जब मदद लेना चाहे तो कहे कि अल्लाह के बन्दो मेरी मदद करो ऐ अल्लाह के बन्दो मेरी मदद करो ऐ अल्लाह के बन्दो मेरी मदद करो।

इसकी शरह **अल-हरज़ुस्समीन** में मुल्ला अली कारी इसी जगह फरमाते हैं।

यानी जंगल में किसी का जानवर भाग जाए तो आवाज़ दे कि ऐ अल्लाह के बन्दो उसे रोक लो। इबादल्लाह के मातहत फरमाते हैं।

यानी बन्दों से या तो फ़रिश्ते या मुसलमान या जिन्न या रिजालुल-ग़ैब यानी अबदाल मुराद हैं। फिर फरमाते हैं **हाज़ा हदीसुन हसनुयं यहताजु इलैहिल-मुसाफ़िरूना व अन्नहू मुजर्रबुन।** यह हदीस हसन है मुसाफ़िरों को इस हदीस की सख़्त ज़रूरत है और यह अमल मुजर्रब है।

शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब **तफ़्सीरे फ़त्हुल-अज़ीज़** सफ़ः 20 पर फरमाते हैं।

तरजमा : समझना चाहिए कि किसी ग़ैर से मदद माँगना भरोसा के तरीक़ा पर कि उसको मदद़े इलाही न समझे हराम है और अगर तवज्जोह हक़ तआला की तरफ़ है और उसको अल्लाह की मदद का एक मज़हर जान कर और अल्लाह की हिक्मत और कारखाना असबाब जान कर उससे ज़ाहिरी मदद माँगी तो इरफान से दूर नहीं है और शरीअत में भी जाइज़ है और इस क़िस्म की इस्तेआनत बिल-ग़ैर अंबिया औलिया ने भी की है लेकिन हक़ीक़त में यह हक़ तआला के ग़ैर से माँगना नहीं है बल्कि उसकी मदद है। तफ़्सीरे अज़ीज़ी सूरः बक़र सफ़ः 460 में शाह अब्दुल–अज़ीज़ साहब फरमाते हैं।

तरजमा : अल्लाह के काम जैसे लड़का देना, रिज़्क़ बढ़ाना, बीमार को अच्छा करना और उसकी मिस्ल को मुश्रेकीन ख़बीस रूहों और बुतों की तरफ निसबत करते हैं और काफिर हो जाते हैं और मुसलमान इन उमूर को हुक्मे इलाही या उसकी मख़्लूक़ की ख़ासियत से जानते हैं जैसे कि दवाएं या अक़ाक़ीर या उसके नेक बन्दों की दुआएं कि वह बन्दे रब की बारगाह से माँग कर लोगों की हाजत रवाई करते और उन मुमिनीन के ईमान में इससे ख़लल नहीं आता।

बुस्तानुल-मुहद्देसीन में शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब शैख़ अबुल-अब्बास अहमद ज़रूक़ी के यह अश्आर नक़्ल करते हैं।

मैंने अपने मुरीद की परागन्दगियों को जमा करने वाला हूँ जबकि ज़माना की मुसीबतें उसको तक्लीफ़ दें और अगर तू तंगी या मुसीबत या वहशत में हो तो पुकार कि ऐ ज़रूक़! मैं फौरन आऊंगा।

तफ़्सीरे कबीर रूहुल-बयान व ख़ाज़िन में सूरः यूसुफ़ ज़ेरे आयत –

तरजमा : जिस किसी की कोई चीज़ गुम हो जाए और वह चाहे कि ख़ुदा वह चीज़ वापस मिला दे तो किसी ऊंची जगह पर क़िब्ला को मुँह करके खड़ा हो और सूरः फ़ातिहा पढ़ कर उसका सवाब नबी अलैहिस्सलाम को हदिया करे। फिर सैयदी अहमद बिन अल्वान को, फिर यह दुआ पढ़े ऐ मेरे आक़ा ऐ अहमद इब्ने अल्वान अगर आपने मेरी चीज़ न दी तो मैं आपको दफ़्तरे औलिया से निकाल दूँगा। पस ख़ुदा तआला उसकी गुमी हुई चीज़

उनकी बरकत से मिला देगा।

इस दुआ में सैयद अहमद इब्ने अल्वान को पुकारा भी उन से मदद भी माँगी उन से गुमी हुई चीज़ भी तलब की और यह दुआ किसने बताई। हन्फ़ियों के फ़क़ीहे आज़म साहब दुर्रे मुख़्तार ने हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु क़सीदा नौमान में फरमाते हैं।

तरजमा : ऐ मौजूदात से अकरम और नेअमते इलाही के ख़ज़ाने जो अल्लाह ने आपको दिया है मुझे भी दीजिए और अल्लाह ने आपको राज़ी किया है मुझे भी आप राज़ी फरमाइए। मैं आपकी सख़ावत का उम्मीदवार हूँ। आपके सिवा अबू हनीफ़ा का ख़िल्क़त में कोई नहीं। इसमें हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से खुली मदद ली गई है। क़सीदाए बुर्दा में है।

अगर हम इन उलमा व फ़ुक़हा व मशाइख़ का कलाम जमा करें जिसमें उन्होंने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से मदद माँगी है तो इसके लिए दफ़्तर दरकार हैं। सिर्फ़ इतने पर ही इक्तिफ़ा करते हैं। और हम सफर बराए ज़ियारत कुबूर में शामी की इबारत नक़्ल करेंगे। जिसमें इमाम शाफ़ई फरमाते हैं कि जब मुझे कोई हाजत पेश होती है तो इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के मज़ार पर आता हूँ, उनकी बरकत से काम हो जाता है। अब्दुल-क़ादिर मुसन्नेफ़ा मुल्ला अली क़ारी सफ़ः 61 में हुज़ूर ग़ौसे आज़म रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का यह क़ौल नक़्ल फरमाया।

यानी जो कोई रंज व ग़म में मुझ से मदद मांगे तो उसका रंज व ग़म दूर होगा और जो सख़्ती के वक़्त मेरा नाम लेकर मुझे पुकारे तो वह शिद्दत दफ़ा होगी और जो किसी हाजत में रब की तरफ मुझे वसीला बनाए तो उसकी हाजत पूरी होगी।

फिर उसी जगह है कि हुज़ूर ग़ौसे पाक नमाज़े ग़ौसिया की तरकीब बताते हैं कि दो रकाअत नफ़्ल पढ़े हर रकाअत में 11,11 बार सूरः इख़्लास पढ़े। सलाम फेर कर 11 बार सलात व सलाम पढ़े फिर बग़दाद की तरफ (जानिबे शुमाल) 11 क़दम चले। हर क़दम पर मेरा नाम लेकर अपनी हाजत अर्ज़ करे और यह दो शेअर पढ़े।

अयुदरिकुनी ज़ैमुन व अन्ता ज़ख़ीरती
व उज़्लमु फ़िद्दुनिया व अन्ता नसीरी
व आरुन अला हामिल–हमा वहुवा मुन्जदी
इज़ा ज़ाआ फ़िल–बैदा इक़ालु बईरी

यह कह कर मुल्ला अली क़ारी फरमाते हैं। **वक़द जुर्रिबा ज़ालिका मिरारन फ़सहहा।** यानी बारहा इस नमाज़े ग़ौसिया का तजरबा किया गया दुरुस्त निकला। कहिए हुज़ूर ग़ौसे पाक मुसलमानों को तालीम देते हैं कि मुसीबत के वक़्त मुझ से मदद माँगो। और हन्फ़ीयों के बड़े मोतबर आलिम

मुल्ला अली क़ारी रहमतुल्लाहे अलैहि इसे बग़ैर तरदीद नक़्ल फरमा कर फ़रमाते हैं कि इसका तजरबा किया गया बिल्कुल सही है। मालूम हुआ कि बुज़ुर्गों से बाद वफ़ात मदद माँगना जाइज़ और फाइदा मन्द है।

यहाँ तक तो हमने कुरआनी आयात और अहादीस और अक़्वाले फ़ुक़हा व उलमा व मशाइख़ से सुबूत दिया अब ख़ुद मना क़रने वालों के अक़्वाल से सुबूत मुलाहिज़ा हों।

मौलवी महमूद हसन साहब देवबन्दियों के शैख़ुल-हिन्द अपने तरजमा कुरआन में जिसके चार पारों का हाशिया उन्होंने लिखा बाक़ी का मौलवी शब्बीर अहमद साहब ने उसमें **इय्याका नस्तईन** के मातहत फरमाते हैं "हाँ अगर किसी मक़्बूल बन्दे को वास्त-ए-रहमते इलाही और ग़ैर मुस्तक़िल समझ कर इस्तेआनते ज़ाहिरी उससे करे तो यह जाइज़ है कि यह इस्तेआनत (मदद) दर हक़ीक़त हक़ तआला ही से इस्तेआनत है" बस फ़ैसला ही कर दिया। यही हमारा दावा है और कोई मुसलमान भी किसी वली या नबी को ख़ुदा नहीं जानता न ख़ुदा का फ़रज़न्द महज़ वसीला मानता है।

फ़तावा रशीदिया जिल्द अव्वल **किताबुल-हज़र वल-इबाहा** सफ़: 64 पर एक सवाल व जवाब है।

सवाल : अश्आर इस मज़्मून के पढ़िये —

या रसूले किब्रिया फ़रियाद है
या मुहम्मद मुस्तफ़ा फ़रियाद है
मदद कर बहरे ख़ुदा हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा
मेरी तुम से हर घड़ी फ़रियाद है?

जवाब : ऐसे अल्फ़ाज़ पढ़ने जल्वत और ख़ल्वत में इस ख़्याल से कि हक़ तआला आपकी ज़ात को बाख़बर फ़रमा दे या महज़ मुहब्बत से बिला किसी ख़्याल के जाइज़ हैं। फ़तावा रशीदीया जिल्द सोम सफ़: 5 पर है कि मौलवी रशीद अहमद साहब से किसी ने सवाल किया कि उन अश्आर को बतौर वज़ीफ़ा या विर्द पढ़ना कैसा है?

या रसूलल्लाहे उंज़ुर हालना
या रसूलल्लाहे इस्मा क़ालना
इन्ननी फ़ी बहरे हम्मिन मुग़रकुन
ख़ुज़ यदी सहिल्लु लना अश्कालना

या क़सीदा बुर्दा का यह शेअर वज़ीफ़ा करना —

या अकरमल—ख़ल्क़े माली मन अलूज़ु बेही
सिवाका इन्दा हुलूलिल—हादिसिल—अममे

जवाब दिया कि ऐसे कलिमात को नज़्म हो या नस्र विर्द करना मक्रूहे तंज़ीही है कुफ़्र व फ़िस्क़ नहीं।

इन दोनों इबारतों में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से मदद माँगने को कुफ़्र व शिर्क नहीं बल्कि जाइज़ ज़्यादा से ज़्यादा मक्रूहे तंज़ीही कहा। क़साइदे क़ासमी में मौलवी क़ासिम साहब फरमाते हैं।

मदद कर ऐ करमे अहमदी कि तेरे सिवा
नहीं है क़ासिम बेकस का कोई हामी कार

इसमें हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से मदद माँगी है और अर्ज़ किया है कि आपके सिवा मेरा कोई भी हामी नहीं यानी खुदा को भी भूल गए। तरजमा सिराते मुस्तक़ीम उर्दू ख़ातमा तीसरा इफ़ादा सफ़: 103 पर मौलवी इस्माईल साहब फरमाते हैं "इसी तरह इन मरातिबे आलिया और मनासिबे रफ़ीआ के साहिबान आलमे मिसाल और आलमे शहादत में तसर्रुफ़ करने के माज़ूने मुतलक़ और मजाज़ होते हैं।" हाजी इम्दादुल्लाह साहब फरमाते हैं।

जहाज़ उम्मत का हक़ ने कर दिया है आपके हाथों
तुम अब चाहे डुबाओ या तराओ या रसूलल्लाह

फ़तावा रशीदीया जिल्द अव्वल **किताबुल-बिदआत** सफ़: 99 में है और कुछ रिवायात में जो आया है **अईनूनी या इबादल्लाह** यानी ऐ अल्लाह के बन्दो मेरी मदद करो तो वह फ़िल-वाक़े किसी मैयत से इस्तेआनत (मदद) नहीं है बल्कि इबादुल्लाह जो सहरा में मौजूद होते हैं उन से तलबे इआनत है कि हक़ तआला ने उनको उसी काम के वास्ते मुक़र्रर किया है।"

इस इबारत से मालूम होता है कि जंगलों में कुछ अल्लाह के बन्दे अल्लाह की तरफ से इसी लिए रहते हैं कि लोगों की मदद करें उन से मदद माँगना जाइज़ है। मुद्दआ हमारा भी यही है कि अल्लाह के बन्दों से इस्तिम्दाद (इमदाद) जाइज़ है। रहा यह फ़ैसला कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मदद फरमा सकते हैं या कि नहीं। हम इसके मुतअल्लिक़ बहुत कुछ अर्ज़ कर चुके हैं। और आइंदा अक़्ली दलाइल में भी बयान करेंगे।

मौलवी मुहम्मद हसन साहब अदिल्लए कामिला में सफ़: 14 पर फरमाते हैं "आप असल में बाद खुदा मालिक आलम हैं जमादात हों या हैवानात। बनी आदम हों या ग़ैर बनी आदम। अल-क़िस्सा आप असल में मालिक हैं और यही वजह है कि अद्ल व महर आपके ज़िम्मा वाजिबुल-अदा न था" सिराते मुस्तक़ीम दूसरी हिदायत का पहला इफ़ादा सफ़: 60 में मौलवी इस्माईल साहब फरमाते हैं "और हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के लिए शैख़ैन पर भी एक गोना फ़ज़ीलत साबित है और वह फ़ज़ीलत आपके फरमांबरदारों का ज़्यादा होना और मक़ामाते विलायत बल्कि कुतबीयत व ग़ौसियत और

अब्दालियत और इन ही जैसे बाक़ी ज़रिये आपके ज़माना से लेकर दुनिया के ख़त्म होने तक आपकी वेसातत से होता है और बादशाहों की बादशाहत और अमीरों की इमारत में आपको वह दख़ल है जो आलमे मलकूत की सैर करने वालों पर मख़्फ़ी नहीं।"

इस इबारत से साफ़ मालूम हुआ कि सलतनते अमीरी विलायते ग़ौसियत हज़रत अली रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से लोगों को मिलती है।

इम्दादुल-फ़तावा मुसन्नेफ़ा मौलवी अशरफ़ अली साहब जिल्द 4 **किताबुल-अक़ाइद वल-कलाम** सफ़: 99 में है "जो इस्तेआनत व इस्तिम्दाद बऐतक़ाद इल्म व क़ुदरत मुस्तक़िल हो वह शिर्क है और जो बऐतक़ाद इल्म व क़ुदरत ग़ैर मुस्तक़िल हो और वह इल्मे क़ुदरत किसी दलील से साबित हो जाए तो जाइज़ है ख़्वाह मुस्तमिद्दु मिन्हु हय हो या मैयत" पस फ़ैसला ही फरमा दिया कि मख़्लूक़ को ग़ैर मुस्तक़िल क़ुदरत मान कर उन से इस्तिम्दाद (मदद) जाइज़ है अगर चे मैयत ही से माँगी जाए। यही हम कहते हैं।

मौलवी अशरफ़ अली साहब ने अपनी किताब **नशरुत्तैयिब** के आख़िर में **शमीमुल-हबीब** के अरबी अशआर का तरजमा किया। जिसका नाम **शम्मुत्तैयिब** रखा। जिसमें हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से बेदरेग़ इम्दाद माँगी। अश्आर हस्बे ज़ैल हैं।

शम्मुत्तैयिब तरजमा शमीमुल-हबीब

मुसन्निफ़ा मौलवी अशरफ़ अली साहब थानवी सफ़: 145

दस्तगीरी कीजिए मेरी नबी
कशमकश में तुम ही हो मेरे वली
जुज़ तुम्हारे है कहाँ मेरी पनाह
फौज कुल्फ़त मुझ पे आ ग़ालिब हुई
इब्ने अब्दुल्लाह ज़माना है ख़िलाफ़
ऐ मेरे मौला ख़बर लीजिए मेरी

औलिया अल्लाह से मदद माँगने का अक़्ली सुबूत

दुनिया आख़िरत का नमूना है और यहाँ के कारोबार उस आलम के कारोबार का पता देते हैं इसीलिए क़ुरआने करीम ने हशर नशर और रब की उलूहियत को दुनियावी मिसालों से साबित फरमाया है। मसलन फरमाया कि ख़ुश्क ज़मीन पर बारिश पड़ती है तो फिर सब्ज़ा ज़ार बन जाती है। इसी तरह बेजान जिस्मों को दोबारा हयात दी जाएगी और फ़रमाया कि तुम

गवारा नहीं करते कि तुम्हारे गुलामों में कोई और शरीक हो तो हमारी मिलकियत में बुतों वग़ैरह को क्यों शरीक मानते हो। ग़र्ज़कि दुनिया आख़िरत का नमूना है और दुनिया में तो देखा गया है कि यहाँ कि बादशाह हर काम ख़ुद अपने हाथ से नहीं करते बल्कि सलतनत के कामों के लिए मुहकमा बना देते हैं और हर मुहकमा में मुख़्तलिफ़ हैसियत के लोग रखते हैं कोई अफसर और कोई मातहत। फिर उन तमाम महकमों का मुख़्तार या हाकिमे आला वज़ीरे आज़म को मुंतख़ब (चुना) करते हैं यानी हर काम बादशाह की मर्ज़ी उसके मंशा से होता है लेकिन बिलावास्ता उसके हाथ से नहीं होता। इसकी वजह यह नहीं है कि बादशाह मजबूरी की वजह से अपना अमला रखता है क्योंकि बादशाह ख़ुद पानी पी सकता है। अपनी अक्सर ज़रूरियाते ज़िन्दगी ख़ुद अंजाम दे सकता है लेकिन रुअब का तक़ाज़ा है कि हर काम ख़ादिमों से लिया जाए और रिआया को हिदायत होती है कि अपनी ज़रूरियात के वक़्त उन मुक़र्रर करदा हुक्काम की तरफ रुजूअ करो। बीमारी में शिफ़ा खाना जाकर डॉक्टर से कहो। मुक़द्दमात में कचेहरी जा कर जज से वकीलों के ज़रिया से कहो वग़ैरह वग़ैरह। इन मसाइब में रेआया का उन हुक्काम की तरफ जाना बादशाह की बग़ावत नहीं है बल्कि यह ऐन उसकी मंशा के मुताबिक़ है कि उसने उनको इसीलिए तो मुक़र्रर किया है हाँ अगर यह रेआया दूसरे को अपना बादशाह बना कर उससे मदद के तालिब हों तो अब बाग़ी हैं क्योंकि शाही इंतिख़ाब वालों को छोड़ा और ग़ैर को अपना हाकिम माना। जब यह बात समझ में आ गई, तो समझो कि यही तरीक़ा सलतनते इलाहिया का है कि वह क़ादिर है कि दुनिया का बड़ा छोटा हर काम अपनी कुदरत से ख़ुद ही पूरा फरमा दे मगर ऐसा नहीं करता बल्कि इंतिज़ामे आलम के लिए मलाइका वग़ैरहुम को मुक़र्रर फरमाया। और उनके अलाहिदा अलाहिदा मुहकमे कर दिए। जान निकालने वालों का एक मुहकमा जिसके अफसरे आला हज़रत इज़राइल हैं। इसी तरह इंसान की हिफ़ाज़त, रिज़्क़ पहुँचाना, बारिश बरसाना, माओं के पेट में बच्चा बनाना, उनकी तक़्दीर लिखना, मदफून मैयतों से सवालात करना, सूर फूंक कर मुर्दों को ज़िन्दा करना और क़यामत क़ायम करना, फिर क़यामत में जन्नत व दोज़ख़ का इंतिज़ाम करना, ग़र्ज़कि दुनिया व आख़िरत के सारे काम मलाइका में तक़्सीम फरमा दिए।

इसी तरह अपने मक़्बूल इंसानों के सुपुर्द भी आलम का इंतिज़ाम किया और उनको इख़्तियाराते ख़ुसूसी अता फरमाए कुतुबे तसव्वुफ़ देखने से पता चलता है कि औलिया अल्लाह के कितने तबक़े हैं और किसके ज़िम्मा कौन कौन से काम हैं। इसकी वजह यह नहीं कि रब तआला उनका मुहताज है, नहीं बल्कि आईने सलतनत का यही तक़ाज़ा है। फिर उन हज़रात को

खुसूसी इख़्तियारात भी दिए जाते हैं। जिसकी वजह से वह फरमाते हैं कि हम यह कर सकते हैं। यह महज़ हमारा क़यास नहीं है बल्कि कुरआन व हदीस इस पर शाहिद हैं। हज़रत जिब्रील ने हज़रत मरयम से कहा। क़ाला **इन्नमा अना रसूलु रब्बिका लेअहबा लके गुलामन ज़कीया।** ऐ मरयम मैं तुम्हारे रब का क़ासिद हूँ आया हूँ ताकि तुमको पाक फ़रज़न्द दूं। मालूम हुआ कि हज़रत जिब्रील बेटा देते हैं। हज़रत मसीह अलैहिस्सलाम फरमाते हैं व **अख़्लुकु लकुम मिनत्तीने कहैअतित्तैरे फ़अनफ़ुख़ु फ़ीहे फ़यकूनु तैरन बेइज़्निल्लाहे।** मैं तुम्हारे लिए मिट्टी से परिन्दे की शक्ल बना कर उसमें फूँकता हूँ तो वह ख़ुदा के हुक्म से परिन्दा बन जाता है। मालूम हुआ कि हज़रत मसीह बइज़्ने इलाही बेजान को जान बख़्शते हैं। **कुल यतवफ़्फ़ाकुम मलकुल-मौतिल्लज़ी वक्किला बेकुम।** फरमा दो कि तुमको मलिकुल-मौत वफ़ात देंगे जो तुम पर मुक़र्रर किए गए हैं। मालूम हुआ कि हज़रत इज़राईल जानदार को बेजान करते हैं। और भी इस क़िस्म की बहुत सी आयात मिलेंगी जिसमें ख़ुदाई कामों को बन्दों की तरफ़ निस्बत किया गया है। रब तआला हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की शान में फरमाता है **व युज़क्कीहिम व युअल्लेमुहुमुल-कितबा वल-हिक्मता।** हमारे महबूब उनको पाक फरमाते हैं और उनको किताब व हिक्मत सिखाते हैं। **अग़नाहुमुल्लाहु व रसूलुहू मिन फ़ज़्लेही** उनको अल्लाह और रसूल ने अपने फ़ज़्ल से ग़नी कर दिया। मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम हर गन्दगी से पाक भी फरमाते हैं और फ़क़ीरों को ग़नी भी करते हैं। **खुज़ मिन अम्वालेहिम सदक़तन तुतह्हिरुहुम व तुज़क्कैहिम बेहा।** आप उनके मालों से सदक़े वुसूल फरमाइए और उन से उनको पाक फरमा दीजिए। मालूम हुआ कि वही अमल ख़ुदा के यहाँ क़बूल है जो बारगाहे रिसालत में मंज़ूर हो जाए।

और क्या अच्छा होता कि अगर वह इस पर राज़ी होते जो अल्लाह व रसूल ने उनको दिया और कहते कि अल्लाह हम को काफी है अब हमको अल्लाह अपने फ़ज़्ल से और रसूल देंगे। मालूम हुआ कि रसूल अलैहिस्सलाम देते हैं।

इन आयात से मालूम हुआ कि अगर कोई कहे कि हमको रसूलुल्लाह इज़्ज़त देते हैं माल व औलाद देते हैं तो सहीह है क्योंकि आयात ने यह बताया। लेकिन मक़्सद वही होगा कि यह हज़रात हुकूमते इलाहिया के हुक्काम हैं रब तआला ने उनको दिया यह हमको देते हैं। इसी तरह मुसीबत के वक़्त औलिया अल्लाह अंबिया-ए-किराम से मदद माँगना भी इसी तरह हुआ जिस तरह कि बीमारी और मुक़द्दमा में बादशाह की रिआया डॉक्टर या हाकिम से मदद माँगती है। कुरआन ने फरमाया।

तरजमा : अगर यह गुनहगार अपनी जानों पर ज़ुल्म करके ऐ महबूब तुम्हारे पास आ जाते और फिर अल्लाह से मग़्फ़िरत माँगते और ऐ महबूब

आप भी उनके लिए दुआए मग़्फ़िरत फ़रमाते तो यह अल्लाह को तौबा क़बूल करने वाला मेहरबान पाते। आलमगीरी किताबुल-हज **बाब आदाबे ज़ियारते क़बरन्नबी।** में फ़रमाते हैं "अब भी जब ज़ाइर रौज़ा पाक पर हाज़िर हो तो यह आयत पढ़े यह तो दुनिया में था। क़ब्र में तीन सवाल नकीरैन करते हैं **अव्वल** तो **मन रब्बुका** तेरा रब कौन है? बन्दा कहता है कि अल्लाह। फिर पूछते हैं कि तेरा दीन क्या है? बन्दा कहता है कि इस्लाम। इन सवालों में इस्लाम की सारी बातें आ गईं। मगर अभी पास नहीं हुआ। बल्कि आख़िरी सवाल होता है कि इस सब्ज़ गुंबद वाले आक़ा को तू क्या कहता है? जब यह साफ़ कहलवा लिया कि हाँ मैं उनको पहचानता हूँ यह मेरे नबी मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं। तब सवालात ख़त्म होते हैं तो क़ब्र में उनके नाम की इम्दाद (मदद) से निजात हुई। क़यामत में लोग तंग आ कर शफ़ी को ही ढूँढेंगे जब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के दरवाज़े तक पहुँच जाएंगे तब हिसाब व किताब शुरू होगा वह भी हुज़ूर की शफ़ाअत से। मालूम हुआ कि रब को मंज़ूर है कि सारा आलम हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का ही मुहताज रहे। यहाँ भी क़ब्र में भी और हश्र में भी। इसीलिए फ़रमाया **वब्तग़ूल इलैहिल-वसीलता।** तुम रब की तरफ़ वसीला तलाश करो यानी हर जगह वसील-ए-मुस्तफ़ा अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ज़रूरत है।"

अगर यहाँ वसीला से मुराद नेक आमाल ही का वसीला मुराद हो तो हम जैसे गुनहगार बद अमल और मुसलमानों के बच्चे दीवाने और वह जो ईमान लाते ही मर जाएं वह सब बेवसीला ही रह जाएं। और नेक आमाल भी तो हुज़ूर ही के तुफ़ैल से हासिल होंगे। फिर भी बिल-वास्ता हुज़ूर ही का वसीला ज़रूरी हुआ। नबी के वसीला के कुफ़्फ़ार भी क़ाइल थे। **व कानू यस्तफ़्तेहूना अलल्लज़ीना कफ़रू।** मक्का मुअज़्ज़मा हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के वसीला से बुतों से पाक हुआ और हुज़ूर ही के वसीला से क़िब्ला बना। **फ़लनुवल्लियन्नका क़िब्लतन तरज़ाहा।** बल्कि हुज़ूर ही के वसीला से क़ुरआन क़ुरआन कहलाया।

शैतान बिला वास्ता अंबिया रब तक पहुँचना चाहता है तो शहाब से मार दिया जाता है। अगर मदीना के रास्ता से जाता तो हरगिज़ न मारा जाता। यही नतीजा उनका भी होगा जो कहते हैं ख़ुदा को मान ख़ुदा के सिवा किसी को न मान।

हमारी इस तक़रीर से इतना मालूम हुआ कि अंबिया व औलिया से मदद माँगना या उनको हाजत रवा जानना न शिर्क है और न ख़ुदा की बग़ावत बल्कि यह ऐन क़ानूने इस्लामी और मंशा इलाही के बिल्कुल मुताबिक़ है। जनाब पर मेअराज में नमाज़ अव्वलन पचास वक़्त की फ़र्ज़ फ़रमाई। फिर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की अर्ज़ पर कम करते करते पाँच रखीं आख़िर

यह क्यों? इसीलिए कि मख़्लूक़ जाने कि नमाज़ पचास की पाँच रहीं। इसमें मूसा अलैहिस्सलाम की मदद शामिल है। यानी अल्लाह के मक़्बूल बाद वफ़ात भी मदद फ़रमाते हैं। रहा मुश्रेकीन का अपने बुतों से मदद माँगना यह बिल्कुल शिर्क है। दो वजह से। **अव्वलन** तो इसलिए कि वह उन बुतों में ख़ुदाई असर और उनको छोटा ख़ुदा मान कर मदद माँगते हैं इसलिए उनको इलाह या शुरका कहते हैं यानी उन बुतों को अल्लाह का बन्दा और फिर उलूहियत का हिस्सादार मानते हैं जैसे कि ईसा अलैहिस्सलाम को ईसाई अल्लाह का बन्दा होने के साथ इब्नुल्लाह या सालिसे सलासा या ऐने अल्लाह मानते हैं। मोमिन इन औलिया व अंबिया को महज़ बन्दा ही मान कर उनको इस तरह का हाजत रवा मानते हैं जैसे कि अह्ले देवबन्द मालदारों को मदरसा का मुआविन व मददगार या तबीब व हाकिम को मुख़्तारे हुकूमत तस्लीम करते हैं। दूसरे इसलिए कि बुतों को रब तआला ने यह इख़्तियारात न दिए वह अपनी तरफ से उनको अपना मुख़्तार मान कर उन से मदद वग़ैरह तलब करते हैं लिहाज़ा वह मुज्रिम भी हैं और अल्लाह के बाग़ी बन्दे भी। जिसकी बेहतरीन मिसाल अभी हम दे चुके हैं। इस फ़र्क़ को शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब ने मल्हूज़ रख कर फ़ैसला फ़रमाया है बिला तश्बीह एक बुत परस्त पत्थर की तरफ सज्दा करता है मुश्रिक है कि उसका फ़ेअल अपनी ईजाद से है। और मुसलमान काबा की तरफ सज्दा करता है। वहाँ भी पत्थर ही की इमारत है मगर मुश्रिक नहीं। क्योंकि उसका सज्दा हक़ीक़त में ख़ुदा को है न कि काबा को और हुक्मे इलाही से है। मुश्रिक का सज्दा ख़िलाफ़े हुक्मे इलाही पत्थर को है। यह फ़र्क़ ज़रूरी है। गंगा के पानी की ताज़ीम करना कुफ़्र है। मगर आबे ज़मज़म की ताज़ीम ईमान है। क्योंकि गंगा के पानी की ताज़ीम अपनी ईजाद से है और आबे ज़मज़म की ताज़ीम हुक्मे शरअ् है इसी तरह मन्दिर के पत्थर की ताज़ीम शिर्क है मगर मक़ामे इब्राहीम की ताज़ीम ईमान हालांकि वह भी पत्थर ही है।

दूसरा बाब

इस्तिम्दादे औलिया अल्लाह पर ऐतराज़ात के बयान में

इस मसला पर मुख़ालेफ़ीन के चन्द मशहूर ऐतराज़ात हैं वही हर जगह बयान करते हैं।

(1) मिश्कात **बाबुल-इंज़ारे वत्तहज़ीर** में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फ़ातिमा ज़हरा से फ़रमाया कि **ला उग़नी अन्के मिनल्लाहे शैअन** मैं तुम्हारी मदद नहीं कर सकता जब आप से फ़ातिमा ज़हरा की मदद न हो सकी तो दूसरों की क्या होगी?

जवाब : यह अव्वले तब्लीग़ का वाक़ेया है। मक़सद यह है कि ऐ फ़ातिमा अगर तुमने ईमान क़बूल न किया तो मैं ख़ुदा के मुक़ाबिल हो कर तुम से अज़ाब दूर नहीं कर सकता। देखो पिसर नूह को इसीलिए **मिनल्लाह** फरमाया। मुसलमानों की हुज़ूर हर जगह इम्दाद फरमाएंगे। रब तआला फरमाता है **अल-अख़िल्लाओ यौमइज़िन बअ़ज़ुहुम लेबअ़ज़िन अदुव्वुन इल्लल-मुत्तक़ीन।** परहेज़गारों के सिवा सारे दोस्त क़्यामत में एक दूसरे के दुश्मन हो जाएंगे हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलमा गुनाहे कबीरा वालों की भी शफ़ाअत फरमाएंगे गिरतों को संभालेंगे। शामी **बाब ग़ुस्लुल-मैय्यित** में है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि क़्यामत में सारे रिश्ते टूट जाएंगे सिवा मेरे नसब और रिश्ता के। वाक़ई देवबन्दियों की हुज़ूर मदद न फरमाएंगे हम चूंकि बेहम्देही तआला मुसलमान हैं हमारी मदद ज़रूरी फरमाएंगे।

(2) **इय्याका नअ़बुदु व इय्याका नस्तईन।** हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझ से ही मदद माँगते हैं।

मालूम हुआ कि इबादत की तरह माँगना भी ख़ुदा से ख़ास है। जब ग़ैरे ख़ुदा की इबादत शिर्क तो ग़ैरे ख़ुदा से इस्तिम्दाद भी शिर्क।

जवाब : इस जगह मदद से मुराद हक़ीक़ी मदद है यानी हक़ीक़ी कारसाज़ समझ कर तुझ से ही मदद माँगते हैं। रहा अल्लाह के बन्दों से मदद माँगना, वह महज़ वास्ता-ए-फ़ैज़े इलाही समझ कर है। जैसे कि क़ुरआन में है। **इनिल-हुक्मु इल्ला लिल्लाह** नहीं है हुक्म मगर अल्लाह का। या फरमाया गया **लहू माफ़िस्समावाते वमा फ़िल-अर्ज़े।** अल्लाह ही की हैं तमाम आसमान व ज़मीन की चीज़ें। फिर हम हुक्काम का हुक्म भी मानते हैं और अपनी चीज़ों पर दावा मिल्कियत भी करते हैं यानी आयत से मुराद है हक़ीक़ी हुक्म और हक़ीक़ी मिल्कियत। मगर बन्दों के लिए बअताए इलाही।

और यह बताओ कि इबादत और मदद माँगने में तअल्लुक़ क्या है? कि इस आयत में इन दोनों को जमा किया गया। तअल्लुक़ यही है कि हक़ीक़ी मुआविन समझ कर मदद माँगना यह भी इबादत ही की एक शाख़ है। बुत परस्त बुतों की परस्तिश करते वक़्त मदद के अल्फ़ाज़ भी कहा करते हैं कि "काली माई तेरी दुहाई" वग़ैरह इसलिए इन दोनों को जमा किया गया। अगर आयत का मतलब यह है कि किसी ग़ैर ख़ुदा से किसी क़िस्म की मदद माँगना भी शिर्क है तो दुनिया में कोई मुसलमान नहीं रह सकता। न तो सहाबए किराम और न क़ुरआन के मानने वाले और न ख़ुद मुख़ालेफ़ीन। हम इसका सुबूत अच्छी तरह पहले दे चुके हैं। अब भी मदरसा के चन्दा के लिए मालदारों से मदद तलब की जाती है। इंसान अपनी पैदाइश से लेकर दफन

क़ब्र बल्कि क़यामत तक बन्दों की मदद का मुहताज है। दाई की मदद से पैदा हुए माँ-बाप की मदद से परवरिश पाई। उस्ताद की मदद से इल्म सीखा। मालदारों की मदद से ज़िन्दगी गुज़ारी। अह्ले क़राबत की तल्क़ीन की मदद से दुनिया से ईमान सलामत ले गए। फिर ग़स्साल व दर्ज़ी की मदद से गुस्ल मिला और कफ़न पहना। क़ब्र खोदने वाला की मदद से क़ब्र खुदी मुसलमानों की मदद से ज़ेरे ख़ाक दफ़न हुए। फिर अह्ले क़राबत की मदद से बाद में ईसाले सवाब हुआ। फिर हम किस मुँह से कह सकते हैं कि हम किसी से मदद नहीं माँगते। इस आयत में कोई क़ैद नहीं है कि किस की मदद और किस वक़्त।

(3) रब तआला फरमाता है। **वमा लकुम मिन दूनिल्लाहि मिन वलीइव्वँला नसीर।** मालूम हुआ कि रब के सिवा न कोई वली है न मददगार।

जवाब : यहाँ वलीयुल्लाह की नफ़ी नहीं बल्कि **वलीयुन मिन दूनिल्लाहे** की नफ़ी है जिन्हें कुफ़्फ़ार ने अपना नासिर व मददगार मान रखा था। यानी बुत व शयातीन। वलीयुल्लाह वह जिसे रब ने अपने बन्दों का नासिर बनाया जैसे अंबिया व औलिया, वाइसराए-लन्दन से हुकूमत करने के लिए चुनकर हो कर आता है। अगर कोई शख़्स किसी को ख़ुद साख़्ता हाकिम मान ले वह मुज्रिम है। सुल्तानी हुक्काम को मानो, ख़ुद साख़्ता हाकिमों से बचो। ऐसे ही रब्बानी हुक्काम से मदद लो। घरेलू नासेरीन से बचो। मूसा अलैहिस्सलाम को रब तआला ने हुक्म दिया कि **इज़्हब इला फ़िरऔना इन्नहू तग़ा।** फ़िरऔन के पास जाओ वह सरकश हो गया। आपने अर्ज़ किया। **वज्अल ली वज़ीरन मिन अहली हारूना अख़ी इशदुद बेही अज़री।** मौला हज़रत हारून को मेरा वज़ीर बना दे जिस से मेरे बाज़ू को कुव्वत हो। रब तआला ने भी न फरमाया कि तुमने मेरे सिवा किसी और का सहारा क्यों लिया? बल्कि मंज़ूर फरमा लिया। मालूम हुआ कि औलिया अल्लाह का सहारा लेना तरीक़-ए-अंबिया है।

(4) दुर्रे मुख़्तार **बाबुल-मुर्तद बहस करामाते औलिया** में है कि **क़ौलु शैअन लिल्लाहे क़ीला बेकुफ़्रेही।** मालूम हुआ कि या अब्दुल-क़ादिर जीलानी **शैअन लिल्लाह** कहना कुफ़्र है।

जवाब : यहाँ **शैअन लिल्लाह** के यह मानी ले कि ख़ुदा की हाजत रवाई के लिए कुछ दो। रब तुम्हारा मुहताज है। जैसे कहा जाता है कि यतीम के लिए कुछ दो और यह मानी वाक़ई कुफ़्र हैं। इसकी शरह में शामी ने फरमाया **अम्मा इन क़सदल-मअना अस्सहीह फ़ज़्ज़ाहिरू अन ला बासा बेही।** यानी अगर इससे सहीह मानी की नीयत की कि अल्लाह के लिए मुझे कुछ दो यह जाइज़ है। और हमारे **शैअन लिल्लाह** का यही मतलब है।

(5)

वह क्या है जो नहीं मिलता ख़ुदा से
जिसे तुम माँगते हो औलिया से

जवाब :

वह चन्दा है जो नहीं मिलता ख़ुदा से
जिसे तुम माँगते हो अग़्निया से
तवस्सुल कर नहीं सकते ख़ुदा से
उसे हम माँगते हैं औलिया से

(6) ख़ुदा के बन्दे हो कर ग़ैर के पास क्यों जाएं? हम उसके बन्दे हैं चाहिए कि उसी से हाजतें माँगें। (तक़्वियतुल-ईमान)।

जवाब : हम ख़ुदा के बन्दे ख़ुदा के हुक्म से ख़ुदा के बन्दों के पास जाते हैं। कुरआन भेज रहा है देखो गुज़िश्ता तक़रीर। और ख़ुदा ने उन बन्दों को इसी लिए दुनिया में भेजा है।

हाकिम हकीम दा दो दवा दें यह कुछ न दें
मरदूद यह मुराद किस आयत ख़बर की है

(7) कुरआने करीम ने कुफ़्फ़ार का कुफ़्रिया भी बयान किया है कि वह बुतों से मदद माँगते हैं। वह बुतों से मदद माँग कर मुश्रिक हुए और तुम औलिया से।

जवाब : और तुम भी मुश्रिक हुए अग़्निया, पुलिस और हाकिम से मदद माँग कर। यह फ़र्क़ हम अपनी अक़्ली तक़रीर में बयान कर चुके हैं। रब तआला फरमाता है। **वमन यल्अनिल्लाहु फ़लन तजिदा लहू नसीरन।** जिस पर ख़ुदा की लानत होती है उसका मददगार कोई नहीं होता। मोमिन पर ख़ुदा तआला की रहमत है। उसके लिए रब तआला ने बहुत मददगार बनाए।

(8) शरह फ़िक़्हे अक्बर में मुल्ला अली क़ारी ने लिखा है कि हज़रत ख़लील ने आग में पहुँच कर हज़रत जिब्रील के पूछने पर भी उन से मदद न माँगी बल्कि फरमाया कि ऐ जिब्रील तुम से कोई हाजत नहीं। अगर ग़ैरे ख़ुदा से हाजत माँगना जाइज़ होता तो ऐसी शिद्दत में ख़लीलुल्लाह जिब्रील से क्यों न मदद तलब करते?

जवाब : यह वक़्ते इम्तिहान था। अन्देशा था कि हर्फ़े शिकायत मुँह से निकालना रब को नापसन्द होगा। इसीलिए ख़लीलुल्लाह ने उस वक़्त ख़ुदा से भी दुआ न की बल्कि फरमाया कि ऐ जिब्रील तुम से कुछ हाजत नहीं और जिस से है वह ख़ुद जानता है। जैसे कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने हज़रत हुसैन रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु की शहादत की ख़बर दी। मगर

मुसीबत के दफ़ा होने की किसी ने भी दुआ न की, न मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम ने, न हज़रत मुर्तज़ा ने, न हज़रत फ़ातिमा ज़हरा ने रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा।

(9) ज़िन्दों से मदद माँगना जाइज़ है मगर मुर्दों से नहीं। क्योंकि ज़िन्दा में मदद की ताक़त है मुर्दा में नहीं। लिहाज़ा यह शिर्क है।

जवाब : कुरआन में है। **व इय्याका नस्तईन** हम तुझ से ही मदद माँगते हैं। इसमें ज़िन्दा और मुर्दे का फ़र्क़ कहाँ है? क्या ज़िन्दा की इबादत जाइज़ है मुर्दे की नहीं? जिस तरह ग़ैर ख़ुदा की इबादत मुतलक़न शिर्क है ज़िन्दा की हो या मुर्दे की इस्तिम्दाद (मदद) भी मुतलक़न शिर्क होनी चाहिए?

मूसा अलैहिस्सलाम ने अपनी वफ़ात के ढाई हज़ार बरस बाद उम्मते मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की यह मदद फरमाई कि शबे मेअराज में पचास नमाज़ों की बजाए पाँच नमाज़ करा दीं। रब तआला जानता था कि नमाज़ें पाँच रहेंगी। मगर बुज़ुर्गाने दीन की मदद के लिए पचास मुक़र्रर फरमा कर फिर दो प्यारों की दुआ से पाँच मुक़र्रर फरमाईं इस्तिम्दाद के मुंकेरीन को चाहिए कि नमाज़ें पचास पढ़ा करें। क्योंकि पाँच में ग़ैरुल्लाह की मदद शामिल है।

यह कुरआन करीम तो फरमाता है कि औलिया अल्लाह ज़िन्दा हैं उनको मुर्दा न कहो और न जानो।

तरजमा : जो अल्लाह की राह में क़त्ल किए गए उनको मुर्दा न कहो बल्कि वह तो ज़िन्दा हैं लेकिन तुम एहसास नहीं करते।

जब यह ज़िन्दा हुए तो इन से मदद हासिल करना जाइज़ हुआ। कुछ लोग कहते हैं कि यह तो शहीदों के बारे में हैं जो कि तल्वार से राहे ख़ुदा में मारे जाएं। मगर यह बिला वजह की ज़्यादती है इसलिए कि आयत में लोहे की तल्वार का ज़िक्र नहीं है जो कि इश्क़े इलाही की तल्वार से मक़्तूल हुए वह भी इसमें दाख़िल हैं। (रूहुल-बयान) इसी लिए हदीसे पाक में आया कि जो डूब कर मरे, जल जाए, ताऊन में मरे, औरत ज़चगी की हालत में मरे, तालिबे इल्म, मुसाफ़िर वग़ैरह वग़ैरह सब शहीद हैं। और अगर सिर्फ़ तल्वार से मक़्तूल तो ज़िन्दा हों बाक़ी सब मुर्दे। तो नबी करीम अलैहिस्सलातु वस्सलाम और सिद्दीक़े अक्बर रज़ि अल्लाहु अन्हु को मआज़ल्लाह मुर्दा मानना लाज़िम आएगा। हालांकि सबका मुत्तफ़ेक़ा अक़ीदा है कि यह हज़रात बहयाते कामिल ज़िन्दा हैं। नीज़ ज़िन्दा और मुर्दे से मदद माँगने की तहक़ीक़ हम सुबूते इस्तिम्दाद में कर चुके हैं कि इमाम ग़ज़ाली फरमाते हैं कि जिससे ज़िन्दगी में मदद ली जा सकती है बाद मौत भी उससे मदद माँगी जाए और उसकी कुछ तहक़ीक़ बोसा तबर्रुकात और सफ़रे ज़ियारते क़ुबूर में भी होगी।

इंशाअल्लाहु तआला।

तफ़्सीरे सावी आख़िर सूर-ए-क़िसस **वला तदओ मअल्लाहे इलाहन आख़रा** की तफ़्सीर में है।

यानी यहाँ ला तदओ के मानी हैं न पूजो लिहाज़ा इस आयत में उन ख़ार्जियों की दलील नहीं जो कहते हैं कि ग़ैरे ख़ुदा से ख़्वाह ज़िन्दा हो या मुर्दा कुछ मांगना शिर्क है, ख़ारजियों की यह बकवास जहालत है क्योंकि ग़ैरे ख़ुदा से माँगना इस तरह कि रब उनके ज़रिया से नफ़ा व नुक़्सान दे कभी वाजिब होता है कि यह तलबे असबाब का हासिल करना है और असबाब का इंकार न करेगा मगर मुंकिर या जाहिल।

इस इबारत से तीन बातें मालूम हुईं। (1) ग़ैरे ख़ुदा से माँगना सिर्फ़ जाइज़ ही नहीं बल्कि वाजिब होता है। (2) इस तलब का इंकार ख़ार्जी करते हैं। (3) तदओ में पूजने की नफ़ी है न कि पुकारने या मदद माँगने की।

(10) बुज़ुर्गाने दीन को देखा गया कि बुढ़ापे में चल फिर नहीं सकते और बादे वफ़ात बिल्कुल बुज़ुर्गाने बेदस्त व पा हैं। फिर ऐसे कमज़ोरों से मदद लेना बुतों से मदद लेने की तरह लग़्व है। इसकी बुराई रब तआला ने बयान की कि **व इन यस्लुबुहुज़्ज़ुबाबु शैअन ला या तस्तंक़िज़ूहु मिन्हु।** यह औलिया अपनी क़ब्रों से मक्खी भी दफ़ा नहीं कर सकते हमारी क्या मदद करेंगे?

जवाब : यह तमाम कमज़ोरियाँ इस जिस्म ख़ाकी पर इसलिए तारी होती हैं कि इसका तअल्लुक़ रूह से कमज़ोर हो गया रूह में कोई कमज़ोरी नहीं। बल्कि बाद मौत और ज़्यादा क़वी हो जाती है कि क़ब्र के अन्दर से बाहर वालों को देखती और क़दमों की आवाज़ सुनती है। ख़ुसूसन अरवाहे अंबिया। रब तआला फरमाता है **व लल-आख़िरतु ख़ैरुन लका मिनल-ऊला।** हर पिछली घड़ी गुज़िश्ता घड़ी से आपके लिए बेहतर है और इस्तिम्दाद (मदद) वली की रूह से है न कि जिस्मे उंसुरी से। कुफ़्फ़ार जिन से मदद माँगते हैं वह रूहानी ताक़त से ख़ाली हैं। फिर वह पत्थरों को अपना मददगार जानते हैं जिनमें यह रूह बिल्कुल नहीं।

तफ़्सीरे रूहुल-बयान पारा 10 आयत **युहिल्लूनहू आमन व युहर्रेमूनहू आमन।** की तफ़्सीर में है कि हज़रत ख़ालिद व उमर ने ज़हर पिया रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने ख़ैबर में ज़हर खाया। मगर बवक़्ते वफ़ात असर ज़ाहिर हुआ, कि उन्होंने मक़ामे हक़ीक़त में रह कर ज़हर पिया थ और ज़हर का असर हक़ीक़त पर नहीं होता। बवक़्ते वफ़ात बशरीयत का ज़ुहूर था कि मौत बशरीयत पर तारी होती है। लिहाज़ा अब असर ज़ाहिर हुआ। इन हज़रात को क़ब्र की मक्खी तो क्या आलम को

पलट देने की ताक़त है मगर इस जानिब तवज्जोह नहीं। खानाए काबा में तीन सौ बरस बुत रहे रब ने दूर न किए। तो क्या ख़ुदा कमज़ोर है अपने घर से नापाकी दूर न कर सका? रब समझ दे।

(11) हज़रत अली और इमाम हुसैन में अगर कुछ ताक़त होती तो खुद दुश्मनों से क्यों शहीद होते? जब वह अपनी मुसीबत दफ़ा न कर सके तो तुम्हारी मुसीबत क्या दफ़ा करेंगे? रब तआला फरमाता है। **व इन यस्लुबुहमुज़्ज़ुबाबु शैअन ला यस्तंक़िज़ूहू मिन्हु।**

जवाब : इनमें दफ़ा मुसीबत की ताक़त तो थी मगर ताक़त का इस्तेमाल न किया क्योंकि रब तआला की मर्ज़ी ऐसी ही थी। मूसा अलैहिस्सलाम का असा फ़िरऔन को भी खा सकता था मगर वहाँ इस्तेमाल न किया इमाम हुसैन रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु में ताक़त थी कि करबला में हौज़े कौसर मंगा लेते, फ़ुरात की क्या हक़ीक़त थी मगर राज़ी बरज़ा इलाही थे। देखो रमज़ान में पानी हमारे पास होता है। मगर हुक्मे इलाही की वजह से इस्तेमाल नहीं करते। बख़िलाफ़ बुतों के उनमें ताक़त ही नहीं। लिहाज़ा यह आयत अंबिया व औलिया पर पढ़ना बेदीनी है। यह बुतों के लिए है।

बहस 8 बिदअत के माना और इसकी क़िस्में व अहकाम

इसमें दो बाब हैं। पहला बाब बिदअत के मानी और इसके क़िस्में व अहकाम में। दूसरा बाब इस पर ऐतराज़ात व जवाबात में।

पहला बाब

बिदअत के माना और इसके अक़साम व अहकाम में

बिदअत के लुग़वी मायने हैं नई चीज़। कुरआने करीम फ़रमाता है। **कुल मा कुन्तु बिदन मिनरुसुले।** फरमा दो कि मैं नया रसूल नहीं हूँ। और फरमाता है। **बदीउस्समावाते वल-अर्ज़े** आसमानों और ज़मीनों का ईजाद करने वाला है और फ़रमाता है। **व रहबानीयता निब्तदऊहा मा कतबनाहा अलैहिम।**

इन आयात में बिदअत लुग़वी मायने में इस्तेमाल हुआ है। यानी ईजाद करना, नया बनाना वग़ैरह। मिर्क़ात शरह मिश्कात में **बाबुल-ऐतसाम बिल-किताबे वस्सुन्नह** में है **क़ालन्नौवीयुल-बिदअतु कुल्लु शैइन उमेला अला ग़ैरे मिसालिन सबक़ा** बिदअत वह काम है जो बग़ैर गुज़री मिसाल के किया जाए।

बिदअत के शरई मायने हैं वह ऐतक़ाद या वह आमाल जो कि हुज़ूर

अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना हयाते ज़ाहिरी में न हों बाद में ईजाद हुए, नतीजा यह निकला कि बिदअते शरई दो तरह की हुई बिदअते ऐतक़ादी और बिदअते अमली। बिदअते ऐतक़ादी उन बुरे अक़ाइद को कहते हैं जो कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के बाद इस्लाम में ईजाद हुए। ईसाई, यहूदी, मजूसी और मुश्रेकीन के अक़ाइद बिदअते ऐतक़ादी नहीं क्योंकि यह हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़मानए पाक में मौजूद थे। और उन अक़ाइद को ईसाई वग़ैरह भी इस्लामी अक़ाइद नहीं कहते और जब्रिया, क़दरिया, मर्जिया, चक्ड़ालवी, ग़ैर मुक़ल्लिद, देवबन्दी, अक़ाइद, बिदअते ऐतक़ादिया हैं क्योंकि यह सब बाद को बने और यह लोग इनको इस्लामी अक़ाइद समझते हैं। मसलन देवबन्दी कहते हैं कि ख़ुदा झूठ पर क़ादिर है, हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ग़ैब से जाहिल या हुज़ूर अलैहिस्सलामु वस्सलाम का ख़्याल नमाज़ में, बैल, गधे के ख़्याल से बदतर है। यह नापाक अक़ीदे बारहवीं सदी की पैदावार हैं। जैसा कि हम शामी से इसका सुबूते मुक़द्दमा किताब में दे चुके। बिदअते हसना के सुबूत मुलाहिज़ा हों।

रब तआला फ़रमाता है।

इस आयत से मालूम हुआ कि ईसाइयों ने बिदअते हसना यानी **तारिकुद्दुनिया** हो जाना ईजाद किया। रब ने इसकी तारीफ़ की बल्कि अज्र भी दिया। हाँ जो इसे निभा न सके उन पर इताब आया फरमाया गया **फ़मा रऔहा हक़्क़ा रेआयतेहा।** देखो ईजादे बिदअत पर इताब नहीं हुआ बल्कि न निभाने पर। मालूम हुआ कि बिदअते हसना अच्छी चीज़ है और बाइसे सवाब। मगर इस पर पाबन्दी न करना बुरा **ख़ैरुल-उमूरे अदवमुहा।** लिहाज़ा चाहिए कि मुसलमान महफ़िले मीलाद शरीफ़ वग़ैरह पर पाबन्दी करें। मिश्कात **बाबुल-ऐतसाम** की पहली हदीस है कि **मन अहदसा फ़ी अम्रेना हाज़ा मा लैसा मिन्हु फ़हुवा रद्दुन।** जो शख़्स हमारे इस दीन में वह अक़ीदे ईजाद करे जो कि दीन के ख़िलाफ़ हों वह मरदूद है। हमने **मा** के मानी अक़ीदे इसलिए किए कि दीन अक़ाइद ही का नाम है आमाल फ़रूअ़ हैं। बेनमाज़ी गुनहगार है बेदीन या काफिर नहीं। बद ऐतक़ाद या तो गुम्राह है या काफिर। उसके मातहत मिर्क़ात में है।

मानी यह हैं कि जो इस्लाम में ऐसा अक़ीदा निकाले जो कि दीन से नहीं है वह उस पर रद है मैं कहता हूँ कि **अम्रेना** के वस्फ़ में इस तरफ़ इशारा है कि इस्लाम का मुआमला मुकम्मल हो चुका।

साबित हुआ कि बिदअत अक़ीदे को फरमाया गया। इसी मिश्कात **बाबुल-ईमान बिल-क़द्र** में है कि हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से किसी ने कहा कि फुलाँ शख़्स ने आपको सलाम कहा है तो फरमाया

बलग़नी अन्नहू क़द अहदसा फ़इन काना अहदसा फ़ला तुक़्रेओ मिन्निस्सलामा। मुझे ख़बर मिली कि वह बिदअती हो गया है अगर ऐसा हो तो उसको मेरा सलाम न कहना। बिदअती कैसे हुआ? फरमाते हैं। **यकूलु यकूनु फ़ी उम्मती ख़स्फ़ुन व मस्ख़ुन औ क़ज़्फ़ुन फ़ी अहलिल-क़द्रे।** हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम फरमाते थे कि मेरी उम्मत में ज़मीन धंसना, सूरत बदलना, या पत्थर बरसना होगा क़दरीया लोगों में। मालूम हुआ कि वह क़दरीया यानी तक़्दीर का मुन्किर हो गया था। उसको बिदअती फरमाया। दुर्रे मुख़्तार **किताबुस्सलात बाबुल-इमामत** में है **व मुब्तदइन ऐ साहिबे बिदअतिन वहिया ऐतेक़ादु ख़िलाफ़िल-मारूफ़े अनिर्रसूले।** बिदअती इमाम के पीछे नमाज़ मकरूह है। बिदअत इस अक़ीदे के ख़िलाफ़ ऐतक़ाद रखना है जो कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से मारूफ़ हैं। इन इबारात से मालूम हुआ कि बिदअत नए और बुरे अक़ाइद को भी कहते हैं और बिदअत और बिदअती पर जो सख़्त वईदें अहादीस में आई हैं उन से मुराद बिदअते ऐतक़ादिया है। हदीस में है कि जिसने बिदअती की ताज़ीम की उसने इस्लाम के ढाने पर मदद दी यानी बिदअते ऐतक़ादिया वाले की। फ़तावा रशीदीया जिल्द अव्वल **किताबुल-बिदआत** सफ़: 90 में है "जिस बिदअत में ऐसी शदीद वईद है, वह बिदअत फ़िल अक़ाइद है, जैसा कि रवाफ़िज़े ख़्वारिज की बिदअत है।"

बिदअते अमली हर वह काम है जो कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़मानए पाक के बाद ईजाद हुआ ख़्वाह वह दुनियावी हो या दीनी ख़्वाह सहाबा किराम के ज़माना में हो या उसके भी बाद। मिर्क़ात **बाबुल-ऐतसाम** में है। **व फ़िश्शरअ अहदासु मालम यकुन फ़ी अहदे रसूलुल्लाहे अलैहिस्सामु।** बिदअते शरीअत में उस काम का ईजाद करना है जो कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना में न हो। अश्इतुल्लम्आत यही बाब जो काम हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के बाद पैदा हो वह बिदअत है।

इन दोनों इबारतों में न तो दीनी काम की क़ैद है न ज़माना सहाबा का लिहाज़ जो काम भी हो दीनी हो या दुनियावी हुज़ूर अलैहिस्सिलातु वस्सलाम के बाद जब भी हो ख़्वाह ज़माना सहाबा में या उसके बाद वह बिदअत है। हाँ उर्फ़े आम में ईजादात सहाबा किराम को सुन्नते सहाबा कहते हैं बिदअत नहीं बोलते यह उर्फ़ है वरना ख़ुद फ़ारूक़े आज़म रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने तरावीह की बाक़ायदा जमाअत मुक़र्रर फरमा कर फरमाया। **नेअमल-बिदअते हाज़ेही** यह तो बहुत ही अच्छी बिदअत है।

बिदअते अमली दो क़िस्म है। बिदअते हसना और बिदअते सैयआ। बिदअते हसना वह नया काम जो कि किसी सुन्नत के ख़िलाफ़ न हो जैसे

महफ़िले मीलाद और दीनी मदारिस और नए-नए उम्दा खाने और प्रेस में कुरआन व दीनी कुतुब का छपवाना और बिदअत सैयआ वह जो कि किसी सुन्नत के ख़िलाफ़ हो या सुन्नत को मिटाने वाली हो जैसे कि ग़ैर अरबी में खुतबा, जुमा व ईदैन पढ़ना या कि लाउडिस्पीकर पर नमाज़ पढ़ना कि इसमें सुन्नते ख़ुतबा यानी अरबी में होना और तबलीग़ तक्बीर की सुन्नत उठ जाती है। यानी बज़रिया मुकब्बेरीन के आवाज़ पहुँचाना बिदअते हसना जाइज़ बल्कि किसी वक़्त मुस्तहब और वाजिब भी है। और बिदअते सैयआ मक्रूहे तंज़ीही या मक्रूहे तहरीमी या हराम है। इस तक़्सीम को हम आइन्दा बयान करेंगे। बिदअते हसना और बिदअते सैयआ की दलील सुनो। अश्इतुल्लम्आत जिल्द अव्वल **बाबुल-ऐतसाम** ज़ेरे हदीस **व कुल्लु बिदअतिन ज़लालतिन** है।

जो बिदअत कि उसूल और क़वानीन और सुन्नत के मुवाफ़िक़ है और उससे क़्यास की हुई है उसको बिदअते हसना कहते हैं और जो कि उसके ख़िलाफ़ है उसको बिदअते गुम्राही कहते हैं।

मिश्कात **बाबुल-इल्म** (स० 33) में है।

तरजमा : जो कोई इस्लाम में अच्छा तरीक़ा जारी करे उसको इसका सवाब मिलेगा और उनका भी जो कि उस पर अमल करेंगे और उनके सवाब से कुछ कम न होगा और जो शख़्स कि इस्लाम में बुरा तरीक़ा जारी करे उस पर उसका गुनाह भी है और उनका भी जो कि उस पर अमल करें और उनके गुनाह में भी कुछ कमी न होगी। मालूम हुआ कि इस्लाम में कारे ख़ैर ईजाद करना सवाब का बाइस है और बुरे काम निकालना गुनाह का मूजिब।

शामी के मुक़द्दमा में फ़ज़ाइल इमाम अबू हनीफ़ा बयान फरमाते हुए फरमाते हैं।

तरजमा : उलेमा फ़रमाते हैं कि यह हदीसें इस्लाम के क़ानून हैं कि जो शख़्स कोई बुरी बिदअत ईजाद करे उस पर उस काम में सारी पैरवी करने वालों का गुनाह है। और जो शख़्स कि अच्छी बिदअत निकाले उसको क़्यामत तक के सारे पैरवी करने वालों का सवाब है। इससे भी मालूम हुआ कि अच्छी बिदअत सवाब है और बुरी बिदअत गुनाह है।

बुरी बिदअत वह है जो सुन्नत के ख़िलाफ़ हो। इसकी भी दलील मुलाहिज़ा हो। मिश्कात **बाबुल-ऐतसाम** (स० 27) में है। **मन अहदसा फ़ी अम्रेना हाज़ा मा लैसा मिन्हु फ़हुवा रद्दुन**। जो शख़्स हमारे इस दीन में कोई ऐसी राय निकाले जो कि दीन से नहीं है वह मरदूद है। दीन से नहीं है के माना यह हैं कि दीन के ख़िलाफ़ है चुनांचे अश्इतुल्लम्आत में इसी हदीस की शरह में है इस से मुराद वह चीज़ है जो कि दीन के ख़िलाफ़ या दीन को

बदलने वाली हो। इसी मिश्कात **बाबुल-ऐतसाम** तीसरी फ़स्ल (स० 31) में है। **मा अहदसा क़ौमुन बिदअतन इल्ला रुफ़ेआ मिस्लुहा मिनस्सुन्नते फ़तमस्सुकुन बेसुन्नतिन ख़ैरुन मिन इहदासे बिदअतिन।** कोई क़ौम बिदअत नहीं ईजाद करती मगर उतनी सुन्नत उठ जाती है लिहाज़ा सुन्नत को लेना बिदअत के ईजाद करने से बेहतर है। इसकी शरह में अश्इतुल्लम्आत में है।

और जब बिदअत निकालना सुन्नत को मिटाने वाला है। तो सुन्नत को क़ायम करना बिदअत को मिटाने वाला होगा।

इस हदीस और इसकी शरह से यह मालूम हुआ कि बिदअते सैयआ यानी बुरी बिदअत वह है कि जिससे सुन्नत मिट जाए। इसकी मिसालें हम पहले दे चुके हैं। बिदअते हसना और बिदअते सैयआ की पहचान ख़ूब याद रखना चाहिए कि इसी जगह धोखा होता है।

बिदअत की क़िस्में और इसके अहकाम

यह तो मालूम हो चुका कि बिदअत दो तरह की है। बिदअते हसना और बिदअते सैयआ। अब याद रखना चाहिए कि बिदअते हसना तीन तरह की है। बिदअते जाइज़, बिदअते मुस्तहब, बिदअते वाजिब। और बिदअते सैया दो तरह की है। बिदअते मक्रूह और बिदअते हराम। इस तक़सीम की दलील मुलाहिज़ा हो। मिर्क़ात **बाबुल-ऐतसाम बिल-किताबे वस्सुन्नह** में है।

तरजमा : बिदअत या तो वाजिब है जैसे कि इल्मे नहव का सीखना और उसूले फ़िक़ह का जमा करना और या हराम है जैसे कि जब्रीया मज़्हब और या मुस्तहब है जैसे कि मुसाफ़िर खानों और मदरसों का ईजाद करना और हर वह अच्छी बात जो पहले ज़माना में न थी और जैसे आम जमाअत से तरावीह पढ़ना और या मक्रूह है जैसे कि मस्जिदों को फ़ख़्रिया ज़ीनत देना और या जाइज़ है जैसे फज्र की नमाज़ के बाद मुसाफ़हा करना और उम्दा-उम्दा खानों और शरबतों में वुस्अत करना। शामी जिल्द अव्वल **किताबुस्सलात बाबुल-इमामत** में है।

तरजमा : यानी हराम बिदअत वाले के पीछे नमाज़ मक्रूह है वरना बिदअत तो कभी वाजिब होती है जैसे कि दलाइल क़ायम करना और इल्म को देखना और कभी मुस्तहब जैसे मुसाफ़िर खाना और मदरसे और हर वह अच्छी चीज़ जो कि पहले ज़माना में न थी उनका ईजाद करना और कभी मक्रूह जैसे कि मस्जिदों की फ़ख़्रिया ज़ीनत और कभी जायज़ जैसे उम्दा खाने शर्बतों और कपड़ों में वुस्अत करना इसी तरह जामे सग़ीर की शरह में है।

इन इबारात से बिदअत की पाँच क़िस्में बख़ूबी वाज़ेह हुईं। लिहाज़ा मालूम हुआ कि हर बिदअत हराम नहीं बल्कि कुछ बिदअतें कभी ज़रूरी भी

होती हैं जैसे कि इल्मे फ़िक़ह व उसूले फ़िक़ह या कुरआने करीम का जमा करना या कुरआने करीम में ज़बर-ज़ेर लगाना या आजकल कुरआने करीम का छापना और दीनी मदरसों में तालीम के कोर्स वग़ैरह बनाना।

बिदअत की क़िस्मों की पहचानें और अलामतें

बिदअते हसना और सैयआ की पहचान तो बता दी गई कि जो बिदअत इस्लाम के ख़िलाफ़ हो या किसी सुन्नत को मिटाने वाली हो वह बिदअते सैयआ। और जो ऐसी न हो वह बिदअते हसना है। अब इन पाँच क़िस्मों की अलामतें मालूम करो।

बिदअते जाइज़ : हर वह नया काम जो शरीअत में मना न हो और बग़ैर किसी नीयते ख़ैर के किया जाए जैसे चन्द खाने खाना वग़ैरह इसका हवाला मिर्क़ात और शामी से गुज़र गया। इन कामों पर न सवाब न अज़ाब।

बिदअते मुस्तहब्बा : वह नया काम जो शरीअत में मना न हो और उसको आम मुसलमान कारे सवाब जानते हों या कोई शख़्स उसको नीयते ख़ैर से करे जैसे महफ़िले मीलाद शरीफ़ और फ़ातिहाए बुज़ुर्गान कि आम मुसलमान इसको कारे सवाब जानते हैं इसको करने वाला सवाब पाएगा और न करने वाला गुनहगार नहीं होगा। दलाइल मुलाहिज़ा हों।

मिर्क़ात **बाबुल-ऐतसाम** में है।

हज़रत इब्ने मसऊद से मरवी है कि जिस काम को मुसलमान अच्छा जानें वह अल्लाह के नज़्दीक भी अच्छा है और हदीसे मरफ़ू में है कि मेरी उम्मत गुम्राही पर मुत्तफ़िक़ न होगी। मिश्कात के शुरू में है। **इन्नमल-आमालु बिन्नियाते व इन्नमा लेअम्रेइन मा नवा।**

आमाल का मदार नीयत से है और इंसान के लिए वही हैं जो नीयत करे। दुर्रे मुख़्तार जिल्द अव्वल बहस मुस्तहब्बाते वुज़ू में है।

तरजमा : मुस्तहब वह कलाम है जो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने कभी किया हो और कभी छोड़ा हो और वह काम कि गुज़िश्ता मुसलमान अच्छा जानते हों।

शामी जिल्द पंजुम बहस कुरबानी में है। **फ़इन्नन्नियाते तज्अलुल-आदाते इबादाते।** क्योंकि नीयते ख़ैर आदात को इबादत बना देती है। इसी तरह मिर्क़ात बहस नीयत में भी है।

इन अहादीस व फ़िक़्ही इबारतों से मालूम हुआ कि जो जाइज़ काम नीयते सवाब से किया जाए मुसलमान उसको सवाब का काम जानें वह इन्दल्लाह भी कारे सवाब है। मुसलमान अल्लाह के गवाह हैं जिसके अच्छे होने की गवाही दें वह अच्छा है और जिसको बुरा कहें वह बुरा। गवाही की

नफ़ीस बहस हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान में देखो और उस किताब में भी उर्स बुज़ुर्गान की बहस में कुछ इसका ज़िक्र आएगा। इंशाअल्लाह।

बिदअते वाजिबा : वह नया काम जो शरअन मना न हो और उसके छोड़ने से दीन में हरज वाक़े हो जैसे कि कुरआन के ज़बर–ज़ेर और दीनी मदारिस और इल्मे नह्व वग़ैरह पढ़ना इसके हवाले गुज़र चुके।

बिदअते मक्रूहा : वह नया काम जिससे कोई सुन्नत छूट जाए अगर सुन्नते ग़ैर मोअक्किदा छूटी तो यह बिदअते मक्रूहे तंज़ीही है और अगर सुन्नते मोअक्किदा छूटी तो यह बिदअते मक्रूहे तहरीमी। इसकी मिसालें और हवाले गुज़र गए।

बिदअते हराम :– वह नया काम जिस से कोई वाजिब छूट जाए यानी वाजिब को मिटाने वाली हो।

दुर्रे मुख़्तार **बाबुल-अज़ान** में है कि अज़ान के बाद सलात व सलाम करना 781 हिज. में ईजाद हुआ। लेकिन वह बिदअते हसना है। इसके मातहत शामी में अज़ान जौक़ के बारे में फ़रमाते हैं।

इससे मालूम हुआ कि जो जाइज़ काम मुसलमानों में मुरव्वज हो जाए बाइसे सवाब है।

आओ हम आपको दिखाएं कि इस्लाम की कोई इबादत हसना से खाली नहीं। फ़ेहरिस्त मुलाहिज़ा हो।

ईमान : मुसलमान के बच्चा-बच्चा को ईमाने मुज्मल और ईमान मुफ़स्सल याद कराया जाता है। ईमान की यह दो क़िस्में और उनके यह दोनों नाम बिदअत हैं कुरूने सलासा (पहले तीन ज़माने) में इसका पता नहीं।

कलिमा : हर मुसलमान छः कलिमा याद करता है यह छेः कलिमे उनकी तादाद उनकी तर्तीब कि यह पहला कलिमा है यह दूसरा और उनके यह नाम हैं सब बिदअत हैं। जिनका कुरूने सलासा में पता भी नहीं था।

कुरआन : कुरआन शरीफ़ के तीस पारा बनाना, इनमें रूकूअ क़ायम करना, इस पर ज़बर–ज़ेर लगाना, इसकी सुनहरी रू पहली जिल्दें तैयार करना, कुरआन को ब्लाक वग़ैरह बना कर छापना सब बिदअत हैं, जिनका कुरूने सलासा में ज़िक्र भी न था।

हदीस : हदीस को किताबी शक्ल में जमा करना, हदीस की सनदें बयान करना, अस्नाद पर जिरह करना और हदीस की सहीह क़िस्में बनाना कि यह सहीह है। यह हसन, यह ज़ईफ़, यह मुअज़्ज़ल, यह मुदल्लस, इन क़िस्मों में तर्तीब देना कि अव्वल नम्बर सहीह है, दोम नम्बर हसन, सोम नम्बर ज़ईफ़, फिर उनके अहकाम मुक़र्रर करना कि हराम व हलाल चीज़ें हदीसे सहीह से साबित होंगी। और फ़ज़ाइल में हदीसे ज़ईफ़ भी मोतबर होगी। ग़र्ज़ेकि सारा फ़न्ने हदीस ऐसी बिदअत है जिसका कुरूने सलासा में ज़िक्र भी न था।

उसूले हदीस : यह फ़न बिल्कुल बिदअत है बल्कि इसका तो नाम भी बिदअत है। इसके सारे क़ायदे क़ानून बिदअत।

फ़िक़ह : इस पर आजकल दीन का दारोमदार है। मगर यह भी अज़ अव्वल ता आख़िर बिदअत है। जिसका कुरूने सलासा में ज़िक्र नहीं।

उसूले फ़िक़ह व इल्मे कलाम : यह इल्म भी बिल्कुल बिदअत हैं इनके क़वाइद व ज़वाबित सब बिदअत।

नमाज़ : नमाज़ में ज़बान से नीयत करना बिदअत, जिसका सुबूत कुरूने सलासा में नहीं। रमज़ान में बीस तरावीह पर हमेशगी करना बिदअत है, ख़ुद अमीरुल-मुमिनीन उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने फ़रमाया। **नेअ़मतिल-बिदअतु हाज़ेही** यह बड़ी अच्छी बिदअत है।

रोज़ा : रोज़ा इफ़्तार करते वक़्त ज़बान से दुआ करना। **अल्लाहुम्मा लका सुम्तु** अलख़ और सहरी के वक़्त दुआ माँगना कि **अल्लाहुम्मा बिस्सौमे लका ग़दन नवैतु** बिदअत है।

ज़कात : ज़कात में मौजूदा सिक्का राइजुल-वक़्त अदा करना बिदअत है। कुरूने सलासा में यह तस्वीर वाले सिक्के न थे न उन से ज़कात जैसी इबादत अदा होती थी मौजूदा सिक्के से ग़ल्लों से फ़ितरा निकालना यह सब बिदअत हैं।

हज : रेल गाड़ियों, लारियों, मोटरों, हवाई जहाज़ों के ज़रिया हज करना, मोटरों में अरफ़ात शरीफ़ जाना बिदअत है, उस ज़मानए पाक में न यह सवारियाँ थी न उनके ज़रिया हज होता था।

तरीक़त : तरीक़त के क़रीबन सारे मशाग़िल और तसव्वुफ़ के क़रीबन सारे मशाग़िल बिदअत हैं। मुराक़बे, चिल्ले, पास अन्फ़ास, तसव्वुरे शैख़, ज़िक्र के अक़्साम सब बिदअत हैं। जिनका कुरूने सलासा में कहीं पता नहीं चलता।

चार सिलसिले : शरीअत व तरीक़त दोनों के चार-चार सिलसिले यानी हनफ़ी, शाफ़ई, मालिकी, हंबली, इसी तरह क़ादरी, चिश्ती, नक़्शबन्दी, सुहरवर्दी यह सब सिलसिले बिल्कुल बिदअत हैं। इन में से कुछ के तो नाम तक भी अरबी नहीं। जैसे चिश्ती या नक़्शबन्दी, कोई सहाबी, ताबई, हनफ़ी, क़ादरी न हुए।

अब देवबन्दी बताएं कि बिदअत से बच कर वह दीनी हैसियत से ज़िन्दा भी रह सकते हैं? जब ईमान और कलिमा में बिदआत दाख़िल हैं तो बिदअत से छुटकारा कैसा?

दुनियावी चीज़ें : आजकल दुनिया में वह चीज़ें ईजाद हो गई हैं। जिनका ख़ैरुल-कुरून में नाम व निशान भी न था। और जिनके बग़ैर अब दुनियावी ज़िन्दगी मुश्किल है। हर शख़्स उनके इस्तेमाल पर मज्बूर है। रेल, मोटर, हवाई जहाज़, समुन्द्री जहाज़, तांगा, घोड़ा गाड़ी, फिर ख़त, लिफ़ाफ़ा,

तार, टेलीफ़ोन, रेडियो, लाउडिस्पीकर वग़ैरह यह तमाम चीज़ें और इनका इस्तेमाल बिदअत है और इन्हें हर जमाअत के लोग बिला तकल्लुफ़ इस्तेमाल करते हैं।

बोलो देवबन्दी, वहाबी बग़ैर बिदआते हसना के दुनियावी ज़िन्दगी गुज़ार सकते हैं? हरगिज़ नहीं।

दूसरा बाब

इस तारीफ़ व तक़्सीम पर ऐतराज़ात व जवाबात में

हमने बिदअते अमली की यह तारीफ़ की है कि जो काम दीनी या दुनियावी हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना के बाद ईजाद हो वह बिदअत है। चाहे ज़माना सहाब-ए-किराम में हो या उसके भी बाद इस पर दो मशहूर ऐतराज़ हैं।

(१) बिदअत सिर्फ़ उस दीनी काम को कहेंगे कि जो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के बाद ईजाद हो। दुनियावी नए काम बिदअत नहीं। लिहाज़ा महफ़िले मीलाद वग़ैरह तो बिदअत हैं और तार, टेलीफ़ोन, रेल गाड़ी की सवारी बिदअत नहीं क्योंकि हदीस में आया है। **मन अह्दसा फ़ी अम्रेना हाज़ा मा लैसा मिन्हु फ़हुवा रद्दुन।** जो शख़्स हमारे दीन में कोई बात निकाले वह मरदूद है। अम्र ना से मालूम होता है कि दुनियावी ईजाद बिदअत नहीं और दीनी बिदअत कोई भी हसना नहीं सब हराम हैं क्योंकि हदीस में सबको कहा गया है।

जवाब : दीनी काम की क़ैद लगाना महज़ अपनी तरफ़ से है अहादीसे सहीहा और अक़्वाले उलमा व फ़ुक़हा और मुहद्देसीन के ख़िलाफ़ है। हदीस में है **कुल्लु मुहदसिन बिदअतुन** (मिश्कात बाबुल-ऐतसाम) हर नया काम बिदअत है। इसमें दीनी व दुनियावी की क़ैद नहीं। और हम अश्इतुल्लम्आत और मिर्क़ात की इबारतें नक़्ल कर चुके हैं। इसमें दीनी काम की क़ैद नहीं लगाई और हम पहले बाब में मिर्क़ात और शामी की इबारतें नक़्ल कर चुके हैं। इसमें दीनी काम की क़ैद नहीं लगाई। और हम पहले बाब में मिर्क़ात और शामी की इबारतें दिखा चुके कि उन्होंने उम्दा खाने अच्छे कपड़े बिदअते जाइज़ा में दाख़िल किए हैं। यह काम दुनियावी हैं मगर बिदअत में इनको शुमार किया। लिहाज़ा यह क़ैद लगाना ग़लत है। अगर मान भी लिया जाए कि बिदअत में दीनी काम की क़ैद है तो दीनी काम तो उसी को कहते हैं जिस पर सवाब मिले। मुस्तहब्बात, नवाफ़िल, वाजिबात, फ़राइज़ सब दीनी काम हैं कि इसको आदमी सवाब के लिए करता है और दुनिया का कोई भी काम नीयते ख़ैर से किया जाए उस पर सवाब मिलता है। हदीस पाक में आता है कि मुसलमान से ख़न्दा पेशानी से मिलना सदक़ा का सवाब रखता

है अपने बच्चों को पालना नीयते ख़ैर से हो सवाब है **हत्तल-लुक़्मता तरफ़उहा फ़ी फ़मे इम्रअतिका।** यहाँ तक कि जो लुक़्मा अपनी बीवी के मुँह में दे वह भी सवाब। लिहाज़ा मुसलमान का हर दुनियावी काम दीनी है। अब बताओ कि नीयते ख़ैर से पुलाव खिलाना बिदअत है या नहीं? और दीनी काम की क़ैद लगाना आपके लिए कोई मुफ़ीद नहीं क्योंकि देवबन्द का मदरसा, वहाँ का नेसाब, दौर-ए-हदीस, तंख़्वाह लेकर मुदर्रिसों का पढ़ाना, इम्तेहान और छुट्टियों का होना आज कुरआन पाक में ज़बर ज़ेर लगाना, कुरआन व बुख़ारी छापना, मुसीबत के वक़्त ख़त्मे बुख़ारी करना जैसा कि देवबन्द में पन्द्रह रुपया लेकर कराया जाता है। बल्कि सारा फ़न्ने हदीस बल्कि ख़ुद अहादीस को किताबी शक्ल में जमा करना, बल्कि ख़ुद कुरआन को काग़ज़ पर जमा करना, उसमें रुकूअ़ बनाना, उसके तीस सिपारे करना वग़ैरह वग़ैरह सब ही दीनी काम हैं और बिदअत हैं। क्योंकि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माना में इनमें से कोई काम न हुआ था। बोलो यह हराम हैं या हलाल? बेचारे महफ़िले मीलादे शरीफ़ और फ़ातिहा ने ही क़सूर किया है जो सिर्फ़ वह तो इसलिए हराम कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माना में न था और ऊपर ज़िक्र किए हुए सब काम हलाल।

हमने मौलवी सनाउल्लाह साहब अमृतसरी को अपने मुनाज़रा में कहा था कि आप हज़रात चार चीज़ों की सहीह तारीफ़ कर दें जिस पर कोई ऐतराज़ न हो जामे और माने हो, तो जिस क़द्र चाहें हम से इनाम लें बिदअत, शिर्क, दीन, इबादत, और अब भी अपने रब के भरोसा पर कहते हैं कि दुनिया का कोई देवबन्दी कोई ग़ैर मुक़ल्लिद और कोई शिर्क व बिदअत की रट लगाने वाला इन चार चीज़ों की तारीफ़ ऐसी नहीं कर सकता जिससे उसका मज़्हब बच जाए। आज भी हर देवबन्दी और ग़ैर मुक़ल्लिद को ऐलाने आम है कि उनकी ऐसी सहीह तारीफ़ करो जिससे महफ़िले मीलाद हराम हो, और रिसालए क़ासिम और पर्चा अह्ले हदीस हलाल और औलिया अल्लाह से मदद माँगना शिर्क हो और पुलिस वग़ैरह से इस्तिम्दाद ऐन इस्लाम और कहे देते हैं कि इंशाअल्लाह यह तारीफ़ें न हो सकी हैं और न हो सकेंगी। लिहाज़ा चाहिए कि अपने इस बेउसूले मज़्हब से तौबा करें और अह्ले सुन्नत व जमाअत में दाख़िल हों। **अल्लाहु हुवल-मूफ़िक़ु** वह हदीस जो आपने पेश की। उसके मुतअल्लिक़ हम अर्ज़ कर चुके हैं कि इससे या तो मा से मुराद अक़ाइद हैं कि दीन का आम इतलाक़ अक़ाइद पर होता है और अगर मुराद आमाल भी हों तो लैसा मिन्हु से मुराद वह आमाल हैं जो ख़िलाफ़े सुन्नत या ख़िलाफ़े दीन हों। हम इसके हवाला भी पेश कर चुके हैं।

यह कहना कि हर बिदअत हराम होती है बिदअते हसना कोई चीज़ ही नहीं। यह उस हदीस के ख़िलाफ़ है जो पेश की जा चुकी कि इस्लाम में जो

नेक काम ईजाद करे वह सवाब का मुस्तहिक़ है और जो बुरा काम ईजाद करे वह अज़ाब'का। और शामी, अश्इतुल्लम्आत और मिर्क़ात की इबारात पेश की जा चुकी हैं कि बिदअत पाँच क़िस्म की हैं जाइज़, वाजिब, मुस्तहब, मक्रूह, और हराम और अगर मान भी लिया जाए कि हर बिदअत हराम है तो मदारिस वग़ैरह को ख़त्म करो कि यह भी हराम हैं। नीज़ मसाइले फ़ेक़्हीया और अश्ग़ाले सूफ़िया जो कि ख़ैरुल-कुरून के बाद ईजाद हुए तमाम हराम हो जाएंगे। शरीअत के चार सिलसिले हनफ़ी, शाफ़ई, मालिकी, हंबली और तरीक़त के चार सिलसिले क़ादरी, चिश्ती, नक़्शबन्दी, सुहरवर्दी यह तमाम ही हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम बल्कि सहाबा किराम के बाद ही ईजाद हुए फिर उनके मसाइल इज्तिहादिया और आमाल, वज़ीफ़े, मुराक़बे, चिल्ले वग़ैरह सब बाद की ईजाद हैं और सब लोग उनको दीन का काम समझ कर ही करते हैं। छेः कलिमे, ईमाने मुज्मल, व मुफ़स्सल, कुरआन के तीस पारे, हदीस की क़िस्में और उनके अहकाम कि यह हदीस सहीह है या ज़ईफ़, यह हसन है या मुअज़्ज़ल वग़ैरह अरबी मदारिस के निसाब, जलस-ए-दस्तारबन्दी, सनद लेना, पगड़ी बंधवाना, इन चीज़ों का कहीं कुरआन व हदीस में नाम भी नहीं। कोई देवबन्दी, वहाबी इन चीज़ों को तो क्या उनके नाम भी किसी हदीस से नहीं दिखा सकता। फिर हदीस की सनदों और रावियों पर मुरव्वजा जिरह ख़ैरुल-कुरून से साबित नहीं कर सकता। ग़र्ज़ेकि शरीअत व तरीक़त का कोई अमल ऐसा नहीं जिसमें बिदअत शामिल न हो।

मौलवी इस्माईल साहब सिराते मुस्तक़ीम सफः 7 पर फरमाते हैं "और अकाबिरे तरीक़त ने अगरचे अज़्कार व मुराक़िबात व रियाज़ात व मुजाहिदात की तऐयुन में जो राहे विलायत के मबादी हैं कोशिश की है लेकिन **बहुक्मे हर सुख़न वक़्ती व हर नुक्ता मक़ामी दारद**" हर हर वक़्त के मुनासिब अश्ग़ाल और हर हर क़र्न के मुताबिक़ हाले रियाज़ात जुदा-जुदा हैं।" इस इबारत से मालूम हुआ कि तसव्वुफ़ के अश्ग़ाले सूफ़िया की ईजाद है और हर ज़माना में नए नए होते रहते हैं और जाइज़ हैं बल्कि राहे सुलूक उन ही से तय होती है। कहिए कि अब वह क़ायदा कहाँ गया कि हर नई चीज़ हराम है? मानना पड़ेगा कि जो काम ख़िलाफ़े सुन्नत हो वह बुरा और बाक़ी सब उम्दा और अच्छा।

(2) मुख़ालेफ़ीन यह भी कहते हैं कि जो काम हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम या सहाबा किराम या ताबईन या तबअ ताबईन के ज़माना से किसी ज़माना में ईजाद हो जाए वह बिदअत नहीं। उन ज़मानों के बाद जो काम ईजाद होगा वह बिदअत है और वह कोई भी जाइज़ नहीं सब हराम हैं यानी

सहाबा किराम और ताबईन व तबअ ताबईन की ईजादाते सुन्नत हैं। इसलिए कि मिश्कात बाबुल-ऐतसाम स० : 30 में है।

तुम पर लाज़िम है मेरी सुन्नत और हिदायत वाले ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत कि उसको दाँत से मज़्बूत पकड़ लो। इस हदीस में ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के कामों को सुन्नत कहा गया। उसके पकड़ने की ताकीद फरमाई गई। जिससे मामूल हुआ कि उनके काम बिदअत नहीं।

(2) मिश्कात **बाबु मनाक़िबुस्सहाबा** (सफ़: 553) में है।

मेरी उम्मत में बेहतर गरोह मेरा गरोह है। फिर वह जो उनके मुत्तसिल (बराबर) हैं फिर वह जो उनके मुत्तसिल (बराबर) हैं फिर उसके बाद एक क़ौम होगी जो बग़ैर गवाह बनाए हुए गवाही देती फिरेगी और ख़्यानत करेंगे अमीन न होंगे इससे मालूम हुआ कि तीन ज़माना ख़ैर हैं सहाबा किराम का ताबईन का तबअ ताबईन का। और फिर शर और ख़ैर ज़माना में जो पैदा हो वह ख़ैर यानी सुन्नत है और शर ज़माना में जो पैदा हो वह शर यानी बिदअत है। और मिश्कात **बाबुल-ऐतसाम** स० 30 में है।

मेरी उम्मत के तिहत्तर फ़िर्क़े हो जाएंगे एक के सिवा सब जहन्नमी हैं। अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह वह एक कौन है? फ़रमाया जिस पर कि हम और हमारे सहाबा हैं। मालूम हुआ कि सहाबा किराम की पैरवी जन्नत का रास्ता है। इसलिए उनके ईजादात को बिदअत नहीं कह सकते। मिश्कात **बाबु फ़ज़ाइलुस्सहाबा** स० : 554 में है।

(4) **असहाबी कन्नुजूमे फ़बेऐयेहिम इक़्तदैतुम इहतदैतुम**। मेरे सहाबी तारों की तरह हैं तुम जिसके पीछे हो लो हिदायत पा लोगे। इससे भी यही मालूम हुआ कि सहाबए किराम की पैरवी बाइसे नजात है। लिहाज़ा उनके ईजाद करदा काम बिदअत नहीं क्योंकि बिदअत तो गुम्राह कुन है।

जवाब : यह सवाल भी महज़ धोखा है इसलिए कि हमने मिर्क़ात और अश्इतुल्लम्आत के हवाला से साबित किया है कि बिदअत वह काम है जो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के बाद पैदा हो। इसमें सहाबा किराम व ताबईन का ज़िक्र नहीं। और इसलिए कि मिश्कात बाब क़यामे शहरे रमज़ान में है कि हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने अपने ज़माना ख़िलाफ़त में तरावीह की बाक़ायदा जमाअत करने का हुक्म दिया और तरावीह की जमाअत को देख कर फरमाया **नेअ़मतिल-बिदअतु हाज़ेही** यह तो बड़ी अच्छी बिदअत है। ख़ुद हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने अपने मुबारक फ़ेअल को बिदअते हसना फरमाया। तीसरे इसलिए कि पहले बाब में मिर्क़ात के हवाला से गुज़र चुका कि तरावीह की जमाअत बिदअते मुस्तहब्बा है यानी तरावीहे सुन्नत और उसकी बाक़ायदा पाबन्दी से जमाअत बिदअते हसना।

उन्होंने हज़रत फ़ारूक़ रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु के फ़ेअल को बिदअत में दाख़िल किया। चौथे इसलिए कि बुख़ारी जिल्द दोम **किताब फ़ज़ाइलुल-कुरआन बाब जमइल-कुरआन** में है कि हज़रत सिद्दीक़ ने हज़रत ज़ैद इब्ने साबित रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा को कुरआन पाक जमा करने का हुक्म दिया। तो उन्होंने अर्ज़ किया कि **कैफ़ा तफ़अलूना शैअन लम यफ़अल्हु रसूलुल्लाहे सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम क़ाला हुवा ख़ैरुन।** आप वह काम क्यों करते हैं जो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने न किया, सिद्दीक़ ने फरमाया कि यह काम अच्छा है। हज़रत ज़ैद इब्ने साबित ने बारगाहे सिद्दीक़ी रज़ि अल्लाहु अन्हुमा में यही अर्ज़ किया कि कुरआन का जमा करना बिदअत है। और बिदअत क्यों कर रहे हैं। हज़रत सिद्दीक़ रज़ि अल्लाहु अन्हु ने फरमाया कि बिदअत तो है मगर हसना है। यानी अच्छी है। जिससे पता लगा कि फ़ेअले सहाबा बिदअते हसना है। मुख़ालेफ़ीन के दलाइल के जवाबात हस्बे ज़ैल हैं।

(1) **फ़अलैकुम बेसुन्नती व सुन्नतिल-खुलफ़ाइर्राशेदीन।** (मिश्कात स० 30) ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के अक़्वाल व अफ़्आल को लुग़वी माना से सुन्नत फरमाया गया। यानी ऐ मुसलमानों तुम मेरे और मेरे ख़ुलफ़ा के तरीक़ों को इख़्तियार करो जैसे कि हम पहले बाब में हदीस नक़्ल कर चुके हैं।

मन सन्ना फ़िल-इस्लामे सुन्नतन हसनतन फ़लहु अजरहा और व मन सन्ना फिल इस्लामे सुन्नतन सैयितन।

इस हदीस में सुन्नत बामाना तरीक़ा है। कुरआन करीम फरमाता है।

सुन्नता मन क़द अरसलना क़ब्लका मिन रुसेलेना वला तजिदु लेसुन्नतेना तहवीला। और फरमाता है। **सुन्नतल्लाहिल्लती क़द ख़लत।** आयात और अहादीस में सुन्नत से मुराद सुन्नते शरईया बिदअत के मुक़ाबिल नहीं। बल्कि माना तरीक़ा है। सुन्नते इलाहिया अल्लाह का तरीक़ा, सुन्नते अंबिया नबियों का तरीक़ा वग़ैरह।

इसी हदीस **फ़अलैकुम बेसुन्नती** के मातहत अश्इतुल्लम्आत में है।

ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत हक़ीक़तन सुन्नते नबवी है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना में मशहूर न हुई। उन हज़रात के ज़माना में मशहूर हो गई और उनकी तरफ मंसूब हो गई। इससे मालूम हुआ कि सुन्नते ख़ुलफ़ा उसको कहते हैं कि जो असल में तो सुन्नते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हो। मगर उसको मुसलमानों में राइज करने वाले ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन हों। पाँचवें इसलिए कि मुहद्देसीन और फुक़हा फरमाते हैं कि ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के हुक्म सुन्नत से मुल्हक़ हैं यानी सुन्नत तो नहीं, सुन्नत से इल्हाक़ किए हुए हैं अगर इन हज़रात के ईजाद फरमूदा

काम सुन्नत ही होते तो इल्हाक़ के क्या मानी। नूरुल-अनवार के शुरू में है। **व क़ौलुस्सहाबी फ़ीमा यूक़लु मुल्हकुन बिल-क़्यासे व फ़ीमा ला यूक़लु फ़मुल्हकुन बिस्सुन्नते।** सहाबी का फरमान अक़्ली बातों में तो क़्यास से मुल्हिक़ है और ग़ैर अक़्ली बातों में सुन्नत से मुल्हक़ है। अगर सहाबी का हर क़ौल व फ़ेअल सुन्नत है तो क़्यास और सुन्नत से इल्हाक़ के क्या मानी? अश्इतुल्लम्आत ज़रे हदीस **फ़अलैकुम बेसुन्नती** है।

जिस चीज़ का ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन ने हुक्म फरमाया हो अगरचे अपने क़्यास और इज्तिहाद से हो सुन्नते नबवी के मुवाफ़िक़ है। इस पर लफ़्ज़ बिदअत नहीं बोल सकते। इन इबारात से बिल्कुल वाज़ेह हो गया कि सुन्नत ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन बमानी लुग़वी सुन्नत है और सुन्नते शरई से मुल्हिक़ है। उनको अदबन बिदअत न कहा जाए। क्योंकि बिदअत अक्सर बिदअते सैयआ को बोलते हैं।

(2) **ख़ैरु उम्मती क़रनी** से तो मालूम हुआ कि इन तीन ज़मानों तक ख़ैर ज़्यादा होगी और उनके बाद ख़ैर कम शर ज़्यादा। यह मतलब नहीं कि इन तीन ज़मानों में जो भी काम ईजाद हो और कोई भी ईजाद करे वह सुन्नत हो जाए, यहाँ सुन्नत होने का ज़िक्र ही कहाँ है। वरना मज़्हबे ज़ब्रीया और क़दरीया ज़माना ताबईन ही में ईजाद हुआ और इमाम हुसैन रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का क़त्ल और हुज्जाज के मज़ालिम उन ही ज़मानों में हुए। क्या मआज़ल्लाह उनको भी सुन्नत कहा जाएगा।

(3-4) **मा अना अलैहि व असहाबी** और **असहाबी कन्नुजूमे** से यह मालूम हुआ कि सहाबा किराम की ग़ुलामी उनकी पैरवी बाइसे हिदायत है और उनकी मुख़ालिफ़त बाइसे गुम्राही यह बिल्कुल दुरुस्त और उस पर हर मुसलमान का ईमान है लेकिन इससे यह कब लाज़िम आया कि उनका हर फ़ेअल सुन्नते शरई हो। बिदअते हसना भी वाजिबुल–इत्तिबा होती है। मिश्कात बाबुल-ऐतसाम (स० : 30) में है।

बड़ी जमाअत की पैरवी करो जो जमाअत से अलाहिदा रहा वह जहन्नम में अलाहिदा हो गया। नीज़ वारिद हुआ।

जिसको मुसलमान अच्छा जानें वह अल्लाह के नज़्दीक भी अच्छा है जो मुसलमानों की जमाअत से बालिश्त भर अलाहिदा रहा उसने इस्लाम की रस्सी अपने गले से उतार दी। क़ुरआन में है।

तरजमा : और मुसलमानों की राह से जुदा राह चले हम उसको उसके हाल पर छोड़ देंगे और दोज़ख़ में दाख़िल कर देंगे।

इस आयत व हदीस से मालूम हुआ कि हर शख़्स को लाज़िम है कि

अक़ाइद व आमाल में जमाअते मुस्लेमीन के साथ रहे हैं उनकी मुख़ालिफ़त जहन्नम का रास्ता है लेकिन उससे यह तो लाज़िम नहीं कि जमाअते मुस्लेमीन का ईजाद किया हुआ कोई भी काम बिदअत न हो सब सुन्नत ही हो। बिदअत होगा मगर बिदअते हसना। जिस तरह कि ईजादाते सहाबा किराम को सुन्नते सहाबा कहते हैं इसी तरह सल्फ़े सालेहीन के ईजादात को भी सुन्नते सल्फ़ कहते हैं बमाना लुग्वी यानी पसन्दीदा दीनी तरीक़ा।

हिदायते ज़रूरिया : जो हज़रात कि हर बिदअत यानी काम को हराम जानते हैं वह इस क़ायदा कुल्लिया के क्या मानी करेंगे कि **अल-अस्लु फ़िल-अशियाइल-इबाहतु** तमाम चीज़ों की असल यह है कि वह जायज़ है यानी हर चीज़ जायज़ और हलाल है। हाँ अगर किसी चीज़ को शरीअत मना कर दे तो वह हराम या मना है यानी मुमानेअत से हुर्मत साबित होगी न कि नए होने से। यह क़ाइदा कुरआन पाक और अहादीसे सहीहा और अक़्वाले फ़ुक़हा से साबित है और ग़ालिबन कोई मुक़ल्लिद कहलाने वाला तो इसका इंकार नहीं कर सकता। कुरआने करीम फ़रमाता है।

तरजमा : ऐ ईमान वालों ऐसी बातें न पूछो कि जो तुम पर ज़ाहिर की जाएं तो तुमको बुरी लगें और अगर उनको उस वक़्त पूछोगे कि कुरआन उतर रहा है तो ज़ाहिर कर दी जाएंगी अल्लाह उनको माफ़ कर चुका।

इससे मालूम हुआ कि जिसका कुछ बयान न हुआ हो न हलाल होने का न हराम, तो माफ़ी में है। इसलिए कुरआने करीम ने हराम औरतों का ज़िक्र फ़रमा कर फ़रमाया **व उहिल्ला लकुम मा वराआ ज़ालिकुम।** उनके सिवा बाक़ी औरतें तुम्हारे लिए हलाल हैं और फ़रमाया **व क़द फ़स्सला लकुम मा हर्रमा अलैकुम।** तुम से तफ़्सील व वार बयान कर दी गईं वह चीज़ें जो कि तुम पर हराम हैं यानी हलाल चीज़ों की तफ़्सील की ज़रूरत नहीं तमाम चीज़ें ही हलाल हैं। हाँ चन्द मुहरमात हैं जिनकी तफ़्सील बता दी उनके सिवा सब हलाल। मिश्कात **किताबुल-अतइमा बाबु आदाबित्तआम** फ़स्ले दोम स० : 367 में है।

तरजमा : हलाल वह जिसको अल्लाह ने अपनी किताब में हलाल किया और हराम वह जिसको अल्लाह ने अपनी किताब में हराम किया और जिससे ख़ामोशी फरमाई वह माफ़।

इस हदीस से मालूम हुआ कि चीज़ें तीन तरह की हैं एक वह जिनका हलाल होना साफ़ कुरआन में मज़्कूर है दूसरे वह जिनकी हुर्मत साफ़ आ गई। तीसरे वह जिन से ख़ामोशी फरमाई यह माफ़ है। शामी जिल्द अव्वल **किताबुत्तहारह** बहस तारीफ़े सुन्नत में है। **अल-मुख़्तारु अन्नल-अस्ला इबाहतु इन्दल-जम्हूरे मिनल-हन्फ़ीयते वश्शाफ़ेईयते।** जम्हूर हनफ़ी और

शाफ़ई के नज़्दीक यही मसला है कि असल जायज़ होता है उसकी तफ़सीर ख़ाज़िन व रूहुल-ब्यान और तफ़सीर ख़ज़ानुल-इरफ़ान वग़ैरह ने भी तसरीह की है कि हर चीज़ में असल यही है कि वह जायज़ है मुमानिअत से नाजाइज़ होगी। अब जो बाज़ लोग अह्ले सुन्नत से पूछते हैं कि अच्छा बताओ कहाँ लिखा है कि मीलाद शरीफ़ करना जाइज़ है। या हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने या सहाबा किराम या ताबईन या तबा ताबईन ने कब किया था। यह महज़ धोखा है। अह्ले सुन्नत को चाहिए कि उन से पूछें कि बताओ कहाँ लिखा है कि मीलाद शरीफ़ करना हराम है। जब ख़ुदा हराम न करे रसूल अलैहिस्साम मना न फरमाएं और किसी से मुमानेअत साबित न हो तो तुम किस दलील से हराम कहते हो। बल्कि मीलाद शरीफ़ वग़ैरह का सुबूत न होना जाइज़ होने की अलामत है। रब तआला फरमाता है।

इन आयात से मालूम हुआ कि हुर्मत की दलील न मिलना हलाल होने की दलील है न कि हराम होने की। यह हज़रात इस से हुर्मत साबित करते हैं अजीब उलटी मंतिक़ है। अच्छा बताओ कि रेल में सफ़र, मदारिस का क़याम, कहाँ लिखा है? कि हलाल है या किसी सहाबी या ताबई ने किया जैसे वह हलाल ऐसे ही यह भी जाइज़ और हलाल है।

बहस 9 महफ़िले-मीलाद शरीफ़ के बयान में

इस बहस में दो बाब हैं। पहला बाब मीलाद शरीफ़ के सुबूत में। दूसरा बाब इस पर ऐतराज़ात व जवाबात में।

मीलाद शरीफ़ के सुबूत में

अव्वलन तो मालूम होना चाहिए कि मीलाद शरीफ़ की हक़ीक़त क्या है? और इसका हुक्म क्या? फिर यह जानना ज़रूरी है कि इसके दलाइल क्या हैं? मीलाद शरीफ़ की हक़ीक़त है हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की विलादत पाक का वाक़ेया बयान करना। हमल शरीफ़ के वाक़ेआत, नूरे मुहम्मदी के करामात, नसब नामा या शीर ख़्वार्गी और हज़रत हलीमा रज़ि अल्लाहु अन्हा के यहाँ परवरिश हासिल करने के वाक़ेआत बयान करना और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नअ़त पाक नज़्म या नसर में पढ़ना सब इसके ताबे हैं। अब वाक़ेया विलादत ख़्वाह तंहाई में पढ़ो या मज्लिस जमा करके और नज़्म में पढ़ो या नस्र में खड़े हो कर या बैठ कर जिस तरह भी हो इसको मीलाद शरीफ़ कहा जाएगा। महफ़िले मीलाद शरीफ़ मुनअक़िद करना और विलादते पाक की ख़ुशी मनाना, उसके ज़िक्र के मौक़ा पर ख़ुश्बू लगाना, गुलाब छिड़कना, शीरनी तक़्सीम करना, ग़र्ज़ेकि ख़ुशी का इज़हार जिस जाइज़ तरीक़ा से हो वह मुस्तहब और बहुत ही बाइसे बरकत और रहमते इलाही के नुज़ूल का सबब है।

ईसा अलैहिस्सलाम ने दुआ की थी **रब्बना अंज़िल अलैना माइदतम मिनस्समाइ तकूनु लना ईदन लेअव्वलेना व आख़ेरेना।** मालूम हुआ कि माइदा आने के दिन को हज़रत मसीह अलैहिस्सलाम ने ईद का दिन बनाया। आज भी इतवार को ईसाई इसी लिए ईद मनाते हैं कि उस दिन दस्तरख़्वान उतरा था और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की तशरीफ़ आवरी इस माइदा से कही बढ़ कर नेअमत है लिहाज़ा उनकी विलादत का दिन भी **यौमुल-ईद** है। हाँ इस मज्लिसे पाक में हराम काम करना सख़्त जुर्म और गुनाह है। जैसे औरतों का इस क़दर बुलन्द आवाज़ से नअ़त शरीफ़ पढ़ना कि अजनबी मर्द सुनें सख़्त मना है, औरत की आवाज़ अजनबी मर्द को सुनना जाइज़ नहीं। अगर कोई मर्द नमाज़ की हालत में किसी को सामने निकलने से रोके तो आवाज़ से सुब्हानल्लाह कह दे लेकिन अगर औरत किसी को रोके तो सुब्हानल्लाह न कहे बल्कि बाएं हाथ की पुश्त पर दाहिना हाथ मारे। जिस से मालूम हुआ कि औरत नमाज़ में ज़रूरत के वक़्त भी किसी को अपनी आवाज़ न सुनाए इसी तरह मीलाद शरीफ़ में बाजे के साथ नअत ख़्वानी करना बहुत ही गुनाह है कि यह बाजा खेल कूद और लग़्वियात में से है। वैसे भी बाजा से खेलना हराम है। और ख़ास नअ़त ख़्वानी जो कि इबादत है इसको बाजे पर इस्तेमाल करना और भी जुर्म है। अगर किसी जगह मीलाद शरीफ़ में यह ख़राबियाँ पैदा कर दी गई हों तो उन ख़राबियों को दूर किया जाए लेकिन असल मीलाद शरीफ़ को बन्द न किया जाए। अगर औरत बुलन्द आवाज़ से क़ुरआन की तिलावत करे या लोग क़ुरआन बाजे से पढ़ने लगें तो इन बेहूदगियों को मिटा दो। क़ुरआन पढ़ना न रोको क्योंकि यह इबादत है।

मीलाद शरीफ़ क़ुरआन व अहादीस व अक़्वाले उलमा और मलाइका और पैग़म्बरों के फ़ेअ़ल से साबित है क़ुरआने करीम में इरशाद हुआ (१) रब तआला फरमाता है **वज़्कुरू नेअ़मतल्लाहे अलैकुम।** और हुज़ूर की तशरीफ़ आवरी अल्लाह की बड़ी नेअमत है। मीलाद पाक में उसी का ज़िक्र है लिहाज़ा महफ़िले मीलाद करना इस आयत पर अमल है।

(2) व अम्मा बेनेअमते रब्बिका फ़हद्दिस। अपने रब की नेअ़मतों का ख़ूब चर्चा करो और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की दुनिया में तशरीफ़ आवरी तमाम नेअ़मतों से बढ़ कर नेअमत है कि रब तआला ने उस पर एहसान जताया है कि उसका चर्चा करना उसी आयत पर अमल है। आज किसी के फ़रज़न्द पैदा हो तो हर साल तारीख़े पैदाइश पर साल गिरह का जश्न करता है किसी को सलतनत मिले तो हर साल इस तारीख़ पर जश्ने जुलूस मनाता है तो जिस तारीख़ को दुनिया में सबसे बड़ी नेअमत आई उस पर ख़ुशी

मनाना क्यों मना होगा? ख़ुद कुरआने करीम ने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का मीलाद जगह-जगह इरशाद फरमाया फरमाता है। **लक़द जाअकुम रसूलुन** (अल-आयह) ऐ मुसलमानों तुम्हारे पास अज़्मत वाले रसूल तशरीफ़ ले आए। इसमें तो विलादत का ज़िक्र हुआ। फिर फरमाया। **मिन अंफुसेकुम** हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का नसब नामा बयान हुआ कि वह तुम में से या तुम्हारी बेहतरीन जमाअत में से हैं। **हरीसुन अलैकुम** से आख़िर तक हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नअ़त बयान हुई आज मीलाद शरीफ़ में यही तीन बातें बयान होती हैं।

(3) **लक़द मन्नल्लाहु अलल-मुमिनीना इज़ बअ़सा फ़ीहिम रसूलन।** अल्लाह ने मुसलमानों पर बड़ा ही एहसान किया कि उनमें अपने रसूल अलैहिस्सलाम को भेज दिया। **हुवल्लज़ी अरसला रसूलहू बिल-हुदा व दीनिल-हक़्क़े।** रब्बुल-आलमीन वह कुदरत वाला है जिसने अपने पैग़म्बर अलैहिस्सलाम को हिदायत और सच्चे दीन के साथ भेजा ग़र्ज़ेकि बहुत सी आयात हैं जिनमें हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की विलादत पाक का ज़िक्र फरमाया गया। मालूम हुआ कि मीलाद का ज़िक्र सुन्नते इलाहिया है। अब अगर जमाअत की नमाज़ में इमाम यही आयाते विलादत पढ़े तो ऐने नमाज़ में मेरे आक़ा का मीलाद होता है। देखो इमाम साहब के पीछे मज्मा भी है और क़याम भी हो रहा है। फिर विलादत पाक का ज़िक्र भी है बल्कि ख़ुद कलिमा तैय्यबा में मीलाद शरीफ़ है, क्योंकि इसमें है। **मुहम्मदुर रसूलुल्लाहे** मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं रसूल के मानी हैं भेजे हुए और भेजने के लिए आना ज़रूरी है। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की तशरीफ़ आवरी का ज़िक्र हो गया। असल मीलाद पाया गया।

कुरआने करीम ने तो अंबिया अलैहिमुस्सलाम का भी मीलाद बयान फरमाया है। सूरः मरयम हज़रत मरयम का हामिला होना, हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की विलादत पाक का ज़िक्र, हत्ता कि हज़रत मरयम का दर्दे ज़ेह, उस तक्लीफ़ में जो कलिमात फरमाए कि **या लैतनी मित्तु क़ब्ला हाज़ा** फिर उनकी मलाइका की तरफ से तसल्ली पाना, फिर यह कि हज़रत मरयम ने उस वक़्त क्या ग़िज़ा खाई। फिर हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का क़ौम से कलाम फरमाना ग़र्ज़ेकि सब ही बयान फरमाया। यही मीलाद ख़्वाँ भी पढ़ता है कि हज़रत आमना ख़ातून ने विलादत पाक के वक़्त फ़लां-फ़लां मोजज़ात देखे, फिर यह फरमाया फिर इस तरह हूराने बहिश्ती आपकी इमदाद को आईं, फिर काबा मुअज़्ज़मा ने आमना ख़ातून के घर को सज्दा किया वग़ैरह वग़ैरह। वही कुरआनी सुन्नत है। इसी तरह कुरआन ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की पैदाइश, उनकी शीर ख़्वार्गी, उनकी परवरिश, उनकी

बकरियाँ चराना, उनका निकाह, उनको नुबुव्वत मिलना सब कुछ बयान फ़रमाया, यही बातें मीलादे पाक में होती हैं।

मदारिजुन्नबुव्वह वग़ैरह ने फरमाया कि सारे पैग़म्बरों ने अपनी-अपनी उम्मतों को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की तशरीफ़ आवरी की ख़बरें दीं। हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का फरमान तो कुरआन ने भी नक़्ल फरमाया व **मुबश्शिरन बेरसूलिन याती मिन बअदिस्मुहू अहमदु।** मैं ऐसे रसूल की खुशख़बरी देने वाला हूँ जो मेरे बाद तशरीफ़ लाएंगे उनका नाम पाक अहमद है। सुब्हानल्लाह बच्चों के नाम पैदाइश के सातवें रोज़ माँ बाप रखते हैं मगर विलादत पाक से 570 साल पहले मसीह अलैहिस्सलाम फरमाते हैं कि उनका नाम अहमद है। होगा न फरमाया। मालूम हुआ कि उनका नाम पाक रब तआला ने रखा। कब रखा? यह तो रखने वाला जाने।

यह भी मीलाद शरीफ़ है, सिर्फ़ फ़र्क़ इतना हुआ कि उन हज़रात ने अपनी क़ौम के मज्मओं में फरमाया कि वह तशरीफ़ लाएंगे हम अपने मजमों में कहते हैं कि वह तशरीफ़ ले आए हैं, फ़र्क़ माज़ी व मुस्तक़्बिल का है बात एक ही है। साबित हुआ कि मीलाद सुन्नते अंबिया भी है।

रब तआला फरमाता है। **कुल बेफ़ज़्लिल्लाहे व बेरहमतेही फ़बेज़ालिका फल्यफ़रहू।** यानी अल्लाह के फ़ज़्ल व रहमत पर ख़ूब खुशियाँ मनाओ। मालूम हुआ कि फ़ज़्ले इलाही पर ख़ुशी मनाना हुक्मे इलाही है और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम रब का फ़ज़्ल भी हैं और रहमत भी। लिहाज़ा उनकी विलादत पर ख़ुशी मनाना इसी आयात पर अमल है और चूंकि यहाँ ख़ुशी मुतलक़ है लिहाज़ा हर जाइज़ ख़ुशी इसमें दाख़िल। लिहाज़ा महफ़िले मीलाद करना वहाँ की ज़ेब व ज़ीनत सज धज वग़ैरह सब बाइसे सवाब हैं।

(4) मवाहिबे लदुनिया और मदारिजुन्नबुव्वह वग़ैरह में ज़िक्रे विलादत में है कि शबे विलादत में मलाइका ने आमना ख़ातून रज़ि अल्लाहु अन्हा के दरवाज़े पर खड़े हो कर सलात व सलाम अर्ज़ किया। हाँ अज़्ली रांदा हुआ शैतान रंज व ग़म में भागा भागा फिरा। इससे मालूम हुआ कि मीलाद सुन्नत मलाइका भी है। और यह भी मालूम हुआ कि बवक़्ते पैदाइश खड़ा होना मलाइका का काम है। और भागा भागा फिरना शैतान का फ़ेअल। अब लोगों को इख़्तियार है कि चाहे तो मीलाद पाक के ज़िक्र के वक़्त मलाइका के काम पर अमल करें या शैतान के।

(5) ख़ुद हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मज्मए सहाबा के सामने मिंबर पर खड़े होकर अपनी विलादत पाक और अपने औसाफ़ बयान फ़रमाए। जिससे मालूम हुआ कि मीलाद पढ़ना सुन्नते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम भी है। चुनांचे मिश्कात जिल्द दोम **बाब फ़ज़ाइले**

सैयदुल-मुरसलीन फ़स्ले सानी में स० : 513 हज़रत अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक दिन हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। शायद हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम तक ख़बर पहुँची थी कुछ लोग हमारे नसब पाक में तअन करते हैं। **फ़क़ामन्नबीयु सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अलल-मिंबरे फ़क़ाला मन अना।** पस मिंबर पर क़याम फ़रमा कर पूछा बताओ मैं कौन हूँ? सबने अर्ज़ किया कि आप रसूलुल्लाह हैं, फ़रमाया मैं मुहम्मद इब्ने अब्दुल्लाह इब्ने अब्दुल-मुत्तलिब हूँ। अल्लाह ने मख़्लूक़ को पैदा फ़रमाया तो हम को बेहतरीन मख़्लूक़ में से किया फिर उनके दो हिस्से किए अरब व अजम। हमको उनमें से बेहतर यानी अरब में से किया फिर अरब के चन्द क़बीले फ़रमाए। हमको उनके बेहतर यानी कुरैश में से किया। फिर कुरैश के चन्द खानदान बनाए। हमको उन में से सबसे बेहतर खानदान यानी बनी हाशिम में से किया। इसी मिश्कात इसी फ़स्ल में है कि हम ख़ातमुन्नबीयीन हैं और हम हज़रत इब्राहीम की दुआ हज़रत ईसा की बशारत और अपनी वालिदा का दीदार हैं। जो कि उन्होंने हमारी विलादत के वक़्त देखा कि उन से एक नूर चमका जिससे शाम की इमारतें उनको नज़र आईं। उनमें हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपना नसब नामा अपनी नअत शरीफ़ अपनी विलादत पाक का वाक़ेया बयान फ़रमाया। यही मीलाद शरीफ़ में होता है। ऐसी सैकड़ों अहादीस पेश की जा सकती हैं।

(6) सहाब-ए-किराम एक दूसरे के पास जा कर फरमाइश करते थे कि हमको हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नअत शरीफ़ सुनाओ। मालूम हुआ कि मीलाद सुन्नते सहाबा भी है। चुनांचे मिश्कात **बाब फ़ज़ाइले सैयदुल-मुरसलीन** फ़स्ले अव्वल में है कि हज़रत अता इबने यसार फरमाते हैं कि मैं अब्दुल्लाह इब्ने अमर इब्ने आस रज़ि अल्लाहु अन्हु के पास गया और अर्ज़ किया कि मुझे हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की वह नअत सुनाओ जो कि तौरेत शरीफ़ में है उन्होंने पढ़ कर सुनाई। इसी तरह हज़रत कअबे अहबार फरमाते हैं कि हम हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नअत पाक तौरेत में यूं पाते हैं। मुहम्मद अल्लाह के रसूल होंगे, मेरे पसन्दीदा बन्दे हैं न कज ख़ुल्क़, न सख़्त तबीअत, उनकी विलादत मक्का मुकर्रमा में और उनकी हिजरत मदीना तैयबा में, उनका मुल्क शाम में होगा, उनकी उम्मत ख़ुदा की बहुत हम्द करेगी कि रंज व ख़ुशी हर हाल में ख़ुदा की हम्द करेगी। (मिश्कात बाब फ़ज़ाइल सैयदुल-मुरसलीन)।

(7) यह तो मक़्बूल बन्दों का ज़िक्र था। कुफ़्फ़ार ने भी विलादत पाक की ख़ुशी मनाई। तो कुछ न कुछ फ़ाइदा हासिल ही कर लिया। चुनांचे बुख़ारी

जिल्द दोम किताबुन्निकाह **बाब व उम्मुहातुकुमुल्लाती अरज़ानाकुम वमा युहर्रेमु मिनर्रज़ाअते** स० : 768 में है।

जब अबू लहब मर गया तो उसको उसके घर वालों ने ख़्वाब में बुरे हाल में देखा पूछा कि क्या गुज़री। अबू लहब बोला कि तुमसे अलाहिदा होकर मुझे कोई ख़ैर नसीब न हुई। हाँ मुझे इस कलिमे की उंगली से पानी मिलता है क्योंकि मैंने सोबिया लौंडी को आज़ाद किया था।

बात यह थी कि अबू लहब हज़रत अब्दुल्लाह का भाई था। उसकी लौंडी सोबिया ने उसको ख़बर दी कि आज तेरे भाई अब्दुल्लाह के घर फरज़न्द (मुहम्मद रसूलुल्लाह) पैदा हुए। सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उसने खुशी में उस लौंडी को उंगली के इशारे से कहा कि जा तू आज़ाद है। यह सख़्त काफिर था जिसकी बुराई कुरआन में आ रही है मगर इस ख़ुशी की बरकत से अल्लाह ने उस पर यह क़रम किया कि जब दोज़ख़ में वह प्यासा होता है तो अपनी उस उंगली को चूसता है तो प्यास बुझ जाती है। हालांकि वह काफिर था। हम मोमिन, वह दुश्मन था हम उनके बन्द-ए-बेदाम, उसने भतीजे के पैदा होने की ख़ुशी की थी न कि रसूलुल्लाह की। हम रसूलुल्लाह की विलादत की ख़ुशी करते हैं सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम। तो वह करीम हैं हम उनके भिखारी वह क्या कुछ न देंगे।

मदारिजुन्नबुव्वह जिल्द दोम हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की रज़ाअत के वस्ल में इसी अबू लहब के वाक़िया को बयान फरमा कर फरमाते हैं।

इस वाक़ेया में मौलूद वालों की बड़ी दलील है जो कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की शबे विलादत में ख़ुशियाँ मनाते और माल ख़र्च करते हैं यानी अबू लहब जो कि काफ़िर था जब हूज़ूर की विलादत की ख़ुशी और लौंडी के दूध पिलाने की वजह से इनआम दिया गया, तो उस मुसलमान का क्या हाल होगा जो मुहब्बत व ख़ुशी से भरा हुआ है और माल ख़र्च करता है। लेकिन चाहिए कि महफिले मीलाद शरीफ़ अवाम की बिदअतों यानी गाने और हराम बाजों वग़ैरह से खाली हो।

(8) हर ज़माना और हर जगह में उलमा व औलिया मशाइख़ और आम्मतुल-मुस्लेमीन इस मीलाद शरीफ़ को मुस्तहब जान कर करते रहे और करते हैं। हरमैन शरीफ़ैन में भी निहायत एहतिमाम से यह मज्लिस पाक मुनअक़िद की जाती है जिस मुल्क में भी जाओ, मुसलमानों में यह अमल पाओगे औलिया अल्लाह व उल्माए उम्मत ने उसको बड़े बड़े फ़ायदे और बरकात फ़रमाए हैं। और हम हदीस नक़्ल कर चुके हैं कि जिस काम को मुसलमान अच्छा जानें वह अल्लाह के नज़्दीक भी अच्छा है कुरआन फरमाता है। **लेतकूनू शुहदाआ** ताकि तुम ऐ मुसलमानों गवाह हो। हदीस पाक में भी है। **अंतुम शुहदा उल्लाहे फ़िल-अर्जे**। तुम ज़मीन में अल्लाह के गवाह हो।

लिहाज़ा महफ़िले मीलादे पाक मुस्तहब है।

आख़िर **मज्मउल-बहार** सफ़: 550 में है कि शैख़ मुहम्मद ज़ाहिर मुहद्दिस रबीउल-अव्वल के मुतअल्लिक़ फ़रमाते हैं।

फ़इन्नहू शहरू उमिरना बिज़्ज़ारिले जबूरे फ़ीहे कुल्ला आमिन

तरजमा : मालूम हुआ कि रबीउल-अव्वल में हर साल ख़ुशी मनाने का हुक्म है।

तफ़्सीर रूहुल-बयान पारा 26 सूर: फ़तह ज़ेरे आयत **मुहम्मदुर-रसूलुल्लाह** है।

तरजमा : मीलाद शरीफ़ करना हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ताज़ीम है जबकि वह बुरी बातों से ख़ाली हो। इमाम सुयूती फ़रमाते हैं कि हमको हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की विलादत पर शुक्र का इज़हार करना मुस्तहब है। फिर फ़रमाते हैं।

तरजमा : इब्ने हजर हैतमी ने फ़रमाया कि बिदअते हसना के मुस्तहब होने पर सबका इत्तिफ़ाक़ है और मीलाद शरीफ़ करना और उसमें लोगों का जमा होना भी इसी तरह बिदअते हसना है। इमाम सख़ावी ने फ़रमाया कि मीलाद शरीफ़ तीनों ज़मानों में किसी ने न किया, बाद में ईजाद हुआ। फिर हर तरफ़ के और हर शहर के मुसलमान हमेशा मौलूद शरीफ़ करते रहे और करते हैं और तरह-तरह के सदक़ा व ख़ैरात करते हैं और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के मीलाद पढ़ने का बड़ा एहतमाम करते हैं और इस मज्लिस पाक की बर्कतों से उन पर अल्लाह का बड़ा ही फ़ज़्ल होता है। इमाम इब्ने जौज़ी फ़रमाते हैं कि मीलाद शरीफ़ की तासीर यह है कि साल भर इसकी बरकत से अमन रहती है और इसमें मुरादें पूरी होने की ख़ुशख़बरी है जिस बादशाह ने पहले इसको ईजाद किया वह शाह अरबल है और इब्ने दहीह ने इसके लिए मीलाद शरीफ़ की एक किताब लिखी जिस पर बादशाह ने उसको हज़ार अशर्फ़ियाँ नज़र कीं और हाफ़िज़ इब्ने हजर और हाफ़िज सुयूती ने उसकी असल सुन्नत से साबित की है और उनका रद किया है जो कि उसको बिदअते सैयआ कह कर मना करते हैं।

मुल्ला अली क़ारी मूरिदुर्रवा में दीबाचा के मुत्तसिल फ़रमाते हैं।

ला ज़ाला अह्लुल-इस्लामे यहतफ़ेलूना फ़ी कुल्ले सनतिन जदीदतिन व यतनूना बेकराअते मौलेदेहिल करीम व यज्हरू अलैहिम मिन बरकातेहि कुल्ला फ़सालिन अज़ीम।

और उसी किताब के दीबाचा में यह अश्आर फ़रमाते हैं।

लेहाजश्शहरे फ़ील इस्लामे फ़ज़्लुब व मनक़बुतुन तफ़ूकुन अलश्शहूरे रबिउन फ़ी रबीईन फ़ी रबीईन व नुरुन फ़ौकुन नूरिन फ़ौकुने नूरिन

इस इबारत से तीन बातें मालूम हुईं एक यह कि मश्रिक़ व मग़्रिब के

मुसलमान इसको अच्छा जान कर करते हैं। दूसरे यह कि बड़े-बड़े उलमा फ़ुक़हा मुहद्देसीन मुफ़स्सेरीन व सूफ़िया ने इसको अच्छा जाना है जैसे इमाम सुयूती, अल्लामा इब्ने हजर, हैतमी, इमाम सख़ावी, इब्ने जौज़ी, हाफ़िज़ इब्ने हजर वग़ैरहुम। तीसरे यह कि मीलाद पाक की बरकत से साल भर तक घर में अमन, मुराद पूरी होना, मक़ासिद बर आना हासिल होता है।

(9) अक़्ल का भी तक़ाज़ा है कि मीलाद शरीफ़ बहुत मुफ़ीद महफ़िल है। इसमें चन्द फ़ाइदे हैं। मुसलमानों के दिल में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के फ़ज़ाइल सुन कर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की मुहब्बत बढ़ती है। शैख़ अब्दुल-हक़ मुहद्दिस देहलवी और दीगर सूफ़िया-ए-किराम फ़रमाते हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की मुहब्बत बढ़ाने के लिए दरूद और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के अहवाले ज़िन्दगी का मुताला ज़रूरी है। पढ़े लिखे लोग तो किताबों में हालात देख सकते हैं मगर ना ख़्वानदा लोग नहीं पढ़ सकते। उनको इस तरह सुनने का मौक़ा मिल जाता है। यह मज्लिस पाक ग़ैर मुस्लिमों में तबलीग़े अहकाम का ज़रिया है, कि वह भी इसमें शरीक हों। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के हालाते तैयबा सुनें, इस्लाम की ख़ूबियाँ देखें, ख़ुदा तौफ़ीक़ दे तो इस्लाम ले आएं। तीसरे यह कि इस मज्लिस के ज़रिया से मुसलमानों को मसाइले दीनीया बताने का मौक़ा मिलता है। कुछ देहात के लोग जुमा में आते नहीं और इस तरह से बुलाओ तो जमा नहीं होते। हाँ महफ़िले मीलाद शरीफ़ का नाम लो तो फ़ौरन बड़े शौक़ से जमा हो जाते हैं। ख़ुद मैंने भी इसका बहुत तजरबा किया। अब इसी मज्लिस में मसाइले दीनीया बताओ उनको हिदायत करो अच्छा मौक़ा मिलता है। चौथे यह कि मीलाद शरीफ़ में ऐसी नज़्में बना कर पढ़ी जाएं जिन में मसाइले दीनीया हों और मुसलमानों को हिदायत की जाए क्योंकि बमुक़ाबला नस्र के नज़्म दिल में ज़्यादा असर करती है और जल्द याद होती है। पाँचवें यह कि इस मज्लिस में सुनते-सुनते मुसलमानों को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का नसब शरीफ़, औलादे पाक, अज़्वाजे मुतह्हरात और विलादते पाक व परवरिश के हालात याद हो जाएंगे। आज मिर्ज़ाइ, राफ़ज़ी वग़ैरहुम को अपने मज़हब की पूरी-पूरी मालूमात होती हैं। राफ़ज़ी के बच्चों को भी बारह इमामों के नाम और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के अस्मा तबर्रा करने को याद होंगे मगर अह्ले सुन्नत के बच्चे तो क्या बूढ़े भी इससे ग़ाफ़िल हैं। मैंने बहुत बूढ़ों से पूछा कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की औलाद कितनी है? दामाद कितने हैं? बेख़बर पाया अगर इन मज्लिसों में उनका चर्चा रहे तो बहुत मुफ़ीद हो। बनी हुई चीज़ को न बिगाड़ो बल्कि बिगड़ी हुई को बनाने की कोशिश करो।

(10) मुख़ालेफ़ीन के पीर व मुर्शिद हाजी इम्दादुल्लाह साहब ने फ़ैसला

हफ़्त मसला में महफ़िले मीलाद शरीफ़ को जाइज़ और बाइसे बरकत फरमाया। चुनांचे वह इसके सफ: 8 पर फरमाते हैं "कि मशरब फ़क़ीर का यह है कि महफ़िले मौलूद शरीफ़ में शरीक होता हूँ। बल्कि ज़रियए बरकात समझ कर हर साल मुनअक़िद करता हूँ। और क़याम में लुत्फ़ व लज़्ज़त पाता हूँ।" अजीब बात यह है कि पीर साहब तो मौलूद शरीफ़ को ज़रिया बरकात समझ कर ख़ुद हर साल करें और मुरीदीन मुख़्लेसीन का अक़ीदा हो (कि शिर्क व कुफ़्र की महफ़िल है महफ़िले मीलाद) न मालूम कि अब पीर साहब पर क्या फ़तवा लगेगा?

(11) हम उर्स की बहस में अर्ज़ करेंगे कि फ़ुक़हा के नज़्दीक बग़ैर दलील के कराहते तंज़ीही का भी सुबूत नहीं हो सकता। हुर्मत तो बहुत बड़ी चीज़ है और इस्तेहबाब के लिए सिर्फ़ इतना काफ़ी है कि मुसलमान इसको अच्छा जानें। तो जो काम शरीअत में मना नहीं और मुसलमान उसको नीयते ख़ैर से करे या कि आम मुसलमान इसको अच्छा जानते हों वह मुस्तहब है। इसका सुबूत बिदअत की बहस में भी हो चुका। तो महफ़िले मीलाद शरीफ़ के मुतअल्लिक़ कहा जा सकता है कि शअरन यह मना नहीं और मुसलमान इसको कारे सवाब समझते हैं और नीयते ख़ैर से करते हैं लिहाज़ा यह मुस्तहब है मगर हराम कहने वाले इसकी हुरमत पर कौन सी क़तईयुस्सुबूत व क़तईयुद्दलालत हदीस या आयत लाएंगे। सिर्फ़ बिदअत कह देने से काम नहीं चलता।

मीलाद शरीफ़ पर ऐतराज़ाज व जवाबात में

मुख़ालेफ़ीन के इस पर हस्बे ज़ैल ऐतराज़ात हैं और इनके हस्बे ज़ैल जवाबात हैं।

(1) महफ़िले मीलाद बिदअत है कि न हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माना में हुई और न सहाबा के ज़माना में हुई और न ताबईन के ज़माना में और हर बिदअत हराम है लिहाज़ा मौलूद हराम।

जवाब : मीलाद शरीफ़ को बिदअत कहना नादानी है। हम पहले बाब में बता चुके हैं कि असल मीलाद सुन्नते इलाहिया, सुन्नते अंबिया, सुन्नते मलाइका, सुन्नते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सुन्नते सहाबा किराम, सुन्नते सल्फ़े सालेहीन और आम मुसलमानों का मअमूल है फिर बिदअत कैसा? और बिदअत हो भी तो हर बिदअत हराम नहीं, हम बिदअत की बहस में अर्ज़ कर चुके हैं कि बिदअत वाजिब भी होती है। और मुस्तहब भी, जाइज़ भी होती है और मक्रूह व हराम भी। नीज़ पहले बाब में तफ़्सीर रूहुल-बयान के हवाला से बता चुके कि यह महफ़िल बिदअते हसना

मुस्तहब्बा है। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का ज़िक्र क्यों कर हराम हो सकता है?

(2) इस मज्लिस में बहुत सी हराम बातें होती हैं मसलन औरतों मर्दों का ख़लत मलत, दाढ़ी मुंडों का नअत ख़्वानी करना, ग़लत रिवायात पढ़ना गोया कि यह मज्लिस हराम बातों का मज्मूआ है लिहाज़ा हराम है।

जवाब : अव्वलन यह हराम चीज़ें हर मज्लिसे मीलाद में होती नहीं बल्कि अक्सर नहीं होतीं। औरतें पर्दों में अलाहिदा बैठती हैं और मर्द अलाहिदा पढ़ने वाले पाबन्दे शरीअत होते हैं। रिवायात भी सहीह बल्कि हमने तो यह देखा है कि पढ़ने वाले सुनने वाले बावज़ू बैठे हैं सब दरूद शरीफ़ पढ़ते रहते हैं और रिक़्क़त तारी होती है। बसा औक़ात आँसू जारी होते हैं और महबूब अलैहिस्सलाम का ज़िक्र पाक होता है।

हाय कम्बख़्त तूने पी ही नहीं। और अगर किसी जगह यह बातें होती भी हों तो यह बातें हराम होंगी। असल मीलाद शरीफ़ यानी ज़िक्रे विलादत मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम क्यों हराम होगा। बहसे उर्स में हम अर्ज़ करेंगे कि हराम चीज़ के शामिल हो जाने से कोई सुन्नत या जाइज़ काम हराम नहीं हो जाता। वरना सबसे पहले दीनी मदरसे हराम होने चाहिएं। क्योंकि वहाँ मर्द बेदाढ़ी वाले बच्चे जवानों के साथ पढ़ते हैं। उनका आपस में इख़्तिलात भी होता है। कभी-कभी इसके बुरे नतीजे भी बरामद होते हैं। और तिर्मिज़ी व बुख़ारी इब्ने माजा वग़ैरह कुतुबे हदीस व तफ़्सीर पढ़ते हैं उनमें तमाम रिवायात सहीह ही नहीं होतीं। बाज़ ज़ईफ़ बल्कि मौज़ू भी होती हैं। कुछ तलबा बल्कि बाज़ मुदर्रिसीन दाढ़ी मुंडे भी होते हैं। तो क्या उनकी वजह से मदरसे बन्द किए जाएंगे? नहीं बल्कि इन मुहरमात को रोकने की कोशिश की जाएगी। बताओ अगर दाढ़ी मुंडा कुरआन पढ़े तो कैसा? कुरआन पढ़ना बन्द करोगे? हरगिज़ नहीं। तो अगर दाढ़ी मुंडा मीलाद शरीफ़ पढ़े तो क्यों बन्द करते हो?

(3) महफ़िले मीलाद की वजह से रात को देर में सोना होता है जिसकी वजह से फ़ज्र की नमाज़ क़ज़ा होती है और जिससे फ़र्ज़ छूटे वह हराम लिहाज़ा मीलाद हराम।

जवाब : अव्वलन तो मीलाद शरीफ़ हमेशा रात को नहीं होता। बहुत दफ़ा दिन में भी होता है। जहाँ रात को हो वहाँ बहुत देर तक नहीं होता। दस ग्यारह बजे तक ख़त्म हो जाता है। इतनी देर तक लोग उमूमन, वैसे भी जागते हैं अगर देर लग भी जाए तो नमाज़ जमाअत के पाबन्द लोग सुबह को नमाज़ के वक़्त जाग जाते हैं। जैसा बारहा का तजरबा है। लिहाज़ा यह ऐतराज़ महज़ ज़िक्रे रसूल अलैहिस्सलाम को रोकने का बहाना है और अगर

कभी मीलाद शरीफ़ देर में ख़त्म हुआ और इसकी वजह से किसी की नमाज़ के वक़्त आँख न खुली तो इस से मीलाद शरीफ़ क्यों हराम हो गया? दीनी मदारिस के सालाना जल्से, दीगर मज़हबी व क़ौमी जल्से रात को देर तक होते हैं और बाज़ जगह निकाह की मज्लिस आख़िर रात में होती है, रात की रेल से सफर करना होता है तो बहुत रात तक जागना होता है कहो कि यह जल्से, यह निकाह, यह रेल का सफर हराम है या हलाल? जब यह तमाम चीज़ें हलाल हैं तो महज़ मीलाद पाक क्यों हराम होगी? वरना वजहे फ़र्क़ बयान करना ज़रूरी है।

(4) अल्लामा शामी ने शामी जिल्द दोम **किताबुस्सौम बहस नज़र अम्वात** में कहा कि मीलाद शरीफ़ सबसे बद तर चीज़ है। इसी तरह तफ़्सीरात अहमदीया शरीफ़ में महफ़िले मीलाद को हराम बताया और इसके हलाल जानने वालों को काफिर कहा। जिससे मालूम हुआ कि महफ़िले मीलाद सख़्त बुरी चीज़ है।

जवाब : शामी ने मज्लिसे मीलाद शरीफ़ को हराम न कहा जिस मज्लिस में गाने बाजे और लग़्वियात हों और उस को लोग मीलाद कहें, कारे सवाब समझें उसको मना फरमाया है। चुनांचे वह इसी बहस में फरमाते हैं।

इससे भी बुरी मीनारों में मौलूद पढ़ने की नज़र मानना है। बावजूद कि इस मौलूद में गाने और खेल कूद होते हैं इसका सवाब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को हदिया करना। इसी तरह तफ़्सीरे अहमदीया ने इस गाने की मजालिस को मना किया कि जिनमें खेल तमाशे बल्कि शराब नोशी भी हो और लोग उसको समाअ कह कर कारे सवाब जानें। तफ़्सीराते अहमदीया ने इन लग़्वियात की तसरीह भी कर दी है। देखो तफ़्रीते अहमदीया सूरः लुक़्मान ज़ेरे आयत **व मिनन्नासे मन यश्तरी लहवल-हदीसे** हमने भी पहले अर्ज़ किया कि महफ़िले मीलाद में लग़्वियात न हों। मैंने खुद कराची में देखा कि कुछ जगह बाजे पर नअत पढ़ते हैं और उसको मीलाद शरीफ़ कहते हैं। एक बार सहसवान ज़िला बदायूं के क़रीब किसी गाँव में एक शख़्स ने अपने बाप की फ़ातिहा कराई बजाए कुरआन की तिलावत के ग्रामफ़ोन रिकार्ड में सूरः यासीन बजा कर उसका सवाब बाप की रूह को बख़्शा। ऐसी बेहूदा और हराम बातों को कौन जाइज़ कहता है। इसी तरह उन हज़रात के ज़माना में भी ऐसी बेकार और बेहूदा मज्लिसें होती होंगी उसको यह मना फरमा रहे हैं अगर मुतलक़न मीलाद शरीफ़ को जाइज़ मानना कुफ़्र है तो हाजी इम्दादुल्लाह साहब पीरे मुर्शिद भी इसमें शामिल हुए जाते हैं।

(5) नअत ख़्वानी हराम है क्योंकि यह भी एक तरह का गाना है और गाने की अहादीस में बुराई आई है इसी तरह तक़्सीमे शीरीनी कि यह फ़िज़ूलख़र्ची है।

जवाब : नअत कहना और नअत पढ़ना बेहतरीन इबादत है। सारा कुरआन हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नअत है। देखो इसकी तहक़ीक़ हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान में गुज़िश्ता अंबियाए किराम ने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नअत ख़्वानी की। सहाबए किराम और सारे मुसलमान नअत शरीफ़ को मुस्तहब जानते हैं। ख़ुद हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपनी नअत पाक सुनी और नअत ख़्वानों को दुआएं दीं। हज़रत हस्सान रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु नअतिया अश्आर और कुफ़्फ़ार का मुज़म्मत मंज़ूम करके हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ख़िदमत में लाते थे तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम उनके लिए मस्जिद में मिंबर बिछवा देते थे। हज़रत हस्सान उस पर खड़े हो कर नअत शरीफ़ सुनाया करते थे और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम दुआएं देते थे कि **अल्लाहुम्मा अैयिदहु बेरूहिल-कुदस।** ऐ अल्लाह हस्सान की रूहुल-कुदस से इम्दाद कर। (देखो मिश्कात शरीफ़ जिल्द दोम बाबुश-शेअर) इस हदीस से यह मालूम हुआ कि नअत गोई और नअत ख़्वानी ऐसी आला इबादत है कि इसकी वजह से हज़रत हस्सान रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु को मज्लिसे मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम में मिंबर दिया गया। अबू तालिब ने नअत लिखी। ख़रपोती शरह क़सीदा बुर्दा में है कि साहिबे क़सीदा बुर्दा को फ़ालिज हो गया था। कोई इलाज मुफ़ीद न होता था। आख़िर कार क़सीदा बुर्दा शरीफ़ लिखा। रात को ख़्वाब में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ख़िदमत में खड़े हो कर सुनाया। शिफ़ा भी पाई और इनाम में चादरे मुबारक भी मिली। नअत शरीफ़ से दीन व दुनिया की नेअमतें मिलती हैं। मौलाना जामी, इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा हुज़ूर ग़ौसे पाक ग़र्ज़ेकि सारे औलिया व उलमा ने नअतें लिखीं और पढ़ी हैं। उन हज़रात के क़साइदे नअतिया मशहूर हैं। हदीसे वक़्फ़ा में गाने बजाने की बुराइयाँ हैं न कि नअत की। जिन गीतों में ग़ैर मुनासिब मज़ामीन हों, औरतों या शराब की तारीफ़ें हों वाक़ई वह गाने नाजाइज़ हैं। इसकी पूरी तहक़ीक़ के लिए मिर्क़ात शरह मिश्कात **बाब मा युक़ालु बअदत्तक्बीर** (किताबुस्सलात) और बाबुश-शेअर में देखो।

फ़ुक़हा फ़रमाते हैं कि फ़सीह व बलीग़ अश्आर का सीखना फ़र्ज़े कफ़ाया है। अगरचे उनके मज़ामीन ख़राब हों मगर उनके अल्फ़ाज़ से उलूम में मदद मिलती है। दीवाने मुतनब्बी वग़ैरह मदारिसे इस्लामिया में दाख़िल हैं हालांकि उनके मज़ामीन गन्दे हैं तो नअतिया अश्आर सीखना, याद करना, पढ़ना जिनके मज़ामीन भी आला, अल्फ़ाज़ भी पाकीज़ा, किस तरह ना जाइज़ हो सकते हैं? शामी के मुक़द्दमा में शेअर की बहस में है।

शुअरा जाहिलीयत के शेअरों को जानना समझना रिवायत करना फ़ुक़हा इस्लाम के नज़्दीक फ़र्ज़े कफ़ाया हैं क्योंकि इससे अरबी क़वाइद साबित

किए जाते हैं और उनके कलाम में अगरचे गानवी ख़ता मुम्किन है मगर लफ़्ज़ी ग़लती नहीं हो सकती। गाने की पूरी तहक़ीक़ बहस उर्स में क़व्वाली के मातहत आएगी इंशाअल्लाह।

तक़्सीमे शीरीनी बहुत अच्छा काम है। ख़ुशी के मौक़ा पर खाना, खिलाना, मिठाई तक़्सीम करना अहादीस से साबित है। अक़ीक़ा वलीमा वग़ैरह में खाने की दावत सुन्नत है। क्यों? इसलिए कि यह ख़ुशी का मौक़ा है ख़ास कर निकाह के वक़्त ख़ुर्मे तक़्सीम करना उसका लुटाना सुन्नत है। इज़हारे ख़ुशी के लिए। मुसलमान को ज़िक्रे महबूब पाक पर ख़ुशी होती है, दावत करता है, सदक़ा व ख़ैरात करता है, शीरीनी तक़्सीम करता है। इसी तरह असातिज़ए किराम का तरीक़ा है कि दीनी किताब शुरू होने और ख़त्म होने पर पढ़ने वाले से शीरीनी तक़्सीम कराते हैं। मैंने मेण्डू ज़िला अलीगढ़ में कुछ अरसा तालीम पाई है वहाँ देवबन्दियों का मदरसा था। मगर किताब शुरू होने पर शीरीनी तक़्सीम की जाती थी। इससे मालूम हुआ कि दीनी काम करने से पहले और ख़त्म करके तक़्सीमे शीरीनी सुन्नते सल्फ़ सालेहीन है और महफ़िले मीलाद भी अहम दीनी काम है। इससे अह्ले क़राबत को मीलाद ख़्वानों और मेहमानों को खाना खिलाना बाद में हाज़िरीन में तक़्सीमे शीरीनी करना इसी में दाख़िल है। इस तक़्सीम की असल क़ुरआन व हदीस से मिलती है। क़ुरआन फ़रमाता है।

तरजमा : ऐ ईमान वालो! जब तुम रसूल से कुछ आहिस्ता अर्ज़ करना चाहो, तो इससे पहले कुछ सदक़ा दे लो। यह तुम्हारे लिए बेहतर और बहुत सुत्थरा है। (पारा 28, सूरः मुजादिला)

इस आयत से मालूम हुआ कि शुरू इस्लाम में मालदारों पर ज़रूरी था कि जब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से कोई ज़रूरी मश्वरा करें तो पहले ख़ैरात करें। चुनांचे हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने एक दीनार ख़ैरात करके हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से दस मस्अले पूछे और बाद में इसका वुजूब मंसूख़ हो गया। (देखो तफ़्सीर ख़ज़ाइनुल-इरफ़ान व ख़ाज़िन व मदारिक)।

अगरचे वुजूब मंसूख़ हो गया मगर इबाहते अस्लीया और इस्तेहबाब तो बाक़ी है। इससे मालूम हुआ कि मज़ाराते औलिया अल्लाह पर कुछ शीरीनी लेकर जाना, मुर्शिदीन और सुलहा के पास कुछ लेकर हाज़िर होना मुस्तहब है। इसी तरह अहादीस व क़ुरआन या दीनी कुतुब के शुरू करते वक़्त कुछ सदक़ा करना बेहतर है मीलाद शरीफ़ पढ़ने से पहले कुछ ख़ैरात करना कारे सवाब है कि उनमें भी दरहक़ीक़त हुज़ूर ही से कलाम करना है। तफ़्सीर फ़त्हुल-अज़ीज़ सफ़ः 86 में शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब ने एक हदीस नक़्ल की है।

बैहक़ी ने शुअबुल-ईमान में हज़रत इब्ने उमर से रिवायत किया कि हज़रत फ़ारूक़ ने सूरः बक़र बारा साल की मुद्दत में उसके रुमूज़ व असरार के साथ पढ़ी। जब फ़ारिग़ हुए तो ख़त्म के दिन एक ऊँट ज़िबह करके बहुत सा खाना पका कर सहाबए किराम को खिलाया। अहम कारे ख़ैर से फ़ारिग़ हो कर तक़्सीमे शीरीनी व तआम साबित हुआ। मीलाद पाक भी अहम काम है। बुज़ुर्गाने दीन तो फ़रमाते हैं कि किसी अह्ले क़राबत के यहाँ जाओ तो खाली न जाओ कुछ ले कर जाओ। **तहादौ व तहाबौ** एक दूसरे को हदिया दो मुहब्बत बढ़ेगी। फ़ुक़हा फ़रमाते हैं कि जब दयारे महबूब यानी मदीना पाक में जावे तो वहाँ के फ़ुक़रा को सदक़ा दे कि वह जीराने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं। रब तआला के यहाँ भी पहला सवाल यही होगा कि क्या आमाल लाए?

यह तक़्सीम असराफ़ (फ़िज़ूलख़र्ची) नहीं। किसी ने सैयदना इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से कहा कि **ला ख़ैरा फ़िस्सर्फ़े।** असराफ़ में भलाई नहीं। फ़ौरन जवाब दिया **ला सरफ़ा फ़िल-ख़ैरे।** भलाई में ख़र्च करना असराफ़ नहीं।

(6) महफ़िले मीलाद के लिए एक दूसरे को बुलाना हराम है। देखो लोगों को बुला कर नफ़्ल की जमाअत भी मना है तो क्या मीलाद इस से बढ़ कर है? (बराहीन)

जवाब : मज्लिसे वअज़, दावते वलीमा, मजालिसे इम्तिहान व महफ़िले निकाह व अक़ीक़ा वग़ैरह में लोगों को बुलाया ही जाता है बोलो यह उमूर हराम हो गए या हलाल रहे? अगर कहो कि निकाह व वअज़ वग़ैरह फ़राइज़े इस्लामी हैं लिहाज़ा उनके लिए मज्मा करना हलाल। तो जनाब ताज़ीमे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अहम फ़राइज़ है लिहाज़ा इसके लिए भी मज्मा करना हलाल है। नमाज़ पर दीगर हालात को क़यास करना सख़्त जिहालत है अगर कोई कहे कि नमाज़ बेवज़ू मना है लिहाज़ा तिलावते क़ुरआन भी बेवज़ू मना होनी चाहिए। वह अहमक़ है। क़यास मअल-फ़ारिक़ है।

(7) किसी की यादगार मनाना और दिन तारीख़ मुक़र्रर करना शिर्क है और मीलाद शरीफ़ में यह दोनों हैं लिहाज़ा यह भी शिर्क है।

जवाब : ख़ुशी की यादगार मनाना भी सुन्नत है। और दिन व तारीख़ मुक़र्रर करना मस्नून। इसको शिर्क कहना इंतिहा दरजा की जहालत व बेदीनी है। रब तआला ने मूसा अलैहिस्सलाम को हुक्म दिया **वज़क्किरहुम बेऐय्यामिल्लाहे** यानी बनी इसराईल को वह दिन भी याद दिलाओ जिनमें अल्लाह तआला ने बनी इसराईल पर नेअ्मतें उतार दीं। जैसे ग़र्क़े फ़िरऔन, मन्ना व सल्वा का नुज़ूल वग़ैरह। (ख़ज़ाइने इरफ़ान)।

मालूम हुआ जिन दिनों में रब तआला अपने बन्दों को नेअ़मत दे। उनकी यादगार मनाने का हुक्म है। **मिश्कात किताबुस्सौम बाब सौमित्ततौए** फ़स्ले अव्वल में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से दोशंबा के रोज़े के बारे में पूछा गया तो फरमाया कि उसी दिन हम पैदा हुए और उसी दिन हम पर वह़ी की इब्तिदा हुई। साबित हुआ कि दोशंबा का रोज़ा इसीलिए सुन्नत है कि यह दिन हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की विलादत का है। इससे तीन बातें मालूम हुईं। यादगार मनाना सुन्नत है, इसके लिए दिन मुक़र्रर करना सुन्नत है, हुज़ूर अलैहिस्सातु वस्सलाम की विलादत की ख़ुशी में इबादत करना सुन्नत है। इबादत ख़्वाह बदनी हो जैसे कि रोज़ा और नवाफ़िल या माली जैसे कि सदक़ा व ख़ैरात तक़सीमे शीरीनी वग़ैरह। मिश्कात यही बाब फ़स्ले सालिस में है कि जब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम मदीना पाक में तशरीफ़ लाए तो वहाँ यहूदियों को देखा कि आशूरा के दिन रोज़ा रखते हैं सबब पूछा तो उन्होंने अर्ज़ किया कि उस दिन हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम को रब ने फ़िरऔन से नजात दी थी हम उसके लिए शुक्रिया में रोज़ा रखते हैं। तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया **फ़नहनु अहक़्क़ु व औला बेमूसा मिनकुम।** हम मूसा अलैहिस्सलाम से तुम से ज़्यादा क़रीब हैं। **फ़सामहू व अमरा बेसियामेही।** ख़ुद भी उस दिन रोज़ा रखा और लोगों को आशूरा के रोज़ा का हुक्म दिया। चुनांचे अव्वले इस्लाम में यह रोज़ा फ़र्ज़ था। अब फ़र्ज़ियत मंसूख़ हो चुकी मगर इस्तेहबाब बाक़ी है। इसी मिश्कात के इसी बाब में है कि आशूरा के रोज़े के मुतअल्लिक़ किसी ने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से अर्ज़ किया कि इसमें यहूद से मुशाबेहत है तो फरमाया कि अच्छा साले आइंदा अगर ज़िन्दगी रही तो हम दो रोज़ रखेंगे। यानी छोड़ा नहीं। बल्कि ज़्यादती फरमा कर मुशाबेहत अह्ले किताब से बच गए। हमने शाने हबीबुर्रहमान में हवालए कुतुब से ब्यान किया कि पंजगाना नमाज़ों की रकाअतें मुख़्तलिफ़ क्यों हैं। फ़ज्र में दो मग़्रिब में तीन, अस्र वग़ैरह में चार। वहाँ जवाब दिया है कि यह नमाज़ें गुज़िश्ता अंबिया की यादगारें हैं कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम ने दुनिया में आकर रात देखी तो परेशान हुए। सुबह के वक़्त दो रकाअत शुक्रिया अदा कीं हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने अपने फ़रज़न्द हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम का फ़िदिया दुंबा पाया। लख़्ते जिगर की जान बची। क़ुरबानी मंज़ूर हुई। चार रकाअत शुक्रिया अदा कीं। यह ज़ुहर हुई वग़ैरह वग़ैरह मालूम हुआ कि नमाज़ की रकाअत भी दीगर अंबिया की यादगार हैं। हज तो अव्वल ता आख़िर हाजरा व इस्माईल व इब्राहीम अलैहिमुस्सलाम की यादगार है। अब न तो वहाँ पानी की तलाश

है और न शैतान का कुरबानी से रोकना। मगर सफ़ा व मरवा के दरम्यान चलना, भागना, मिना में शैतान को कंकर मारना बदस्तूर वैसे ही मौजूद है महज़ यादगार के लिए। इसकी नफ़ीस बहस देखो शाने हबीबुर्रहमान में।

माहे रमज़ान ख़ुसूसन शबे क़द्र इसलिए अफ़्ज़ल हुए कि उनमें कुरआने करीम का नुज़ूल है। रब तआला फरमाता है।

शहरू रमज़ानल्लज़ी उंज़िला फ़ीहिल-कुरआन। और फरमाता है **इन्ना अंज़लनाहु फ़ी लैलतिल-क़द्र** जब कुरआन के नुज़ूल की वजह से यह महीना यह रात ताक़्यामत आला हो गए। तो साहिबे कुरआन सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की विलादते पाक से ता क़्यामत रबीउल-अव्वल और उनकी बारहवीं तारीख़ आला व अफ़्ज़ल हो गए। हज़रत इस्माईल अलैहस्सलाम की कुरबानी के दिन को रोज़े ईद क़रार दे दिया गया। मालूम हुआ कि जिस दिन, जिस तारीख़ में किसी अल्लाह वाले पर अल्लाह की रहमत आई हो वह दिन, वह तारीख़ ता क़्यामत रहमत का दिन बन जाता है। देखो जुमा का दिन इसलिए अफ़्ज़ल है कि उस दिन में गुज़िश्ता अंबिया अलैहिमुस्सलाम पर रब्बानी इनाम हो गए कि आदम अलैहिस्सलाम की पैदाइश, उन्हें सज्दा, उनका दुनिया में आना, नूह अलैहिस्सलाम की कश्ती पार लगना, यूनुस अलैहिस्सलाम का मछली के पेट से बाहर आना, याकूब अलैहिस्सलाम का अपने फ़रज़न्द से मिलना, मूसा अलैहिस्सलाम का फिरऔन से नजात पाना, फिर क़्यामत का आना यह सब जुमा के दिन है लिहाज़ा जुमा सैयदुल-अैय्याम हो गया।

इसी तरह बरअक्स का हाल है कि जिन मक़ामात और जिन तारीख़ों में कौमों पर अज़ाब आया उन से डरो, मंगल के दिन फ़सद न लो कि यह ख़ून का दिन है। इसी तरह हाबील का क़त्ल हुआ। उसी दिन हज़रत हव्वा को हैज़ शुरू हुआ, देखो इन दिनों में यह वाक़ेआत कभी एक बार हो चुके। मगर इन वाक़ेआत की वजह से दिन में अज़्मत या हिक़ारत हमेशा के लिए हो गई।

मालूम हुआ कि बुज़ुर्गों की ख़ुशी या इबादत की यादगारें मनाना इबादत है। आज भी यादगारे इस्माईल शहीद, यादगार मौलाना क़ासिम ख़ुद मुख़ालेफ़ीन मनाते हैं। अगर किसी चीज़ का मुक़र्रर करना शिर्क हो जाए तो मदरसा देवबन्द की तारीख़ इम्तेहान मुक़र्रर, तअतील के लिए माहे रमज़ान मुक़र्रर, दस्तार बन्दी के लिए दौरा मुक़र्रर, मुदर्रेसीन की तंख़्वाह मुक़र्रर, खाने और सोने के लिए वक़्त मुक़र्रर, जमाअत के लिए घन्टा और मिनट मुक़र्रर, निकाह व वलीमा और अक़ीक़ा के लिए तारीख़ें मुक़र्रर, मीलाद शरीफ़ को शिर्क करने के शौक़ में अपने घर को तो आग न लगाओ, यह तारीख़ें महज़ आदत के तौर पर मुक़र्रर की जाती हैं। यह कोई भी नहीं समझता कि इस

तारीख़ के अलावा और तारीख़ में महफ़िले मीलाद जाइज़ नहीं। इसीलिए हमारे यूपी. में हर मुसीबत के वक़्त किसी के इंतिक़ाल के बाद मीलाद शरीफ़ करते हैं। काठियावाड़ में ख़ास शादी के दिन, मैयत के तीजा, दसवें, चालीसवें के दिन मीलाद शरीफ़ करते हैं। फिर माहे रबीउल-अव्वल में हर जगह पूरे माह मीलाद शरीफ़ बराबर करते हैं।

ख़्याल रहे कि दिन या जगह मुक़र्रर करना चन्द वजह से मना है। एक यह कि वह दिन या जगह किसी बुत से निस्बत रखती हो। जैसे होली, दीवाली को उसकी ताज़ीम के लिए देग पकाए या मन्दिर में जा कर सदक़ा करे। इसीलिए मिश्कात बाबुन्नज़ में है कि किसी ने बवाना में ऊँट ज़िबह करने की नीयत की तो फरमाया कि वहाँ कोई बुत या कुफ़्फ़ार का मेला था। अर्ज़ किया नहीं। फरमाया जा अपनी नज़्र पूरी कर। या इस तय करने में कुफ़्फ़ार से मुशाबेहत हो। या इस तऐयुन को वाजिब जाने। इसीलिए मिश्कात **बाब सौमिन्नफ़्ले** में है कि सिर्फ़ जुमा के रोज़े से मना फ़रमाया गया क्योंकि इससे यहूद से मुशाबेहत है। या इसे वाजिब जानना मना है या जुमा ईद का दिन है इसे रोज़े का दिन न बनाओ।

इन ऐतराज़ात से मालूम हुआ कि मानेईन के पास कोई दलीले हुर्मत मौजूद नहीं। यूं ही एक चिड़ पैदा हो गई। इसलिए महज़ क़यासाते बातिला से हराम कहते हैं याद रहे।

मिट गए मिटते हैं मिट जाएंगे आदा तेरे
न मिटा है न मिटेगा कभी चर्चा तेरा

बहस क़यामे मीलाद के बयान में

इस बहस में एक मुक़द्दमा और दो बाब हैं। मुक़द्दमा में क़याम के मुतअल्लिक़ ज़रूरी बातें हैं।

नमाज़ में दो तरह की इबादतें हैं। क़ौली और फ़ेअ़ली। क़ौली तो क़ुरआने करीम की तिलावत, रुकूअ़ व सुजूद की तसबीह, अत्तहीयात वग़ैरह का पढ़ना, और फ़ेअ़ली इबादात चार हैं। क़याम, रुकूअ़, सज्दा, बैठना, क़याम के मानी हैं इस तरह सीधा होना कि हाथ घुटनों तक न पहुँच सकें। रुकूअ के मानी हैं इस क़दर झुकना कि घुटनों तक हाथ पहुँच जाएं। इसीलिए ज़्यादा कुबड़े के पीछे तन्दुरुस्त की नमाज़ जाइज़ नहीं। क्योंकि वह क़याम नहीं कर सकता हर वक़्त रुकूअ़ में ही रहता है। सज्दा के मानी हैं सात आज़ा का ज़मीन पर लगना। दोनों पाँव के पंजे, दोनों घुटने, दोनों हथेलियाँ, नाक व पेशानी, इस्लाम से पहले दीगर अंबिया-ए-किराम की उम्मतों में किसी की ताज़ीम के लिए खड़ा होना, रुकूअ़ करना, सज्दा करना और बैठना हर

काम जाइज़ था। मगर इबादत की नीयत से नहीं बल्कि तहैया व ताज़ीम के लिए। ख़ुदा-ए-पाक ने हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को मलाइका से सज्द-ए-ताज़ीमी कराया। (कुरआन करीम) मगर इस्लाम ने ताज़ीमी क़याम और ताज़ीमन बैठने को तो जाइज़ रखा मगर ताज़ीमी रुकूअ़ और ताज़ीमी सज्दा को हराम कर दिया। मालूम हुआ कि कुरआन, हदीस से मंसूख़ होता है क्योंकि ग़ैरुल्लाह के लिए सज्दा ताज़ीमी का सुबूत तो कुरआन से है और उसका नस्ख़ हदीसे पाक से। यह भी ख़्याल रहे कि किसी के सामने झुकना या ज़मीन पर सर रखना जब हराम होगा जबकि रुकूअ़ व सज्दा की नीयत से यह काम करे। लेकिन अगर किसी बुज़ुर्ग का जूता सीधा करने या हाथ पाँव चूमने के लिए झुका तो अगरचे झुकना तो पाया गया मगर चूंकि उसमें रुकूअ़ की नीयत नहीं है लिहाज़ा यह रुकूअ़ नहीं हां ता हद रुकूअ़ झुक कर सलाम करना हराम है। यानी तअ़ज़ीमन ता हद रुकूअ़ झुकना हराम और झुकना किसी और काम के लिए था और वह काम ताज़ीम के लिए तो जाइज़ जैसे कि किसी के जूते सीधे करना वग़ैरह। यह फ़र्क़ ज़रूर ख़्याल में रहे बहुत ही बारीक है।

इस्लाम में रुकूअ़ के क़रीब झुक कर इशारा करना सज्दा की तरह है। (हराम है) मुहीत में है कि बादशाह के सामने झुकना मक्रूहे तहरीमी है।

पहला बाब

क़यामे मीलाद के सुबूत में

क़यामे यानी खड़ा होना छः तरह का है। क़यामे जाइज़, क़यामे फ़र्ज़, क़यामे सुन्नत, क़यामे मुस्तहब, क़यामे मक्रूह, क़यामे हराम, हम हर एक के पहचानने का क़ाइदा अर्ज़ किए देते हैं। जिससे क़यामे मीलाद का हाल ख़ुद-ब-ख़ुद मालूम हो जाएगा कि यह क़याम कैसा है।

(1) दुनियावी ज़रूरियात के लिए खड़ा होना जाइज़ है। इसकी सैकड़ों मिसालें हैं। खड़े हो कर इमारत बनाना और दीगर दुनियावी कारोबार करना वग़ैरह। **फ़इज़ा क़ुज़ियतिस्सलातु फ़ंतशिरू फ़िल-अर्ज़े** जब नमाज़े जुमा हो जाए तो ज़मीन में फ़ैल जाओ। फ़ैलना बग़ैर खड़े हुए नामुम्किन है।

(2) पंज वक़्ता नमाज़ और वाजिब नमाज़ में क़याम फ़र्ज़ है। **वक़ूमू लिल्लाहे क़ानेतीन** अल्लाह के सामने इताअ़त करते हुए खड़े हो यानी अगर कोई शख़्स क़ुदरत रखते हुए बैठ कर अदा करे तो यह नमाज़ न होगी।

(3) नवाफ़िल में खड़ा होना मुस्तहब है और बैठ कर भी जाइज़ यानी खड़े हो कर पढ़ने में सवाब ज़्यादा है।

(4) चन्द मौक़ों पर खड़ा होना सुन्नत है अव्वलन तो किसी दीनी अज़्मत वाली चीज़ की ताज़ीम के लिए खड़ा होना इसी लिए आबे ज़मज़म और वज़ू

के बचे हुए पानी को खड़े हो कर पीना मस्नून है हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के रौज़-ए-पाक पर अल्लाह हाज़िरी नसीब फरमाए तो नमाज़ की तरह हाथ बांध कर खड़ा होना सुन्नत है। आलमीगीरी जिल्द अव्वल **आख़रा किताबुल-हज आदाबे ज़ियारतु क़बरन्नबीये अलैहिस्सलाम** में है।

रौज़-ए-मुतह्हरा के सामने ऐसे खड़े हो जैसे कि नमाज़ में खड़ा होता है और उस जमाले पाक का नक़्शा ज़ेहन में जमाए गोया कि वह सरकार अपनी क़ब्रे अनवर में आराम फ़रमा हैं उसको जानते हैं और उसकी बात सुनते हैं। इसी तरह आम मुमिनीन की क़ब्रों पर फ़ातिहा पढ़े तो क़िब्ला को पुश्त और क़ब्र की तरफ मुँह करके खड़ा होना सुन्नत है। आलमगीरी **क़िताबुल-कराहियत बाब ज़ियारतिल-कुबूर** में है। **यख़्लओ नअ्लैहे सुम्मा यक़िफ़ु मुस्तदबिरल-क़िब्लते मुस्तक़्बिलन लेवजहिल-मैयते।** अपने जूते उतार दे और काबा की तरफ पुश्त और मैयत की तरफ मुँह करके खड़ा हो। रौज़ा पाक, आबे ज़मज़म, वज़ू का पानी, क़ब्रे मोमिन सब मुतबर्रक चीज़ें हैं उनकी ताज़ीम क़्याम से कराई गई। दूसरे जब कोई दीनी पेशवा आए तो उसकी ताज़ीम के लिए खड़ा हो जाना सुन्नत है। इसी तरह जब दीनी पेशवा सामने खड़ा हो तो उसके लिए खड़ा रहना सुन्नत और बैठा रहना बेअदबी है। मिश्क़ात जिल्द अव्वल **किताबुल-जिहाद बाब हुक्मिल-असरारे** और **बाबुल-क़्याम** में है कि जब सअद इब्ने मआज़ रज़ि अल्लाहु अन्हु मस्जिदे नबवी में हाज़िर हुए तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अंसार को हुक्म दिया **कूमू इला सैय्यिदकुम** अपने सरदार के लिए खड़े हो जाओ, यह क़्यामे ताज़ीमी था। अगर उनको महज़ मज्बूरी की वजह से घोड़े से उतारने के लिए होता तो **सैय्यिदकुम** न फरमाया जाता। इस लफ़्ज़ से मालूम होता है कि सरदारी की वजह से क़्याम कराया गया। और घोड़े से उतारने के लिए एक दो साहब ही काफी थे। सबको क्यों फरमाया कि खड़े हो जाओ। और घोड़े से उतारने के लिए तो हाज़िरीने मज्लिस पाक में से कोई भी चला जाता। ख़ास अंसार को क्यों हुक्म फरमाया। मानना पड़ेगा कि यह क़्याम ताज़ीमी ही था। और हज़रत सअद अंसार ही के सरदार थे उन से ताज़ीम कराई गई जिन लोगों ने **इला** से धोखा खा कर कहा है कि यह क़्याम इम्दाद के लिए था वह इस आयत में क्या कहेंगे? **इज़ा कुम्तुम इलस्सलाते** क्या नमाज़ भी बीमार है कि उसकी इम्दाद के लिए खड़ा होना होता है। अश्इतुल्लम्आत में इसी हदीस के मातहत है।

इस मौक़ा पर सअद की ताज़ीम व तकरीम कराने में यह हिक्मत होगी कि उनको बनी क़ुरैज़ा पर हुक्म फरमाने के लिए बुलाया था इस जगह उनकी शान का इज़्हार बेहतर और मुनासिब था। मिश्क़ात **बाबुल-क़्याम** में बरिवायते अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु है।

तरजमा : जब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम मजिलस से उठते तो हम भी खड़े हो जाते थे यहाँ तक कि हम देख लेते थे कि आप अपनी किसी बीबी पाक के घर में दाख़िल हो गए। अश्इतुल्लम्आत **किताबुल-अदब बाबुल-क़याम** में ज़ेरे हदीस **कूमू इला सैय्यिदकुम** है।

इस हदीस की वजह से जम्हूर उलमा ने उलमा-ए-सालेहीन की ताज़ीम करने पर इत्तिफ़ाक़ किया है। नुववी ने फ़रमाया कि बुज़ुर्गों की तशरीफ़ आवरी के वक़्त खड़ा होना मुस्तहब है। इस बारे में अहादीस आई हैं। और इसकी मुमानिअत में सराहतन कोई हदीस नहीं आई। क़नीह से नक़्ल किया कि बैठे हुए आदमी का किसी आने वाले की ताज़ीम के लिए खड़ा हो जाना मक्रूह नहीं। आलमगीरी **किताबुल-कराहते बाब मुलाक़ातिल-मुलूक** में है। **तजूज़ुल-ख़िदमते लेग़ैरिल्लाहे तआला बिल-क़्यामे व अख़ज़िल-यदैने वल-इंहिनाए।** ग़ैरे ख़ुदा की अज़्मत करना खड़े हो कर मुसाफ़हा करके झुक कर हर तरह जाइज़ है। उस जगह झुकने से मुराद हद्दे रूकूअ से कम झुकना है ता हद्दे रुकूअ झुकना तो नाजाइज़ है जैसा कि हम मुक़द्दमा में अर्ज़ कर चुके हैं। दुर्रे मुख़्तार जिल्द पंजुम **किताबुल-कराहियते बाबुल-इस्तिबराए** के आख़िर में है।

तरजमा : आने वाले की ताज़ीम के लिए खड़ा हो जाना जाइज़ बल्कि मुस्तहब है जैसे कि कुरआन पढ़ने वाले को आलिम के सामने खड़ा हो जाना जाइज़ है। इससे मालूम हुआ कि तिलावते कुरआन की हालत में भी कोई आलिमे दीन आ जाए तो उसके लिए खड़े हो जाना मुस्तहब है। इसके मातहत शामी में है।

तरजमा : कुरआन पढ़ने वाले का आने वाले की ताज़ीम के लिए खड़ा हो जाना मक्रूह नहीं जब कि वह ताज़ीम के लाइक़ हो। शामी जिल्द अव्वल **बाबुल-इमामत** में है कि अगर कोई शख़्स मस्जिद में सफ़े अव्वल में जमाअत के इंतिज़ार में बैठा है और कोई आलिम आदमी आ गया उसके लिए जगह छोड़ देना ख़ुद पीछे हट जाना मुस्तहब है बल्कि उसके लिए पहली सफ़ में नमाज़ पढ़ने से यह अफ़्ज़ल है। यह ताज़ीम तो उलमा-ए-उम्मत की है। लेकिन सिद्दीके अक्बर ने तो ऐन नमाज़ पढ़ाते हुए जब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को तशरीफ़ लाते देखा तो ख़ुद मुक़्तदी बन गए। और बीच नमाज़ में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम इमाम हुए। (मिश्कात बाब मर्ज़िन्नबीये) इन उमूर से मालूम हुआ कि बुज़ुर्गाने दीन की ताज़ीम इबादत की हालत में भी की जाए। मुस्लिम जिल्द दोम **बाब हदीसे तौबा इब्ने मालिके किताबुत्तौबा** में है।

तरजमा : पस तलहा इब्ने उबैदुल्लाह खड़े हो गए और दौड़ते हुए आए मुझसे मुसाफ़हा किया और मुबारकबाद दी। इस जगह नुववी में है —

फ़ीहे इस्तिहबाबु मुसाफ़हतिल-क़ादिमे वल-क़्यामे लहू इक्रामन वल-हरवलते इला लेक़ाइही।

इस से साबित हुआ कि आने वाले से मुसाफ़हा करना, उसकी ताज़ीम को खड़ा होना, उसके मिलने के लिए दौड़ना मुस्तहब है।

तीसरे जब कि कोई अपना प्यारा आ जाए तो उसकी ख़ुशी में खड़ा हो जाना, हाथ पाँव चूमना सुन्नत है। मिश्कात **किताबुल-अदब बाबुल-मुसाफ़ह** में है कि ज़ैद इब्ने हारसा दरवाज़ा पाक मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम पर हाज़िर हुए और दरवाज़ा खटखटाया।

फ़क़ामा इलैहि रसूलुल्लाहे सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उरयानन फ़ाअतनक़हू व क़ब्बलहू। उनकी तरफ हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम बग़ैर चादर शरीफ़ के खड़े हो गए। फिर उनको गले से लगा लिया और बोसा लिया। मिश्कात इसी बाब में है कि जब हज़रत ख़ातूने जन्नत फ़ातिमा ज़ोहरा रज़ि अल्लाहु अन्हा हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ख़िदमत में हाज़िर होतीं। **क़ामा इलैहा फ़अख़ज़ बेयदेहा फ़क़ब्बलहा व अज्लसहा फ़ी मज्लेसेही।** उनके लिए खड़े हो जाते और उनका हाथ पकड़ते उनको चूमते और अपनी जगह उनको बिठा लेते। इसी तरह जब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम फ़ातिमा ज़ोहरा रज़ि अल्लाहु अन्हा के पास तशरीफ़ ले जाते तो आप भी खड़ी हो जातीं और हाथ मुबारक का बोसा देतीं। और अपनी जगह हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को बिठा लेतीं। मिर्क़ात **बाबुल-मशी बिल-जनाज़ा** फ़स्ले दोम में है। **व फ़ीहे ईमाउन इला नुदुबिल-क़्यामित- ताज़ीमिल-फ़ुज़लाए वल-कुबराए।** मालूम हुआ कि फ़ुज़ला के लिए क़्यामे ताज़ीमी जाइज़ है। चौथे जब कि कोई प्यारे का ज़िक्र सुने या कोई और ख़ुशी की ख़बर सुने तो उसी वक़्त खड़ा हो जाना मुस्तहब और सुन्नते सहाबा व सुन्नते सल्फ़ है। मिश्कात **किताबुल-ईमान** फ़स्ले सालिस में हज़रत उस्मान रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है कि मुझको सिद्दीक़े अक्बर ने एक ख़ुशख़बरी सुनाई। **फ़क़ुम्तु इलैहि व क़ुल्तु बेअबी अन्ता व उम्मी अन्ता अहक़्क़ु बेहा।** मैं तो खड़ा हो गया और मैंने कहा कि आप पर मेरे माँ-बाप क़ुरबान हों आप ही इस लाइक़ हैं। तफ़सीर रूहुल-ब्यान पारह 26 सूरः फ़तह ज़ेरे आयत **मुहम्मद रसूलुल्लाह** है कि इमाम तक़ीयुद्दीन सुबकी रहमतुल्ला अलैहि के पास मज्मा उलमा मौजूद था। कि एक नअ़त ख़्वाँ ने नअ़त के दो शेअर पढ़े। तो फ़ौरन इमाम सुबकी और तमाम हाज़िरीने मज्लिस खड़े हो गए और उस मज्लिस में बहुत ही लुत्फ़ आया।

पाँचवीं कोई काफ़िर अपनी क़ौम का पेशवा हो और उसके इस्लाम लाने की उम्मीद हो तो उसके आने पर उसकी ताज़ीम के लिए खड़ा होना सुन्नत

है। चुनांचे हज़रत उमर रज़ि. अल्लाहु तआला अन्हु जब इस्लाम लाने के लिए हाज़िर हुए तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने खड़े हो कर उनको अपने सीना पाक से लगाया। (कुतुबे तारीख़)

आलमगीरी **किताबुल-कराहियते बाबुल अह्लुज़्ज़िम्मा** में है।

कोई ज़िम्मी काफिर मुसलमान के पास आया। मुसलमान उसके इस्लाम की उम्मीद पर उसके लिए खड़ा हो गया तो जाइज़ है।

(5) चन्द जगह क़्याम मक्रूह या हराम है। अव्वलन आबे ज़मज़म और वज़ू के सिवा और पानी को पीते वक़्त खड़ा होना बिला उज़्र मक्रूह है। दूसरे दुनियादार की ताज़ीम के लिए खड़ा होना दुनियावी लालच से बिला उज़्र मक्रूह है। तीसरे काफ़िर की ताज़ीम के लिए खड़ा होना उसकी मालदारी की वजह से मक्रूह है।

आलमगीरी **किताबुल-कराहियते बाब अहलुज़्ज़िम्मा** में है। अगर उसके लिए सिवाए मज़्कूरा सूरतों के खड़ा हुआ या उसकी मालदारी के लालच में खड़ा हुआ तो मक्रूह है। चौथे जो शख़्स अपनी ताज़ीम कराना चाहता हो उसकी ताज़ीम के लिए खड़ा होना मना है। पाँचवें अगर बड़ा आदमी दरम्यान में बैठा हो और लोग उसके आस पास दस्त बस्ता खड़े हों तो इस तरह खड़ा होना सख़्त मना है। अपने लिए क़्याम पसन्द करना भी मना है। इसके हवाले दूसरे बाब में आवेंगे। इंशाअल्लाह। यह तक़्सीम ख़्याल में रहे।

जब यह तहक़ीक़ हो चुकी तो अब पता लग गया कि मीलादे पाक में ज़िक्रे विलादत के वक़्त क़्याम करना सुन्नते सहाबा और सुन्नते सल्फ़े सालेहीन से साबित है। क्योंकि हम सुन्नते क़्याम में चौथा क़्याम वह बता चुके। कि जो ख़ुशी की ख़बर पा कर या किसी प्यारे के ज़िक्र पर हो। और पहला क़्याम वह बताया जो किसी दीनी अज़्मत वाली चीज़ की ताज़ीम के लिए हो। दूसरे इसलिए कि ज़िक्रे विलादत से बढ़ कर मुसलमान के लिए कौन सी ख़ुशी हो सकती है। और ख़ुशी की ख़बर पर क़्याम मस्नून है। तीसरे हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से बढ़ कर मुसलमान के नज़्दीक कौन महबूब है। वह तो जाने औलाद माँ-बाप माल व मतअ सबसे ज़्यादा महबूब हैं। सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम। उनके ज़िक्र पर खड़ा होना सुन्नते सल्फ़े सालेहीन है। चौथे इसलिए कि विलादते पाक के वक़्त मलाइका दरे दौलत पर खड़े हुए थे। इसलिए विलादत के ज़िक्र पर खड़ा होना फ़ेअले मलाइका से मुशाबेह है। पाँचवें इसलिए कि हम बहसे मीलाद में हदीस से साबित कर चुके हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपने औसाफ़ और अपना नसब शरीफ़ मिंबर पर खड़े हो कर बयान फ़रमाया तो इस क़्याम की असल मिल गई। छठे इसलिए कि शरीअत ने इसको मना न किया और हर मुल्क के

आम मुसलमान इसको सवाब समझ कर करते हैं। और जिस काम को मुसलमान अच्छा जानें वह अल्लाह के नज़्दीक भी अच्छा है। हम इसकी तहक़ीक़ बहसे मीलाद और बहसे बिदअत में कर चुके हैं। नीज़ पहले अर्ज़ कर चुके हैं कि मुसलमान जिस काम को मुस्तहब जानें वह शरीअत में मुस्तहब है। शामी जिल्द सोम किताबुल-वक़्फ़ वक़्फ़ मंकूलात की बहस में फ़रमाते हैं।

यानी देगची व जनाज़ा वग़ैरह का वक़्फ़ क़ियासन नाजाइज़ होना चाहिए मगर चूंकि आम मुसलमान इसके आमिल हैं लिहाज़ा क़यास छोड़ दिया गया और इसे जाइज़ माना गया। देखो आम्मतुल-मुस्लेमीन जिस काम को अच्छा समझने लगें और उसकी हुरमत की नस न हो तो क़यास को छोड़ना लाज़िम है। दुर्रे मुख़्तार जिल्द पंजुम **किताबुल-इजारात बाब इजारतिल-फ़ासिदा** में है।

हम्माम का किराया जाइज़ है क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम शहर हज्फ़ा के हम्माम में तशरीफ़ ले गए और इसलिए कि उर्फ़ जारी हो गया और हुज़ूर फ़रमाते हैं कि जिसको मुसलमान अच्छा समझें वह इन्दल्लाह अच्छा है।

इसके मातहत शामी में है।

यानी हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के हज्फ़ा के हम्माम में दाख़िल होने की रिवायत सख़्त ज़ईफ़ है बाज़ ने कहा कि मौज़ूअ है। लिहाज़ा अब हम्माम के जाइज़ होने की दलील सिर्फ़ एक रह गई यानी उर्फ़े आम तो साबित हुआ कि मुसलमान जो काम आम तौर पर जाइज़ समझ कर करें वह जाइज़ है। शामी में उसी जगह है।

क्योंकि तमाम शहरों में मुसलमान लोग हम्माम की उजरत देते हैं लिहाज़ा उनके इज्मा से उसका जाइज़ होना मालूम हुआ अगरचे यह ख़िलाफ़े क़यास है। साबित हुआ कि हम्माम का किराया क़यासन जाइज़ न होना चाहिए। क्योंकि ख़बर न होती कि कितना पानी ख़र्च होगा और किराया में नफ़ा व उजरत मालूम होना ज़रूरी है। लेकिन चूंकि मुसलमान आम तौर पर इसको जाइज़ समझते हैं। लिहाज़ा यह जाइज़ है क़यामे मीलाद को भी आम मुसलमान मुस्तहब समझते हैं। लिहाज़ा मुस्तहब है। सातवें इसलिए कि रब तआला फ़रमाता है। **वतुअज़्ज़िरूहु व तुअक़्क़िरूहु**। ऐ मुसलमानो हमारे नबी की तौक़ीर और उनकी ताज़ीम करो। ताज़ीम में कोई पाबन्दी नहीं बल्कि जिस ज़माना में और जिस जगह जो तरीक़ा भी ताज़ीम का हो उस तरह करो बशर्तेकि शरीअत ने उसको हराम न किया हो जैसे कि सज्दा ताज़ीमी व रुकूअ। और हमारे ज़माना में शाही अहकाम खड़े होकर भी पढ़े जाते हैं। लिहाज़ा महबूब का ज़िक्र भी खड़े हो कर होना चाहिए। **देखो कुलू**

वश्रबू में मुतलक़न खाने पीने की इजाज़त है। कि हर हलाल ग़िज़ा खाओ पियो। तो बिरयानी, ज़रदह, कोरमा सब ही हलाल हुआ। ख़्वाह ख़ैरुल-कुरून से साबित हो या न हो। ऐसे ही **तुअक़्क़ेरूहु** का अम्र मुतलक़ है कि हर क़िस्म की जाइज़ ताज़ीम करो। ख़ैरुल-कुरून से साबित हो या ना हो।

आठवें इस लिए कि रब तआला फरमाता है। **व मन युअज़्ज़िम् शआइरल्लाहे फ़इन्नहा मिन तक़्वल-कुलूबे।** और जो शख़्स अल्लाह की निशानियों की ताज़ीम करे तो यह दिल के तक़्वा से है। रूहुल-बयान ने ज़ेरे आयत **व तआवनू अलल-बिर्रे वत्तक़्वा वला तआवनू अलल-इस्मे वल-उदवान।** लिखा कि जिस चीज़ को अपनी अज़्मत हासिल हो वह शआइरिल्लाह हैं उनकी ताज़ीम ज़रूरी है जैसे कि बाज़ महीने, बाज़ दिन, कुछ मक़ामात, बाज़ औक़ात वग़ैरह। इसी लिए सफ़ा व मरवा, काबा मुअज़्ज़मा, माहे रमज़ान, शबे क़द्र की ताज़ीम की जाती है। और ज़िक्रे विलादत भी शआइरिल्लाह है लिहाज़ा इसकी ताज़ीम भी बेहतर है वह क़्याम से हासिल है।

हमने आठ दलाइल से इस क़्याम का मुस्तहब होना साबित किया। मगर मुख़ालेफ़ीन के पास ख़ुदा चाहे तो एक भी दलीले हुरमत नहीं। महज़ अपनी राय से हराम कहते हैं।

दूसरा बाब

क़्यामे मीलाद पर ऐतराज़ व जवाब में

(1) चूंकि मीलाद का क़्याम अव्वल तीन ज़मानों में नहीं था लिहाज़ा बिदअत है और हर बिदअत हराम है। हुज़ूर की वही ताज़ीम की जाए जो कि सुन्नत से साबित हो। अपनी ईजादात को उसमें दख़ल न हो। क्या हमको बमुक़ाबला सहाबए किराम हुज़ूर से ज़्यादा मुहब्बत है। जब उन्होंने यह न किया तो हम क्यों करें?

जवाब : बिदअत का जवाब तो बारहा दिया जा चुका है कि हर बिदअत हराम नहीं। रहा यह कहना कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की वही ताज़ीम की जाए जो सुन्नत से साबित हो, क्या यह क़ाइदा सिर्फ़ हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ताज़ीम के लिए है या दीगर उलमा-ए-देवबन्द वग़ैरह के लिए भी, यानी आलिम किताब मदरसा तमाम चीज़ों की वही ताज़ीम होनी चाहिए जो सुन्नत से साबित है। तो उलमा-ए-देवबन्द की आमद पर स्टेशन जाना, उनके गले में हार फूल डालना, उनके लिए जुलूस निकालना, झण्डियों से रास्ता और जलसा गाह को सजाना, कुर्सियाँ लगाना, वअज़ के वक़्त ज़िन्दाबाद के नारे लगाना, मसनद और क़ालीन बिछाना वग़ैरह इस तरह की ताज़ीम का आप कोई सुबूत पेश कर सकते हैं, कि

सहाबा किराम ने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ऐसी ताज़ीम की हो। नहीं पेश कर सकते तो फरमाइए कि यह ताज़ीम हराम है या हलाल। लिहाज़ा आपका यह क़ाइदा ही ग़लत है। बल्कि रुकूअ व सज्दा महरमात के अलावा जिस ताज़ीम का जिस मुल्क में रिवाज हो वह जाइज़ है और जज़्ब-ए-दिल जिस तरफ राहबरी करे वह इबादत है। लखनऊ में महतर भंगी को कहते हैं और फ़ार्सी और बाज़ जगह उर्दू में भी महतर यानी सरदार बोला जाता है। जैसे कि चतराल के नवाब को महतर चतराल कहते हैं। लखनऊ में जो शख़्स यह कलिमा महतर किसी नबी के लिए इस्तेमाल करे काफिर है। और चतराल और फ़र्सी में नहीं। हर मुल्के हर रस्मे।

मिर्क़ात व अश्इतुल-लमआत के मुक़द्दमा में इमाम मालिक रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु के अहवाल में लिखते हैं कि आप मदीना पाक की ज़मीन पाक में कभी घोड़े पर सवार न हुए। और जब हदीस बयान फ़रमाते तो ग़ुस्ल करते, उम्दा लिबास पहनते, ख़ुश्बू लगाते और हैबत व वक़ार से बैठते थे। कहिए मदीना पाक या हदीस शरीफ़ की यह ताज़ीम किसी सहाबी ने की थी? नहीं। मगर इमाम मालिक का जज़्ब-ए-दिल है ऐन सवाब है। तफ़्सीर रूहुल-बयान ज़ेरे आयत **मा काना मुहम्मदुन अबा अहदिन मिन रिजालेकुम** है। कि अयाज़ के फ़रज़न्द का नाम था मुहम्मद। सुलतान उसका नाम लेकर पुकारते थे। एक रोज़ ग़ुस्ल ख़ाना में जाकर फरमाया कि ऐ अयाज़ के बेटे पानी ला। अयाज़ ने अर्ज़ किया कि हुज़ूर क्या कुसूर हुआ कि ग़ुलाम ज़ादे का नाम न लिया। फ़रमाया कि हम उस वक़्त बेवज़ू थे। इस मुबारक नाम को बेवज़ू नहीं लिया करते।

कहिए यह ताज़ीम कहाँ साबित है? कहिए क्या सुलतान महमूद और इमाम मालिक रहमहुमल्लाहु को सहाबा किराम से ज़्यादा इश्क़े रसूल अलैहिस्सलाम था।

(2) अगर ज़िक्रे रसूल अलैहिस्सलाम की ताज़ीम मंज़ूर है तो हर ज़िक्र पर खड़े हो जाया करो और मीलाद शरीफ़ में अव्वल से ही खड़े रहा करो। यह क्या कि पहले बैठे और बाद को बैठे दरम्यान में खड़े हो गए।

जवाब : यह तो कोई ऐतराज़ नहीं है। अगर किसी को अल्लाह तौफ़ीक़ दे और हर ज़िक्र खड़े हो कर किया करे और मीलाद शरीफ़ अज़ अव्वल ता आख़िर खड़े-खड़े पढ़ा करे तो हम मना नहीं करेंगे चाहे हर वक़्त खड़े हो या कुछ वक़्त हर तरह जाइज़ है। आला हज़रत कुद्देस सिर्रहू कुतुबे हदीस खड़े हो कर पढ़ाया करते थे। देखने वालों ने हमको बताया कि ख़ुद भी खड़े होते पढ़ने वाले भी खड़े होते थे। उनका यह फ़ेअल बहुत ही मुबारक था। मगर चूंकि अज़ अव्वल ता आख़िर खड़ा होना अवाम को दुश्वार होगा। इसलिए

सिर्फ़ विलादत के ज़िक्र के वक़्त खड़े हो जाते हैं। और बैठे-बैठे बाज़ लोग कभी ऊँघ जाते हैं। खड़ा करके सलात व सलाम पढ़ाया कि नींद जाती रहे। इसी लिए उस वक़्त अर्क़ गुलाब वग़ैरह छिड़कते हैं ताकि पानी से नींद उड़ जाए। क्यों साहब! नमाज़ में कुछ ज़िक्र तो आप खड़े हो कर करते हो और बाज़ रुकूअ़ में और बाज़ सज्दे में और बाज़ बैठ कर हर ज़िक्र खड़े हो कर ही क्यों न किया? और जब अत्तहीयात में **अश्हदु अन ला-इला-हा इल्लल्लाहु** पढ़ते हैं तो हुक्म है कि उंगली का इशारा करे। और हज़ारहा मौक़ों पर आप यह कलिमा पढ़ते हो, उंगली क्यों नहीं हिलाते? सूफ़िया-ए-किराम कुछ वज़ाइफ़ में कुछ इशारों की क़ैद लगाते हैं मसलन जब मुक़द्दमा में हाकिम के सामने जाए तो **क-ह-य-अ-स** इस तरह पढ़े कि उसके हर हर्फ़ पर एक उंगली बन्द करे। काफ़ पर, ह पर, य पर, वग़ैरह फिर **ह-म-अ-स-क़** पढ़े हर हरफ़ पर एक उंगली खोले फिर हाकिम की तरफ दम करे। तो जब तिलावते कुरआन के दौरान में यह कलिमे आते हैं तो यह इशारा क्यों नहीं। और यह इशारे सहाबा किराम से कहाँ साबित हैं। **हिज़्बुल-बहर** वग़ैरह पढ़ने वाले हज़रात कुछ मक़ामात पर ख़ास इशारे करते हैं और मौक़ों पर क्यों नहीं करते। कुछ तवाफ़ खाना काबा में पहले तवाफ़ के चार चक्करों में इज़्तिबाअ़ भी करते हैं और रमल भी। बाद में क्यों नहीं करते? इस क़िस्म के सैकड़ों सवालात किए जा सकते हैं। इमाम बुख़ारी ने बाज़ अहादीस को अस्नादन बयान किया। बाज़ को तअलीक़न। सब को एक तरह क्यों नहीं ब्यान किया। भला इन जैसी बातों से हुर्मत साबित हो सकती है।

(3) लोगों ने क़्यामे मीलाद को ज़रूरी समझ लिया है कि न करने वालों पर तअन करते हैं। और ग़ैर ज़रूरी को ज़रूरी समझना ना जाइज़ है लिहाज़ा क़्याम ना जाइज़ है।

जवाब : यह मुसलमानों पर महज़ बुहतान है कि वह क़्यामे मीलाद को वाजिब समझते हैं। न किसी आलिमे दीन ने लिखा कि क़्याम वाजिब है और न तक़रीरों में कहा। अवाम भी यही कहते हैं कि क़्यामे मीलाद शरीफ़ कारे सवाब है। फिर आप उन पर वाजिब समझने का किस तरह इल्ज़ाम लगाते हैं? और अगर वाजिब समझे भी तो उसका यह समझना बुरा होगा न कि असल क़्याम हराम हो जाए। नमाज़ में दरूद शरीफ़ पढ़ना इमाम शाफ़ई साहब ज़रूरी समझते हैं अहनाफ़ ग़ैर वाजिब, तो हमारे नज़्दीक उनका यह क़ौल सहीह न होगा, न यह कि दरूद व नमाज़ ही मना हो जाए इसकी तहक़ीक़ हाजी इम्दादुल्लाह साहब ने "हफ़्त मसला" में ख़ूब की है। रहा यह कि मुसलमान इसको पाबन्दी से करते हैं और न करने वाले को "वहाबी" कहते हैं। यह बिल्कुल दुरुस्त है। मिश्कात **बाबुल-क़सदे फ़िल-अमल** में है

अहब्बुल-आमाले इलल्लाहे अदवमुहा व इन क़ल्ला अल्लाह के नज़्दीक अच्छा काम वह है जो कि हमेशा हो अगर चे थोड़ा हो। हर कारे ख़ैर को पाबन्दी से करना मुस्तहब है। मुसलमान हर ईद को अच्छे कपड़े पहनते हैं हर जुमा को गुस्ल करते हैं, ख़ुशबू लगाते हैं, मदारिस में हर रमज़ान व जुमा में छुट्टी करते हैं हर साल इम्तिहान लेते हैं। मुसलमान हर रात को सोते हैं, हर दोपहर को खाना खाते हैं, तो क्या उनको वाजिब समझते हैं या पाबन्दियाँ वुजूब की अलामत हैं। रहा क़्याम न करने वालों को वहाबी समझना, उसकी वजह यह है कि फ़ी ज़माना हिन्दुस्तान में यह वहाबियों की अलामत हो गई है। अह्ले ईमान की हर ज़माना में अलामात मुख़्तलिफ़ रही हैं और हस्बे ज़माना अलामाते कुफ़्फ़ार से बचना अलामते अह्ले ईमान इख़्तियार करना ज़रूरी है। अव्वल इस्लाम में फ़रमाया गया कि जिसने **ला इला-हा इल्लाह** कह लिया जन्नती हो गया। (मिश्कात किताबुल-ईमान) क्योंकि उस वक़्त कलिमा पढ़ना ही अह्ले ईमान की अलामत थी। फिर जब कलिमा गोयों में मुनाफ़िक़ पैदा हुए तो कुरआन पाक ने फ़रमाया कि आपके सामने मुनाफ़िक़ आ कर कहते हैं कि हम गवाह हैं आप रसूल हैं। अल्लाह भी जानता है कि आप रसूलुल्लाह हैं। लेकिन ख़ुदा वगाह है कि मुनाफ़िक़ झूठे हैं कहिए बात तो सच्ची कह रहे हैं मगर हैं झूठे। फिर हदीस में आया कि एक क़ौम निहायत ही इबादत गुज़ार होगी। मगर दीन से ऐसे निकल जाएंगे जैसे तीर शिकार से। और हदीस में आया है कि ख़ार्जी की पहचान सर मुंडाना है। (देखो दोनों हदीसें मिश्क़ात **किताबुल-क़िसास बाब क़त्लिर्रेदह**) यह तीन उमूर तीन ज़माना के ऐतबार से हैं। शरह फ़िक़ह अक्बर में मुल्ला अली क़ारी फ़रमाते हैं कि किसी ने इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से पूछा कि सुन्नी की अलामत क्या है? फ़रमाया **हुब्बुल-ख़तानैने तफ़्ज़ीलुशैख़ैने वल-मसहु अलल-खुफ़्फ़ैन।** दो दामादों यानी सैयदना अली व उसमान से मुहब्बत रखना, शैख़ैन सिद्दीक़ व फ़ारूक़ रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुम को तमाम पर अफ़्ज़ल जानना और चमड़े के मोज़े पर मसह करना, तफ़्सीराते अहमदीया में सूरः इंआम ज़ेरे आयत **व अन्ना हाज़ा सिराती मुस्तक़ीमन** है कि सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास ने फ़रमाया कि जिसमें दस आदात हों वह सुन्नी हैं।

हौज़ से वज़ू करना अफ़्ज़ल है मोतज़ेला को जलाने के लिए। इसी जगह शामी में है। **लेअन्नल-मोतज़ेलता ला युजीज़ूनहू मिनल-हियाज़े फ़रग़महुम बिल-वज़ूए मिन्हा।** यानी मोतज़ेला हौज़ से वुज़ू करने को ना जाइज़ कहते हैं लिहाज़ा हम उनको हौज़ से वज़ू करके जलाएंगे। देखो हौज़ से वज़ू करना, चमड़े के मोज़ों पर मसह करना वग़ैरह वाजिबात में से नहीं लेकिन चूंकि उस ज़माना में इसके मुंकिर पैदा होंगे लिहाज़ा उनको सुन्नी की पहचान

क़रार दिया। इसी तरह क़्यामे मीलाद फ़ातिहा वग़ैरह वाजिबात में से नहीं। मगर चूंकि इसके मुंकिर पैदा हो गए लिहाज़ा फ़ी ज़माना यह हिन्दुस्तान में सुन्नी होने की अलामत है और मज्लिसे मीलाद में अकेला बैठा रहना अलामत देवबन्दी की है **मन तशब्बहा बेक़ौमिन फ़हुवा मिन्हुम।** लिहाज़ा इससे बचना चाहिए। और शामी से यह भी मालूम हुआ कि अगर किसी जाइज़ या मुस्तहब काम से बिला वजह लोग रोकें तो उसको ज़रूर करे। आज हिन्दुस्तान में हिन्दू कुरबानी गाय से रोकते हैं ख़ास गाय की कुरबानी वाजिब नहीं। मगर मुसलमानों ने अपना ख़ून बहा कर उसको जारी रखा। इसी तरह महफ़िले मीलाद व क़्याम वग़ैरह है। फुक़हा के नज़्दीक ज़ुन्नार बाँधना और हिन्दुओं की सी चोटी सर पर रखना, कुरआन पाक पटकना नजासत में कुफ़्र है क्योंकि यह कुफ़्फ़ार की मज़हबी अलामत है।

नोट ज़रूरी : यह सवाल नम्बर 3 अक्सर देवबन्दी किया करते हैं कि फ़ातिहा उर्स व मीलाद वग़ैरह सब को इस वजह से हराम बताते हैं यह भी कहते हैं कि तुमने ख़ुद सुन्नी होने की अलामात ईजाद कर ली हैं। हदीस व कुरआन में यह अलामत नहीं है। सब जगह के लिए यही जवाब दिया जाए बहुत मुफ़ीद होगा इंशाअल्लाह।

(4) किसी की ताज़ीम के लिए खड़ा होना मना है। मिश्कात **बाबुल-क़्याम** (स० : 403) में है **व कानू इज़ा रऔहुम लम यक़ूमू लम्मा यालमूना मिन कराहीयतेही लेज़ालिका।** सहाबा किराम जब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को देखते तो खड़े न होते थे क्योंकि जानते थे कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को यह नापसन्द है। मिश्कात इसी बाब में (स० : 403) है। **मन सर्रहू अन यतमस्सला लहुर्रिजालु क़्यामन फ़ल-यतबव्वआ मक़अदहू मिनन्नारे।** जिसको पसन्द हो कि लोग उसके सामने खड़े रहें वह अपनी जगह दोज़ख़ में ढूँढे। मिश्कात **बाबुल-क़्याम** में है। **ला तक़ूमू कमा तक़ूमुल-अआजिम।** अज्मी लोगों की तरह न खड़े हुआ करो। इन अहादीस से मालूम हुआ कि ज़िन्दगी में भी अगर कोई बड़ा आदमी आए तो उसकी ताज़ीम के लिए न खड़े हुआ करो। तो मीलाद शरीफ़ में तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम आते भी नहीं फिर ताज़ीमी क़्याम क्यों कर जाइज़ हो सकता है?

जवाब : इन अहादीस में मुतलक़ क़्याम से मना नहीं फरमाया गया। वरना पहले बाब में हमने जो अहादीस और अक़्वाले फुक़हा नक़्ल किए उसके ख़िलाफ़ होगा बल्कि हस्बे ज़ैल उमूर से मुमानेअत है अपने लिए क़्याम चाहना लोगों का दस्त बस्ता सामने खड़ा रहना और पेशवा का दरम्यान में बैठा रहना हमने भी लिखा है कि इस क़िस्म के दोनों क़्याम मना हैं। पहली हदीस

के मातहत अश्इतुल्लम्आत में है। "ख़ुलासा यह है कि क़्यामे ताज़ीमी करना और न करना ज़माना और हालात और अश्ख़ास के लिहाज़ से मुख़्तलिफ़ होता है इसलिए सहाबा किराम ने कभी तो हुज़ूर के लिए क़्याम किया और कभी न किया। मालूम हुआ कि सहाबए किराम कभी तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की तशरीफ़ आवरी पर खड़े हो जाते थे और कभी नहीं। नहीं का तो ज़िक्र यहाँ किया और खड़े होने का ज़िक्र पहले हो चुका। और आप का क़्याम से कराहत फरमाना तवाज़ुअन व इंकिसारन था। लिहाज़ा उस जगह हमेशा खड़े होने की नफ़ी है न मुतलक़न की। दूसरी और तीसरी हदीस के मातहत अश्इतुल्लम्आत में है।

खुद क़्याम मक्रूह नहीं बल्कि क़्याम चाहना मक्रूह है अगर वह क़्याम न चाहता हो तो उसके लिए मक्रूह नहीं है। क़ाज़ी अयाज़ ने फरमाया कि क़्याम उसके लिए मना है जो कि ख़ुद तो बैठा हो और लोग खड़े हों और दुनिया दारों के क़्यामे ताज़ीमी में वईद आई है और वह मक्रूह है। इसी तरह हाशिया मिश्कात **किताबुल-जिहाद बाबुल हुक्मुल-इसरा।** (स० : 403)

ज़ेरे हदीस –

कूमू इला सैय्यिदकुम में है।

नुववी ने फरमाया कि इससे बुज़ुर्गों की ताज़ीम उन से मिलना, उनके लिए खड़ा होना साबित है, जम्हूर उलमा ने इससे दलील पकड़ी है यह क़्याम मना क़्यामों में से नहीं। मुमानेअत जब है कि लोग उसके आगे खड़े हों और वह बैठा हो और लोग उसके बैठे रहने तक खड़े रहें।

इन इबारात से मालूम हुआ कि इन दोनों हदीसों में ख़ास-ख़ास क़्याम से मुमानेअत है और महफ़िले मीलाद का क़्याम उन में से नहीं। और अगर ताज़ीमी क़्याम मना है तो उलमा-ए-देवबन्द वग़ैरह के आने पर लोग सर व क़द खड़े हो जाते हैं वह क्यों जाइज़ है।

बहस फ़ातिहा, तीजा, दसवाँ, चालीसवाँ का बयान

इस बहस में एक मुक़द्दमा और दो बाब हैं

मुक़द्दमा

बदनी और माली इबादात का सवाब दूसरे मुसलमान को बख़्शना जाइज़ है और पहुँचता है जिसका सुबूत कुरआन व हदीस और अक़्वाले फुक़हा से है। कुरआने करीम ने मुसलमानों को एक दूसरे के लिए दुआ करने का हुक्म दिया। नमाज़े जनाज़ा अदा की जाती है। मिश्कात **बाब फ़ज़्लिस्सदक़ा** में है कि हज़रत सअद ने कुवाँ खुदवा कर फरमाया कि **हाज़ेहिल-उम्मे सअ़दिन।** यह उम्मे सअद का कुवाँ है। फुक़हा ने ईसाले सवाब का हुक्म

दिया। हाँ बदनी इबादत में नियाबत जाइज़ नहीं यानी कोई शख़्स किसी की तरफ से नमाज़ पढ़ दे तो उसकी नमाज़ अदा न होगी। हाँ नमाज़ का सवाब बख़्शा जा सकता है। मिश्कात **बाबुल-फ़ितन बाबुल-मलाहिम।** फ़स्ले दोम स० : **468** में है कि अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने किसी से फरमाया कि **मन यज़्मन ली मिनकुम अन्ना युसल्ली फ़ी मस्जिदिल-असारे रकअतैने औ राबिअन व यकूला हाज़ेहि लाबी हुरैरतिन**

इससे तीन मसले मालूम हुए। एक यह कि इबादते बदनी यानी नमाज़ भी किसी के ईसाले सवाब की नीयत से अदा करना जाइज़ है। दूसरे यह कि ज़बान से ईसाले सवाब करना कि ख़ुदाया इसका सवाब फुलां को दे बहुत बेहतर है। तीसरे यह कि बरकत की नीयत से बुज़ुर्गाने दीन की मस्जिदों में नमाज़ पढ़ना बाइसे सवाब है। रही इबादते माली या माली व बदनी का मज्मूआ जैसे कि ज़कात और हज उसमें अगर कोई शख़्स किसी से कह दे कि तुम मेरी तरफ से ज़कात दे दो तो दे सकता है और अगर साहिबे माल में हज करने की कुव्वत न रहे तो दूसरे से हज्जे बदल करा सकता है, लेकिन सवाब हर इबादत का ज़रूर पहुँचता है। अगर मैं किसी को अपना माल दे दूँ तो वह मालिक हो जाएगा इसी तरह यह भी। हाँ फ़र्क़ यह है कि माल तो किसी को दे दिया तो अपने पास न रहा। और अगर चन्द को दिया तो तक़्सीम हो कर मिला, मगर सवाब अगर सबको बख़्श दिया तो सबको पूरा-पूरा मिला। और ख़ुद भी महरूम न रहा जैसे कि किसी को कुरआन पढ़ाया। तो सबको पूरा कुरआन आ गया और पढ़ाने वाले का जाता न रहा।

शामी जिल्द अव्वल बहस दफन मैयत। इसी लिए नाबालिग़ बच्चे से हदिया लेना मना है मगर सवाब लेना जाइज़ है, कुछ लोग कहते हैं कि सवाब किसी को नहीं पहुँचता। क्योंकि कुरआने करीम में है। **लहा मा कसबत व अलैहा मक्तसिबत।** हर नफ़्स के लिए वही मुफ़ीद व मुज़िर है ज़ो उसने ख़ुद कर लिया। और कुरआन में है **लैसा लिल-इंसाने इल्ला मा सआ** इंसान के लिए नहीं है मगर वह जो ख़ुद करे जिससे मालूम हुआ कि ग़ैर का काम अपने लिए मुफ़ीद नहीं लेकिन यह ग़लत है क्योंकि यह लाम मिल्कीयत का है यानी इंसान के लिए क़ाबिले भरोसा पर अपने अमल से ग़ाफ़िल न रहे। (देखो तफ़्सीर ख़ज़ाइनुल-इरफ़ान वग़ैरह) यह हुक्म इब्राहीम व मूसा अलैहिमस्सलाम के सहीफ़ों का था न कि इस्लाम का। यहाँ उसकी नक़्ल है। या यह आयत उस आयत से मंसूख़ है। **वत्तबअतहुम ज़ुर्रीयतुहुम बेईमानिन।** यही अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास का क़ौल है इसलिए मुसलमानों के बच्चे माँ-बाप के तुफ़ैल जन्नत में जाएंगे। बग़ैर अमल दरजात पाएंगे देखो जुमल व ख़ाज़िन या यह आयत बदनी आमाल में नियाबत की नफ़ी करती है। इसीलिए उनमें

मेहनत व कोशिश का ज़िक्र है न कि हिबा के सवाब का या यह ज़िक्रे अदल है और वह फ़ज़्ल। ग़र्ज़कि इसकी बहुत तौजीहात हैं।

फ़ातिहा, तीजा, दसवाँ, चीलीसवाँ वग़ैरह इसी ईसाले सवाब की शाखें हैं। फ़ातिहा में सिर्फ़ यह होता है कि तिलावते कुरआन जो कि बदनी इबादत है और सदक़ा यानी माली इबादत का जमा करके सवाब पहुँचाया जाता है।

पहला बाब

फ़ातिहा के सुबूत में

तफ़सीर रूहुल-बयान के पारा 7 सूरः इनआम ज़ेरे आयत – **हाज़ा किताबुन अंज़लनाहु मुबारकुन** में है।

हज़रत अअरज से मरवी है कि जो शख़्स कुरआन ख़त्म करे फिर दुआ माँगे तो उसकी दुआ पर चार हज़ार फ़रिश्ते आमीन कहते हैं फिर उसके लिए दुआ करते रहते हैं और मग़्फ़िरत माँगते रहते हैं। शाम या सुबह तक। यही मज़्मून नुववी की **किताबुल-अज़कार किताबु तिलावतिल-कुरआन** में भी है। मालूम हुआ कि ख़त्मे कुरआन के वक़्त दुआ क़बूल होती है और ईसाले सवाब ही दुआ है। लिहाज़ा इस वक़्त ख़त्म पढ़ना बेहतर है। अश्इतुल-लम्आत **बाब ज़ियारतिल-कुबूर** में है।

मैय्यत के मरने के बाद सात रोज़ तक सदक़ा किया जाए।

इसी अशइतुल लम्आत में इसी बाब में है।

जुमेरात को मैय्त की रूह अपने घर आती है और देखती है कि उसकी तरफ से सदक़ा लोग करते हैं या नहीं।

इससे मालूम हुआ कि कुछ जगह जो रिवाज है कि बाद मौत सात रोज़ तक बराबर रोटियाँ ख़ैरात करते हैं और हमेशा जुमेरात को फ़ातिहा करते हैं उसकी यह असल है। अनवारे सातेआ सफः 145 और हाशिया **ख़ज़ानतुर्रिवायात** में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अमीर हम्ज़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के लिए तीसरे और सातवें और चालीसवें दिन और छठे माह और साल भर बाद सदक़ा दिया। यह तीजा शश्माही और बरसी की असल है।

नुववी ने **किताबुल-अज़्कार बाब तिलावतिल-कुरआन** में फरमाया कि अनस बिन मालिक ख़त्मे कुरआन के वक़्त अपने घर वालों को जमा करके दुआ माँगते। हकम इब्ने उतबा फरमाते हैं कि एक मज्मा मुजाहिद व अब्दह इब्ने अबी लुबाबा ने बुलाया और फरमाया कि हमने तुम्हें इसलिए बुलाया है कि आज हम कुरआन पाक ख़त्म कर रहे हैं और ख़त्मे कुरआन के वक़्त दुआ क़बूल होती है। हज़रत मुजाहिद से बरिवायते सहीह मंकूल है कि बुज़ुर्गाने दीन ख़त्म कुरआन के वक़्त मज्मा करते थे और कहते थे कि इस वक़्त रहमत नाज़िल होती है (नुववी किताबुल-अज़्कार) लिहाज़ा तीजा व चेहल्लुम का इज्तिमा सुन्नते

सल्फ़ है। दुर्रे मुख़्तार **बहस क़िरात लिल-मैयत बाबुद्दफ़न** में है।

हदीस में है कि जो शख़्स ग्यारह बार सुरह इख़्लास पढ़े फिर उसका सवाब मुर्दों को बख़्शे तो उसको तमाम मुर्दों के बराबर सवाब मिलेगा। शामी में उसी जगह है।

तरजमा : जो मुम्किन हो कुरआन पढ़े सूरः फ़ातिहा बक़र की अव्वले आयात और आयतल-कुर्सी और **आमनर्रसूलु** और सूरः **यासीन** और **मुल्क** और सूरः **तकासुर** और सूरः इख़्लास बारह या ग्यारह या सात या तीन दफ़ा फिर कहे कि या अल्लाह जो कुछ मैंने पढ़ा उसका सवाब फ़लां को या फ़लां को पहुँचा दे।

इन इबारात में फ़ातिहा मुरव्वजा का पूरा तरीक़ा बताया गया। यानी मुख़्तलिफ़ जगह से कुरआन पढ़ना, फिर ईसाले सवाब की दुआ करना और दुआ में हाथ उठाना सुन्नत है। लिहाज़ा हाथ उठाए। ग़र्ज़ेकि फ़ातिहा मुरव्वजा पूरी-पूरी साबित हुई। फ़तावा अज़ीज़िया सफ़: 75 में है। जिस खाने पर हज़रत हसनैन की नियाज़ करें उस पर **कुल** और फ़ातिहा और दरूद पढ़ना बाइसे बरकत है। और उसका खाना बहुत अच्छा है। इसी फ़तावा अज़ीज़ीया सफ़: 41 में है।

अगर दूध मालीदा किसी बुज़ुर्ग की फ़ातिहा के लिए ईसाले सवाब की नीयत से पका कर खिलावे तो जाइज़ है कोई हरज नहीं।

मुख़ालेफ़ीन के पेशवा शाह वलीयुल्लाह साहब का भी तीजा हुआ। चुनांचे इसका तज़्किरा शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब ने अपने मल्फ़ूज़ात सफ़: 80 में इस तरह फरमाया।

तीसरे दिन लोगों का इस क़द्र हुजूम था कि शुमार से बाहर है इक्कियासी ख़त्मे कलामुल्लाह शुमार में आए। और ज़्यादा भी हुए होंगे कलिमा तैयबा का तो अंदाज़ा नहीं।

इस से तीजा का होना और इसमें ख़त्मे कलामुल्लाह करना साबित हुआ। मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब बानी मदरसा देवबन्द **तहज़ीरुन्नास** सफ़: 24 पर फरमाते हैं। "जुनैद के किसी मुरीद का रंग यकायक तबदील हो गया। आपने सबब पूछा तो बरूए मुकाशफ़ा उसने यह कहा कि अपनी माँ को दोज़ख़ में देखता हूँ। हज़रत जुनैद ने एक लाख पाँच हज़ार बार कलिमा पढ़ा था यूं समझ कर कि कुछ रिवायात में इस क़दर कलिमे के सवाब पर वाद-ए-मग़्फ़िरत है आपने जी ही जी में उस मुरीद की माँ को बख़्श दिया और उसको इत्तिला न दी। बख़्शते ही क्या देखते हैं कि वह जवान हश्शाश बश्शाश है। आपने सबब पूछा। उसने अर्ज़ किया कि अपनी माँ को

जन्नत में देखता हूँ आपने इस पर यह फरमाया कि उस जवान के मुकाशिफ़ा की सेहत तो मुझको हदीस से मालूम हुई। और हदीस की तस्हीह उसके मुकाशिफ़ा से हो गई। इस इबारत से मालूम हुआ कि कलिमा तैयबा एक लाख पाँच हज़ार बख़्शने से मुर्दे की बख़्शिश की उम्मीद है और तीजा में चनों पर यह पढ़ा जाता है।

इन तमाम इबारात से फ़ातिहा और तीजा वग़ैरह के तमाम मरासिम का जवाज़ मालूम हुआ। फ़ातिहा में पंज आयत पढ़ना फिर ईसाले सवाब के लिए हाथ उठा कर दुआ करना, तीजा के दिन कुरआन ख़्वानी कलिमा शरीफ़ का ख़त्म, खाना पका कर नियाज़ करना सब मालूम हो गया। सिर्फ़ एक बात बाकी है खाना सामने रख कर हाथ उठा कर दुआ माँगना, इसके मुतअल्लिक़ मुख़्तलिफ़ रिवाज हैं। काठिया वाड़ में तो अव्वलन खाना फुक़रा को खिला देते हैं फिर बाद में ईसाले सवाब करते हैं और यूपी व पंजाब और अरब शरीफ़ में खाना सामने रख कर ईसाले सवाब करते हैं, फिर खिलाते हैं दोनों तरह जाइज़ है। और अहादीस से साबित है मिश्कात शरीफ़ में भी बहुत सी रिवायात मौजूद हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने खाना मुलाहिज़ा फरमा कर साहिबे तआम के लिए दुआ फरमाई। बल्कि हुक्म दिया कि दावत खा कर मेज़बान को दुआ दो। इसी तरह मिश्कात **बाब आदाबित्तआम** स० : 365 में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम जब खाने से फ़ारिग़ होते तो फरमाते।

अल्हम्दुलिल्लाहे हम्दन क़सीरन तैय्यिबन मुबारकन फ़ीहे गैरा नक्फी वला मौवदईन वला मुस्तग़ना अन्हु रब्बना!

जिससे मालूम हुआ कि खाने के बाद दो चीज़ें मसनून हैं। हम्दे इलाही और साहिबे तआम के लिए दुआ करना और फ़ातिहा में यह दोनों बातें मौजूद हैं। और ग़ालिबन इस क़द्र का इंकार मुख़ालेफ़ीन भी नहीं करते होंगे। रहा खाना सामने रख कर हाथ उठा कर दुआ करना, इसकी बहुत सी अहादीस आई हैं। मिश्कात **बाबुल-मोजज़ात** फ़स्ले दोम में है कि हज़रत अबू हुरैरह फरमाते हैं कि मैं कुछ ख़ुर्मे हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ख़िदमत में लाया और अर्ज़ किया कि इसके लिए दुआए बरकत फरमा दें। **फ़ज़म्माहुन्ना सुम्मा दआ ली फ़ीहिन्ना बिल-बरकते**। आपने उनको मिलाया और दुआए बरकत की। मिश्कात **बाबुल-मोजज़ात** फ़स्ल अव्वल स० : **538** में है कि ग़ज़्व-ए-तबूक में लश्करे इस्लाम में खाने की कमी हो गई। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने तमाम अह्ले लश्कर को हुक्म दिया कि जो कुछ जिसके पास हो लाओ। सब हज़रात कुछ न कुछ लाए। दस्तरख़्वान बिछाया गया उस पर यह सब रखा गया।

फ़दआ रसूलुल्लाहे सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बिल बरकते सुम्मा काला खुजु फी अव ईयतिकुम।

लिहाज़ा उस पर दुआ फरमाई और फरमाया कि अब इसको अपने बर्तनों में रख लो। इसी मिश्कात के इसी बाब में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने हज़रत ज़ैनब रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा से निकाह किया। हज़रत उम्मे सुलैम ने कुछ खाना बतौर वलीमा पकाया। लेकिन बहुत लोगों को बुलाया गया।

फ़रऐतुन्नबीया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम.......................

उस खाने पर दस्त मुबारक रख कर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने कुछ पढ़ा।

इसी मिश्कात इसी बाब में है कि हज़रत जाबिर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने ग़ज़्व-ए-ख़न्दक़ के दिन कुछ थोड़ा खाना पका कर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की दावत की। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम उनके मकान में तशरीफ़ लाए। **फ़अख़्रजत लहू अजीनन फ़बसक़ा फ़ीहे व बारका।** आपके सामने गुंधा आटा पेश किया गया तो उसमें लुआब शरीफ़ डाला और दुआए बरकत की। इस क़िस्म की बहुत सी रिवायात पेश की जा सकती हैं मगर इतने पर किफ़ायत करता हूँ।

अब फ़ातिहा के तमाम अजज़ा बख़ूबी साबित हो गए। **वल-हम्दुलिल्लाह** अक़्लन भी फ़ातिहा में कोई हरज नहीं क्योंकि जैसा पहले मुक़द्दमा में अर्ज़ किया जा चुका कि फ़ातिहा दो इबादतों के मज्मूआ का नाम है। तिलावते क़ुरआन और सदक़ा और जब यह दोनों काम अलाहिदा अलाहिदा जाइज़ हैं। तो उनको जमा करना क्यों हराम होगा। बिरयानी खाना कहीं भी साबित नहीं मगर हलाल है। क्योंकि इसलिए कि बिरयानी, चावल, गोश्त, घी वग़ैरह का मज्मूआ है और जब इसके सारे अज्ज़ा हलाल तो बिरयानी भी हलाल। हाँ जहाँ चन्द हलाल चीज़ों का जमा करना हराम हो जैसे कि दो हम्शीरा एक के निकाह में या चन्द हलाल चीज़ों के मिलने से कोई हराम चीज़ बन जाए मसलन मज्मूआ में नशा पैदा हो गया तो यह मज्मूआ इस बुनियाद की वजह से हराम होगा। यहाँ क़ुरआन की तिलावत और सदक़ा जमा करना शरीअत ने हराम न किया और उनके इज्तिमा से कोई हराम चीज़ पैदा न हुई फिर यह काम हराम क्यों होगा। देखो बकरी मर रही है अगर वैसे ही मर जाए तो मुरदार है जहाँ अल्लाह का नाम लेकर ज़िबह किया हलाल हो गई। क़ुरआन करीम तो मुसलमानों के लिए रहमत और शिफ़ा है। **शिफ़ाउन व रहमतुन लिल-मुमिनीन।** फिर अगर उसकी तिलावत कर देने से खाना हराम हो जाए तो क़ुरआन रहमत कहाँ रहा ज़हमत हुआ। मगर हाँ मुमिनीन

के लिए रहमत है कुफ़्फ़ार के लिए ज़हमत **वला यज़ीदुज़्ज़ालेमीन इल्ला ख़सारा।** इससे ज़ालिम तो नुक़्सान में रहते हैं कि इसके पढ़े जाने से खाने से महरूम हो गए। और जिसके लिए दुआ करना हो उसको सामने रख कर दुआ करना चाहिए। जनाज़े में मैयत को सामने रख कर नमाज़े जनाज़ा पढ़ते हैं। क्योंकि उसी के लिए दुआ है, उसको सामने रख लिया। इसी तरह खाने को सामने रख कर दुआ की तो कौन सी ख़राबी है। इसी तरह क़ब्र के सामने खड़े हो कर दुआ पढ़ते हैं। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपनी उम्मत की तरफ से क़ुरबानी फरमा कर कटा हुआ जानवर सामने रख कर पढ़ा। **अल्लाहुम्मा हाज़ा मिन उम्मते मुहम्मदिन** ऐ अल्लाह! यह क़ुरबानी मेरी उम्मत की तरफ से है। हज़रत ख़लीलुल्लाह ने काबा की इमारत सामने लेकर दुआ की **रब्बना तक़ब्बल मिन्ना** अब भी अक़ीक़ा का जानवर सामने रख कर ही दुआ पढ़ी जाती है। लिहाज़ा अगर फ़ातिहा में भी खाना सामने रख कर ईसाले सवाब हो तो क्या हरज है?

बिस्मिल्लाह से खाना शुरू करते हैं और बिस्मिल्लाह भी क़ुरआन शरीफ़ की आयत है। अगर खाना सामने रख कर क़ुरआन पढ़ना मना हो तो बिस्मिल्लाह पढ़ना भी मना होना चाहिए।

मुख़ालेफ़ीन के पेशवा भी फ़ातिहा मुरव्वजा को जाइज़ समझते हैं चुनांचे शाह वलीयुल्लाह साहब अपनी किताब **अल-इंतिबाह फ़ी सलासिले औलिया अल्लाह** में फरमाते हैं "फिर दस बार दरूद पढ़ें और पूरा ख़त्म करें और थोड़ी शीरीनी पर तमाम ख़्वाजगाने चिश्त की फ़ातिहा दें फिर ख़ुदा से दुआ करें। शाह वलीयुल्लाह साहब **ज़ुब्दतुन्नासाइह** सफ़: 132 पर एक सवाल के जवाब में फरमाते हैं।

दूध चावल किसी बुज़ुर्ग की फ़ातिहा के लिए उनकी रूह को सवाब पहुँचाने की नीयत से पकाएं और खाएं और अगर किसी बुज़ुर्ग की फ़ातिहा दी जए तो मालदारों को भी खाना जाइज़ है। मोलवी अशरफ़ अली व रशीद अहमद साहिबान के मुर्शिद हाजी इम्दादुल्लाह साहब फ़ैसलए हफ़्त मसला में फरमाते हैं। "नफ़्स ईसाले सवाब अरवाहे अम्वात में किसी को कलाम नहीं। इसमें भी तख़्सीस व तऐयुन को मौक़ूफ़ अलैह सवाब का समझे या वाजिब व फ़र्ज़ ऐतक़ाद करे तो मना है और अगर यह ऐतक़ाद नहीं बल्कि कोई मस्लेहत बाइसे तक़्लीद हैअते कज़ाइया है तो कुछ हरज नहीं। जैसा कि बमस्लहते नमाज़ में सूरः ख़ास मुऐयन करने को फुक़हा मुहक़्क़ेक़ीन ने जाइज़ रखा है तो तहज्जुद में अक्सर मशाइख़ का मामूल है" फिर फरमाते हैं "जैसे कि नमाज़ में नीयत हर चन्द दिल से काफ़ी है मगर मुवाफ़िक़ते क़ल्ब व ज़बान के लिए अवाम को ज़बान से कहना भी बेहतर है। अगर यहाँ भी ज़बान से कह लिया जाए कि या अल्लाह इस खाने का सवाब फ़लां

शख़्स को पहुंच जाए तो बेहतर है फिर किसी को ख़्याल हुआ कि लफ़्ज़ इसका मुशारून अलैह अगर रू ब रू मौजूद हो तो ज़्यादा इस्तिहज़ारे कल्ब हो खाना रू-ब-रू लाने लगे। किसी को यह ख़्याल हुआ कि यह एक दुआ है इसके साथ अगर कुछ कलामे इलाही भी पढ़ा जाए तो क़बूलियते दुआ की भी उम्मीद है और इस कलाम का सवाब भी पहुँच जाएगा तो **जमा बैनल-इबादतैन** है।" फिर फरमाते हैं "और ग्यारहवीं हज़रत ग़ौस पाक की दसवीं बीसवाँ, चेहल्लुम, शशमाही, सालाना वग़ैरह और तोशा हज़रत शैख़ अब्दुल-हक़ और सह मनी हज़रत शाह बू अली क़लन्दर और हल्वा शबे बरात व दीगर तरीक़े ईसाले सवाब के इसी क़ाइदे पर मब्नी हैं।

पीर साहब के इस कलाम ने बिल्कुल फ़ैसला फरमा दिया। **अल्हम्दु लिल्लाह** कि मसला फ़ातिहा दलाइले अक़्लीया नक़्लीया और अक़्वाले मुख़ालेफ़ीन से बख़ूबी वाज़ेह हो गया। अल्लाह तआला क़बूल की तौफ़ीक़ दे। आमीन!

दूसरा बाब

फ़ातिहा पर ऐतराज़ व जवाबात में

इस मसअला फ़ातिहा पर मुख़ालेफ़ीन के हस्बे ज़ैल ऐतराज़ात मश्हूर हैं।

(1) बहुत से फ़ुक़हा ने तीसरे और सातवें रोज़ मैयत के लिए खाना पकाना मना किया है। (देखो शामी आलमगीरी) बल्कि बज़ाज़िया ने तो लिखा है **व बादल-उस्बूए** यानी हफ़्ता के बाद भी पकाना मना है इसमें बर्सी शशमाही चेहल्लुम सब शामिल हैं। और क़ाज़ी सनाउल्लाह साहब पानी पती ने वसीयत फरमाई थी और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम फरमाते हैं कि मैयत का खाना दिल को मुर्दा करता है वग़ैरह वग़ैरह।

जवाब : फ़ुक़हा ने मैयत के ईसाले सवाब से मना न किया बल्कि हुक्म दिया जैसा कि हम पहले बाब में अर्ज़ कर चुके हैं। जिसको फ़ुक़हा मना करते हैं वह चीज़ ही और है वह है मैयत के नाम पर बिरादरी की रोटी लेना। यानी क़ौम के तअना से बचने के लिए जो मैयत के तीजा, दसवीं वग़ैरह में बिरादरी की दावते आम की जाती है वह ना जाइज़ है इसलिए कि नाम व नमूद के लिए है। और मौत नाम व नुमूद का वक़्त नहीं है अगर फ़ुक़रा को बग़र्ज़ ईसाले सवाब फ़ातिहा करके खाना खिलाया तो सबके नज़दीक जाइज़ है। शामी जिल्द अव्वल **किताबुल-जनाइज़ बाबुद्दफ़न** में है।

यानी मैयत वालों से दावत लेना मक्रूह है। क्योंकि यह तो ख़ुशी के मौक़ा पर होती है न कि ग़म पर। दावत लेने के दो ही मानी कि बिरादरी मजबूर करे कि रोटी कर। फिर फरमाते हैं।

यह सारे काम महज़ दिखाने के होते हैं। लिहाज़ा उन से बचे। क्योंकि इससे अल्लाह की रज़ा नहीं चाहते।

साफ़ मालूम हुआ कि फ़ख़्रिया तौर पर बिरादरी की दावत मना है। फिर फ़रमाते हैं **व इनित्तख़ज़ा तआमन लिल-फ़ुक़राए काना हसना।** अगर अह्ले मैयत ने फ़ुक़रा के लिए खाना पकाया तो अच्छा है। यह फ़ातिहा का जवाज़ है। क़ाज़ी सनाउल्लाह साहब पानी पती का अपने तीजा दसवीं से मना फ़रमाना बिल्कुल दुरुस्त है। वह फ़रमाते हैं रुसूमे दुनियावी जो तीजा वग़ैरह है वह न करें रुसूमे दुनिया क्या है औरतों का तीजा वग़ैरह को जमा हो कर रोना पीटना नौहा करना वाक़ई हराम है। इसीलिए फरमाते हैं कि तीन दिन से ज़्यादा मातम जाइज़ नहीं। इस जगह ईसाले सवाब और फ़ातिहा वग़ैरह का ज़िक्र नहीं। जिसका मक़्सद यह हुआ कि तीजा वग़ैरह में मातम न करें। तुम्हारा यह कहना कि मैयत का खाना दिल को मुर्दा करता है। हमने यह हदीस कहीं न देखी। अगर यह हदीस हो तो इन अहादीस का क्या मतलब होगा जिनमें मुर्दों की तरफ़ से ख़ैरात करने की रग़बत दी गई है? और तुम भी कहते हो कि बग़ैर तारीख़ मुक़र्रर किए हुए मुर्दे के नाम पर ख़ैरात जाइज़ है। इस ख़ैरात को कौन खाएगा? जो आदमी खा ले उसका दिल मुर्दा हो जाएगा। तो क्या इसको मलाइका खाएंगे?

मसअला : मैयत के फ़ातिहा का खाना, सिर्फ़ फ़ुक़रा को खिलाया जाए आला हज़रत क़ुद्देस सिर्रहू ने इस पर मुस्तक़िल रिसाला लिखा। **जलिस्सौते लेनहयिद्दावते अन-अहलिल-मौते।**" बल्कि देखने वाले तो कहते हैं कि खुद आला हज़रत क़ुद्देस सिर्रहू किसी अहले मैय्यत के हाँ ताज़ियत के लिए तशरीफ़ ले जाते तो वहाँ पान हुक़्क़ा वग़ैरह भी न इस्तेमाल फरमाते थे और खुद वसाया शरीफ़ में वसीयत मौजूद है कि हमारी फ़ातिहा का खाना सिर्फ़ फ़ुक़रा को खिलाया जाए। और अगर मैयत की फ़ातिहा मैयत के तरका से की है तो ख़्याले रहे कि ग़ायब वारिस या नाबालिग़ के हिस्से से फ़ातिहा न की जाए यानी अव्वलन माले मैयत तक़्सीम हो जाए। फिर कोई बालिग़ वारिस अपने हिस्सा से यह उमूरे ख़ैर करे। वरना यह खाना किसी को भी जाइज़ न होगा कि बग़ैर मालिक की इजाज़त या बच्चा का माल खाना जाइज़ नहीं यह ज़रूर ख़्याल रहे।

(2) फ़ातिहा के लिए तारीख़ मुक़र्रर करना जाइज़ नहीं। ग्यारहवीं तारीख़ या तीसरा, दसवाँ, बीसवाँ, चेहल्लुम और बरसी वग़ैरह यह दिन की तऐयुन महज़ बेकार है। क़ुरआन फरमाता है **वहुम अनिल्लग़्वे मुअ़रेज़ूना।** मुसलमान लग़्व कामों से बचते हैं बल्कि जिस क़द्र जल्द मुम्किन हो ईसाले सवाब करो। तीसरे दिन का इंतिज़ार कैसा? और तीजा के लिए चने मुक़र्रर करना वह भी

भूने हुए यह महज़ बेकार और बेहूदा है इसलिए तीजा वग़ैरह करना मना है।

जवाब : मुक़र्रर करने का जवाब तो हम क़्यामे मीलाद की बहस में दे चुके हैं किसी जाइज़ काम के लिए दिन तारीख़ मुक़र्रर करने का महज़ यह मक़्सद होता है कि मुक़र्रर दिन पर सब लोग जमा हो जाएंगे और मिल कर यह काम करेंगे अगर कोई वक़्त मुक़र्रर ही न हो तो बख़ूबी यह काम नहीं होते। इसलिए हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने अपने वअज़ के लिए जुमेरात का दिन मुक़र्रर फरमाया था लोगों ने अर्ज़ किया कि रोज़ाना वअज़ फरमाया कीजिए। फरमाया कि तुमको तंगी में डालना मुझको पसन्द नहीं। (देखो मिश्कात किताबुल-इल्म) बुख़ारी ने तो बारी मुक़र्रर करने के लिए बाब बांधा। यह महज़ आसानी के लिए होता है। आज भी मदारिस के इम्तिहान, जल्से, तातीलात के महीना और तारीख़ें मुक़र्रर होती हैं। कि लोग हर साल बग़ैर बुलाए इन तारीख़ों पर पहुँच जाएं सिर्फ़ यह मक़्सद इनका भी है। अब रहा यह सवाल कि यह तारीख़ें मुक़र्रर क्यों कीं। तो सुनिए! ग्यारहवीं के मुक़र्रर होने की वजह यह हुई कि सलातीने इस्लामिया के तमाम मुहक्मों में चाँद की दसवीं तारीख़ को तंख़्वाह तक़्सीम होती थी। और मुलाज़िमीन का ख़्याल यह था कि हमारी तंख़्वाह का पहला पैसा हुज़ूर ग़ौस पाक की फ़ातिहा पर ख़र्च हो। लिहाज़ा जब वह शाम को दफ़्तर से घर आए तो कुछ शीरीनी लेते आए बाद नमाज़ मग़्रिब फ़ातिहा दी। यह शब ग्यारहवीं होती थी। यह रिवाज ऐसा पड़ा कि मुसलमानों में इस फ़ातिहा का ग्यारहवीं शरीफ़ नाम ही हो गया, अब जिस तारीख़ को भी हुज़ूर ग़ौसे पाक की फ़ातिहा करें या कुछ पैसा उनके नाम पर ख़र्च करें इसका नाम ग्यारहवीं होता है। यूपी और काठियावाड़ में माहे रबी-उल-आख़िर में सारे माह फ़ातिहा होती है मगर नाम ग्यारहवीं ही होता है।

और बुज़ुर्गों के बड़े-बड़े वाक़ेआत दसवीं तारीख़ को हुए जिसके बाद ग्यारहवीं रात आती है। आदम अलैहिस्सलाम का ज़मीन पर आना, उनकी तौबा क़बूल होना, नूह अलैहिस्सलाम की कश्ती का पार लगना, इस्माईल अलैहिस्सलाम का ज़िबह से नजात पाना, यूनुस अलैहिस्सलाम का मछली के पेट से बाहर आना, याक़ूब अलैहिस्सलाम का फ़रज़न्द से मिलना, मूसा अलैहिस्सलाम का फिरऔन से नजात पाना, ऐय्यूब अलैहिस्सलाम का शिफ़ा पाना, इमाम हुसैन रज़ि अल्लाहु अन्हु का शहीद होना और सैयदुश्शुहदा का दरजा पाना सब दसवीं तारीख़ को वाक़े हुआ है। इसके बाद जो पहली रात आई वह ग्यारहवीं थी। लिहाज़ा यह रात मुतबर्रक है इसीलिए ग्यारहवीं की फ़ातिहा अक्सर शबे ग्यारहवीं में होती है क्योंकि मुतबर्रक रातों में सदक़ा व ख़ैरात वग़ैरह करना चाहिए।

और यह बात तजरबा से साबित है बल्कि ख़ुद मेरा भी तजरबा है कि

अगर ग्यारहवीं तारीख़ को कुछ मुक़र्रर पैसों पर फ़ातिहा पाबन्दी से की जाए तो घर में बहुत बरकत रहती है। मैं बेहम्देही तआला इसका बहुत सख़्ती से पाबन्द हूँ और इसकी बहुत बरकत देखता हूँ। **"किताब या ज़दह मज्लिस"** में लिखा है कि हुज़ूर ग़ौसे पाक रज़ि अल्लाहु अन्हु हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की बारहवीं यानी बारह तारीख़ के मीलाद के बहुत पाबन्द थे। एक बार ख़्वाब में सरकार ने फरमाया कि अब्दुल-क़ादिर तुमने बारहवीं से हमको याद किया।

हम तुमको ग्यारहवीं देते हैं यानी लोग ग्यारहवीं से तुमको याद किया करेंगे। इसीलिए रबी-उल-अव्वल में उमूमन मीलादे मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम की महफ़िल होती हैं। तो रबीउस्सानी में हुज़ूर ग़ौसे पाक की ग्यारहवीं। चूंकि यह सरकारी अतीया था इसलिए तमाम दुनिया में फैल गया। लोग तो शिर्क व बिदअत कह कर घटाने की कोशिश करते रहे मगर इसकी तरक़्क़ी होती गई।

तो घटाए से किसी के न घटा है न घटे
ज़ब बढ़ाए तुझे अल्लाह तआला तेरा

तीजा के लिए तीसरा दिन मुक़र्रर करने में भी मस्लेहत है। पहले दिन तो लोग मैयत की तज्हीज़ व तक्फ़ीन में मश्ग़ूल रहते हैं दूसरे दिन आराम करने के लिए ख़ाली छोड़ा गया। तीसरे दिन आम तौर पर जमा हो कर फ़ातिहा कुल वग़ैरह पढ़ते हैं। यह तीसरा दिन ताज़ियत का आख़िरी दिन है कि इसके बाद ताज़ियत करना मना हैं।

इल्ला लिल-ग़ाइबे आलमगीरी **किताबुल-जनाइज़ बाबुद्दफ़न** में है।

तरजमा : और मातम पुरसी का वक़्त मरने के वक़्त से तीन दिन तक है इसके बाद मक्रूह है मगर यह कि ताज़ियत देने वाला या लेने वाला ग़ायब हो। आज तक तो लोग ताज़ियत के लिए आते रहे अब न आएंगे तो कुछ ईसाले सवाब करके जाएं। और बाहर के परदेसी, ख़्वेश व अक़रबा भी इस फ़ातिहा में शिरकत कर लेते हैं कि तीन दिन में मुसाफ़िर भी अपने घर पहुँच सकता है। चेहल्लुम बर्सी वग़ैरह की वजह यह है कि मुसलमानों का मंशा यह है कि साल भर तक मैयत को वक़्तन फ़वक़्तन सवाब पहुँचाते रहें। क्योंकि बाद मरने के अव्वल-अव्वल मुर्दे का दिल अपने दोस्त और अहबाब से लगा रहता है फिर आहिस्ता-आहिस्ता बिल्कुल इधर से बेतअल्लुक़ हो जाता है। लड़की की निकाह करके ससुराल भेजते हैं तो अव्वलन तो जल्द जल्द उसको बुलाना चलाना, हदिया वग़ैरह भेजना जारी रहता है फिर जिस क़द्र ज़्यादा मुद्दत गुज़री यह काम भी कम होते गए क्योंकि शुरू में वहाँ दिलजमई उसको हासिल नहीं होती। इसकी असल हदीस से मिलती है। बाद दफ़न कुछ देर क़ब्र पर खड़ा हो कर ईसाले सवाब और तल्क़ीन से मैयत की मदद करनी चाहिए। हज़रत अमर बिन आस रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने वसीयत

फरमाई थी कि बाद दफन थोड़ी देर मेरी क़ब्र पर खड़ा रहना ताकि तुम्हारी वजह से मेरा दिल लग जाए और नकीरैन को जवाब दे लूँ। चुनांचे मिश्कात **बाबुद्दफ़न** में उनके यह अल्फ़ाज़ मंकूल हैं।

इसीलिए जल्द-जल्द उसको ईसाले सवाब किया जाता है। शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब तफ़्सीरे अज़ीज़ी पारह अम **वल क़मरु इज़त्तसक़**। की तफ़्सीर में लिखते हैं।

मुर्दे की पहली हालत जो कि फ़क़त जिस्म से रूह निकलने का वक़्त है उसमें कुछ न कुछ पहली ज़िन्दगी का असर और बदन और अह्ले क़राबत से तअल्लुक़ बाक़ी होता है यह वक़्त गोया बरज़ख़ है कुछ इधर तअल्लुक़ और कुछ उस तरफ़। इस हालत में ज़िन्दों की मदद मुर्दों को बहुत जल्द पहुँचती है और मुर्दे इस मदद पहुँचने के मुंतज़िर होते हैं उस ज़माना में सदक़ा दुआएं फ़ातिहा उसके बहुत ही काम आती हैं। इसी वजह से तमाम लोग एक साल तक ख़ास कर मौत के बाद चालीस रोज़ तक इस क़िस्म की मदद पहुँचाने में बहुत कोशिश करते हैं। यही हाल ज़िन्दों का भी होता है कि अव्वल-अव्वल बहुत ग़म फिर जिस क़द्र वक़्त गुज़रता गया रंज कम होता गया। तो मंशा यही होता है कि साल भर तक हर आधे पर सदक़ा करें साल पर बर्सी इसके निस्फ़ पर शशमाही उसके निस्फ़ पर सह माही की फ़ातिहा इसके बाद निस्फ़ यानी 45 दिन पर फ़ातिहा होनी चाहिए थी। मगर चूंकि चालीस का अदद रूहानी और जिस्मानी तरक़्क़ी का है इसलिए चेहल्लुम मुक़र्रर किया गया। फिर इसका आधा बीसवाँ फिर इसका आधा दसवाँ।

चालीस में क्या तरक़्क़ी है मुलाहिज़ा हो, हज़रत आदम अलैहिस्सलाम का ख़मीर चालीस साल तक एक हालत में रहा। फिर चालीस साल में वह ख़ुश्क हुआ। माँ के पेट में बच्चा चालीस रोज़ तक नुत्फ़ा, फिर चालीस रोज़ तक जमा हुआ ख़ून, फिर चालीस रोज़ तक गोश्त का लोथड़ा रहता है। (देखो मिश्कात बाबुल-ईमान बिल-क़द्र) पैदा होने के बाद चालीस रोज़ तक माँ को निफ़ास आ सकता है, फिर चालीस साल की उम्र में पहुँच कर अक़्ल पुख़्ता होती है। इसीलिए अक्सर अंबिया-ए-क़िराम को चालीस साल की उम्र में नुबुव्वत दी गई। सूफ़िया-ए-किराम वज़ीफ़ों के लिए चिल्ले यानी चालीस-चालीस रोज़ मशक़्क़तें करते हैं उनको रूहानी तरक़्क़ी होती है। मूसा अलैहिस्सलाम को भी हुक्म हुआ कि कोहे तूर पर आकर चालीस रोज़ तक ऐतकाफ़ करो तब तौरेत दी गई। **व इज़ वाअदना मूसा अरबईना लैलतन** अनवारे सातेआ ने बैहक़ी की रिवायत सैयदना अनस से ब्यान की बहस चेहलुम कि –

इस हदीस के मानी ज़ुरक़ानी शरह मवाहिब ने यूं ब्यान किए कि

अंबिया-ए-किराम की रूह का तअल्लुक़ इस जिस्म मदफ़ून से चालीस रोज़ तक बहुत ज़्यादा रहता है। बादे अज़ाँ वह रूह क़ुर्बे इलाही में इबादत करती है और जिस्म की शक्ल में हो कर जहाँ चाहती है जाती है। अवाम में तो यह भी मशहूर है कि चालीस दिन तक मैयत की रूह को घर से इलाक़ा रहता है। मुम्किन है कि इसकी असल कुछ हो। इससे मालूम हुआ कि चालीस के अदद में तग़ैयुर व तबद्दुल है लिहाज़ा मुनासिब हुआ कि चालीस दिन पर फ़ातिहा की जाए और इसकी मुमानेअत है नहीं।

तीजा के मुतअल्लिक़ मुख़्तलिफ़ रिवाज हैं काठियावाड़ में अलल-उमूम तीसरे दिन सिर्फ़ क़ुरआन पाक ही पढ़ते हैं। पंजाब में आम तौर पर तीसरे दिन दूध और कुछ फल पर फातिहा करते हैं। यूपी में तीसरे दिन क़ुरआन ख़्वानी भी करते हैं और भुने हुए चनों पर कलिमा तैयबा भी पढ़ कर ईसाले सवाब करते हैं। हम पहले बाब में मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब के हवाला से ब्यान कर चुके हैं कि मैयत को एक लाख पाँच हज़ार बार कलिमा पढ़ कर बख़्शने से उसकी मग़्फ़िरत होती है। इसमें मुख़्तलिफ़ रिवायतें आई हैं तो एक लाख कलिमा तैयबा पढ़वाने के लिए साढ़े बारह सेर चने मुंतख़ब किए गए हैं क्योंकि इतने चने एक लाख हो जाते हैं। यह महज़ शुमार के लिए हैं। अगर इतनी तस्बीहें या इस क़दर गुठलियाँ या कंकरियाँ जमा की जाएं तो इसमें दिक़्क़त होती है कि हर शख़्स अपने यहाँ मौत पर लाख कंकरियाँ जमा करता फिरे। इसलिए चने इख़्तियार कर लिए कि इसमें कलिमा का शुमार भी है और बाद में सदक़ा भी। भुने हुए इसलिए तज्वीज़ हुए कि कच्चे चने लोग फेंक दें, घोड़ों का दाना बना दें, इसमें बेहुरमती है। भुने हुए चने सिर्फ़ खाने ही के काम आ जाएंगे।

(3) फ़ातिहा वग़ैरह में हुनूद से मुशाबेहत है कि वह भी मुर्दों की तेरहवीं करते हैं और हदीस में है कि **मन तशब्बहा बेक़ौमिन फ़हुवा मिन्हुम**। जो किसी क़ौम से मुशाबहत करे वह उन में से है लिहाज़ा यह फ़ातिहा मना है।

जवाब : कुफ़्फ़ार से हर मुशाबेहत मना नहीं बल्कि बुरी बातों में मुशाबेहत मना है, फिर यह भी ज़रूरी है कि वह काम ऐसा हो जो कि कुफ़्फ़ार की दीनी व क़ौमी अलामत बन चुका है जिसको देख कर लोग उस काफिर क़ौम का आदमी समझें जैसे कि धोती, चोटी, ज़ुन्नार, हैट वग़ैरह वरना हम भी आबे ज़मज़म, मक्का मुअज़्ज़मा से लाते हैं हिन्दू भी गंगा से गंगा जल लाते हैं। हम भी मुँह से खाते हैं और पाँव से चलते हैं कुफ़्फ़ार भी। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने आशूरह के रोज़ा का हुक्म दिया था हालांकि इसमें मुशाबेहते यहूद थी। फिर फ़रमाया कि अच्छा हम दो रोज़े रखेंगे कुछ फ़र्क़ कर दिया। मगर इसको बन्द न किया। इसी तरह हमारे यहाँ कलिमा, क़ुरआन पढ़ा

जाता है, मुश्रेकीन के यहाँ यह नहीं होता फिर मुशाबेहत कहाँ रही? इसकी बहस शामी बाब मक्रूहातुस्सलात में देखो हाँ जो काम मुशाबेहते कुफ्फार की नीयत से किए जाएं वह मना हैं। फ़ातिहा की पूरी बहस अनवारे सातेआ में देखो।

(4) अगर फ़ातिहा में बदनी व माली इबादत का इज्तिमा है तो चाहिए नजिस चीज़ ख़ैरात करते वक़्त भी फ़ातिहा पढ़ लिया करो लिहाज़ा ओपला (गोबर) वग़ैरह पर भी फ़ातिहा पढ़ कर किसी को दिया करो जब चूहड़ा पाखाना उठाए तो तुम फ़ातिहा पढ़ कर उसे घर से बाहर जाने दो। (देवबन्दी तहज़ीब)।

जवाब : नजिस चीज़ और नजिस जगह तिलावते कुरआन हराम है लिहाज़ा उनकी ख़ैरात पर तिलावत नहीं कर सकते डकार पर **अल्हम्दुलिल्लाह** पढ़ते हैं, न कि रीह निकलने पर कि वह बदबू दार और नाक़िज़े वज़ू है। इसी तरह छींक पर अल्हम्दुलिल्लाह कहते हैं न कि नक्सीर पर।

बहस दुआ बाद नमाज़े जनाज़ा की तहक़ीक़ में

इस बहस में दो बाब हैं। पहला बाब इस दुआ के सुबूत में और दूसरा बाब इस पर ऐतराज़ात व जवाबात में।

पहला बाब

दुआ बाद नमाज़े जनाज़ा के सुबूत में

मुसलमान के मरने के बाद तीन हालतें हैं। नमाज़े जनाज़ा से पहले, नमाज़े जनाज़ा के बाद दफन से पहले, दफन के बाद। इन तीनों हालतों में मैयत के लिए दुआ करना, ईसाले सवाब करना जाइज़ बल्कि बेहतर है हाँ मैयत के ग़ुस्ल से पहले अगर उसके पास बैठ कर कुरआन पढ़ना हो तो उसको ढक दें क्योंकि अभी वह नापाक है। जब ग़ुस्ल दे दिया फिर हर तरह कुरआन वग़ैरह पढ़ें, मुख़ालेफ़ीन नमाज़ से पहले और दफन के बाद तो दुआ वग़ैरह करना जाइज़ मानते हैं। मगर नमाज़े दफन से पहले दुआ को नाजाइज़, हराम, बिदअत, शिर्क। न मालूम क्या क्या कहते हैं? इसी की इस जगह तहक़ीक़ है। इसके सुबूत मुलाहिज़ा हों। मिश्कात **बाब सलातिल-जनाज़ा** फ़स्ले सानी (स० : 146) में है **इज़ा सल्लैतुम अलल-मैयते फ़अख़्लिसू लहुद्दुआआ** जब तुम मैयत पर नमाज़ पढ़ लो तो उसके लिए ख़ालिस दुआ मांगो। **फ़** से मालूम होता है कि नमाज़ के बाद फौरन दुआ की जाए बिला ताख़ीर जो लोग इसको मना करते हैं कि नमाज़ में उसके लिए दुआ माँगो वह **फ़** के मानी से ग़फ़लत करते हैं। **सल्लैतुम** शर्त है और **फ़अख़्लिसू** है फिर जज़ा शर्त और जज़ा में तग़ायुर चाहिए न यह कि इसमें दाख़िल हो फिर

सल्लैतुम है माज़ी और **फ़अख़्लेसू** है अम्र जिससे मालूम हुआ कि दुआ का हुक्म नमाज़ पढ़ चुकने के बाद है। जैसे **फ़इज़ा तइम्तुम फ़ंतशेरू** में खा कर जाने का हुक्म है न कि खाने के दरम्यान। और **इज़ा कुम्तुम इलस्सलाते फ़ग़्सिलू वुजूहकुम।** में नमाज़ के लिए उठना मुराद है न कि नमाज़ का क़याम। जैसा कि **इला** से मालूम हुआ। लिहाज़ा यहाँ भी वज़ू इराद-ए-नमाज़ के बाद ही हुआ। और **फ़** से ताख़ीर ही मालूम हुई। हक़ीक़ी माना को छोड़ कर बिला क़रीना मजाज़ी माना मुराद लेना जाइज़ नहीं इसी मिश्कात में इसी जगह है **क़रआ अलल-ज़नाज़ते बेफ़ातिहतिल-किताबे** हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जनाज़ा पर सूरः फ़ातिहा पढ़ी इसकी शरह में अश्इतुल-लम्आत में है।

मुम्किन है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने सूरः फ़ातिहा नमाज़ के बाद या नमाज़ से पहले बरकत के लिए पढ़ी हो जैसा कि आजकल रिवाज है। इससे मालूम हुआ कि शैख़ अब्दुल-हक़ अलैहिर्रहमा के ज़माना में भी रिवाज था कि नमाज़े जनाज़ा के आगे और बाद सूरः फ़ातिहा वग़ैरह बरकत के लिए पढ़ते थे और हज़रत शैख़ ने उसको मना न फ़रमाया बल्कि हदीस पर इसको महमूल किया।

फ़त्हुल-क़दीर **किताबुल-जनाइज़ फ़स्ल सलातुल-जनाज़ा** में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने मिंबर पर क़याम फरमा कर ग़ज़्व-ए-मौता की ख़बर दी और इसी असना में जाफ़र इब्ने अबी तालिब रज़ि अल्लाहु अन्हु की शहादत की ख़बर दी।

लिहाज़ा उन पर नमाज़े जनाज़ा पढ़ी और उनके लिए दुआ फरमाई और लोगों से फ़रमाया कि तुम भी उनके लिए दुआए मग़्फ़िरत करो। **व दआ** के वाव से मालूम होता है कि यह दुआ नमाज़ के अलावा थी। मवाहिबे लदुनिया जिल्द दोम **अल-क़िस्मुस्सानी फ़ीमा अख़्बरा मिनल-ग़ुयूबे** में यही वाक़ेया नक़्ल फरमा कर कहा **सुम्मा क़ाला इस्तग़्फ़िरू इस्तग़्फ़िरू लहू** इसी तरह अब्दुल्लाह इब्ने रवाहा पर बाद नमाज़ दुआ फरमाई। इससे मालूम हुआ कि बाद नमाज़े जनाज़ा दुआ-ए-मग़्फ़िरत जाइज़ है। मुन्तख़ब कंज़ुल-उम्माल **किताबुल-जनाइज़** में इब्राहीम हिजरी की रिवायत है।

मैंने इब्ने अबी औफ़ा को देखा यह बैअतुर्रिज़वान वाले सहाबी हैं कि इनकी दुख़्तर (बेटी) का इंतिक़ाल हुआ फिर उन पर चार तक्बीरें कहीं फिर इसके बाद दो तक्बीरों के फ़ासिला की बक़द्र खड़े हो कर दुआ की और फ़रमाया कि मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ऐसे ही करते हुए देखा। बैहक़ी में है।

मुस्तज़िल इब्ने हिसीन से रिवायत है कि हज़रत अली रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने एक जनाज़े पर नमाज़ के लिए दुआ माँगी।

मदवनतुल कुबरा में है हर तक्बीर पर इसी तरह कहे और जब आख़िरी तक्बीर हो तो इस तरह कहे फिर कहे **अल्लाहुम्मा सल्ले अला मुहम्मदिन** इससे मालूम हुआ कि बाद नमाज़े जनाज़ा दरूद शरीफ़ पढ़े। **कश्फुल-ग़ताए** में है "मैयत के लिए फ़ातिहा और दुआ माँगना दफन से पहले दुरुस्त है इसी रिवायत पर अमल है इसी तरह **खुलासतुल-फ़तह** में है।

मबसूत शम्सुल-अइम्मा सर ख़सी जिल्द दोम सफ़: 60 **बाब गुस्लुल-मैयत** में रिवायत है कि अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु एक जनाज़ा पर बाद नमाज़ पहुँचे और फरमाया **इन सबक़्तुमूनी बिस्सलाते अलैहि फ़ला तस्बेकूनी बिद्दुआए** अगर तुमने मुझसे पहले नमाज़ पढ़ ली तो दुआ में तुम मुझसे आगे न बढ़ो यानी आओ मेरे साथ मिल कर दुआ कर लो। इसी मब्सूत में इसी जगह यानी **बाब गुस्लुल-मैयते** में इब्ने उमर व अब्दुल्लाह बिन अब्बास व अब्दुल्लाह इब्ने सलाम रज़ि अल्लाहु अन्हुम से साबित किया कि इन हज़रात ने दुआ बाद नमाज़े जनाज़ा की और **फ़ला तस्बेकू** से मालूम होता है कि इस दुआ पर सहाबा किराम का अमल था। **मिफ़्ताहुस्सलात** सफ़: 112 मुसन्नेफ़ा मौलाना फ़तह मुहम्मद साहब बुरहानपूरी में है।

जब नमाज़े जनाज़ा से फ़ारिग़ हो तो मुस्तहब है कि इमाम या कोई और सालेह आदमी सूर: बक़र का शुरू रुकूअ मुफ़्लेहून तक जनाज़े के सरहाने और सूर: बक़र की आख़िरी आयात **आमनर्रसूलु** मैयत के बाईं तरफ पढ़े कि हदीस में आया है कि कुछ अहादीस में दफन के बाद वाक़े हुआ। मयस्सर हो तो दोनों वक़्त पढ़े जाइज़ है। ज़ादे आख़िरत में नहर फ़ाइक़ शरह कंज़ुद्दक़ाइक़ और बहरे ज़ख़्ख़ार से नक़्ल फरमाया।

बाद अज़ सलाम बख़्वांद —

अल्लाहुम्मा ला तुहर्रिमना अज्रहू वला तफ़्तिना बादहु वग़फ़िरलना व लहु।

सलाम के बाद पढ़े कि ऐ अल्लाह हमको उसके अज्र से महरूम न कर और उसके बाद फ़ित्ना में मुब्तला न कर और हमारी और इसकी मग़फ़िरत फरमा। तहतावी में है।

जब इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु की वफ़ात हुई तो उन पर दफन से पहले सत्तर हज़ार ख़त्मे कुरआन हुए।

कश्फुल-ग़म्मा, फ़तावा आलमगीरी, शामी **बाबुद्दफ़्ने बहस ताज़ियत** में है। **वहिया बअ़ददफ़्ने औला मिन्हा कब्लहु**

ताज़ियत करना दफ़न के बाद दफन से पहले ताज़ियत करने से बेहतर है। इसी जगह शामी और आलमगीरी ने यह भी फरमाया।

यह जब है जब कि इन वारिसों में सख़्त घबराहट न हो वरना ताज़ियत

दफन से पहले की जावे। हसन ज़हीरीया में है **वहिया बअ़दद्दफ़ने औला मिन्हा क़ब्लहू।** दफन के बाद ताज़ियत करना दफन से पहले ताज़ियत से अफ़ज़ल है।

मीज़ान कुबरा मुसन्नेफ़ा इमाम शेअ़रानी में है।

तरजमा : इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम सौरी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा ने फरमाया कि ताज़ियत करना दफन से पहले सुन्नत है न कि बाद क्योंकि ज़्यादती रंज दफन से पहले होती है पस ताज़ियत करे और उसके लिए दुआ करे। इस इबारात से साबित हुआ कि दफन से पहले चाहे नमाज़ से भी पहले हो या नमाज़ के बाद ताज़ियत करना जाइज़ बल्कि मस्नून है और ताज़ियत में मैयत व पस्मांदगान के लिए दुआए अज्र व सब्र ही तो होती है। अक़्ल का भी तक़ाज़ा है कि बाद नमाज़े जनाज़ा दुआ जाइज़ हो। क्योंकि नमाज़ एक हैसियत से तो दुआ है कि मैयत को सामने रखा गया है और इसमें रुकूअ सज्दा अत्तहीयात वग़ैरह नहीं है। और एक हैसियत से नमाज़ है। इसीलिए इसमें गुस्ल वज़ू सतरे औरत क़िब्ला को मुँह होना। जगह कपड़ों का पाक होना शर्त है और जमाअत मस्नून। अगर यह महज़ दुआ होती तो नमाज़ की तरह यह शराइत इसमें क्यों होती और दुआओं की तरह यह भी हर तरह अदा हो जाया करती मानना पड़ेगा कि एक हैसियत से यह नमाज़ भी है और हर नमाज़ के बाद दुआ मस्नून है और ज़्यादा क़ाबिले क़बूल चुनांचे मिश्कात **बाबुज़्ज़िक्रे बअदस्सलाते** (स० : 89) में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से सवाल किया गया कि कौन सी दुआ ज़्यादा क़बूल होती है? फरमाया कि आख़िर रात के दरम्यानी हिस्सा में और फ़र्ज़ नमाज़ों के पीछे और नमाज़े जनाज़ा भी फ़र्ज़ नमाज़ है फिर इसके बाद क्यों दुआ न की जाए? और दुआ माँगने की हर वक़्त इजाज़त दी गई है और बहुत ताकीद फरमाई गई है। मिश्कात **किताबुद्दावात** में है कि **अद्दुआओ हुवल-इबादतु** इसी जगह यह भी है **अद्दुआओ मुख़्खुल-इबादते** दुआ इबादत भी है या दुआ असल इबादत है दुआ माँगने के लिए कोई वक़्त वग़ैरह की पाबन्दी नहीं। तो इसकी क्या वजह है कि नमाज़े जनाज़ा से पहले तो दुआ जाइज़ और दफन के बाद भी जाइज़ मगर नमाज़ के बाद और दफन से पहले हराम? नमाज़े जनाज़ा भी कोई जादू है कि इसके पढ़ते ही दुआ करना, ईसाले सवाब करना सब हराम और दफन मैयत इस जादू का उतार है कि दफन हुआ और सब जाइज़ हो गया लिहाज़ा हर वक़्त दुआ और ईसाले सवाब जाइज़ है किसी वक़्त की पाबन्दी नहीं।

दूसरा बाब

इस दुआ पर ऐतराज़ात व जवाबात में

इस दुआ पर सिर्फ़ चार ऐतराज़ हैं तीन अक़्ली। और एक नक़्ली। इसके सिवा और कोई ऐतराज़ नहीं।

(1) वही पुराना याद किया हुआ सबक़ कि यह दुआ बिदअत है, और हर बिदअत हराम है लिहाज़ा यह दुआ करना हराम है, शिर्क है, बेदीनी है।

जवाब : यह दुआ बिदअत नहीं इसका सुबूत हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के क़ौल व फ़ेअ़ल मुबारक से हो चुका और सहाबए किराम का इस पर अमल रहा। फुक़हा ने इसकी इजाज़त दी जैसा कि इस बहस के पहले बाब में गुज़र गया। और अगर मान भी लिया जाए कि यह बिदअत है तो हर बिदअत हराम नहीं होती। बल्कि बिदअत की पाँच क़िस्में हैं। देखो हमारी बिदअत की बहस।

(2) नमाज़े जनाज़ा में ख़ुद दुआ है फिर दोबारा दुआ माँगना नाजाइज़ है पहली दुआ काफी हो चुकी।

जवाब : यह ऐतराज़ बिल्कुल बेकार है। नमाज़ पंजगाना में दुआ है, नमाज़े इस्तख़ारा, नमाज़े कुसूफ़ और नमाज़े इस्तिस्क़ा सब दुआ के लिए हैं, मगर इन सबके बाद दुआ माँगना जाइज़ बल्कि सुन्नत है। हदीसे पाक में है। **अक्सिरुद्दुआआ** दुआ ज़्यादा माँगो। दुआ के बाद दुआ माँगना ज़्यादा दुआ है। तीसरे इसलिए कि यह तो महज़ दुआ है कुछ सूरतों में तो नमाज़े जनाज़ा के बाद नमाज़े जनाज़ा दोबारा होती है अगर मैयत के वली ने नमाज़ न पढ़ी औरों ने पढ़ ली तो दोबारा पढ़ सकता है। हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का वेसाले मुबारक दोशंबा को हुआ और दफ़न शरीफ़ चहार शंबा को (शामी किताबुस्सलात बाबुल-इमामत) और इन दो रोज़ में लोग जमाअत-ज़माअत आते रहे नमाज़े जनाज़ा अदा करते रहे क्योंकि अब तक सिद्दीक़े अकबर ने जो कि वली थे न पढ़ी थी। फिर जब आख़िरी दिन हज़रत सिद्दीक़े अक्बर ने नमाज़ पढ़ ली। अब ता क़्यामत किसी को जाइज़ न रहा कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम पर नमाज़े जनाज़ा पढ़े। (देखो शामी बाब सलातिल जनाज़ते बहसे व मिन अहक़्क़ु बिल-इमामते) अब कहो कि यह नमाज़ तो दुआ थी वह अदा हो गई। यह दोबारा नमाज़ें कैसी हो रही हैं? यह सवाल तो ऐसा है कि कोई कहे कि खाने के बाद पानी न पियो। क्योंकि खाने में पानी मौजूद है नह पानी ही से पका।

(3) चूंकि दुआ माँगने की वजह से दफ़न में देर होती है और यह हराम है लिहाज़ा यह दुआ भी हराम है।

जवाब : यह ऐतराज़ भी महज़ बेकार है अव्वलन तो इसलिए कि आप

तो इस दुआ को बहरहाल मना करते हैं और इससे मालूम होता है कि अगर दफ़न में देर हो तो मना वरना नहीं। तो बताओ कि अगर अभी क़ब्र तैयार होने में देर है और नमाज़े जनाज़ा हो गई। अब दुआ वग़ैरह पढ़ें या कि नहीं। क्योंकि यहाँ ताख़ीरे दफ़न दुआ से नहीं बल्कि तैयारी क़ब्र की वजह से है। दूसरे इसलिए कि दुआ में ज़्यादा देर नहीं लगती सिर्फ़ दो या तीन मिनट बमुश्किल ख़र्च होते हैं। इस क़द्र ग़ैर महसूस देर का ऐतबार नहीं। इतनी बल्कि इससे ज़्यादा तो रास्ता में आहिस्ता ले जाने और ग़ुस्ल का काम आहिस्ता-आहिस्ता अंजाम देने और क़ब्र को इत्मीनान से खोदने में भी लग जाती है। अगर इस क़दर देर भी हराम हो तो लाज़िम होगा कि ग़ुस्ल व कफ़न देने वाले निहायत बदहवासी से बहुत जल्द यह काम करें। और क़ब्र खोदने वाले मशीन की तरफ़ झट पट क़ब्र खोदें और मैयत को ले जाने वाले इंजन की रफ़्तार भागते हुए जाएं और फ़ौरन फेंक कर आ जाएं। तीसरे इसलिए कि हम पहले बाब में कह चुके हैं कि दफ़न से पहले अह्ले मैयत की ताज़ियत करना, उनको तसल्ली व तशफ़्फ़ी देना जाइज़ बल्कि सुन्नत है। चाहे बाद नमाज़ करे या क़ब्ल नमाज़ तो ताज़ियत के अल्फ़ाज़ कहने और तसल्ली देने में भी देर लगेगी या कि नहीं? ज़रूर लगेगी, मगर चूंकि यह एक दीनी काम के लिए है जाइज़ है। चौथे इसलिए कि हम अभी अर्ज़ कर चुके कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की वफ़ात शरीफ़ दोशंबा को और दफ़न चहार शंबा को हुआ। अल्लामा शामी इसी **किताबुस्सलात बाबुल-इमामत** में यह वाक़िया ब्यान फ़रमा कर फ़रमाते हैं।

यह सुन्नत अब तक बाक़ी है कि ख़लीफ़ा उस वक़्त तक दफ़न नहीं किया जाता जब तक कि दूसरा ख़लीफ़ा न बन जाए, इससे मालूम हुआ कि दफ़न में वह ताख़ीर मकरूह है जो कि दुनियावी वजह से हो, दीनी वजह से क़दरे जाइज़ है कि ख़लीफ़ा बनाना दीनी काम है। इसकी वजह से दफ़न में देर कर दी और दुआ माँगना भी दीनी काम है। अगर कोई नमाज़ी आख़िर में मिले तो वह दुआ पढ़ कर सलाम फ़ेर सकता है। लेकिन अगर नमाज़ के बाद फ़ौरन नअ़श उठाई जाए तो यह शख़्स दुआ पूरी न कर सकेगा। कि उठाए हुए जनाज़े पर नमाज़ नहीं होती। लिहाज़ा दुआ बाद जनाज़ा में मस्बूक़ नमाज़ियों की भी रिआयत है अगर इसके लिए एक ग़ैर महसूस ताख़ीर हो तो जाइज़ है। पाँचवें इसलिए कि दफ़न में मुतलक़न देर करना हराम कहाँ लिखा है? फ़ुक़हा फरमाते हैं कि जुमा के दिन मैयत का इंतिक़ाल हो गया तो नमाज़े जुमा का इंतिज़ार न करे बल्कि अगर मुम्किन हो क़ब्ले जुमा ही दफ़न करे। यह नहीं कहते कि यह इंतिज़ार करना हराम है, शिर्क है। कुफ़्र है मआज़ल्लाह!

(4) नमाज़े जनाज़ा के बाद दुआ को फुक़हा मना करते हैं चुनांचे जामेउर्रमूज़ में है। **ला यक़ूमु दाइयन लहू** नमाज़ के बाद दुआ के लिए न खड़ा रहे। ज़ख़ीरह कुबरा और मुहीत में है **ला यक़ूमु बिद्दुआए बअ़्द सलातिल-जनाज़ते।** नमाज़े जनाज़ा के बाद दुआ के लिए न खड़ा रहे। आलमगीरी में है **ला यदऊ बअ़्दहू फ़ी ज़ाहिरिल-मज़्हबे।** इसके बाद दुआ न करे ज़ाहिरे मज़्हब में। मिर्क़ात शरह मिश्कात में है।

तरजमा : नमाज़े जनाज़ा के बाद मैयत के लिए दुआ न करे क्योंकि यह नमाज़े जनाज़ा में ज़्यादती करने के मुशाबेह है। कश्फुल-ग़ता में है कि नमाज़ के बाद दुआ के लिए खड़ा न रहे। जामेउर्रमूज़ में है। **वला यक़ूमु बिद्दुआए बअ़्दा सलातिल-जनाज़ते लेअन्नहू युश्बेहुज़्ज़ियादता** नमाज़े जनाज़ा के बाद दुआ के लिए न खड़ा रहे क्योंकि यह ज़्यादती के मुशाबेह है। अबू बकर इब्ने हामिद से मरवी है **इन्नद्दुआआ बअ़्दा सलातिल-जनाज़ते मक्रूहुन** नमाज़े जनाज़ा के बाद दुआ मक्रूह है। जामेउर्रमूज़ में है।

वला यक़ूमु बिद्दुआए बाद सलातिल-जनाज़ते लेअन्नहू तुशबेहुज़्ज़ियादता"

नमाज़े जनाज़ा के बाद दुआ के लिए न खड़ा हो क्योंकि यह ज़्यादती के मुशाबेह है। इन फ़िक़्ही इबारात से मालूम हुआ कि नमाज़े जनाज़ा के बाद दुआ वग़ैरह नाजाइज़ है।

जवाब : इस ऐतराज़ के दो जवाब हैं एक इज्माली दूसरा तफ़्सीली। इज्माली जवाब तो यह है कि इस दुआ से मुमानेअत की तीन वज्हें हैं। **अव्वलन :** यह कि चौथी तक्बीर के बाद सलाम से पहले हो। **दोम :** यह कि दुआएं ज़्यादा लम्बी न हों जिससे कि दफन में बहुत ताख़ीर हो। इसीलिए नमाज़े जुमा के इंतिज़ार में दफन में ताख़ीर करना मना है। **तीसरे :** यह कि इसी तरह सफ बस्ता बैअ़त नमाज़ दुआ की जाए कि देखने वाला समझे कि नमाज़ हो रही है कि यह ज़्यादती के मुशाबेह है। लिहाज़ा अगर बाद सलाम बैठ कर या सफ़ें तोड़ कर थोड़ी देर दुआ की जाए तो बिला कराहत जाइज़ है। यह वजूह इस लिए निकाले गए कि फुक़हा की इबारतें आपस में मुतआरिज़ न हों और यह अक़्वाल अहादीसे मज़्कूरा और सहाबए किराम के क़ौल व अमल के ख़िलाफ़ न हों।

तफ़्सीली जवाब यह है कि इबारात में से जामेउर्रमूज़, ज़ख़ीरा मुहीत, कश्फुल-ग़ता की इबारतों में तो दुआ से मुमानेअत ही नहीं बल्कि खड़े हो कर दुआ करने से मना फरमाया है, वह हम भी मना क़रते हैं। मिर्क़ात और जामेउर्रमूज़ में यह भी है कि **लेअन्नहू युशब्बेहुज़्ज़ियादता** यह ज़्यादती के मुशाबेह है यानी इस दुआ से धोखा होता है कि नमाज़े जनाज़ा ज़्यादा हो गई। इससे मालूम हुआ कि इस तरह दुआ माँगना मना है जिसमें ज़्यादती

का धोखा हो। वह यही है कि सफ़ बस्ता खड़े-खड़े दुआ करें। अगर सफ़ तोड़ दी या कि बैठ गए तो हरज नहीं। जैसे कि जमाअत फ़र्ज़ के बाद हुक्म है कि लोग सुफूफ़ तोड़ कर सुन्नतें पढ़ें ताकि किसी को यह धोखा न हो कि जमाअत हो रही है। (देखो शामी और मिश्कात शरीफ़ बाबुस्सुनन) तो इस से यह लाज़िम नहीं कि फ़र्ज़ के बाद सुन्नतें पढ़ना ही मना हैं बल्कि फ़र्ज़ से मिला कर पढ़ना मना है। इसी तरह यह भी है कि आलमीगरी की इबारत ग़लत नक़्ल की। इसकी असल इबारत यह है **व लैसा बअदत्तक्बीरे अर्राबेअते क़ब्लस्सलामे दुआउन** यानी चौथी तक्बीर के बाद सलाम से पहले कोई दुआ नहीं यानी नमाज़े जनाज़ा में पहली तीन तक्बीरों के बाद कुछ न कुछ पढ़ा जाता है मगर इस चौथी तक्बीर के बाद कुछ न पढ़ा जाए जैसा कि हम पहले अर्ज़ कर चुके चुनांचे बिदाए, किफ़ाया, इनायह में है। **लैसा बादत्तक्बीरे अर्राबेअते क़ब्लस्सलामे दुआउन**। अबू बकर इब्ने हामिद की जो इबारत पेश की गई यह कुनीयह की इबारत है मगर कुनीयह ग़ैर मोतबर किताब है इस पर फ़तवा नहीं दिया जाता। **मुक़द्दमा** शामी बहस रस्मुल-मुफ़्ती में है कि साहिबे कुनीयह ज़ईफ़ रिवायात भी लेता है। इस से फ़तवा देना जाइज़ नहीं। वह फरमाते हैं।

आला हज़रत कुद्देस सिर्रहू ने **बज़्लुल-जवाइज़** में फरमाया कि कुनीयह वाला मोतज़ली बद मज़्हब है और अगर कुनीयह की यह इबारत सही मान भी ली जाए तो ख़ुद मुख़ालेफ़ीन के भी ख़िलाफ़ है क्योंकि वह कहते हैं कि नमाज़े जनाज़ा के बाद दुआ करना मना है तो बाद दफ़न भी दुआ नाजाइज़ होना चाहिए। क्योंकि यह वक़्त भी तो नमाज़ के बाद ही है। ग़र्ज़ेकि कोई भी इबारत आपके मुवाफ़िक़ नहीं, दुआ बाद नमाज़े जनाज़ा जाइज़ बल्कि सुन्नत है।

बहस मज़ाराते औलिया पर गुंबद बनाना

मुसलमान दो तरह के हैं एक तो आम मुमिनीन। दूसरे उलमा मशाइख़ औलिया अल्लाह जिनकी ताज़ीम व तौक़ीर दर हक़ीक़त इस्लाम की ताज़ीम है। आम्मतुल-मुस्लेमीन की क़ब्रों को पुख़्ता बनाना या कि उन पर कुब्बा वग़ैरह बनाना चूंकि बे फ़ाइदा है इसलिए मना है हाँ उस पर मिट्टी वग़ैरह डालते रहना ताकि उसका निशान न मिट जाए फ़ातिहा वग़ैरह पढ़ी जा सके जाइज़ है। और उलमा, मशाइख़े इज़ाम औलिया अल्लाह जिनके मज़ारात पर ख़िल्क़त का हुजूम रहता है लोग वहाँ बैठ कर कुरआन ख़्वानी व फ़ातिहा वग़ैरह पढ़ते हैं उनके आसाइश और साहिबे क़ब्र की इज़हारे अज़्मत के लिए आस पास सांया के लिए कुब्बा वग़ैरह बनाना शरअन जाइज़ बल्कि सुन्नते सहाबा से साबित है। और जिन अवामे मोमिनीन की क़बरें पुख़्ता बनाना या

उन पर कुब्बा बनाना मना है अगर उनकी क़ब्रें पुख़्ता बन गई तो उनको गिराना हराम है। पहले मसला में सबका इत्तिफ़ाक़ है आख़िर के दो मसलों में इख़्तिलाफ़। इसलिए हम इस बहस के दो बाब करते हैं पहले बाब में तो इसका सुबूत, दूसरे बाब में मुख़ालेफ़ीन के ऐतराज़ात और उनके जवाबात।

पहला बाब

मज़ाराते औलिया अल्लाह पर इमारत का सुबूत

इस जगह तीन उमूर हैं एक तो ख़ुद क़ब्र को पुख़्ता करना। दूसरे क़ब्रे वली को क़द्रे सुन्नत यानी एक हाथ से ज़्यादा ऊंचा करना। तीसरे क़ब्र के पास इमारत बना देना। फिर क़ब्र को पुख़्ता करने की दो सूरतें हैं। एक तो क़ब्र का अन्दरूनी हिस्सा जो कि मैयत से मिला हुआ है उसको पुख़्ता बनाना दूसरे क़ब्र का बाहरी हिस्सा जो कि ऊपर नज़र आता है उसको पुख़्ता करना।

(1) क़ब्र के अन्दरूनी हिस्सा को पुख़्ता ईंट से पुख़्ता करना, वहाँ लकड़ी लगाना मना है हाँ अगर वहाँ पत्थर या बांस लगाया जाए तो जाइज़ है क्योंकि लकड़ी और ईंट में आग का असर है। क़ब्र का बाहरी हिस्सा पुख़्ता बनाना आम्मतुल-मुस्लेमीन के लिए मना है और ख़ास उलमा व मशाइख़ के लिए जाइज़ है।

(2) क़ब्र का तावीज़ एक हाथ से ज़्यादा ऊंचा करना मना है और अगर आस पास चबूतरा करके उस पर तावीज़ बक़द्रे एक हाथ किया तो जाइज़ है।

(3) क़ब्र के आस पास या क़ब्र के क़रीब कोई इमारत बनाना आम्मतुल-मुस्लेमीन की क़ब्रों पर तो मना है और फ़ुक़हा व उलमा की क़ब्रों पर जाइज़। दलाइल हस्बे ज़ैल हैं।

(1) मिश्कात **किताबुल-जनाइज़ बाबुद्दफ़न।** (स० : 149) में बरिवायत अबू दाऊद है कि जब हुज़ूर संल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत उस्मान इब्ने मज़ऊन को दफन फ़रमाया तो उनकी क़ब्र के सरहाने एक पत्थर नसब फ़रमाया और फ़रमाया कि **आलमु बेहा क़बरा अख़ी व उदफ़िनु इलैहि मन माता मिन अह्ली।** कि हम इससे अपने भाई की क़ब्र का निशान लगाएंगे और इसी जगह अपने अह्ले बैत के मुर्दों को दफ़न करेंगे।

(2) बुख़ारी **किताबुल-जनाइज़ बाबुल-जरीद अलल-क़बरे।** (स० : 182) में तालीक़न है कि हज़रत ख़ारजा फ़रमाते हैं कि हम ज़मानए उस्मान में थे। हम में बड़ा कूदने वाला वह था जो कि उस्मान बिन मज़ऊन की क़ब्र को फलांग ज़ाता। मिश्कात की रिवायत से मालूम हुआ कि उस्मान इब्ने मज़ऊन की क़ब्र के सरहाने पत्थर था। और बुख़ारी की इस रिवायत से मालूम हुआ कि ख़ुद हज़रत उस्मान का तावीज़ उस पत्थर का था। और दोनों रिवायात

इस तरह जमा हो सकती हैं कि मिश्कात में जो आया कि क़ब्र के सरहाने पर पत्थर लगाया इसके माना यह नहीं कि क़ब्र से अलाहिदा सर के क़रीब खड़ा कर दिया था बल्कि मतलब यह है कि ख़ुद क़ब्र में ही सर की तरफ उसको लगाया। या मतलब यह कि सारी क़ब्र उस पत्थर की थी मगर सरहाने का ज़िक्र किया। इन दोनों अहादीस से यह साबित हुआ कि अगर किसी ख़ास क़ब्र का निशान क़ायम रखने के लिए क़ब्र कुछ ऊंची कर दी जाए या पत्थर वग़ैरह से पुख़्तार कर दी जाए तो जाइज़ है ताकि मालूम हो कि यह किसी बुज़ुर्ग की क़ब्र है। इससे पहले दो मसले हल हो गए। और फुक़हा फरमाते हैं कि अगर कोई ज़मीन नर्म हो तो लोहे या लकड़ी के सन्दूक़ में मैयत रख कर दफन करना पड़े तो इसके अन्दरूनी हिस्सा में चारों तरफ़ मिट्टी से कहगल कर दो। (देखो शामी और आलमगीरी वग़ैरह बाब दफ़निल-मैयते) इससे यह भी मालूम हुआ कि क़ब्र को अन्दर से कच्चा होना चाहिए। दो मसाइल साबित हुए।

(3) मशाइख़े किराम औलियाए इज़ाम उलमाए किराम के मज़ारात के इर्द गिर्द या उसके क़रीब में कोई इमारत बनाना जाइज़ है इसका सुबूत कुरआने करीम और सहाबए किराम व आम्मतुल-मुस्लेमीन के अमल और उलमा के अक़्वाल से है कुरआने करीम ने असहाबे कहफ़ का क़िस्सा बयान फरमाते हुए फरमाया।

क़ालल्लज़ीना ग़लबू अला अम्रेहिम लनत्तख़ेज़न्ना अलैहिम मस्जिदन। वह बोले जो इस काम में ग़ालिब रहे कि हम तो उन असहाबे कहफ़ पर मस्जिद बनाएंगे। रूहुल-बयान में इस आयत में **बुनियानन** की तफ़्सीर में फरमाया।

यानी उन्होंने कहा कि असहाबे कहफ पर ऐसी दीवार बनाओ जो उनके क़ब्र के घेरे और उनके मज़ारात लोगों के जाने से महफूज़ हो जाएं जैसे कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की क़ब्र शरीफ़ चार दीवारी से घेर दी गई है। मगर यह बात नामंज़ूर हुई तब मस्जिद बनाई गई। मस्जिदन की तफ़्सीर रूहुल-बयान में है **युसल्ली फ़ीहिल-मुस्लेमूना व यतबर्रकूना बेमकानेहिम।** लोग इसमें नमाज़ पढ़ें और उन से बरकत लें। कुरआन करीम ने उन लोगों की दो बातों का ज़िक्र फरमाया एक तो असहाबे कहफ के गिर्द कुब्बा और मक़्बरह बनाने का मशवरह करना। दूसरे उनके क़रीब मस्जिद बनाना और किसी बात का इंकार न फरमाना। जिससे मालूम हुआ कि दोनों फ़ेअल जब भी जाइज़ थे और अब भी जाइज़ हैं जैसा कि कुतुबे उसूल से साबित है कि **शराए क़ब्लिना यल्ज़ेमुना** हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हज़रत सिद्दीक़ा के हुजरे में दफन किया गया अगर यह नाजाइज़ था तो पहले सहाबा किराम इसको गिरा देते फिर दफन करते। फिर हज़रत उमर रज़ि

अल्लाहु तआला अन्हु ने अपने ज़माना ख़िलाफ़त में उसके गिर्द कच्ची ईंटों की गोल दीवार खिंचवा दी। फिर वलीद इब्ने अब्दुल-मलिक के ज़माना में सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने ज़ुबैर ने तमाम सहाबा किराम की मौजूदगी में ४४ हिजरी में इस इमारत को निहायत मज़्बूत बनाया। और उसमें पत्थर लगवाए।

बुख़ारी जिल्द अव्वल **किताबुल-जनाइज़ बाब मा जाआ फ़ी क़बरिन्नबीये व अबी बकरिन व उमर** में है। हज़रत उरवह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु फ़रमाते हैं कि वलीद इब्ने अब्दुल-मलिक के ज़माना में रौज़-ए-रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की एक दीवार गिर गई। **फ़अख़ज़ू फ़ी बेनाइही** सहाबा किराम उसके बनाने में मश्ग़ूल हुए **फ़बदत लहुम क़दमुन फ़फ़ज़ऊ व ज़न्नू अन्नहा क़दमुन्नबीये अलैहिस्सलामु** एक क़दम ज़ाहिर हो गया तो लोग घबरा गए और समझे कि यह हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का क़दम पाक हज़रत उरवा रज़ि अल्लाहु अन्हु ने कहा कि अल्लाह की क़सम यह हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का क़दम नहीं है। यह हज़रत फ़ारूक़ का क़दम है। **जज़्बुल-कुलूबे इला दियारिल-महबूब।** में शैख़ अब्दुल-हक़ फ़रमाते हैं कि 505 हिज. में जमालुद्दीन अस्फ़हानी ने उलमा–ए–किराम की मौजूदगी में सन्दल की लकड़ी की जाली उस दीवार के आस पास बनाई। और 557 हिज. में बाज़ ईसाई आबिदों की जमाअत मदीना मुनव्वरह में आई और सुरंग लगा कर नअश मुबारक को ज़मीन से निकालना चाहा। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने तीन बार बादशाह को ख़्वाब में फ़रमाया लिहाज़ा बादशाह ने उनको क़त्ल कराया। और रौज़ा के आस पास पानी तक बुनियाद खोद कर सीसा लगा कर उसको भर दिया। फिर 678 हिज. में सुलतान क़लाऊन सालेही ने यह गुंबद सब्ज़ जो अब तक मौजूद है बनवाया।

इन इबारात से यह मालूम हुआ कि रौज़-ए-मुतह्हरा सहाबा किराम ने बनवाया था अगर कोई कहे कि यह तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ख़ुसूसियत है तो कहा जावेगा कि इस रौज़ा में हज़रत सिद्दीक़ व फ़ारूक़े भी दफ़न हैं और हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम भी दफ़न होंगे लिहाज़ा यह ख़ुसूसियत न रही। बुख़ारी जिल्द अव्वल **किताबुल-जनाइज़** और मिश्कात **बाबुल-बुका अलल-मैयत** में है कि हज़रत इमाम हसन इब्ने हसन इब्ने अली रज़ि अल्लाहु अन्हु का इंतिक़ाल हो गया। **ज़रबत इम्रातुहुल-कुब्बता अला क़बरेही सनतन।** तो उनकी बीवी ने उनकी क़ब्र पर एक साल तक कुब्बा डाले रखा। यह भी सहाबा किराम के ज़माना में सबकी मौजूदगी में हुआ। किसी ने इंकार न किया। और उनकी बीवी एक साल तक वहाँ रहीं। फिर घर वापस आईं। जैसा कि इसी हदीस में है। इससे बुज़ुर्गों की क़ब्रों पर मुजाविरों का बैठना भी साबित हुआ।

यहाँ तो क़ुरआन व हदीस से साबित हुआ। अब फ़ुक़हा मुहद्देसीन और

मुफ़स्सेरीन के अक़्वाल मुलाहिज़ा हों। रूहुल–बयान जिल्द 3 पारा 10 ज़ेरे आयत **इन्नमा यामुरू मसाजिदल्लाहे मन आमना बिल्लाहे** में है।

तरजमा : उलमा औलिया सालेहीन की क़ब्रों पर इमारात बनाना जाइज़ काम है जबकि इससे मक़सूद हो लोगों की निगाहों में अज़्मत पैदा करना ताकि लोग उस क़ब्र वाले को हक़ीर न जानें। मिर्क़ात शरह मिश्कात **किताबुल-जनाइज़ बाब दफ़निल-मैयत** में है।

तरजमा : पहले उलमा ने मशाइख़ और उलमा की क़ब्रों पर इमारत बनाना जाइज़ फरमाया है ताकि उनकी लोग ज़ियारत करें और वहाँ बैठ कर आराम पाएं। शैख़ अब्दुल-हक़ मुहद्दिस देहलवी शरह सफरुस्सआदत में फ़रमाते हैं।

आख़िर ज़माना में चूंकि आम लोग महज़ ज़ाहिर बीं रह गए। लिहाज़ा मशाइख़ और सुलहा की क़ब्रों पर इमारत बनाने में मस्लेहत देख कर ज़्यादती कर दी। ताकि मुसलमानों और औलिया अल्लाह की हैबत ज़ाहिर हो ख़ास कर हिन्दुस्तान में कि यहाँ हिन्दू और कुफ़्फ़ार बहुत से दुश्मनाने दीन हैं। इन मक़ामात का आलाए शान कुफ़्फ़ार के रुअब और इताअत का ज़रिआ है और बहुत से काम पहले मक्रूह थे और आख़िर ज़माना में मुस्तहब हो गए। शामी जिल्द अव्वल **बाबुद्दफ़न** में है।

कि अगर मैयत मशाइख़ और उलमा और सादाते किराम में से हो तो उसकी क़ब्र पर इमारत बनाना मक्रूह नहीं है। दुर्रे मुख़्तार में इसी **बाबुद्दफ़न** में है।

ला युरफ़ओ अलैहि बिनाउन व क़ीलुन ला बासा बेही व हुवल-मुख़्तार। क़ब्र पर इमारत न बनाई जाए और कहा गया है कि इसमें कोई हरज नहीं और यही क़ौले पसन्दीदा है। कुछ लोग कहते हैं कि चूंकि शामी और दुर्रे मुख़्तार ने इमारत के जवाज़ को क़ील से बयान किया। इसलिए यह क़ौल ज़ईफ़ है लेकिन यह सही नहीं फ़िक़ह में क़ील अलामते ज़ुअफ़ नहीं। और कुछ जगह एक मसला में दो क़ौल बयान करते हैं और दोनों क़ीला से। हाँ मंतिक़ में क़ीला अलामते ज़ुअफ़ है। क़ीला की मुकम्मल बहस अज़ाने क़ब्र के बयान में देखो।

तहतावी **अला मुराक़ियुल-फ़लाह** सफ़: **335 में है।**

मिस्र के लोग क़ब्रों पर पत्थर रखने के आदी हैं ताकि वह मिटने उखड़ने से महफ़ूज़ रहें और क़ब्र को गच न की जावे न कहगल की जाए, न उस पर इमारत बनाई जाए और कहा गया है कि जाइज़ है और यही मुख़्तार है। मीज़ाने कुबरा आख़िर जिल्द अव्वल **किताबुल-जनाइज़** में इमाम शोअरानी फ़रमाते हैं।

इसी में है दीगर इमामों का यह कहना कि **क़ब्र पर न इमारत बनाई जाए**

और न उसको गच की जाए। बावजूद कि इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु का यह क़ौल है कि यह सब जाइज़ है लिहाज़ा पहले क़ौल में सख़्ती है और दूसरे में आसानी।

अब तो रेजस्ट्री हो गई कि ख़ुद इमाम मज़हब इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का फरमान मिल गया कि क़ब्र पर कुब्बा वग़ैरह बनाना जाइज़ है।

अल्हम्दुलिल्लाह कि कुरआन व हदीस और फ़िक़्ही इबारात बल्कि ख़ुद इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु के फरमान पाक से साबित हो गया कि औलिया व उलमा की कुबूर पर गुंबद वग़ैरह बनाना जाइज़ है। अक़्ल भी चाहती है कि यह जाइज़ हो चन्द वजूह से अव्वलन तो यह कि देखा गया है कि आम कच्ची क़ब्रों का अवाम की निगाह में न अदब होता है, न एहतराम और न ज़्यादा फ़ातिहा ख़्वानी न कुछ एहतमाम बल्कि लोग पैरों से उसको रौंदते हैं। और अगर किसी क़बर को पुख़्ता देखते हैं ग़िलाफ़ वग़ैरह पड़ा हुआ पाते हैं समझते हैं कि यह किसी बुज़ुर्ग की क़ब्र है। इससे बच कर निकलते हैं और ख़ुद बख़ुद फ़ातिहा को हाथ उठ जाता है। और मिश्कात **बाबुद्दफ़न** में और मिर्क़ात में है कि मुसलमान का ज़िन्दगी और बाद मौत यक्साँ अदब चाहिए। इसी तरह आलमगीरी **किताबुल-कराहियत** और अश्अतुल-लम्आत **बाबुद्दफ़न** में है कि वालिदैन की क़ब्र को चूमना जाइज़ है। इसी तरह फुक़हा फरमाते हैं कि क़ब्र से इतनी दूर बैठे जितनी दूर कि साहिबे क़ब्र की ज़िन्दगी में उससे बैठता। इससे मालूम हुआ कि मैयत का एहतराम बक़द्रे ज़िन्दगी के एहतराम के है और औलिया अल्लाह तो ज़िन्दगी में वाजिबुत्ताज़ीम थे लिहाज़ा बाद मौत भी। और क़ब्र की इमारत इस ताज़ीम का ज़रिआ है लिहाज़ा कम अज़ कम मुस्तहब है। दूसरे इसलिए कि जिस तरह तमाम इमारात में सरकारी इमारतें या कि मसाजिद मुम्ताज़ रहती हैं कि उनको पहचान कर लोग इससे फ़ाइदा उठाएं। उलमा को चाहिए कि अपनी वज़अ क़तअ लिबास सूरत अह्ले इल्म का सा रखें ताकि लोग उनको पहचान कर मसाइल दरयाफ़्त करें। इसी तरह चाहिए कि उलमा व मशाइख़ के कुबूर आम क़ब्रों से मुम्ताज़ हैं ताकि लोग पहचान कर उन से फ़ैज़ लें। तीसरे इसलिए कि मक़ाबिरे औलिया अल्लाह शआइरिल्लाह हैं जैसा कि हम इससे पहले तफ़्सीरे रूहुल-बयान के हवाला से बयान कर चुके हैं और शआइरिल्लाह का अदब ज़रूरी है। कुरआन से साबित है लिहाज़ा क़ब्रों का अदब चाहिए। अदब के हर मुल्क और हर ज़माना में अलाहिदा तरीक़े होते हैं। जो तरीक़ा भी अदब का ख़िलाफ़े इस्लाम न हो वह जाइज़ है। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना पाक में कुरआन पाक हड्डियों और चमड़े पर लिखा था, मस्जिदे नबवी कच्ची थी और छत में खुजूर के पत्ते थे कि

बारिश में टपकती थी। मगर बाद के ज़माना में मस्जिदे नववी निहायत शानदार और रौज़ा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बहुत एहतमाम से बनाए गए और कुरआन को अच्छे काग़ज़ पर छापा गया।

दुर्रे मुख़्तार **किताबुल-कराहियत फ़स्ल फ़िल-बैयअ** में है।

व **जाज़ा नहलियतुल-मुस्हफ़े लेमा फ़ीहे मिन ताज़ीमेही कमा फ़ी नक़्शिल-मस्जिदे।** इसके मा तहत शामी में है। **ऐ बिज़्ज़हबे वल-फ़िज़्ज़ते** यानी कुरआने करीम को चाँदी सोने से आरास्ता करना जाइज़ है क्योंकि इसमें इसकी ताज़ीम है जैसा कि मस्जिद की नक़्शें करना। इसी तरह सहाबा किराम के ज़माना में हुक्म था कि कुरआन को आयात और रुकूअ और ऐराब से ख़ाली रखो। लेकिन इस ज़माना के बाद चूंकि ज़रूरत दर पेश हुई। यह तमाम काम जाइज़ बल्कि ज़रूरी हो गए। शामी में इसी जगह है।

इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से जो मरवी है कि कुरआन को ऐराब वग़ैरह से खाली रखो यह उस ज़माना में था और बहुत सी चीजें ज़माना और जगह बदलने से बदल जाती हैं। इसी मक़ाम पर शामी में है कि कुरआन को छोटा करके न छापो यानी हमाइल न बनाओ बल्कि उसका क़लम मोटा हो, हर्फ़ कुशादा हों, तक़्तीअ़ बड़ी हो। यह सारे अहकाम क्यों हैं? सिर्फ़ कुरआन की अज़मत के लिए। इसी तरह यह भी है अव्वल ज़माना में तालीम व कुरआन व अज़ान व इक़ामत पर उजरत लेना हराम था हदीस व फ़िक़्ह में मौजूद है। मगर बाद को ज़रूरतन जाइज़ किया गया हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना में ख़ुद ज़िन्दा लोगों को पुख़्ता मकान बनाने की मुमानेअत थी। एक सहाबी ने पुख़्ता मकान बनाया तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम नाराज़ हुए। यहाँ तक कि उनके सलाम का जवाब न दिया। जब उसको गिरा दिया तब ज़वाबे सलाम दिया। (देखो मिश्कात किताबुर्रेक़ाक़ फ़स्ले सालिस) इसी मिश्कात **किताबुर्रेक़ाक़** (स० : 444) में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया **इज़ा लम युबारक लिल-अब्दे फ़ी मालेही जअलहू फ़िल-माए वत्तीने।** जब बन्दे के माल में बेबरकती होती है तो उसको ईंट गारे में ख़र्च करता है। लेकिन इन अहकाम के बावजूद आम मुसलमानों ने बाद में पुख़्ता मकान भी बनाए और मस्जिदें भी। तअज्जुब है कि जो हज़रात औलिया अल्लाह की क़ब्रों के पुख़्ता करने या उन पर कुब्बा बनाने को हराम कहते हैं वह अपने मकान क्यों उम्दा और पुख़्ता बनाते हैं। **अफ़तुमेनूना बिबाज़िल-किताबे व तक्फुरूना बिबाज़िन।** क्या कुछ हदीसों पर ईमान है और बाज़ का इंकार। अल्लाह समझ दे। चौथे इसलिए कि औलिया अल्लाह के मक़ाबिर का पुख़्ता होना। इन पर इमारत क़ायम होना तबलीग़े इस्लाम का ज़रिआ है। अजमेर शरीफ़ वग़ैरह में देखा गया है कि मुसलमानों से ज़्यादा वहाँ हिन्दू और दीगर कुफ़्फ़ार ज़ियारत को जाते हैं

बहुत से हिन्दुओं और राफ़ज़ीयों को मैंने देखा कि ख़्वाजा साहब की धूम धाम देख कर मुसलमान हो गए।

हिन्दुस्तान में अब कुफ़्फ़ार मुसलमानों के इन औक़ाफ़ पर क़ब्ज़ा कर रहे हैं जिनमें कोई अलामत न हो। बहुत सी मस्जिदें, ख़ानक़ाहें, क़ब्रिस्तान बेनिशान हो कर उनके क़ब्ज़े में पहुँच गए। अगर क़ब्रिस्तान की सारी क़ब्रें कच्ची हों तो वह कुछ दिन में गिर कर बराबर हो जाती हैं और सादा ज़मीन पर कुफ़्फ़ार क़ब्ज़ा जमा लेते हैं लिहाज़ा अब सख़्त ज़रूरत है कि हर क़ब्रिस्तान में कुछ क़ब्रें पुख़्ता हों ताकि उन से उस ज़मीन का क़ब्रिस्तान होना बल्कि उसके हुदूद मालूम रहें।

मैंने अपने वतन में ख़ुद देखा कि मुसलमानों के दो क़ब्रिस्तान भर चुके थे एक में बजुज़ दो तीन क़ब्रों के सारी क़ब्रें कच्ची थीं। दूसरे क़ब्रिस्तान के कुछ हिस्सा में पुख़्ता क़ब्रें भी थीं। मुसलमान फ़क़ीरों ने यह दोनों क़ब्रिस्तान ख़ुफ़िया तौर पर फ़रोख़्त कर दिए जिस पर मुक़द्दमा चला। पहला क़ब्रिस्तान तो सिवाए पुख़्ता क़ब्रों के मुकम्मल तौर पर मुसलमानों के क़ब्ज़ा से निकल गया। क्योंकि हुक्काम ने इसे सफ़ेदा ज़मीन माना। दूसरे क़ब्रिस्तान का आधा हिस्सा जहाँ तक पुख़्ता क़ब्रें थीं मुसलमानों को मिला। बाक़ी दो हिस्सा जिसमें में सारी क़ब्रें कच्ची थीं और मिट चुकी थीं कुफ़्फ़ार के पास पहुँच गया। क्योंकि इस क़ब्रिस्तान के हुदूद पुख़्ता क़ब्रों की हद से क़ाइम किए गए। बाक़ी का बैआना दुरुस्त माना गया। इससे मुझे पता लगा कि अब हिन्दुस्तान में कुछ क़ब्रें पुख़्ता ज़रूर बनवानी चाहिएं। क्योंकि यह बक़ाए वक़्फ़ का ज़रिआ हैं जैसे मस्जिद के लिए मीनारे।

दूसरा बाब

इमारते क़ुबूर पर ऐतराज़ात व जवाबात में

मुख़ालेफ़ीन के इस मसला पर सिर्फ़ दो ही ऐतराज़ हैं। अव्वल तो यह कि मिश्कात **बाबुद्दफ़न** (स० : 148) में बरिवायत मुस्लिम है।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने मना फ़रमाया इससे कि क़ब्रों पर गच की जाए और इससे कि उस पर इमारत बनाई जाए और इससे कि उस पर बैठा जाए। और आम फ़ुक़हा फ़रमाते हैं कि **युक्रेहुल बेनाओ अलल-क़ुबूरे** इस हदीस से मालूम हुआ कि तीन काम हराम हैं क़ब्र का पुख़्ता बनाना, क़ब्र पर इमारत बनाना और क़ब्र पर मुजाविर बन कर बैठना।

जवाब : क़ब्र को पुख़्ता करने से मना होने की तीन सूरतें हैं एक तो यह कि क़ब्र का अन्दरूनी हिस्सा जो कि मैयत की तरफ़ है उसको पुख़्ता किया जाए। इसी लिए हदीस में फ़रमाया गया **अन युजस्ससल-क़ुबूरु** यह न फ़रमाया गया **अलल-क़ुबूरे** दूसरे यह कि आम्मतुल-मुस्लेमीन की पुख़्ता की

जाए क्योंकि यह बेफाइदा है। तो माना यह हुए कि हर क़ब्र को यह पुख़्ता बनाने से मना फरमाया। तीसरे यह कि क़ब्र को सजावट, तकल्लुफ़ या फ़ख़्र के लिए पुख़्ता किया। यह तीनों सूरतें मना हैं और अगर निशान बाक़ी रखने के लिए किसी वलीयुल्लाह की क़ब्र पुख़्ता की जाए तो जाइज़ है क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने उस्मान इब्ने मज़ऊन की क़ब्र पुख़्ता पत्थर की बनाई। जैसा कि पहले बाब में अर्ज़ किया गया। लम्आत में इसी **अन युजस्ससल-कुबूरू।** के मातहत है। **लेमा फ़ीहे मिनज़्ज़ीनते वत्तकल्लुफ़े।** क्योंकि इसमें महज सजावट और तकल्लुफ़ है जिससे मालूम हुआ कि अगर इसलिए न हो तो जाइज़ है **अन युबना अलैहि** यानी क़ब्र पर इमारत बनाना मना फरमाया है इसके भी चन्द मानी हैं अव्वलन तो यह कि ख़ुद क़ब्र पर इमारत बनाई जाए। इस तरह कि क़ब्र दीवार में शामिल हो जाए। चुनांचे शामी **बाबुद्दफ़न** में है।

क़ब्र को एक हाथ से ज़्यादा ऊंचा करना मना है। क्योंकि मुस्लिम में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने क़ब्र को पुख़्ता करने और उस पर कुछ बनाने से मना फरमाया। दुर्रे मुख़्तार इसी बाब में है।

क़ब्र पर मिट्टी से ज़्यादा करना मना है क्योंकि यह इमारत बनाने के दरजा में है। इससे मालूम हुआ कि क़ब्र पर बनाना यह है कि क़ब्र दीवार में आ जाए। और गुंबद बनाना यह **हौलुल-क़बरे** यानी क़ब्र के इर्द गिर्द बनाना है। यह मना नहीं। दूसरे यह कि यह हुक्म आम्मतुल-मुस्लेमीन की क़ब्रों के लिए है। तीसरे यह इस बनाने की तफ़्सीर ख़ुद दूसरी हदीस ने कर दी जो कि मिश्कात **बाबुल-मसाजिद** (स० : 72) में है।

ऐ अल्लाह मेरी क़ब्र को बुत न बनाना जिसकी पूजा की जाए। उस क़ौम पर ख़ुदा का सख़्त ग़ज़ब है जिसने अपने पैग़म्बरों की क़ब्रों को मस्जिद बना लिया।

इससे मालूम हुआ कि किसी क़ब्र को मस्जिद बनाना उस पर इमारत बना कर उसकी तरफ नमाज़ पढ़ना हराम है। यही इस हदीस से मुराद है क़ब्रों को न बनाओ मस्जिद। क़ब्र को मस्जिद बनाने के यह मानी हैं कि उसकी इबादत की जाए। या कम अज़ कम उसको क़िब्ला बना कर उसकी तरफ सज्दा किया जाए। अल्लामा इब्ने हजर अस्क़लानी **फ़त्हुल-बारी शरह बुख़ारी** में फरमाते हैं।

बैज़ावी ने फरमाया कि जबकि यहूद व नसारा पैग़म्बरों की क़ब्रों को ताज़ीमन सज्दा करते थे और उसको क़िब्ला बना कर उसकी तरफ नमाज़ पढ़ते थे और उन क़ुबूर को उन्होंने बुत बना रखा था लिहाज़ा उस पर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने लानत फरमाई और मुसलमानों को इससे मना फरमाया। यह हदीसे मोतरिज़ की पेश करदा हदीस की तफ़्सीर हो गई।

मालूम हो गया कि कुब्बा बनाने से मना नहीं फरमाया बल्कि क़ब्र को सज्दागाह बनाने से मना फरमाया। चौथे यह कि यह मुमानेअत हुक्मे शरई नहीं है बल्कि जुहद व तक़्वा की तालीम है जैसे कि हम पहले बाब में अर्ज़ कर चुके। कि रहने के मकानात को पुख़्ता करने से भी रोका गया बल्कि गिरा दिए गए। पाँचवीं यह कि जब बनाने वाले का यह ऐतक़ाद हो कि इस इमारत से मैयत को राहत या फ़ाइदा पहुँचता है तो मना है कि यह ग़लत ख़्याल है और अगर ज़ाइरीन की राहत के लिए इमारत बनाई जाए तो जाइज़ है।

हमने यह तौजीहें इसलिए कीं कि बहुत से सहाबा किराम ने ख़ास-ख़ास क़ब्रों पर इमारात बनाई हैं यह फ़ेअ़्ल सुन्नते सहाबा है। चुनांचे हज़रत फ़ारूक़ ने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की क़ब्रे अनवर के गिर्द इमारत बनाई। सैयदना इब्ने ज़ुबैर ने उस पर ख़ूबसूरत इमारत बनाई। इमाम ज़ैनुल-आबेदीन की बीवी ने अपने शौहर की क़ब्र पर कुब्बा डाला जिसको हम बहवाला मिश्कात **बाबुल-बुका** से नक़्ल कर चुके। ज़ौज-ए-इमाम ज़ैनुल-आबेदीन के फ़ेअ़्ल के मातहत मुल्ला अली क़ारी मिर्क़ात शरह मिश्कात बाबुल-बुका में फरमाते हैं।

तरजमा : ज़ाहिर यह है कि यह कुब्बा दोस्तों और सहाबा के जमा होने के लिए था ताकि ज़िक्रुल्लाह और तिलावते कुरआन करें और दुआए मग़्फ़िरत करें लेकिन इन बीबी के इस काम को महज़ बेफ़ाइदा बनाना जो कि मक्रूह है यह अह्ले बैत की शान के ख़िलाफ़ है।

साफ़ मालूम हुआ कि बिला फ़ाइदा इमारत बनाना मना और ज़ाइरीन के आराम के लिए जाइज़ है। और हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने हज़रत ज़ैनब बिन्ते जहश रज़ि अल्लाहु अन्हा की क़ब्र पर कुब्बा बनाया। हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा ने अपने भाई अब्दुर्रहमान की क़ब्र पर और मुहम्मद इब्ने हन्फ़ीया ने अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुम की क़ब्र पर कुब्बा बनाया। मुंतक़ा शरह मुअत्ता इमाम मालिक में अबू अब्द सुलेमान अलैहिर्रहमा फरमाते हैं।

तरजमा : हज़रत उमर ने ज़ैनब बिन्ते जहश की क़ब्र पर कुब्बा बनाया। हज़रत आइशा ने अपने भाई अब्दुर्रहमान की क़ब्र पर कुब्बा बनाया। मुहम्मद इब्ने हन्फ़ीया (इब्ने हज़रत अली) ने इब्ने अब्बास की क़ब्र पर कुब्बा बनाया रज़ि अल्लाहु अन्हुम और जिसने कुब्बा बनाना मक्रूह कहा है तो उसके लिए कहा जो कि उसको फ़ख़्र व तकब्बुर के लिए बनाए।

बिदाएउस्सनाए जिल्द अव्वल सफ़: 320 में है।

तरजमा : जबकि ताइफ़ में इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु का इंतिक़ाल हुआ। तो उन पर मुहम्मद इब्ने हन्फ़ीया ने नमाज़ पढ़ी और उनकी क़ब्र ढलवान बनाई और क़बर पर कुबा बनाया।

ऐनी शरह बुख़ारी में है। **ज़रबहू मुहम्मदु इब्नुल-हन्फ़ीयते अला क़बरे इब्ने अब्बासिन।** इन सहाबा किराम ने यह फ़ेअल किए और सारी उम्मत रौज़-ए-रसूल अलैहिस्सलाम पर जाती रही। किसी मुहद्दिस किसी फ़क़ीह किसी आलिम ने इस रौज़ा पर ऐतराज़ न किया। लिहाज़ा इस हदीस की वही तौजीहें की जाएं जो कि हमने कीं। क़बर पर बैठने के माना हैं क़बर पर चढ़ कर बैठना मना है। न कि वहाँ मुजाविर बनना। मुजाविर बनना तो जाइज़ है। मुजाविर उसी को कहते हैं जो कि क़बर का इंतिज़ाम रखे। खोलने बन्द करने की चाबी अपने पास रखे वग़ैरह वग़ैरह। यह सहाबा किराम से साबित है। हज़रत आइशा सिद्दीक़ा मुसलमानों की वालिदा हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की क़ब्रे अनवर की मुंतज़ेमा और चाबी वाली थीं। जब सहाबा किराम को ज़ियारत करनी होती तो उन से ही खुलवा कर ज़ियारत करते। (देखो मिश्कात बाबुद्दफ़न) आज तक रौज़-ए-मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम पर मुजाविर रहते हैं किसी ने उनको नाजाइज़ न कहा।

(2) मिश्कात **बाबुद्दफ़न** (स० : 148) में है।

अबू हयाज असदी से मरवी है कि मुझ से हज़रत अली रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने फ़रमाया कि क्या मैं तुमको इस काम पर न भेजूँ। जिस पर मुझको हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने भेजा था वह यह कि तुम कोई तस्वीर न छोड़ो मगर मिटा दो। और न कोई ऊंची क़ब्र मगर उसको बराबर कर दो। बुख़ारी जिल्द दोम **किताबुल-जनाइज़ बाबुल-जरीदे अलल-क़बरे।** (स० : 181) में है।

इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने अब्दुर्रहमान की क़ब्र पर कुब्बा ख़ेमा देखा। लिहाज़ा आपने फ़रमाया कि ऐ लड़के इसको अलाहिदा कर दो। क्योंकि उन पर उनके अमल साया कर रहे हैं इन दोनों हदीसों से मालूम हुआ कि अगर किसी क़ब्र पर इमारत बनी हो या कि क़ब्र ऊंची हो तो उसको गिरा देना चाहिए।

नोट ज़रूरी : इस हदीस को आड़ बना कर नज्दी वहाबियों ने सहाबा किराम और अह्ले बैत के मज़ारात को गिरा कर ज़मीन के बराबर कर दिया।

जवाब : जिन क़ब्रों को गिरा देने का हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने हुक्म दिया है वह कुफ़्फ़ार की क़ब्रें थीं। न कि मुस्लेमीन की। इसकी चन्द वज्हें हैं। अव्वलन तो यह कि हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैं तुमको उस काम के लिए भेजता हूँ जिसके लिए मुझे हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने भेजा था। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना में जिन क़ब्रों को हज़रत अली ने गिराया वह मुसलमानों की क़ब्रें नहीं हो सकतीं। क्योंकि हर सहाबी के दफ़न में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम

शिरकत फरमाते थे। और सहाबा किराम कोई काम भी हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के बग़ैर मशवरा के न करते थे लिहाज़ा उस वक़्त जिस क़दर क़ुबूरे मुस्लेमीन बनीं वह या तो हुज़ूर की मौजूदगी में या आपकी इजाज़त से। तो वह कौन से मुसलमानों की क़ब्रें थीं जो कि नाजाइज़ बन गईं और उनको मिटाना पड़ा। हाँ ईसाई की क़ुबूर ऊंची होती थीं। बुख़ारी शरीफ़ में मस्जिदे नबवी की तामीर के बयान में है। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने मुश्रेकीन की क़ब्रों का हुक्म दिया पस उखेड़ दी गईं। शैख़ इब्ने हजर मक्की **फ़त्हुल-बारी** जिल्द दोम सफ: 260 में फरमाते हैं।

क्या जाहीलीयत के मुश्रेकीन की क़ब्रें उखेड़ दी जाएं (बाब) फरमाते हैं यानी मा सिवा अंबिया और उनके मुत्तबईन के क्योंकि उनकी क़ब्रें ढाने में उनकी तौहीन है। दूसरी जगह फ़रमाते हैं।

इस हदीस में इस पर दलील है कि जो क़ब्रिस्तान मुल्क में आ गया उसमें तसर्रुफ़ करना जाइज़ है और पुरानी क़ब्रें उखाड़ दी जाएं बशर्तेकि इज्ज़त वाली न हों।

इस हदीस और इसकी शरह ने मुख़ालिफ़ की पेश करदा हदीस अली रज़ि अल्लाहु अन्हु की तफ़्सीर कर दी। कि मुश्रिक की क़ब्रें गिराई जाएं। दूसरे इसलिए कि इसमें क़ब्र के साथ फोटो का क्यों ज़िक्र है मुसलमान की क़ब्र पर फोटो कहाँ होता है? मालूम हुआ कि कुफ़्फ़ार की क़ब्रें ही मुराद हैं क्योंकि उनकी क़बरों पर मैयत का फ़ोटो भी होता है। तीसरे इसलिए कि फरमाते हैं कि ऊंची क़ब्र को ज़मीन के बराबर कर दो। और मुसलमान की क़ब्र के लिए सुन्नत है कि ज़मीन से एक हाथ ऊंची रहे। उसको बिल्कुल पैवन्द ज़मीन करना ख़िलाफ़े सुन्नत है। मानना पड़ेगा कि वह क़ुबूरे कुफ़्फ़ार थीं वरना तअज्जुब है कि सैयदना अली तो ऊंची क़ब्रें उखुड़वाएं और उनके फ़रज़न्द मुहम्मद इब्ने हन्फ़ीया इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हुमा की क़ब्र पर कुब्बा बनाएं। अगर किसी मुसलमान की क़ब्र ऊंची बन भी गई। तब भी उसको नहीं उखेड़ सकते क्योंकि उसमें मुसलमान की तौहीन है। अव्वलन ऊंची न बनाओ। मगर जब बन जाए तो न मिटाओ। कुरआन पाक छोटा साइज़ छापना मना है। देखो शामी **किताबुल-कराहियत**। मगर जब छप गया तो उसको न फेंको न जलाओ। क्योंकि इसमें कुरआन की बेअदबी है। अहादीस में वारिद है कि मुसलमान की क़ब्र पर बैठना वहाँ पाखाना करना, वहाँ जूता से चलना वैसे भी उस पर चलना फिरना मना है। मगर अफ़्सोस है कि नज्दी ने सहाबा किराम के मज़ारात गिराए और मालूम हुआ है कि अब जद्दा में अँग्रेज़ ईसाइयों की ऊंची-ऊंची क़ब्रें बराबर बन रही हैं। **सदक़ा व रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यक़्तुलूना अहलल-इस्लामे व यत्रुकूना अहलल- असनाम।** हर एक को अपनी जिन्स से मुहब्बत होती है।

हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु की हदीस से सनद लाना महज़ बेजा है। वह तो ख़ुद फरमा रहे हैं कि मैयत पर आमाल का साया काफी है। जिससे मालूम हुआ कि अगर मैयत पर साया करने के लिए कुब्बा बनाया तो मना है। ज़ाइरीन के आराम के लिए बनाया तो जाइज़ है। ऐनी शरह बुख़ारी इसी हदीस के मातहत फरमाते हैं।

इधर इशारा है कि क़ब्र पर सहीह ग़रज़ के लिए ख़ेमा लगाना जैसे कि ज़िन्दों को धूप से बचाने के लिए न कि मैयत को साया करने के लिए जाइज़ है। इसका तजरबा ख़ुद मुझको इस तरह हुआ कि मैं एक दफ़ा दोपहर के वक़्त एक घन्टा के लिए सियालकोट गया। बहुत शौक़ था कि मुल्ला अब्दुल-हकीम फ़ाज़िल सियालकोटी अलैहिर्रहमा के मज़ार पर फ़ातिहा पढ़ूँ, क्योंकि उनके हवाशी देखने का अक्सर मश्ग़ला रहा वहाँ पहुँचा, क़ब्र पर कोई साइबान न था, ज़मीन गर्म थी, धूप तेज़ थी, बमुश्किल तमाम चन्द आयात पढ़ कर फौरन वहाँ से हटना पड़ा, जज़्ब-ए-दिल दिल ही में रह गया उस दिन मालूम हुआ कि मज़ारात पर इमारात बहुत फ़ाइदा मन्द हैं। तफ़्सीरे रूहुल-बयान पारा 26 सूरः फ़तह ज़ेरे आयत **इज़ युबाएऊनका तहतश्शजरते** कि बाज़ लोग कहते हैं कि चूंकि आज कल लोग औलिया अल्लाह की क़ब्रों की ताज़ीम करते हैं लिहाज़ा हम इन क़ब्रों को गिराएंगे ताकि यह लोग देख लें कि औलिया अल्लाह में कोई कुदरत नहीं है। वरना वह अपनी क़ब्रों को गिरने से बचा लेते।

तो जान लो कि यह काम ख़ालिस कुफ़्र है फ़िरऔन के इस क़ौल से माख़ूज़ है कि छोड़ दो मुझको मैं मूसा को क़त्ल कर दूँ वह अपने ख़ुदा को बुला ले मैं ख़ौफ़ करता हूँ कि तुम्हारा दीन बदल देगा या ज़मीन में फ़साद फ़ैला देगा। मुझ से एक बार किसी ने कहा कि अगर औलिया अल्लाह या सहाबा किराम में कुछ ताक़त थी तो नज्दी वहाबियों से अपनी क़ब्रों को क्यों न बचाया? मालूम हुआ कि यह महज़ मुर्दे हैं फिर उनकी ताज़ीम व तौक़ीर कैसी? मैंने कहा कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से पहले काबा मुअज़्ज़मा में तीन सौ साठ बुत थे और अहादीस में है कि क़रीब क़्यामत एक शख़्स काबा शरीफ़ को गिरा देगा आज लाहौर में मस्जिद शहीद गंज सिखों का गुरुद्वारा बन गई। बहुत सी मस्जिद हैं जो कि बर्बाद कर दी गईं। तो अगर हिन्दू कहें कि अगर ख़ुदा में ताक़त थी तो उसने अपना घर हमारे हाथों से क्यों न बचा लिया? औलिया अल्लाह या उनकी मक़ाबिर की ताज़ीम उनकी महबूबियत की वजह से की जाती है न कि महज़ कुदरत से। जैसे कि मसाजिद और काबा मुअज़्ज़मा की ताज़ीम। इब्ने मसऊद ने बहुत सी मस्जिदें भी गिरा दीं जैसे कि मस्जिद सैयदना बिलाल कोहे सफ़ा पर वग़ैरह वग़ैरह।

बहस 14 मज़ारात पर फूल डालना चादरें चढ़ाना चिराग़ाँ करना

इस बहस में तीन मसाइल हैं क़ब्रों पर फूल डालना, चादरें चढ़ाना, चिराग़ां करना, उलमा-ए-अह्ले सुन्नत का फरमान है कि फूल डालना तो हर मोमिन की क़ब्र पर जाइज़ है ख़्वाह वलीयुल्लाह हो या गुनहगार और चादरें डालना, औलिया उलमा सुलहा की कुबूर पर जाइज़ अवाम मुस्लेमीन की कुबूर पर नाजाइज़ क्योंकि यह बेफ़ाइदा है। क़ब्र पर चिराग़ जलाना इसमें तफ़्सील है। आम मुसलमानों की क़ब्र पर तो बिला ज़रूरत नाजाइज़ है। और ज़रूरतन जाइज़ है और औलिया अल्लाह की कुबूर पर साहिबे मज़ार की अज़्मते शान के इज़्हार के लिए भी जाइज़ है। ज़रूरत तीन हैं या तो रात में मुर्दे को दफ़न करना है। रौशनी की ज़रूरत है जाइज़ है। क़ब्र रास्ता के किनारे पर है तो उस पर इसलिए चिराग़ जला देना कि किसी को ठोकर न लगे या कोई ख़बर पा कर फ़ातिहा पढ़े तो जाइज़ है या कोई शख़्स शब में किसी मुसलमान की क़ब्र पर गया वहाँ कुछ कुरआन वग़ैरह देख कर पढ़ना चाहता है रौशनी करे जाइज़ है अगर इन में से कोई बात भी नहीं तो चिराग़ जलाना फ़ुज़ूल ख़र्ची और फिज़ूलख़र्ची है लिहाज़ा मना। मज़ाराते औलिया अल्लाह पर अगर उनमें से कोई ज़रूरत भी न हो तब भी ताज़ीमे वली के लिए जाइज़ है। चाहे एक चिराग़ जलाए या चन्द। इन तीनों बातों का मुख़ालेफ़ीन इंकार करते हैं। इसलिए इस बसह के दो बाब किए जाते हैं। पहले बाब में इनका सुबूत और दूसरे बाब में इस पर ऐतराज़ात व जवाबात।

पहला बाब

इनके सुबूत में

हम इससे पहले बहस में अर्ज़ कर चुके हैं कि औलिया अल्लाह और उनके मज़ारात शआइरिल्लाह हैं। और शआइरिल्लाह यानी अल्लाह के दीन की निशानियों की ताज़ीम करने का कुरआनी हुक्म है।

व मन युअज़्ज़िमु शआइरल्लाहे फ़इन्नहा मिन तक़्वल-कुलूबे। इस ताज़ीम में कोई क़ैद नहीं हर मुल्के हर रस्मे। जिस मुल्क में और जिस ज़माना में जो भी जाइज़ ताज़ीम मुरव्विज है वह करना जाइज़ है। उनकी क़ब्रों पर फूल डालना, चादरें चढ़ाना, चिराग़ां करना सब में उनकी ताज़ीम है लिहाज़ा जाइज़ है। तर फूल में चूंकि ज़िन्दगी है इसलिए वह तस्बीह व तहलील करता है। जिससे मैयत को सवाब होता है या उसके अज़ाब में कमी होती है। ज़ाइरीन को ख़ुशबू हासिल होती है लिहाज़ा यह हर मुसलमान की क़ब्र पर डालना जाइज़ है। अगर मुर्दे को अज़ाब हो रहा है तो उसकी तस्बीह

की बरकत से कम होगा। इसकी असल वह हदीस है जो मिश्कात **बाब आदाबिल-ख़ला** फ़स्ले अव्वल (स० : 42) में है कि एक बार हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का दो क़ब्रों पर गुज़र हुआ फरमाया कि इन दोनों मैयतों को अज़ाब हो रहा है। उनमें एक तो पेशाब की छींटों से नहीं बचता था और दूसरा चुग़ली किया करता था।

फिर आपने तर शाख़ ली और उसको चीर कर हर क़ब्र में एक-एक गाड़ दी लोगों ने अर्ज़ किया कि आपने यह क्यों किया? तो फरमाया कि जब तक यह ख़ुश्क न हों तब तक इनके अज़ाब में कमी रहे। इसकी शरह में इमाम नुववी फरमाते हैं।

कहा गया है कि इसलिए अज़ाब कम होगा कि जब तक नम रहेंगी तस्बीह पढ़ेंगी इस हदीस से उलमा ने क़ब्र के पास कुरआन पढ़ने को मुस्तहब फरमाया क्योंकि तिलावते कुरआन शाख़ की तस्बीह से ज़्यादा उसकी हक़्दार है कि इससे अज़ाब कम हो। अश्इतुल-लम्आत में इसी हदीस के मातहत है।

इस हदीस से एक जमाअत दलील पकड़ती है क़ब्रों पर सब्ज़ी फूल और ख़ुश्बू डालने के जवाज़ में। मिर्क़ात में इसी हदीस की शरह में है।

मालूम हुआ कि मज़ारों पर तर फूल डालना सुन्नत है। तहतावी **अला मुराक़ियुल-फ़लाह** सफ़: 364 में है।

हमारे कुछ मुताख़्ख़िरीन असहाब ने इस हदीस की वजह से फतवा दिया कि ख़ुशबू और फूल चढ़ाने की जो आदत है वह सुन्नत है। इन इबारतों में जो फरमाया कि कुछ ने फ़तवा दिया इसका मतलब यह नहीं है कि कुछ उलमा इसको नाजाइज़ भी कहते हैं बल्कि मतलब यह है कि कुछ ने सुन्नत माना है जाइज़ तो सब ही कहते हैं सुन्नत होने में इख़्तिलाफ़ है। आलमगीरी **किताबुल-कराहियत** जिल्द पंजुम **बाब ज़ियारतिल-कुबूर** में है।

वज़्उल-वुरूदे वर्रियाहीना अलल-कुबूरे हसनुन। क़ब्रों पर फूल और ख़ुशबू रखना अच्छा है। शामी जिल्द अव्वल **बहसु ज़ियारतिल-कुबूर** में है।

इससे भी और हदीस से भी इन चीज़ों के क़ब्रों पर रखने का इस्तेहबाब मालूम होता है और इसी वजह से क़ब्रों पर आस की शाखें वग़ैरह चढ़ाने को भी क़्यास किया जाएगा जिसका हमारे ज़माना में रिवाज है। शामी में इसी जगह है।

कमी अज़ाब की इल्लत है इनका ख़ुश्क न होना यानी उनकी तस्बीह की बरकत से अज़ाबे क़ब्र में कमी होगी क्योंकि हरी शाख़ की तस्बीह ख़ुश्क की तस्बीह से ज़्यादा कामिल है। क्योंकि इसमें एक क़िस्म की ज़िन्दगी है। इस हदीस और मुहद्देसीन व फ़ुक़हा की इबारात से दो बातें मालूम हुईं। एक तो यह कि हर सब्ज़ चीज़ का रखना हर मुसलमान की क़ब्र पर जाइज़ है। हुज़ूर

अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने उन क़ब्रों पर शाखें रखीं जिनको अज़ाब हो रहा था और दूसरे यह कि अज़ाबे क़ब्र की कमी सब्ज़े की तस्बीह की बरकत से है न कि महज़ हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की दुआ से। अगर महज़ दुआ से कमी होती तो हदीस में ख़ुश्क होने की क्यों क़ैद लगाई जाती? लिहाज़ा अगर हम भी आज फूल वग़ैरह रखें तो भी इंशाअल्लाह मैयत को फ़ाइदा होगा बल्कि आम मुसलमानों की क़ब्रों को कच्चा रखने में यही मस्लेहत है कि बारिश में उस पर सब्ज़ घास जमे और उसकी तस्बीह से मैयत के अज़ाब में कमी हो। साबित हुआ कि फूल वग़ैरह तर चीज़ हर क़ब्रे मोमिन पर जाइज़ है। मोलवी अशरफ़ अली साहब ने **इस्लाहुर्रुसूम** में लिखा है कि फूल वग़ैरह फ़ासिक़ों, फाजिरों की क़ब्रों पर डालना चाहिए। न कि क़ुबूरे औलिया पर। उनके मज़ारात में अज़ाब है ही नहीं जिसकी फूल वग़ैरह से तख़्फ़ीफ़ की जाए। मगर ख़्याल रहे कि जो आमाल गुनहगार के लिए दफ़ा मुसीबत करते हैं वह सालेहीन के लिए बुलन्दी दरजात का फ़ाइदा देते हैं। देखो मस्जिद की तरफ चलना हमारे गुनाह माफ़ कराता है मगर सालेहीन के दरजात बढ़ाता है। ऐसे ही कुछ दुआएं मुजिरमों के गुनाहों को मिटाती हैं और सालेहीन के मरातिब बढ़ाती हैं। इस क़ाइदे से लाज़िम आता है कि सालेहीन न मस्जिद में आएं न इस्तिग़फ़ार पढ़ें कि वह गुनाहों से पाक हैं। जनाब इन फूलों की तस्बीह से उन क़ब्रों में रहमते इलाही और भी ज़्यादा होगी जैसे वहाँ तिलावते क़ुरआन से।

(2) औलिया अल्लाह की क़ब्रों पर चादरें डालना जाइज़ है क्योंकि इसकी वजह से आम ज़ाइरीन की निगाह में साहिबे क़ब्र की अज़्मत ज़ाहिर होती है। **शामी जिल्द ५ किताबुल-कराहियत बाबुल-लब्स** में है।

तरजमा : यानी फ़तावा हुज्जा में है कि क़ब्रों पर ग़िलाफ़ पर्दे मकरूह हैं लेकिन हम कहते हैं कि आज कल अगर इससे अवाम की निगाह में ताज़ीम मक़सूद हो ताकि वह साहिबे क़ब्र की हिक़ारत न करें बल्कि ग़ाफ़िलों को इससे अदब और ख़ुशूअ़ हासिल हो तो जाइज़ है। क्योंकि अमल नीयत से हैं। शामी की इस इबारत ने फ़ैसला कर दिया कि जो जाइज़ काम औलिया अल्लाह की अज़्मत ज़ाहिर करने के लिए हो वह जाइज़ है और चादर की असल यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना पाक में भी काबा मुअज़्ज़मा पर ग़िलाफ़ था कि उसको मना न फ़रमाया। सदियों से हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के रौज़-ए-पाक पर ग़िलाफ़ सब्ज़ रेशमी चढ़ा हुआ है जो कि निहायत क़ीमती है आज तक किसी ने उसको मना न किया। मक़ामे इब्राहीम यानी वह पत्थर जिस पर खड़े हो कर हज़रत ख़लील ने काबा मुअज़्ज़मा बनाया उस पर भी ग़िलाफ़ चढ़ा हुआ है। और इमारत बनी हुई है। और अल्लाह की शान कि नज्दी वहाबियों ने भी उनको इसी तरह

क़ाइम रखा। इन पर गिलाफ़ क्यों चढ़ाए? उन चीज़ों की अज़्मत के लिए औलिया के लिए उनकी कुबूर पर गिलाफ़ वग़ैरह डालना मुस्तहब है। तफ़्सीर रूहुल-ब्यान पारा 10 सूर–ए–तौबा ज़ेर आयत –

उलमा औलिया और सालेहीन की क़ब्रों पर इमारात बनाना और उन पर गिलाफ़ और अमामा और कपड़े चढ़ाना जाइज़ काम हैं जब कि इससे मक़्सूद हो कि अवाम की निगाह में उनकी इज़्ज़त हो और लोग उनको हक़ीर न जानें।

(3) आम मुसलमानों की क़ब्रों पर ज़रूरतन औलिया अल्लाह के मज़ारात पर इज़्हारे अज़्मत के लिए चिराग़ रौशन करना जाइज़ है। चुनांचे हदीक़ा नदिया शरह तरीक़ा मुहम्मदीया मिसरी जिल्द दोम सफ़: 429 में है।

तरजमा : क़ब्रों पर चिराग़ ले जाना बिदअत और माल का ज़ाए करना है इसी तरह बज़ाज़िया में है यह तमाम हुक्म जब है जबकि फ़ाइदा न हो लेकिन अगर किसी क़ब्र की जगह मस्जिद हो या कि क़ब्र रास्ता पर हो या वहाँ कोई बैठा हो या किसी वली या किसी मुहक़्क़िक़ आलिम की क़ब्र हो तो उनकी रूह की ताज़ीम करने और लोगों को बताने के लिए कि यह वली की क़ब्र है ताकि लोग इससे बरकत हासिल कर लें और वहाँ अल्लाह से दुआएं कर लें तो चिराग़ जलाना जाइज़ है।

तफ़्सीरे रूहुल-बयान पारह 10 सूर: तौबा ज़ेरे आयत **इन्नमा यामुर मसाजिदल्लाह** में है।

तरजमा : इसी तरह औलिया सालेहीन की क़ब्रों के पास क़िन्दीलें और मोम बत्तियाँ जलाना उनकी अज़्मत के लिए चूंकि इसका मक़्सद है लिहाज़ा जाइज़ है और औलिया के लिए तेल और मोम बत्ती नज़र मानना ताकि उनकी इज़्ज़त के इज़्हार के लिए उनकी कुबूर के पास जलाई जाएं जाइज़ है। इससे मना न करना चाहिए। अल्लामा नाबलुसी अलैहिर्रहमा ने अपने रिसाला **कश्फ़ुन्नूर अन असहाबिल-कुबूर** में भी बिल्कुल यही मज़्मून तहरीर फ़रमा दिया। अक़्ल का भी तक़ाज़ा है कि यह उमूर जाइज़ हों। जैसा कि हम गुंबद की बहस में अर्ज़ कर चुके हैं कि इन मज़ाराते औलिया अल्लाह की रौनक़ से इस्लाम की रौनक़ है आलिम वाइज़ को चाहिए कि अच्छा लिबास पहने ईद के दिन सुन्नत है कि हर मुसलमान उम्दा लिबास पहने और ख़ुश्बू वग़ैरह लगाए। क्यों? इसलिए कि इससे लोग मिलना गवारह करें। मालूम हुआ कि जिसका तअल्लुक़ आम मुसलमानों से हो उसको अच्छी तरह रहना चाहिए। और मज़ाराते औलिया तो ज़ियारत गाहे ख़लाइक़ हैं उन पर इहतिमाम वग़ैरह करना भी ज़रूरी है। मैं नज्दी वहाबियों की हुकूमत में हज को गया वहाँ जा कर देखा कि काबा मुअज़्ज़मा के गर्द गोल दाइरा की शक्ल में बहुत से बर्क़ी क़ुम्क़ुमे जलते थे और हतीम शरीफ़ की दीवार पर भी रौशनी

थी। ख़ास दरवाज़े काबा पर शमा काफ़ूरी चार-चार जलाई जाती थीं। जब मदीना मुनव्वरह हाज़िरी नसीब हुई तो यहाँ रौज़-ए-रसूल अलैहिस्सलाम पर काबा मुअज़्ज़मा से कहीं बढ़ कर रौशनी पाई। यहाँ के कुमकुमे वहाँ से तेज़ और ज़्यादा थे। बहुत रौनक़ थी। एक साहब ने कहा कि काबा वैतुल्लाह है। और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम नूरुल्लाह। और ज़ाहिर है कि घर में रौशनी नूर ही की होती है मालूम हुआ कि ज़माना तुर्की में इससे कहीं ज़्यादा रौशनी होती थी। यह तमाम एहतमाम क्यों हैं? लोगों की निगाह में अज़्मत पैदा करने के लिए। तो मक़ाबिरे औलिया पर भी तो वहाँ ही की तजल्ली है। फिर अगर यहाँ रौशनी का एहतमाम किया तो क्या बुराई है? आज हम अपने घर में शादी ब्याह के मौक़ा पर चिराग़ाँ करते हैं या कि बजाए चिराग़ाँ या लालटेन के गैस जलाते हैं जिसमें कि तेल बहुत ख़र्च होता है। मदारिस के जल्सों में बीसियों रुपया रौशनी पर ख़र्च हो जाता है। अभी चन्द साल गुज़रे कि मुरादाबाद में देवबन्दियों ने जमीअतुल-उलमा का जलसा किया जिसमें बरक़ी रौशनी आँखों को ख़ीरह करती थी मेरे ख़्याल में तीन शब में कम अज़ कम डेढ़ सौ रुपया महज़ रौशनी पर ख़र्च हुआ होगा। यह महज़ मज्मा को ख़ुश करने के लिए था। इसी तरह दीनी जल्सों में झंडियाँ लगाई जाती हैं। वाइज़ीन के गलों में फूलों के हार डाले जाते हैं। यह न असराफ़ है और न हराम। यह मजालिसे उर्स दीनी जल्से हैं इनमें भी यह उमूर जाइज़ हैं।

दूसरा बाब

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात में

इन तीन मसाइल पर मुख़ालेफ़ीन के हस्बे ज़ैल ऐतराज़ात हैं जिनको वह मुख़्तलिफ़ तरह ब्यान करते हैं।

(१) हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फ़रमाया **इन्नल्लाहा लम यामुरना अन नक्सुवल-हिजारता वत्तीन।** रब ने हमें हुक्म न दिया कि पत्थरों और मिट्टी को कपड़े पहनाएं (मिश्कात बाबुत्तसावीर) इससे मालूम हुआ कि क़ब्रों पर चादर या ग़िलाफ़ डालना हराम है कि वहाँ भी पत्थर मिट्टी ही है।

जवाब : इससे मकानात की दीवारों पर बिला ज़रूरत तकल्लुफ़न पर्दे डालना मुराद हैं और यह भी तक़्वा और ज़ुहद का बयान है यानी मकानात की ज़ीनत ख़िलाफ़े ज़ुह्द है। इसी हदीस में है कि आइशा सिद्दीक़ा ने दीवार पर ग़िलाफ़ डाला था उसे फाड़ कर यह फ़रमाया। क़ुबूरे औलिया की चादर को इससे कोई तअल्लुक़ नहीं काबाए मुअज़्ज़मा पर क़ीमती सियाह ग़िलाफ़ है और रौज़ए हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम पर सब्ज़ और ग़िलाफ़े काबा ज़मानए नबवी में था बताओ वह जाइज़ है तो क़ुबूर की चादर भी जाइज़।

(2) **क़बरों पर फूल या चादर डालना वहाँ रौशनी करना फ़िज़ूलख़र्ची है**

लिहाज़ा मना है। औलिया अल्लाह की क़ब्रों पर बहुत से फूल और चिराग़ होते हैं ज़रूरत पूरी करने के लिए एक फूल या एक चिराग़ भी काफी है?

जवाब : असराफ़ के माना हैं बे फ़ाइदा माल ख़र्च करना। चूंकि इन फूलों और चिराग़ों और चादरों में वह फ़ाइदे हैं जो कि पहले बाब में अर्ज़ कर चुके हैं लिहाज़ा यह इसराफ़ नहीं रहा। काम चलने का उज़्र। इसके मुतअल्लिक़ यह अर्ज़ है कि हम कुर्ता उस पर वास्किट उस पर अचकन पहनते हैं फिर वह भी क़ीमती कपड़े की हालांकि काम तो सिर्फ़ एक में चल सकता है और मामूली कपड़ा किफ़ायत कर सकता है बताओ यह फ़िज़ूलख़र्ची हुआ या कि नहीं? इसी तरह इमारात और लज़ीज़ ख़ूराक, सवारियाँ और दीगर दुनियावी आराइशी सामान कि इन सब में ख़ूब वुस्अत करते हैं हालांकि इन से कम और इन से अदना चीज़ों से भी काम चल सकता था लेकिन असराफ़ नहीं जिसको शरीअत ने हलाल किया वह मुतलक़न ही हलाल है। **कुल मन हर्रमा ज़ीनतल्लाहिल्लती अख़रजा लेइबादेही।**

(३) मिश्कात **बाबुल-मसाजिद** (स० : 71) में है।

यानी हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने लानत फरमाई क़ब्रों की ज़्यारत करने वालियों पर और कुबूर पर मस्जिदें बनाने वालों और चिराग़ जलाने वालों पर।

इससे मालूम हुआ कि कुबूर पर चिराग़ जलाना लानत का सबब है। फ़तावा आलमगीरी में है। **इख़राजुश्शुमूए इलल-मक़ाबिरे बिदअतुन ला अस्ला लहू।** इसी तरह फ़तावा बज़ाज़िया में भी है यानी क़ब्रिस्तान में चिराग़ ले जाना बिदअत है। इसकी कोई असल नहीं। शामी जिल्द दोम **किताबुस्सौम** में है।

लेकिन अगर शैख़ की क़ब्र पर या मीनारा में चिराग़ जलाने के लिए तेल की नज़र मानी जैसे कि औरतें हुज़ूर ग़ौस पाक के लिए तेल की नज़र मानती हैं और उसकी मश्रिक़ी मीनारा में जलाती हैं यह सब बातिल है। क़ाज़ी सनाउल्लाह साहब पानी पती ने **इरशादुत्तालिबीन** में लिखा "चिरागाँ करना बिदअत है हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने क़ब्र के पास चिरागाँ करने और सज्दा करने वालों पर लानत फरमाई शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब के फ़तावा में सफ़: 14 पर है" "लेकिन उरसों में हराम काम करना जैसे कि चिरागाँ करना उन क़ब्रों को ग़िलाफ़ पहनाना यह सब बिदअते सैयआ हैं।"

इन इबारात से साफ़ मालूम हुआ कि चिरागाँ बर मज़ारात महज़ हराम है। रहा यह कि हरमैन शरीफ़ैन में चिरागाँ होता है तो यह फ़ेअल कोई हुज्जत नहीं क्योंकि यह ख़ैरुल-कुरून के बाद ईजाद हुआ। जिसका ऐतबार नहीं तुर्की सलतनत ने ईजाद किया है।

जवाब : यह एतराज़े हक़ीक़त में छः ऐतराज़ का मज्मूआ है और इन्हीं

के बल बूते पर मुख़ालेफ़ीन बहुत शोर मचाते हैं। जवाबात मुलाहिज़ा हों। हम इस बहस के पहले बाब में अर्ज़ कर चुके हैं कि किसी क़ब्र पर वे फ़ाइदा चिरागाँ जलाना मना है कि यह फ़ुज़ूल ख़र्ची है और अगर किसी फ़ाइदे से हो तो जाइज़ है। फ़ायदे कुल चार बयान किए। तीन तो आम मुमिनीन की क़ब्रों के लिए और चौथा यानी ताज़ीमे रूहे वली मशाइख़ व उलमा की क़ुबूर के लिए। इस हदीस से जो क़ब्र पर चिराग़ जलाने की मुमानेअत है वह उसी की है जो बेफ़ाइदा हो। चुनांचे हाशिया मिश्कात में इसी हदीस के मातहत है। क़ब्रों पर चिराग़ जलाने से इसलिए मुमानिअत है कि इसमें माल बर्बाद करना है। इसी तरह मिर्क़ात शरह मिश्कात वग़ैरह ने तस्रीह फ़रमाई। हदीक़ा नुदिया शरह तरीक़ा मुहम्मदीया जिल्द दोम सफ़: 429 मिसरी में इसी हदीस को ज़िक्र करके फ़रमाते हैं।

ऐ अल्लज़ीना यूक़िदूनस्सुरुजा अलल-क़ुबूरे अबसन मिन ग़ैरे फ़ाइदतिन। उन लोगों पर लानत फ़रमाई जो कि क़ब्रों पर बेफ़ाइदा, बेवजह चिराग़ जलाते हैं। मिश्कात **बाबुद्दफ़न** में है **अन्नन्नबीया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दख़ला लैलन फ़उस्रिजा लहू बेसिराजिन।** हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम एक शब दफ़न मैयत के लिए क़ब्र में तशरीफ़ ले गए तो आपके लिए चिराग़ जलाया गया। दोम यह कि हदीस में है। **वल-मुत्तख़ेज़ीना अलैहल-मसाजिदा वस्सुरजा।** हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने उन पर लानत फ़रमाई जो कि क़बरों पर मस्जिदें बनाएं और चिराग़ जलाएं। मुल्ला अली क़ारी और शैख़ अब्दुल-हक़ मुहद्दिस देहलवी व दीगर शारेहीन इसी हदीस की शरह में फ़रमाते हैं कि ख़ुद क़ब्र पर मस्जिद बनाना कि क़ब्र की तरफ़ सज्दा हो या क़ब्र फ़र्शे मस्जिद में आ जाए यह मना है लेकिन अगर क़ब्र के पास मस्जिद हो बरकत के लिए तो जाइज़ है यानी इस जगह उन्होंने अला को अपने हक़ीक़ी माना पर रखा। जिससे लाज़िम आया कि ख़ुद तावीज़े क़ब्र पर चिराग़ जलाना मना है लेकिन अगर क़ब्र के इर्द गिर्द हो तो वह क़ब्र पर नहीं है लिहाज़ा जाइज़ है। जैसे कि हम गुंबद की बहस में लिख चुके हैं। और हदीक़ए नुदिया में नाबलुसी इसी हदीस की शरह में लिखते हैं। **अल-मुत्तख़ेज़ीना अलैहा ऐ अलल-क़ुबूरे यानी फ़ौक़हा।** यानी ख़ास क़ब्रों के ऊपर और वजह इसकी यह है कि चिराग़ आग है और आग का क़ब्र पर रखना बुरा है। इसीलिए ख़ास क़ब्र में लकड़ी के तख़्ते लगाने को फ़ुक़हा मना फ़रमाते हैं कि इसमें आग का असर है लेकिन अगर लकड़ी क़ब्र के पास पड़ी हो तो वह मना नहीं। तो चिराग़ की मुमानेअत आग होने की वजह से है न कि ताज़ीमे क़ब्र के लिए। और यहाँ एक ही अला है और ज़िक्र है मस्जिद का और चिराग़ का। मस्जिद के लिए तो आप अला के हक़ीक़ी मानी मुराद लें। यानी ख़ास क़ब्र के ऊपर और चिराग़ के लिए मजाज़ी यानी क़ब्र के क़रीब। तो हक़ीक़त और मजाज़ का इज्तिमा लाज़िम होगा और यह मना

है लिहाज़ा दोनों जगह अला के हक़ीक़ी मानी ही मुराद हैं। मिर्क़ात में मुल्ला अली क़ारी इसी हदीस के मातेहत फरमाते हैं **क़ैदु अलैहा युफ़ीदु अन्ना इत्तिख़ाज़ल-मस्जिदे बेजन्बेहा ला बासा बेही** ऊपर की क़ैद लगाई। जिससे मालूम हुआ कि क़ब्र के बराबर मस्जिद बनाने में हरज नहीं। लफ़्ज़ अला से साबित किया कि क़ब्र के बराबर मस्जिद जाइज़। इसी तरह लफ़्ज़ अला से यह भी निकला कि क़ब्र के बराबर चिराग़ जाइज़। तीसरे यह कि हम गुंबद की बहस में शामी और दीगर कुतुब के हवाला से लिख चुके हैं कि बहुत सी बातें ज़माना सहाबा किराम में मना थीं मगर अब मुस्तहब। रूहुल-बयान पारह 10 सूरः तौबा ज़ेर आयत **इन्नमा यामुरू मसाजिदल्लाहे मन आमना बिल्लाहे** है व **फ़िल-अहयाए अक्सरू मारूफ़ातिन हाज़ेहिल-आसारे मुन्करातुन फ़ी अस्रिस्सहाबते।** यानी अहया-उल-उलूम में इमाम ग़ज़ाली ने फरमाया कि इस ज़माना के बहुत से मुस्तहब्बात सहाबा किराम के ज़माना में नाजाइज़ थे। मिश्कात **किताबुल-इमारते बाब मा अलल-विलायत** में है कि हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने हुक्म दिया था कि कोई मुसलमान हाकिम ख़च्चर पर सवार न हो और चपाती रोटी न खाए, और बारीक कपड़ा न पहने और अपने दरवाज़ा को अह्ले हाजत से बन्द न करे। और फरमाते थे **फ़इन फ़अल्तुम शैअन मिन ज़ालिका फ़क़द हल्लत बेकुमुल-उक़ूबते।** अगर तुमने उनमें से कुछ भी किया तो तुम को सज़ा दी जाएगी। इसी मिश्कात **बाबुल-मसाजिद** (स० : 69) में है कि **मा उमिरतु बेतश्ईदिल-मसाजिदे** मुझको मस्जिदें ऊंची बनाने का हुक्म न दिया गया। उसके हाशिया में है **ऐ बेऐलाए बेनाइहा व तज़्ईनेहा।** यानी मस्जिदें ऊंची बनाने और उनको आरास्ता करने का हुक्म नहीं। इसी मिश्कात में है। **वला तम्नऊ इमाअल्लाहे मसाजिदल्लाहे।** औरतों को मस्जिदों से न रोको। कुरआन में ज़कात के मसरफ़ आठ हैं। यानी मुअल्लिफ़तुल-कुलूब भी ज़कात का मसरफ़ है लेकिन अह्दे फ़ारूक़ी से सिर्फ़ सात मसारिफ़ रह गए। मुअल्लिफ़तुल-कुलूब को अलाहिदा कर दिया गया। (देखो हिदायह वग़ैरह) कहिए अब भी इन पर अमल है? अब हुक्काम अगर मामूली हालत में रहें उनका रिआया पर रुअब नहीं हो सकता। अगर कुफ़्फ़ार के मकानात और उनके मन्दिर तो ऊंचे हों मगर अल्लाह का घर मस्जिद नीची और कच्ची। और मामूली हो तो इसमें इस्लाम की तौहीन है। अगर औरतें मस्जिद में जाएं तो सैकड़ों ख़तरात हैं। किसी काफ़िर को ज़कात देना जाइज़ नहीं यह अहकाम क्यों बदले? इसलिए कि इनकी इल्लतें बदल गईं। उस वक़्त बग़ैर ज़ाहिरी ज़ेब व ज़ीनत के मुसलमान के दिलों में औलिया अल्लाह और मक़ाबिर की इज़्ज़त व हुर्मत थी। लिहाज़ा ज़िन्दगी व मौत हर काम में सादगी थी। अब दुनिया की आँखें ज़ाहिरी टीप टाप देखती हैं लिहाज़ा उसको जाइज़ क़रार दिया गया। लिहाज़ा पहले हुक्म था कि मज़ारात पर रौशनी न करो। अब जाइज़ क़रार

पाया। तफ़्सीरे रूहुल-बयान ज़ेरे आयत **इन्नमा यामुरू मसाजिदल्लाहे।** कि हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम ने बैतुल-मुक़द्दस के मीनारह पर ऐसी रौशनी की थी कि बारह मील मुरब्बा में औरतें उसकी रौशनी में चर्खा कातती थीं और बहुत ही सोने और चाँदी से इसको आरास्ता किया था। आलमगीरी की इबारत ग़लत नक़्ल की असल इबारत यह है। **इख़राजुश्शुमूए इला रासिल-क़ुबूरे फ़िल्लयालिल-अव्वले बिदअतिन।** शुरू रातों में क़ब्रिस्तान में चिराग़ ले जाना बिदअत है। इसमें दो कलिमे क़ाबिले ग़ौर हैं एक तो इख़राज दूसरे **फ़िल्लयालिल-अवले।** इनसे साफ़ मालूम हो रहा है कि उस ज़माना में लोग अपने नए मुर्दों की क़ब्रों पर चिराग़ ले जा कर जला आते थे यह समझ कर कि इससे मुर्दा क़ब्र में न घबराएगा। जैसा कि आज कल कुछ औरतें चालीस रोज़ तक लहद में मुर्दे की ग़ुस्ल की जगह चिराग़ जलाती हैं यह समझती हैं कि रोज़ाना मुर्दे की रूह आती है और अंधेरा पा कर लौट जाती है लिहाज़ा रौशनी कर दो यह हराम है क्योंकि तेल का बिला ज़रूरत ख़र्च है और बद अक़ीदगी भी है इसी को यह मना फ़रमा रहे हैं उर्स के चिराग़ात न तो इस नीयत से होते हैं और न शुरू रातों में। अगर यह मतलब न हो तो शुरू रातों की क़ैद क्यों है? शामी की यह इबारत तो बिल्कुल साफ़ है वह भी उर्स के चिराग़ों को मना नहीं कर रहे हैं वह फ़रमा रहे हैं कि चिराग़ जलाने की नज़र मानना जिसमें कि औलिया अल्लाह से क़ुर्ब हासिल करना मंज़ूर हो वह हराम है, क्योंकि शामी की यह इबारत दुर्रे मुख़्तार की इबारत के मातहत है।

जानना चाहिए कि अवाम जो मुर्दों की नज़रें मानते हैं और उन से जो पैसा या मोम या तेल वग़ैरह क़ब्रों पर जलाने के लिए लिया जाता है औलिया से क़ुर्ब हासिल करने के लिए वह बिल-इज्मा बातिल है। और ख़ुद शामी की इबारत में भी है **लौ नज़रा** अगर उसकी मिन्नत मानी फिर उसी शामी की इबारत में है **फ़ौक़ा ज़रीहिश्शैख़े** शैख़ की क़ब्र के ऊपर चिराग़ जलाना ज़रीह कहते हैं ख़ालिस तावीज़े क़ब्र को। मुन्तख़बुल्लुग़ात में है। और हम भी अर्ज़ कर चुके हैं कि ख़ुद क़ब्र के तावीज़ पर चिराग़ जलाना मना है। इसी तरह अगर क़ब्र न हो यूं ही किसी बुज़ुर्ग के नाम के चिराग़ किसी जगह रख कर जलाए जैसे कि कुछ दरख़्तों या बाज़ ताक़ में किसी के नाम के चिराग़ जलाते हैं यह भी हराम है उसको फ़रमा रहे हैं कि हुज़ूर ग़ौसे पाक के नाम से चिराग़ किसी मश्रिक़ी मिनारह में जलाना बातिल है। ख़ुलासा यह हुआ कि शामी ने तीन चीज़ों को मना फ़रमाया। चिराग़ जलाने की मिन्नत मानना वह भी वलीयुल्लाह की क़ुर्बत हासिल करने की नीयत से। ख़ास क़ब्र पर चिराग़ जलाना बग़ैर क़ब्र के किसी के नाम के चराग़ जलाना उर्स के चिराग़ों में यह तीनों बातें नहीं।

मसला : कुछ जाहिल किसी दरख़्त या किसी जगह को यह समझ कर ज़्यारत करते और वहाँ चिराग़ाँ करते हैं कि वहाँ फ़लां बुज़ुर्ग का चिल्ला है

यानी वहाँ वह आया करते हैं यह महज़ बातिल है हाँ अगर किसी जगह कोई बुज़ुर्ग कभी बैठे हों या वहाँ उन्होंने इबादत की हो तो वहाँ यह समझ कर इबादत करना कि यह जगह मुतबर्रक है जाइज़ बल्कि सुन्नत है। बुख़ारी जिल्द अव्वल **किताबुस्सलात बहसुल-मसाजिद।** (स० : 70) में एक बाब मुक़र्रर किया। **बाबुल-मसाजिदल्लती अला तरीक़िल-मदीनते।** इसमें बयान फ़रमाया कि अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु रास्ता में हर उस जगह नमाज़ अदा करते थे जहाँ कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने कभी नमाज़ पढ़ी थी हत्ता कि कुछ जगह मस्जिदें बना दी गई थीं मगर वह ग़लती से कुछ अलाहिदा बन गईं तो सैयदना इब्ने उमर उस मस्जिद में नमाज़ न पढ़ते थे बल्कि वहाँ ही पढ़ते थे जहाँ हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने नमाज़ पढ़ी थी। **फ़लम यकुन अब्दुल्लाहे इब्नु उमरा युसल्ली फ़ी ज़ालिकल-मस्जिदे काना यत्रुकुहू अन यसारेही।** यह क्या था महज़ बरकत हासिल करना आज भी कुछ हाजी ग़ारे हिरा में जहाँ हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने छेः माह इबादत फ़रमाई नमाज़ें पढ़ते हैं लिहाज़ा ख़्वाजा अजमेरी वग़ैरह रहमहुमुल्लाहु की इबादत गाहों में नमाज़ें अदा करनी, उनको मुतबर्रक समझना सुन्नते सहाबा से साबित है।

मसला : औलिया अल्लाह के नाम की जो नज़र मानी जाती है यह नज़र शरई नहीं। नज़र लुग़वी है जिसके मानी हैं नज़राना जैसे कि मैं अपने उस्ताद से कहूँ कि यह आपकी नज़र है यह बिल्कुल जाइज़ है। और फ़ुक़हा इसको हराम कहते हैं जो कि औलिया अल्लाह के नाम की नज़रे शरई मानी जाए। इसी लिए फ़रमाते हैं **तक़र्रुबन इलैहिम।** नज़्रे शरई इबादत है वह ग़ैरुल्लाह के लिए मानना यक़ीनन कुफ़्र है। कोई कहता है कि हुज़ूर ग़ौसे पाक आप दुआ करें अगर मेरा मरीज़ अच्छा हो गया तो मैं आपके नाम की देग पकाऊंगा। इसका मतलब यह हरगिज़ नहीं होता कि आप मेरे ख़ुदा हैं। उस बीमार के अच्छे होने पर मैं आपकी यह इबादत करूंगा। बल्कि मतलब यह होता है कि मैं पुलाव का सदक़ा करूंगा अल्लाह के लिए। इस पर जो सवाब मिलेगा आपको हदिया करूंगा। जैसे कोई शख़्स किसी तबीब से कहे कि अगर बीमार अच्छा हो गया तो पचास रुपया आपकी नज़र करूंगा। इसमें क्या गुनाह है? इसको शामी ने किताबुस्सौम बहस नज़रे अम्वात में इस तरह बयान फ़रमाया।

सीग़ा नज़र का अल्लाह की इबादत के लिए हो और शैख़ की क़ब्र पर रहने वाले फ़ुक़रा उसका मसरफ़ हों। यह महज़ जाइज़ है। तो यूं समझो कि यह सदक़ा अल्लाह के लिए है इसके सवाब का हदिया रूह शैख़ के लिए। इस सदक़ा का मसरफ़ मज़ार बुज़ुर्ग के ख़ुद्दाम फ़ुक़रा जैसे कि हज़रत मरयम की वालिदा ने नज़र मानी थी कि अपने पेट का बच्चा ख़ुदाया तेरे

लिए नज़र करती हूँ जो कि बैतुल-मुक़द्दस की ख़िदमत के लिए वक़्फ़ होगा। नज़र अल्लाह की और मसरफ़ बैतुल-मक़्दिस देखो गैरुल्लाह की क़सम खाना शरअन मना है और ख़ुद क़ुरआने करीम और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने गैरुल्लाह की क़समें खाईं **वत्तीने वज़्ज़ैतूने व तूरे सीनीना।** वग़ैरह और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया **अफ़्लहा व अबीहे।** इसके बाप की क़सम वह कामयाब हो गया। मतलब यही है कि शरई क़सम जिस पर अहकामे क़सम कफ़्फ़ार वग़ैरह जारी हो वह ख़ुदा के सिवा किसी की न खाई जाए। मगर लुग़वी क़सम जो महज़ ताकीदे कलाम के लिए हो वह जाइज़। यही नज़र का हाल है। एक शख़्स ने नज़र मानी थी कि मैं बैतुल-मुक़द्दस में चिराग़ के लिए तेल भेजूंगा। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फ़रमाया कि इसको नज़र को पूरा करो। मिश्कात **बाबुन्नुज़ूर** में है कि किसी ने नज़र मानी थी कि मैं बवाना मक़ाम में ऊंट ज़िबह करूंगा तो फरमाया गया कि अगर कोई वहाँ बुत वग़ैरह न था तो नज़र पूरी करो। किसी ने नज़र मानी थी कि बैतुल-मुक़द्दस में नमाज़ पढ़ूँगा तो फ़रमाया कि मस्जिदे हराम में नमाज़ पढ़ लो। इन अहादीस से मालूम हुआ कि सदक़ा व ख़ैरात की नज़र में किसी जगह या किसी ख़ास जमाअत फ़ुक़रा की क़ैद लगा देना जाइज़ है। इसी तरह यह भी है। फ़तावा रशीदीया जिल्द अव्वल **किताबुल-हज़र वल-इबाहत** सफ़: 54 में है और जो अम्वात औलिया अल्लाह की नज़र है तो उसके अगर यह मानी हैं कि उसका सवाब उनकी रूह को पहुँचे तो सदक़ा है दुरुस्त है जो नज़र बामानी तक़र्रुब उनके नाम पर है तो हराम है। रशीद अहमद।

मिश्कात **बाबु मनाक़िबु उमर** में है कि कुछ बीवियों ने नज़र मानी थी कि अगर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम जंगे उहद से बख़ैरियत वापस आए तो मैं आपके सामने दफ़ बजाऊंगी। यह नज़र भी उर्फ़ी थी न कि शरई यानी हुज़ूर की ख़िदमत में ख़ुशी का नज़राना। ग़र्ज़ कि लफ़्ज़े नज़र के दो मायने हैं लग़वी और शरई लुग़वी माना से नज़र बुज़ुर्गाने दीन के जाइज़ है यानी नज़राना जैसे तवाफ़ के दो मानी हैं लुग़वी बमानी आस पास घूमना, और शरई रब तआला फरमाता है। **वल-यत्तौवफ़ू बिल-बैतिल-अतीक़।** पुराने घर का तवाफ़ करें। यहाँ तवाफ़े शरई मानी में है और फरमाता है। **यतूफ़ूना बैनहा व बैना हमीमिन आन।** यहाँ तवाफ़ बामाना लुग़वी है आना जाना, घूमना।

(4) हज़रत शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब व क़ाज़ी सनाउल्लाह साहब पानी पती रहमतुल्लाह अलैहिमा बेशक बुज़ुर्ग हस्तियाँ हैं लेकिन यह हज़रात मुज्तहिद नहीं ताकि कराहते तहरीमी व हुर्मत फ़क़त उनके क़ौल से साबित हो। उसके लिए मुस्तक़िल दलील शरई की ज़रूरत है। एक आलिम के क़ौल से इस्तेहबाब या जवाज़ साबित हो सकता है। मुस्तहब उसको भी कहते हैं

जिसको उलमा मुस्तहब जानें। मगर कराहत व हुर्मत में ख़ास दलील की ज़रूरत है। नीज़ शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब व क़ाज़ी साहब तो चिराग़ाँ और मज़ारात की चादरों को हराम फरमाते हैं मगर शामी चादरों को और साहिबे तफ़सीर रूहुल-ब्यान और साहिबे हदीक़ा नुदिया चिराग़ाँ को जाइज़ बल्कि मुस्तहब फरमाते हैं यक़ीनन उनका क़ौल ज़्यादा लाइक़े क़बूल है। नीज़ शाह अब्दुल-अज़ीज़ व क़ाज़ी साहिबान अलैहिमर्रहमा वर्रिज़वान के क़ौल पर लाज़िम है कि हरमैन शरीफ़ैन ख़ुसूसन रौज़-ए-मुतह्हरा सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बिदअतों और हराम कामों का मर्कज़ है क्योंकि वहाँ ग़िलाफ़ भी चढ़ते हैं और चिराग़ाँ भी है। और आज तक किसी आलिम या फ़क़ीह ने उस पर इंकार न किया। तो वह हज़रात बिदअती या गुमराह हुए। इन दो साहिबों का वह फ़तवा किस तरह माना जाए जिसमें यह सख़्त क़बाहत लाज़िम आए।

(5) हरमैन शरीफ़ैन के उलमा का किसी चीज़ को अच्छा समझना बेशक उसके इस्तेहबाब की दलील है यह ज़मीन पाक वह है कि ज़हाँ कभी भी शिर्क नहीं हो सकता। हदीस पाक में है कि शैतान मायूस हो चुका कि अह्ले अरब उसकी परस्तिश करें और मदीना पाक की ज़मीन इस्लाम की जाएं पनाह और कुफ़्फ़ार व मुश्रेकीन से महफ़ूज़ रहने वाली है। मिश्कात **बाब हरमिल-मदीनते** में है कि मदीना पाक बुरे लोगों को इस तरह निकाल फेंकता है जैसे कि लोहार की भट्ठी लोहे के मैल को चाहे फ़ौरन निकाले या कुछ अरसा बाद या बादे मौत। जज़्बुल-कुलूब में हज़रत शैख़ अब्दुल-हक़ फरमाते हैं।

इससे मुराद यह है कि मदीना पाक की ज़मीन पाक तमाम शरीर व मुफ़सेदीन को निकाल देती है और यह ख़ासियत इसमें हमेशा बाक़ी है। लिहाज़ा उलमा-ए-मदीना की इबादत को बेधड़क शिर्क व बिदअत कह देना सख़्त ग़लती है। यह कहना भी ग़लत है कि यह चिराग़ाँ सलतनते तुर्किया की ईजाद है। इमामे अजल सैयद नुरुद्दीन सम्हूदी औ जलालुद्दीन सुयूती अलैहिमर्रहमा की वफ़ात 911 हिज. में हुई और इमाम नूरुद्दीन सम्हूदी ने किताब ख़ुलासतुल–वफ़ा शरीफ़ 893 हिज. में तस्नीफ़ फरमाई। वह इस किताब के चौथे बाब की सोलहवीं फ़स्ल में मदीना पाक के चिराग़ाँ का ज़िक्र फरमाते हैं और फरमाते हैं।

लेकिन जो सोने चाँदी की क़िन्दीलें रौज़-ए-मुतह्हरा के इर्द गिर्द लटकी हुई हैं मुझे ख़बर नहीं कि कब से शुरू हुई। उसी मक़ाम पर फरमाते हैं। इमाम सुबुकी ने एक किताब लिखी जिसका नाम रखा। **तंज़ुलुस्सकीनतु अली क़नादीलुल-मदीनते**। और फरमाते हैं कि रौज़-ए-मुतह्हरा की यह क़िन्दीलें जाइज़ हैं इनका वक़्फ़ दुरुस्त है। इनमें से कोई चीज़ मस्जिद पर

ख़र्च नहीं हो सकती।

अल्हुम्दुलिल्लाह की मुख़ालेफ़ीन के तमाम सवालात का मुकम्मल जवाब हो गया।

बहसे ख़ात्मा : पंजाब और यूपी व काठियावाड़ में आम रिवाज है कि रमजान में ख़त्मे कुरआन तरावीह की शब में मसाजिद में चिराग़ाँ किया जाता है कुछ देवबन्दी इसको भी शिर्क व हराम कहते हैं यह महज़ उनकी बेदीनी है। मसाजिद की ज़ीनत ईमान की अलामत है। तफ़्सीरे रूहुल-बयान में है ज़ेरे आयत **इन्नमा यामुरू मसाजिदल्लाहे** कि हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम ने 17 सौ क़िन्दीलें बैतुल–मक़्दिस में रौशन करने का हुक्म दिया और मस्जिदे नबवी शरीफ़ में अव्वलन खुजूर की लकड़ियाँ वग़ैरह जला कर रौशनी की जाती थी। फिर तमीम दारी कुछ क़िन्दीलें और रस्सियाँ और तेल लाए। और उनको मस्जिदे नब्वी शरीफ के सुतूनों में लटका कर जलाया तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया **नौवरता मस्जिदना नव्वरल्लाहु अलैका।** तुमने हमारी मस्जिद को रौशन कर दिया अल्लाह तआला तुमको नूरानी रखे और हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने चिराग़ाँ किया और क़िन्दीलें लटकाई। हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने फरमाया : **नौवरता मस्जिदना नौवरल्लाहु क़बरका या इब्नल-ख़त्ताबे।** ऐ उमर तुमने हमारी मस्जिद को रौशन किया अल्लाह तुम्हारी क़ब्र को रौशन करे। तफ़्सीरे कबीर में आयत

इन्नमा यामुरू मसाजिदल्लाहे मन आमना बिल्लाहे की तफ़्सीर में है।

यानी जो कोई मस्जिद में चिराग़ जलाए तो जब तक मस्जिद में उसकी रौशनी रहे फ़रिश्ते और हामिलीने अर्श उसके लिए दुआए मग़्फ़िरत करते हैं।

फ़तावा रशीदिया जिल्द दोम **किताबुल-हज़र वल-इबाहत** सफ़: 112 में यह माना है कि अह्दे फ़ारूकी में कुछ सहाबा बैतुल–मुक़द्दस से वहाँ की रौशनी देख कर आए और मस्जिदे नबवी में मुतअद्दिद चिराग़ जलाए गए फिर मामून रशीद बादशाह ने आम हुक्म दिया था कि मस्जिदों में बकसरत चिराग़ जलाए जाएं। ग़र्ज़कि मस्जिद की रौशनी सुन्नते अंबिया व सुन्नते सहाबा और सुन्नते आम्मतुल-मुस्लेमीन है।

बहस क़ब्र पर अज़ान देने की तहक़ीक़

मुसलमान मैयत को क़ब्र में दफन करके अज़ान देना अह्ले सुन्नत के नज़्दीक जाइज़ है जिसके बहुत से दलाइल हैं। मगर वहाबी देवबन्दी इसको बिदअत, हराम, शिर्क और न मालूम क्या क्या कहते हैं। इसलिए इस बहस के दो बाब किए जाते हैं। पहले बाब में इसका सुबूत दूसरे बाब में इस पर एतराज़ात व जवाबात **बेऔनिल्लाहे तआला व करमेही।**

पहला बाब

अज़ाने क़ब्र के सुबूत में

क़ब्र पर बाद दफन अजान देना जाइज़ है। अहादीस और फेक़्ही इबारात से इसका सुबूत है। मिश्कात शरीफ़ **किताबुल-जनाइज़ बाब मा युक़ालु इन्दा मिन हज़रेहिल-मौत**। (सफ़: 140) में है। **लक़्क़ेनू मौताकुम ला इला-हा इल्लल्लाहु** अपने मुर्दों को सिखाओ **ला इलाहा इल्लल्लाहु**। दुनियावी ज़िन्दगी ख़त्म होने पर इंसान के लिए दो बड़े ख़तरनाक वक़्त हैं। एक तो जांकनी का। दूसरा सवालाते क़ब्र बाद दफन का। कि अगर जाँकनी के वक़्त ख़ातिमा बिल-ख़ैर नसीब न हुआ। तो उम्र भर का क्या धरा सब बर्बाद गया। और अगर क़ब्र के इम्तेहान में नाकामी हुई तो आइंदा की ज़िन्दगी बर्बाद हुई। दुनिया में तो अगर एक साल इम्तेहान में फेल हो गए। तो साल आइंदा दे लो। मगर वहाँ यह भी नहीं। इसलिए ज़िन्दों को चाहिए कि इन दोनों वक़्तों में मरने वाले की इम्दाद करें कि मरते वक़्त कलिमा पढ़-पढ़ कर सुनाएं। और बाद दफन उस तक कलिमा की आवाज़ पहुँचाएं। कि उस वक़्त तो वह कलिमा पढ़ कर दुनिया से जाए और अब इस इम्तेहान में कामयाब हो। लिहाज़ा इस हदीस के दो माना हो सकते हैं। एक तो यह कि मर रहा हो उसको कलिमा सिखाओ दूसरे यह कि जो मर चुका हो उसको कलिमा सिखाओ पहले मानी मज़ाज़ी हैं और दूसरे हक़ीक़ी और बिला ज़रूरत मानी मजाज़ी लेना ठीक नहीं। लिहाज़ा हदीस का यही तरजमा हुआ कि अपने मुर्दों को क़लिमा सिखाओ और यह वक़्त दफन के बाद का है। चुनांचे शामी जिल्द अव्वल **बाबुद्दफन बहस तल्क़ीन बादल-मौत** में है।

अह्ले सुन्नत के नज़्दीक यह हदीस **लक़्क़ेनू मौताकुम** अपने हक़ीक़ी माना पर महमूल है और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से रिवायत है कि आपने दफन के बाद तल्क़ीन करने का हुक्म दिया पस क़ब्र पर कहे कि ऐ फ़लां के बेटे तू उस दीन को याद कर जिस पर था। शामी में इसी जगह है।

दफन के बाद तल्क़ीन करने से मना नहीं करना चाहिए क्योंकि इसमें कोई नुक़्सान तो है नहीं बल्कि इसमें नफ़ा है। क्योंकि मैयत ज़िक्रे इलाही से उन्स हासिल करती है जैसा कि अहादीस में आया है। इस हदीस और इन इबारात से मालूम हुआ कि दफने मैयत के बाद उसको कलिमा तैयबा की तल्क़ीन (सिखाना) मुस्तहब है। ताकि मुर्दा नकीरैन के सवालात में कामयाब हो। और अज़ान में भी कलिमा है लिहाज़ा यह तल्क़ीने मैयत है मुस्तहब है बल्कि अज़ान में पूरी तल्क़ीन है क्योंकि नकीरैन मैयत से तीन सवाल करते हैं। अव्वल तो यह कि तेरा रब कौन है? फिर यह कि तेरा दीन

क्या है? फिर यह कि इस सुनहरी जाली वाले सब्ज़ गुंबद वाले आक़ा को तू क्या कहता है? पहले सवाल का जवाब हुआ **अश्हदु अन ला इलाहा इल्लल्लाहु**। दूसरे का जवाब हुआ **हैय्या अलस्सलाते** यानी मेरा दीन वह है जिसमें पाँच नमाज़ें फ़र्ज़ हैं (सिवाए इस्लाम के किसी दीन में पाँच नमाज़ें न थीं) तीसरे का जवाब हुआ **अश्हदु अन्ना मुहम्मदर्रसूलुल्लाह**। दुर्रे मुख़्तार जिल्द अव्वल **बाबुल-अज़ान** में है कि दस जगह अजान कहना सुन्नत है जिसको अश्आर में यूं फरमाया।

नमाज़ पंजगाना के लिए बच्चा के कान में। आग लगने के वक़्त जब कि जंग वाक़े हो।

मुसाफ़िर के पीछे और जिन के ज़ाहिर होने पर। ग़ुस्सा वाले पर। जो मुसाफिर कि रास्ता भूल जाए। और मिर्गी वाले के लिए। शामी में इसी के मातहत है।

तरजमा : नमाज़ के सिवा चन्द जगह अज़ान देना सुन्नत है बच्चा के कान में ग़म्ज़दा के, मिर्गी वाले के, ग़ुस्सा वाले के कान में, जिस जानवर या आदमी की आदत ख़राब हो उसके सामने लश्करों के जंग के वक़्त। आग लग जाने के वक़्त, मैयत को क़ब्र में उतारते वक़्त, उसके पैदा होने पर क़्यास करते हुए, लेकिन इस अज़ान के सुन्नत होने का इब्ने हजर अलैहिर्रहमा ने इंकार किया है जिन की सर कशी के वक़्त। अल्लामा इब्ने हजर के इंकार का जवाब दूसरे बाब में दिया जाएगा। **इंशाअल्लाह**।

मिश्कात बाब **फ़ज़्लु अज़ान** में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया कि तुम बिलाल की अज़ान से रमज़ान की सहरी ख़त्म न कर दो। वह तो लोगों का जगाने के लिए अज़ान देते हैं। मालूम हुआ कि ज़माना नबवी में सहरी के वक़्त बजाए नौबत या गोले के अज़ान दी जाती थी लिहाज़ा सोते को जगाने के लिए अज़ान देना सुन्नत से साबित है।

अज़ान के सात फाइदे हैं जिनका पता हदीस और फ़ुक़हा के अक़्वाल से चलता है। हम वह फ़ाइदे अर्ज़ किए देते हैं। ख़ुद मालूम हो जाएगा कि मैयत को उनमें से कौन-कौन से फ़ाइदे हासिल होंगे अव्वलन तो यह कि मैयत को तल्क़ीने जवाबात है जैसा कि बयान किया जा चुका है। दूसरे अज़ान की आवाज़ से शैतान भागता है। मिश्कात **बाबुल-अज़ान** (सफ़: 64) में **इज़ा नूदिय-लिस्सलाते अदबरश्शैतानु लहू सिरातुन हत्ता ला यस्मउत्ताज़ीना**। जब नमाज़ की अज़ान होती है तो शैतान गूज़ (पाद फुस्की) लगाता हुआ भागता है यहाँ तक कि अज़ान नहीं सुनता। और जिस तरह कि बवक़्ते मौत शैतान मरने वाले को वरग़लाता है ताकि ईमान छीन ले। इसी तरह क़ब्र में भी पहुँचता है और बहकाता है कि तू मुझे ख़ुदा कह दे। ताकि मैयत इस आख़िरी इम्तिहान में फेल हो जाए **अल्लाहुम्मह फ़िज़ना मिन्**

चुनांचे नवारिदुल-वसूल में इमाम मुहम्मद इब्ने अली तिर्मिज़ी फरमाते हैं।

तरजमा : यानी जबकि मैयत से सवाल होता है कि कि तेरा रब कौन है तो शैतान अपनी तरफ इशारा करके कहता है कि मैं तेरा रब हूँ।

इसी लिए साबित है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने मैयत के सवालात के वक़्त उसके लिए साबित क़दम रहने की दुआ फरमाई अब अज़ान की बरकत से शैतान दफ़ा हो गया मैयत को अमन मिल गई और बहकाने वाला गया।

तीसरे यह कि अज़ान दिल की वहशत को दूर करती है अबू नईम और इब्ने असाकिर ने अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत फरमाई **नज़ला आदमु बिल-हिन्दे वस्तौहशा फ़नज़ला जिब्रीलु फ़नादा बिल-आज़ान।** हज़रत आदम अलैहिस्सलाम हिन्दुस्तान में उतरे और उनको सख़्त वहशत हुई, फिर जिब्रील आए और अज़ान दी। इसी तरह **मदारिजुन्नबुव्वत** जिल्द अव्वल सफः 62 बाब सोम दर बयाने आयात शर्फ़ वे में है "और मैयत भी उस वक़्त अज़ीज़ व अक़ारिब से छूट कर तीरह व तारीक मकान में अकेला पहुँचता है सख़्त वहशत है और वहशत में हवास बाख़्ता हो कर इम्तेहान में नाकामी का ख़तरा है। अज़ान से दिल को इत्मीनान होगा जवाब दुरुस्त देगा।" चौथे यह कि अज़ान की बरकत से ग़म दूर होता है और दिल को सुरूर हासिल होता है। मसनदुल-फ़िरदौस में हज़रत अली रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है।

तरजमा : मुझको हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने रंजीदा देखा तो फरमाया कि ऐ अबी तालिब के बेटे क्या वजह है कि तुमको रंजीदा पाता हूँ तुम किसी को हुक्म दो कि तुम्हारे कान में अज़ान कह दे क्योंकि अज़ान ग़म को दूर करने वाली है।

बुज़ुर्गाने दीन हत्ता कि इब्ने हजर अलैहिर्रहमा भी फरमाते हैं कि **जर्रबतुहू फ़वजत्तुहू कज़ालिका कजा फ़िल-मिर्क़ात। मिर्क़ातें शुरू बाबुल-अज़ान।** में है यानी मैंने इसको आज़माया मुफ़ीद पाया। अब मुर्दे के दिल पर उस वक़्त जो सदमा है अज़ान की बरकत से दूर होगा और सुरूर हासिल होगा।

पाँचवीं यह कि अज़ान की बरकत से लगी हुई आग बुझती है। अबू लैला ने अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत किया। **अत्फ़े-उल-हरीक़ा बित्तक्बीरे** और **इज़ा रऐतुमुल-हरीक़ा फ़कब्बेरू फ़इन्नहू लेयुत्फ़ी अन्नारा।** लगी हुई आग को तक्बीर से बुझाओ और जब कि तुम आग लगी हुई देखो तो तक्बीर कहो। क्योंकि यह आग को बुझाती है और अजान में तक्बीर तो है अल्लाहु अक्बर। लिहाज़ा अगर क़ब्र मैयत में आग लगी हुई हो तो उम्मीद है कि ख़ुदाए पाक इसकी बरकत से बुझा दे।

छठे यह कि अज़ान ज़िक्रुल्लाह है और ज़िक्रुल्लाह की बरकत से अज़ाबे

क़ब्र दूर होता है और क़ब्र फ़राख़ होती है तंगी क़ब्र से नजात मिलती है। इमाम अहमद व तबरानी व बैहक़ी ने जाबिर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से सअद इब्ने मआज़ रज़ि अल्लाहु अन्हु के दफन का वाक़या नक़्ल करके रिवायत की –

तरजमा : बाद दफन हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने सुब्हानल्लाह सुब्हानल्लाह फरमाया। फिर अल्लाहु अक्बर हुज़ूर ने भी फरमाया और दीगर हज़रात ने भी। लोगों ने अर्ज़ किया या हबीबल्लाह तस्बीह व तक्बीर क्यों पढ़ी? इरशाद फरमाया कि इस सालेह बन्दे पर क़ब्र तंग हो गई थी अल्लाह ने क़ब्र को कुशादा फरमाया। इसकी शरह में अल्लामा तैबी फरमाते हैं।

यानी हम और तुम लोग तक्बीर व तस्बीह कहते रहे यहाँ तक कि अल्लाह ने क़ब्र को कुशादा फरमा दिया। सातवें यह कि अज़ान में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का ज़िक्र है और सालेहीन के ज़िक्र के वक़्त नुज़ूले रहमत होता है। इमाम सुफ़ियान इब्ने उऐना फ़रमाते हैं **इन्दा ज़िकरिस्सालेहीना तंज़िलुर्रहमतु।** और मैयत को उस वक़्त रहमत की सख़्त ज़रूरत है। ग़र्ज़कि हमारी थोड़ी सी जुंबिश ज़बान से अगर मैयत को इतने बड़े-बड़े सात फ़ाइदे पहुँच जाएं तो क्या हरज है?

साबित हुआ कि क़ब्र पर अज़ान देना बाइसे सवाब है। शामी **बाब सुननल-वुज़ू** में है **अल-अस्लु फ़िल-अश्याइल-एबाहतु।** तमाम चीज़ों में असल यह है कि वह जायज़ हैं यानी जिसको शरीअते मुतह्हरा मना न करे वह मुबाह है और जो जायज़ काम नीयते ख़ैर से किया जाए वह मुस्तहब है। शुरू मिश्कात (सफ़: 11) में है। **इन्नमल-आमालु बिन्नियात।** शामी **बहसु सननिल-वुज़ू** में है। **इन्नल-फ़र्क़ा बैनल-आदते वल-इबादते हुवन्नियतुल-मुतज़म्मेनतु लिल-इख़्लासे** आदत और इबादत में फ़र्क़ नीयत इख़्लास से है यानी जो काम भी इख़्लास से किया जाए वह इबादत है। और जो काम बग़ैर इख़्लास के हो वह आदत। दुर्रे मुख़्तार **बहसु मुस्तहब्बातुल-वुज़ू** में है।

मुस्तहब वह काम है जिसको हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने कभी किया और कभी न किया और वह भी है जिसको गुज़िश्ता मुसलमान अच्छा जानतें हों। शामी बहस दफन ज़ेरे इबारत **वला युजस्ससु** है **वक़ाला अलैहिस्सलामु मा रआहुल-मुमिनूना हसनन फ़हुवा इन्दल्लाहे हसनुन।** जिसको मुसलमान अच्छा समझें वह अल्लाह के नज़्दीक भी अच्छा है। इन इबारात से साबित हुआ कि चूंकि अज़ाने क़ब्र शरीअत में मना नहीं लिहाज़ा जाइज़ है और चूंकि इसको बनीयते इख़्लास मुसलमान भाई के नफ़ा के लिए किया जाता है लिहाज़ा यह मुस्तहब है और मुसलमान इसको अच्छा समझते हैं लिहाज़ा यह इन्दल्लाह अच्छी है। ख़ुद देवबन्दियों के पेशवा मौलवी रशीद

अहमद साहब गंगोही फ़तावा रशीदीया जिल्द अव्वल **किताबुल-अक़ाइद** सफ़: 14 में फरमाते हैं "किसी ने सवाल किया है कि तल्क़ीन बाद दफ़न साबित है या नहीं। तो जवाब दिया कि यह मसला अहदे सहाबा में से मुख़्तलिफ़ **फ़ीहा** है। इसका फ़ैसला कोई नहीं कर सकता। तल्क़ीन करना बाद दफन इस पर मब्नी है जिस पर अमल करे दुरुस्त है। रशीद अहमद।

दूसरा बाब

अज़ाने क़ब्र पर ऐतराज़ात व जवाबात में

इस मसला में मुख़ालेफ़ीन के हस्बे ज़ैल ऐतराज़ात हैं। इंशा अल्लाह इसके अलावा और न मिलेंगे।

(1) क़ब्र पर अजान देना बिदअत है और हर बिदअत हराम लिहाज़ा यह भी हराम हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से साबित नहीं। वही पुराना सबक़।

जवाब : हम पहले बाब में साबित कर चुके हैं कि बाद दफन ज़िक्रुल्लाह तस्बीह व तक्बीर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से साबित है और जिसकी असल साबित हो वह सुन्नत है उस पर ज़्यादती करना मना नहीं। फुक़हा फरमाते हैं कि हज में तल्बीह के जो अल्फ़ाज़ अहादीस से मन्कूल हैं उनमें कमी न करे। अगर कुछ बढ़ा दे तो जाइज़ है (हिदायह वग़ैरह) अज़ान में तक्बीर भी है और कुछ ज़्यादा भी। लिहाज़ा यह सुन्नत से साबित है। और अगर बिदअत भी हो तो हसना है जैसे कि हम बहस बिदआत में अर्ज़ कर चुके हैं। फ़तावा रशीदीया ज़िल्द अव्वल **किताबुल-बिदआत** सफ़: 89 पर है कि किसी ने देवबन्दियों के सरदार रशीद अहदम साहब से पूछा कि किसी मुसीबत के वक़्त बुख़ारी शरीफ़ का ख़त्म करना क़ुरूने सलासा से साबित है या नहीं और बिदअत है या नहीं?

जवाब : क़ुरूने सलासा में बुख़ारी तालीफ़ नहीं हुई थी मगर इसका ख़त्म दुरुस्त है कि ज़िक्रे ख़ैर के बाद दुआ क़बूल होती है। इसकी असल शरअ़ से साबित है। बिदअत नहीं। रशीद अहमद अफ़ि अन्हु।

इसी किताब में सफ़: 88 पर है "कि खाना तारीख़े मुईन पर खिलाना बिदअत है अगरचे सवाब पहुँचेगा" रशीद अहमद।

कहिए जनाब यह ख़त्मे बुख़ारी और बर्सी की फ़ातिहा पर सवाब क्यों हो रहा है? यह तो बिदअत है और हर बिदअत हराम है, हराम पर सवाब कैसा?

नोट ज़रूरी : मदरसा देवबन्द में मुसीबत के वक़्त ख़त्मे बुख़ारी वहाँ के तलबा से कराया जाता है अह्ले हाजत तलबा को शीरीनी देते हैं और रुपया नफ़ा में रहा। कम अज़ कम पन्द्रह रुपया वसूल किए जाते हैं। शायद यह बिदअत इस लिए जाइज़ हो कि मदरसा को रुपया की ज़रूरत है और यह हुसूले ज़र का ज़रिया। लेकिन अब क़ब्र मोमिन पर अज़ान क्यों हराम?

(2) शामी ने **बाबुल-अज़ान** में जहाँ के मौक़ा शुमार किए हैं वहाँ अज़ाने क़ब्र का भी ज़िक्र फरमाया मगर साथ ही फरमाया **लाकिन्ना रद्दहू इब्नु हजरिन फ़ी शरहिल-उबाबे।** इस अज़ान की इब्ने हजर ने शरह उबाब में तरदीद कर दी है मालूम हुआ कि अज़ाने क़ब्र मरदूद है।

जवाब : अव्वलन तो इब्ने हजर शाफ़ई मज़्हब हैं बहुत से उलमा जिनमें कुछ अहनाफ़ भी शामिल हैं फरमाते हैं कि अज़ाने क़ब्र सुन्नत है और इमाम इब्ने हजर शाफ़ई इसकी तरदीद करते हैं तो बताओ कि हन्फ़ीयों को मसअला जम्हूर पर अमल करना होगा कि क़ौले शाफ़ई पर? दोम इमाम इब्ने हजर ने भी अज़ाने क़ब्र को मना न किया बल्कि इसके सुन्नत होने का इंकार किया यानी यह सुन्नत नहीं। अगर मैं कहूँ कि बुख़ारी छापना सुन्नत नहीं बिल्कुल दुरुस्त है। क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना में न बुख़ारी थी न प्रेस। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि जाइज़ भी नहीं। शामी ने इस मौक़ा पर फरमाया **वक़द यसुन्नुल-आज़ानु** इन मौक़ों पर अज़ान सुन्नत है। आगे फरमाया **रद्दहू** इसकी इब्ने हजर ने तरदीद की तो किस चीज़ की तरदीद हुई? सुन्नियत की। शामी समझने के लिए अक़्ल व ईमान की ज़रूरत है। तीसरे यह अगर मान भी लो कि अल्लामा इब्ने हजर अलैहिर्रहमा ने ख़ुद अज़ान की तरदीद की। तो क्या किसी आलिम के तरदीद करने से कराहत या हुरमत साबित हो सकती है हरगिज़ नहीं। बल्कि इसके लिए दलीले शरई की ज़रूरत है। बिला दलीले शरई कराहते तंज़ीही भी साबित नहीं होती। शामी **बहस मुस्तहब्बातिल-वुज़ू** में है। **वला यल्ज़मु मिन तरकिल-मुस्तहब्बे सुबूतुल-कराहते इज़ ला बुद्दा लहू मिन दलीलिन ख़ासिन।** तर्क मुस्तहब से कराहत साबित नहीं होती क्योंकि कराहत के लिए दलीले ख़ास की ज़रूरत है। शामी जिल्द अव्वल बहस **मकरूहातिस्सलाते ब्यानुल-मुस्तहब्बे वस्सुन्नते वल-मन्दूबे।** (सफ़: 302) में है।

मुस्तहब के तर्क से यह लाज़िम नहीं आता कि वह मकरूह हो जाए बग़ैर ख़ास मुमानेअत के क्योंकि कराहत हुक्मे शरई है इसके लिए ख़ास दलील की ज़रूरत है। आप तो अज़ाने क़ब्र को हराम फरमाते हैं। फ़ुक़हा बेग़ैर ख़ास मुमानेअत के किसी चीज़ को मकरूहे तंज़ीही भी नहीं मानते।

अगर कहा जाए कि शामी ने अज़ाने क़ब्र को **क़ीला** से बयान किया और **क़ीला** ज़ुअफ़ की अलामत है तो जवाब यह है कि फ़िक़ह में क़ीला ज़ुअफ़ के लिए लाज़िम नहीं। शामी **किताबुस्सौम फ़स्ले कफ़्फ़ारा** में है। **फ़ताबीरुल-मुसन्निफ़े बेक़ीला लैसा यल्ज़मुज़्ज़ुअफ़ा।** इसी तरह शामी बहस दफ़्ने मैयत में **ज़िक्र मअल-जनाज़ा** के लिए फ़रमाया **क़ीला तहरीमन व क़ीला तंज़ीहन** देखो यहाँ दो क़ौल थे और दोनों **क़ीला** से नक़्ल किए। आलमगीरी **किताबुल-वक़्फ़े बहसु मस्जिद** में है व **क़ीला हुवा मस्जिदुन**

अबदन वहुवल-असहहु यहाँ सही क़ौल **क़ीला** से बयान किया। मालूम हुआ कि **क़ीला** दलीले ज़ुअफ़ नहीं। और अगर मान भी लिया जाए तो भी इस अज़ान को सुन्नत कहना ज़ुअफ़ होगा न कि ना जाइज़ कहना क्योंकि यह सुन्नत ही का क़ौल है। हम भी अज़ाने क़ब्र सुन्नत नहीं कहते सिर्फ़ जाइज़ व मुस्तहब कहते हैं।

(3) फ़ुक़हा फरमाते हैं कि क़ब्र पर जा कर सिवाए फ़ातिहा के कुछ न करे और अज़ाने क़ब्र फ़ातिहा के अलावा है लिहाज़ा हराम है। चुनांचे **बहरुर्राइक़** में है।

यानी मैयत को क़ब्र में उतारते वक़्त अज़ान देना सुन्नत नहीं है जैसा कि आजकल मुरव्वज है और इब्ने हजर ने तसरीह फरमा दी कि यह बिदअत है और जो कोई इसको सुन्नत जाने वह दुरुस्त नहीं कहता।

दुर्रुल-बह्हार में है —

जो बिदअतें कि हिन्दुस्तान में शाए हो गईं उनमें से दफन के बाद क़ब्र पर अज़ान देना है। तौशीह शरह तंक़ीह में महमूद बल्ख़ी अलैहिर्रहमा फरमाते हैं **अल-आज़ानु अलल-क़बरे लैसा बेशैइन**। क़ब्र पर अज़ान देना कुछ नहीं। मौलवी इस्हाक़ साहब मेअते मसाइल में फरमाते हैं कि क़ब्र पर अज़ान देना मक्रूह है क्योंकि यह साबित नहीं और जो सुन्नत से साबित न हो वह मक्रूह होता है।

जवाब : बहरुर्राइक़ का यह फ़रमाना कि क़ब्र पर जा कर सिवाए ज़ियारत व दुआ और कुछ करना मक्रूह है बिल्कुल दुरुस्त है वह ज़्यारते कुबूर के वक़्त फरमाते हैं यानी जब वहाँ ज़्यारत की नीयत से जाए तो क़ब्र को चूमना या सज्दा करना वग़ैरह नाजाइज़ काम न करे और यहाँ गुफ़्तगू है दफन के वक़्त यह ज़्यारत का वक़्त नहीं है। अगर वक़्ते दफन भी उसमें शामिल है। तो लाज़िम होगा कि मैयत को क़ब्र में उतारना, तख़्ता देना, मिट्टी डालना और बाद दफन तल्क़ीन करना, जिसको फ़तावा रशीदिया में भी जाइज़ कहा है सब मना हो। पस मुर्दे को जंगल में रख कर फ़ातिहा पढ़ कर भाग आना चाहिए। और ज़्यारते क़ब्र के वक़्त भी मना काम करना मना है। वही इबारत **बहरुर्राइक़** का मक़्सूद है। वरना मुर्दों को सलाम करना या उनके कुबूर पर सब्ज़ा या फूल डालना बिल-इत्तिफ़ाक़ जाइज़ है। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से साबित है। और **बहरुर्राइक़** में फरमा रहे हैं कि वहाँ बजुज़ ज़्यारत और खड़े हो कर दुआ करने के कुछ भी न करे। मौलवी अशरफ़ साहब की **हिफ़्ज़ुल-ईमान** में एक सवाल है कि शाह वलीयुल्लाह साहब कश्फ़े कुबूर का तरीक़ा बयान फरमाते हैं "यानी इसके बाद सात चक्कर तवाफ़ करे और उसमें तक्बीर कहे और दाहिनी तरफ़ से शुरू करे और क़ब्र के पाँव की तरफ अपना रुख़्सार रखे तो क्या क़ब्र का तवाफ़ और सज्दा जाइज़ है? इसका जवाब **हिफ़्ज़ुल-ईमान** सफ़: 6 पर देते हैं। यह

तवाफ़ इस्तेलाही नहीं है जो कि ताज़ीम व तक़र्रुब के लिए किया जाता है। और जिसकी मुमानेअत नुसूसे शरईया से साबित है बल्कि तवाफ़े लुग्वी है यानी इसके इर्द गिर्द फिरना वास्ते पैदा करने मुसाबिते रूही के साहिबे क़ब्र के साथ और लेने फ़ुयूज़ के। इसकी नज़ीर हज़रत जाबिर के क़िस्से में वारिद हुई है जबकि उनके वालिद मक़रूज़ हो कर वफ़ात पा गए और क़र्ज़ ख़्वाहों ने हज़रत जाबिर को तंग किया। उन्होंने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से अर्ज़ किया कि बाग़ में तशरीफ़ ला कर रिआयत करा दीजिए। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम बाग़ में रौनक़ अफ़्रोज़ हुए और छोहारों के अंबार लगवा कर बड़े अंबार के गिर्द तीन बार फिरे **ताफ़ा हौला आज़मे हा बैदरन।** यह हुज़ूर का फ़िरना कोई तवाफ़ न था बल्कि इसमें असर पहुँचाने के लिए इसकी चारों तरफ फिर गए। इसी तरह **कश्फ़ुल-कुबूर** के अमल में है। कहिए अगर अज़ाने क़ब्र इसलिए मना है कि क़ब्र पर बजुज़ ज़्यारत व दुआ कोई काम जाइज़ नहीं तो यह क़ब्र का तवाफ़ और इससे फ़ैज़ लेना क्यों जाइज़ है? लिहाज़ा **बहरुर्राइक़** की ज़ाहिरी इबारत आपके मुवाफ़िक़ नहीं। पुर लुत्फ़ बात यह है कि **हिफ़्ज़ुल-ईमान** की इस इबारत से मालूम हुआ कि क़ब्रों से फ़ैज़ मिलता है और फ़ैज़ के लिए वहाँ जाना और तवाफ़ करना, क़ब्र पर रुख़्सारा रखना जाइज़ है उसकी को **तक़्वियतुल-ईमान** में शिर्क कहा है। शामी को तौशीह वग़ैरह की इबारतों का जवाब सवाल नम्बर 1 के मातहत गुज़र गया कि इसमें सुन्नत का इंकार है न कि जवाज़ का। तौशीह का फरमाना **लैसा बेशैइन** इसके मानी यह नहीं कि हराम है मुराद यह है कि न फ़र्ज़ है न वाजिब न सुन्नत महज़ जाइज़ और मुस्तहब है और इसको सुन्नत या वाजिब समझना महज़ ग़लत है। जो फुक़हा कि इसको बिदअत फरमाते हैं वह बिदअते जाइज़ा या कि बिदअते मुस्तहब्बा फरमाते हैं न कि बिदअते मक्रूहा क्योंकि बिला दलील कराहत साबित नहीं होती। मौलवी इसहाक़ साहब देवबन्दियों के पेशवा हैं उनका क़ौल हुज्जत नहीं। और न यह क़ायदा सही है जो कि सुन्नत से साबित न हो वह मक्रूह है। वरना कुरआन के सिपारे और ऐराब और बुख़ारी भी मक्रूह होगी क्योंकि यह सुन्नत से साबित नहीं। दुर्रे मुख़्तार **बाब सलातिल-ईदैन मतलब फ़ी तक्बीरित्तश्रीक़** में है।

व वुक़ूफ़िन्नासे यौमा अरफ़तन फ़ी ग़ैरेहा तश्बीहन बिल-वाक़ेफ़ीना लैसा बेशैइन।

इसी के मातहत शामी में है।

हिदायह के हाशिया में **लैसा बेशैइन** के मातहत फरमाते हैं। **ऐ लैसा बेशैइन यतअल्लक़ु बेहिस्सवाु वहुवा यस्दुक़ु अलल-इबाहते।** इन इबारात से मालूम हुआ कि **लैसा बशैइन** जायज़ को भी कहा जाता है।

(4) अज़ान तो नमाज़ की इत्तिला के लिए है दफ़न के वक़्त कौन सी नमाज़ हो रही है कि जिसकी इत्तिला देना मंज़ूर है। चूंकि यह अज़ान बेकार है पस नाजाइज़ है।

जवाब : यह ख़्याल ग़लत है कि अज़ान फ़क़त नमाज़ की इत्तिला के लिए है। हम पहले बाब में अर्ज़ कर चुके हैं कि अज़ान कितनी जगह कहनी चाहिए। आख़िर बच्चा के कान में अज़ान दी जाती है वहाँ कौन सी नमाज़ का वक़्त है। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माने में रमज़ान की शब में दो अज़ानें होती थीं। एक तो सहरी के लिए बेदार करने को दूसरी नमाज़ फज्र के लिए।

लतीफ़ा : काठियावाड़ में रिवाज है कि बाद नमाज़े फज्र मुसाफ़हा करते हैं और यूपी में रिवाज है कि बाद नमाज़ ईद मुआनक़ा (गले मिलना) करते हैं। एक साहब ने हमसे दरयाफ़्त किया कि मुआनक़ा या मुसाफ़हा अव्वल मुलाक़ात के वक़्त चाहिए। नमाज़ के बाद तो लोग रुख़्सत हो रहे हैं फिर इस वक़्त यह क्यों होता है। यह मुसाफ़हा और मुआनक़ा बिदअत है लिहाज़ा हराम है। हमने अर्ज़ किया कि मुआनक़ा हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से साबित है। मिश्कात **किताबुल-अदब** में एक बाब ही इसका बांधा **बाबुल-मुसाफ़हा वल-मुआनक़ा** और वहाँ लिखा कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने ज़ैद इब्ने हारसा रज़ि अल्लाहु अन्हु से मुआनक़ा फरमाया। हदीस की रविश बताती है कि यह मुआनक़ा ख़ुशी का था और ईद का दिन भी ख़ुशी का दिन है इसलिए इज़्हारे ख़ुशी में मुआनक़ा करते हैं। और दुर्रे मुख़्तार जिल्द पंजुम **बाबुल-कराहियते बाबुल-इस्तिबरा** में है।

मुसाफ़हा जाइज़ है अगरचे नमाज़े अस्र के बाद हो और फुक़हा का फरमाना कि मुसाफ़हा बाद नमाज़े अस्र बिदअत है। यानी बिदअते मुबाहा हसना है जैसा कि नुववी ने अपने अज़्कार में फरमाया। इसके मातहत शामी में फरमाते हैं।

हर मुलाक़ात के वक़्त मुसाफ़हा करना मुस्तहब है और फ़ज्र के बाद मुसाफ़हा का जो रिवाज है उसकी शरीअत में कोई असल नहीं। लेकिन इसमें हरज भी नहीं और सुबह या अस्र की क़ैद फ़क़त लोगों की आदत की बिना पर है वरना हर नमाज़ के बाद मुसाफ़हा का यही हुक्म है। इससे मालूम होता है कि मुसाफ़हा बहरहाल जाइज़ है लेकिन उसकी तसल्ली न हुई यही कहता रहा कि मुसाफ़हा मुआनक़ा अव्वल मुलाक़ात के वक़्त चाहिए। हमने कहा अच्छा बताओ अव्वल मुलाक़ात किसे कहते हैं? बोला ग़ायब होने के बाद जब मिलें। तो यह अव्वल मुलाक़ात है। हमने कहा। ग़ायब होने की दो सूरतें हैं। एक तो यह कि जिस्मन ग़ायब हों दूसरे यह कि दिली तौर पर ग़ायब हों नमाज़ की हालत में अगरचे बज़ाहिर तमाम मुक़्तदी और इमाम एक जगह

ही रहे मगर हुक्मी लिहाज़ से सब एक दूसरे से ग़ायब थे कि न किसी से कलाम कर सकें न एक दूसरे की मदद। बल्कि यह तमाम लोग दुनिया ही से ग़ायब हैं कि खाना, पीना, चलना, फिरना तमाम दुनियावी काम हराम हैं और **अस्सलातु मेअ़राजुल-मुमिनीन** का नक़्शा नज़र आ रहा है। दुनिया से तअल्लुक़ कटा हुआ है और वासिल इलल्लाह हैं जब सलाम फेरा। अब दुनिया में आ गए। तमाम दुनियावी काम हलाल हो गए। यह वक़्त ग़ायब होने के बाद मिलने का है लिहाज़ा मुसाफ़हा सुन्नत है। वह कहने लगा कि यह तो मंतिक़ से समझा दिया। इसको शरीअत ने तो मुलाक़ात का वक़्त नहीं माना।

हमने कहा कि माना है। उस वक़्त सलाम किस को करते हैं और क्यों करते हैं? इमाम को चाहिए कि सलाम में मुक़्तिदयों और मलाइका को सलाम करने की नीयत करे और मुक़्तदी लोग इमाम को और मलाइका को। और तन्हा नमाज़ी सिर्फ़ मलाइका की नीयत करे। और सलाम या तो मुलाक़ात के वक़्त होता है या रुख़्सत के वक़्त। बताओ यह सलाम कैसा? आया यह लोग कहीं से आ रहे हैं या कि जा रहे हैं? जा तो नहीं रहे हैं क्योंकि अभी दुआ माँगेंगे वज़ीफ़ा पढ़ेंगे। बाज़ लोग इशराक़ पढ़ कर उठेंगे। मालूम हुआ कि आलमे बाला की सैर करके आ रहे हैं और सलाम करे रहे हैं लिहाज़ा मुसाफ़हा भी करें तो क्या हरज है? कहने लगा कि फिर तो हर नमाज़ के बाद चाहिए हमने कहा कि हाँ अगर हर नमाज़ के बाद करे तब भी मना नहीं है। अल्हम्दुलिल्लाह कि उसकी तस्कीन हो गई। इसी तरह यह मसला अज़ान है।

बहस उर्से बुज़ुर्गान

इस बहस के दो बाब हैं पहला बाब उर्स के सुबूत में दूसरा बाब मसला उर्स पर ऐतराज़ात व जवाबात में

पहला बाब

सुबूते उर्स में

उर्स के लुग्वी मानी हैं शादी। इसलिए दूल्हा और दुल्हन को उरूस कहते हैं। बुज़ुर्गाने दीन की तारीख़े वफ़ात को इसलिए उर्स कहते हैं कि मिश्कात **बाब इस्बाते अज़ाबिल-क़ब्र** में है कि जब नकीरैन मैयत का इम्तेहान लेते हैं और वह कामयाब होता है तो वह कहते हैं **नम कनौमतिल-अरूसिल्लज़ी ला यूक़िज़ुहू इल्ला अहब्बु अहलेही इलैहि**। तू उस दुल्हन की तरह सो जा जिसको सिवाए उसके प्यारे के कोई नहीं उठा सकता तो चूंकि उस दिन

नकीरैन ने उनको उरूस कहा इसलिए वह दिन रोज़े उर्स कहलाया इसलिए कि वह जमाले मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम के देखने का दिन है कि नकीरैन दिखा कर पूछते हैं कि तू इनको क्या कहता था और वह तो ख़िल्क़त के दूल्हा हैं तमाम आलम इन ही के दम की बहार है और विसाले महबूब का दिन उर्स का दिन है लिहाज़ा यह दिन उर्स कहलाया। उर्स की हक़ीक़त सिर्फ़ इस क़दर है कि हर साल तारीख़े वफ़ात पर क़ब्र की ज़्यारत करना और कुरआन ख़्वानी व सदक़ात का सवाब पहुँचाना, इस असल उर्स का सुबूत हदीस पाक और अक़्वाले फ़ुक़हा से है। शामी जिल्द अव्वल **बाब ज़्यारतिल-कुबूर** में है।

इब्ने अबी शैबा ने रिवायत किया कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम हर साल शुहदा उहद की क़ब्रों पर तशरीफ़ ले जाते थे। तफ़्सीरे कबीर और तफ़्सीरे दुर्रे मंसूर में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से साबित है कि आप हर साल शुहदा की क़ब्रों पर तशरीफ़ ले जाते और उनको सलाम फ़रमाते थे और चारों खुलफ़ा भी ऐसा ही करते थे।

शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब फ़तावा अज़ीज़िया सफ़: 45 में फ़रमाते हैं।

दूसरे यह कि बहुत से लोग जमा हों और ख़त्मे कुरआन करें और खाने शीरीनी पर फ़ातिहा करके हाज़िरीन में तक़्सीम करें यह क़िस्म हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के ज़माना में मुरव्वज न थी। लेकिन अगर कोई करे तो हरज नहीं बल्कि ज़िन्दों से मुर्दों को फ़ाइदा हासिल होता है। **ज़ुब्दतुन्नसाइह फ़ी मसाइलिज़्ज़बाइए** में शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब और मौलवी अब्दुल-हकीम साहब सियालकोटी अलैहिमर्रहमा वरिज़्वान को जवाब देते हुए फ़रमाते हैं।

यह तअन लोगों के हालात से ख़बरदार न होने की वजह से है कोई शख़्स भी शरीअत के मुक़र्रर करदा फ़राइज़ के सिवा को फ़र्ज़ नहीं जानता। हाँ सालेहीन की क़ब्रों से बरकत लेना और ईसाले सवाब और तिलावते कुरआन और तक़्सीमे शीरीनी व तआम से उनकी मदद करना इज्माए उलमा से अच्छा है। उर्स का दिन इसलिए मुक़र्रर है कि वह दिन उनकी वफ़ात को याद दिलाता है। वरना जिस दिन भी यह काम किया जाए अच्छा है। हज़रत शैख़ अब्दुल-कुद्दूस गंगोही मक्तूब 182 में मौलाना जलालुद्दीन को लिखते हैं।

पीरों का उर्स पीरों के तरीक़ा से क़व्वाली और सफ़ाई के साथ जारी रखें। मौलवी रशीद अहमद व अशरफ़ अली साहिबान के पीर हाजी इम्दादुल्लाह साहब अपने फ़ैसला हफ़्त मसला में उर्स के जवाज़ पर बहुत ज़ोर देते हैं ख़ुद अपना अमल यूं **बयान फ़रमाते** हैं। "फ़क़ीर का मशरब इस अम्र में यह है कि हर साल अपने **पीर व मुर्शिद** की रूह मुबारक पर ईसाले

सवाब करता हूँ अव्वल कुरआन ख़्वानी होती है और कभी–कभी अगर वक़्त में गुंजाइश हो तो मौलूद पढ़ा जाता है। फिर मा हज़र खाना खिलाया जाता है और इसका सवाब बख़्श दिया जाता है। मौलवी रशीद अहमद साहब असल उर्स को जाइज़ मानते हैं। चुनांचे फ़तावा रशीदीया जिल्द अव्वल **किताबुल-बिदआत** सफ़: 92 में फरमाते हैं। "बहुत चीज़ें हैं कि अव्वल जायज़ थीं फिर किसी वक़्त मना हो गईं। मजिलसे उर्स व मौलूद भी ऐसा ही है। अह्ले अरब से मालूम हुआ कि अरब शरीफ़ के लोग हज़रत सैयद अहमद बदवी रहमतुल्लाह अलैह का उर्स बहुत धूम धाम से करते हैं ख़ास कर उलमाए मदीना मुनव्वरह हज़रत अमीर हम्ज़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु का उर्स करते रहे जिनका मज़ार मुक़द्दस उहद पहाड़ पर है। गर्ज़ेकि दुनिया भर के मुसलमान खुसूसन अह्ले मदीना उर्स पर कारबन्द हैं और जिसको मुसलमान अच्छा जानें वह इन्दल्लाह भी अच्छा है।" अक़्ल भी चाहती है कि उर्स बुज़ुर्गान उम्दा चीज़ हो अव्वलन तो इसलिए कि उर्स ज़्यारते कुबूर और सदक़ात ख़ैरात का मज्मूआ है। ज़्यारते कुबूर भी सुन्नत सदक़ा, भी सुन्नत तो दो सुन्नतों का मज्मूआ हराम क्यों कर हो सकता है? मिश्कात **ज़्यारतिल-कुबूर** में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम फरमाते हैं कि हमने तुमको ज़्यारते कुबूर से मना फरमाया था **अला फ़ज़ारूहा** अब ज़रूर ज़्यारत किया करो। इससे हर तरह ज़्यारते कुबूर का जवाज़ मालूम हुआ चाहे रोज़ाना हो या साल के बाद और ख़्वाह तन्हा ज़्यारत की जाए या कि जमा हो कर। अब अपनी तरफ से इसमें कुयूद लगाना कि मज्मा के साथ ज़्यारत करना मना है। साल के बाद मुक़र्रर करके ज़्यारत करना मना महज़ बेकार है मुऐयन करके हो या बग़ैर मुऐयन किए हर तरह जाइज़ है। दोम इसलिए कि उर्स की तारीख़ मुक़र्रर होने से लोगों के जमा होने में आसानी होती है और लोग जमा हो कर कुरआन ख़्वानी, कलिमा तैयबा, दरूद पाक वग़ैरह पढ़ते हैं बहुत सी बरकात जमा हो जाती हैं। तीसरे इसलिए कि एक पीर के मुरीदीन इस तारीख़ में अपने पीर भाईयों से बिला तकल्लुफ़ मिल लेते हैं जिससे एक दूसरे के हालात से वाक़्फ़ीयत होती है और आपस में मुहब्बत बढ़ती है। चौथे इसलिए कि तालिबान को पीर तलाश करने में आसानी है। अगर किसी उर्स में पहुँचे तो वहाँ मुख़्तलिफ़ जगह के बुज़ुर्गाने दीन जमा होते हैं। उलमा सूफ़िया का मजमा होता है सबको देख कर जिस से अक़ीदत हो उससे बैअत कर ले। आख़िर हज और ज़्यारत मदीना मुनव्वरह भी तारीख़ मुक़र्रर में ही होते हैं। इसमें भी गुज़िश्ता फ़वाइद मल्हूज़ हैं हमने देवबन्दी अकाबिर की क़ब्रें भी देखी हैं न वहाँ रौनक़, न कोई फ़ातिहा ख़्वाँ, न उनको ईसाले सवाब, न किसी को उन से और न किसी से उनको फ़यूज़। उमूरे ख़ैर बन्द करने की यह बरकात हैं।

दूसरा बाब

मसला उर्स पर एतराज़ात व जवाबात में

(1) जिसको तुम बाद मौत वली समझते हो और उर्स करते हो तुमको क्या मालूम कि यह वली है। किसी के ख़ात्मा पर यक़ीन नहीं किया जा सकता कि वह मुसलमान मरा या बेदीन हो कर मरा। फिर किसी मुर्दे की विलायत क्योंकर मालूम हो सकती है? बड़े-बड़े सालेह काफिर हो कर मरते हैं?

जवाब : ज़िन्दगी के ज़ाहिरी अहकाम बाद मौत जारी होते हैं जो ज़िन्दगी में मुसलमान था बाद मौत भी उसको मुसलमान समझ कर उसकी नमाज़े जनाज़ा, कफन दफन, मीरास की तक़्सीम वग़ैरह की जाएगी। और ज़िन्दगी में काफिर था बाद मौत न उसकी नमाज़े जनाज़ा होगी, न गोर व कफन, न तक़्सीमे मीरास, शरीअत का हुक्म ज़ाहिर पर होता है फ़क़त गुमान मोतबर नहीं। इसी तरह जो ज़िन्दगी में वली हो वह बाद वफ़ात भी वली है। अगर महज़ गुमान पर अहकाम जारी हों तो कुफ़्फ़ार की नमाज़े जानज़ा पढ़ लिया करो। शायद मुसलमान हो कर मरा हो। और मुसलमान को बेजनाज़ा पढ़े आग में जला दिया करो कि शायद काफिर हो कर मरा हो। और मिश्कात **किताबुल-जनाइज़ बाबुल-मशी बिल-जनाज़ा** में बरिवायत मुस्लिम व बुख़ारी (सफ़: 145) में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के सामने एक जनाज़ा गुज़रा जिसकी लोगों ने तारीफ़ की फरमाया **वजबत** वाजिब हो गई। दूसरा जनाज़ा गुज़रा जिसकी लोगों ने बुराई की फरमाया **वजबत** वाजिब हो गई। हज़रत उमर ने पूछा कि क्या वाजिब हुई? फरमाया पहले के लिए जन्नत और दूसरे के लिए दोज़ख़। फिर फरमाया **अन्तुम शुहदाउल्लाहे फ़िल-अर्ज़े** तुम ज़मीन में अल्लाह के गवाह हो। जिससे मालूम हुआ कि आम्मतुल-मुस्लेमीन जिसको वली समझें वह अल्लाह के नज़्दीक भी वली है। मुसलमानों के मुँह से वही बात निकलती है जो कि अल्लाह के यहाँ होती है। इसी तरह जिस चीज़ को मुसलमान सवाब जानें, हलाल जानें वह अल्लाह के नज़्दीक भी बाइसे सवाब और हलाल है क्योंकि मुसलमान अल्लाह के गवाह हैं। इसी की हदीस तशरीह फ़रमाई। **मा रआहुल-मुमिनूना हसनन फ़हुवा इन्दल्लाहे हसनुन।** कुरआन फ़रमाता है व **कज़ालिका जअलनाकुम उम्मतौ व सतल्ले तकूनू शुहादाआ अलन्नासे।** हमने तुमको उम्मते आदेला बनाया ताकि तुम लोगों पर गवाह रहो। मुसलमान क़यामत में भी गवाह और दुनिया में भी। रब ने कुरआने करीम की हक़्क़ानियत और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सदाक़त के सुबूत में हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने सलाम और दीगर बुज़ुर्गों की गवाही पेश फ़रमाई। कि फरमाया **व शहिदा**

शाहिदुन मिन बनी इसराईला अला मिस्लेही। जब सालेह मुमिनीन की गवाही से नुबुव्वत साबित की जा सकती है। विलायत बदरजा औला साबित हो सकती है। और जब इस गवाही से सारे कुरआन पाक का सुबूत हो सकता है तो किसी शरई मसला का सुबूत बदरजा औला होगा?

नोट ज़रूरी : यह सवाल मक्का मुकर्रमा में हरीम शरीफ़ के नज्दी इमाम ने किया था। एक मज्मा के सामने उसका मैंने यही जवाब दिया था जिस पर उसने कहा कि यह सहाबाए किराम के लिए था कि वह जिसके मुतअल्लिक़ जो गवाही दें वैसा ही हो जाए क्योंकि वहाँ फरमाया है **अन्तुम।** हम इस ख़िताब में दाख़िल नहीं क्योंकि उस वक़्त मौजूद न थे। उसने कहा इसी मिश्कात में इसी जगह है। **वफ़ी रिवायतिन अल-मुमिनूना शुहदाअल्लाहे फ़िल-अर्ज़े।** एक रिवायत में है कि मुसलमान अल्लाह के गवाह हैं ज़मीन में। इसमें **अन्तुम** नहीं। व और कुरआन में सारे अहकाम ख़िताब के सीग़ा से आए। **अक़ीमुस्सलाता व आतुज़्ज़काता** वग़ैरह और हम कुरआन के नुज़ूल के वक़्त न थे लिहाज़ा हम इन तमाम अहकाम से बरी हैं। यह सब उमूर सिर्फ़ सहाबाए किराम के लिए थे। कुरआन व हदीस के ख़िताबात क़्यामत तक के मुसलमानों को शामिल होते हैं। अल्हम्दुलिल्लाह कि इमाम साहब को इस जवाब पर ग़ुस्सा तो आ गया मगर जवाब न आया?

(2) हदीस शरीफ़ में है **ला तत्तख़ेज़ू क़बरी ईदन।** मेरी क़ब्र को ईद न बनाओ। जिस से मालूम हुआ कि क़ब्र पर लोगों का इज्तेमा करना, मेला लगाना मना है, क्योंकि ईद से मुराद मेला है। और उर्स में इज्तेमा होता है मेला लगता है लिहाज़ा हराम है।

जवाब : यह कहाँ से मालूम हुआ कि ईद से मुराद लोगों का जमा होना है और हदीस के मानी हैं कि मेरी क़ब्र पर जमा न हो, तन्हा तन्हा आया करो। ईद के दिन ख़ुशियाँ मनाई जाती हैं। मकानात की ज़ीनत व आरास्तगी होती है खेल कूद भी होते हैं। यही इस जगह मुराद है यानी हमारी क़बरे अनवर पर हाज़िर हो तो बा अदब आओ। यहाँ आकर शोर न मचाओ खेल कूद न करो। अगर क़ब्र पर जमा होना मना है तो आज मदीना मुनव्वरह की तरफ़ क़ाफ़िले भी जाते हैं। **अल्लाहुम्मरज़ुक़्नाहु** बाद नमाज़ पंजगाना लोग जमा होकर सलाम अर्ज़ करते हैं। हाजी इम्दादुल्लाह साहब फ़ैसला हफ़्त मसला में **बहसे** उर्स में फरमाते हैं। **ला तत्तख़ेज़ू क़बरी ईदन।** इसके सही माना यह हैं कि क़ब्र पर मेला लगाना और ख़ुशियाँ और ज़ीनत व आरास्तगी धूम धाम का एहतमाम यह मना है और यह मानी नहीं कि किसी क़ब्र पर जमा होना मना है। वरना मदीना तैयबा क़ाफ़िलों का जाना वास्ते ज़्यारत रौज़-ए-अक़्दस के भी मना होता **व हाज़ा बातिलुन** पस हक़ यह है कि ज़्यारते मक़ाबिर इंफ़ेरादन व इज्तेमाअन दोनों तरह जाइज़ है या हदीस का मतलब यह है कि

तुम हमारी क़ब्र पर जल्द जल्द आया करो गिरल्ल ईद के साल भर के बाद ही न आया करो।

(3) आम उर्सों में औरतों, मर्दों का इख़्तिलात होता है, नाच रंग होते हैं, क़व्वाली गाई जाती है, ग़र्ज़कि उर्से बुज़ुर्गाने सैकड़ों मुहर्रमात का मजमूआ है इसलिए यह हराम है।

जवाब : इसका इज्माली जवाब तो यह है कि मस्नून या जाइज़ काम में हराम चीज़ों के मिल जाने से असल हलाल काम हराम नहीं हो जाता बल्कि हराम तो हराम रहता है और हलाल हलाल। शामी बहस ज़्यारते-क़ुबूर किताबुल-जनाइज़ में है।

ज़्यारते क़ुबूर इसलिए न छोड़ दे कि वहाँ नाजाइज़ काम होते हैं जैसे कि औरत मर्द का मिलना क्योंकि उन जैसी नाजाइज़ बातों से मुस्तहिब्बात नहीं छोड़े जाते बल्कि इंसान पर ज़रूरी है कि ज़्यारते क़ुबूर करे और बिदअत को रोके इसकी ताईद वह गुज़िश्ता मसला करता है कि जनाज़े के साथ जाना न छोड़े अगरचे उसके साथ नौहा करने वालियाँ हों। फ़तहे मक्का से पहले खाना-ए-काबा में बुत थे और कोहे सफ़ा व मरवह पर भी बुत थे मगर बुतों की वजह से मुसलमानों ने न तो तवाफ़ छोड़ा और न उमरा वहाँ जब अल्लाह ने क़ुदरत दी तो बुतों की वजह से मुसलमानों ने न तो तवाफ़ छोड़ा और न उमरा वहाँ जब अल्लाह ने क़ुदरत दी तो बुतों को मिटा दिया आज बाज़ारों में रेल के सफ़रों में और दुनियावी जल्सों में औरतों मर्दों का इख़्तिलात होता है ख़ुद हाजियों के जहाज़ों में किसी वक़्त तवाफ़ में मेना मुज़्दलेफ़ा में इख़्तिलात मर्द व ज़न हो जाता है मगर इनकी वजह से असल चीज़ को कोई मना नहीं करता। दीनी मदारिस में भी अक्सर औक़ात बे एहतियातियाँ हो जाती हैं मगर इनकी वजह से नफ़्से मदरसा हराम नहीं। इसी तरह उर्स है कि औरतों का वहाँ जाना हराम है। नाच रंग हराम हैं, लेकिन उनकी वजह से असल उर्स क्यों हराम हो बल्कि वहाँ जा कर इन जैसी नाजाइज़ रस्मों को रोको, लोगों को समझाओ, देखो जद्द इब्ने क़ैस मुनाफ़िक़ ने अर्ज़ किया था कि मुझे ग़ज़्व-ए-तबूक में शरीक न फरमाइए कि रूम व शाम की औरतें ख़ूबसूरत हैं और मैं औरतों का शैदाई हूं मुझे फ़ित्ना में न डालिये मगर क़ुरआने करीम ने इस उज़्र की तरदीदों में फरमाई कि **अला फ़िल-फ़ित्नते सक़तू व इन्ना जहन्नमा लमुहीततुन बिल-काफ़ेरीन।** इस उज़्र को रब ने कुफ़्र ओर ज़रिया जहन्नम बताया। देखो तफ़्सीर रूहुल-बयान। यही उज़्र आज देवबन्दी महज़ रोकने के लिए करते हैं।

आज विवाह शादी में सैकड़ों हराम रस्में होती हैं जिन से मुसलमान तबाह भी होते हैं और गुनहगार भी लेकिन इन रुसूम की वजह से कोई निकाह को हराम कह कर बन्द नहीं करता।

क़व्वाली जो आज कल आम तौर पर मुरव्वज है जिसमें गन्दे मज़ामीन के अश्आर गाए जाते हैं और फ़ासिक़ मर्दों का इज्तिमा और महज आवाज़ पर नाच होता है। यह वाक़ई हराम है लेकिन अगर किसी जगह तमाम शराइत से क़व्वाली हो गाने वाले और सुनने वाले अह्ल हों तो उसको हराम नहीं कह सकते। बड़े-बड़े सूफ़िया-ए-किराम ने ख़ास क़व्वाली को अह्ल के लिए जाइज़ फरमाया और ना अह्ल को हराम। इसकी असल वह हदीस है जो मिश्कात **किताबुल-मनाक़िब बाबु मनाक़िबे उमर** में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के सामने एक लौंडी दफ़ बजा रही थी सिद्दीक़े अकबर आए तो वह बजाती रही। उस्मान ग़नी आए। बजाती रही। मगर जब फ़ारूक़े आज़म आए रज़ि अल्लाहु अन्हुम अज्मईन, तो दफ़ को अपने नीचे डाल कर बैठ गई। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने इरशाद फरमाया कि ऐ उमर! तुम से शैतान ख़ौफ़ करता है। सवाल यह है कि यह दफ़ बजाना शैतानी काम था या कि नहीं। अगर था तो क्या हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम और सिद्दीक़े अकबर व उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु अन्हुमा से शैतान ने ख़ौफ़ न किया और उसमें ख़ुद हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम और उन सहाबा किराम रज़ि अल्लाहु अन्हुम ने शिर्कत क्यों की और अगर शैतानी काम न था तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के इस फरमान के क्या मानी? जवाब वही है कि हज़रत फ़ारूक़ के आने से क़ब्ल यही काम शैतानी न था होता रहा। और फ़ारूक़े आज़म के आते ही शैतानी बन गया बन्द हो गया इसी लिए सूफ़िया-ए-किराम ने इस पर छेः शर्तें लगाई हैं। इनमें से एक शर्त यह भी है कि मज्लिस में कोई ग़ैर अह्ल न हो वरना शैतान की इसमें शिरकत होगी। जैसे कि मजलिसे तआम में अगर कोई शख़्स बग़ैर बिस्मिल्लाह खाना शुरू कर दे तो शैतान भी इसमें शरीक हो जाता है। इससे लाज़िम यह नहीं कि हज़रत फ़ारूक़ का दरजा कुछ कम है। बल्कि सहाबा किराम के मशरब अलाहिदा अलाहिदा हैं। कुछ पर इत्तिबा ग़ालिब बाज़ पर जज़्ब-ए-मुहब्बत ग़ालिब। इसलिए असरात मुख़्तलिफ़ थे। अगर कोई ग़ौस या क़ुतुब बग़ैर बिस्मिल्लाह खाने में शिर्कत करें तो इनमें शैतान की शिर्कत हो जाती है। इससे ग़ौस की तौहीन नहीं होती।

शामी जिल्द पंजुम **किताबुल-कराहियत फ़स्ल फ़िल्लबस** से कुछ क़ब्ल है।

हाजी इम्दादुल्लाह साहब फ़ैसला हफ़्त मसला में बहस उर्से क़व्वाली के मुतअल्लिक़ फरमाते हैं "मुहक़्क़ेक़ीन का क़ौल यह है कि अगर शराइते जवाज़ जमा हों और अवारिज़ माने मुर्तफ़ा हो जाएं तो जाइज़ है वरना ना जाइज़" मौलवी रशीद साहब फ़तावा रशीदिया जिल्द अव्वल **किताबुल-हज़र**

वल-इबाहते सफः 61 पर फरमाते हैं। बिला मज़ामीर राग का सुनना जाइज़ है। अगर गाने वाला महले फ़साद न हो और मज़्मून राग का ख़िलाफ़े शरअ न हो और मुवाफ़िक़ मौसीक़ी के होना कुछ हरज नहीं। ख़ुलासा कलाम यह हुआ कि क़व्वाली अह्ल के लिए शराइत के साथ जाइज़ है। और बिला शराइत और ना अह्ल के लिए हराम है। क़व्वाली की शराइत अल्लामा शामी ने इसी **किताबुल-कराहियत** में छः बयान फरमाई हैं। मज्लिस में कोई अमरद व बेदाढ़ी का लड़का न हो, और सारी जमाअत अह्ल की हो। इसमें कोई ना अह्ल न हो। क़व्वाल की नीयत ख़ालिस हो, उजरत लेने की न हो, लोग भी खाने और लज़्ज़त लेने की नीयत से न जमा हों। बेग़ैर ग़ल्बा के वज्द में खड़े न हों। अश्आर ख़िलाफ़े शरअ न हों। और क़व्वाली का अह्ल वह है कि इस वज्द की हालत में अगर कोई तल्वार मारे ख़बर न हो। बाज़ सूफ़िया फरमाते हैं कि अह्ल वह है कि अगर सात रोज़ तक उसको खाना न दिया जाए फिर एक तरफ खाना हो और दूसरी तरफ़ गाना तो खाना छोड़ कर गाना इख़्तियार करे। हमारी इस गुफ़्तगू का मतलब यह नहीं है कि आज कल की आम क़व्वालियाँ हलाल हैं। या आम लोग क़व्वाली सुनें बल्कि हमने बहुत से मुख़ालेफ़ीन को सुना कि वह अकाबिर सूफ़िया-ए-इज़ाम को महज़ क़व्वाली की बिना पर गालियां देते हैं और क़व्वाली को मिस्ल ज़िना के हराम कहते हैं। इसलिए अर्ज़ करना पड़ा कि खुद क़व्वाली न सुनो मगर वह औलिया जिन से सिमाअ साबित है उनको बुरा न कहो। क़व्वाली एक दर्द की दवा है जिनको दर्द हो वह पिएं जिसको न हो वह बचे। हज़रत मुजद्दिद अल्फ़े सानी रज़ि अल्लाहु अन्हु फरमाते हैं मैंने लोगों को कहते हुए खुद सुना कि हदीस में चूंकि गाने की बुराईयाँ आ गई लिहाज़ा इसके मक़ाबिल ख़्वाजा अजमेरी व इमाम ग़ज़ाली के क़ौल का ऐतबार नहीं। यह सब फ़ासिक़ थे मआज़ल्लाह। इन कलिमात से दुख पहुँचा। मुख़्तसर यह मसला लिख दिया।

(4) अगर यह क़ायदा सही है कि हलाल काम में हराम मिल जाने से हलाल हराम नहीं बन जाता। तो ताज़िया दारी बुत परस्तों के मेले, खेल तमाशे, सिनेमा थियेटर वग़ैरह सब जाइज़ हुए कि इनमें कोई न कोई काम जाइज़ होता ही है। वहाँ भी यही कहो कि यह मज्मा हराम नहीं बल्कि इनमें जो बुरे काम हैं वह हराम हैं जो जाइज़ हैं वह हलाल और फुक़हा फरमाते हैं कि जिस वलीमा में नाच रंग दस्तरख़्वान पर हो वहाँ जाना मना है। हालाँकि क़बूले दावत सुन्नत मगर हराम काम मिलने से हराम हो गई। इसी

तरह उर्स भी है। मुख़ालेफ़ीन का यह इंतिहाई ऐतराज़ है।

जवाब : एक तो है हराम का फ़ेअल हलाल में शामिल होना, एक है दाख़िल होना। जहाँ कि फ़ेअल हराम उसका जुज़ बन जाए कि इसके बग़ैर होता ही न हो और अगर होता हो तो उसका यह नाम न हो। इस सूरत में हराम काम हलाल को भी हराम कर देगा। और अगर फ़ेअल हराम जुज़्व हो कर दाख़िल न हो गया। बल्कि इसमें होता हो और कभी नहीं जिसको ख़लत कहते हैं तो यह हराम असल हलाल को हराम न कर देगा जैसा कि पेशाब कपड़े में लग गया और पानी में पड़ गया। कपड़े का जुज़ न था। पानी का हिस्सा बन गया। तो अहकाम में बहुत फ़र्क़ पड़ गया। निकाह, सफर, बाज़ार वग़ैरह में मुहर्रिमात शामिल हो जाते हैं मगर इनका हिस्सा नहीं समझे जाते कि उनके बग़ैर उसको निकाह ही न कहा जाए और ताज़िया दारी में इसराफ़ बाजे ना जाइज़ मेले इस तरह जुज़ बन कर दाख़िल हुए कि कोई ताज़ियादारी वग़ैरह इससे ख़ाली नहीं होती और अगर ख़ाली हो तो उसको ताज़ियादरी नहीं कहते। अगर कोई शख़्स करबलाए मुअल्ला का नक़्शा बना कर घर में रख ले। न तो ज़मीन में दफ़न करे। न यह मुहर्रिमात हों तो जाइज़ है क्योंकि ग़ैर जानदार की तस्वीर बनाना जायज़ है। अल्हम्दुलिल्लाह कि उर्स में नाच गाना वग़ैरह दाख़िल नहीं हुआ। बहुत से उर्स इन मुहर्रिमात से ख़ाली होते हैं और उनको उर्स ही कहा जाता है। सर हिन्द शरीफ़ में मुजद्दिद साहब रज़ि अल्लाहु अन्हु का उर्स बिल्कुल मुहरिमात से ख़ाली होता है। आम तौर पर लोग हज़रत आमेना ख़ातून सैयदना अब्दुल्लाह इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हुम का उर्स करते हैं। सिर्फ़ वअज़ और तक़्सीम तआम व शीरीनी होती है फिर हर दावत क़बूल करना सुन्नत नहीं। नाबालिग़ बच्चा की दावत अह्ले मैयत की मुरव्वजा दावते अग़्निया को जिसके यहाँ सिर्फ़ हराम का ही माल हो उसकी दावत क़बूल करना ना जाइज़ है। इसी तरह जिस वलीमा में नाच व रंग ख़ास दस्तरख़्वान पर हो उसका क़बूल करना मना है। बख़िलाफ़ ज़्यारते क़ुबूर के कि वह बहर हाल सुन्नत है। लिहाज़ा हराम काम के इख़्तिलात से दावत तो सुन्नत ही न बनी और ज़्यारते क़ुबूर चूंकि मुतलक़न सुन्नत थी वह हराम न हुई। जैसे कि शिर्कते दफ़न बहरहाल सुन्नत है तो अगर वहाँ मुहर्रिमात हों तो इससे यह सुन्नत हराम न होगी। बहुत बारीक फ़र्क़ है ख़्याल रखना चाहिए।

बहस ज़्यारते कुबूर के लिए सफर करना

उर्से बुज़ुर्गान और ज़्यारते कुबूर के लिए सफर करना भी जाइज़ और बाइसे सवाब है। देवबन्दी वग़ैरह इसको भी हराम कहते हैं इसलिए इस बहस के भी दो बाब किए जाते हैं। पहले बाब में जवाज़ का सुबूत और दूसरे में इस पर ऐतराज़ात व जवाबात।

पहला बाब

सफ़र उर्स के सुबूत में

सफर का हुक्म इसके मक़्सद की तरह है यानी हराम काम के लिए सफर करना हराम। जाइज़ के लिए जाइज़ और सुन्नत के लिए सुन्नत। फ़र्ज़ के लिए फ़र्ज़। हज फ़र्ज के लिए सफर भी फ़र्ज़। कभी जिहाद व तिजारत के लिए सफर सुन्नत है। क्योंकि यह काम खुद सुन्नत हैं। रौज़-ए-मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम की ज़्यारत के लिए सफर वाजिब है क्योंकि यह ज़्यारत वाजिब। दोस्तों की मुलाक़ात, शादी, ख़त्ना में अह्ले क़राबत की शिर्कत, हकीमों से इलाज कराने के लिए सफर जाइज़ क्योंकि यह चीज़ें ख़ुद जाइज़ हैं। चोरी डकैती के लिए सफर करना हराम क्योंकि यह काम खुद हराम हैं। ग़र्ज़कि सफर का हुक्म मालूम करना हो तो इसके मक़्सद का हुक्म देख लो। उर्स ख़ास ज़्यारते क़ब्र का नाम है और ज़्यारते क़ब्र तो सुन्नत। लिहाज़ा इसके लिए सफर भी सुन्नत ही में शुमार होगा। कुरआन करीम में बहुत सफर साबित हैं।

जो शख़्स अपने घर से हिजरत के लिए अल्लाह व रसूल की तरफ निकल गया। फिर उसकी मौत आ गई तो उसका अज्र इन्दल्लाह साबित हो गया इससे सफ़रे हिजरत साबित हुआ। **लेईलाफ़े कुरैशिन ईलाफ़ेहिम रिहलतश्शिताए वस्सैफ़।** इसलिए कि कुरैश को मेल दिलाया उनके जाड़े और गर्मी के दोनों सफ़रों में। इससे सफ़रे तिजारत साबित हुआ। **व इज़ क़ाला मूसा लेफ़ताहु ला अबरहु हत्ता अब्लुग़ा मज्मअल-बहरैने औ अम्ज़ीय हुकुबन।** और याद करो जब कि मूसा ने अपने ख़ादिम से कहा कि मैं बाज़ न रहूँगा जब तक कि वहाँ न पहुचूं जहाँ दो समुन्द्र मिलते हैं। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम हज़रत ख़िज़्र अलैहिस्सलाम से मिलने के लिए मशाइख़ की मुलाक़ात के लिए गए सफर करना साबित हुआ। **या बनीया इज़्हबू फ़तहस्ससू मिन यूसुफ़ा व अख़ीहे वला तैअसू मिन रुहिल्लाहे।** ऐ मेरे बेटो जाओ यूसुफ़ और उनके भाई का सुराग़ लगाओ अल्लाह की रहमत से ना उम्मीद न हो। याकूब अलैहिस्सलाम ने फ़रज़न्दों को तलाशे यूसुफ़ के लिए हुक्म फरमाया। तलाशे महबूब के लिए सफर साबित हुआ। हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने फरमाया **इज़्हबू बेक़मीसी हाज़ा फ़अल्कूहु अला वज्हे अबी**

याते बसीरा। मेरा यह कुर्ता ले जाओ और मेरे बाप के मुँह में डाल दो उनकी आँखें खुल जाएं। इलाज के लिए सफर करना साबित हुआ। **फ़लम्मा दख़लू अला यूसुफ़ा आवा इलैहे।** फिर जब वह यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के पास पहुँचे तो उन्होंने अपने माँ बाप को अपने पास जगह दी। मुलाक़ात फ़रज़न्द के लिए सफर साबित हुआ। फ़रज़न्दाने याकूब अलैहिस्सलाम ने वालिद माजिद से अर्ज़ किया **फ़अरसिल मअना अख़ाना नक्तल व इन्ना लहू लहाफ़िज़ून।** हमारे भाई को हमारे साथ भेज दीजिए हम ग़ल्ला लाएंगे और इनकी ज़रूर हिफ़ाज़त करेंगे। रोज़ी हासिल करने के लिए सफ़र साबित हुआ। मूसा अलैहिस्सलाम को हुक्म हुआ **इज़्हब इला फ़िरऔना इन्नहू तग़ा।** फ़िरऔन की तरफ जाओ क्योंकि वह सरकश हो गया है। तबलीग़ के लिए सफर साबित हुआ। मिश्कात **किताबुल-इल्म** में है **मन ख़रजा फ़ी तलबिल-इल्मे फ़हुवा फ़ी सबीलिल्लाहे।** जो शख़्स तलाशे इल्म में निकला वह अल्लाह की राह में है। हदीस में है **उतलिबुल-इल्मा वलौ काना बिस्सीने।** इल्म तलब करो अगरचे चीन में हो। करीमा में है –

इल्म का तलब करना तुझ पर फ़र्ज़ है इसके लिए सफर भी ज़रूरी है। तलबे इल्म के लिए सफर साबित हुआ। गुलिस्तां में है –

जाओ दुनिया की सैर करो मरने से पहले। सैर के लिए सफर साबित हुआ। कुरआन मजीद में है **कुल सीरू फ़िल-अर्ज़े फ़ंज़ुरू कैफ़ा काना आक़िबतुल-मुकज़्ज़ेबीन।** कुफ़्फ़ार से फ़रमा दो कि ज़मीन में सैर करो और देखा कि कुफ़्फ़ार का क्या अंजाम हुआ। जिन मुल्कों पर अज़ाबे इलाही आया। उनको देख कर इबरत पकड़ने के लिए सफर साबित हुआ।

जब इस क़दर सफर साबित हुए तो मज़ाराते औलिया की ज़्यारत के लिए सफर करना बदरजा औला साबित हुआ यह हज़रात तबीबे रूहानी हैं और उनके फ़ुयूज़ मुख़्तलिफ़। उनके मज़ारात पर पहुँचने से शाने इलाही नज़र आती है कि अल्लाह वाले बाद वफ़ात भी दुनिया पर राज करते हैं। उन से ज़ौक़े इबादत पैदा होता है उनके मज़ारात पर दुआ जल्द क़बूल होती है। शामी जिल्द अव्वल **बहसु ज़्यारते कुबूर** में है।

और आया ज़्यारते कुबूर के लिए सफर करना मुस्तहब है जैसे कि आजकल ख़लीलुल्लाह अलैहिस्सलाम और सैय्यद बदवी अलैहिर्रहमा की ज़ियारत के लिए सफ़र करने का रिवाज है। मैंने अइम्मा में से किसी की तस्रीह नहीं देखी कुछ शाफ़ई उलमा ने मना किया है मस्जिदों के सफर पर क़्यास करके लेकिन ग़ज़ाली ने इस मना की तरदीद कर दी। फ़र्क़ वाज़ेह फ़रमा दिया। शामी में उसी जगह है।

लेकिन औलिया अल्लाह तक़र्रुबे इलल्लाह व ज़ाइरीन को नफ़ा पहुँचाने में मुख़्तलिफ़ हैं बक़दर अपने मारिफ़त व असरार के मुक़द्दमा शामी में इमाम

अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के मनाक़िब में इमाम शाफ़ई रज़ि अल्लाहु अन्हु से नक़्ल फरमाते हैं।

मैं इमाम अबू हनीफ़ा से बरकत हासिल करता हूँ और उनकी क़ब्र पर आता हूँ अगर मुझे कोई हाजत दर पेश होती है तो दो रकाअतें पढ़ता हूँ और उनकी क़ब्र के पास जाकर अल्लाह से दुआ करता हूँ तो जल्द हाजत पूरी होती है। इससे चन्द उमूर साबित हुए। ज़्यारते क़ुबूर के लिए सफर करना। क्योंकि इमाम शाफ़ई अपने वतन फ़िलस्तीन से बग़दाद आते थे। इमाम अबू हनीफ़ा की क़ब्र की ज़्यारत के लिए रज़ि अल्लाहु अन्हुमा साहिबे क़ब्र से बरकत लेना। उनकी क़बरों के पास जा कर दुआ करना, साहिबे क़ब्र को ज़रिआ हाजत रवाई जानना। नीज़ ज़्यारत रौज़-ए-रसूलुलल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिए सफर करना ज़रूरी है। फतावा रशीदीया जिल्द अव्वल **किताबुल-हज़र वल-इबाहतु** सफ़: 59 में है। "ज़्यारते बुज़ुर्गान के लिए सफर करके जाना उलमा-ए-अह्ले सुन्नत में मुख़्तलिफ़ है। बाज़ दुरुस्त कहते हैं और बाज़ नाजाइज़। दोनों अह्ले सुन्नत के उलमा हैं। मसला मुख़्तलिफ़ा है इसमें तकरार दुरुस्त नहीं। और फ़ैसला भी हम मुक़ल्लिदों से मुहाल है। "रशीद अहमद अफ़ी अन्हु।

अब किसी देवबन्दी को हक़ नहीं कि सफ़रे उर्स से किसी को मना करे। क्योंकि मौलवी रशीद अहमद साहब तकरार मना फरमाते हैं और इसका फ़ैसला नहीं फरमा सकते। अक़्ल भी चाहती है कि यह सफरे ज़्यारत जाइज़ हो। इसलिए कि हम अर्ज़ कर चुके हैं कि सफर की हिल्लत व हुर्मत इसके मक़्सद से मालूम होती है। और इस सफर का मक़्सद तो है तो ज़्यारते क़ब्र और यह मना नहीं। क्योंकि ज़्यारते क़ब्र की इजाज़त मुतलक़न है। **इल्ला फ़ज़ूरूहा** तो सफर क्यों हराम होगा। नीज़ दीनी व दुनियावी कारोबार के लिए सफर किया ही जाता है। यह भी एक दीनी काम के लिए सफर है। यह क्यों हराम हुआ?

दूसरा बाब

सफरे उर्स पर ऐतराज़ात व जवाबात

(1) मिश्कात बाबुल-मसाजिद में है। तीन मस्जिदों के सिवा और किसी तरफ सफर न किया जाए। मस्जिदे बैतुल्लाह, मस्जिद बैतुल-मुक़द्दस और मेरी यह मस्जिद। इस हदीस से मालूम हुआ कि सिवाए इन तीन मस्जिदों के और किसी तरफ सफ़र जाइज़ नहीं और ज़्यारते क़ुबूर भी उन तीनों के सिवा है।

जवाब : इस हदीस का यह मतलब है कि इन तीनों मस्जिदों में नमाज़ का सवाब ज़्यादा मिलता है। चुनांचे मस्जिदे बैतुल-हराम में एक नेकी का

सवाब एक लाख के बराबर। बैतुल-मुक़द्दस और मदीना पाक की मस्जिद में एक नेकी का सवाब पचास हज़ार के बराबर। लिहाज़ा इन मसाजिद में यह नीयत करके दूर से आना चूंकि फ़ाइदा मन्द है जाइज़ है लेकिन किसी और मस्जिद की तरफ सफर करना यह समझ कर कि वहाँ सवाब ज़्यादा मिलता है महज़ लग्व है और नाजाइज़ क्योंकि हर जगह की मस्जिद में सवाब यक्सां है। जैसे कुछ लोग दिल्ली की जामे मस्जिद में जुम्अतुल-विदा पढ़ने के लिए सफर करके जाते हैं यह समझ कर कि वहाँ सवाब ज़्यादा होता है, यह नाजाइज़ है। तो सफर करना किसी मस्जिद की तरफ और फिर ज़्यादती सवाब की नीयत से मना हुआ। अगर हदीस की यह तौजीह न की जाए तो हम पहले बाब में बहुत से सफर कुरआन से साबित कर चुके हैं वह सब हराम होंगे। आज तिजारत के लिए, इल्मे दीन के लिए, दुनियावी कामों के लिए, सैकड़ों क़िस्म के सफर करते हैं वह सब हराम ठेहरेंगे। चुनांचे इस हदीस की शरह में अश्इतुल्लम्आत में है।

कुछ उलेमा ने फ़रमाया है कि यहाँ कलाम मस्जिदों के बारे में है यानी इन तीन मस्जिदों के सिवा किसी और मस्जिद की तरफ सफर जाइज़ नहीं। मस्जिद के अलावा और मक़ामात वह इस कलाम के मफ़हूम से ख़ारिज हैं। मिर्क़ाते शरह मिश्कात में इसी हदीस के मातहत है।

नुववी की शरह मुस्लिम में है कि अबू मुहम्मद ने फरमाया कि सिवा इन तीन मसाजिद के और तरफ सफर करना हराम है मगर यह महज़ ग़लत है इहयाउल-उलूम में है कि बाज़ उलमा मुतबर्रक मक़ामात और कुबूरे उलमा की ज़्यारत के लिए सफर करने को मना करते हैं जो मुझको तहक़ीक़ हुई वह यह है कि ऐसा नहीं है बल्कि ज़्यारते कुबूर का तो हुक्म है इस हदीस की वजह से कि **अला फ़ज़रूहा** इन तीन मस्जिद के अलावा किसी और मस्जिद की तरफ सफर करने से इसलिए नहीं मना फरमाया गया है कि तमाम मस्जिदें यक्सां हैं लेकिन मक़ामाते मुतबर्रका यह बराबर नहीं बल्कि उनकी बरकात बक़द्र दरजात हैं क्या यह माने अंबिया किराम की कुबूर के सफर से भी मना करेगा। जैसे कि हज़रत इब्राहीम व मूसा व यह्या अलैहिमुस्सलाम इससे मना करना तो सख़्त दुश्वार है और औलिया अल्लाह भी अंबिया के हुक्म में हैं पस क्या बईद है उनकी तरफ सफर करने में भी कोई ख़ास ग़र्ज़ हो। जैसा कि उलमा की ज़िन्दगी में उनकी ज़्यारत करना। इसी मिश्कात **किताबुल-जिहाद फ़ी फ़ज़ाइलेही** में है।

दरिया में सवार न हो मगर हाजी या ग़ाज़ी या उमरा करने वाला। कहिए क्या सिवाए उन तीनों के औरों को सफरे दरिया हराम है? ग़र्ज़ेकि हदीस का वही मतलब है जो कि हमने अर्ज़ कर दिया। वरना दुनिया की ज़िन्दगी मुश्किल हो जाएगी।

(2) अल्लाह हर जगह है उसकी रहमत हर जगह, फिर किस चीज़ को ढूंढने के लिए औलिया अल्लाह के मज़ारों पर सफर करके जाते हैं देने वाला रब है वह हर जगह है।

जवाब : औलिया अल्लाह रहमते रब के दरवाज़े हैं। रहमत दरवाज़ों ही से मिलती है। रेल अपनी पूरी लाइन से गुज़रती है मगर उसको हासिल करने के लिए स्टेशन पर जाना होता है। अगर और जगह लाइन पर खड़े हो गए तो रेल गुज़रेगी तो मगर तुमको न मिलेगी। आज दुनियावी मक़ासिद, यानी नौकरी, तिजारत वग़ैरह के लिए सफर क्यों करते हो, खुदा रज़्ज़ाक़ है वह हर जगह देगा। हकीम के पास बीमार सफर करके क्यों आते हैं खुदा शाफ़ियुल-अमराज़ है और वह तो हर जगह है। आब व हवा बदलने के लिए पहाड़ और कश्मीर का सफर क्यों करते हो। वहाँ की आब व हवा तो तन्दुरुस्ती को मुफ़ीद हो लेकिन औलिया अल्लाह के मक़ामात की आब व हवा ईमान को मुफ़ीद न हो। रब ने मूसा अलैहिस्सलाम को हज़रत ख़िज़्र अलैहिस्सलाम के पास क्यों भेजा? वह सब कुछ उनको यहाँ ही दे सकता था। कुरआने करीम में है **हुना लिका दआ ज़करिया रब्बहू** मालूम हुआ कि ज़करिया अलैहिस्सलाम ने हज़रत मरयम के पास खड़े हो कर बच्चे के लिए दुआ की यानी नबी ने वलिया के पास दुआ करना बाइसे क़बूल जाना मालूम हुआ कि कुबूरे औलिया के पास दुआ ज़्यादा क़बूल होती है।

(3) जिस दरख़्त के नीचे बैअतुर्रिज़वान हुई थी लोगों ने उसको ज़्यारतगाह बना लिया था। हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने इस वजह से उसको कटवा दिया। तो कुबूरे औलिया को ज़्यारत गाह बनाना फ़ेअले उमर के ख़िलाफ़ है।

जवाब : यह महज़ ग़लत है हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने उस दरख़्त को हरगिज़ नहीं कटवाया बल्कि वह असल दरख़्त कुदरती तौर पर लोगों की निगाहों से ग़ायब हो गया था और लोगों ने उसके धोखे में दूसरे दरख़्त की ज़्यारत शुरू कर दी थी। इस ग़लती से बचाने के लिए फ़ारूके आज़म ने उस दूसरे दरख़्त को कटवाया। अगर फ़ारूके आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु तबर्रुकात की ज़्यारत के मुख़ालिफ़ होते तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के बाल मुबारक, तहबन्द शरीफ़ और क़ब्रे अनवर सब ही तो ज़ियारत गाह बनी हुई थीं उनको क्यों बाक़ी रहने दिया। मुस्लिम जिलद दोम **किताबुल-अमारत बाब ब्यान बैअतुर्रिज़वान** बुख़ारी जिल्द दोम **बाब ग़ज़्वतिल-हुदैबिया** (सफ़: 599) में इब्ने मुसैइब रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है।

मेरे वालिद भी उन में से हैं जिन्होंने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से दरख़्त के पास बैअत की थी उन्होंने फरमाया कि हम साले आइंदा हज के

लिए गए तो उसकी जगह हम पर पोशीदा हो गई। बुख़ारी में है पस हम साले आइंदा गए तो उसको भूल गए और उसको पा न सके। फिर यह क्यों कर कहा जा सकता है कि हज़रत फ़ारूक़े आज़म ने असल दरख़्त कटवा दिया।

बहस कफ़्नी या उल्फ़ी लिखने का बयान

इस बहस में दो मसले हैं अव्वलन तो क़ब्र में शजरा या ग़िलाफ़े काबा या अहद नामा या दीगर तबर्रुकात का रखना, दोम मुर्दे के कफ़न या पेशानी पर उंगली या मिट्टी या किसी चीज़ से अहद नामा या कलिमा तैयबा लिखना। यह दोनों काम जाइज़ और अहादीसे सहीहा व अक़्वाले फ़ुक़हा से साबित हैं। मुख़ालेफ़ीन उनके मुंकिर हैं। लिहाज़ा इस बहस के भी दो बाब किए जाते हैं पहले बाब में इसका सुबूत। दूसरे में इस पर ऐतराज़ात व जवाबात।

पहला बाब

कफ़्नी या अल्फ़ी लिखने के सुबूत में

क़ब्र में बुज़ुर्गाने दीन के तबर्रुकात और ग़िलाफ़े काबा व शजरा या अहदनामा रखना मुर्दा की बख़्शिश का वसीला है। क़ुरआन फ़रमाता है। **वब्तग़ू इलैहिल-वसीलता** युसुफ़ अलैहिस्सलाम ने भाईयों से फ़रमाया था **इज़्हबू बेक़मीसी हाज़ा फ़अल्क़ूहु अला वज्हे अबी याते बसीरन।** मेरी क़मीस ले जा कर वालिद माजिद के मुँह पर डाल दो वह अंखियारे हो जाएंगे। मालूम हुआ कि बुज़ुर्गों का लिबास शिफ़ा बख़्शता है। क्योंकि यह इब्राहीम अलैहिस्सलाम की क़मीस थी। तो उम्मीद है कि बुज़ुर्गों का नाम मुर्दे की अक़्ल खोल दे और जवाबात याद आ जाएं।

मिश्कात **बाब ग़ुस्लुल-मैयत** (सफ़: 143) में उम्मे अतीया रज़ि अल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि जब हम ज़ैनब बिन्ते रसूलुल्लाह अलैहिस्सलाम को ग़ुस्ल दे कर फ़ारिग़ हुए तो नबी करीम अलैहिस्सलातु वस्सलाम को ख़बर दी। हमको हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपना तहबन्द शरीफ़ दिया और फ़रमाया कि इसको तुमं कफ़न के अन्दर जिस्मे मैयत से मुत्तसिल रख दो। इसके मातहत लम्आत में है।

यह हदीस सालेहीन की चीज़ों और उनके कपड़ों से बरकत लेने की असल है जैसा कि मशाइख़ के बाज़ मुरीदीन क़ब्र में मशाइख़ के कुर्ते पहना देते हैं। इसी हदीस के मातहत अश्अतुल्लम्आत शरीफ़ में है।

इससे साबित हुआ कि सालेहीन के लिबास और उनके तबर्रुकात से बाद मौत क़ब्र में भी बरकत लेना मुस्तहब है। जैसा कि मौत से पहले था यही शैख़ अब्दुल-हक़ देहलवी अख़्बारुल-अख़्यार में अपने वालिद माजिद सैफ़ुद्दीन क़ादरी कुद्देस सिर्रहू के अहवाल में फ़रमाते हैं।

जब उनकी वफ़ात का वक़्त क़रीब हुआ तो फरमाया कि कुछ वह अश्आर और कलिमात जो कि उफ़्व व बख़्शिश के मुनासिब हों किसी काग़ज़ पर लिख कर मेरे कफ़न में साथ रख देना। शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब कुद्दस सिर्रहू अपने फ़तावा में फरमाते हैं।

क़ब्र में शजरा रखना बुज़ुर्गाने दीन का मामूल है लेकिन इसके दो तरीक़े हैं एक यह कि मुर्दे के सीना पर कफ़न के ऊपर या नीचे रखें। उसको फ़ुक़हा मना करते हैं दूसरे यह कि मुर्दे के सर की तरफ़ क़ब्र में ताक़चा बना कर शजरा का काग़ज़ उसमें रखें। मिश्कात **बाब गुस्लुल-मैयत** में हज़रत जाबिर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम अब्दुल्लाह बिन उबय की क़ब्र पर तशरीफ़ लाए जबकि वह क़बर में रखा जा चुका था उसको निकलवाया। उस पर अपना लुआबे दहन डाला, और अपनी क़मीस मुबारक उसको पहनाई। बुख़ारी जिल्द अव्वल किताबुल-जनाइज़ **बाब मिन अअद्दुल-कफ़न** में है कि एक दिन हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम तहबन्द शरीफ़ पहने हुए बाहर तशरीफ़ लाए। किसी ने वह तहबन्द शरीफ़ हज़रत से माँग लिया। सहाबए किराम ने उससे कहा कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को इस वक़्त तहबन्द की ज़रूरत थी और साइल को रद करना आदते करीमा नहीं। तुमने क्यों माँग लिया। उन्होंने कहा।

अल्लाह की क़सम मैंने पहनने के लिए नहीं लिया है। मैंने तो इसलिए लिया है कि यह मेरा कफ़न हो। सहल फरमाते हैं कि वही उसका कफ़न हुआ। अबू नईम ने मारिफ़तुस्सहाबा में और दैलमी ने मसनदुल-फिरदौस में बसनद हसन अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से रिवायत किया कि सैयदना अली की वालिदा माजिदा फ़ातिमा बिन्ते असद को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपनी क़मीस में कफ़न दिया और कुछ देर खुद उनकी क़ब्र में लेटे। लोगों ने वजह दरयाफ़्त की तो फरमाया।

क़मीस इसलिए पहनाई कि इनको जन्नत का लिबास मिले और उसकी क़ब्र में आराम। इसलिए फरमाया कि उन से तंगी क़ब्र दूर हो। इब्ने अब्दुल-बर ने **किताबुल-इस्तीआब फ़ी मारिफ़तिल-असहाब** में फरमाया कि अमीर मुआविया रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने बवक़्त इंतिक़ाल वसीयत फरमाई कि मुझको हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपना एक कपड़ा इनायत फरमाया था वह मैंने इसी दिन के लिए रख छोड़ा है। उस क़मीस पाक को मेरे कफ़न के नीचे रख देना।

और इन मुबारक बालों और नाख़ुनों को लो। और उनको मेरे मुँह में और मेरी आँखों में और मेरे आज़ा सज्दा पर रख देना। हाकिम ने मुस्तदरक में हमीद इब्ने अब्दुर्रहमान रवासी से नक़्ल किया कि हज़रत अली रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु के पास कुछ मुश्क था वसीयत फरमाई मुझको इससे ख़ुश्बू

देना और फ़रमाया कि यह हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की खुश्बू का बचा हुआ है। इसके अलावा दीगर हवाले भी पेश किए जा सकते हैं। इसी पर क़नाअत करता हूँ। ज़्यादा तहक़ीक़ात मन्ज़ूर हो तो अल-हरफुल–हसन-मुस्तन्नेफ़ा आला हज़रत क़ुद्देस सिर्रहू का मुताला करें।

मैयत की पेशानी या कफ़न पर अहदनामा या कलिमा तैयबा लिखना, इसी तरह अहद नामा क़ब्र में रखना जाइज़ है। ख़्वाह वह उंगली से लिखा जावे या किसी और चीज़ से। इमाम तिर्मिज़ी हकीम मुहम्मद इब्ने अली ने नवादिरुल-उसूल में रिवायत की कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फ़रमाया।

जो शख़्स इस दुआ को लिखे और मैयत के सीने और कफ़न के दरम्यान किसी काग़ज़ में लिख कर रखे तो उसको अज़ाबे क़ब्र न होगा और न मुन्कर नकीर को देखेगा। फ़तावा कुबरा लिल-मक्की में इस हदीस को नक़्ल फ़रमाया।

इस दुआ की असल है और फ़क़ीह इब्ने अजील इसका हुक्म देते थे और इसके लिखने का जवाज़ का फ़त्वा देते थे इस क़्यास पर कि ज़कात के ऊंटों पर अल्लाह लिखा जाता है। वह दुआ यह है।

अल-हर्फ़ुल-हसन में तिर्मिज़ी से नक़्ल किया कि सिद्दीक़े अकबर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि जो कोई अहदनामा पढ़े तो फ़रिश्ता उसे मुहर लगा कर क़्यामत के लिए रख लेगा। जब बन्दे क़ब्र से उठाए जाएंगे तो फ़रिश्ता वह लिखा हुआ साथ लाकर निदा करेगा कि अहद वाले कहाँ हैं? उनको वह अहदनामा दिया जाएगा। इमाम तिर्मिज़ी ने फ़रमाया कि **व अन ताऊसिन अन्नहू अमरा बेहाज़ेहिल-कलिमाते फ़ुकुतिबा फ़ी कफ़नेही।** हज़रत ताऊस से मरवी है कि उन्होंने हुक्म दिया तो उनके कफ़न में यह कलिमात लिखे गए। (अल-हर्फ़ुल-हसन) व जीज़ा इमाम करदरी **किताबुल-इस्तेहसान** में है।

इमाम सफ़्फ़ार ने फ़रमाया कि अगर मैयत की पेशानी या अमामे या कफ़न पर अहदनामा लिख दिया तो उम्मीद है कि ख़ुदा मैयत की बख़्शिश फ़रमा दे और अज़ाबे क़ब्र से अमन दे। दुर्रे मुख़्तार जिल्द अव्वल **बाबुश्शहीद** से कुछ पहले है।

मैयत की पेशानी या अमामा या कफ़न पर अहदनामा लिखा तो उम्मीद है कि रब तआला उसकी मग़्फ़िरत फ़रमा दे। दुर्रे मुख़्तार में उसी जगह एक वाक़या नक़्ल फ़रमाया कि किसी ने वसीयत की थी कि उसके सीना या पेशानी पर **बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम** लिख दी जाए। चुनांचे ऐसा ही किया गया। किसी ने ख़्वाब में देखा पूछा कि क्या गुज़री? उसने कहा कि बाद दफ़न मलाइका अज़ाब आए। मगर जब उन्होंने बिस्मिल्लाह लिखी हुई देखी।

तो कहा तू अज़ाबे इलाही से बच गया। फतावा बज़ाज़िया में **किताबुल-जिनायात** से कुछ पहले है।

अगर मैयत की पेशानी या अमामा या कफन पर अहदनामा लिखा तो उम्मीद है कि अल्लाह उसकी बख़्शिश कर दे और उसको अज़ाबे क़ब्र से महफ़ूज़ रखे। इमाम नसीर ने फरमाया कि इस रिवायत से मालूम हुआ कि यह लिखना जाइज़ है और मरवी है कि फ़ारूक़ आज़म के अस्तबल के घोड़ों की रानों पर लिखा था हाज़ा फ़ी सबीलिल्लाह।

इनके अलावा और बहुत सी रिवायात फ़ेक़हिया पेश की जा सकती हैं मगर इन ही पर इक्तिफ़ा करता हूँ। ज़्यादा तहक़ीक़ के लिए अल-हर्फुल-हसन या फतावा रज़्वीया शरीफ़ का मुताअला करो।

अक़्ल भी चाहती है कि यह अहदनामा वग़ैरह लिखना या क़ब्र में रखना जाइज़ हो चन्द वजूह से। अव्वलन तो यह कि जब क़ब्र के ऊपर सब्ज़ घास व फूल की तस्बीह से मैयत को फ़ाइदा पहुँच सकता है तो क़ब्र के अन्दर जो तस्बीह वग़ैरह लिखी हुई हो उससे फाइदा क्यों न पहुँचेगा? दोम इसलिए कि क़ब्र के बाहर से मैयत को तल्क़ीन करने का हुक्म है कि अल्लाह का नाम उसके कान में पहुँच जाए तो इससे इम्तिहान में कामयाब हो तो वही अल्लाह का नाम लिखा हुआ देख कर भी मुर्दे को नकीरैन याद आने की उम्मीद है। तो यह भी एक क़िस्म की तल्क़ीन है और हदीस **लक़्क़ेनू मौताकुम** में तल्क़ीन मुतलक़ है हर तरह दुरुस्त है लिख कर या कह कर। तीसरे इसलिए कि अल्लाह वालों के नाम की बरकत से मुसीबत टलती है, जली हुई आग बुझती है, घबराया हुआ दिल क़रार पाता है। रब तआला फरमाता है। **अला बिज़िक्रिल्लाहि तत्मइन्नल-कुलूब** अल्लाह के ज़िक्र से दिल चैन में आते हैं। तफ़्सीरे नीशापुरी व रूहुल-बयान सूरः कहफ़ ज़ेरे आयत मा—यअ्लमुहुम इल्ला क़लील और तफ़्सीर सावी शरीफ़ में इस आयत के मातहत है कि असहाबे कहफ़ के नाम इतने जगह काम आते हैं। गुमी, चीज़ तलाश करना, जंग के वक़्त भागते वक़्त। आग बुझाने के लिए एक कागज़ पर लिख कर आग में डाल दो। बच्चा के रोने के वक़्त लिख कर गहवारे में बच्चा के सर के नीचे रख कर दिए जाएं। और खेती के लिए अगर किसी कागज़ पर लिख कर लकड़ी में लगा कर दरम्यान खेत में खड़ी कर दी जाए। और बुख़ार और दर्द सर के लिए। हाकिम के पास जाने के वक़्त सीधी रान पर बांधे। जब बच्चा पैदा होने में दुश्वारी हो रही हो तो औरत के बाएं रान पर लिख कर बांधे। माल की हिफ़ाज़त के लिए। दरिया में सवार होते वक़्त और क़त्ल से बचने के लिए (अज़ अल-हर्फ़ अल-हसन व तफ़्सीर ख़ज़ाइनुल-इरफ़ान व जुमल) अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास फरमाते हैं कि असहाबे कहफ़ सात हैं यम्लीख़ा, मक्शीलीना, मशलीना, मरनूश, व बरनूश, शाज़नोश, मरतूश,

(रुहुल-बयान सूरः कहफ़ आयत **मा यअलमुहुम इल्ला क़लीलुन**) मुहद्देसीन कभी असनाद सही नक़्ल करके फ़रमा देते हैं **लौ क़ुरेअत हाज़ेहिल-असनादु अला मज्नून लबरआ मिन जुन्नतेही।** अगरचे यह सनदें किसी दीवाना पर पढ़ी जाएं तो उसको आराम हो जाए। सनदों में क्या है बुज़ुर्गाने दीन, रावियाने हदीस के नाम ही तो हैं। असहाबे बद्र के नाम के वज़ीफ़े पढ़ते जाते हैं तो ज़िन्दगी में उन बुज़ुर्गों के नाम फ़ाइदा मन्द हों। और बाद मौत बेकार हों। यह नहीं हो सकता ज़रूर इन से फ़ाइदा होगा। लिहाज़ा मैयत के लिए कफ़न वग़ैरह पर ज़रूर अहद नामा लिखा जाए।

दूसरा बाब

कफ़्नी लिखने पर ऐतराज़ात व जवाबात

इस मसला पर हस्बे ज़ैल ऐतराज़ात हैं।

(1) वही पुराना सबक़ कि कफ़नी (अलफ़ी) लिखना बिदअत है लिहाज़ा हराम है।

जवाब : हमारी गुज़िश्ता तक़रीर से मालूम हो चुका है कि यह बिदअत नहीं। इसकी असल साबित है और अगर बिदअत भी हो तो हर बिदअत हराम नहीं। देखो हमारी बिदअत की तहक़ीक़।

(2) कफ़्नी को तल्क़ीन समझना ग़लत है क्योंकि अगर मुर्दा बेपढ़ा है तो सवालात के वक़्त लिखा हुआ कैसे पढ़ेगा?

जवाब : बाद मौत हर शख़्स तहरीर पढ़ सकता है जहालत इस आलम में हो सकती है वहाँ नहीं हदीस पाक में आता है कि अह्ले जन्नत की ज़ुबान अरबी है (देखो शामी किताबुल-कराहियह) हालांकि बहुत से जन्नती दुनिया में अरबी से ना-वाक़िफ़ हैं। इसी तरह हर मुर्दे से अरबी ज़बान में मलाइका सवाल करते हैं और वह अरबी समझ लेता है। रब तआला ने मीसाक़ के दिन अरबी ही में सबसे अह्द व पैमान लिया। तो क्या मरने के बाद मैयत को किसी मदरसा में अरबी पढ़ाई जाती है? नहीं बल्कि खुद बख़ुद आ जाती है। क़यामत के दिन सबको नाम-ए-आमाल लिखे हुए दिए जाएंगे और जाहिल व आलिम सब ही पढ़ेंगे। जिससे मालूम होता है कि मरने के बाद हर शख़्स अरबी समझता है और लिखा हुआ पढ़ लेता है। लिहाज़ा यह तहरीर उसके लिए मुफ़ीद है।

(3) अल्लामा शामी ने शामी जिल्द अव्वल में **बाबुत्तशह्हुद** के कुछ पहले कफ़न पर लिखने को मना फ़रमाया। इसी तरह शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब ने फ़तावा अज़ीज़िया में इसको मना फ़रमाया क्योंकि जब मैयत फूले फटेगी तो उसके पीप व ख़ून में यह हुरूफ़ ख़राब होंगे। और उनकी बेअदबी होगी लिहाज़ा यह नाजाइज़ है। (मुख़ालेफ़ीन आम तौर पर यही सवाल करते हैं)।

जवाब : इसके चन्द जवाबात हैं अव्वलन तो यह कि दलील दावा के मुताबिक़ नहीं। दावा तो यह है कि क़ब्र में किसी क़िस्म की तहरीर रखना जाइज़ नहीं मगर इस दलील से मालूम हुआ कि रौशनाई या मिट्टी से लिख कर कफ़न में रखना मना है और अगर उंगली से मैयत की पेशानी या सीने पर कुछ लिख दिया कि अह्द नामा क़ब्र में ताक़्चा में रख दिया तो जाइज़। इसमें हरफ़ों की बेअदबी का अंदेशा नहीं। लिहाज़ा यह ऐतराज़ आपके लिए काफ़ी नहीं। दोम यह कि अल्लामा शामी ने मुतलक़न तहरीर को मना न फ़रमाया। इसी मक़ाम पर ख़ुद फ़रमाते हैं।

कुछ मुहक़्क़ेक़ीन ने फ़वाइदुश्शरजी से नक़्ल किया कि मैयत की पेशानी पर उंगली से बग़ैर रौशनाई लिख दिया जाए **बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम** और सीने पर लिख दिया जाए **ला इलाहा इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह** और यह तहरीर ग़ुस्ल के बाद कफ़न देने से पहले हो।

मालूम हुआ कि तहरीर को मुतलक़न मना नहीं फ़रमाया। तीसरे यह कि अल्लामा शामी ने फ़तावा बज़ाज़िया से फ़तवा जवाज़ नक़्ल फ़रमाया। इससे मालूम हुआ कि अकाबिरे हन्फ़ीया जवाज़ के क़ाइल हैं और फ़तावा इब्ने हजर ने फ़तवा हुर्मत नक़्ल किया इब्ने हजर शाफ़ई हैं तो क्या अहनाफ़ के हुक्म के मुक़ाबिल शवाफ़ेअ के फ़तवा पर अमल होगा? हरगिज़ नहीं। फिर फ़त्वा हुर्मत सिर्फ़ शैख़ इब्ने हजर का अपना क़ौल है किसी से नक़्ल नहीं फ़रमाते। चौथे यह कि मैयत के फूलने फटने का यक़ीन नहीं। बहुत सी मैयतें नहीं फूलती फटतीं। तो सिर्फ़ बेअदबी के वहम से मुर्दा को फ़ाइदा से महरूम रखना कहाँ का इंसाफ़ है? पाँचवें यह कि हमने पहले बाब में सहाबए किराम के अफ़आल नक़्ल किए कि उन्होंने अपने कफ़नों में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के तबर्रुकात रखने की वसीयत की। ख़ुद हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपना तहबन्द शरीफ़ अपनी लख़्ते जिगर ज़ैनब बिन्ते रसूलुल्लाह के कफ़न में रखवाया हज़रत ताऊस ने अपने कफ़न पर दुआइया कलिमात लिखने की वसीयत की। कहिए क्या यहाँ ख़ून व पीप में लुथड़ने का अन्देशा न था? या कि यह चीज़ें मुअज़्ज़म न थीं। छठे यह कि मसला शरई यह है कि मुतबर्रक चीज़ों का नजासत में डालना हराम है। लेकिन अगर कोई शख़्स अच्छी नीयत से पाक जगह ज़रूरतन रखे तो सिर्फ़ एतमाले तलव्वुस से वह नाजाइज़ न होगा। इसके बहुत से दलाइल हैं। आबे ज़मज़म निहायत मुतबर्रक पानी है। इससे इस्तिंजा करना हराम है मगर इसका पीना जाइज़। आयाते क़ुरआनिया लिख कर धो कर पीना मबाह। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का पस ख़ूर्दा मुबारक खाना पीना हलाल। हालांकि यह पेट में पहुँच कर मसाना में जाते हैं और वहाँ से पेशाब बन कर ख़ारिज होंगे। पहले बाब में हम नक़्ल कर चुके कि फ़ारूक़े आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु के

अस्तबल के घोड़ों की रानों पर लिखा था **हुबिसा फ़ी सबीलिल्लाहे** हालांकि वहाँ लिखने में पेशाब की छीटें पड़ने का गुमान क़वी है। घोड़े नजिस ज़मीन पर भी लोटते हैं। मगर उसका ऐतबार न हुआ। इसी दलील से इमाम नसीर और इमाम सफ़्फ़ार जो कि अहनाफ़ के बड़े जलीलु-क़द्र इमाम हैं इस तहरीर को जाइज़ फरमाते हैं। रहा शैख़ इब्ने हजर रज़ि अल्लाहु अन्हु का यह फरमाना कि फ़ारूके आज़म के घोड़ों की यह तहरीर इम्तियाज़ के लिए थी। लिहाज़ा इसका हुक्म और हो गया यह सही नहीं क्योंकि किसी मक़सद के लिए हो हुरूफ़ तो वही हैं। नीयत के फ़र्क़ से हुरूफ का हुक्म नहीं बदलता। ग़र्ज़कि यह ऐतराज़ महज़ बेकार है। हदीसा और अमले सहाबा और अक़्वाले अइम्मा के मुक़ाबला किसी ग़ैर मुज्तहिद शाफ़ईयुल-मज़्हब का महज़ क़्यास मोतबर नहीं। हां किसी इमाम हन्फ़ी का क़ौल या कि सरीह हदीस मुमानिअत की पेश करो। और वह तो न मिलेगी। सातवें यह कि उलमा के क़ौल से इस्तेहबाब या जवाज़ साबित हो सकता है मगर कराहियत के लिए दलीले ख़ास की ज़रूरत है जैसा कि हम पहले साबित कर चुके हैं। तो इन अक़्वाल में क़ौले इस्तेहबाब क़ाबिले क़बूल है न कि क़ौले कराहियत क्योंकि बिला दलील है।

(4) अहदनामा या शजरा क़ब्र में रखना बेवजह है क्योंकि वहाँ रह कर किसी के काम तो आएगा नहीं बर्बाद हो जाएगा। और इसराफ़ हराम है।

जवाब : चूंकि इससे मैयत को बहुत से फ़ाइदे हैं। और मैयत के काम आता है। लिहाज़ा बेकार नहीं तो इसराफ़ भी नहीं।

(5) हुज़ूर अलैहिस्सलात वस्सलाम ने अब्दुल्लाह बिन उबय मुनाफ़िक़ को उसके मरने के बाद अपनी क़मीस पहनाई और उसके मुँह में अपना लुआबे दहन डाला और उससे कुछ फाइदा न हुआ। मालूम हुआ कि कफ़्नी बेकार है। और पता लगा कि हुज़ूर को इल्मे ग़ैब न था वरना आप उसको अपना लुआबे दहन व लिबास न देते। और मालूम हुआ कि नबी के अज्ज़ाए बदन दोज़ख़ में जा सकते हैं क्योंकि अब्दुल्लाह इब्ने उबय मुनाफ़िक़ दोज़ख़ी है और उसके मुँह में हुज़ूर का लुआब। लिहाज़ा लुआब भी वहाँ ही पहुँचा।

जवाब : इस वाक़या से तो कफ़्नी देने का सुबूत हुआ क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने मुनाफ़िक़ को अपनी क़मीस बतौर कफ़्नी ही पहनाई थी। हाँ यह मालूम हुआ कि ईमान के बग़ैर यह तबर्रुकात फ़ाइदा मन्द नहीं। हम भी यही कहते हैं कि मोमिन मैयत को कफ़्नी मुफ़ीद है न कि काफिर को। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को अब्दुल्लाह इब्ने उबय का मुनाफ़िक़ होना मालूम था कि आप ही के बताने से हमने जाना। यह भी ख़बर थी कि ईमान के बग़ैर तबर्रुकात मुफ़ीद नहीं। क्योंकि यह अक़ाइद का मसला है। जिसका इल्म नबी को ज़रूरी है जबकि किसान बंजर व क़ाबिले पैदावार ज़मीन को पहचानता है तो नबी ईमान की ज़मीन यानी इंसानी दिलों

को क्यों न जानें। तीन वजह से आपने उसे तबर्रुकात दिए एक तो उसका बेटा मुख़्लिस मोमिन था। जिसकी दिल्जोई मंज़ूर थी। दूसरे उसने एक बार हज़रत अब्बास को अपनी क़मीस पहनाई थी। आपने चाहा कि मेरे चचा पर उसका एहसान न रह जाए। तीसरे अपने रहमते आलम होने का इज़हार किया था कि हम तो हर एक पर करम फरमाने पर तैयार हैं। कोई फ़ैज़ ले या न ले। बादल हर ज़मीन पर बरसता है मगर नाली वग़ैरह गन्दी ज़मीन इससे फ़ाइदा नहीं लेती। नबी के अज्ज़ाए बदन इसी हालत में रह कर दोज़ख़ में नहीं जा सकते। मलाइका ने वह लुआब उसके मुँह में जज़्ब न होने दिया। बल्कि निकाल दिया होगा। कनआन इब्ने नूह का दोज़ख़ में जाना शक्ले इंसानी में है यानी वह नुत्फ़ा जब कुछ और बन गया तब जहन्नम में गया वरना हज़रत तलहा ने हुज़ूर के फ़स्द का ख़ून पिया तो फरमाया कि तुम पर आतिश दोज़ख़ हराम है।

बहस 19 बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करना

पंजाब वग़ैरह में क़ाइदा है कि बाद नमाज़ फ़ज्र व इशा बुलन्द आवाज़ से दरूद शरीफ़ पढ़ते हैं मुख़ालेफ़ीन इसको हराम कहते हैं और तरह तरह के हीलों से इसे रोकना चाहते हैं। एक हीला यह है कि ज़िक्र **बिल-जेह्र** बिदअत है उसूले हन्फ़ीया के ख़िलाफ़ है। इससे नमाज़ी लोग नमाज़ भी भूल जाते हैं। लिहाज़ा यह हराम है।

ज़िक्र **बिल-जेह्र** जाइज़ बल्कि कुछ मौक़ों पर ज़रूरी है। लिहाज़ा इस बहस के दो बाब किए जाते हैं। पहले बाब में इसका सुबूत। दूसरे में इस मसला पर ऐतराज़ात व जवाबात।

पहला बाब

ज़िक्र बिल-जेहर के सुबूत में

ज़िक्र **बिल-जेहर** जाइज़ है। कुरआन व हदीस व अक़्वाले उलमा से साबित है। कुरआन फरमाता है। **फ़ज़्कुरूल्लाहा कज़िक्रेकुम आबाअकुम अव अशद्दा ज़िक्रन।** अल्लाह का इस तरह ज़िक्र करो जिस तरह अपने बाप दादों का ज़िक्र करते हो बल्कि इससे ज़्यादा। कुफ़्फ़ारे मक्का हज से फ़ारिग़ हो कर मज्मओं में अपनी क़ौमी ख़ूबियाँ और नसबी अज़्मतें बयान किया करते थे। उसको मना फरमाया और उसकी जगह ज़िक्रुल्लाह के करने का हुक्म दिया। और ज़ाहिर है कि यह बिल-जेहर ही होगा इसीलिए तलबीह बुलन्द आवाज़ से पढ़ना सुन्नत है ख़ास कर जमाअतों के मिलने के वक़्त रब तआला फरमाता है। **व इज़ा कुरेअल-कुरआनु फ़स्तमेऊ लहू व अंसेतू लअल्लकुम तुरहमून।** कि जब कुरआन पढ़ा जाए तो कान लगा कर सुनो और ख़ामोश रहो। मालूम हुआ कि बुलन्द आवाज़ से तिलावत जाइज़ है कि

ज़िक्र बिल-जेहर ही सुना जा सकता है न कि ज़िक्रे ख़फ़ी (तफ़्सीरे कबीर यही आयत) मिश्कात **बाबुज्जिक्रे बअदस्सलात** (सफ़ह 88) में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम जब अपनी नमाज़ से फ़ारिग़ होते तो बुलन्द आवाज़ से फरमाते थे। **ला इलाहा इल्लल्लाहु वहदहू ला शरीका लहू।** मिश्कात (सफ़ह 88) में इसी जगह है।

अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास फरमाते हैं कि मैं तक्बीर की आवाज़ से हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नमाज़ का इख़्तिताम मालूम करता था यानी अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु बवजह कम उम्र के बाज़ जमाअत नमाज़ में हाज़िर न होते थे फरमाते हैं कि नमाज़ के बाद मुसलमान इस क़द्र बुलन्द आवाज़ से तक्बीर कहते थे कि हम घरों के लोग समझ जाते थे कि अब नमाज़ ख़त्म हुई। लम्आत में इसी हदीस के मातहत है।

हज़रत इब्ने अब्बास बच्चे थे इसलिए जमाअत में पाबन्दी से न आते थे। मुस्लिम जिल्द अव्वल **बाबुज्जिक्रे बअदस्सलात** (सफ़ह 217) में इन्हीं इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि –

यानी फ़राइज़ से फ़ारिग़ हो कर बुलन्द आवाज़ से ज़िक्रुल्लाह करना, हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माने में मुरव्वज था। मिश्कात **बाब ज़िक्रुल्लाह अज़्ज़ा व जल्ल।** (सफः 196) में है कि रब तआला फ़रमाता है।

जो शख़्स मुझको अपने दिल में याद करे तो हम भी उसको अपने नफ़्स में याद करते हैं और जो मज्मा में हमारा ज़िक्र करे तो हम भी उससे बेहतर मज्मा में उसका ज़िक्र फरमाते हैं। (यानी मज्मए मलाइका में) जामे सग़ीर में है।

हज़रत अनस से मरवी है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया कि जनाज़ा में **ला इलाहा इल्लल्लाह** ज़्यादा कहा करो। इससे मालूम हुआ कि जनाज़ा के साथ कलिमा तैयबा या और कोई ज़िक्र करना हर तरह जाइज़ है बुलन्द आवाज़ से हो या ख़ुफ़िया। रिसाला दलाइलुल-अज़्कार मत्बूआ देहली मुसन्नेफ़ा शैख़ मुहम्मद थानवी मौलवी रशीद अहमद साहब के उस्ताज़े हदीस सफः 79 में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम नमाज़ के बाद सहाबए किराम के साथ तस्बीह व तहलील बुलन्द आवाज़ से पढ़ते थे। तफ़्सीर रूहुल-बयान पारह 4 ज़ेरे आयत –

तरजमा : बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करना जाइज़ बल्कि मुस्तहब है जबकि रिया से न हो ताकि दीन का इज़्हार हो ज़िक्र की बरकत घरों में सामईन तक पहुँचे और जो कोई इसकी आवाज़ सुने ज़िक्र में मश्ग़ूल हो जाए और क़यामत के दिन हर ख़ुश्क व तर ज़ाकिर के ईमान की गवाही दे।

इससे मालूम हुआ कि ज़िक्र बिल-जेहर में बहुत से दीनी फ़ाइदे हैं। तफ़्सीरे ख़ाज़िन व रूहुल-बयान पारा 6 में ज़ेरे आयत **व आतैना दाऊदा**

ज़बूरा एक रिवायत नक़्ल की कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने सैयदना अबू मूसा अशअरी रज़ि अल्लाहु अन्हु से फरमाया कि आज रात हमने तुम्हारी क़िरात कुरआन सुनी तुमको दाऊदी आवाज़ दी गई है। अबू मूसा अशअरी रज़ि अल्लाहु अन्हु फरमाते हैं।

मैंने अर्ज़ किया कि रब की क़सम अगर मुझे ख़बर होती कि मेरा कुरआन साहिबे कुरआन सुन रहे हैं सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम। तो मैं और भी आवाज़ बना कर पढ़ता।

इस हदीस से दो बातें मालूम हुईं। अव्वलन यह कि सहाबए किराम बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करते थे कि बाहर आवाज़ आती थी। दूसरे यह कि ज़िक्रुल्लाह तिलावते कुरआन इबादते इलाही है और ऐने इबादत में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को ख़ुश करना सहाबए किराम की तमन्ना थी।

मिश्कात **किताबुस्सलात बाब सलातिल्लैल** में रिवायत है कि एक शब हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम अपने जांनिसार सहाबा किराम का इम्तिहान लेने के लिए तशरीफ़ ले गए कि उनके रात के मशाग़िल को मुलाहिज़ा फरमाएं। मुलाहिज़ा फरमाया कि सिद्दीक़े अक्बर तो पस्त आवाज़ से कुरआन पढ़ रहे हैं और फ़ारूक़े आज़म ख़ूब बुलन्द आवाज़ से। सुब्ह को उन साहिबों से वजह दरयाफ़्त फरमाई। तो सिद्दीक़ ने अर्ज़ किया कि **अस्मातु मन नाजअ्तु या रसूलल्लाह या हबीबल्लाह।**

जिसको सुनाना मंज़ूर था उसको मैंने सुना दिया यानी रब को। फ़ारूक़े आज़म ने अर्ज़ किया कि **ऊक़ित्तुल-वस्नाना व अतरुदुश्शैतान।** सोतों को जगा रहा था। शैतान को भगा रहा था। सुब्हानल्लाह दोनों जवाब कैसे मुबारक हैं। किसी पर नाराज़गी न फरमाई बल्कि फरमाया सिद्दीक़ तुम अपनी आवाज़ कुछ बुलन्द करो और फ़ारूक़ तुम कुछ पस्त करो।

तर्जमा : मिश्कात **किताबुल-अस्मा उल्लाहे तआला।** (सफ़ह 200) में हज़रत बुरीदा रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक बार मैं हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के हम्राह इशा के वक़्त मस्जिद में गया देखा कि एक शख़्स बुलन्द आवाज़ से कुरआन पढ़ रहा है मैंने अर्ज़ किया कि या हबीबल्लाह यह रियाकार है फरमाया **बल मुमिनुन मुनीबुन** नहीं बल्कि तौबा करने वाला मोमिन है। आलमगीरी **किताबुल-कराहियत** बाब चहारुम **फ़िस्सलाते वत्तस्बीह** व **क़िरअतुल-कुरआन** में है।

किसी क़ाज़ी के पास बहुत बड़ी जमाअत हो और वह सब मिल कर बुलन्द आवाज़ से **सुब्हानल्लाहे** या **ला इलाहा इल्लल्लाहु** कहें तो इसमें हर्ज नहीं। आलमगीरी में उसी जगह है। **अल-अफ़्ज़लु फ़ी क़िराअतिल- कुरआने ख़ारिजस्सलातिल-जहरू** नमाज़ के अलावा बेहतर है कि कुरआन बुलन्द आवाज़ से पढ़े। आमलगीरी यही मक़ाम -

अम्मत्तस्बीहु वत्तहलीलु ला बासा बेज़ालिका व इन रफ़आ सौतहू, **सुब्हानल्लाहे** या **ला इलाहा इल्लल्लाह** कहने में हर्ज नहीं। अगरचे बुलन्द आवाज़ से कहे। शामी जिल्द अव्वल **मतलब फ़ी अहकामिल-मस्जिद** से मुत्तसिल है।

मुतक़द्देमीन और मुअख़्ख़ेरीन उलमा ने इस पर इत्तिफ़ाक़ किया कि मस्जिदों में जमाअतों का बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करना मुस्तहब है। मगर यह कि उनके जेहर से सोने वाले या नमाज़ी या क़ारी को परेशानी हो। शामी में इसी जगह है।

तरजमा : बाज़ अह्ले इल्म ने फरमाया है कि बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करना अफ़ज़ल है क्योंकि इसमें काम ज़्यादा है इसका फ़ाइदा सुनने वालों को भी पहुँचता है। और यह ग़ाफ़िलों के दिल को बेदार करता है उनके ख़्यालात और उनके कानों को ज़िक्रे इलाही की तरफ खींचता, नींद को भगाता है खुशी बढ़ाता है। दुर्रे मुख़्तार **बाब सलातिल-ईदैन बहस तक्बीरे तश्रीक़** में है।

बक़्रईद के दस दिनों में आम मुसलमानों को बाज़ारों में नअरए तक्बीर कहने से न रोको इसी को हम इख़्तियार करते हैं। ग़ालिबन उस ज़माना में अवाम ईद के दिनों में बाज़ारों में नअर-ए-तक्बीर लगाते होंगे। यह अगरचे बिदअत है मगर फरमाया कि इससे न मना करो इसी इबारत के मातेहत शामी में है।

तरजमा : इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु से पूछा गया कि क्या कूफ़ा वग़ैरह के लोगों को यह मुस्तहब है कि अशरए ज़िल-हिज्जा में बाज़ारों और मस्जिदों में तक्बीरें कहें फरमाया कि हाँ इमाम अबू जाफ़र कुद्देस सिर्रहू ने फरमाया कि मेरा ख़्याल यह है कि अवाम को इस तक्बीर से न रोका जाए क्योंकि वह पहले ही से कारे ख़ैर में कम रग़बत रखते हैं इसी को हम इख़्तियार करते हैं।

इससे मालूम हुआ कि यह बाज़ारों की तक्बीरें मुस्तहब हैं।

किताबुल-अज़्कार मुसन्नेफ़ा इमाम नूववी **किताबुस्सलात अलन्नबी** में है।

यानी हदीस शरीफ़ पढ़ने वालों वग़ैरेहुम को चाहिए कि जब हुज़ूर का ज़िक्र हो तो बुलन्द आवाज़ से सलात व सलाम पढ़ें। हमारे उलमा ने तस्रीह फरमाई कि तल्बीह में हुज़ूर पर बुलन्द आवाज़ से दरूद पढ़े।

इनके अलावा और भी अहादीस व फ़िक़्ही इबारात पेश की जा सकती हैं मगर इख़्तिसारन इसी पर किफ़ायत की जाती है। बहम्दुलिल्लाह तआला मुख़ालेफ़ीन के पेशवा मौलवी रशीद अहमद साहब भी इसमें हम से मुत्तफ़िक़ हैं। चुनांचे फ़तावा रशीदीया जिल्द सोम **किताबुल-हज़र वल-**इबाहा सफ़ः 104 में एक सवाल व जवाब है।

सवाल यह है कि ज़िक्र **बिल-जेहर** और दुआ **बिल-जेहर** और दरूद **बिल-जेहर** ख़्वाह जेहरे ख़फ़ीफ़ हो या शदीद जाइज़ है या नहीं?

जवाब : ज़िक्र जेहर ख़्वाह कोई ज़िक्र हो इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक सिवाए इन मवाक़े के कि सुबूत जेहरे नस्स है वहाँ मकरूह है और साहिबैन व दीगर फ़ुक़हा व मुहद्देसीन जाइज़ कहते हैं और मशरब हमारे मशाइख़ का इख़्तियार मज़्हबे साहिबैन है। वस्सलाम 16 रबीउस्सानी 1312 हिज. रशीद अहमद।

अब तो किसी देवबन्दी वहाबी को हक़ नहीं कि किसी सुन्नी मुसलमान को बुलन्द आवाज़ ज़िक्र से रोके क्योंकि इसके बिला कराहत जवाज़ पर रजिस्ट्री हो चुकी।

अक़्ल भी चाहती है कि ज़िक्र **बिल-जेहर** जाइज़ हो चन्द वजूह से। अव्वलन तो इसलिए कि क़ाइदा शरीअत है कि सवाब बक़द्र मेहनत मिलता है। इसीलिए सर्दी में वज़ू करना, अंधेरी रात में मस्जिदों में जमाअत के लिए आना, दूर से मस्जिद में आना ज़्यादा सवाब का बाइस है। (देखो मिश्कात वग़ैरह) और ज़िक्र **बिल-जेहर** में बमुक़ाबला ख़फ़ी के मुशक़्क़त ज़्यादा है। लिहाज़ा यह अफ़्ज़ल है। दूसरे इसलिए कि मिश्कात **किताबुल-आज़ान** में है कि जहाँ तक मुअज़्ज़िन की आवाज़ जाती है वहाँ तक कि तमाम दरख़्त, पत्ते घास, जिन्न व इंस क़्यामत में उसके ईमान की गवाही देंगे। तो ज़िक्र **बिल-जेहर** से भी इसी फ़ाइदे की उम्मीद है। तीसरे इसलिए कि ख़फ़ी ज़िक्र का फ़ाइदा सिर्फ़ ज़ाकिर को है मगर ज़िक्र **बिल-जेहर** का फ़ाइदा ज़ाकिर को भी कि कलिमा वग़ैरह की ज़र्ब से दिल बेदार होता है और सामईन को भी कि मुम्किन है कि वह भी ज़िक्र सुन कर ज़िक्र करें। अगर न करें भी तो भी सुनना सवाब है। और लाज़िम से मुतअद्दी अच्छा। चौथे इसलिए कि **मिश्कात बाबुल-अज़ान** में है कि अज़ान की आवाज़ से शैतान भागता है। अभी फ़ारूक़े आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु का जवाब नक़्ल किया जा चुका है कि उन्होंने अर्ज़ किया था **अतरुदुश्शैताना** जिससे मालूम हुआ कि दीगर अज़्कार से भी शैतान भागता है। इसलिए ज़िक्र बिल-जेहर में शैतान से भी अम्न है। पाँचवें इसलिए कि ज़िक्र बिल-जेहर से नींद और कस्ल व सुस्ती दूर होती है। ज़िक्रे ख़फ़ी में अक्सर नींद भी आ जाती है। मगर यह तमाम तक़रीर इस सूरत में है कि जब रिया कारी के लिए न हो अगर रिया के लिए है तो रिया की नीयत से मुराक़बा करना, नमाज़ें पढ़ना भी गुनाह का मूजिब है। हज़रात नक़्शबन्दीया क़ुद्देसत असरारहुम का मश्ग़ला ज़िक्रे ख़फ़ी है। वह तो इस पर आमिल हैं।

दिल में हो याद तेरी गोश-ए-तंहाई हो
फिर तो ख़लवत में अजब अंजुमन आराई हो

बाक़ी सलासिल के औलिया ज़िक्र बिल-जेहर में मश्गूल रहते हैं उनका इस पर अमल है।

सारा आलम हो मगर दीद-ए-दिल देखे तुम्हें
अंजुमन गर्म हो और लज़्ज़ते तन्हाई हो

हर दो हज़रात ख़ुदा के प्यारे हैं। नक़्शबन्दी हज़रात तो ख़ल्वत में जल्वत करते हैं और बाक़ी हज़रात जल्वत में ख़ल्वत। मगर अल्लाह तआला ने सबसे जन्नत का वादा फरमा लिया। मगर उनका यह इख़्तिलाफ़ हिल्लत व हुर्मत में नहीं। अपना अपना तरीक़-ए-कार है। न तो ख़फ़ी वाले जेहर वालों को तअन करें न जेहर वाले ख़फ़ी वालों को। यह सारी गुफ़्तगू इन देवबन्दियों वग़ैरह से है जो कि जेहर पर फ़त्वा हुर्मत लगाते हैं।

दूसरा बाब

ज़िक्र बिल-जेहर पर ऐतराज़ात व जवाबात

इस मसला पर मुख़ालेफीन दो तरह के ऐतराज़ करते हैं नक़्ली और अक़्ली। हम अव्वलन नक़्ली ऐतराज़ात मअ जवाब अर्ज़ करते हैं।

अपने रब को अपने दिल में याद करो ज़ारी और डर से और बग़ैर आवाज़ निकले सुबह व शाम। इससे मालूम हुआ कि ज़िक्रे इलाही दिल में चाहिए बुलन्द आवाज़ से मना है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। अव्वलन यह कि इस आयत में ज़िक्र बहालते नमाज़ मुराद है यानी इख़्फ़ा की नमाज़ों में क़िराअत या मुक़्तदी या अत्तहीयात वग़ैरह दिल में पढ़े। या इमाम क़द्रे ज़रूरत से ज़्यादा आवाज़ न निकाले। तफ़्सीरे रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : जो शख़्स जेहरी नमाज़ में इमामत करे वह बहुत आवाज़ से क़िरात न करे बल्कि इस क़द्र पर किफ़ायत करे कि पीछे वाले सुन लें। कश्फ़ में फ़रमाया कि क़द्रे ज़रूरत से ज़्यादा न चीख़े वरना गुनहगार होगा। तफ़्सीरे कबीर में इस आयत के मातहत है।

तरजमा : यानी मुराद यह है कि जेहर व इख़्फ़ा के दरम्यान ज़िक्रुल्लाह चाहिए। तफ़्सीरे ख़ाज़िन में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु फरमाते हैं कि इस आयत में ज़िक्र से मुराद नमाज़ में तिलावते कुरआन है। मक़्सद यह है कि दिल में क़िरत करो ख़ुद कुरआने करीम ने दूसरी जगह इसकी यूं तफ़्सीर फरमाई। **वला तज्हर बिसलातिका वला तुख़ाफ़ित बेहा.......**

और अपनी नमाज़ न बहुत आवाज़ से पढ़ो न बिल्कुल आहिस्ता इन दोनों के बीच में रास्ता ढूँढो और हम मुक़द्दमा में अर्ज़ कर चुके हैं कि तफ़्सीरे

क़ुरआन बिल-क़ुरआन सब पर मुक़द्दम है। दूसरे यह कि आयत का मक़्सद यह है ज़िक्रे महज़ क़ौली न हो बल्कि क़ौल के साथ क़ल्ब भी शामिल हो कि इसके बग़ैर ज़िक्र बेकार है। ख़ाज़िन में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : कहा गया है कि दिल में ज़िक्र करने से यह मुराद है कि क़ल्ब में ख़ुदाए क़ुद्दूस की अज़्मत मौजूद हो। इसी ख़ाज़िन में है।

तरजमा : यानी जब कि ज़ुबानी ज़िक्र क़ल्बी ज़िक्र से ख़ाली हो तो बेफ़ाइदा है। क्योंकि ज़िक्रे का फ़ाइदा तो दिल का हाज़िर करना और ख़ुदा तआला की अज़्मत का दिल में लाना है। या इसका मतलब यह है कि कुछ औक़ात ज़िक्रे क़ल्बी ज़िक्र बिल-जेहर से बेहतर है यानी अम्र इस्तेहबाबी है और इस्तेहबाब भी हर वक़्त और हर हैसियत से नहीं बल्कि कुछ सूरतों में है। इसलिए यह आयत इस आयत के बाद है कि तो दोनों आयतों के मिलाने से मालूम हुआ कि ज़िक्रे इलाही कभी बिल-जेहर चाहिए और कभी आहिस्ता। जब बिल-जेहर हो तो ख़ामोशी से सुनो। और जब आहिस्ता हो तो इसमें ग़ौर व फ़िक्र करो। अगर जेहर में ख़ौफ़े रिया है तो ख़ामोशी बेहतर। और अगर यह मक़्सूद हो कि शैतान दफ़ा हो और क़ल्ब बेदार हो और सोने वाले जाग जाएं और तमाम चीज़ें क़्यामत के दिन ज़ाकिर के ईमान की गवाही दें तो जेहर बेहतर है। रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : इससे मुराद है ज़िक्रे ख़फ़ी क्योंकि इख़्फ़ा को इख़्लास में ज़्यादा दख़ल है और यह क़बूलियत से ज़्यादा क़रीब है और यह ज़िक्र तमाम ज़िक्रों और क़िरात और दुआओं को शामिल है। रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : आहिस्ता जिक्र वहाँ अफ़्ज़ल है जहाँ कि रिया का ख़ौफ हो या नमाज़ियों या सोने वालों को ईज़ा हो और इसके अलावा दीगर मक़ाम में ज़िक्र बिल-जेहर अफ़्ज़ल है क्योंकि इसमें अमल ज़्यादा है और इसका फ़ाइदा सुनने वालों को भी पहुँचता है और इसलिए कि यह ज़ाकिर के दिल को बेदार करता है ख़्यालात को जमा करता है और ज़ाकिर की तरफ कानों को मुतवज्जेह करता है।

अपने रब से गिड़ गिड़ा कर और आहिस्ता दुआ करो बेशक हद से बढ़ने वाले उसको पसन्द नहीं। इससे भी मालूम हुआ कि बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र ख़ुदा को नापसन्द है।

जवाब : इसके भी चन्द जवाबात हैं अव्वलन तो यह कि इस आयत में दुआ का ज़िक्र है न कि हर ज़िक्रे इलाही का और वाक़ई दुआ ख़ुफ़िया ही करना अफ़्ज़ल है ताकि इख़्लासे ताम हो। तफ़्सीरे रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

यानी ज़ारी या आजिज़ी करते हुए दुआ को ख़ुफ़िया करते हुए दुआ करो

ताकि क़बूलियत से क़रीब हो क्योंकि चुपके से दुआ करना इख़्लास की और रिया से दूर होने की दलील है। तफ़्सीरे ख़ाज़िन यही आयत।

कहा गया है कि इससे मुराद हक़ीक़तन दुआ है और यही सही है क्योंकि दुआ सवाल और तलब है और यह एक क़िस्म की इबादत है। तफ़्सीरे ख़ाज़िन में इसी आयत के मातहत है।

दुआ का तरीक़ा यह है कि ख़ुफ़िया हो। इसी आयत की वजह से हसन ने फरमाया कि ख़ुफ़िया एक दुआ और ऐलानिया सत्तर दुआएं बराबर हैं। या यह मुराद है कि कुछ हालात में ज़िक्रे इलाही ख़ुफ़िया तौर पर बेहतर है यानी **उदऊ** से मुराद हर ज़िक्रे इलाही है और यह अम्र इस्तेहबाबी है और वह भी बाज़ औक़ात के लिहाज़ से। तफ़्सीरे ख़ाज़िन में इसी के मातहत है।

कुछ मुफ़स्सेरीन इधर गए हैं कि इबादतों को ख़ुफ़िया करना ज़ाहिर करने से बेहतर है। इसी आयत की वजह से और इसलिए कि यह रिया से ज़्यादा दूर है और कुछ फ़रमाते हैं कि इज़्हार अफ़्ज़ल है ताकि दूसरे भी उसकी पैरवी करके इबादत करें और कुछ फरमाते हैं कि फ़र्ज़ी इबादात का इज़्हारे इख़्फ़ा से बेहतर है।

और ऐ महबूब जब तुम से मेरे बन्दे मुझे पूछें तो मैं नज़्दीक हूँ दुआ क़बूल करता हूँ पुकारने वाले की जब मुझे पुकारे। इस आयत करीमा से मालूम हुआ कि रब तआला हम से क़रीब है दिल के ख़्यालात और आहिस्ता बात को सुनता है। फिर बुलन्द आवाज़ से पुकारना बेकार है।

जवाब : इस आयते करीमा में उन लोगों के ख़्याल को बातिल फरमाया गया जो कि ज़िक्र बिल-जेहर यह समझ कर करें कि ख़ुदा हम से दूर है बग़ैर बुलन्द आवाज़ के वह हमारी सुनता नहीं। यह ख़्याल महज़ जहालत है। ज़िक्र बिल-जेहर तो ग़ाफ़िले क़ल्ब को जगाने के लिए होता है। तफ़्सीरे रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

इस आयत का शाने नुज़ूल यह है कि एक बदवी ने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से अर्ज़ किया कि रब तआला क़रीब है ताकि उससे मुनाजात करें या कि दूर है कि उसको पुकारें इस पर रब ने फरमाया। मालूम हुआ कि रब तआला को दूर समझ कर पुकारना बुरा है यह भी रिवायत है कि यह आयते करीमा ग़ज़्व-ए-ख़ैबर के मौक़ा पर उतरी जब कि लोग नअर-ए-तक्बीर लगाना चाहते थे और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का मंशा था कि हम ख़ुफ़िया तौर पर वहाँ पहुँच जाएं कि कुफ़्फ़ार को ख़बर न हो। चुनांचे रूहुल-बयान में इसी आयत के मातहत है।

जबकि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ख़ैबर की तरफ मुतवज्जेह हुए तो लोग किसी ऊंचे जंगल पर चढ़े तो उन्होंने बुलन्द आवाज़ से तक्बीर कही। पस हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया कि अपनी जानों पर नर्मी करो

तुम किसी बहरे या ग़ायब को नहीं पुकारते हो। रूहुल-बयान यही यह मौक़ा और महल के ऐतबार से है और ग़ाफ़िल लोगों के हाल के लाइक़ ज़िक्र बिल-जेहर है बुरे ख़्यालात के दफा करने के लिए।

(4) मिश्कात **किताबुल-अस्माए बाब सवाबुत्तस्बीह वत्तहमीद** में है।

तरजमा : बआवाज़ बुलन्द तक्बीर कहने लगे तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया कि ऐ लोगो अपनी जानों पर नर्मी करो तुम न तो बहरे को पुकारते हो न ग़ायब को तुम समीअ व बसीर को पुकारते हो और वह तुम्हारे साथ है और जिसको तुम पुकारते हो वह तुम से बमुक़ाबला तुम्हारी सवारियों की गर्दनों के ज़्यादा क़रीब है। इस हदीस से मालूम हुआ कि ज़िक्र बिल-जेहर मना है और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नाख़ुशी का बाइस।

जवाब : इसका जवाब ज़िम्नन सवाल नम्बर 2 के मातहत गुज़र चुका कि यह हदीस एक सफ़रे जिहाद के मौक़ा की है। उस वक़्त ज़रूरत थी कि मुसलमानों का लश्कर बग़ैर इत्तिला ख़ैबर में दाख़िल हो जाए ताकि कुफ़्फ़ारे ख़ैबर जंग की तैयारी न कर सकें। बाज़ लोगों ने बुलन्द आवाज़ से तक्बीर कही चूंकि मौक़ा के ख़िलाफ़ था लिहाज़ा रोक दिया गया इस हदीस की इब्तिदा इस तरह है।

हम एक सफर में थे कि लोग बाआवाज़ बुलन्द तक्बीर कहने लगे। या यह कि मुसलमानों पर आसानी के लिए बतौर मश्वरा यह फरमाया गया कि तुम सफर की मुशक़्क़त में हो फिर चीख़ने की मुशक़्क़त भी उठाते हो इसकी क्या ज़रूरत है। लम्आत में इसी हदीस के मातहत है।

इस हदीस में इस तरफ इशारा है कि यह जेहर से मुमानेअत महज़ आसानी के लिए है न इसलिए कि जेहर मना है। अश्इतुल्लम्आत में इसी हदीस के मातहत है।

इस हदीस में इधर इशारा है कि जेहर से मुमानेअत नर्मी और आसानी के लिए है न कि इसलिए कि जेहर मना है और हक़ यह है कि ज़िक्र जेहर बिला शुबह मश्रूअ है लेकिन किसी वजह से और हम ने इसका सुबूत रिसाला औराद में दिया है।

(5) हिदाया जिल्द अव्वल **फ़स्ल फ़ी तक्बीरातुत्तशरीक़** में है।

इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने सैयदना इब्ने मस्ऊद रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का क़ौल लिया गुम को लेने के लिए क्योंकि बुलन्द आवाज़ से तक्बीर कहना बिदअत है और बिदअत में कमी बेहतर है। इमाम अबू हनीफ़ा अलैहिर्रहमा के नज़्दीक नवीं ज़िल-हिज्जा की फ़ज्र से दसवीं की अस्र तक हर नमाज़ के बाद तक्बीरे तशरीक़ कहना चाहिए और साहेबीन के नज़्दीक नवीं की फज्र से तेरहवीं की अस्र तक इमाम साहब

फरमाते हैं कि चूंकि तक्बीर बिल-जेहर बिदअत है और बिदअत से बचना बेहतर है। इसलिए सिर्फ़ दो दिन तक्बीर कहना। जिससे मालूम हुआ कि ज़िक्र बिल-जेहर बिदअत है। इसी हिदाया में इसी फ़स्ल **तक्बीराते तशरीक़** में है।

और इस लिए कि तक्बीर **बिल-जेहर** ख़िलाफ़ सुन्नत है और इस का हुक्म इन शराइत के जमा होने की सूरत में है।

जवाब : इमाम साहब और साहिबैन का इख़्तिलाफ़ इस तक्बीरे तशरीक़ के वजूब में है न कि जवाज़ में यानी इमाम साहब तो सिर्फ़ दो दिन ज़रूरी कहते हैं और साहिबैन पाँच दिन। इमाम साहब इसको बिदअत या ख़िलाफ़े सुन्नत कह कर वजूब का इंकार फरमाते हैं। हम इसी बहस के पहले बाब में शामी से नक़्ल कर चुके हैं कि ख़ुद इमाम साहब ने अह्ले कूफ़ा को बाज़ारों में नअर-ए-तक्बीर की इजाज़त दी। कहिए बिदअत की इजाज़त क्यों दी? शामी **बाब सलातिल-ईदैन** में ईदुल-फ़ित्र की बहस में फरमाते हैं। **अल-ख़िलाफ़ु फ़िल-अफ़्ज़लीयते अम्मल-कराहियतु फ़मुंतफियतुन अनित्तरफ़ैन।** यानी इख़्तिलाफ़ महज़ अफ़्ज़लीयत में है लेकिन कराहत वह किसी तरफ नहीं है। इसी शामी में इसी जगह है।

अय्यामे तशरीक़ के अलावा और दोनों में नअर-ए-तक्बीर सुन्नत नहीं। मगर दुश्मन या चोरों के मुक़ाबला में और इस पर कुछ लोगों ने क़यास किया है आग लगने और तमाम ख़ौफ़नाक चीज़ों को और क़ुहिस्तानी ने ज़्यादा किया है कि बुलन्दी पर चढ़ने के वक़्त। दुर्रे मुख़्तार **बाबुल-ईदैन** में है।

व हाज़ा लिल-ख़्वासे अम्मल-अवामु फला युम्नऊना अन तक्बीरिन वला तनफ़्फ़ुलिन अस्लन। यह अहकाम ख़्वास के लिए हैं अवाम को तो न तक्बीर से रोको न नफ़्ल से। शामी में इसी बहस में है। **ला फ़िल-बैते ऐ ला युसन्नु व इल्ला फ़हुवा ज़िक्रुन मश्रूउन।** गर्ज़कि साबित हुआ कि हिदायह की यह तमाम गुफ़्तगू सुन्नत होने में है न कि जाइज़ होने में। नीज़ तक्बीर तशरीक़ में यह फ़तवा साहिबैन के क़ौल पर है। नीज़ हम पहले बाब में अर्ज़ कर चुके हैं कि मौलवी रशीद अहमद साहब का फतवा यही है कि ज़िक्र बिल-जेहर जाइज़ है। और अगर उन आयात व अहादीस की यह तौजीहें न की जाएं तो मुख़ालेफ़ीन के भी यह ख़िलाफ़ हैं। क्योंकि कुछ ज़िक्रुल्लाह को वह भी बुलन्द आवाज़ से करते हैं जैसे कि अज़ान, बक़रईद के मौक़ा पर तक्बीर तशरीक़, हज में तलबीह, जल्सों के मौक़ों पर नअर-ए-तक्बीर और फलां साहब ज़िन्दाबाद वग़ैरह क्योंकि उनके यह दलाइल तो ज़िक्र बिल-जेहर को मुतलक़न मना कर रहे हैं और हदीसे आहाद की वजह से क़ुरआनी आयत में क़ैद लगाना जाइज़ नहीं लिहाज़ा यह नहीं कह सकते कि चूंकि इन मौक़ों पर ज़िक्र बिल-जेहर हदीस में आ गया लिहाज़ा जाइज़ है। क्योंकि

कुरआनी आयात में हदीस से पाबन्दी लगाना कहाँ जाइज़ है।

मुख़ालेफ़ीन के अक़्ली ऐतराज़ात सिर्फ़ तीन हैं अव्वलन तो यह कि ख़ुदा क़रीब है फिर ज़ोर से चीख़ना क्यों?

जवाब गुज़र चुका है कि यह आवाज़ बुलन्द करना ख़ुदा तआला के सुनाने के लिए नहीं बल्कि दीगर फ़वाइद के लिए है। जैसे अज़ान वग़ैरह ज़ोर से दी जाती है। दोम यह कि दरूद **सल्लल्लाहु अलैका व सल्लम या रसूलल्लाह** हदीस से साबित नहीं लिहाज़ा ना जाइज़ है। इसका जवाब उसी किताब में और मक़ाम पर गुज़र गया कि दवा ग़िज़ा दुआ में नक़्ले ख़ास की ज़रूरत नहीं बल्कि जो नाजाइज़ की हद में न आए वह जाइज़ है और उसकी पूरी तहक़ीक़ कि कौन सा दरूद पाक अफ़्ज़ल है हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान में मुलाहिज़ा करो। तीसरे यह कि बाद नमाज़ जो बुलन्द आवाज़ से दरूद पढ़ते हैं इन से नमाज़ियों को तक्लीफ़ होती है कि नमाज़ भूलते हैं लिहाज़ा नाजाइज़ है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। पहला यह कि यह ऐतराज़ दावा के मुताबिक़ नहीं क्योंकि तुम कहते हो कि ज़िक्र बिल-जेहर बिल्कुल मना है। और इससे यह साबित हुआ कि किसी नमाज़ी को इससे तक्लीफ़ हो तो मना वरना जाइज़ तो अगर किसी वक़्त कोई नमाज़ न पढ़ रहा हो तब जाइज़ होना चाहिए। दूसरे यह कि यहाँ पंजाब में देखा गया है कि बाद नमाज़ फ़ज्र कुछ तवक़्क़ुफ़ करके और इशा की सुन्नतों और वित्र से फ़ारिग़ हो कर यह दरूद पढ़ा जाता है और उस वक़्त सब लोग नमाज़ से फ़ारिग़ हो चुकते हैं। तीसरे यह कि हम इसी बहस के पहले बाब में अहादीस पेश कर चुके हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम और सहाबा किराम बाद नमाज़ बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करते थे। और आज भी बाज़ मस्जिदों में कुरआन के मदरसे हैं जहाँ कि तलबा बाद नमाज़ जुहर व इशा चीख़ कर कुरआन याद करते हैं कभी मस्जिदों में बाद नमाज़ इशा दीनी जल्से होते हैं जिन में नारे भी लगते हैं। तक़रीरें भी होती हैं। बक़रईद के ज़माना में जमाअत फ़र्ज़ के बाद फ़ौरन ही सब लोग बाआवाज़ बुलन्द तीन बार तक्बीरे तशरीक़ कहते हैं। कहिए इन ज़िक्रों से नमाज़ी का ध्यान बटता है या नहीं? और यह जाइज़ हैं या मना? फ़ुक़हा जो फरमाते हैं कि ज़िक्र **बिल-जेहर** से नमाज़ियों को तक्लीफ़ पहुँचे तो मना है। इसका मक़सद ज़ाहिर है कि जब जमाअत का वक़्त हो लोग नमाज़ में मश्ग़ूल हों और यह ज़िक्र **बिल-जेहर** कर रहा हो यह मना है। न यह कि नमाज़ भी हो चुकी। लोग फ़ारिग़ हो कर अब ज़िक्र व तिलावत में मश्ग़ूल हो गए। अब कोई शख़्स तारिकुल-जमाअत बाद में आया तो अपनी नमाज़ के हीले से सबको ख़ामोश करता फिरे कि चूंकि मुझे अब नमाज़ पढ़ना है लिहाज़ा ऐ नमाज़ियो, ऐ कुरआन याद करने वालो, ऐ वाइज़ो, तुम

सब ख़ामोश हो जाओ। ख़्याल रहे कि मसाजिद में ज़्यादा एहतमाम जमाअते अव्वल का होता है जिस पर बहुत से शरई मसले मुतफ़र्रे हैं। मक्का मुअज़्ज़मा में सिर्फ़ जमाअत ऊला के लिए तवाफ़ बन्द होता है जहाँ यह जमाअत ख़त्म हुई तवाफ़ शुरू हुआ। और तवाफ़ में दुआओं का इतना शोर होता है कि कान पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं देती कहिए वहाँ इस ज़िक्र **बिल-जेहर** का क्या हुक्म है? क्या नमाज़ियों के ख़लल की वजह से तवाफ़ बन्द कराओगे?

बहस औलिया अल्लाह के नाम पर जानवर पालना

कुछ लोग जो कि फ़ातिहा ग्यारहवीं या कि मीलाद शरीफ़ के पाबन्द हैं वह इसके लिए कुछ अरसा पहले बकरे और मुर्ग़े वग़ैरह पालते हैं और उनको फरबा करते हैं। तारीख़े फ़ातिहा पर उनको बिस्मिल्लाह पर ज़िब्ह करके खाना पका कर फ़ातिहा करते हैं और फ़ुक़रा और सुलहा को खिलाते हैं। चूंकि वह जानवर उसकी नीयत से पाला गया है इसलिए कह देते हैं ग्यारहवीं का बकरा या ग़ौस पाक की गाय वग़ैरह यह शरअन हलाल है जैसे वलीमा का जानवर मगर मुख़ालेफ़ीन इस काम को हराम इस गोश्त को मुरदार और करने वाले को मुरतद व मुश्रिक कहते हैं। इसलिए इस बहस के भी दो बाब किए जाते हैं। पहले बाब में इसके जवाज़ का सुबूत। और दूसरे बाब में इस पर ऐतराज़ात व जवाबात।

पहला बाब

इस जवाज़ के सुबूत में

जिस हलाल जानवर को मुसलमान या अह्ले किताबुल्लाह का नाम लेकर ज़िबह करे वह हलाल है और जिस हलाल जानवर को मुश्रिक या मुरतद ज़िबह करे वह मुरदार है। इसी तरह अगर मुसलमान दीदा व दानिस्ता बवक़्त ज़िबह बिस्मिल्लाह पढ़ना छोड़ दे या ख़ुदा के सिवा किसी और का नाम लेकर ज़िबह करे (मसलन बजाए बिस्मिल्लाह अल्लाहु अक्बर के कह दे या ग़ौस और ज़िबह कर दे तो हराम है) ख़्याल रहे कि इस हिल्लत व हुर्मत में ज़िबह करने वाले का ऐतबार है न कि मालिक का। अगर मुसलमान का जानवर मुश्रिक ने ज़िबह कर दिया मुरदार हो गया। अगर मुश्रिक ने बुत के नाम पर जानवर पाला मगर उसको मुसलमान ने बिस्मिल्लाह से ज़िबह कर दिया हलाल है इसी तरह ज़िबह के वक़्त नाम लेने का ऐतबार है न कि आगे पीछे ज़िन्दगी में जानवर बुत के नाम का था मगर ज़िबह ख़ुदा के नाम पर हुआ हलाल है। और ज़िन्दगी में जानवर क़ुरबानी

का था। मगर ज़िबह के वक़्त और नाम लिया गया वह मुरदार। इसी को कुरआन ने फरमाया **वमा उहिल्ला बेही लेग़ैरिल्लाह** वह जानवर भी हराम है जो कि ग़ैरे ख़ुदा के नाम पर पुकारा गया। यहाँ पुकारने से मुराद ववक़्त ज़िबह पुकारना है। चुनांचे तफ़सीरे बैज़ावी में इसी आयत के मातहत है।

यानी इस जानवर पर ग़ैरुल्लाह का नाम लिया हो जैसे कुफ़्फ़ार ज़िबह के वक़्त कहते थे। **बिस्मिल्लाते वल-उज़्ज़ा**। तफ़्सीर जलालैन में इसी आयत के मातहत है। **बेअन ज़ुबेहा अला इस्मे ग़ैरेही**। इस तरह कि ग़ैरे ख़ुदा के नाम पर ज़िबह किया जाए। तफ़्सीर ख़ाज़िन में इसी आयत के मातहत है।

यानी वह जानवर हराम है जिसके ज़िबह पर ग़ैरुल्लाह का नाम लिया गया हो। और यह इसलिए है कि अह्ले अरब ज़माना जाहलीयत में ज़िबह के वक़्त बुतों का नाम लेते थे पस ख़ुदा तआला ने इसको इस आयत से और आयत **वला ताकुलू** से हराम फरमाया। तफ़्सीर कबीर यही आयत ज़िबह के वक़्त कहते थे कि इस्मिल्लाति वल उज़्ज़ा अल्लाह तआला ने उसको हराम फरमा दिया। तफ़्सीराते अहमदीया में इसी आयत के मातहत है। आयत के मानी यह हैं कि इसको ग़ैरे ख़ुदा के नाम पर ज़िबह किया गया हो। और वह, वह है जो बुतों के लिए ज़िबह किया जाता था। तफ़्सीर मदारिक में इसी आयत के मातहत है।

यानी वह जानवर हराम है जो कि बुतों के लिए ज़िबह किया जाए लिहाज़ा इस पर ग़ैरे ख़ुदा का नाम लिया जाए यानी उस पर बुत की आवाज़ दी गई हो। और यह जाहलीयत वालों का यह कहना था कि **बिस्मिल्लाते वल-उज़्ज़ा**। तफ़्सीरे **लुबाबुत्तावील** में इसी आयत के मातहत है।

तफ़्सीरे अल्लामा अबू मस्ऊद में है। **ऐ रुफ़ेआ बेहिस्सौतु इन्दा ज़ब्हेही लिस्सनमे**। तफ़्सीरे हुसैनी में इसी आयत के मातहत है।

इन तमाम तफ़ासीर से मालूम हुआ कि इस आयत **मा उहिल्ला** में अह्ल से मुराद है ज़िबह के वक़्त ग़ैरे ख़ुदा का नाम पुकारना। लिहाज़ा जानवर की ज़िन्दगी में किसी तरफ निबस्त करने का ऐतबार नहीं। अब हम फ़ुक़हा की इबारात भी पेश करते हैं। तफ़्सीराते अहमदीया में इसी आयत **वमा उहिल्ला बेही लेग़ैरिल्लाह** के मातहत है।

इससे मालूम हुआ कि जिस गाय की औलिया अल्लाह के लिए नज़र मानी गई जैसा कि हमारे ज़माना में रिवाज है यह हलाल तैयब है क्योंकि इस पर ज़िबह के वक़्त ग़ैरे ख़ुदा का नाम नहीं लिया गया अगरचे इस गाय की नज़र मानते हैं इसमें तो ग्यारहवीं शरीफ़ के बकरे का ख़ास फ़ैसला फ़रमा दिया नाम ले कर और इस किताब के मुसन्निफ़ मौलाना अहमद जीवन अलैहिर्रहमा वह बुज़ुर्ग हैं जो कि अरब व अजम के उलमा के उस्ताज़

हैं और तमाम देवबन्दी भी उनको मानते हैं। शामी **बाबुज़्ज़ब्ह** में है।

ऐलम अन्नल-मदारा अलल-कस्दे इन्दा इब्तिदाइज़्ज़ब्ह जानना चाहिए कि हिल्लत व हुर्मत का दार व मदार ज़िब्ह के वक़्त नीयत का है। साफ़ मालूम हुआ कि ज़िब्ह से पहले की नीयत या नाम बिल्कुल मोतबर नहीं। आलमगीरी **बाबुज़्ज़ब्ह** में है।

मुसलमानों ने मजूसी की वह बकरी जो उनके आतिश कदा के लिए या काफिर की उन बुतों के लिए थी ज़िब्ह की वह हलाल है क्योंकि उस मुसलमान ने अल्लाह का नाम लिया है मगर यह काम मुसलमान के लिए मक्रूह है इसी तरह ततार खानिया में जामेउल-फ़तावा से नक़्ल किया। देखिए जानवर पालने वाला काफिर है और ज़िबह भी कराता है बुत या आग की इबादत की नीयत से। गोया मालिक का पालना और ज़िबह करना दोनों फासिद मगर चूंकि बवक़्त ज़िबह मुसलमान ने ज़ुबान से बिस्मिल्लाह कह के ज़िबह किया है लिहाज़ा जानवर हलाल है। कहिए ग्यारहवीं या मीलाद का बकरा उस बुत परस्त के बकरे से भी गया गुज़रा है? कि वह तो हलाल मगर यह हराम। अल्हम्दुलिल्लाह बख़ूबी साबित हुआ कि ग्यारहवीं वग़ैरह का जानवर हलाल है और यह फ़ेअल बाइसे सवाब।

दूसरा बाब

औलिया के जानवर के मुतअल्लिक़ ऐतराज़ात व जवाबात

(1) इस आयत **मा उहिल्ला बेही लेग़ैरिल्लाह** में कलिमा उहिल्ला एहलाल से मुश्तक़ है और एहलाल के मानी लुग़त में ज़िबह के नहीं बल्कि मुतलक़न पुकारने के हैं लिहाज़ा जिस जानवर पर ग़ैरे ख़ुदा का नाम पुकारा ख़्वाह तो उसकी ज़िन्दगी में या बवक़्ते ज़िबह वह मुरदार है तो ग़ौस पाक का बकरा अगरचे ख़ुदा के नाम पर ज़िबह हो हराम है।

नोट : यह ऐतराज़ शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब कुद्दस सिर्रहू का है वह इस मसला में सख़्त ग़लती फरमा गए। और यह भी मुम्किन है कि इन किताब में इल्हाक़ किया गया हो।

जवाब : एहलाल के लुग्वी माने तो हैं मुतलक़न पुकारना। मगर उर्फ़ी मानी हैं बवक़्त ज़िबह पुकारना। और यह उर्फ़ी माना ही इस जगह मुराद हैं। तो सलात के लुग्वी मानी तो हैं मुतलक़न दुआ। मगर उर्फ़ी माना हैं नमाज़। तो **अक़ीमुस्सलाता** से नमाज़ फ़र्ज़ होगी न कि आम दुआ। तफ़सीरे कबीर में इसी आयत **मा उहिल्ला** के मातेहत है **अल-एहलालु रफ़उस्सौते** हाज़ा **मानल-एहलाल फ़िल्लुग़ते सुम्मा क़ीला लिल-मुहरिम अलख़**। एहलाल के मानी हैं आवाज़ बुलन्द करना (पुकारना) यह माना लुग्वी हैं फिर मुहरिम को

कहा गया। इसी तरह हाशिया बैज़ावी **लिश्शेहाब** में इसी आयत **मा उहिल्ला** के मातहत है। **ऐ रुफ़ेआ बेहिस्सौतु हाज़ा अस्लुहू सुम्मा जुएला इबारतन अम्मा जुबेहा लेग़ैरिल्लाहे।** यानी उसको पुकारा गया हो यह एहलाल के लुग्वी माना हैं फिर इस **उहिल्ला** से मुराद ली गई है कि वह जानवर जो ग़ैरे खुदा के नाम पर ज़िबह किया जाए। अगर यहाँ एहलाल के लुग्वी माना मुराद हों तो चन्द ख़राबियां लाज़िम होंगी। अव्वलन यह कि यह तफ़्सीर इज्माए मुफ़स्सेरीन और अक़्वाले सहाबा किराम के ख़िलाफ़ होगी। मुफ़स्सेरीन के अक़्वाल तो हम पहले बाब में अर्ज़ कर चुके। अब सहाबा किराम वग़ैरेहुम के अक़्वाल मुलाहिज़ा हों। तफ़्सीरे दुर्रे मंसूर में इसी आयत के मातहत है।

मालूम हुआ कि इस क़दर सहाबा किराम व ताबईन का यही फ़ैसला है कि इस आयत से मुराद है ग़ैरुल्लाह के नाम पर ज़िबह करना। जवाब दोम यह है कि तुम्हारे बताए हुए यह मानी ख़ुद कुरआने करीम के भी ख़िलाफ़ हैं। कुरआन फरमाता है।

अल्लाह ने बहीरा और साइबा और वसीला और हाम नहीं मुक़र्रर किए। लेकिन कुफ़्फ़ार अल्लाह पर झूठ बांधते हैं। यह चार जानवर बुहैरा वग़ैरह वह थे। जिनको कुफ़्फ़ारे अरब बुतों के नाम पर छोड़ देते थे और उनको हराम समझते थे। कुरआन ने इस हराम समझने की तरदीद फरमा दी। हालांकि उन पर ज़िन्दगी में बुतों का नाम पुकारा गया था। और उनके खाने का हुक्म दिया कि फरमाया **कुलू मिम्मा रज़क़कुमुल्लाहु** अलख़ **वला तत्तबेऊ खुतुवातिश्शैतान** अलख़ खाओ उसको जो तुम्हें अल्लाह ने दिया और शैतान के क़दमों की पैरवी न करो। तफ़्सीर **फ़त्हुल-बयान** ज़ेरे आयत **मा जअलल्लाहु मिम बहीरतिन अलख़** और नुववी शरह मुस्लिम **किताबुल-जन्नह व तालीमेहा बाबुस्सिफ़ते अल्लती युअरफ़ु बेहा फ़िद्दुनिया अहलिल-जन्नह।** सफ़ह 385 में है।

यानी इस आयत से इन जानवरों की हुर्मत का इंकार करना मक़्सूद है जिनको कुफ़्फ़ार हराम समझते थे बुहैरह वग़ैरह कि यह जानवर इनके हराम कर लेने से हराम नहीं हो गए। इससे मालूम हुआ कि जो सांड हिन्दू लोग बुतों के नाम पर छोड़ते हैं वह हराम नहीं हो जाता। अगर मुसलमान बिस्मिल्लाह कह कर ज़िबह कर ले तो हलाल है। हाँ ग़ैर की मिल्कियत की वजह से ऐसा करना मना है। और रब तआला फ़रमाता है। **व क़ालू हाज़ेही अंआमुन व हरसुन हिज्रुन ला यत्अमुहा इल्ला मन नशाओ बेज़अमेहिम** और कुफ़्फ़ार बोले कि यह जानवर और खेती रोकी हुई है इसको वही खाए जिसको हम चाहें अपने झूठे ख़्याल में नीज़ फ़रमाता है।

व क़ालू मा फ़ी बुतूने हाज़ेहिल-अंआमे ख़ालिसतुन लेज़ुकूरेना व मुहर्रमुन अला अज़्वाजेना। कुफ़्फ़ार बोले कि जो उन जानवरों के शिकम

में बच्चा है वह हमारे मर्दों के लिए ख़ास है और हमारी औरतों पर हराम यह वही खेतियाँ और जानवर थे जो बुतों के नाम पर वक़्फ़ थे और कुफ़्फ़ार उनकी हिल्लत में पाबन्दियाँ लगाते थे। इस पाबन्दी की तरदीद फरमा दी गई। तो जब बुतों के नाम पर छोड़े हुए जानवर हराम न हुए तो अह्लुल्लाह की फ़ातिहा की नीयत से पाले हुए जानवर क्यों हराम होंगे, तीसरे यह कि **उहिल्ला** के यह माना फुक़हा की तस्रीह के भी ख़िलाफ़ हैं। हम इस बहस के पहले बाब में आलमगीरी की इबारात पेश कर चुके हैं कि मुश्रिक या आतिश परस्त ने या आग के चढ़ावे के लिए जानवर मुसलमान से ज़िबह कराया। मुसलमान ने बिस्मिल्लाह से ज़िबह किया वह हलाल है। इसी तरह तफ़्सीराते अहमदीया की इबारत भी पेश कर दी गई कि औलिया अल्लाह के नज़र का पाला हुआ जानवर हलाल है। चौथे यह कि यह मानी अक़्ल के भी ख़िलाफ़ हैं इसलिए कि जब **उहिल्ला** के लुग्वी माना मुराद हुए यानी जानवर पर उसकी ज़िन्दगी या बवक़्त ज़िबह ग़ैरुल्लाह का नाम पुकारना जानवर को हराम कर देता है। तो लाज़िम आया कि जानवर के सिवा दूसरी चीज़ें भी ग़ैरुल्लाह की तरफ निस्बत करने से हराम हो जाएं। क्योंकि कुरआन में है **वमा उहिल्ला बेही लेग़ैरिल्लाहे** और हर वह चीज़ जो कि ग़ैरुल्लाह के नाम पर पुकारी जाए **"मा"** में जानवर की क़ैद नहीं फिर ख़्वाह तक़र्रुब की नीयत से पुकारो या किसी और नीयत से बहरहाल हुर्मत आनी चाहिए कि ज़ैद का बकरा, उमर की भैंस, ज़ैद के आम, बकर के बाग़ के फल, फलां की बीवी, उम्मे सअद का कुवाँ, फ़लां की मस्जिद, मेरा घर, देवबन्द का मदरसा, इमाम बुख़ारी की किताब सब ही निस्बतें ना जाइज़ हो गईं और उनका इस्तेमाल हराम। और बुख़ारी तिर्मिज़ी तो ख़ालिस शिर्क हुआ कि उनकी निस्बत बुख़ारा और तिरमिज़ की तरफ हुई जो कि ग़ैरुल्लाह हैं। जनाब जिस वक़्त तक कि औरत सिर्फ़ अल्लाह ही की बन्दी कहलाई। सबको हराम रही। जब इस पर ग़ैरे ख़ुदा का नाम आया और फलां की ज़ौजा कही गई तब फलां को हलाल हुई। कभी ग़ैरुल्लाह की निस्बत से चीज़ की क़ीमत बढ़ जाती है। हैदराबाद में हुज़ूर ग़ौसे पाक रज़ि अल्लाहु अन्हु का दस्ती लिखा हुआ कुरआन शरीफ़ था, अंग्रेज़ इसके दो लाख रुपऐ देते थे मगर न दिया गया। अमीर अब्दुर्रहमान खान का इस्तेमाली क़ालीन पच्चास हज़ार रुपए में अमरीका वालों ने ख़रीदा। पुराने टिकट भी क़ीमती होते हैं। (सरकार अली पूरी) ग़र्ज़कि **उहिल्ला** के यह माना ऐसे फ़ासिद हैं कि अक़्ल व नक़्ल सब ही के ख़िलाफ़ हैं। पाँचवीं यह कि अगर किसी ने जानवर बुत के ना पर पाला बाद में इससे ताइब हो गया और ख़ालिस नीयत से इसको ज़िबह किया तो यह बिल-इत्तिफ़ाक़ हलाल है हालांकि **उहिल्ला** में तो यह भी दाख़िल हुआ। अगर एक बार भी ग़ैरुल्लाह का नाम इस पर बोल दिया **मा उहिल्ला** की हद

में आ गया। अब मानना ही पड़ा कि वक़्ते ज़िबह अल्लाह का नाम पुकारना मोतबर है न कि पहले का। अगर कोई शख़्स ग़ैरुल्लाह के नाम पर ज़िबह करे फिर गोश्त में अल्लाह की नीयत करे बिल्कुल ग़ैर मोतबर है इसी तरह अगर ज़िन्दगी का पुकारना मोतबर होता तो जो आदमी जानवर की ज़िन्दगी में ग़ैरुल्लाह का नाम पुकार के फिर तौबा करके अल्लाह के नाम पर ज़िबह करता तो भी हराम होता। छठे यह कि अगर **उहिल्ला** के मानी लुग्वी मुराद लिए जाएं जब भी **बेही** की वजह से पुकारने में तख़्सीस होगी। इस तरह की **ब फ़ी** के माना में होगा और मुज़ाफ़ पोशीदा यानी **फ़ी जंबेही** वरना फिर **बेही** से क्या फ़ाइदा होगा बग़ैर **बेही** के भी यह मानी हासिल थे। जैसा कि सुलेमान जमल ने आयत **मा उहिल्ला बेही लेग़ैरिल्लाह** की तफ़्सीर में लिखा है तो भी मतलब वही बना कि जिस जानवर पर बवक़्त ज़िबह ग़ैरुल्लाह का नाम लिया गया वह हराम है। बहरहाल यह तरजमा महज़ फ़ासिद है।

(2) फ़िक़्ही मसला है कि जिस जानवर को बिस्मिल्लाह से ज़िबह किया जाए मगर ज़ाबेह की नीयत ग़ैरे ख़ुदा से तक़र्रुब हासिल करना हो तो वह हराम है। चूंकि ग्यारहवीं करने वाले की नीयत हुज़ूर ग़ौसे पाक को राज़ी करना है लिहाज़ा इस ज़िबह में ग़ैरुल्लाह की तरफ तक़र्रुब हुआ। तो अगरचे जानवर ज़िबह तो बिस्मिल्लाह से हुआ मगर इस क़ाइदे से हराम हो गया। इस क़ाइदे की तहक़ीक़ सवाल नम्बर 3 में आती है।

जवाब : ज़िबह की चार क़िस्में हैं। अव्वलन यह कि ज़िबह से मक़्सूद महज़ ख़ून बहाना हो और गोश्त महज़ ताबे हुआ और यह ख़ून बहाना रब को राज़ी करने के लिए हो। जैसे कि कुरबानी, हदी, अक़ीक़ा और नज़्र का जानवर यह ज़िबह इबादत है। मगर इसमें वक़्त या जगह की क़ैद है कि कुरबानी ख़ास तारीख़ों में इबादत है आगे पीछे नहीं। हदी हरम में इबादत है और जगह नहीं। दूसरे छुरी की धार की आज़माइश के लिए ज़िबह करना यह न इबादत है न गुनाह। अगर बिस्मिल्लाह से हुआ तो जानवर हलाल वरना हराम। तीसरे गोश्त खाने के लिए ज़िबह करना जैसे कि शादी वलीमा की दावत या गोश्त की तिजारत के लिए ज़िबह करना। इसी तरह फातिहा बुज़ुर्गान के लिए ज़िबह करना कि इन सब ज़िबह से मक़्सूद गोश्त है ज़िबह गोश्त के लिए है यह भी अगर बिस्मिल्लाह से हो तो हलाल वरना हराम। चौथे ग़ैरे ख़ुदा को राज़ी करने के लिए सिर्फ़ ख़ून बहाने की नीयत से ज़िबह करना कि इसमें गोश्त मक़्सूद न हो जैसे हिन्दू लोग बुतों या देवी पर जानवर की भेंट चढ़ाते हैं कि इससे सिर्फ़ ख़ून देकर बुत को राज़ी करना मक़्सूद है। यह जानवर अगर बिस्मिल्लाह कह कर भी ज़िबह किया जाए जब भी हराम है बशर्तेकि ज़िबह करने वाले की नीयत भेंट की हो न ज़िबह कराने वाले की। इन फ़िक़्ही इबारात से यही मुराद है। कुरआन फरमाता है। **वमा ज़ुबेहा**

अलन्नुसुबे और हराम है वह जानवर जो बुतों पर ज़िबह किया जाए इस आयत की तफ़सीर में सुलेमान जमल फरमाते हैं।

यानी वह जानवर भी हराम है जिसके ज़िबह से बुत मक़सूद हो और उनके ज़िबह के वक़्त बुत का नाम न लिया गया हो। या कि इरादा बुत की ताज़ीम का किया गया हो। पस **अला** वामाना लाम है लिहाज़ा यह आयत गुज़िश्ता से मुकर्रर नहीं क्योंकि वहाँ **मा उहिल्ला** में तो वह मुराद थे जिन पर बुतों का नाम लिया जाए। और इससे वह जानवर मुराद हैं उनकी ज़िबह से बुत की ताज़ीम मक्सूद हो और उसका नाम न लिया गया हो। सुब्हानल्लाह क्या उम्दा फ़ैसला किया कि जो बुत के नाम पर ज़िबह हो वह तो **मा उहिल्ला** में दाख़िल है। और जिस ज़िबह से ताज़ीम ग़ैरुल्लाह मक्सूद हो वह **मा ज़ुबेहा अलन्नुसुबे** में दाख़िल। कुछ फुक़हा ने इन दोनों सूरतों को **मा उहिल्ला** से साबित किया है। **बेमाना मा ज़ुबेहा लेताज़ीमे ग़ैरिल्लाह** इसी पर दुर्रे मुख़्तार की इबारत है। ग़र्ज़कि जानवर की हुर्मत में दो चीज़ों को दख़ल है एक तो बवक़्त ज़िबह ग़ैरुल्लाह का नाम लेना। दूसरे ग़ैरुल्लाह को राज़ी करने के लिए जानवर का ख़ून बहाना इस माना के साथ कि गोश्त मक्सूद बिज़्ज़ात न हो। यही तक़र्रुब बेग़ैरिल्लाह है। इसी को फुक़हा हराम फरमाते हैं चूंकि ग्यारहवीं और फातिहा का जानवर तीसरी क़िस्म में दाख़िल है न कि चौथी में। इसलिए हराम नहीं। क्योंकि ग्यारहवीं करने वाले का मक़्सद यह होता है कि इस जानवर के गोश्त का खाना पका कर फातिहा करके फ़ुक़रा पर तक़्सीम किया जाएगा। लिहाज़ा इससे गोश्त मक्सूद हुआ। यह फ़र्क़ ज़रूर ख़्याल में रहे। बाज़ देवबन्दी कहते हैं कि ग्यारवहीं वाले का गोश्त मक्सूद नहीं होता। क्योंकि देखा गया है कि अगर उसको इतना ज़्यादा गोश्त दिया जाए या दूसरा जानवर कि तू इस पर फ़ातिहा कर दे। तो वह इससे राज़ी नहीं होता। अगर गोश्त मंज़ूर होता तो तबादला कर लेता। मालूम हुआ कि ग़ौसे पाक के नाम पर ख़ून बहाना मंज़ूर है। लेकिन यह क़ौल भी ग़लत है नीयत का हाल तो नीयत वाला ही जान सकता है। बिला दलील मुसलमान पर बदगुमानी करना हराम है। **इन्ना बाज़ज़्ज़न्ने इस्मुन** रहा जानवर का न बदलना। इसकी वजह महज़ एहतमाम है वह समझता है कि जिस तरह हमने परवरिश करके इसको अच्छा किया है। दूसरा गोश्त ऐसा न मिलेगा बाज़ वलीमा के लिए जानवर पालते हैं वह भी दूसरे गोश्त से तबादला गवारा नहीं करते बाज़ लोग फ़ातिहा के लिए नए बर्तन इस्तेमाल करते हैं और इन बर्तनों का तबादला नहीं करते। बाज़ का ख़्याल होता है कि जिस जानवर पर फातिहा का वादा हो गया उसको बदलना जाइज़ नहीं। जैसे कि क़ुरबानी का जानवर। यह ख़्याल ग़लत है मगर ग़लत ख़्याल से ज़बीहा क्यों हराम हो गया। ग़र्ज़कि एहतमाम और है

और भेंट और। खुलासा यह हुआ कि अगर नफ़्से ज़बीहा से ग़ैरुल्लाह को राज़ी करना मक़्सूद हो तो हराम है और अगर ज़िबह दावत या फ़ातिहा के लिए हुआ और फ़ातिहा या दावत किसी को राज़ी करने के लिए हो तो हलाल है किसी अल्लाह के बन्दे को राज़ी करना उसकी इबादत नहीं।

(3) दुर्रे मुख़्तार आलमगीरी **बाबुज़्ज़ब्हे** में और नुववी शरह मुस्लिम में तस्रीह की है कि –

तरजमा : बादशाह या किसी बड़े आदमी के आने पर जानवर ज़िबह किया तो वह हराम है कि उस पर ग़ैरे ख़ुदा का नाम पुकारा गया। अगरचे उस पर अल्लाह का ही नाम लिया गया हो।

इससे मालूम हुआ कि किसी की ख़ुशनूदी के लिए जानवर ज़िबह करना हराम है अगरचे बिस्मिल्लाह ही से ज़िबह हो। लिहाज़ा ग्यारहवीं का जानवर बहरहाल हराम है कि हुज़ूर ग़ौसे पाक की रज़ा के लिए है। अगरचे ज़बीहा बिस्मिल्लाह से हो।

जवाब : इसका मुकम्मल जवाब नम्बर 2 के जवाब में गुज़र गया कि अगर सुल्तान या किसी की भेंट की नीयत से ज़िबह हो तो जानवर हराम। भेंट के मायने बयान किए जा चुके कि ख़ून बहाने से इसको राजी करना मक़्सूद हो गोश्त ताबे हो। और अगर सुल्तान वग़ैरह की दावत के लिए जानवर ज़िबह हो तो अगरचे दावत से रज़ाए सुल्तान मक़्सूद हो मगर जानवर हलाल है। दुर्रे मुख़्तार **किताबुज़्ज़बाइह** में इसी जगह फरमाते हैं।

तरजमा : और अगर ज़िबह मेहमान के लिए हो तो हराम नहीं क्योंकि यह हज़रत ख़लीलुल्लाह का तरीक़ा है और मेहमान की ताज़ीम अल्लाह की ताज़ीम है। वजह फ़र्क़ यह है कि अगर इसका गोश्त मेहमान के आगे रखा ताकि इसमें से खाए तो यह ज़िबह अल्लाह के लिए होगा और नफ़ा मेहमान के लिए या वलीमा या तिजारत के लिए और अगर मेहमान के आगे न रखा बल्कि यूं ही किसी को दे दिया तो यह ताज़ीम ग़ैरुल्लाह के लिए है लिहाज़ा हराम है।

इस से साफ तौर पर मालूम हुआ कि गोश्त का मक़्सूद होना इबादत और ग़ैर इबादत में फ़र्क़ है। इसी जगह मुख़्तार में है।

तरजमा : ऐसा करना मकरूह है इससे ज़ाबेह काफिर न होगा क्योंकि हम मुसलमान पर बदगुमानी नहीं करते कि वह इस ज़िबह से किसी आदमी की इबादत करता है। मालूम हुआ कि मुसलमानों पर बदगुमानी करना जुर्म है। इसके हाशिया **रद्दुल-मुह्तार** में इसको ज़्यादा वाज़ेह कर दिया गया है।

मगर जिस क़द्र बयान कर दिया गया इसमें किफायत है। तफ़सीर रूहुल-ब्यान पारा 6 ज़ेरे आयत **वमा उहिल्ला बेही लेग़ैरिल्लाह** है।

यानी जो जानवर सुल्तान के आने पर ज़िबह किया जाए उस से क़ुर्ब हासिल करने के लिए अह्ले बुख़ारा ने इसकी हुर्मत का फतवा दिया और इमाम राफ़ई ने फरमाया कि यह जानवर हराम नहीं क्योंकि वह लोग सुल्तान की आमद की ख़ुशी में ज़िबह करते हैं। जैसे कि बच्चा का अक़ीक़ा की पैदाइश की ख़ुशी में और इस जैसा काम जानवर को हराम नहीं कर देता। इसी तरह शरह मशारिक़ में है।

मालूम होता है कि उस ज़माना में यह रिवाज होगा कि बादशाह की आमद पर घर घर जानवर ज़िबह होते होंगे आज कल यह रस्म नहीं तो जो कि बादशाह की इबादत की नीयत से जिबह करते हों वह हराम और जो इज़्हारे ख़ुशी के लिए लोगों की दावत करते हों वह हलाल। यह फतावा का इख़्तिलाफ़ रुसूमे ज़माना की वजह से है ग़र्ज़कि ग्यारहवीं के जानवर को ज़बीहा कुदूमे सुल्तान से कोई निस्बत नहीं।

(4) ग्यारहवीं की नीयत से बकरा पालने वाला मुर्तद है। क्योंकि ग़ैरे ख़ुदा की नज़्र मानना कुफ़्र है और काफ़िर व मुर्तद का ज़बीहा हराम है। लिहाज़ा ग्यारहवीं मानने वाले का ज़बीहा हराम हुआ।

जवाब : इसका मुकम्मल जवाब हम पहले दे चुके हैं कि यह नज़्रे शरई नहीं नज़्रे उरफ़ी है। मानी हदिया व नज़राना या यह नज़्र अल्लाह के लिए है और इसका मसरफ़ यह है और इनमें से कोई भी शिर्क नहीं उस्ताज़ से कहते हैं कि यह रक़म आपकी नज़र है यानी नज़राना व हदिया।

बहस बुज़ुर्गों के हाथ पाँव चूमना और तबर्रुकात की ताज़ीम करना

औलिया अल्लाह के हाथ पाँव चूमना और इसी तरह इनके बाद इनके तबर्रुकात बाल व लिबास वग़ैरह को बोसा देना, उनकी ताज़ीम करना मुस्तहब है अहादीस और अमले सहाबा किराम से साबित है। लेकिन कुछ लोग इसका इंकार करते हैं। इसलिए हम इस बहस के भी दो बाब करते हैं पहला बाब इसके सुबूत में। दूसरा बाब इस पर एतराज़ात व जवाबात में।

दूसरा बाब

बोस-ए-तबर्रुकात के सुबूत में

तबर्रुकात का चूमना जाइज़ है। कुरआने करीम फरमाता है। **वदख़ुलुल-बाबा सुज्जदन व कूलू हित्ततुन** यानी ऐ बनी इसराईल तुम

बैतुल-मुक़द्दस के दरवाज़े में सज्दा करते हुए दाख़िल हो और कहो हमारे गुनाह माफ हों। इस आयत से पता लगा कि बैतुल-मुक़द्दस जो अंबिया-ए-किराम की आरामगाह है उसकी ताज़ीम इस तरह कराई गई कि वहाँ बनी इसराईल को सज्दा करते हुए जाने का हुक्म दिया। यह भी मालूम हुआ कि मुतबर्रक मक़ामात पर तौबा जल्द क़बूल होती है। मिश्कात **बाबुल-मुसाफ़हा वल-मुआनक़ा** फ़स्ले सानी में है।

हज़रत ज़िरा से मरवी है और यह वफ़्द अब्दुल-क़ैस में थे। फरमाते हैं कि जब हम मदीना मुनव्वरह आए तो अपनी सवारियों से उतरने में जल्दी करने लगे पस हम हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के हाथ पाँव चूमते थे। मिश्कात **बाबुल-कबाइरे व अलामातिन्नेफ़ाक़** में हज़रत सफ़वान इब्ने अस्साल से रिवायत है। **फ़तक़ब्बला यदैहे व रिज्लैहि** पस उन्होंने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के हाथ पाँव चूमे। मिश्कात शरीफ़ **मा युक़ाला इन्दा मन हज़रहुल-मौतु** बरिवायत तिर्मिज़ी व अबू दाऊद में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने उस्मान इब्ने मज़ऊन को बोसा दिया हालांकि उनका इंतिक़ाल हो चुका था। शिफ़ा शरीफ़ में है।

जिस मिंबर पर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम खुत्बा फरमाते थे उस पर हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर अपना हाथ लगाकर मुँह पर रखते थे (चूमते थे) शरह बुख़ारी **लेइब्ने हजर** पारा शशुम सफ़: **115** में है।

तरजमा : अरकाने काबा के चूमने से कुछ उलेमा ने बुज़ुर्गाने दीन वग़ैरहुम के तबर्रुकात का चूमना साबित किया है। इमाम अहमद बिन हंबल रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि उन से किसी ने पूछा कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का मिंबर या कि क़बरे अनवर चूमना कैसा है फरमाया कोई हरज नहीं और इब्ने अबी अस्सिंफ यमानी से जो कि मक्का के उलमा-ए-शाफ़ईया में से हैं मन्कूल है कुरआने करीम और हदीस के औराक़ बुज़ुर्गाने दीन की क़बरें चूमना जाइज़ हैं।

तौशीह में अल्लामा जलालुद्दीन सुयूती कुद्देस सिर्रहू फरमाते हैं।

तरजमा : हजरे असवद के चूमने से कुछ आरेफ़ीन ने बुज़ुर्गाने दीन की क़बरों का चूमना साबित किया है इन अहादीस व मुहद्देसीन व उलमा की इबारात से साबित हुआ कि बुज़ुर्गाने दीन के हाथ पाँव और उनके लिबास, नअ़लैन, बाल ग़र्जकि सारी तबर्रुकात इसी तरह काबा मुअज़्ज़मा, कुरआन शरीफ़, कुतुबे अहादीस के औराक़ का चूमना जाइज़ और बाइसे बरकत है। बल्कि बुज़ुर्गाने दीन के बाल व लिबास व जमीअ तबर्रुकात की ताज़ीम करना

उन से लड़ाई वग़ैरह मसाइब में इम्दाद हासिल करना क़ुरआने करीम से साबित है क़ुरआन फरमाता है।

तरजमा : बनी इसराईल से उनके नबी ने फ़रमाया कि तालूत की बादशाही की निशानी यह है कि तुम्हारे पास एक ताबूत आएगा जिसमें तुम्हारे रब की तरफ से दिलों को चैन है और कुछ बची हुई चीज़ें हैं मुअज़्ज़ज़ मूसा और मुअज़्ज़ज़ हारून के तरका को उठा लाएंगे उसको फ़रिश्ते। इस आयत की तफ़्सीर में ख़ाज़िन व रूहुल-बयान व तफ़्सीर मदारिक और जलालैन वग़ैरहुम ने लिखा है कि ताबूत एक शम्शाद की लकड़ी का सन्दूक़ था जिसमें अंबिया की तसावीर (यह तसावीर किसी इंसान ने न बनाई थीं बल्कि क़ुदरती थीं) उनके मकानाते शरीफ़ा के नक़्शे और हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का असा और उनके कपड़े और आपके नअलैन शरीफ़ैन और हज़रत हारून अलैहिस्सलाम का असा और उनका अमामा वग़ैरह था। बनी इसराईल जब दुश्मन से जंग करते तो बरकत के लिए उसको सामने रखते थे। जब खुदा से दुआ करते तो उसको सामने रख कर दुआ करते थे बख़ूबी साबित हुआ कि बुज़ुर्गाने दीन के तबर्रुकात से फ़ैज लेना, उनकी अज़्मत करना तरीक़ा अंबिया है। तफ़्सीर ख़ाज़िन व मदारिक व रूहुल-बयान व कबीर सूरः यूसुफ़ पारा 12 ज़ेरे आयत **फ़लम्मा ज़हबू बेही** कि जब याक़ूब अलैहिस्सलाम ने यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को उनके भाईयों के साथ भेजा। तो उनके गले में इब्राहीम अलैहिस्सलाम की क़मीस तावीज़ बना कर डाल दी ताकि महफ़ूज़ रहें। सारे पानी रब के पैदा किए हुए हैं। मगर आबे ज़मज़म की ताज़ीम इस लिए है कि यह हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम के क़दम शरीफ़ से पैदा हुआ। मक़ाम को इब्राहीम अलैहिस्सलाम से निस्बत हुई। तो इसकी इज़्ज़त यहाँ तक बढ़ गई कि रब तआला ने फ़रमाया। **वत्तख़ेज़ू मिन मक़ामे इब्राहीमा मुसल्ला।** सबके सर इधर झुका दिए मक्का मुअज़्ज़मा को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से निस्बत हुई। तो तो रब तआला ने उसकी क़सम फरमाई।

ला उक़्सेमु बेहाजल-बलदे व अन्ता हिल्लुन बेहाजल-बलद और फ़रमाया **व हाज़ल-बलदिल-अमीन।**

अय्यूब अलैहिस्सलाम से फरमाया **उरकुज बेरिज्लेका हाज़ा मुग्तसलुन बारिदुन व शराबुन।** अय्यूब अलैहिस्सलाम के पाँव से जो पानी पैदा हुआ वह शिफ़ा बना। मालूम हुआ कि नबी के पाँव का धोवन अज़्मत वाला और शिफ़ा है। मिश्कात शुरू **किताबुल-लिबास** में है कि हज़रत अस्मा बिन्ते अबू बकर

अल-सिद्दीक़ रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा के पास हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का जुब्बा (अचकन) शरीफ़ था और मदीना तैयबा में जब कोई बीमार होता तो आप वह धो कर उसको पिलाती थीं। इसी मिश्कात **किताबुल-अत्एमा बाबुल-अश्रेबा** में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम हज़रत कब्शा रज़ि अल्लाहु अन्हु के मकान पर तशरीफ़ फरमा हुए और उनके मश्कीज़े से मुँह मुबारक लगा कर पानी पिया उन्होंने बरकत के लिए मश्कीज़ा का मुँह काट कर रख लिया। इसी मिश्कात **किताबुस्सलात बाबुल-मसाजिद** फ़स्ले सानी में है कि एक जमाअत हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के दस्ते अक़्दस पर मुशर्रफ़ बइस्लाम हुई और अर्ज़ किया कि हमारे मुल्क में बीआ (यहूदियों का इबादत खाना) है हम चाहते हैं कि उसको तोड़ कर मस्जिद बना लें। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने एक बर्तन में पानी ले कर उसमें कुल्ली फरमा दी और फ़रमाया कि उस बीआ को तोड़ दो और इस पानी को वहाँ ज़मीन पर छिड़क दो और इसको मस्जिद बना लो। इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर का लुआबे देहन शरीफ़ कुफ़्र की गन्दगी को दूर फरमाता है। हज़रत ख़ालिद बिन वलीद रज़ि अल्लाहु अन्हु अपनी टोपी शरीफ़ में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का एक बाल शरीफ़ रखते थे। और जंग में वह टोपी ज़रूर आपके सरे मुबारक पर होती थी। मिश्कात **बाबुस्सितरा** में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने वज़ू फ़रमाया। तो हज़रत बिलाल रज़ि अल्लाहु अन्हु ने वुज़ू का पानी ले लिया और लोग हज़रत बिलाल की तरफ दौड़े जिसको इस ग़साला शरीफ़ की तरी मिल गई उसने अपने मुँह पर मल ली और जिसे न मिली उसने किसी दूसरे के हाथ से तरी ले कर मुँह पर हाथ फेर लिया। इन अहादीस से साबित हुआ कि बुज़ुर्गाने दीन के इस्तेमाली चीज़ों से बरकत हासिल करना सुन्नते सहाबा है। अब अक़वाले फ़ुक़हा मुलाहिज़ा हों। आलमगीरी **किताबुल-कराहियत बाब मुलाक़ातिल-मुलूक** में है।

इन क़ब्बला यदा आलेमिन औ सुल्तानिन आदेलिन बेइल्मेही व अद्लेही ला बासा बेही। अगर आलिम या आदिल बादशाह के हाथ चूमे उनके इल्म व अद्ल की वजह से तो इसमें हर्ज नहीं। इसी आलमगीरी **किताबुल-कराहियत बाब ज़्यारतिल-कुबूर** में है। **ला बासा बेतक़्बीले क़बरे वालिदैहे कज़ा फ़िल-ग़राइबे।** अपने माँ-बाप की क़बरें चूमने में हरज नहीं। इसी आलमगीरी **किताबुल-कराहियत बाब मुलाक़ातिल-मुलूक** में है।

तरजमा : बोसा लेना पाँच तरह का है। रहमत का बोसा, जैसे कि बाप

अपने फ़रज़न्द को चूमे। मुलाक़ात का बोसा जैसे कि कुछ मुसलमान कुछ को बोसा दें। शफ़्क़त का बोसा जैसे कि फ़रज़न्द अपने माँ-बाप को बोसा दे। दोस्ती का बोसा जैसे कि कोई शख़्स अपने दोस्त को बोसा दे। शहवत का बोसा जैसे कि शौहर अपनी बीवी का बोसा ले। बाज़ ने ज़्यादा किया। दीनदारी का बोसा और वह संगे असवद का चूमना है। दुर्रे मुख़्तार जिल्द पंजुम **किताबुल-कराख़िर आख़रू बाबुल-इस्तिबरा** बहसे मुसाफ़हा में है। **वला बासा बेतक़्बीले यदिल-आलमे वस्सुलतानिल-आदिले।** आलिम और आदिल बादशाह के हाथ चूमने में हरज नहीं। इसी जगह शामी ने हाकिम की एक हदीस नक़्ल की जिसके आख़िर में है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने उस शख़्स को इजाज़त दी। उसने आपके सर और पाँव मुबारक पर बोसा दिया। और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया कि अगर हम किसी को सज्दे का हुक्म देते तो औरत को हुक्म देते कि शौहर को सज्दा करे। दुर्रे मुख़्तार ने इसी जगह बोसा पाँच क़िस्म का बयान किया। मिस्ल आलमगीरी के इतना और ज़्यादा किया कि –

तरजमा : एक बोसा दीनदारी का है वह हजरे असवद का बोसा और काबा शरीफ़ की चौखट का बोसा है कुरआन पाक को चूमना कुछ लोगों ने बिदअत कहा है मगर उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि आप हर सुबह को कुरआन पाक हाथ में लेकर चूमते थे और रोटी का चूमना इसको शाफ़ई लोगों ने जाइज़ फरमाया है कि यह बिदअत जाइज़ है। कुछ ने कहा कि बिदअते हसना है।

रब तआला फरमाता है। **वत्तख़ेज़ू मिन मक़ामे इब्राहीमा मुसल्ला** मक़ामे इब्राहीम वह पत्थर है जिस पर खड़े हो कर हज़रत खलील (अलैहिस्सलाम) ने काबा की तामीर की। उनके क़दम पाक की बरकत से इस पत्थर का यह दरजा हुआ कि दुनिया भर के हाजी उसकी तरफ सर झुकाने लगे। इन इबारात से मालूम हुआ कि बोसे चन्द तरह के हैं। और मुतबर्रक चीज़ों को बोसा देना दीनदारी की अलामत है। यहाँ तक तो अक़्वाले मुवाफ़ेक़ीन का जिक्र हुआ। मुख़ालेफीन के सरदार जनाब मौलवी रशीद अहमद गंगोही फतावा रशीदीया जिल्द अव्वल **किताबुल-हज़र वल-इबाहा** सफ़: 54 पर फरमाते हैं "ताज़ीम दीनदार को खड़ा होना दुरुस्त है और पाँव चूमना ऐसे ही शख़्स का दुरुस्त है। हदीस से साबित है।"

फ़क़त : रशीद अहमद अफ़ी अन्हु

इसके मुतअल्लिक़ और भी अहादीस व फ़िक़्ही इबारात पेश की जा सकती हैं। मगर इसी क़द्र किफायत की जाती है।

दूसरा बाब

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात में

बुज़ुर्गों के हाथ पाँव चूमने और तबर्रुकात की ताज़ीम पर मुख़ालेफ़ीन के पास हस्बे ज़ैल ऐतराज़ात हैं। इंशाअल्लाह इसके सिवा और न मिल सकेंगे।

(1) फ़ुक़हा फरमाते हैं कि उलमा के सामने ज़मीन चूमना हराम है। और झुक कर ताज़ीम करना हरमा है क्योंकि यह रुकूअ के मुशाबेह है और जिस तरह ताज़ीमी सज्दा हराम हो गया। ताज़ीमी रुकूअ भी हराम हो गया और जब किसी के पाँव चूमने के लिए उसके क़दम पर मुँह रखा तो यह रुकूअ तो क्या सज्दा हो गया लिहाज़ा यह हराम है। दुर्रे मुख़्तार **किताबुल-कराहियत बाबुल-इस्तिबरा बहसे मुसाफ़हा** में है।

उलमा और बड़े बुज़ुर्गों के सामने ज़मीन चूमना यह हराम है। क्योंकि यह बुत परस्ती के मुशाबेह है इसी के मातहत शामी में है।

सलाम में रुकूअ के क़रीब तक झुकना सज्दा की तरह है और मुहीत में है कि बादशाह वग़ैरह के सामने झुकना मक्रूह है और फ़ुक़हा का ज़ाहिरी कलाम यह है कि वह इस चूमने को सज्दा ही कहते हैं। मालूम हुआ कि इंसान के आगे झुकना सज्दा है और ग़ैरे ख़ुदा को सज्दा करना शिर्क है लिहाज़ा किसी के पाँव चूमना शिर्क है हज़रत मुजद्दिद साहब को दरबारे अक्बरी में बुलाया गया और दाख़िल होने का दरवाज़ा छोटा रखा गया ताकि इस बहाना से आप अकबर के सामने झुक जायें। मगर जब आप वहाँ तशरीफ़ ले गए तो आपने अव्वलन दरवाज़े में पाँव दाख़िल किए ताकि झुकना न लाज़िम आ जाए। (यह ऐतराज़ात इंतिहाई है और आम देवबन्दी वहाबी इसी को पेश करते हैं)

जवाब : हम अव्वलन सज्दा की तारीफ़ करें फिर सज्दे के अहकाम। फिर यह अर्ज़ करें कि किसी के सामने झुकने के क्या अहकाम हैं। इससे यह ऐतराज़ ख़ुद बख़ुद ही दफ़ा हो जाएगा। शरीअत में सज्दा यह है कि ज़मीन पर सात अज़्व लगें। दोनों पंजे, दोनों घुटने, दोनों हाथ और नाक पेशानी। फिर इसमें सज्दा की नीयत भी हो। देखो आम कुतुबे फ़िक़्ह **किताबुस्सलात बहसे सज्दा।** अगर बग़ैर सज्दे की नीयत के कोई शख़्स ज़मीन पर औंधा लेट गया तो सज्दा न हुआ। जैसा कि बाज़ वक़्त बीमारी या सर्दी से चार पाई पर औंधे पड़ जाते हैं। सज्दा दो तरह का है। सज्दा तहीयह और सज्दा इबादत। सज्दा तहीयह तो किसी की मुलाक़ात के वक़्त

सज्दा करना और सज्द-ए-इबादत किसी को खुदा या खुदा की तरह जान कर करना। सज्द-ए-इबादत गैरुल्लाह को करना शिर्क है। किसी नबी के दीन में जाइज़ न हुआ। क्योंकि हर नबी तौहीद लाए। शिर्क किसी ने नहीं फैलाया। सज्दा तहीयह ज़माना आदम अलैहिस्सलाम से हुजूर अलैहिस्सलाम के ज़मानए पाक तक जायज़ रहा। फ़रिश्तों ने हज़रत आदम को सज्दा किया। हज़रत याकूब अलैहिस्सलाम और बिरादरान हज़रत यूसुफ़ ने यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को सज्दा किया। तफ़्सीरे **रूहुल-बयान** पारह 12 सूरः हूद ज़ेरे आयत व **क़ीला बुअदल लिल-क़ौमिज़्ज़ालेमीन।** में हज़रत अबुल-आलिया से एक रिवायत नक़्ल की कि ज़माना नूह अलैहिस्सलाम में शैतान ने तौबा करनी चाही तो हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को हुक्म हुआ कि शैतान से कहो कि हज़रत आदम की क़ब्र को सज्दा करे। शैतान बोला कि जब मैंने आदम अलैहिस्सलाम को ज़िन्दगी में न किया तो उनकी क़ब्र को क्या सज्दा करूंगा। फिर इस्लाम ने इस सज्द-ए-तहीयह को हराम फरमाया। लिहाज़ा अगर कोई मुसलमान किसी आदमी को सज्द-ए-तहीयह करे तो गुनहगार है। मुज्रिम है। हराम का मुर्तकिब है। मगर मुश्रिक या काफिर नहीं। मोतरिज़ ने जो दुर्रे मुख़्तार की इबारत पेश की उसी जगह दुर्रे मुख़्तार में है।

तरजमा : अगर यह ज़मीन चूमना इबादत और ताज़ीम के लिए हो तो कुफ़्र है और अगर तहीयह के लिए हो तो कुफ़्र नहीं। हां गुनहगार और कबीरा का मुर्तक़िब होगा। इसी इबारत के मातेहत शामी ने इसको और भी वाज़ेह कर दिया है। रहा ग़ैर के सामने झुकना, इसकी दो नौइयत हैं एक यह कि झुकना ताज़ीम के लिए हो जैसे कि झुक कर सलाम करना या मुअज़्ज़म शख़्स के सामने ज़मीन चूमना, यह अगर हद्दे रुकूअ है तो हराम है इसी को फुक़हा मना फरमा रहे हैं। दूसरे यह कि झुकना किसी और काम के लिए हो और वह काम ताज़ीम के लिए हो जैसे किसी बुज़ुर्ग के जूते सीधे करना या उसके पाँव चूमना कि झुकना अगरचे इसमें भी है मगर जूते सीधे करने या पाँव चूमने के लिए है और वह काम ताज़ीमे बुज़ुर्ग के लिए यह हलाल है। अगर तौजीह न की जाए तो हमारी पेश करदा अहादीस और फ़िक़्ही इबारात का क्या मतलब होगा। नीज़ यह सवाल देवबन्दियों के भी ख़िलाफ़ होगा कि उनके पेशवा मौलवी रशीद अहमद साहब भी पाँव चूमना जाइज़ फरमाते हैं। हज़रत मुजद्दिद साहब का यह इंतिहाई तक़्वा था कि उन्होंने समझा कि चूंकि दरबारे अक्बरी में अक्बर बादशाह को सज्दा कराया जाता है। और अक्बर इस ग़र्ज़ से मुझको अपने सामने झुकाना चाहता है। इसलिए आप न झुके वरना अगर आप झुक कर उस खिड़की से दाख़िल होते तो भी आप पर कुछ शरई इल्ज़ाम न होता कि आपका मक़सद इस झुकने से ताज़ीमे अक्बर न थी।

(2) अहादीस में है कि हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने संगे असवद को बोसा दे कर फरमाया।

तरजमा : ऐ हजरे असवद मैं ख़ूब जानता हूँ कि तू एक पत्थर है न नफ़ा दे न नुक़्सान। अगर मैंने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को तुझे चूमते हुए न देखा होता तो मैं तुझको न चूमता।

इससे मालूम हुआ कि फारूके आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु को संगे असवद का बोसा नागवार था मगर चूंकि नस में आ गया। मज्बूरन चूम लिया। और चूंकि इन तबर्रुकात के चूमने की नस नहीं आई लिहाज़ा न चूमना ही मुनासिब है।

जवाब : मौलवी अब्दुल-हई साहब ने मुक़द्दमा **हिदायह बेज़ैला अल-हिदायह** में हजरे असवद के मातहत इसी हदीस को नक़्ल फरमा कर कि हाकिम की रिवायत में है कि हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने फ़ारूके आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु को जवाब दिया कि ऐ अमीरुल-मुमिनीन हजरे असवद नाफ़े भी है और मुज़िर भी। काश कि आपने कुरआन की इस आयत की तफ़्सीर पर तवज्जोह फरमाई होती। **व इज़ अख़ज़ा रब्बुका मिन बनी आदमा मिन ज़ुहूरेहिम ज़ुर्रीयताहुम।** जब मीसाक़ के दिन रब तआला ने अह्दो पैमान लिया तो वह अह्द नामा एक वर्क़ में लिख कर हजरे असवद में रखा और यह संगे असवद क़यामत के दिन आएगा कि उसकी आँखें और ज़ुबान और लब होंगे। और मुमिनीन की गवाही देगा। लिहाज़ा यह अल्लाह का अमीन और मुसलमानों का गवाह है। हज़रत फारूक़ ने फरमाया। **ला अब्क़ानियल्लाहु बेअरेज़िन लस्ता फ़ीहा या अबा हसनिन।** ऐ अली जहाँ तुम न हो ख़ुदा मुझे वहाँ न रखे मालूम हुआ कि संगे असवद नफ़ा व नुक़्सान पहुँचाने वाला है और इसकी ताज़ीम दीन की ताज़ीम है। और हज़रत फ़ारूक़ का संगे असवद को यह ख़िताब इसलिए न था कि आप इस बोस-ए-हजर से नाराज़ थे। सुन्नत से नाराज़ी कुफ़्र है। बल्कि महज इसलिए कि अह्ले अरब पहले बुत परस्त थे ऐसा न हो कि वह यह समझ लें कि इस्लाम ने चन्द बुतों से हटा कर एक पत्थर पर हम को मुतवज्जेह कर दिया इस फरमान से लोगों को फ़र्क़ मालूम हो गया कि वह था पत्थरों का पूजना और यह है पत्थर का चूमना। पूजना और है और चूमना और। हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने इस मक़्सद की तरदीद न की बल्कि **ला तज़ुर्रु वला तंफ़ओ** के लफ़्ज़ से जो सामईन धोखा खाते इसको साफ फरमा दिया कि फारूके आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु का मक़्सद यह है कि बिज़्ज़ात यह पत्थर नफ़ा व नुक़्सान का मालिक नहीं जैसा कि अह्ले अरब बुतों को समझते थे। इसका यह मतलब भी नहीं है कि इस पत्थर में बिल्कुल नफ़ा व नुक़्सान नहीं। तो हज़रत फारूक़ का फरमान भी लोगों को समझाने के लिए था और हज़रत मुर्तज़ा

का भी। रज़ि अल्लाहु अन्हुमा। हमारी इस तक़रीर से रवाफ़िज़ और देवबन्दियों के ऐतराज़ उठ गए।

तअज्जुब है कि हज़रत फारूक़ रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु यहाँ तो संगे असवद के बोसा से बक़ौल तुम्हारे ख़िलाफ़ हैं लेकिन ख़ुद ही हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से उन्होंने अर्ज़ किया कि हम मक़ामे इब्राहीम को अपना मुसल्लान बना लेते कि उसके सामने सज्दा करते और नफ़्ल पढ़ते उन ही की अर्ज़ पर यह आयत आई। **वत्तख़ेज़ू मिन मक़ामे इब्राहीमा मुसल्ला।** मक़ामे इब्राहीम भी तो एक पत्थर ही है। उसके सामने नफ़्ल पढ़ना और सज्दा करना आप को पसन्द है।

(3) कुछ लोग यह भी कहते हैं कि आज कल जो तबर्रुकात हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की तरफ मंसूब हैं ख़बर नहीं कि बनावटी हैं या कि असली। चूंकि उनके असली होने का सुबूत नहीं। इसलिए उनका चूमना उनकी अज़्मत करना मना है। हिन्दुस्तान में सैकड़ों जगह बाल मुबारक की ज़्यारत कराई जाती है न तो उसका पता है और न सुबूत कि यह हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के बाल हैं?

जवाब : तबर्रुकात के सुबूत के लिए मुसलमानों में यह मशहूर होना कि यह हुज़ूर के तबर्रुकात हैं, काफी है। इसके लिए आयते कुरआनी या हदीस बुख़ारी की ज़रूरत नहीं। हर चीज़ का सुबूत यक्सां नहीं होता। ज़िना के सुबूत के लिए चार मुत्तक़ी मुसलमानों की शहादत दरकार। दीगर माली मुआमलात के सुबूत के लिए दो की गवाही काफी और रमज़ान के चाँद के लिए सिर्फ़ एक औरत की ख़बर भी मोतबर। निकाह, नसब, यादगारों और औक़ात के सुबूत के लिए सिर्फ़ शोहरत या ख़ास अलामत काफी है। एक परदेसी आदमी किसी औरत को साथ ला कर मिस्ले ज़न व शौहर रहते हैं। आप इस अलामत को देख कर उसके निकाह की गवाही दे सकते हैं हम कहते हैं कि फलां के बेटे फलां के पोते हैं। इसका सुबूत न कुरआन से है न हदीस से न हमारी वालिदा के निकाह के गवाह मौजूद। मगर मुसलमानों में इसकी शोहरत है इतनी ही काफी है। इसी तरह यादगारों के सुबूत के लिए सिर्फ़ शोहरत मोतबर है। रब तआला फरमाता है। **अवलम यसीरू फ़िल-अर्ज़े फ़यंज़ुरू कैफ़ा काना आक़िबुतल-लज़ीना मिन क़ब्लेहिम।** क्या यह लोग ज़मीन की सैर नहीं करते ताकि देखें कि उन से पहले वालों का क्या अंजाम हुआ? इस आयत में कुफ़्फ़ारे मक्का को रग़बत दी गई है कि गुज़िश्ता कुफ़्फ़ार की यादगारों, उनकी उजड़ी हुई बस्तियों को देख कर इबरत पकड़ें कि नाफरमानों का यह अंजाम होता है। अब यह कैसे मालूम हुआ कि फलां जगह फलां क़ौम आबाद थी। कुरआन ने भी इसका पता न दिया। इसके लिए महज़ शोहरत मोतबर बाक़ी रही। मालूम हुआ कि कुरआन

ने भी इस शोहरत का ऐतबार फरमाया। शिफ़ा शरीफ़ में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ताज़ीम व तौक़ीर में से यह भी है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के असबाब उनके मकानात और जिसको उस जिस्म पाक से मस भी हो गया और जिसके मुतअल्लिक़ यह मश्हूर हो कि यह हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की है उन सब की ताज़ीम करे। शरह शिफ़ा में मुल्ला अली क़ारी इसी इबारत के मातहत फरमाते हैं। **इन्नल-मुरादा जमीओ मा नुसेबा इलैहि व युअरफु बेही अलैहिस्सलाम** इससे मक़सद यह है कि जो चीज़ हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की तरफ मंसूब मश्हूर हो उसकी ताज़ीम करे। मौलाना अब्दुल-हलीम साहब लखनवी ने अपनी किताब नूरुल-ईमान में यही इबारते शिफ़ा नक़्ल फरमा कर **व यूअ़रफु बेही** पर हाशिया लिखा।

अगरचे यह निस्बत महज़ शोहरत की बिना पर हो और इसका सुबूत अहादीस से न हो। इसी तरह मुल्ला अली क़ारी ने फरमाया मुल्ला अली क़ारी अलैहिर्रहमा ने अपनी किताब मस्लक मुतक़स्सत में यही मज़्मून तहरीर फरमाया। इसी तरह उलमा-ए-उम्मत ने अहकामे हज में किताबें शाया कीं और ज़ाइरीन को हिदायत की कि हरमैन शरीफ़ैन में हर उस मकाम की ज़्यारत करे जिसकी लोग इज़्ज़त व हुरमत करते हों। तअज्जुब है कि फ़ुक़्हाह किराम फ़ज़ाइले आमाल में हदीस ज़ईफ़ को भी मोतबर मानें। और यह मेहरबान तबर्रुकात के सुबूत के लिए हदीस बुख़ारी का मुताला करें।

लतीफ़ा : हम धोराजी काठिया वाड़ में नगीना मस्जिद में बारहवीं रबीउल-अव्वल शरीफ़ को वअ़ज़ कहने गये वहाँ बाल मुबारक की ज़्यारत की जा रही थी। मुसलमान ज़्यारत कर रहे थे। दरूद पाक का विर्द करते थे कोई रोता था कोई दुआ माँग रहा था ग़र्ज़कि अजब पुर कैफ़ मंज़र था। एक साहब एक कोना में मुँह बनाए खड़े थे मालूम होता था कि उनके मुँह को लक़्वा ने मारा है मैंने पूछा कि हज़रत आप ग़ुस्सा में क्यों हैं? फरमाने लगे कि मस्जिदों में शिर्क हो रहा है। इसका क्या सुबूत है? कि यह बाल हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलमा का है और अगर हो भी तो इस ताज़ीम का क्या सुबूत है? मैंने इनका जवाब न दिया। बल्कि उन से पूछा कि इसका सुबूत क्या है? कि आप अब्दुर्रहीम साहब के फ़रज़न्द हैं। अव्वलन तो इस निकाह के गवाह नहीं। अगर कोई हो भी तो वह सिर्फ़ अक़्दे निकाह की गवादी देगा। यह कैसे मालूम हुआ कि जनाब की विलादत शरीफ़ उनके ही क़तरे से है। तड़प कर बोले कि जनाब मुसलमान कहते हैं कि मैं उनका बेटा हूँ और मुसलमानों की गवाही मोतबर है। हमने कहा कि जनाब मुसलमान कहते हैं कि यह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का बाल शरीफ है और मुसलमानों की गवाही मोतबर है। शर्मिन्दह हो गए कहने लगे यह और बात

है। पूछा कि जनाब कहाँ के तालीम याफ़्ता हैं। फरमाया देवबन्द के। हमने कहा कि फिर क्या पूछना आप तो रेजिस्ट्री शुदा हैं। मौलाना कुतबुद्दीन ब्रह्माचारी कुद्देस सिर्रहू से एक देवबन्दी साहब फरमाने लगे कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलमा को हुज़ूर कहना बिदअत है नाम लेना चाहिए। क्योंकि हुज़ूर कहना कहीं साबित नहीं उन्होंने जवाब दिया चुप रह उल्लू। बोले। यह क्या? फरमाया कि आपको जनाब या आप कहना बिदअत है कहीं भी साबित नहीं मैं यक़ीन करता हूँ कि देवबन्दियों को बहुत ज़्यादा तक्लीफ़ क्यामत के दिन होगी जब कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम मक़ामे महमूद पर जल्वा गर होंगे। और आपकी शान तमाम आलम पर ज़ाहिर होगी। **अल्लाहुम्मा अरजुक़्ना शफ़ाअतहू सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम।**

आज ले उनकी पनाह आज मदद माँग उन से
फिर न मानेंगे क्यामत में अगर मान गया

(4) नक़्शा नअलैन असल नअलैन शरीफ़ नहीं। यह तो तुम्हारी रौशनाई तुम्हारे क़लम से बनाया हुआ फोटो है फिर उसकी ताज़ीम क्यों करते हो?

जवाब : यह नक़्शा असल नअलैन की नक़्ल और इसकी हिकायत है। हिकायत की भी ताज़ीम चाहिए। लाहौर का छपा हुआ कुरआन शरीफ़, इसका कागज़ व रौशनाई आसमान से नहीं उतरी हमारी बनाई हुई है। मगर वाजिबुत्ताज़ीम है, कि उसकी असल की नक़्ल है। हर माह रबीउल-अव्वल हर दो शंबा मुअज़्ज़म है कि असल की हिकायत है।

बहस अब्दुन्नबी अब्दुर्रसूल नाम रखना

अब्दुन्नबी, अब्दुर्रसूल अब्दुल-मुस्तफ़ा अब्दुल अली वग़ैरह नाम रखना जाइज़ है। इसी तरह अपने को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का बन्दा कहना जाइज़ है। कुरआन व हदीस व अक़्वाल फ़ुक़्हा से साबित है मगर कुछ लोग इसका इंकार करते हैं इसलिए इस बहस के भी हम दो बाब करते हैं। बाब अव्वल में इसका सुबूत दूसरे में इस पर ऐतराज़ व जवाब।

पहला बाब

इसके सुबूत में

कुरआने करीम फरमाता है। **वन्केहुल-अयामा मिन्कुम वस्सालेहीना मिन इबादेकुम व इमाइकुम।** और निकाह करो अपनों में उनका जो बेनिकाह हों और अपने लाइक़ बन्दों और कनीज़ों का। इस इबारत में इबाद को **कुम** की तरफ मुज़ाफ किया गया। यानी तुम्हारे बन्दे कुल या **इबादियल्लज़ीना अस्रफ़ू अला अंफ़ुसेहिम ला तक़्नतू मिन रहमतिल्लाहे।** ऐ महबूब फरमा दो कि मेरे वह बन्दो जिन्होंने अपनी जानों पर ज़्यादती की

अल्लाह की रहमत से ना उम्मीद न हो। इस **या इबादी** में दो एहतमाल हैं। एक यह कि रब फरमाता है कि ऐ मेरे बन्दो। दूसरे यह कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को हुक्म दिया गया कि आप फरमा दो ऐ मेरे बन्दो। इस दूसरी सूरत में **इबादे रसूलिल्लाहे** मुराद हुए। यानी हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के गुलाम और उम्मती। दूसरे मानी को भी बहुत से बुज़ुर्गाने दीन ने इख़्तियार फरमाया। मस्नवी शरीफ़ में फरमाते हैं।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने सारे आलम को अपना बन्दा फरमाया। कुरआन में पढ़ लो **कुल या इबादे।** हाजी इम्दादुल्लाह साहब रिसाला **नफ़खा** मक्कीया तरजमा शमाइमे इम्दादिया सफः 135 में फरमाते हैं **इबादुल्लाह** को **इबादुर्रसूल** कह सकते हैं। चुनांचे अल्लाह तआला फरमाता है **कुल या इबादियल्लज़ीना अल-आयह** मरजअ् ज़मीर मुतकल्लिम का आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं। तर्जमा मौलवी अशरफ़ अली साहब थानवी कुल या इबादियल्लज़ीना अल-आयह। आप कह दो कि मेरे बन्दो। **इज़ालतुल-ख़िफ़ा** में शाह वलीयुल्लाह साहब बहवाला अर्रियाज़ुन्नज़रतु वग़ैरह फरमाते हैं कि हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने बर सरे मिंबर ख़ुतबा में फरमाया।

मैं हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के साथ था। लिहाज़ा मैं आपका बन्दा और ख़ादिम था। मस्नवी शरीफ़ में वह वाक़या नक़्ल फरमाया जबकि हज़रत सिद्दीक़े अक्बर बिलाल को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की बारगाह में खरीद कर लाए तो अर्ज़ किया।

हम दोनों आपकी बारगाह के बन्दे हैं। मैं इनको आपके सामने आज़ाद करता हूँ। साहबे दुर्रे मुख़्तार ख़ुत्बा दुर्रे मुख़्तार में अपना शजरए इल्मी बयान फ़रमाते हैं।

फ़इन्नी अरवीहे अन शैख़ेनश्शैख़े अब्दिन्नबी अल-ख़लीली। मैं इसको अपने शैख़ अब्दुन्नबी ख़लीली से रिवायत करता हूँ। मालूम हुआ कि साहिबे दुर्रे मुख़्तार के उस्ताद का नाम अब्दुन्नबी था। मरसिया रशीद अहमद गंगोही में मौलवी महमूद हसन साहब देवबन्दी ने लिखा है।

क़बूलियत इसे कहते हैं मक़्बूल ऐसे होते हैं
उबैद सूद का उनके लक़ब है यूसुफ़े सानी

जिससे मालूम हुआ कि मौलवी रशीद अहमद गंगोही के काले बन्दे भी यूसुफ़ सानी कहलाते हैं ग़र्ज़कि अब्द की निस्बत ग़ैरे ख़ुदा की तरफ कुरआन व हदीस व अक़्वाल फ़ुक़हा और अक़्वाल मुख़ालेफीन से साबित है।

लतीफ़ा : तक़्वियतुल-ईमान में अली बख़्श पीर, पीर बख़्श, ग़ुलाम बख़्श, अब्दुन्नबी नाम रखने को शिर्क कहा मगर तज़्किरतुर्रशीद हिस्सा अव्वल सफः 13 में रशीद अहमद साहब का शजरा नसब यूं है मौलाना रशीद अहमद इब्ने

मौलाना हिदायत अहमद इब्ने क़ाज़ी पीर बख़्श इब्ने ग़ुलाम हसन इब्ने ग़ुलाम अली। और माँ की तरफ से नसब नामा यूं लिखा है। रशीद अहमद इब्ने करीमुन्निसा बिन्ते फ़रीद बख़्श इब्ने ग़ुलाम क़ादिर इब्ने मुहम्मद सालेह इब्ने ग़ुलाम मुहम्मद देवबन्दी बताएं कि मौलवी रशीद अहमद साहब के खानदानी बुज़ुर्ग मुश्रिक मुर्तद थे या नहीं? अगर नहीं तो क्यों? और अगर थे तो मुर्तद की औलाद हलाली है या हरामी?

दूसरा बाब

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

अब्द के मानी हैं आबिद इबादत करने वाला तो अब्दुन्नबी के माना होंगे नबी की इबादत करने वाला और यह मानी खुले हुए शिर्कीया हैं लिहाज़ा ऐसे नाम मना हैं।

जवाब : अब्द के मानी आबिद भी हैं और ख़ादिम भी। जब अब्द को अल्लाह की तरफ निस्बत किया जावेगा। तो अब्द के मानी आबिद होंगे और जब ग़ैरुल्लाह की तरफ निस्बत होगी तो मानी होंगे ख़ादिम ग़ुलाम लिहाज़ा अब्दुन्नबी के मानी हुए नबी का ग़ुलाम। आलमगीरी **किताबुल-कराहियत बाब तस्मियतिल-औलाद** में है।

वत्तस्मियतु बइस्मे यूजदु फ़ी किताबिल्लाहे तआला...............

और जो नाम कुरआन शरीफ़ में पाए जाते हैं उनके साथ नाम रखना जाइज़ है जैसे कि अली या रशीद और बदीअ क्योंकि यह अस्मा मुश्तरेका में से हैं और बन्दे के लिए उनके वह मानी मुराद होंगे जो कि अल्लाह के लिए मुराद नहीं। इससे मालूम हुआ कि अल्लाह तआला का नाम भी अली है और हज़रत अली रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का नाम भी अली है। इसी तरह ख़ुदा का नाम भी रशीद बदीअ वग़ैरह हैं और बन्दों के भी यह नाम हो सकते हैं। मगर अल्लाह के नाम में इन अल्फ़ाज़ के मानी और हैं और बन्दों के लिए दूसरे मानी। इस तरह अब्दुल्लाह के मानी अल्लाह का आबिद अब्दुन्नबी के मानी नबी का ग़ुलाम अगर यह तौजीह न हो तो कुरआन की इस आयत के क्या मानी होंगे। कि **मिन इबादेकुम?**

(2) मिश्कात **किताबुल-अदब बाबुल-असामी** और मुस्लिम जिल्द दोम **किताबुल-अल्फ़ाज़ मिनल-अदब** वग़ैरह (सफ़: 407) में है।

ला यकूलन्ना अहदुकुम अब्दी व अम्मती कुल्लुकुम.............

तुम में से कोई न कहे अबदी (मेरा बन्दा) तुम सब अल्लाह के बन्दे हो और तुम्हारी तमाम औरतें अल्लाह की लौंडियां हैं लेकिन यह कहे कि ग़ुलामी व जारियती। इस से मालूम हुआ कि लफ़्ज़ अब्द की निस्बत ग़ैरुल्लाह की

तरफ़ करना ख़िलाफ़े अहादीस है लिहाज़ा हराम है और अब्दुन्नबी में भी यह बात मौजूद है लिहाज़ा मना है।

जवाब : यह मुमानेअत कराहते तंज़ीही के तौर पर यह अब्दी कहना बेहतर नहीं बल्कि ग़ुलामी कहना औला है। इसी हदीस के मातहत नुववी शरह मुस्लिम में है।

अगर कहा जाए कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अलामाते क़यामत में फ़रमाया कि लौंडी अपने रब को जनेगी यानी बन्दे को रब फ़रमाया इसका जवाब दो तरह है एक यह कि दूसरी हदीस ब्याने जवाज़ के लिए है। और पहली हदीस में मुमानेअत अदब के लिए है और कराहते तंज़ीही है न कि तहरीमी। मुस्लिम में इसी जगह है।

गैबिल करमा फइन्नल कर्मर्रजुलुल मुस्लिम इसी जगह यह भी है **ला तुस्मुल इनबुल करमा फइन्नल करमल मुस्लिम**

अंगूर को करम न कहो करम तो मुसलमान है। मिश्कात **किताबुल-अदब बाबुल-असामी**। (सफ़: 408) में है। **इन्नल्लाहा हुवल-हकमु व इलैहिल-कुक्मु फ़लिमा तक्नी अबल-हकमे**। हुक्म तो अल्लाह है उसी का हुक्म है तो तेरा नाम-अबुल-हुक्म क्यों है। मिश्कात (सफ़: 407) में इसी जगह **ला तुसम्मीना गुलामका यसारा व ला रिबाहन वला नज़ीहन वला अफ़्लहा**। अपने गुलाम का नाम यसार और रिबाह और **नजीह** और **अफ़्लह** न रखो। इन तमाम अहादीस में इन नामों से जो मुमानेअत है कराहते तंज़ीही की बिना पर है वरना कुरआन और हदीस बल्कि ख़ुद अहादीस में सख़्त तआरुज़ होगा। देखो रब ख़ुदा का भी नाम है और कुरआने करीम में बन्दों को भी रब फ़रमाया है। **कमा रब्बे यानी सग़ीरा। फ़रजेअ इला रब्बिका।** अगर कोई शख़्स किसी को अपना मुरब्बी या रब कहे मुश्रिक न होगा। हां अगर इससे बचे तो भी कोई हरज नहीं। क्योंकि यह नाम रखना वाजिब नहीं। हाँ इस ज़माना में देवबन्दियों वहाबियों को चिढ़ाने के लिए यह नाम रखे तो बाइसे सवाब है। जैसे कि हिन्दुस्तान में गाय की कुरबानी। हम इसकी तहक़ीक़ फ़ातिहा की बहस में कर चुके हैं कि जिस मुस्तहब काम को आदाए दीन रोकने की कोशिश करें उसको ज़रूर करना चाहिए।

बहस इस्क़ात का बयान

इस बहस में तीन बातें अर्ज़ करनी हैं। इस्क़ात के माना। इस्क़ात करने का सहीह तरीक़ा। इस्क़ात का सुबूत मगर चूंकि कुछ लोग इस्क़ात के बिल्कुल मुंकिर हैं। वह क़िस्म क़िस्म के ऐतराज़ात करते हैं। इसलिए इस बहस के दो बाब किए जाते हैं। पहले बाब में मज़्कूरा तीन बातें और दूसरे बाब में इस पर सवाल व जवाब।

पहला बाब

इस्क़ात के तरीक़े और इसके सुबूत में

इस बाब में चार बातें अर्ज़ की जाती हैं। इस्क़ात के क्या माना हैं। इस्क़ात करने का सहीह तरीक़ा क्या है। इस्क़ात करने से फ़ाइदा क्या है। इस्क़ात का सुबूत क्या। इस्क़ात के लुग्वी मानी हैं गिरा देना। इस्तेलाही माना यह हैं कि मैयत के ज़िम्मा जो अहकामे शरईया रह गए हों उनको उसके ज़िम्मा से दूर करना। चुनांचे **वजीरतुस्सिरात** में है।

इस्क़ात का फ़ाइदा यह है कि मुसलमान से बहुत से शरई अहकाम जानकर भूलकर ख़तन रह जाते हैं जिसको वह अपनी ज़िन्दगी में अदा न कर सका। और अब बाद मौत उनकी सज़ा में गिरफ़्तार है। अब न तो अदा करने की ताक़त है न इससे छूटने की कोई सबील। शरीअते मुतह्हरा ने इस बेकसी की हालत में उस मैयत की दस्तगीरी करने के कुछ तरीक़े तज्वीज़ फरमा दिए कि अगर वली मैयत वह तरीक़ा मैयत की तरफ़ से कर दे तो बेचारा मुर्दा छूट जाए इस तरीक़ा का नाम इस्क़ात है। हक़ीक़त में यह मैयत की एक तरह की मदद है। वहाबी, देवबन्दी जिस तरह कि ज़िन्दा मुसलमान के दुश्मन हैं इसी तरह मुर्दों के भी दुश्मन कि उन को नफ़ा पहुँचाने से लोगों को रोकते हैं और मरने के बाद भी पीछा नहीं छोड़ते। इस्क़ात का तरीक़ा यह है कि मैयत की उम्र मालूम की जाए उसमें से नौ साल औरत के लिए और बारह साल मर्द के लिए ना बालिग़ी के निकाल दो। अब जितने साल बचे इसमें हिसाब लगाओ कितनी मुद्दत तक बेनमाज़ी या बेरोज़ा रहा। या नमाज़ी होने के ज़माना में किस क़दर नमाज़ें उसकी बाक़ी रह गई हैं कि न वह पढ़ीं और न क़ज़ा कीं। इसके लिए ज़्यादा से ज़्यादा लगा लो जितनी नमाज़ें हासिल हुईं फ़ी नमाज़ 175 रुपए अठन्नी भर गेहूं ख़ैरात कर दो। यानी जो फ़ितरा की मिक़्दार है वही एक नमाज़ के फ़िदिया की। वही एक रोज़े की। तो एक दिन की छेः नमाज़ें, पाँच फ़र्ज़ और एक वित्र वाजिब उनका फ़िदिया तक़रीबन बारह सेर गन्दुम हुए और एक माह की नमाज़ों का फ़िदिया 9 मन गन्दुम तक़रीबन और साल की नमाज़ों का 108 मन गन्दुम होता है। अब अगर किसी के ज़िम्मा दस बीस साल की नमाज़ें हैं तो सैकड़ों मन ग़ल्ला ख़ैरात करना होगा। शायद कोई बड़ा दीनदार मालदार तो यह कर सके मगर ग़ुरबा से नामुम्किन। इनके लिए यह तरीक़ा है कि वलीए मैयत बक़द्रे ताक़त गन्दुम या उसकी क़ीमत ले मसलन एक माह की नमाज़ों का फ़िदिया 9 मन था तो 9 मन गन्दुम या उसकी क़ीमत ले। और किसी मिस्कीन को उसका मालिक कर दे वह मिस्कीन या तो दूसरे को या ख़ुद मालिक को बतौर हिबा दे दे। वह फिर उस फ़क़ीर को सदक़ा दे। हर बार के सदक़ा

में एक माह की नमाज़ों का फिदिया अदा होगा। बारह बार सदक़ा किया। एक साल का फ़िदया अदा हुआ। इसी तरह चन्द बार घुमाने में पूरा फिदिया अदा हो जाएगा। नमाज़ों के फ़िदिया से फ़ारिग़ हो कर इसी तरह रोज़ा ज़कात का फ़िदिया अदा करें। रहमते इलाही से उम्मीद है कि मैयत की मग़्फ़िरत फरमा दे। इस्क़ात का यह तरीक़ा सहीह है। पंजाब में जो आम तौर पर मुरव्वज है कि मस्जिद से कुरआन पाक का एक नुस्ख़ा मंगाया। उस पर एक रुपया रखा और चन्द लोगों ने इसको हाथ लगाया फिर मस्जिद में वापस कर दिया। इससे नमाज़ों का फ़िदिया अदा न होगा। बाज़ लोग यह कहते हैं कि कुरआन की कोई क़ीमत ही नहीं। लिहाज़ा जब कुरआन शरीफ का नुस्ख़ा ख़ैरात कर दिया सब नमाज़ों का फिदिया अदा हो गया मगर यह ग़लत है क्योंकि इसमें ऐतबार तो कुरआन के काग़ज़ लिखाई छपाई का है। अगर दो रुपया का यह नुस्ख़ा है। तो दो रुपया की ख़ैरात का सवाब मिलेगा। वरना फिर वह मालदार जिन पर हज़ारहा रुपया सालाना ज़कात वाजिब होती है वह क्यों इतना ख़र्च करें सिर्फ एक कुरआन पाक का नुस्ख़ा ख़ैरात कर दिया करें। ग़र्ज़ेकि यह तरीक़ा सही नहीं। तरीक़ा सही न होने के यह मानी हैं कि इससे इस्क़ात का मक़सूद हासिल न होगा न यह कि हराम है बिला दलील किसी चीज़ को सिर्फ़ अपनी राय से हराम कहना तो फ़ुज़्लाए देवबन्द ही का काम है। बक़द्रे ख़ैरात सवाब मिल जाएगा।

नोट : हमने फ़िदिया का जो वज़न बयान किया कि छे: नमाज़ों का बारह सेर। यह हर जगह के लिए नहीं है एक नमाज़ का फ़िदिया 175 रुपया अठन्नी भर गन्दुम होते हैं। हर सूबा के लोग इससे अपने यहाँ के सेर से हिसाब लगा लें।

इस्क़ात के सुबूत में तीन बहसें करना हैं। एक तो यह हराम से बचने हलाल हासिल करने या शरई ज़रूरत पूरी करने के लिए शरई हीले जाइज़ हैं। दूसरे यह कि नमाज़ रोज़ा का फ़िदिया माल से हो सकता है। तीसरे यह कि ख़ुद इस्क़ात का सुबूत क्या है।

पहली फ़स्ल

हीलाए शरई के जवाज़ में

शरई हीले करना ज़रूरत के वक़्त जाइज़ हैं। कुरआने करीम अहादीसे सहीहा अक़्वाले फुक़्हा से इसका सुबूत है। हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम ने क़सम खाई थी कि मैं अपनी बीवी को सौ लकड़ियाँ मारूंगा। रब तआला ने उनको तालीम फरमाया कि तुम एक झाड़ू ले कर उनको मारो और अपनी क़सम न तोड़ो। कुरआन इसी क़िस्सा को नक़्ल फरमाता है। **व ख़ुद बेयदिका ज़िग़्सन फ़ज़्रिब बेहि वला तहनस** तुम अपने हाथ में झाड़ू ले कर

मार दो और क़सम न तोड़ो। हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने चाहा कि बिनयामीन को अपने पास रखें और राज़ ज़ाहिर न हो। इसके लिए भी एक हीला ही फरमाया जिसका मुफ़स्सल ज़िक्र सूर: यूसुफ़ में है। एक बार हज़रत सारा ने क़सम खाई थी कि मैं क़ाबू पाऊंगी तो हज़रत हाजरा का कोई हिस्सा काट दूंगी। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम पर वही आई कि उनकी आपस में सुलह करा दो हज़रत सारा ने फरमाया कि मेरी क़सम कैसे पूरी हो। तो उनको तालीम दी गई कि हज़रत हाजरा के कान छेद दें। मिश्कात **किताबुल-बुयूअ बाबुर्रिबा** में है कि हज़रत बिलाल रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ख़िदमत में उम्दा ख़ुरमे लाए। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने दरयाफ़्त फरमाया कि कहाँ से लाए। अर्ज़ किया कि मेरे पास कुछ रद्दी ख़ुरमे थे मैंने दो साअ रद्दी ख़ुर्मे दिए और एक साअ उम्दा ख़ुर्मे ले लिए। फरमाया कि यह सूद हो गया। आइंदा ऐसा करो कि रद्दी ख़ुर्मे पैसों के एवज़ फ़रोख़्त करो और उन पैसों के अच्छे ख़ुर्मे ले लो। देखो यह सूद से बचने का एक हीला है। आलमगीरी ने हीलों का मुस्तक़िल बाब लिखा। जिसका नाम है **किताबुल-हील**। इसी तरह **अल-इशबाह वन्नज़ाइर** में **किताबुल-हील** वज़ा फरमाई। चुनांचे आलमगीरी **किताबुल-हील** और ज़ख़ीरा में है।

तरजमा : जो हीला किसी का हक़ मारने या इस में शुबह पैदा करने या बातिल से फ़रेब देने के लिए किया जाए वह मकरूह है और जो हीला इसलिए किया जाए कि इससे आदमी हराम से बच जाए या हलाल को पा ले वह अच्छा है। इस क़िस्म के हीलों के जाइज़ होने की दलील में रब तआला का यह फ़रमान है कि अपने हाथ में झाड़ू लो इससे मार दो यह हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम को क़सम से बचने की तालीम थी और आम मशाइख़ इस पर हैं कि इस आयत का हुक्म मंसूख़ नहीं और यही सही मज़्हब है। हमवी शरह इश्बाह और ततार ख़ानिया में जवाज़ हीला की बहुत नफ़ीस तक़रीर फरमाई। चुनांचे बहस के दौरान में फरमाते हैं।

तरजमा : इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है कि एक बार हज़रत सारा व हाजर रज़ि अल्लाहु अन्हुमा में कुछ झगड़ा हो गया। हज़रत सारा ने क़सम खाई कि मुझे मौक़ा मिला तो हाजरा का कोई हिस्सा काटूंगी। रब तआला ने हज़रत जिब्रील को इब्राहीम अलैहिस्सलाम की ख़िदमत में भेजा कि उनमें सुलह करा दें। हज़रत सारा ने अर्ज़ किया तो मेरी क़सम का क्या हीला होगा। पस हज़रत इब्राहीम पर वही आई कि हज़रत सारा को हुक्म दो कि वह हज़रत हाजरा के कान छेद दें। उसी वक़्त से औरतों के कान छेदे गए।

इन कुरआनी आयात और अहादीसे सहीहा और फ़िक़्ही इबारात से हीला शरई का जवाज़ मालूम हुआ।

दूसरी फ़स्ल

रोज़े नमाज़ के फ़िदिया के बयान में

रोज़े का फ़िदिया तो कुरआन से साबित है रब तआला फरमाता है। व **अलल-लज़ीना युतीक़ूनहू फ़िदयतुन तआमुन मिस्कीन।** और जिनको इस रोज़े की ताक़त न हो वह बदला दें एक मिस्कीन का खाना। इससे मालूम हुआ कि मजबूर बूढ़ा या मरज़ुल-मौत का मरीज़ जब रोज़े के क़ाबिल न रहे तो हर रोज़े के एवज़ एक मिस्कीन को खाना दे और नमाज़ बमुक़ाबला रोज़े के ज़्यादा मुहतम बिश्शान है। इसलिए नमाज़ को रोज़े के हुक्म में रखा गया। चुनांचे इसी आयत के मातहत तफ़्सीराते अहमदीया शरीफ़ में मुल्ला अहमद जीवन कुद्देस सिर्रहू फरमाते हैं।

नमाज़ रोज़े के जैसी है बल्कि उससे भी अहम लिहाज़ा हमने इसमें भी फ़िदिया का एहतियातन हुक्म दिया और रब तआला के फ़ज़्ल से क़बूल की उम्मीद है। मनार में है। व **वजूबुल-फ़िदियते फ़िस्सलाते लिल-एहतियाते।** नमाज़ में फ़िदिया का वाजिब होना एहतियातन है। शरह वक़ाया में है व **फ़िदयतुन कुल्ले सलातिन कसौमिन यौमिन वहुवस्सहीहु।** हर नमाज़ का फ़िदिया एक दिन के रोज़े की तरह है और वही सही है। शरह इल्यास में है। व **यूतबरू फ़िदयतुन कुल्ले सलातिन फाइततिन कसौमे यौमिन ऐ कफ़िदयतिन यौमिन।** हर फ़ौत शुदाह नमाज़ के फ़िदिया का ऐतबार एक दिन रोज़े पर है। यानी एक दिन के रोज़े की तरह है।

फ़त्हुल-क़दीर में है।

जो शख़्स मर जाए और उस पर रमज़ान की क़ज़ा है पस उसने वसीयत की तो उसकी तरफ से उसका वली हर दिन के एवज़ एक मिस्कीन को आधा साअ गेहूं या एक साअ ख़ुर्मे या जौ दे दे। क्योंकि मैयत अब अदा से मज्बूर हो गया और इसी तरह जब कि उसने नमाज़ के बदले में खाना देने की वसीयत की हो। **तहतावी अला मराक़ियुल-फलाह** में है।

मालूम हुआ कि नमाज़ रोज़ा का फ़िदिया देना जाइज़ है और क़बूल की उम्मीद है। बल्कि अहादीस भी इसकी ताईद करती हैं। चुनांचे नसाई ने अपने सुनने कुबरा और अब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने **किताबुल-वसाया** में सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से नक़्ल फरमाया।

कोई किसी की तरफ से न नमाज़ पढ़े न रोज़ा रखे लेकिन उसकी तरफ से हर दिन के एवज दो मद गंदुम (आधा साअ) ख़ैरात कर दे। मिश्कात **किताबुस्सौम बाबुल-क़ज़ा** (सफ़: 178) में है।

जो कि मर जाए और उसके ज़िम्मा माहे रमज़ान के रोज़े हों तो चाहिए कि उसकी तरफ से हर दिन के एवज़ एक मिस्कीन को खाना दिया जाए ग़र्ज़कि नमाज़ रोज़े का फ़िदिया माल से देना शरीअत में वारिद है। इसका इंकार करना जिहालत है।

तीसरी फ़सल

मसअला इस्क़ात के सुबूत में

इस्क़ात का तरीक़ा हम पहले अर्ज़ कर चुके हैं। इसका सुबूत तक़रीबन हर फ़ेक़्ही किताब में है। चुनांचे नुरुल-ईज़ाह में इसी मसला इस्क़ात के लिए एक ख़ास फ़स्ल मुक़र्रर की **फ़स्लुन इस्क़ातिस्सौमे वस्सलाते**। यानी यह फ़स्ल नमाज़ रोज़े के इस्क़ात में है इसमें फरमाते हैं।

वही है जो तरीक़ा इस्क़ात में बयान हुआ। इसकी शरह में शामी में इस्क़ात की और ज़्यादा वज़ाहत फरमाई। चुनांचे फरमाते हैं।

यानी इसका आसान तरीक़ा यह है कि हिसाब करे कि मैय्यित पर कितनी नमाज़ें और रोज़े वग़ैरह हैं और इस अंदाज़े से क़र्ज़ ले इस तरह कि एक एक महीना या एक एक साल के अंदाज़ा ले या मैय्यित की कुल उम्र का अंदाज़ा कर ले और पूरी उम्र में से बुलूग़ की कम अज़ कम मुद्दत मर्द के लिए बारह साल है और औरत के लिए नौ साल वज़ा कर दे फिर हिसाब कर ले तो हर महीना की नमाज़ों का फ़िदिया निस्फ़ ग़रारह होगा (फ़त्हुल क़दीर दमिश्क़ी मद से) और हर शम्सी साल का कफ़्फ़ारा 6 ग़रारह हुआ पस वारिस उसकी क़ीमत क़र्ज़ ले और फ़क़ीर को इस्क़ात के लिए दे। फिर फ़क़ीर उसको दे दे और वारिस हिबा क़बूल करके मौहूब पर क़ब्ज़ा कर ले। फिर वही क़ीमत उसी फ़क़ीर को या दूसरे को फ़िदिया में दे इसी तरह दौरा करता रहे तो हर दफ़ा में एक साल का कफ़्फ़ारह अदा होगा। और इसके बाद रोज़ा और कुरबानी के कफ़्फ़ारा के लिए दौरा करे फिर कफ़्फ़ारा यमीन के लिए लेकिन कफ़्फ़ारा क़सम में दस मिस्कीनों का होना ज़रूरी है बख़िलाफ़ फिदिया नमाज़ के कि इसमें चन्द नमाज़ों का फ़िदिया एक शख़्स को दे सकता है। यह बिल्कुल वही तरीक़ा है जो हमने बयान किया। **अल-इशबाहु वन्नज़ाइर** में है।

तिवालत के ख़ौफ़ से तमाम की इबारात नक़्ल नहीं कीं। मुंसिफ़ के लिए इसी क़द्र में किफायत है अब मुख़ालेफ़ीन के पेशवा मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही का फ़तवा भी मुलाहिज़ा हो। फतावा रशीदीया जिल्द अव्वल **किताबुल-बिदआत** सफ़ः 103 में है। "हीला इस्क़ात का मुफ़्लिस के वास्ते उलमा ने वज़ा किया था। अब यह हीला तहसील चन्द फलोस का मुल्लानों के वास्ते मुक़र्रर हो गया है। हक़ तआला नीयत से वाक़िफ़ है वहाँ यह हीला

कारगर नहीं मुफ़्लिस के वास्ते बशर्ते सेहत नीयत वरसा क्या अजब है कि मुफ़ीद हो वरना बेकार और हीलाए तहसील दुनिया का है।" फ़क़द रशीद अहमद अफ़ी अन्हु।

अगरचे इसमें बहुत हेर फेर की मगर जाइज़ मान लिया। लिहाज़ा अब किसी देवबन्दी को तो हीला इस्क़ात पर ऐतराज़ का हक़ नहीं दिया। मुफ़्लिस की क़ैद मौलवी रशीद अहमद साहब ने अपने घर से लगाई है। हम फ़िक़्ही इबारात पेश कर चुके हैं जिसमें मुफ़्लिस की क़ैद नहीं है। मालदार आदमी भी अगर पूरा फ़िदिया अदा करे तो तमाम तरीक़ा इसी में चला जाएगा। वरसा को क्या बचेगा। और अगर किसी ने मरते वक़्त वसीयत भी कर दी हो कि मेरा फ़िदिया दिया जाए तो वसीयत तिहाई माल से ज़्यादा की जाइज़ नहीं। अगर तिहाई माल से तमाम उम्र की नमाज़ों का फ़िदिया अदा न हुआ। तो हीला करने में क्या हरज है? रहा हीला का हीला करना यह महज़ बेकार है कोई कह सकता है कि मदरसा देवबन्द मौलवियों का तन्ख़्वाह लेने का हीला है लिहाज़ा बेकार है।

दूसरा बाब

हीला इस्क़ात पर ऐतराज़ात व जवाबात

इस मसअला पर क़ादयानी और देवबन्दी जमाअतों के कुछ ऐतराज़ात हैं। हक़ीक़त यह है कि उनको कोई मअक़ूल ऐतराज़ नहीं मिल सका। महज़ लफ़्फ़ाज़ी से काम लेते हैं। चूंकि कुछ सीधे मुसलमान शुब्हात में पड़ जाते हैं इसलिए हम उनको जवाब देते हैं।

(1) हीला करना ख़ुदा को और मुसलमानों को धोखा देना है। रब तआला फरमाता है।

यह मुनाफ़िक़ीन अल्लाह और मुसलमानों को धोखा देते हैं और नहीं फरेब देते मगर अपनी जानों को और समझते नहीं यह क्योंकर मुम्किन है कि थोड़े माल के एवज़ तमाम उम्र की नमाज़ें माफ़ हो जाएं।

जवाब : हीला को धोखा कहना जहालत है हीला से मुराद है ज़रूरते शरईया पूरा करने की शरई तदबीर। उर्दू में बोलते हैं। "हीला रिज़्क़ बहाना मौत" और शरई हीला तो रब ने सिखाया और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने तालीम फरमाया। जिसके हवाले पहले बाब में गुज़र चुके। और आलमगीरी का हवाला गुज़र गया कि किसी को फरेब देने के लिए हीला करना गुनाह है। लेकिन शरई ज़रूरत को पूरा करने या हराम से बचने की तदबीर करना ऐन सवाब। किसी जगह मस्जिद बन रही है। रुपया की ज़रूरत है। ज़कात का पैसा इसमें नहीं लग सकता। किसी फ़क़ीर को ज़कात दी उसने मालिक हो कर अपनी तरफ़ से उस पर ख़र्च कर दिया। उसने किस को फरेब

दिया। किसका माल मारा, महज़ ज़रूरते शरई को पूरा किया लेने का हीला करना बुरा और देने का हीला करना अच्छा होता है। इसमें फ़ुक़रा को नफ़ा का हीला है खुदाए कुद्दूस की रहमतें भी हीला ही से आती हैं। खुदा की रहमत क़ीमत नहीं मांगती। खुदा की रहमत बहाना चाहती है। यह आयत **युख़ादेऊना** मुनाफ़ेक़ीन के हक़ में नाज़िल हुई जो कि कलिमा-ए-ईमानी को अपने लिए आड़ बनाते थे और दिल से काफ़िर थे। मुसलमानों के उम्दा और शरई आमाल पर इसको चसपां करना सख़्त जुर्म है। इस्क़ात के माल की वजह से नमाज़ माफ़ नहीं होती बल्कि ज़माना ज़िन्दगी में नमाज़ न पढ़ने का जो कुसूर मैय्यत से हो चुका है और अब इसका बदला मैय्यत से नामुम्किन है और मैय्यत इसमें गिरफ़्तार है उसके कुसूर मआफ़ कराने का यह हीला है क्योंकि सदक़ा ग़ज़बे इलाही को ठंडा करता है। **अस्सदक़तु तुत्फ़ी ग़ज़बर-रब्बे** मिश्कात **बाबुल-जुमा** में है कि जिस से नमाज़े जुमा छूट जाए वह एक दीनार ख़ैरात करे। इसी मिशकात में है कि जो शख़्स अपनी बीवी से बहालते हैज सोहबत करे तो एक दीनार या निस्फ़ दीनार ख़ैरात करे। यह ख़ैरात क्या है उस गुनाह का कफ़्फ़ारा है जिसका बदला ना मुम्किन हो गया अगर हम यह कहते हैं कि इंसान ज़िन्दगी में ही आइंदा नमाज़ों का फ़िदिया माल दे दिया करे और नमाज़ न पढ़ा करे तो यह कहा जा सकता था कि माल से नमाज़ें माफ करा दें।

(2) नमाज़ रोज़ा इबादते बदनी है और फिदिया माल से है और माले बदनी इबादत का कफ़्फ़ारा किसी तरह नहीं हो सकता है। लिहाज़ा यह हीला महज़ बातिल है।

जवाब : यह क़्यास कुरआनी आयत के मुक़ाबिल है कि कुरआन तो फ़रमा रहा है। **व अलल-लज़ीना युतीक़ूनहू फ़िदयतुन तआमुन मिस्कीन।** जो इस रोज़े की ताक़त नहीं रखते उन पर फ़िदया है। एक मिस्कीन का खाना और हुक्मे इलाही के मुक़ाबिल अपना क़्यास करना शैतान का काम है कि उसको हुक्मे इलाही हुआ था कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को सज्दा कर। उसने इस हुक्म के मुक़ाबिल अपना क़्यास दौड़ाया मरदूद हुआ। फिर बदनी मेहनत के मुक़ाबिल माल होना अक़्ल के मुताबिक़ है। कि हम किसी से काम कराते हैं। उसका मुआवज़ा माल देते हैं। कुछ सूरतों में जान का बदला भी माल से होता है। और शरीअत में कुछ कफ़्फ़ारे ख़िलाफ़े क़्यास भी होते हैं। कोई नमाज़ी पहली अत्तहीयात भूल गया तो सज्दए सह्व करे। किसी ने अपनी बीवी से ज़ेहार कर लिया तो उसके कफ़्फ़ारा में 60 रोज़े रखे। हाजी ने बहालते एहराम शिकार कर लिया अगर पैसा है तो इस शिकार की क़ीमत ख़ैरात करे वरना रोज़े रखे। यह तमाम कफ़्फ़ारे ख़िलाफ़े क़्यास हैं। मगर शरीअत ने मुक़र्रर फरमा दिया बसर व चश्म मन्ज़ूर है।

(3) हीला इस्क़ात से लोग बेनमाज़ी बन जाएंगे क्योंकि जब इनको मालूम हो गया कि हमारे बाद हमारी नमाज़ों का इस्क़ात मुम्किन है तो फिर नमाज़ पढ़ने की ज़हमत क्यों गवारा करेंगे? इसलिए यह बन्द होना चाहिए।

जवाब : यह ऐतराज़ तो ऐसा है जैसे कुछ आरियों ने इस्लाम पर ऐतराज़ किया है कि मसला ज़कात से मुसलमानों में बेकारी पैदा होती है और मसला तौबा से आदमी गुनाह पर दिलेर होता है क्योंकि जब ग़रीब को मालूम है कि मुझे ज़कात का माल बग़ैर मेहनत मिलेगा तो क्यों मेहनत करे। इसी तरह जब कि आदमी को मालूम हो गया कि तौबा से गुनाह माफ़ हो जाता है तो ख़ूब गुनाह करेगा जैसे कि यह ऐतराज़ महज़ लग़्व है। इसी तरह यह भी जो शख़्स कि फ़िदिया नमाज़ पर दिलेर हो कि नमाज़ को ज़रूरी न समझे वह काफिर हो गया और यह माल नमाज़ का फिदिया है न कि कुफ़्र का। नीज़ अगर कोई शख़्स मसअला सहीहा को ग़लत इस्तेमाल करे तो ग़लती इस इस्तेमाल करने वाले की है न कि मुसला की। और यह मसअला इस्क़ात सैकड़ों साल से मुसलमानों में मशहूर है। लेकिन आज तक हम को तो कोई भी मुसलमान ऐसा न मिला जो इस इस्क़ात की बिना पर नमाज़ से बेपरवाह हो गया हो।

(4) कुछ बनी इसराईलों ने हीला करके मछली का शिकार किया था। जिससे उन पर अज़ाबे इलाही आ गया। और वह बन्दर बना दिए गए **कूनू क़िरदतन ख़ासेईन** मालूम हुआ कि हीला सख़्त गुनाह है और अज़ाबे इलाही का बाइस।

जवाब : हीला का हराम होना भी बनी इसराईल पर अज़ाब था। जैसे कि बहुत से गोश्त उन पर हराम थे ऐसे ही यह भी इस उम्मत पर जाइज़ हीलों का हलाल होना रब की रहमत है। और उन्होंने हराम को हलाल करने का हीला किया कि हफ़्ता के दिन मछली का शिकार उन पर हराम था। ऐसे हीले अब भी मना हैं।

(5) कुरआन फरमाता है **लैसा लिल-इंसाने इल्ला मा सआ** नहीं है इंसान के लिए मगर वह जो ख़ुद कमा ले और फिदिया इस्क़ात में यह है कि मैयत नमाज़ न पढ़े और उनकी औलाद माल ख़र्च करके उसको उस जुर्म से आज़ाद करा दे। जिससे मालूम हुआ कि यह हीला ख़िलाफ़े कुरआन है।

जवाब : इसका जवाब फातिहा की बहस में गुज़र गया कि इस आयत की चन्द तौजीहें हैं एक यह भी है कि यह लाम मिल्कीयत का है यानी इंसान अपनी कमाई ही का मालिक है ग़ैर की बख़्शिश क़ब्ज़ा में नहीं वह करे या न करे इसलिए ग़ैर की सख़ावत पर फूल कर अपनी मेहनत को भूल जाना ख़िलाफ़े अक़्ल है।

में दुआ फरमाई। तो मज़ालिम यानी हुकूकुल-इबाद भी मआफ़ फ़रमा दिए गए इसका मतलब यह नहीं कि किसी शख़्स का क़र्ज़ मार लो, किसी को क़त्ल कर दो, किसी की चोरी कर लो और हज कर आओ। सब मआफ़ हो गया नहीं बल्कि अदाए क़र्ज़ में जो ख़िलाफ़े वादा ताख़ीर वग़ैरह होगी वह मआफ़ कर दी गई हुकूकुल-इबाद बहर हाल अदा करने होंगे अगर कोई मुसलमान इस क़ज़ा उमरी के पढ़ने या समझने में ग़लती करे तो उसको समझा दो। नमाज़ से क्यों रोकते हो। अल्लाह तौफ़ीक़े ख़ैर दे। अगर यह हदीस ज़ईफ़ भी हो जब भी फ़ज़ाइले आमाल में मोतबर है।

बहस अज़ान में अंगूठे चूमने का बयान

इस बहस के लिखने का हमारा इरादा न था मगर माहे रमज़ान में हमने ख़्वाब में देखा कि कोई बुज़ुर्ग फरमा रहे हैं कि अपनी किताब में **तक़्बीलु इब्हामैने** का मसला भी लिख दो ताकि किताब मुकम्मल हो जाए लिहाज़ा इसको भी दाख़िल किताब करते हैं। रब्बुल-आलमीन क़बूल फ़रमाए। आमीन!

इस बहस के भी दो बाब किए जाते हैं। पहले बाब में अंगूठे चूमने का सुबूत। दूसरे बाब में इस पर ऐतराज़ात व जवाबात।

पहला बाब

अंगूठे चूमने के सुबूत तें

जब मुअज़्ज़िन कहे। **अशहदु अन्ना मुहम्मदर रसूलुल्लाह**। तो इसको सुन कर अपने दोनों अंगूठे या कलिमे की उंगली चूम कर आँखों से लगाना मुस्तहब है और इससे दुनियावी व दीनी चन्द फाइदे हैं। इसके मुतअल्लिक़ अहादीस वारिद हैं। सहाबए किराम का इस पर अमल रहा। आम्मतुल-मुस्लेमीन हर जगह पर इसको मुस्तहब जान कर करते हैं। सलाते मस्ऊदी जिल्द दोम बाब बस्तम बाब नमाज़ में है।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से मरवी है कि जो शख़्स हमारा नाम अज़ान में सुने और अपने अंगूठे आँखों पर रखे तो हम उसको क़यामत की सफ़ों में तलाश फरमाएंगे और उसको अपने पीछे पीछे जन्नत में ले जाएंगे।

मुहम्मद रसूलुल्लाह कहने के वक़्त अपने अंगूठे के नाख़ुनों को मअ कलिमे की उंगलियों के चूमना ज़ईफ़ है। क्योंकि यह हदीस मरफ़ूअ से साबित नहीं लेकिन मुहद्देसीन इस पर मुत्तफ़िक़ हैं कि हदीसे ज़ईफ़ पर अमल करना रग़बत देने और डराने के मौक़ा पर जाइज़ है। शामी जिल्द अव्वल **बाबुल-अज़ान** में है।

तरजमा : अज़ान की पहली शहादत पर यह कहना मुस्तहब है सल्लल्लाहु अलैका या रसूलुल्लाह और दूसरी शहादत के वक़्त यह कहे

कुर्रतु ऐनी बेका या रसूलल्लाह फिर अपने अंगूठों के नाखुन अपनी आंखों पर रखे और कहे **अल्लाहुम्मा मत्तेअनी बिस्मए वल-बसरे** तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम उसको अपने पीछे पीछे जन्नत में ले जाएं। इसी तरह कंज़ुल-इबाद में है और इसी के मिस्ल फतावा सूफ़िया में है और **किताबुल-फिरदौस** में है कि जो शख़्स अपने अंगूठों के नाखुनों को चूमे अज़ान में **अश्हदु अन्ना मुहम्मदर रसूलुल्लाह** सुन कर तो मैं उसको अपने पीछे पीछे जन्नत में ले जाऊंगा। और उसको जन्नत की सफों में दाख़िल करूंगा। इसकी पूरी बहस **बहरुर्राइक़** के हवाशी रमली में है। इस इबारत से छे: किताबों के हवाला मालूम हुए। शामी कंज़ुल-इबाद, फतावा सूफ़िया किताबुल-फिरदौस, क़हिस्तानी, बहरुर्राइक़ का हाशिया, इन तमाम में इसको मुस्तहब फरमाया।

दैलमी ने फिरदौस में अबू बकर सिद्दीक़ रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की कि इन सरकार ने जब मुअज़्ज़िन का क़ौल **अश्हुद अन्ना मुहम्मदर रसूलुल्लाह** सुना तो यही फरमाया। और अपनी उंगली कलिमे की उंगलियों के बातिनी हिस्सों को चूमा और आंखों से लगाया। पस हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया कि जो शख़्स मेरे इस प्यारे की तरह करे उसके लिए मेरी शफ़ाअत वाजिब हो गई। यह हदीस पाया सेहत तक न पहुँची इसी मक़ासिदे हसना में मूजिबाते रहमत मुसन्नेफ़ा अबुल-अब्बास अहमद अबी बकर रदाद से नक़्ल किया।

हज़रत ख़िज़र अलैहिस्सलाम से रिवायत है कि जो शख़्स मुअज़्ज़िन को यह कहते हुए सुने **अश्हुद अन्ना मुहम्मदर रसूलुल्लाह** तो कहे **मरहबा बेहबीबी व क़ुर्रते ऐनी मुहम्मदिब्ने अब्दिल्लाह।** फिर अपने अंगूठों को चूमे और अपनी आंखों से लगाए तो उसकी आंखें कभी न दुखेंगीं। फिर फरमाते हैं कि फ़क़ीह मुहम्मद इब्ने बाबा ने अपना वाक़या बयान फ़रमाया कि एक बार तेज़ हवा चली जिससे उनकी आंख में कंकरी जा पड़ी और निकल न सकी। सख़्त दर्द था।

जब उन्होंने मुअज़्ज़िन को कहते हुए सुना। **अश्हुद अन्ना मुहम्मदर रसूलुल्लाह** तो यही कह लिया फौरन कंकरी आंख से निकल गई। इसी मक़ासिदे हसना में शम्स मुहम्मद इब्ने सालेह मदनी से रिवायत किया उन्होंने इमाम अम्जद को फरमाते हुए सुना (इमाम अम्जद मुतक़द्देमीन उलमा-ए-मिस्र में से है) कि फरमाते थे कि जो शख़्स अज़ान में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का नाम पाक सुने तो अपने कलिमे की उंगली और अंगूठा जमा करे। **व क़ब्बलहुमा व मसहा बेहेमा ऐनैहे लम यरमुदा अबदन।** और दोनों को चूम कर आंखों से लगाए तो कभी आंख न दुखेगी फिर फरमाया कि कुछ मशाइख़े इराक़ व अजम ने फरमाया कि जो यह अमल करे तो उसकी आंख

न दुखें। **वक़ाला ली कुल्लु मिन्हुमा मुंज़ु फ़अल्तुहू लम यरमुदा ऐनी।** उन्होंने फरमाया कि जब से मैंने यह अमल किया है मेरी भी आंखें न दुखीं। इसी मक़ासिदे हसना में कुछ आगे जा कर फरमाते हैं।

इब्ने सालेह ने फरमाया कि मैंने जब से यह सुना है इस पर अमल किया। मेरी आंखें न दुखीं और मैं उम्मीद करता हूँ कि इंशाअल्लाह यह आराम हमेशा रहेगा और मैं अंधा होने से महफ़ूज़ रहूंगा। फिर फरमाते हैं कि इमाम हसन रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि जो शख़्स **अश्हुद अन्ना मुहम्मदर रसूलुल्लाह** सुन कर यह कहे।

और अपने अंगूठे चूम ले और आंखों से लगाए **वलम यअ्मे वलम यरमुद।** कभी अंधा न होगा और न कभी उसकी आंखें दुखेंगी। ग़र्ज़कि इसी मक़ासिदे हसना में बहुत से अइम्मा दीन से यह अमल साबित किया। शरह नक़ाया में है।

जानना चाहिए कि मुस्तहब यह है कि दूसरी शहादत के पहले कलिमा को सुन कर यह कहे कि **सल्लल्लाहु अलैका या रसूलल्लाह** और दूसरा कलिमा सुन कर यह कहे **कुर्रतु ऐनी बेका या रसूलल्लाह** अपने अंगूठों के नाख़ुनों को आंखों पर रखे तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम उसको जन्नत में अपने पीछे पीछे ले जाएंगे। इसी तरह कंज़ुल-इबाद में है मौलाना जमाल इब्ने अब्दुल्लाह इब्ने उमर मक्की क़ुद्देस सिर्रुहू अपने फतावा में फरमाते हैं।

तरजमा : अज़ान में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का नाम शरीफ सुन कर अंगूठे चूमना और उनको आंखों से लगाना जाइज़ बल्कि मुस्तहब है इसकी हमारे मशाइख़ ने तसरीह फ़रमाई है। अल्लामा मुहम्मद ताहिर अलैहिर्रहमा **तक्मिला, मज्मओ बेहारुल-अनवार** में इसी हदीस को **ला यसिह्हु** फरमा कर फरमाते हैं **व रुवेया तज्रिबतुन ज़ालिका अन कसीरीना** इसके तजरबा की रिवायात बकसरत आई हैं। इसके अलावा भी इबारात पेश की जा सकती हैं मगर इख़्तिसारन इसी पर क़नाअत करता हूँ। हज़रत सदरुल-अफ़ाज़िल मौलाई मुर्शिदी उस्ताज़ी मौलाना अल्हाज सैयद मुहम्मद नईमुद्दीन साहब क़िब्ला मुरादाबादी रहमतुल्लाह तआला अलैहि वरिज़वान फ़रमाते हैं कि विलायत से इंजील का एक बहुत पुराना नुस्ख़ा बरामद हुआ जिसका नाम है "इंजील बर नबास" आजकल वह आम तौर पर शाए है और हर ज़ुबान में इसके तरजमे किए गए हैं इसके अक्सर अहकाम इस्लामी अहकाम से मिलते जुलते हैं। इसमें लिखा है कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम ने रूहुल-कुद्दूस (नूरे मुस्तफ़वी) के देखने की तमन्ना की। तो वह नूर उनके अंगूठों के नाख़ुनों में चमकाया गया। उन्होंने फ़र्ते मुहब्बत से उन नाख़ुनों को चूमा और आंखों से लगाया। रूहुल-कुद्दूस का तरजमा हमने नूरे मुस्तफ़वी

क्यों किया। इसकी वजह हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान में देखो। जहाँ कि बताया गया है कि ज़माना ईसवी में रूहुल-कुदूस ही के नाम से हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम मशहूर थे। उलमा-ए-अहनाफ के अलावा उलमा-ए-शाफ़ई व उलमा-ए-मज़्हब मालिकी ने भी अंगूठे चूमने के इस्तेहबाब पर इत्तिफ़ाक़ किया है। चुनांचे मज़हबे शाफ़ई की मशहूर किताब **"अआनतुत्तालिबीन अला हिल्लु अल्फ़ाज़े फ़त्हुल-मुईन।"** मिस्री सफ: 247 में है। **सुम्मा युक़ब्बेलु इब्हामैहे व यज्अलु हुमा अला ऐनैहे लम यअमे वमल यरमुद अबदन।** फिर अपने अंगूठे को चूमे आंखों से लगाए तो **कभी भी अंधा** न होगा और न कभी आंखें दुखेंगी। मज़्हब मालिकी की मशहूर किताब **"किफ़ायतुत्तालिबुर्रब्बानी लेरेसालते इब्ने अबी ज़ैदुल-क़ीरवानी।"** मिस्री जिल्द अव्वल सफ: 169 में इसके मुतअल्लिक़ बहुत कुछ तहरीर फरमाते हैं। फिर फरमाते हैं। **सुम्मा युक़ब्बेलु इब्हामैहे व यज्अलु हुमा अला ऐनैहे लम यअमे वलम यरमुद अबदन।** फिर अंगूठे को चूमे और आंखों से लगाए तो कभी भी न अंधा हो और न कभी आंखें दुखें। इसकी शरह में अल्लामा शैख़ अली अस्सईदी अदवी सफ: 170 में फरमाते हैं :

तरजमा : मुसन्निफ़ ने अंगूठे चूमने की जगह न बयान की लेकिन शैख़ अल्लामा मुफ़स्सिर नूरुद्दीन ख़ुरासानी से मन्क़ूल है कि कुछ लोग उनको अज़ान के वक़्त मिले जब उन्होंने मुअज़्ज़िन को **अश्हदु अन्ना मुहम्मदर रसूलुल्लाह** कहते हुए सुना तो उन्होंने अपने अंगूठे चूमे और नाखुनों को अपनी आंखों की पल्कों के कोने से लगाया और कंपटी के कोने तक पहुँचाया। फिर हर शहादत के वक़्त एक एक बार किया। मैंने उन से इस बारे में पूछा तो कहने लगे कि मैं पहले अंगूठा चूमा करता था फिर छोड़ दिया तो मेरी आंखें बीमार हो गईं पस मैंने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को ख़्वाब में देखा कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने मुझे फरमाया कि तुमने अज़ान के वक़्त अंगूठे आंखों से लगाना क्यों छोड़ दिये? अगर तुम चाहते हो कि तुम्हारी आंखें अच्छी हो जाएं तो फिर यह अंगूठे आंखों से लगाना शुरू कर दो पस बेदार हुआ और यह मसह शुरू किया मुझको आराम हो गया। और फिर अब तक मरज़ न लौटा। (माख़ूज़ अज़ नहजुस्सलामा) इन तमाम गुफ़्तगू का नतीजा यह निकला कि अज़ान वग़ैरह में अंगूठे चूमना आंखों से लगाना मुस्तहब है। हज़रत आदम अलैहिस्सलाम और सिद्दीक़े अक्बर व इमाम हसन रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा की सुन्नत है। फ़ुक़हा मुहद्देसीन व मुफ़स्सेरीन इसके इस्तेहबाब पर मुत्तफ़िक़ हैं। अइम्मा शाफ़ईया व मालकीया ने भी इसके इस्तेहबाब की तस्रीह फरमाई। हर ज़माना और हर मुल्क के

मुसलमान इसको मुस्तहब जानते रहे और जानते हैं इसमें हस्बे ज़ैल फाइदे हैं। यह अमल करने वाला आंख दुखने से महफ़ूज़ रहेगा और इंशाअल्लाह कभी अंधा न होगा। अगर आंख में किसी क़िस्म की तक्लीफ़ हो उसके लिए यह अंगूठे चूमने का अमल बेहतरीन इलाज है बारहा का तजरबा है। इसके आमिल को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की शफ़ाअत नसीब होगी और उसको हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम क़यामत की सफ़ों में तलाश फ़रमा कर अपने पीछे जन्नत में दाख़िल फ़रमाएंगे। **अल्लाहुम्मर्ज़ुक्ना शफ़ाअता हबीबेकल-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लमा आमीन।** इसको नाजाइज़ कहना महज़ जेहालत है जब तक कि मुमानेअत की साफ़ दलील न मिले इसको मना नहीं कर सकते। इस्तेहबाब के लिए मुसलमानों का मुस्तहब जानना ही काफी है मगर कराहत के लिए दलील ख़ास की ज़रूरत है जैसा कि हम बिदअत की बहस में साबित कर चुके हैं।

नोट : अज़ान के मुतअल्लिक़ तो साफ व सरीह रिवायात और अहादीस मौजूद हैं जो पेश की जा चुकीं तक्बीर भी मिस्ल अज़ान के हैं अहादीस में तक्बीर को अज़ान फ़रमाया गया है। **बै-न कुल्ले आज़नैने सलातुन** हर दो अज़ानों के दरम्यान नमाज़ है यानी अज़ान व तक्बीर के दरम्यान.लिहाज़ा तक्बीर में **अश्हुद अन्ना मुहम्म्दर रसूलुल्लाह** पर अंगूठे चूमना नाफ़े व बाइस बरकत है। और अज़ान व तक्बीर के अलावा भी अगर कोई शख़्स हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का नाम शरीफ़ सुन कर अंगूठे चूमे तो भी कोई हरज नहीं। बल्कि नीयते ख़ैर से हो तो बाइसे सवाब है बिला दलील मुमानेअत मना नहीं कर सकते हैं। जिस तरह भी हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ताज़ीम की जाए बाइसे सवाब है।

दूसरा बाब

अंगूठे चूमने पर ऐतराज़ात व जवाबात

(1) अंगूठे चूमने के मुतअल्लिक़ जिस क़द्र रिवायात बयान की गईं वह सब ज़ईफ़ हैं और हदीसे ज़ईफ़ से मसअला शरई साबित नहीं हो सकता। देखो मक़ासिदे हसना में फ़रमाया **ला_यसिह्हु फ़िल-मरफ़ूए मिन कुल्ले हाज़ा शैयुन।** इनमें से कोई मरफ़ूअ हदीस सहीह नहीं। मुल्ला अली क़ारी ने मौज़ूआते कबीर में इन अहादीस के मुताल्लिक़ फ़रमाया कुल्लुन मा युरवा फ़ी हाज़ा फ़ला युसिह्हुन रफ़अहू अलबत्ता इस मसला में जितनी अहादीस मरवी हैं उन में से किसी का रफ़अ् सही नहीं है। ख़ुद अल्लामा शामी ने इसी बहसे अज़ान में उसी जगह फ़रमाया लम यसिह्ह मिनल मरफ़ूइ मिन हाज़ा

शैयुन। इन में से कोई मरफ़ूअ़ हदीस सही नहीं। साहिबे रूहुल-बयान ने भी इन अहादीस की सेहत से इंकार किया। फिर इन अहादीस का पेश करना ही बेकार है।

जवाब : इसके चन्द जवाबात हैं। अव्वलन यह कि तमाम हज़रात मरफ़ूअ हदीस की सेहत का इंकार फ़रमा रहे हैं जिससे मालूम होता है कि इसके बारे में हदीसे मौकूफ़ सहीह है। चुनांचे मुल्ला अली क़ारी मौज़ूआते कबीर में इसी इबारते मन्क़ूला के बाद फ़रमाते हैं।

यानी मैं कहता हूँ कि जब इस हदीस का रफ़ा सिद्दीक़े अक्बर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु तक साबित है लिहाज़ा अमल के लिए काफी है क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फ़रमाया कि तुम पर लाज़िम करता हूँ अपनी सुन्नत और अपने ख़ुलफ़ाए राशिदीन की सुन्नत। मालूम हुआ कि हदीस मौकूफ़ सहीह है और हदीस मौकूफ़ काफी है। दूसरे यह कि इन तमाम उलमा ने फ़रमाया **लम यसिह्हा** यानी यह तमाम अहादीस हुज़ूर तक मरफ़ूअ हो कर सहीह नहीं और सहीह न होने से ज़ईफ़ होना लाज़िम नहीं। क्योंकि सहीह के बाद दरज-ए-हसन बाक़ी है। लिहाज़ा अगर यह हदीस हसन हो तब भी काफी है। तीसरे यह कि उसूले हदीस व उसूले फ़िक़ह का मसला है कि अगर कोई ज़ईफ़ हदीस चन्द अस्नाद से मरवी हो जाए तो हसन बन जाती है। चुनांचे दुर्रे मुख़्तार जिल्द अव्वल **बाब मुस्तहब्बातुल-वुज़ू** में आज़ाए वज़ू की दुआओं के मुतअल्लिक़ फ़रमाते हैं। **वक़द रवाहु इब्नु हब्बानिन वग़ैरुहू अन्हु अलैहिस्सलामु मिन तुरुक़िन।** इस हदीस को इब्ने हब्बान वग़ैरह ने चन्द सनदों से रिवायत किया इसके मातेहत शामी में फ़रमाते हैं। **ऐ युक़ौवी बअ्ज़ुहा बअ्ज़न फ़रतक़ा इला मरतबतिल-हसने।** यानी बाज़ सनदों कुछ को कुव्वत देती हैं। लिहाज़ा यह हदीस दरजा हसन को पहुँच गई। और हम पहले बाब में बता चुके कि यह हदीस चन्द तरीक़ों से रिवायत है लिहाज़ा हसन है। चौथे यह कि अगर मान भी लिया जाए कि यह हदीस ज़ईफ़ है फिर भी फ़ज़ाइले आमाल में हदीस ज़ईफ़ मोतबर होती है। चुनांचे यही अल्लामा शामी इसी रद्दुल-मुह्तार जिल्द अव्वल **बाबुल-अज़ान** में अज़ान के मवाक़े के बहस में फ़रमाते हैं।

फ़ज़ाइले आमाल में ज़ईफ़ हदीस पर अमल करना जाइज़ है। यहाँ भी हलाल व हराम होने के मसाइल नहीं हैं। सिर्फ़ यह है कि अंगूठे चूमने में यह फ़ज़ीलत है लिहाज़ा इस में हदीस ज़ईफ़ भी क़ाबिले अमल है। नीज़ मुसलमानों का अमल ज़ईफ़ हदीस को क़वी कर देता है चुनांचे किताबुल-अज़्कार मुसन्नेफ़ा इमाम नुववी तलक़ीने मैयत की बहस में है।

यानी तल्क़ीने मैयत की हदीस क़वीयुल-अस्नाद नहीं मगर अहले शाम के अमल व दीगर शवाहिद से क़वी हो गई अंगूठे चूमने पर भी उम्मत का अमल है। लिहाज़ा यह हदीस क़वी हुई। इससे ज़्यादा तहक़ीक़ नूरुल-अनवार और तौज़ीह वग़ैरह में देखो। पाँचवीं यह कि अगर इसके मुतअल्लिक़ कोई भी हदीस न मिलती तब भी उम्मते मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम का मुस्तहब मानना ही काफी था कि हदीस में आया है। **मा रआहुल-मुमिनूना हसनन फ़हुवा इन्दल्लाहे हसनुन।** जिसको मुसलमान अच्छा जानें वह काम अल्लाह के नज़्दीक भी अच्छा है। छठे यह कि यह अंगूठे चूमना आंख की बीमारियों से बचने का अमल है। और अमल में सिर्फ़ सुफ़ियाए किराम का तजरबा काफ़ी होता है। चुनांचे शाह वलीयुल्लाह साहब फरमाते हैं। तस्रीफ़ी आमाल में इज्तेहाद का रास्ता खुला हुआ है जैसे कि तबीब लोग हिक्मत के नुस्ख़े ईजाद करते हैं ख़ुद शाह वलीयुल्लाह साहब ने अपनी किताब **अल-क़ौलुल-जमील** वग़ैरह में सैकड़ों अमल तावीज़ गंडे जिन्नात को दफ़ा करने जिन्नात से महफ़ूज़ रहने, हमल महफ़ूज़ रखने के तज्वीज़ फरमाए हैं कि फ़लां दुआ हिरण की खाल पर लिख कर औरत के गले में मिस्ल हार के डाल दो इस्क़ात न होगा। कसम का रंगा हुआ डोरा औरत के जिस्म से नाप कर नौ गेरह लगा कर औरत की बाएं रान में बांधना दर्दे ज़ेह को मुफ़ीद है वग़ैरह। बताओ कि इन आमाल के मुतअल्लिक़ कौन सी अहादीस आई हैं? ख़ुद अल्लामा शामी ने जादू से बचने, गुमी हुई चीज़ के तलाश करने के लिए बहुत से तरीके शामी में बयान फ़रमाए। बताओ कि इनकी अहादीस कहाँ हैं? तो जब कि हम पहले बाब में साबित कर चुके कि यह अमल दर्दे चश्म के लिए मुजर्रब है तो इसको क्यों मना किया जाता है? सातवें यह कि हम पहले बाब में बयान कर चुके कि शामी और शरह नक़ाया और तफ़्सीरे रूहुल-बयान वग़ैरह ने अंगूठे चूमने को मुस्तहब फरमाया। इस इस्तेहबाब पर कोई जेरह क़दह न की बल्कि हदीस मरफ़ूअ की सेहत का इंकार किया। जिससे मालूम हुआ कि हुक्मे इस्तेहबाब तो बिल्कुल सहीह है गुफ़्तगू सुबूत हदीस में है। यह इस्तेहबाबे हदीस की सेहत पर मौक़ूफ़ नहीं। आठवें यह कि अच्छा अगर मान लें कि इस्तेहबाब का सुबूते हदीस ज़ईफ़ से नहीं हो सकता तो कराहत के सुबूत की कौन सी हदीस सहीह है। जिस में यह हो कि अंगूठे चूमना मकरूह है। या न चूमो वग़ैरह वग़ैरह इंशाअल्लाह कराहत के लिए सहीह हदीस तो क्या ज़ईफ़ भी न मिलेगी सिर्फ़ यारों का इज्तिहाद और अदावते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम है।

अल्हम्दुलिल्लाह कि इस ऐतराज़ के पड़ख़चे उड़ गए और हक़ वाज़ेह हो

गया।

(2) हज़रत आदम अलैहिस्सलाम ने अगर नूरे मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम अंगूठे के नाख़ुनों में देख कर उसको चूमा था तो तुम कौन सा नूर देखते हो। चूमने की जो वजह वहाँ थी वह यहाँ नहीं।

जवाब : हज़रत हाजरा जब अपने फ़रज़न्द हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम को ले कर मक्का मुकर्रमा के जंगल में तशरीफ़ लाईं तो तलाशे पानी के लिए सफ़ा व मरवा पहाड़ के दरम्यान दौड़ीं। आज तुम हज में वहाँ क्यों दौड़ते हो? आज कहाँ पानी की तलाश है? हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम ने कुरबानी के लिए जाते हुए रास्ते में तीन जगह शैतान को कंकर मारे। आज तुम हज में वहाँ क्योंकर मारते हो? वहाँ अब कौन सा शैतान आपको धोखा दे रहा है? हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने एक ख़ास ज़रूरत की वजह से कुफ़्फ़ारे मक्का को दिखाने के लिए तवाफ़ में रमल करा कर अपनी ताक़त दिखाई। बताओ कि अब तवाफ़े कुदूम में रमल क्यों करते हो? अब वहाँ कुफ़्फ़ार कहाँ देख रहे हैं? जनाब अंबियाए किराम के कुछ अमल ऐसे मक़्बूल हो जाते हैं कि उनकी यादगार बाक़ी रखी जाती है अगरचे वह ज़रूरत बाक़ी न रहे इसी तरह यह भी है।

(3) क्या वजह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के नाम पर अंगूठे के नाख़ुन चूमते हो कोई और चीज़ क्यों नहीं चूमते नाख़ुन में क्या ख़ुसूसियत है? हाथ पाँव कपड़े वग़ैरह चूमना चाहिए।

जवाब : चूंकि रिवायत में नाख़ुन ही का सुबूत है इसलिए इसी को चूमते हैं। मंसूसात में वजह तलाश करना ज़रूरी नहीं। अगर इसका नुक्ता ही मालूम करना है तो यह है कि तफ़्सीरे ख़ाज़िन व रूहुल-बयान वग़ैरह ने पारा 8 सूरः ऐराफ़ ज़ेरे आयत **बदत लहुमा सौ आतुहुमा** में बयान फरमाया कि जन्नत में हज़रत आदम अलैहिस्सलाम का लिबास नाख़ुन था यानी तमाम जिस्म शरीफ़ पर नाख़ुन था जो कि निहायत ख़ूबसूरत और नर्म था जब उन पर एताबे इलाही हुआ वह कपड़ा उतार लिया गया। मगर उंगलियों के पोरों पर बतौर यादगार बाक़ी रखा गया। जिससे मालूम हुआ कि हमारे नाख़ुन जन्नती लिबास हैं और अब जन्नत तो हमको हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के तुफ़ैल से मिलेगी। लिहाज़ा उनके नाम पर जन्नती लिबास चूम लेते हैं। जैसे काबा मुअज़्ज़मा में संगे असवद जन्नती पत्थर है इसको चूमते हैं बाक़ी काबा शरीफ़ को नहीं चूमते। क्योंकि उस जन्नती घर की यादगार है जो कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम के लिए ज़मीन पर आया था और तूफ़ाने नूह में उठा लिया गया और यह पत्थर उसकी यादगार रहा। इसी तरह नाख़ुन

भी उस जन्नती लिबास की यादगार है।

बहस जनाज़ा के आगे बुलन्द आवाज़ से कलिमा या नअत पढ़ना

कुछ जगह रस्म है कि जब मैयत को क़ब्रिस्तान ले जाते हैं तो उसके आगे बआवाज़े बुलन्द कलिमा तैयबा सब मिल कर पढ़ते जाते हैं या नअत शरीफ़ पढ़ते हैं मुझको यह वहम भी न था कि कोई भी इसको मना करता होगा मगर पंजाब में आ कर मालूम हुआ कि देवबन्दी इसको भी बिदअत व हराम कहते हैं। इस क़द्र ज़ाहिर मसला पर कुछ लिखने का इरादा न था मगर कुछ अहबाब ने मज्बूर फरमाया। तो कुछ बतौर इख़्तिसार अर्ज़ करना पड़ा। इस बहस के भी दो बाब किए जाते हैं। पहला बाब इसके सुबूत में। दूसरा बाब इस पर ऐतराज़ात व जवाबात में। **वमा तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाहिल-अलीयुल-अज़ीम।**

पहला बाब

जनाज़ा के आगे कलिमा तैयबा या नअत ख़्वानी का सुबूत

जनाज़ा के आगे कलिमा तैयबा या तस्बीह व तहलील या दरूद शरीफ या नअत शरीफ़ आहिस्ता आहिस्ता या बुलन्द आवाज़ से पढ़ना जाइज़ और मैयत व हाज़िरीन को मुफ़ीद है। इस पर कुरआनी आयात व अहादीसे सहीहा व अक़्वाले फ़ुक़्हा शाहिद हैं। रब तआला फरमाता है।

अल्लज़ीना यज़्कुरूनल्लाहा क़्यामन व कुऊदन व अला जुनूबेहिम। वह लोग जो अल्लाह का ज़िक्र करते हैं खड़े बैठे और अपनी करवटों पर। इसकी शरह तफ़्सीरे रूहुल-बयान में है।

आयत का मतलब यह है कि हर हाल में हमेशा खड़े बैठे लेटे ज़िक्रे इलाही करते हैं क्योंकि इंसान अक्सर इन हालात से खाली नहीं होता। तफ़्सीरे अबुस्सऊद में इसी के मातहत है।

तरजमा : क़रीब क़रीब वही है जो ऊपर गुज़र गया। तफ़्सीरे कबीर में इसी आयत के मातहत है।

इसका तरजमा भी वही है जो गुज़र चुका। इब्ने अदी ने कामिल में और इमाम ज़ैलई ने **नसबुर्रायह लेतख़रीजे अहादीसुल-हिदायह** जिल्द दोम सफ़ः 292 मत्बूआ मज्लिसे इल्मी डाभेल में लिखा है।

अगर यह हदीस ज़ईफ़ भी हो। फिर भी फ़ज़ाइले आमाल में मोतबर है। **अत्तहरीरुल-मुख़्तारु अला रद्दिल-मुहतारे।** मत्बूआ मिस्र सफ़: 123 पर है। हर

इस आयत और इन तफासीर की इबारत से दो बातें मालूम हुईं।

हाल में जिक्रे इलाही करने की इजाज़त है और हर तरह बुलन्द आवाज़ से हो या आहिस्ता करने की इजाज़त है। अब किसी मौक़ा पर किसी ज़िक्र से मुमानेअत करने के लिए कम अज़ कम हदीसे मशहूर की ज़रूरत है। क्योंकि हदीस वाहिद और क़्यासे मुज्तहिद से कुरआनी आम को ख़ास नहीं किया जा सकता। फुक़्हा तो बहालते जनाबत व बहालते हैज़ भी तिलावते कुरआन के अलावा तमाम ज़िक्रों को जाइज़ फरमाते हैं और अगर कुरआनी आयत भी बग़ैर इरादए तिलावत पढ़े तो जाइज़ है। देखो आम कुतुबे फ़ेक़्ह) तो जब कि मैयत को क़ब्रिस्तान ले जा रहे हैं यह भी एक हालत ही है इस हालत में भी हर तरह ज़िक्रे इलाही जाइज़ हुआ। कुरआन फरमाता है। **अला बेज़िक्रिल्लाहे तत्मइन्नल-कुलूब।** खबरदार हो जाओ कि अल्लाह के जिक्र से दिल चैन पाते हैं। इसकी तफ़्सीर में साहिबे रूहुल-बयान फ़रमाते हैं।

पस कुरआन से और अल्लाह के ज़िक्र से (जो कि इस्मे आज़म है) मुसलमान उन्स लेते हैं और इसको सुनना चाहते हैं और कुफ़्फ़ार दुनिया से खुश होते हैं और ग़ैरुल्लाह से सुरूर पाते हैं। इस आयत और तफ़्सीरी इबारात से मालूम हुआ कि अल्लाह का ज़िक्र मुसलमान की खुशी और फ़रहत का बाइस है और कुफ़्फ़ार इससे रंजीदा होते हैं और बिहम्दिल्लाह मैय्यत भी मुसलमान है और सब हाज़िरीन भी। सब को ही इससे खुशी होगी। और मैयत को इस वक़्त अपने अह्ल व अयाल से छूटने का ग़म है यह जिक्र इस ग़म को दूर करेगा। ख़्याल रहे कि इस आयत में भी जिक्र मुतलक़ है चाहे आहिस्ता हो या बुलन्द आवाज़ से लिहाज़ा हर तरह जाइज़ हुआ। महज़ अपनी राय से इस में क़ैद नहीं लगा सकते" मुन्तखब कंज़ुल-उम्माल जिल्द हश्तुम सफः 99 में बरिवायत हज़रत अनस है।

अल्लाह के कुछ फ़रिश्ते रास्तों में चक्कर लगाते हैं। ज़िक्रुल्लाह करने वालों को तलाश करते हैं पस जब कि किसी क़ौम को जिक्रे इलाही करते हुए पाते हैं तो एक दूसरे को पुकारते हैं कि आओ अपने मक़्सद की तरफ फिर उन जाकिरीन को परों में ढाँप लेते हैं। लिहाज़ा अगर मैयत के साथ लोग ज़िक्रुल्लाह करते हुए जाएंगे तो मलाइका रास्ते ही में मिलेंगे और उन सब को अपने परों में ढाँप लेंगे। मैयत भी मलाइका के परों के साया में क़ब्रिस्तान तक जाएगी। ख़्याल रहे कि इस हदीस में भी जिक्र मुतलक़ है। चाहे आहिस्ता हो या बुलन्द आवाज़ से मिश्कात इसी बाब में है।

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया कि जब तुम जन्नत के बाग़ों में गुज़रो तो कुछ खा लिया करो सहाबा किराम ने अर्ज़ किया कि जन्नत के बाग़ क्या हैं? फरमाया कि ज़िक्र के हल्के। इस से साबित हुआ कि अगर

मैयत के साथ ज़िक्रे इलाही होता हुआ जाए तो मैयत जन्नत के बाग़ में क़ब्रिस्तान तक जाएगा। ख़्याल रहे कि यहाँ भी ज़िक्रे मुतलक़ है आहिस्ता हो या बुलन्द आवाज़ से। इसी मिश्कात में इसी बाब में है कि **अश्शैतानु जासमुन अला क़ल्बे इब्ने आदमा फइन ज़करल्लाहा ख़नस**। शैतान इंसान के दिल पर चिम्टा रहता है। जब इंसान अल्लाह का ज़िक्र करता है तो हट जाता है। मालूम हुआ कि अगर मैयत को ले जाते वक़्त ज़िक्रुल्लाह किया जाएगा तो शैतान से मैयत को अमन रहेगी। यहाँ ज़िक्र में आहिस्ता या बुलन्द आवाज़ की कोई क़ैद नहीं। यहाँ तक तो जनाज़ा के आगे ज़िक्र **बिल-जेहर** को दलालतन साबित किया गया। अब अक़्वाले फ़ुक़हाए मुलाहिज़ा हों जिनमें इसकी तस्रीह मिलती है। हदीक़ए नदिया शरह तरीक़ा मुहम्मदीया में इमाम अब्दुल-ग़नी नाबलुसी अलैहिर्रहमा इस मसला के मुतअल्लिक़ तहक़ीक़ फरमाते हैं कि जिन फ़ुक़्हा ने जनाज़े के साथ ज़िक्र बिल-जेहर को मना फरमाया है वह कराहते तंज़ीही की बिना पर है या कराहते तहरीमी की बिना पर। फिर फरमाते हैं।

यानी कुछ मशाइख़े इज़ाम ने जनाज़े के आगे और पीछे बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करने को जाइज़ फरमाया ताकि इससे उस मैयत और ज़िन्दों को तल्क़ीन हो और ग़ाफ़िलों के दिलों से ग़फ़लत सख़्ती दुनिया की मुहब्बत दूर हो।

हज़रत अली अल-ख़्वास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु फरमाते थे कि जब मालूम हुआ कि जनाज़े के साथ जाने वाले बेहूदा बातें नहीं छोड़ते और दुनियावी हालात में मशग़ूल हैं तो मुनासिब है कि इनको कलिमा पढ़ने का हुक्म दें क्योंकि यह कलिमा पढ़ना न पढ़ने से अफ़ज़ल है। और फ़क़ीह आलिम को मुनासिब नहीं कि इसका इंकार करे मगर या तो नस से या मुसलमानों के इज्मा से इसलिए शारेअ अलैहिस्सलाम की तरफ से मुसलमानों को कलिमा पढ़ने का इजाज़त आम है जिस वक़्त भी चाहें। और सख़्त तअज्जुब है इस अंधे दिल से जो इसका इंकार करे। इमाम शोरानी अपनी किताब उहूदुल-मशाइख़ में फरमाते हैं।

हम अपने भाइयों में से किसी को यह मौक़ा न देंगे कि किसी ऐसी चीज़ का इंकार करे जिस को मुसलमानों ने सवाब समझ कर निकाला हो और उसको अच्छा समझा हो ख़ुसूसन वह जो कि अल्लाह तआला व रसूल अलैहिस्सलाम से मुतअल्लिक़ हो जैसे कि लोगों का जनाज़े के आगे कलिमा तैयबा पढ़ना या कि जनाज़े के आगे किसी का क़ुरआने करीम वग़ैरह पढ़ना जो शख़्स इसको हराम कहे वह शरीअत के समझने से क़ासिर है। फिर तमाम फरमाते हैं कि कलिमा **ला इलाहा इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह**

नेकियों में बेहतर नेकी है। इससे क्यों मना किया जा सकता है। अगर तुम आजकल के लोगों की ग़ालिब हालत में ग़ौर करो तो तुम इनको जनाज़े के साथ साथ दुनियावी क़िस्सों में मश्ग़ूल पाओगे। उनके दिल मैयत से इबरत नहीं पकड़ते और जो कुछ हो चुका उससे ग़ाफ़िल हैं बल्कि हम ने तो वहुत से लोगों को हंसते हुए देखा और जब लोगों का इस ज़माना में ऐसा हाल है तो हमको इस पर अमल करके कि यह कलिमा पहले ज़माना में मैयत के साथ पुकार कर नहीं पढ़ा जाता था। इसके नाजाइज़ होने का हुक्म देना दुरुस्त नहीं बल्कि इसके जाइज़ होने ही का हुक्म करना चाहिए बल्कि दुनिया दारों की बातों से हर बेफाइदा बात जनाज़े में बेहतर है। पस अगर तमाम लोग बुलन्द आवाज़ से जनाज़े के हम्राह **ला इलाहा इल्लल्लाह** पढ़ें तो हमको कोई ऐतराज़ नहीं। इन इबारात से मालूम हुआ कि जनाज़े के साथ अगर बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र किया जाए तो जाइज़ है खुसूसन इस ज़माना में जब कि अवाम मैयत के साथ हँसते हुए दुनियावी बातें करते हुए जाते हैं अब तो बहुत ही बेहतर है कि इन सब को ज़िक्रे इलाही में मश्ग़ूल कर दिया जाए कि ज़िक्रे इलाही दुनियावी बातों से अफ़ज़ल है।

दूसरा बाब

इस मसला पर ऐतराज़ात व जवाबात

इस पर मुख़ालेफ़ीन के हस्बे ज़ैल ऐतराज़ात हैं। इंशाअल्लाह इससे ज़्यादा न मिलेंगे।

(1) जनाज़े के साथ बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करने को फ़ुक़्हा मना फरमाते हैं चुनांचे आलमगीरी जिल्द अव्वल **किताबुल-जनाइज़ फ़स्ल फ़ी हम्लुल-जनाइज़** में है।

जनाज़े के साथ जाने वालों को ख़ामोश रहना वाजिब है और बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करना और कुरआन पढ़ना मक्रूह है अगर अल्लाह का ज़िक्र करना चाहें तो अपने दिल में करें। फतावा सिराजिया **बाब हम्लिल-जनाज़ा** में है।

जनाज़े के पीछे और मैयत के घर में नौहा करना और आवाज़ निकालना और बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करना, कुरआन पढ़ना मक्रूह है और जनाज़े के पीछे यह कहते जाना कि हर ज़िन्दा मरेगा बिदअत है। दुर्रे मुख़्तार जिल्द अव्वल **किताबुल-जनाइज़ मतलबु फ़ी दफ़्निल-मैयत** में है। **कमा कुरेहा फ़ीहा रफ़्ओ सौतिन बेज़िक्रे औ क़िरातिन।** जैसे कि जनाज़े में बुलन्द

आवाज़ से ज़िक्र करना यां क़िराअत करना मक्रूह है। इसके मातहत शामी में है।

जबकि दुआ में इस क़द्र सख़्ती है तो अब इस गाने का क्या हाल है जो इस ज़माना में पैदा हो गया है। इब्ने मुज़िर ने अशराफ में नक़्ल किया कि-

यानी सहाबा किराम जिहाद, जनाज़ा, ज़िक्र में बुलन्द आवाज़ को नापसन्द करते थे। इन फ़िक़्ही इबारात से मालूम हुआ कि मैयत के साथ बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करना मना है ख़ुसूसन वह गाना जिस को आज कल नअत ख़्वानी कहते हैं वह तो बहुत ही बुरा है। (मुख़ालेफ़ीन का यह इंतिहाई ऐतराज़ है।)

जवाब : फुक़्हा की इन इबारत में चन्द तरह गुफ़्तगू है अव्वलन यह कि उन्होंने जो मैंयत के साथ ज़िक्र बिल-जेहर को मक्रूह लिखा है इस से कराहते तंज़ीही मुराद है या तहरीमी (कराहते तंज़ीही जाइज़ में दाख़िल है यानी इसका करना जाइज़ है मगर न करना बेहतर) दूसरे यह कि यह हुक्म उस ज़माने के लिए था या कि हर ज़ामना के लिए। तीसरे यह कि मुतलक़न बोलना मना है। या कि ख़ास ज़िक्र बिल-जेहर या कि नौहा वग़ैरह। चौथे यह कि बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करना हर शख़्स को मना है या कि ख़ास आदमियों को। जब यह चार बातें तय हो जाएं तो मसअला बिल्कुल वाज़ेह हो जाएगा। हक़ यह है कि जिन फुक़हा ने मैयत के साथ ज़िक्र बिल-जेहर को मक्रूह फरमाया। उनकी मुराद मक्रूहे तंज़ीही है। चुनांचे शामी में इसी मन्क़ूला इबारत के साथ साथ फरमाया।

कहा गया है कि मक्रूह तहरीमी है और कहा गया कि मक्रूहे तंज़ीही जैसा कि बहरुर्राइक़ में ग़ायत से नक़्ल किया। इसी बहर में बरिवायत ग़ायत है कि जो शख़्स जनाज़े के साथ जाए उसको बेहतर है कि ख़ामोश रहे। जिस से मालूम हुआ कि ख़ामोश रहना बेहतर और ख़ामोश न रहना बल्कि ज़िक्र करना बेहतर नहीं जाइज़ है। नीज़ कराहतं तंज़ीही और तहरीमी की पहचान ख़ुद अल्लामा शामी ने मक्रूहात की तारीफ करते हुए ब्यान फरमाई। फरमाते हैं शामी जिल्द अव्वल **किताबुत्तहारत** मतलब तारीफ -

जब फुक़्हा मकरूह फ़रमा दें तो ज़रूरी है कि कराहत की दलील में नज़र की जाए अगर इसकी दलील मुमानेअत ज़न्नी हो तो मक्रूहे तहरीमी है सिवाए किसी माने के और अगर दलीले मुमानेअत न हो बल्कि ग़ैर ज़रूरी तर्क का फाइदा दे तो कराहते तंज़ीही है। इससे मालूम हुआ कि अगर फुक़्हा कराहत की दलील में कोई शरई मुमानेअत पेश फ़रमा दें तो कराहते तहरीमी है वरना कराहते तंज़ीही। और जिन फुक़्हा ने भी इस ज़िक्र बिल-जेहर को

मना किया है कोई मुमानेअत की हदीस या आयत पेश नहीं की। सिर्फ़ शामी ने यह दलील बयान फ़रमाई कि रब तआला फ़रमाता है। **इन्नहू ला युहिब्बुल-मुअतदीन** अल्लाह हद से बढ़ने वालों को महबूब नहीं रखता। जिस का तरजमा फरमाया **अइल-मुजाहिरीना बिद्दुआए** यानी बुलन्द आवाज़ से दुआ करने वालों को। मालूम हुआ कि इसकी मुमानेअत की कोई साफ हदीस नहीं मिली। लिहाज़ा यह मक्रूहे तंज़ीही है और मक्रूहे तंज़ीही जाइज़ होता है। और इमाम शोअरानी ने उहूद मशाइख़ में इसी **ज़िक्र मअल-जनाज़ा** के लिए फरमाया **वक़द रज्जहन्नवीयु अन्नल-कलामा ख़िलाफ़ुल-औला।** इमाम नुववी ने इसको तरजीह दी कि जनाज़े के साथ कलाम करना बेहतर नहीं। और शरह तरीक़ा मुहम्मदीया ने बयान फ़रमाया **वहुवा यक्रहु अला माना अन्नहू तारेकुल-औला।** जनाज़े के साथ बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करना मक्रूह है बईं मानी कि ख़िलाफ़े औला है यानी बेहतर नहीं। बहरहाल मानना पड़ेगा कि जिन फ़ुक़्हा ने इसको मक्रूह कहा उनकी मुराद मक्रूहे तंज़ीही है। दसूरे यह कि मुमानेअत उस ज़माने के लिए थी अब इस ज़माना में चूंकि लोगों के हालात बदल गए यह हुक्मे कराहत भी बदल गया। क्योंकि उस ज़माना में जो भी जनाज़े के साथ जाता था वह ख़ामोश रहता था इससे इबरत पकड़ता था अह्ले मैयत के साथ रंज व ग़म में शिरकत करता था और मुद्दआ भी यह है कि मैयत के जुलूस में लोग इबरत हासिल कर लें। हज़रत अली रज़ियल्लाहु तआला अन्हु फ़रमाते हैं –

जब तुम क़ब्रिस्तान की तरफ कोई जनाज़े ले जाओ तो ख़्याल रखो कि एक दिन तुमको भी इसी तरह ले जाया जाएगा।

इस हालत में कुछ भी बात करना ख़िलाफ़े हिक्मत था कि बात करने में ध्यान बटेगा और दिल और तरफ मुतवज्जेह हो जाएगा। लिहाज़ा फ़ुक़्हा ने फरमाया कि इस हालत में सुकूत करो। **किताबुल-अज़्कार** मुसन्नेफ़ा इमाम नुववी **बाब मा यकूलुल-माशी मअल-जनाज़ा** में है।

मिश्कात बाबु दफ़निल-मैयत में है कि सहाबा किराम फरमाते हैं कि हम क़ब्रिस्तान में मैयत दफन करने के लिए गए। **वजसलना मअहू कअन्ना अला रूऊसेनत्तैरा** तैयारी क़ब्र में देर थी। तो हम इस तरह ख़ामोश बैठ गए जैसे कि हमारे सरों पर परिन्दे हैं। (परिन्दों का शिकारी जब जाल लगा कर बैठता है तो बिल्कुल ख़ामोश रहता है ताकि आवाज़ से परिन्दे उड़ न जाएं।) अब वह ज़माना है कि जनाज़े के साथ जाने वाले दुनियावी बातें, हंसी मज़ाक़, मुसलमानों की ग़ीबतें करते जाते हैं अगर क़ब्रिस्तान में कुछ देर बैठना पड़े तो ख़ुश गप्पियाँ उड़ाते हैं। मैंने तो यह भी देखा है कि कुछ खेल का मशग़ला

करके दिल बहलाते हैं। तो उनको ज़िक्रे इलाही में मश्गूल कर देना इन बेहूदा बातों से बेहतर है। लिहाज़ा अब यह भी मुस्तहब है कि मैयत के साथ सब लोग कलिमा वग़ैरह बुलन्द आवाज़ से पढ़ते हुए जाएं। हालात बदलने से अहकाम बदल जाते हैं और जो मुफ़्ती अपने अह्ले ज़माना की हालत से बेख़बर रहे वह जाहिल है। इमाम शोअरानी अपनी किताब उहूद मशाइख़ में फ़रमाते हैं।

तरजमा : गुज़िश्ता ज़माना में जनाज़ा के आगे बात करना, कुरआन पढ़ना, ज़िक्र करना, इसलिए न था कि जब किसी का इंतिक़ाल हो जाता था तो सारे शुरका रंज व ग़म में शरीक हो जाते थे। यहाँ तक कि मैयत के अह्ले क़राबत और ग़ैरों में फ़र्क़ न रहता था। और इस क़द्र मौत का ध्यान करते थे कि बोलने पर इनको कुदरत न रहती थी। और इनकी ज़ुबानें गूंगी हो जाती थीं। अगर आज हम भी इस सिफ़त के लोग पा लें तो हम इनको कुरआन पढ़ने और ज़िक्र करने का हुक्म न देंगे। सुब्हानल्लाह क्या नफ़ीस फ़ैसला फरमाया। कहिए क्या आज कल लोगों का यह हाल है। हज़रत शैख़ उस्मान बुहैरमी शरह इक्नाअ के हाशिया जिल्द दोम मैं फ़रमाते हैं।

यानी जनाज़े के साथ शोर करना मक्रूह है ख़्वाह यह शोर कुरआन ख़्वानी से हो या ज़िक्रुल्लाह से या दुरूद ख़्वानी से। यह हुक्म इस हालत के लिहाज़ से है जो कि पहले ज़माना में मुसलमानों की थी वरना इस ज़माना में अब इसमें कोई हरज नहीं। क्योंकि ज़िक्र बिल-जेहर मैयत की अलामत है इसके छोड़ने में मैयत की तौहीन है लिहाज़ा इसको अगर ज़रूरी भी कहा जाए तो भी बईद नहीं जैसा कि मुदानबगी अलैहिर्रहमा से नक़्ल फरमाया। इमाम शोअरानी ने उहूदे मशाइख़ में फरमाया।

मुसलमानों ने जिस काम को अच्छा समझ कर ईजाद किया है वह यह है कि जनाज़े के आगे कहते हैं। **ला इलाहा इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह** या यह कहते हैं कि ख़ुदा के सामने क़यामत के दिन हमारा वसीला यह है **ला इलाहा इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह** या इसी तरह और ज़िक्र इस ज़माना में इससे मना करना ज़रूरी नहीं। क्योंकि अगर वह लोग इस ज़िक्र में मश्गूल न हुए तो दुनियावी बातें करेंगे। क्योंकि इनके दिल मौत की याद से ख़ाली हैं बल्कि हमने तो बाज़ लोगों को जनाज़े के आगे हंसते हुए और मज़ाक़ करते हुए देखा है। इमाम शोअरानी कुद्देस सिर्रहू ने जो कुछ अपने ज़माना का हाल ब्यान फ़रमाया इस से बदतर हाल आज है। मैंने बाज़ जगह देखा कि क़ब्र में देर थी लोग अलाहिदा अलाहिदा जमाअतें बन कर बैठ गए और बातों में ऐसे मश्गूल हुए कि मालूम होता था कि बाज़ार लगा हुआ है।

बाज़ लोग ज़मीन पर लकीरें खींच कर कंकरों से खेलना चाहते थे इस हालत को देख कर मैंने सब को जमा करके वअज़ कहना शुरू कर दिया। लोगों को तज्हीज़ व तक्फीन के अहकाम बताए। इस से यही वेहतर था।

लतीफ़ा : मुख़ालेफीन जनाजे के साथ ज़िक्रुल्लाह करने को तो विदअत और हराम कहते हैं कि मगर बातें करना, कभी मसाइल ब्यान करना, कभी शिर्क व बिदअत के फतवा सुनाना, लोगों के आपस में हंसी मज़ाक करने को न मना करते हैं न इसको बुरा कहते हैं। हालांकि फुक़हा बिल्कुल ख़ामोश रहने का हुक्म देते हैं जैसा कि इस ऐतराज़ में नक़्ल की हुइ इबारत से मालूम हुआ। यह उल्टी गंगा क्यों बह रही है कि कलाम सलाम हंसी मज़ाक़, वअज़ व फ़तावा तो सब जाइज़। हराम है तो ज़िक्रुल्लाह ख़ुदा समझ दे।

नोट ज़रूरी : शायद कोई कहे कि इस्लामी अहकाम तो कभी बदलते नहीं फिर यह तब्दीली कैसी? इस का जवाब हम पहले दे चुके हैं कि जो अहकाम किसी इल्लत की बिना पर हों वह इल्लत के बदलने से बदल जाएंगे जैसे कि अव्वल ज़माना में नमाज़ पढ़ाने, तालीम कुरआन देने वग़ैरह पर उजरत लेना हराम थी अब जाइज़ है। इसी तरह मक़ाबिरे औलिया अल्लाह पर चादरें डालना अब ज़रूरतन ज़माना के लिहाज़ से जाइज़ हैं। इसी तरह माहे रमज़ान में ख़त्मे कुरआन पर दुआएं माँगना जाइज़ क़रार दी गईं। कुरआन पाक में आयात और रुकूअ और सूरतों के नाम लिखना ज़मानए सल्फ़ में न था। लेकिन अब अवाम के फाइदे का लिहाज़ करके जाइज़ क़रार दिया गया। आलमगीरी **किताबुल-कराहियत बाब आदाबिल-मुस्हिफ़े** में है।

सूरतों के नाम और आयतों की तादाद लिखने में हरज नहीं। यह अगर चे बिदअत है लेकिन बिदअते हसना है और बहुत ही चीज़ें बिदअत हैं और अच्छी हैं और बहुत सी चीज़ें ज़माना और मकान के बदलने से बदल जाती हैं। इसकी बहुत तफ़्सील हम पहली बहसों में कर चुके हैं। तीसरे यह कि काठियावाड़ वग़ैरह में मैयत के आगे इस तरह नअत शरीफ़ पढ़ते हैं कि सुनने वाले जान लेते हैं कि किसी का जनाज़ा जा रहा है। लिहाज़ा घरों में जो होते हैं वह भी नमाज़े जनाज़ा के लिए निकल आते हैं। तो यह नअत ख़्वानी मैयत का एलान भी हुआ। और जनाज़े का एलान करना इस नीयत से कि लोग नमाज़े जनाज़ा या दफन में शिरकत कर लें। जाइज़ है। चुनांचे दुर्रे मुख़्तार दफन मैयत की बहस में है।

यानी मैयत को दफन करने से पहले इसको मुन्तक़िल करना, उसके जनाज़े का एलान करना, **मैयत का मर्सिया पढ़ना चाहे अश्आर में हो या** इसके सिवा जाइज़ **है। उसकी शरह में शामी में है।**

यानी जाइज़ है कि कुछ लोग बाज़ को ख़बर दें ताकि लोग उस मैयत के हक़ को अदा करें और कुछ लोगों ने मक्रूह जाना है यह कि गली कूचों और बाज़ारों में इसका एलान किया जाए और सही यह है कि एलान मक्रूह नहीं है जब कि इस एलान में मैयत की ज़्यादा तारीफ न हो। जब कि एलाने जनाज़ा के लिए मैयत का मर्सिया या मैयत के नाम एलान जाइज़ है तो एलान जनाज़ा की नीयत से नअत शरीफ या कलिमा तैयबा बुलन्द आवाज़ से पढ़ना क्यों हराम है? कि इसमें जनाज़े का ऐलान भी है और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नअत भी। इससे मालूम हुआ कि जिस जेहर को फुक़्हा मना फरमाते हैं वह ज़िक्र बिला फाइदा है जब कि इससे कोई फाइदा ख़ास हो तो जाइज़ है इसी लिए अल्लामा शामी ने इसी बहस में तितार खानिया से नक़्ल किया।

लेकिन जनाज़ों के पास बुलन्द आवाज़ करना इस में यह गुमान है कि इससे मुराद नौहा करना मैयत के लिए नमाज़ शुरू हो चुकने के बाद दुआ करना या उसकी तारीफ में मुबालग़ा करना है कि अह्ले जाहलीयत की आदत थी लेकिन मैयत की तारीफ करना यह मक्रूह नहीं है। हासिल यह कि बेफाइदा बुलन्द आवाज़ करना मना है और बा-फ़ाइदा ज़िक्र करना बिला कराहत जाइज़ है फ़ी ज़माना इसमें बहुत से वह फ़ाइदे हैं जो कि अर्ज़ कर दिए गए। चौथे यह कि इस ज़िक्र से मुमानेअत ख़ास अह्ले इल्म को है। अगर अवाम मुस्लेमीन ज़िक्र करें तो उनको मना न किया जाए। फुक़्हाए किराम फरमाते हैं कि अवाम को ज़िक्रे इलाही से न रोको क्योंकि वह पहले ही से ज़िक्रे इलाही से बेरग़बत हैं। अब जिस क़द्र ज़िक्र करें करने दो। (दुर्रे मुख़्तार बाब सलातिल-ईदैन) में है।

ईदगाह के रास्ते में तक्बीर न कहे और न ईद से पहले नफ़्ल पढ़े और नमाज़ ईद के बाद भी ईदगाह में नफ़्ल न पढ़े क्योंकि यह आम फुक़्हा के नज़्दीक मक्रूह है। फिर फरमाते हैं।

यह हुक्म ख़ास लोगों के लिए है लेकिन अवाम को इससे मना न किया जाए न तक्बीर कहने से और न नफ़्ल पढ़ने से क्योंकि इनकी रग़बत कारे ख़ैर में कम है। इसके मातहत शामी में है। **ऐ ला सिर्रन वला जहरन फ़ित्तक्बीरे** यानी इनको आहिस्ता और बुलन्द आवाज़ से तकबीर कहने से न रोका जाए। और हम ज़िक्र बिल-ज़ेहर की वहस में बहवाला शामी बाबुल इदैन ज़िक्र कर चुके हैं कि किसी ने इमाम अबू हनीफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु से दरयाफ़्त किया कि लोग बाज़ारों में बुलन्द आवाज़ से तक्बीरें कहते हैं क्या इन को मना किया जाए फरमाया कि नहीं। इन तमाम इबारात से मालूम

हुआ कि कुछ मौक़ों पर ख़्वास किसी को ख़ास ज़िक्र से मना किया जाता है। लेकिन अवाम को रोकने का हुक्म नहीं। इसीलिए फ़ुक़्हा ने यह तो फ़रमा दिया कि जनाज़े के आगे बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र न करो लेकिन यह न फ़रमाया कि ज़िक्र करने वालों को इससे रोक भी दो। ग़र्ज़ेकि जवाब का ख़ुलासा यह हुआ कि अव्वलन तो यह मुमानेअत कराहते तंज़ीही की बिना पर है। दोम यह कि पहले ज़माना के लिए थी। अब यह हुक्म बदल गया। क्योंकि इल्लते हुक्म बदल गई। तीसरे यह कि चूंकि इस ज़िक्र से जनाज़ा का एलान है लिहाज़ा फाइदे मन्द है जाइज़ है। चौथे यह कि यह हुक्म ख़ास लोगों के लिए है आम्मतुल-मुस्लेमीन अगर ज़िक्रे इलाही करें तो उनको मना न किया जाए।

(2) जनाज़े के आगे बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करना हिन्दुओं से मुशाबेहत है क्योंकि वह चीख़ते जाते हैं। "राम राम सत्य है" और तुम भी शोर मचाते हुए जाते हो और कुफ़्फ़ार से मुशाबेहत नाजाइज़ लिहाज़ा यह मना है।

जवाब : कुफ़्फ़ार बुतों का नाम पुकारते हैं और हम ख़ुदाए कुद्दूस का ज़िक्र करते हैं। फिर मुशाबेहत कहाँ रही। कुफ़्फ़ार बुत के नाम पर जानवर ज़िबह करते हैं हम ख़ुदा के नाम पर। कुफ़्फ़ार गंगा से गंगा का पानी लेकर आते हैं। हम मक्का मुअज़्ज़मा से आबे ज़मज़म लाते हैं। यह मुशाबेहत न हुई। और जो काम कि कुफ़्फ़ार की क़ौमी या मज़्हबी निशान बन गए हों, उनमें मुशाबेहत करना मना है न कि हर काम में। अगर काफिर भी अपने जनाज़ों के आगे कलिमा पढ़ने लगें तो शौक़ से पढ़ें। यह अच्छा काम है और अच्छे काम में मुशाबेहत बुरी नहीं होती।

(3) रास्ता में कलिमा तैयबा आवाज़ से पढ़ना बेअदबी है क्योंकि वहाँ गन्दगी वग़ैरह होती है लिहाज़ा यह मना है।

जवाब : यह ऐतराज़ महज़ बेकार है। फ़ुक़्हा किराम ने तस्रीह फ़रमाई है कि रास्तों में चलते हुए ज़िक्र जाइज़ है। हाँ जो जगह नजासत डालने के लिए बनाई गई हो वहाँ ज़िक्र बिल-जेहर मना है जैसे कि पाखाना या घोरा (रोड़ी) शामी बहस **क़िरअत इन्दल-मैयत** में है।

सवार या पैदल चलते हुए क़ुरआन में पढ़ने हरज नहीं जब कि वह जगह नजासत के लिए न बनाई गई हो। क़ुरआन बग़ल में लेकर रास्ता से गुज़रना जाइज़ है और पाखाना में ले जाना मना है। और बक़रईद के दिन हुक्म है कि ईदगाह के रास्ते में बुलन्द आवाज़ से तक्बीर तश्रीक़ कहता जाए दुर्रे मुख़्तार **बाब सलातिल-ईदैन** में है। **व युकब्बरू जहरन इत्तेफ़ाक़न फ़ित्तरीक़** रास्ते में बुलन्द आवाज़ से तक्बीर कहे। हालांकि रास्ते में नापाकी वग़ैरह

होती है। इसी तरह फ़ुक़्हा फ़रमाते हैं कि हम्माम में तस्बीह व तहलील बुलन्द आवाज़ से जाइज़ है हालांकि वहाँ अक्सर गन्दगी होती है, आलमगीरी **किताबुल-कराहियते बाबुस्सलाते वत्तस्बीह** में उम्दतल-अबरार मज्मूउन-नवाज़िल, खानिया, सिराजिया, मुल्तकित तजनीस वग़ैरह में है। व **अम्मत्तस्बीहु वत्तहलीलु ला बासा बेज़ालिका व इन रफ़आ सौतहू।** यानी हम्माम में तस्बीह व तहलील बुलन्द आवाज़ से भी जाइज़ है।

(4) जनाज़े के आगे बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र करने में घर की औरतें और बच्चे डर जाते हैं क्योंकि इनको मौत याद आ जाती है जिसकी वजह से वह बीमार हो जाते हैं लिहाज़ा बक़ायदा तिब्बी भी यह मना होना चाहिए।

जवाब : क़ुरआन फरमाता है। **अला बिज़िक्रिल्लाहे तत्मइन्नल-क़ुलूब।** अल्लाह के ज़िक्र से दिल चैन में आते हैं। मुसलमानों को तो इस से चैन और राहत होती है। हाँ कुफ़्फ़ार डरते होंगे। उनको डरने दो। कुफ़्फ़ार तो अज़ान से भी डरते हैं तो क्या उनकी वजह से अज़ान बन्द की जाएगी। हाँ अगर किसी माहिर हकीम ने लिखा हो कि कलिमा तैयबा की आवाज़ वबा के असबाब में से है तो पेश किया जाए लेकिन वह हकीम मुसलमान और माहिर हो। कोई देवबन्दी या कि वहमी तबीब न हो। वहमी बातों का ऐतबार नहीं। साबित हुआ कि मैयत के आगे बुलन्द आवाज़ से ज़िक्र बहुत बेहतर और बाइसे बरकत है। मुख़ालेफ़ीन के पास सिवाए ग़लत फ़हमी के और कोई ऐतराज़ मज़बूत नहीं। **वल्हम्दु लिल्लाहे अला ज़ालिका।**

खातिमाए किताब

अल्लाह तआला का शुक्र है कि अब तक जिस क़दर मसाइल में देवबन्दी इख़्तिलाफ करते हैं उनकी तहक़ीक़ कर दी गई। लेकिन उन मसाइले मज़्कूरा में बहुत से मसाइल वह हैं जिन पर ईमान का दारोमदार नहीं सिर्फ़ कराहत और इस्तेहबाब में ही इख़्तिलाफ़ है जिन मसाइल की बिना पर अरब व अजम के उलमा ने देवबन्दियों को काफिर कहा वह उनके ख़िलाफ़ इस्लामी अक़ाइद हैं। हम मुसलमानों की वाक़्फ़ीयत के लिए उन अक़ाइद की फेहरिस्त पेश करते हैं और हर एक के मुक़ाबिल इस्लामी अक़ीदा भी बयान करते हैं। और हमने इस फ़ेहरिस्त में उनका जो अक़ीदा बयान किया है वह उनकी किताबों में छपा हुआ मौजूद है। अगर कोई साहब ग़लत साबित कर दें तो वह इनआम के मुस्तहिक़ हैं कुछ साहिबों का इसरार था कि इन अक़ाइदे बातिला की तरदीद भी कर दी जाए। मगर इस वक़्त काग़ज़ दस्तयाब नहीं होता। लिहाज़ा हम इंशाअल्लाह इसके लिए इस किताब की

दूसरी जिल्द तैयार करेंगे। जिसमें इन अक़ाइद से ही बहस होगी। फिल-हाल सिर्फ़ फ़ेहरिस्त पेश करते हैं।

देवबन्दी अक़ाइद :

ख़ुदा तआला झूठ बोल सकता है (मसअला इम्काने किज़्ब) वराहीने क़ातेआ मुसन्नेफ़ा मौलवी ख़लील अहमद साहब अंबेठवी जेहदुल-मुक़िल मुसन्नेफ़ा मौलवी महमूद हसन साहब।

इस्लामी अक़ाइद :

झूठ बोलना ऐब है जैसे कि चोरी या ज़िना करना वग़ैरह और रब तआला हर ऐब से पाक है। **वमन अस्दक़ु मिनल्लाहे हदीसन।** (क़ुरआने करीम) और ख़ुदा की सिफात वाजिब हैं न कि मुम्किन लिहाज़ा ख़ुदा के लिए "सकना" कहना बे दीनी है।

(2) अल्लाह की शान यह है कि जब चाहे इल्म ग़ैब दरयाफ़्त कर ले। किसी वली, नबी, जिन, फ़रिश्ते, भूत को अल्लाह ने यह ताक़त नहीं बख़्शी (तक़्वियतुल-ईमान मुसन्नेफ़ा मौलवी इस्माईल साहब देहलवी)

ख़ुदाए पाक हर वक़्त आलिमुल-ग़ैब है उसका इल्म उसकी सिफत है और वाजिब है जब चाहे तब मालूम करने का मतलब यह हुआ कि न चाहे तो जाहिल रहे यह कुफ़्र है ख़ुदा के सिफ़ात ख़ुदा के इख़्तियार में नहीं वह वाजिब हैं और रब ने अपने महबूबों को भी उलूमे ग़ैबिया अता किए। (क़ुरआने करीम)

(3) ख़ुदा तआला को जगह और ज़माना और मुरक्कब होने और माहियत से पाक मानना बिदअत है। ईज़ाहुल-हक़ मुसन्नेफ़ा मौलवी इस्माईल साहब देहलवी)

ख़ुदाए क़ुद्दूस जगह और ज़माना और तरकीब व माहियत से पाक है न वह किसी जगह में रहता है न उसकी उम्र है न वह अज्ज़ा से बना है इसको देवबन्दियों ने भी बेख़बरी में कुफ़्र लिख दिया। (कुतुब इल्मे कलाम)

(4) ख़ुदा तआला को बन्दों के कामों की पहले से खबर नहीं होती। जब बन्दे अच्छे या बुरे काम कर लेते हैं तब उसको मालूम होता है। बलग़तुल-जीरान सफ़: 57 ज़ेर आयत **इल्ला अलल्लाहे रिज़्क़ुहा व यअलमु मुस्तक़र्रहा व मुस्तौदअहा कुल्लु फ़ी किताबुन मुबीन।** मुसन्नेफ़ा मौलवी हुसैन अली साहब बछरांवला शागिर्द मौलवी रशीद अहमद साहब।

ख़ुदाए तआला हमेशा से हर चीज़ का जानने वाला है उसका इल्म वाजिब और क़दीम है जो एक आन के लिए किसी चीज़ से उसको बेइल्म माने वह बेदीन है (आम कुतुबे अक़ाइद) देवबन्दी ख़ुदा के इल्मे ग़ैब के भी

मुंकिर हैं तो अगर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के इल्मे ग़ैब का इंकार करें तो क्या तअज्जुब है?

(5) ख़ातमुन्नबीयीन के मानी यह समझना ग़लत है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम आख़िरी नबी हैं बल्कि यह मानी हैं कि आप असली नबी हैं बाक़ी आर्ज़ी लिहाज़ा अगर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के बाद और भी नबी आ जाएं तो भी खातमीयत में फ़र्क़ न आएगा।

(तहज़ीरुन्नासे मुसन्नेफ़ा मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब बानी मुदरसा देवबन्द)

ख़ातमुन्नबीयीन के यही मानी हैं। कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम आखिरी नबी हैं हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना ज़ुहूर या बाद में किसी असली, बरोज़ी, मुराक़ी, मजाक़ी का नबी बनना मुहाल बिज़्ज़ात है। इसी मानी पर सब मुसलमानों का इज्माअ है और यही मानी हदीस ने बयान फरमाए जो इस माना का इंकार करे वह मुरतद है। (जैसे कि क़ादयानी और देवबन्दी)

(6) आमाल में बज़ाहिर उम्मती नबी के बराबर हो जाते हैं बल्कि बढ़ भी जाते हैं (तहज़ीरुन्नास मुसन्नेफ़ा मुहम्मद क़ासिम साहब बानी मदरसा देवबन्द)

कोई ग़ैर नबी ख़्वाह वली हो या ग़ौस या सहाबी किसी कमाल इल्मी व अमली में नबी के बराबर नहीं हो सकता बल्कि ग़ैर सहाबी सहाबी के बराबर नहीं हो सकता। सहाबी का कुछ जौ ख़ैरात करना हमारे सदहा मन सोना खैरात करने से बदरज़हा बेहतर है (हदीस)

(7) हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का मिस्ल व नज़ीर मुम्किन है (यक्रोज़ी मुसन्नेफ़ा मौलवी इस्माईल साहब देहलवी मत्बूआ फारूकी सफ़ः 144)

रब तआला बेमिस्ल ख़ालिक़ है और उसके महबूब बेमिस्ल बन्दे वह रहमतुल-लिल-आलमीन शफीउल-मुज़्नेबीन हैं। इन औसाफ़ की वजह से आपका मिस्ल मुहाल बिज़्ज़ात है। (देखो रिसाला इम्तिना-उन्नज़ीर मुसन्नेफ़ा मौलाना फ़ज़्ले हक़ साहब ख़ैराबादी)

(8) हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को भाई कहना जाइज़ है क्योंकि आप भी इंसान हैं (बराहीने क़ातेआ मुसन्नेफ़ा मौलवी खलील अहमद साहब तक़्वियतुल-ईमान मुसन्नेफ़ा मौलवी इस्माईल साहब देहलवी)

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को अल्फ़ाज़े आम से पुकारना हराम है और अगर बनीयते हिक़ारत हो तो कुफ्र है (कुरआने करीम) या रसूलल्लाह

या हबीबल्लाह कहना ज़रूरी है।

(9) शैतान और मलिकुल-मौत का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से ज़्यादा है (बराहीने क़ातेआ मुसन्नेफ़ा मौलवी खलील अहमद साहब)

जो शख़्स किसी मख़्लूक़ का हुज़ूर अलैहिस्सलाम से ज़्यादा इल्म माने वह काफिर है (देखो शिफा शरीफ़) हुज़ूर अलैहिस्सलाम तमाम मख़्लूके इलाही में बड़े आलिम हैं।

(10) हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का इल्म बच्चों, पागलों, जानवरों की तरह या इनके बराबर है। (हिफ़्ज़ुल-ईमान मुसन्नेफ़ा मौलवी अशरफ अली साहब)

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के किसी वस्फ़ पाक को अदना चीज़ों से तश्बीह देना या उनके बराबर बताना खुली हुई तौहीन है और यह कुफ़्र है।

(11) हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को उर्दू बोलना मदरसा देवबन्द से आ गया (बराहीने क़ातेआ मौलवी खलील अहमद साहब)

रब तआला ने सारी ज़ुबानें हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को तालीम फरमाईं और हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म उन से कहीं ज़्यादा है तो जो कहे कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को यह ज़ुबान फलां मदरसा से आई वह बेदीन है।

(12) हर छोटा बड़ा मख़्लूक़ (नबी और ग़ैरे नबी) अल्लाह की शान के आगे चमार से भी ज़लील है (तक़्वियतुल-ईमान मौलवी इस्माईल साहब)

रब तआला फरमाता है। **वकाना इन्दल्लाहे वजीहन** फिर फरमाता है **अल-इज़्ज़तु लिल्लाहे व लेरसूलेही व लिल-मुमिनीन** जो नबी के सामने ज़लील जाने वह ख़ुद चमार है जलील है।

(13) नमाज़ में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का ख़्याल लाना अपने गधे और बैल के ख़्याल में डूब जाने से बदतर है (सिराते मुस्तक़ीम मुसन्नेफ़ा मौलवी इस्माईल देहलवी)

जिस नमाज़ में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की अज़्मत का ख़्याल न हो वह नमाज़ ही ना मक़्बूल है इसीलिए अत्तहीयात में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सलाम करते हैं। वह भी कोई नमाज़ है यार न हो नमाज़ हो। (देखो बहस हाज़िर व नाज़िर)

(14) मैंने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को ख़्वाब में देखा कि मुझे आप पुल सिरात पर ले गए और देखा कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम गिरे जा रहे हैं तो मैंने हुज़ूर को गिरने से रोका (बलग़तुल-जीरान, मुबश्शेरात मुसन्नेफ़ा मौलवी हुसैन अली साहब शागिर्द मौलवी रशीद अहमद साहब)

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के बाज़ ग़ुलाम पुल सिरात से बिजली की

तरह गुज़र जाएंगे। और पुल सिरात पर फ़िसलने वाले लोग हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की मदद से संभल सकेंगे आप दुआ फ़रमाएंगे रब सल्लिम (हदीस) जो कहे कि मैंने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को पुल सिरात पर गिरने से बचाया वह बेईमान है।

(15) मौलवी अशरफ अली साहब ने बुढ़ापे में एक कम्सिन शागिर्दनी से निकाह किया। उस निकाह से पहले उनके किसी मुरीद ने ख़्वाब में देखा कि मौलवी अशरफ अली के घर में हज़रत आइशा सिद्दीक़ा आने वाली हैं जिसकी ताबीर मौलवी अशरफ अली साहब ने यह की कि कोई कम्सिन औरत मेरे हाथ आएगी। क्योंकि हज़रत आइशा सिद्दीक़ा का निकाह जब हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से हुआ। तो आपकी उम्र सात साल थी वही निस्बत यहाँ है कि मैं बुड्ढा हूँ और बीबी लड़की है। (रिसाला अल-इम्दाद) मुसन्नेफ़ा मौलवी अशरफ अली साहब माहे सफर 1335 हिज.

हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की सारी बीवियाँ मुसलमानों की माएं हैं। (कुरआने करीम) खुसूसन सिद्दीक़तुल-कुबरा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा की वह शान है कि दुनिया भर की माएं उनके क़दमे पाक पर कुरबान हों कोई कमीन आदमी भी मां को ख़्वाब में देख कर जोरु से ताबीर न देगा। यह हज़रत सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा की सख़्त तौहीन बल्कि उस जनाब के हक़ में खुली हुई गाली है इस से ज़्यादा और क्या बेईमानी और बेग़ैरती हो सकती है कि माँ को जोरु से ताबीर दी जाए।

अक़ाइदे देवबन्दिया का यह एक नमूना है। अगर तमाम अक़ाइद बयान किए जाएं तो इसके लिए दफ़्तर चाहिए। हक़ यह है कि राफ़ज़ियों और खार्जियों ने तो सहाबाए किराम या अह्ले बैते एज़ाम ही पर तबर्रा किया। मगर देवबन्दियों के क़लम से न ख़ुदा की ज़ात बची न रसूल अलैहिस्सलाम और न सहाबा किराम की न अज़्वाजे मुतह्हरात सब ही की इहानत की गई। अगर कोई शख़्स किसी शरीफ आदमी से कहे कि मैंने तुम्हारी वालिदा को ख़्वाब में देखा और उसको बीवी से ताबीर किया तो वह उसको बर्दाश्त नहीं कर सकता। हम उनके गुलामाने गुलाम अपनी सिद्दीक़ा माँ के लिए यह बातें किस तरह बर्दाश्त करें। सिर्फ़ क़लम हाथ में है। इसलिए मुसलमानों को बाख़बर कर देते हैं ताकि मुसलमान उनसे अलाहिदा रहें या वह लोग इन अक़ाइद से तौबा करें।

साहबज़ाद-ए-बुलन्द इक़्बाल अज़ीज़ी मौलवी सैयद महमूद शाह साहब सल्लमहू का इसरार था कि इम्कानें किज़्ब, इम्काने नज़ीर, देवबन्दियों की इबारात की तो तौज़ीहों पर भी हम कुछ गुफ़्तगू करें मगर चूंकि अब काग़ज़

बिल्कुल नहीं मिलता इसलिए देवबन्दियों के सिर्फ़ अक़ाइद पेश कर दिए और इंशाअल्लाह इसी किताब की दूसरी जिल्द में उन मज़्कूरा मसाइल की मअरकतुल-आरा तहक़ीक़ करेंगे। जिससे उलमा-ए-देवबन्द की मंतिक़ दानी का भी इंशाअल्लाह पता चल जाएगा और मौलवी हुसैन अहमद साहब व मौलवी मुर्तज़ा हसन साहब ने जो कुछ तौजीहाते इबारात की हैं उनकी हक़ीक़त भी मालूम हो जाएगी इंशाअल्लाह। हम अह्ले सुन्नत पर इल्ज़ाम है कि हम लोग पीर परस्त हैं नबी अलैहिस्सलाम को और अपने पीरों को ख़ुदा से मिला देते हैं। लिहाज़ा मुश्रिक हैं। हम दिखाते हैं कि ख़ुद देवबन्दी किस दर्जा के पीर परस्त हैं। और यह हज़रात अपने पीरों को क्या समझते हैं। मौलवी महमूद हसन साहब ने अपने शैख़ मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही के मर्सिया में लिखा है।

तुम्हारी तुर्बते अनवर को दे कर तूर से तश्बीह
कहूँ हूँ बार बार अरनी मेरी देखी भी नादानी

मौलवी रशीद अहमद साहब की क़ब्र तो तूर हुई और मौलवी महमूद हसन साहब अरनी फरमाने वाले मूसा हुए तो मौलवी रशीद अहमद साहब रब ही होंगे? इसमें तो अपने शैख़ को रब बताया। उसी मर्सिया में फरमाते हैं।

ज़ुबां पर अह्ले अहवा की है क्यों उअल हिबल शायद
उठा दुनिया से कोई बानी–ए–इस्लाम का सानी

इस में मौलवी रशीद अहमद साहब को बानी-ए-इस्लाम मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का सानी कहा गया। फिर फरमाते हैं।

वह थे सिद्दीक़ और फारूक़ फिर कहिए अजब क्या है
शहादत ने तहज्जुद में क़दम बोसी की गर ठानी

इसमें इनको सिद्दीक़ और फारूक़ भी बनाया। फिर फरमाते हैं।

क़बूलियत इसे कहते हैं मक़्बूल ऐसे होते हैं
उबैद सूद का उनके लक़ब है यूसुफ़ सानी

मौलवी रशीद अहमद साहब के काले बन्दे माशाअल्लाह ऐसे हुसैन हैं कि उनको यूसुफ़ सानी का लक़ब दिया गया। नाज़ेरीन ग़ौर फरमाएं कि अज़ ख़ुदा ता फ़ारूक़ कौन सा दरजा बाक़ी रहा। जो कि रशीद अहमद साहब को न दिया गया। तमाम मर्सिया ही क़ाबिले दीद है। इसमें यह शेअर भी है।

मुर्दों को ज़िन्दा क्या ज़िन्दों के मरने न दिया
इस मसीहाई को देखें ज़री इब्ने मरयम

इस शेअर में मौलवी साहब ने हज़रत रूहुल्लाह ईसा अलैहिस्सलाम को अपने मुर्शिद से मुक़ाबला का चैलंज दिया है कि ऐ ईसा अलैहिस्सलाम आप

तो एक काम ही किया। यानी मुर्दों को ज़िन्दा करना मगर मेरे रशीद अहमद ने दो काम किए मुर्दों को ज़िन्दा किया और ज़िन्दों को मरने न दिया। गोया इसमें रशीद अहमद साहब को ईसा अलैहिस्सलाम से अफ़ज़ल बताया।

मौलवी अशरफ़ अली साहब के एक मुरीद ने मौलवी साहब मौसूफ़ को लिखा कि मैंने ख़्वाब की हालत में इस तरह कलिमा पढ़ा। **ला इलाहा इल्लल्लाहु अशरफ़ अली रसूलुल्लाह** चाहता था कि कलिमा सही पढ़ूँ मगर यही मुँह से निकलता था फिर बेदार हो गया। तो दरूद शरीफ़ पढ़ा तो यूं **अल्ला हुम्मा सल्ले अला सैयदना व नबीयना व मौलाना अशरफ़** अली। बेदार हूँ मगर दिल बेइख़्तियार है। इस का जवाब मौलवी अशरफ़ अली साहब ने यह दिया कि इस वाक़्या में तसल्ली थी कि जिस तरफ तुम रुजूअ करते हो वह बेऔनेही तआला मुत्तबा सुन्नत है। **24** शव्वाल **1335** हिज. माख़ूज़ रिसाला अल-इम्दाद बाबत माहे सफर **1336** हिज. सफ़: **35**।

ग़ौर करना चाहिए कि मौलवी अशरफ अली साहब का कलिमा पढ़ लो। और उन पर दरूद पढ़ो मगर बेइख़्तियारी ज़ुबान का बहाना कर दो। सब जाइज़ है। कोई शख़्स अपनी बीवी को तलाक़ दे दे और कहे कि बेइख़्तियार ज़ुबान से निकल गया। तलाक़ हो जाती है। मगर यहाँ यह बहाना काफी माना गया। और इसको पीर के मुत्तबा सुन्नत होने की दलील क़रार दिया गया।

तज़्किरतुर्र-रशीद सफ़: **26** में है कि हाजी इम्दादुल्लाह साहब ने ख़्वाब में देखा कि आपकी भावज अपने मेहमानों का खाना पका रही हैं। कि जनाब रसूले मक़्बूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाए और उन से फरमाया कि उठ तू इस क़ाबिल नहीं कि इम्दादुल्लाह के मेहमानों का खाना पकाए। उसके मेहमान उलमा (यही देवबन्दी) हैं। उसके मेहमानों का खाना मैं पकाऊंगा (चश्म बद दूर) मौलवी इस्माईल साहब देहलवी सिराते मुस्तक़ीम के आख़िर में अपने मुर्शिद सैयद अहमद साहब की तारीफ़ करते हुए फरमाते हैं कि एक दिन अल्लाह तआला ने उनका दाहिना हाथ ख़ास अपने दस्ते कुदरत में पकड़ कर उमूरे कुदसीया से बहुत बुलन्द और नादिर चीज़ें उनके सामने पेश कीं। फिर फरमाते हैं कि रब तआला का सैयद अहमद साहब को हुक्म हुआ कि जो शख़्स तेरे हाथ पर बैअत करेगा अगरचे वह लाखों ही क्यों न हों हम हर एक को किफायत करेंगे। इसी सिराते मुस्तक़ीम में औलिया का ज़िक्र फरमाते हुए फरमाते हैं "और इनको अंबिया के साथ वही निस्बत है जो छोटे भाईयों को बड़े भाईयों से क्योंकि उनके दरम्यान भी **मिन वज्हे नबुव्वत** का इलाक़ा है और **मिन वज्हे उख़ुव्वत** का यानी औलिया अल्लाह

में नबुव्वत मौजूद है। मआज़ल्लाह। कहिए आज तक किसी मुरीद ने अपने पीर व मुर्शिद के लिए ऐसी तअल्लियां न की होंगी। मगर इन हज़रात पर न फ़तवा शिर्क है न हुक्म कुफ़्र न यह क़ब्र परस्त कहलाएं।

जो कुछ अर्ज़ किया गया न तो इससे अपनी इल्मी लियाक़त का इज़्हार मक़्सूद है न अपनी क़ाबलीयत दिखाना मक़्सूद। मैं क्या और मेरी लियाक़त और क़ाबलीयत क्या। यह जो कुछ है हज़रत मुर्शिदी व उस्ताज़ी मौलाना अल्हाज सैयद मुहम्मद नईमुद्दीन साहब क़िब्ला मुरादाबादी के दर का सदक़ा है। मक़्सूद सिर्फ़ यह है कि मुसलमान अपने दोस्त व दुश्मन को पहचानें। दौलते ईमान को दीनी राहज़नों से महफ़ूज़ रखें। और कोशिश करें कि दुनिया से ईमान सलामत ले जावें। और जो भी इससे फाइदा उठाए इस फ़क़ीर बेनवा के लिए दुआए हुस्ने ख़ातमा करे। मौला तआला इस्लाम का बोला बाला फरमाए। मुसलमानों को राहे मुस्तक़ीम पर क़ाइम रखे और इस फ़क़ीर के इन टूटे फूटे अल्फ़ाज़ को क़बूल फरमाए। आमीन!

नाचीज़

अहमद यार ख़ाँ नईमी अशरफ़ी

उझानवी बदायूनी

मुदर्रिस मदरसा ख़ुद्दामुर्रसूल गुजरात।

6 ज़ीक़अदा रोज़े ईमां अफ़्रोज़

दो शंबा मुबारका 1361 हिज.

इस किताब को लिख चुकने के बाद हुज़ूर अमीरे मिल्लत क़िब्ला आलमे मुहद्दिस अली पूरी दामा ज़िल्लुहुम का गिरामी नामा तशरीफ़ ला कर बाइसे इज़्ज़त अफ़्ज़ाई हुआ। जिस में एक ईमान अफ़रोज़ निहायत बारीक इल्मी नुक्ता इरशाद फरमाया गया है और मुझे हुक्म मिला कि वह किताब में लिख दूँ। मैं निहायत फ़ख़्र से हदिया नाज़िरीन क़रता हूँ जो लोग हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को अपनी तरह बशर कहते हैं वह नूरे ईमान से बेबहरा है। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की शान तो बयान से बाला तर है। जिस चीज़ को उस ज़ाते गिरामी से निस्बत हो जाए उसकी मिस्ल कोई नहीं हो सकता। वह बेमिस्ल है। क़ुरआन फ़रमाता है **या निसाअन्नबीये लस्तुन्ना कअहदिन मिनन्निसाइ** ऐ नबी की बीवियो! तुम और औरतों की तरह नहीं हो। मालूम हुआ कि अज़्वाजे मुतह्हरात बेमिस्ल बीवियां हैं

कुन्तुम ख़ै-र उम्मतिन ऐ मुसलमानो! तुम बेहतरीन उम्मत हो। मालूम हुआ कि उम्मते मुसतफ़ा अलैहिस्सलातु वस्सलाम बेमिस्ल उम्मत है। मदीना मुनव्वरा बेमिस्ल शहर है। क़ब्र अनवर की ज़मीन बेमिस्ल ज़मीन। जो पानी सरकार अलैहिस्सलाम की मुबारक उंगलियों से जारी हुआ वह बेमिस्ल पानी। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का पसीना मुबारक बेमिस्ल पसीना। गर्ज़ेकि जिसको उस ज़ात करीम से निस्बत हो गई वह बेमिस्ल व बेनज़ीर है तो क्या वजह है कि मंसूब इलैह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जिनकी यह सारी बहार है वह बेमिस्ल न हों।

फ़ातमा ज़हरा इसलिए अफ़्ज़ल हैं कि नबी की लाडली, वली की बीवी, शहीदों की माँ हैं रज़ि अल्लाहु अन्हा सुब्हानल्लाह कैसा तर्ज़े इस्तिदलाल है। आला हज़रत कुद्देस सिर्रहू ने ख़ूब फरमाया।

अल्लाह की सर ता बक़दम शान हैं यह
इन सा नहीं इंसान वह इंसान हैं यह
कुरआन तो ईमान बताता है इन्हें
ईमान यह कहता है मेरी जान हैं यह

सल्लल्लाहु तआला अलैहि अला आलेही व अस्हाबेही व बारिक व सल्लिम

अहमद यार खाँ
उझानवी अफ़ी अन्हु

क़हरे किबरिया बर मुंकिरीन इस्मते अंबिया

देवबन्दियों की दरीदह देहनी और तौहीने अंबिया ने लोगों को बारगाहे अंबिया में बेअदबी करने पर दिलेर कर दिया हिन्दुस्तान में एक फ़िर्क़ा वह भी पैदा हो गया जो अंबिया-ए-किराम को मआज़ल्लाह गुनहगार बल्कि मुश्रिक काफिर भी कहता है कि वह सब हज़रात ख़ाकश बदहन पहले मुश्रिक व कुफ़्फ़ार थे। और गुनाहे कबाइर के मुर्तकिब भी। फिर तौबा करके नबी हुए। मेरे पास सिर्फ़ चोबे क़लम है और कुछ औराक़। जिस से इन अक़ाइदे बातिला की तरदीद करता हूँ। और नाज़ करता हूँ कि मेरी इज़्ज़त व आबरू व ज़बान व क़लम अज़्मते अंबिया के लिए ढाल बने।

यह रिसाला बहुत ज़माना हुए **अल-फ़क़ीह** में क़िस्त वार शाए हुआ। मुसलमानों के इसरार पर जा-अल-हक़ के दूसरे एडीशन में बतौर ज़मीमा दर्ज करता हूँ। रब तआला क़बूल फर मा कर नाफ़ेअ ख़लाइक़ बनाए। इसमें एक मुक़द्दमा और दो बाब हैं।

मुक़द्दमा

गुनाह चन्द तरह के हैं। शिर्क, कुफ़्र, कबाइर, फिर सग़ाइर दो क़िस्म के। कुछ वह जो दनाअत और ज़िल्लत तौबा पर दलालत करते हैं। जैसे चोरी, कम तौलना वग़ैरह और बाज़ ऐसे नहीं। फिर इन गुनाहों में भी दो नौइअतें हैं अमदन और सहवन। और अंबिया-ए-किराम की भी दो हालतें हैं। एक ज़ुहूरे नबुव्वत से पहले का वक़्त। दूसरे नबुव्वत के बाद। अंबिया-ए-किराम शिर्क, कुफ़्र, बद अक़ीदगी, गुम्राही और ज़लील हरकतों से हर वक़्त बेफ़ज़्लेही तआला मासूम हैं कि वह हज़रात नुबुव्वत से पहले और उसके बाद अमदन सहवन एक आन के लिए भी बद अक़ीदा नहीं हो सकते। क्योंकि वह आरिफ बिल्लाह पैदा होते हैं। मदारिज और मवाहिब में है कि आदम अलैहिस्सलाम ने पैदा होते ही साके अर्श पर लिखा हुआ पाया **ला इलाहा इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह**। इससे आदम अलैहिस्सलाम का पैदाइशी आरिफ़ बिल्लाह होना भी साबित हुआ। और बग़ैर उस्ताज़ पढ़ा लिखा होना भी कि पैदा होते ही लिखी हुई तहरीर पढ़ ली। ईसा अलैहिस्सलाम ने पैदा होते ही फरमाया **इन्नी अब्दुल्लाहे आतानियल-किताबा वजअलनी नबीयन**। मैं अल्लाह का बन्दा हूँ कि उसने मुझे किताब अता फरमाई। और नबी बनाया। और फ़रमाया। **व औसानी बिस्सलाते वज़्ज़काते मा दुम्तु हैय्यन व बर्रन बेवालेदती**।

यानी मुझे ताहीने हयात, नमाज़, ज़कात का हुक्म दिया और अपनी वालिदा से सुलूक करने वाला भी हूँ। इस आयत से मालूम हुआ कि जनाब मसीह वक़्त पैदाइश ही से हिक्मते नज़री यानी रब की रुबूबियत अपनी नुबुव्वत और अताए इंजील को भी जानते हैं। और हिक्मते अमली, तहज़ीबुल-अख़लाक़ व तदबीरे मंज़िल से भी बाखबर हैं। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने बचपन शरीफ़ में ही अपनी काफिर क़ौम पर तौहीद की ऐसी क़वी हुज्जत क़ायम फरमाई कि सुब्हानल्लाह आफताब व चाँद तारों के डूबने और उनके हालात बदलने को उनकी मख़्लूक़ियत की दलील बनाया कि तारों को देख कर फरमाया **हाज़ा रब्बी** ऐ काफिरो क्या रब मेरा यह हो सकता है? और डूबता देख कर फरमाया **ला उहिब्बुल-आफ़ेलीन**। कि मैं डूबने वालों को पसन्द नहीं करता। बचपन शरीफ की इस सादी गुफ़्तगू पाक पर बू अली सीना और फाराबी की सारी मन्तिक़ कुरबान इसी को मन्तिक़ी लोग यूं बयान करते हैं। **अल-आलमु मुतग़ैय्यरुन व कुल्लु मुतग़ैय्येरिन हादिसुन लेहाज़ल-आलमु हादिसुन** फ़िर यूं कहते हैं कि –

अल-आलमु हादिसुन वला शैयुन मिनल-हादिसे बेमअबूदिन फल-आलमु लैसा बेमअबूदि। इस तर्ज़े इस्तिदलाल को रब ने पसन्दीदगी की सनद बख़्श

कर फरमाया। **व तिल्का हुज्जतुना आतैनाहा इब्राहीमा अला क़ौमेही।** हुज़ूर सैयदुल-अंबिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पैदा होते ही सज्दा फरमा कर उम्मत की शफ़ाअत फरमाई (मदारिज व मवाहिब) मालूम हुआ कि रब को अपने को अपने मरातिब और अपने दरजात को नीज़ उम्मते मरहूमा को जानते पहचानते हुए पैदा हुए हैं। बचपन शरीफ़ में बच्चों ने खेल की रग़बत दी। तो उन्हें वह जवाब दिया कि जिस पर अरस्तू व अफ़लातून की सारी हिक्मतें कुरबान। वही एक जवाब इंसानी ज़िन्दगी का असल मक़सद है फरमाया **मा खुलिक़्ना लेहाज़ा** हम इसलिए पैदा नहीं हुए। रब ने इसकी ताईद यूं में फरमाई कि **वमा ख़लक़्तुल-जिन्ना वल-इंसा इल्ला लेयअबुदून** खुद फरमाते हैं सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम **कुन्तु नबीयना व आदमु बैनल-माइ वत्तीन।** हम उस वक़्त नबी थे जब कि आदम अलैहिस्सलाम आब व गुल में जल्वा गर थे। तफ़्सीराते अहमदीया में **ला यनालु अह्दिज़्ज़ालेमीन** की तफ़्सीर में फरमाते हैं **इन्नहुम मासूमूना अनिल-कुफ़्रे क़ब्लल-वहये व बअदहू बेइज्माइन।** अंबिया-ए-किराम वही से पहले और वही के बाद कुफ़्र से मासूम हैं। इस मुख़्तसर सी गुफ़्गू से मालूम हुआ कि हज़राते अंबिया-ए-किराम आरिफ़ बिल्लाह पैदा होते हैं उनका दामने इस्मत गुम्राही से कभी भी दाग़दार नहीं हो सकता। रहे गुनाह उनकी तफ़्सील यह है कि अंबिया-ए-किराम इरादतन गुनाहे कबीरह करने से हमेशा मासूम हैं कि जान बूझ कर न तो नुबुव्वत से पहले गुनाह कबीरा कर सकते हैं और न इसके बाद हाँ भूलकर खतअन सादिर हो सक़ते हैं। मगर इस पर क़ाइम नहीं रहते। बल्कि रब की तरफ से उन्हें मुतवज्जेह कर दिया जाता है और वह इस से अलाहिदा हो जाते हैं। गुनाहे सग़ाइर में से ज़लील हरकतों से हमेशा मासूम कि नुबुव्वत से पहले और बाद उन से कभी भी ऐसी हरकतें सादिर नहीं होतीं जो दनाअत और छिछोरे पन पर दलालत करें और वह सग़ाइर जो ऐसे न हों अंबिया से सादिर हो सकते हैं। यह भी ख़्याल रहे कि यह तफ़्सील उन उमूर में है जिनका तबलीग़ से तअल्लुक़ नहीं रहे अहकामे तबलीग़ीया इनमें कमी बेशी या छुपाने से अंबिया हमेशा मासूम हैं कि यह हरकत उन से न तो जान बूझ कर सादिर हो न ख़तअन यह भी ख़्याल रहे कि गुनाहों की यह तफ़्सील दीगर अंबिया-ए-किराम के लिए है। कि इन से बाज़ गुनाहे सग़ीरह सादिर हो सकते हैं मगर सैयदुल-अंबिया हुज़ूर मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुतअल्लिक़ उम्मत का इज्मा है कि आप से कभी भी किसी क़िस्म का गुनाह सादिर नहीं हुआ। यानी ज़ुहूरे नबुव्वत से पहले और इसके बाद आपने कोई भी गुनाहे सग़ीरह या कबीरा अमदन नहीं किया। चुनांचे जानकर अहमदीया में आयत – **ला यनालु अहदिज़्ज़ालेमीन** की तफ़्सीर में है।

तफ़्सीरे रूहुल बयान आयत **मा कुन्तु तदरी मल-किताबु** की तफ़्सीर में है।

यानी हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पूछा गया कि आपने कभी बुत परस्ती की थी? फरमाया नहीं। क्या आपने कभी शराब इस्तेमाल फरमाई? फरमाया नहीं। हम तो हमेशा से जानते थे कि अह्ले अरब के यह अक़ीदे कुफ़्र हैं।

पहला बाब

इस्मते अंबिया का सुबूत

इस्मते अंबिया कुरआनी आयात और अहादीसे सहीहा इज्मा उम्मत दलाइले अक़्लिया से साबित है इसका इंकार वही करेगा जिसके पास दिल व दिमाग की आँखें ने हों।

कुरआनी आयात : (1) रब तआला ने शैतान से फरमाया। **इन्ना इबादी लैसा लका अलैहिम सुल्तानुन।** ऐ इब्लीस मेरे ख़ास बन्दों पर तेरी दस्तरस नहीं। (2) शैतान ने ख़ुद भी इक़रार दिया था कि **वलाउगवेयन्नहुम अज्मईना इल्ला इबादका मिन्हुमुल-मुख़्लेसीन।** कि ऐ मौला में उन सबको गुम्राह कर दूँगा सिवा तेरे ख़ास बन्दों के। मालूम हुआ कि अंबिया- ए-किराम तक शैतान की पहुँच नहीं। और वह उन्हें न तो गुम्राह कर सके और न बेराह चला सके। फिर उन से गुनाह क्यों कर सरज़द हों तअज्जुब है कि शैतान तो अंबिया को मासूम मान कर उनके बहकाने से अपनी माज़ूरी ज़ाहिर करे मगर इस ज़माना के बेदीन उन हज़रात को मुजिरम मानें यक़ीनन यह शैतान से बद तर हैं। (3) यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने फरमाया था **मा काना लना अन नुश्रिका बिल्लाहे मिन शैइन।** हम गरोहे अंबिया के लाइक़ नहीं कि ख़ुदा के साथ शिर्क करें। (4) हज़रत शुऐब अलैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम से फरमाया था कि **मा उरीदु अन उखालिफ़कुम इला मा अंहाकुम।** मैं इसका इरादा भी नहीं रखता कि जिस चीज़ से तुम्हें मना करूं ख़ुद करने लगूँ। मालूम हुआ कि अंबिया-ए-किराम शिर्क और गुनाह करने का कभी इरादा नहीं फरमाते यही इस्मत की हक़ीक़त है। (5) यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने फरमाया **वमा उबर्रेयु नफ़्सी इन्नन्नफ़्सा लेअम्मारतुन बिस्सूए इल्ला मा रहेमा रब्बी।** यहाँ यह न कहा कि मेरा नफ़्स बुराई का हुक्म करता है बल्कि यह फरमाया कि आम नुफ़ूस इंसानों को बुराई का हुक्म करते हैं। सिवा उन नुफ़ूस के जिन पर रब रहम फ़रमाए और वह नुफ़ूसे अंबिया हैं। मालूम हुआ कि उन हज़रात के नुफ़ूस उन्हें फरेब देते ही नहीं (6) रब तआला फरमाता है। **इन्नल्लाहे इस्तफ़ा आदमा व नूहन व आला इब्राहीमा व आला इमराना अलल-आलमीन।** जिससे मालूम हुआ कि अंबिया किराम सारे

जहान से अफ़ज़ल हैं और जहान में तो मलाइका मासूमीन भी दाखिल। मलाइका की सिफ़त यह है कि **ला यअसूनल्लाहा मा अमरहुम** वह कभी नाफ़रमानी करते ही नहीं। अगर अंबिया गुनहगार हों तो मलाइका उन से बढ़ जाएं। (7) रब तआला फ़रमाता है **ला यनालु अहदिज़्ज़ालेमीन।** हमारा अह्दे नुबुव्वत ज़ालेमीन यानी फ़ासेक़ीन को न मिलेगा। मालूम हुआ कि फ़िस्क़ व नुबुव्वत जमा हो सकते ही नहीं। कुरआने करीम ने अंबिया किराम के अक़्वाल को नक़्ल फ़रमाया। **या क़ौमे लैसा बी ज़लालतुन वला किन्नी रसूलुन मिन रब्बिल-आलमीन।** ऐ मेरी क़ौम! मुझ में बिल्कुल गुम्राही नहीं लेकिन मैं रब्बुल-आलमीन का रसूल हूँ। **ला किन्नी** से मालूम हुआ कि गुम्राही और नुबुव्वत का इज्तिमा नहीं हो सकता। क्योंकि नबुव्वत नूर है और गुम्राही तारीकी। नूर व ज़ुल्मत का इज्तिमा ना मुम्किन है।

अहादीस : (1) मिश्कात बाबुल-वसवसा में है कि हर शख़्स के साथ एक शैतान रहता है जिसे क़रीन कहा जाता है। मगर मेरा क़रीन मुसलमान हो गया लिहाज़ा अब वह मुझे नेक मशवरा ही देता है। (2) इसी मिश्कात बाबुल-वसवसा में है कि हर बच्चे को बवक़्त विलादत शैतान मारता है मगर ईसा अलैहिस्सलाम को पैदाइश में छू भी न सका। मालूम हुआ कि यह दो पैग़म्बर शैतानी वसवसा से भी महफ़ूज़ हैं। (3) मिश्कात किताबुल-गुस्ल से मालूम होता है कि अंबियाए किराम को ख़्वाब से एहतलाम नहीं होता कि इसमें शैतानी असर है। बल्कि इनकी बीबियाँ भी एहतलाम से पाक हैं। (4) अंबिया-ए-किराम को जमाही नहीं आती। क्योंकि यह भी शैतानी असर है। इसीलिए उस वक़्त ला हौला पढ़ते हैं। (5) मिश्कात शरीफ़ बाब अलामाते नुबुव्वत में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम का सीना मुबारक चाक करके उसमें से एक पारह गोश्त निकाल दिया गया और कहा गया कि यह शैतानी हिस्सा है। मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का नफ़्से कुदसिया शैतानी असर से पाक है और फिर उसे आबे ज़मज़म से धो दिया गया। (6) मिश्कात शरीफ़ बाब मनाक़िबे उमर में है कि उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु जिस रास्ते से गुज़रते हैं वहाँ से शैतान भाग जाता है। मालूम हुआ कि जिन पर पैग़म्बरों की नज़रे करम हो जाए वह भी शैतान से महफ़ूज़ रहते हैं। फिर ख़ुद इन हज़रात का क्या पूछना।

अक़्वाल उलमा-ए-उम्मत : हमेशा से उम्मते मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इस्मते अंबिया पर इज्मा रहा सिवाए फ़िर्क़ा मलऊना हश्वीया के कोई इसका मुंकिर न हुआ। चुनांचे शरह अक़ाइद नस्फ़ी, शरह फ़िक़्हे अक्बर, तफ़्सीराते अहमदीया, तफ़्सीरे रूहुल-बयान, मदारिजुन्नबुव्वह, मवाहिबे लदुनिया, शिफ़ा शरीफ़, नसीमुर्रियाज़ वग़ैरह में इसकी तस्रीह है। तफ़्सीर रूहुल-बयान आयत **मा कुन्ता तदरी मल-किताबु अल-आयह** की तफ़्सीर में है।

यानी इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि अंबिया-ए-किराम वही से पहले मोमिन थे और गुनाहे कबीरा और उन सग़ाइर से जो नफ़रत का बाइस हों नुबुव्वत से पहले मासूम थे और बाद भी चे जाएकि कुफ़्र। तफ़्सीराते अहमदीया में है।

अंबिया-ए-किराम कुफ़्र से वही से पहले और बअदहू बिल-इत्तिफ़ाक़ मासूम हैं ऐसे ही आम उलमा के नज़्दीक दीदह व दानिस्ता गुनाहे कबीरह करने से भी मासूम हैं। ग़र्ज़कि उम्मते मरहूमा का इज्मा अंबिया-ए-किराम की इस्मत पर है और यह बिल्कुल ज़ाहिर है इसलिए ज़्यादा इबारतें नक़्ल करने की ज़रूरत नहीं।

अक़्ली दलाइल : अक़्ल भी चाहती है कि अंबिया-ए-किराम कुफ़्र व फ़िस्क़ से हमेशा मासूम हों। चन्द वजूह से (1) कुफ़्र या अक़ाइद की बेख़बरी से होता है या नफ़्स की सर कशी से या शैतान के इग़वा से और हम पहले साबित कर चुके कि अंबिया-ए-किराम आरिफ़ बिल्लाह पैदा होते हैं। और उनके नुफ़ूस पाक हैं। और वह शैतानी इग़वा से महफ़ूज़ हैं। जब यह तीनों वज्हें नहीं। तो अब उन से कुफ़्र और फ़िस्क़ क्योंकर सरज़द हो। (2) फ़िस्क़ भी नफ़्से अम्मारह या शैतान के असर से है और वह हज़रात दोनों से महफ़ूज़ हैं। (3) फ़ासिक़ की मुख़ालिफ़त ज़रूरी है और नबी की इताअत फर्ज़ कि बहरहाल उनकी फरमां बरदारी की जाए। अगर नबी भी फ़ासिक़ हों तो उनकी इताअत भी ज़रूरी हो और मुख़ालिफ़त भी और यह इज्मा ज़िद्दैन है। (4) फ़ासिक़ की बात बिला तहक़ीक़ न मानना चाहिए रब तआला फरमाता है।

अगर नबी भी फ़ासिक़ हों तो उनकी बात बिला तहक़ीक़ मानना भी ज़रूरी और न मानना भी। और यह इज्तिमा नक़ीज़ैन है। (5) गुनहगार से शैतान राज़ी है इसीलिए वह हिज़्बुश्शैतान में दाख़िल है और नेक कार से रहमान ख़ुश। इसीलिए वह हिज़्बुल्लाह में से है अगर पैग़म्बर एक आन के लिए भी गुनहगार हों। तो मआज़ल्लाह वह शैतानी गिरोह में से होंगे और यह नामुम्किन है। (6) फ़ासिक़ से मुत्तक़ी अफ़्ज़ल। रब तआला फ़रमाता है। **अम नज्अलुल-मुत्तक़ीना कल-फुज्जारे** अगर नबी किसी वक़्त गुनाह करें और उस वक़्त उनका उम्मती नेकी कर रहा हो तो लाज़िम आएगा कि उम्मती उस घड़ी नबी से अफ़्ज़ल हो। और यह बातिल है। कोई उम्मती एक आन के लिए भी नबी के बराबर नहीं हो सकता। (7) बद अक़ीदा की ताज़ीम हराम है हदीस में है।

मन वक़्क़रा साहिबा बिदअतिन फ़क़द अआना अला हदमिल-इस्लाम। और जिसने बद अक़ीदह की ताज़ीम की उसने इस्लाम ढाने पर मदद दी। और नबी की ताज़ीम वाजिब। रब तआला फ़रमाता है। **व तुअज़्ज़ेरूहु व तुवक़्क़ेरूहु** अगर नबी एक आन के लिए बेदीन हों तो उनकी ताज़ीम वाजिब

भी हो और हराम भी। (8) गुनहगारों की बख़्शिश हुज़ूर के वसीला से है। रब फरमाता है। **वलौ अन्नहुम इज़ ज़लमू अंफुसहुम जाऊका।** इस आयत में आम मुज्रेमीन को बारगाहे मुस्तफ़्वी में हाजिर हो कर उनके वसीला से इस्तिग़फार करने की दावत दी गई। अगर ख़ाकश बदहन आपका दामने इफ़्फ़त गुनाहों से आलूदा हो तो बताओ फिर आपका वसीला कौन होगा? और किस के ज़रिया आपकी मआफी होगी। जो सब मुज्रिमों का वसील-ए-मग़्फ़िरत हो। ज़रूरी है कि वह ख़ुद जुर्मों से पाक हो। अगर वह भी गुनहगार हो तो फ़िर तरजीह बिला मरजेह का सवाल पैदा होगा (9) क़ीमती चीज़ क़ीमती बर्तन में रखी जाती है। मोती का डब्बा भी क़ीमती होता है। सुनहरी ज़ेवरात का बक्स भी क़ीमती। दूध का बर्तन भी हर गन्दगी व तुरशी से महफ़ूज़ रखा जाता है ताकि दूध ख़राब न हो जाए कारखान-ए-क़ुदरत में नबुव्वत बड़ी ही अनोखी और बे बहा नेअमत है। तो चाहिए कि उसका ज़र्फ़ यानी अंबिया के दिल कुफ़्र व फ़िस्क़ और हर क़िस्म की गन्दगी से पाक व साफ़ हों इसीलिए रब ने फ़रमाया **अल्लाहु यालमु हैसु यज्अलु रिसालतहू।** अल्लाह की उन नुफ़ूस को जानता है जो उसकी रिसालत के लाइक़ हैं। (10) फ़ासिक़ और फाजिर की ख़बर बग़ैर गवाही क़ाबिले ऐतमाद नहीं। अगर अंबिया-ए-किराम भी फ़ासिक़ होते तो उन्हें अपनी हर खबर पर गवाही पेश करना होती। हालांकि उनका हर क़ौल सैकड़ों गवाहियों से बढ़ कर है। हज़रत अबू ख़ुज़ैमा अंसारी ने ऊंट के मुतअल्लिक़ यही तो कहा था कि या हबीबल्लाह ऊंट की तिज़ारत जन्नत व दोज़ख़ हश्र व नश्र से बढ़ कर नहीं जब हम आप से सुन कर ईमान ले आए तो इस ज़ुबान से सुन कर यह क्यों न मान लें कि वाक़ई आपने ऊंट खरीद लिया है। जिसके इनआम में उनकी एक की गवाही दो के बराबर कर दी।

दूसरा बाब

इस्मते अंबिया पर ऐतराज़ात व जवाबात

आइंदा ऐतराज़ात के जवाबात से पहले बतौर मुक़द्दमा इज्माली जवाब अर्ज़ किए देता हूँ जिस से बहुत से ऐतराज़ात ख़ुद बख़ुद उठ जाएंगे वह यह कि इस्मते अंबिया क़तई व इज्माली मसला है। वह अहादीस जिन से पैग़म्बरों का गुनाह साबित है अगर मुतवातिर और क़तई नहीं बल्कि मशहूर या आहाद हैं वह सब मरदूद कोई भी क़ाबिले ऐतबार नहीं अगरचे सही ही हों। तफ़सीरे कबीर सूरः यूसुफ़ की तफ़सीर में है कि जो अहादीस ख़िलाफ़े इस्मते अंबिया हों वह क़बूल नहीं। रावी को झूठा मानना, पैग़म्बर को गुनहगार मानने से आसान है और वह क़ुरआनी आयात और मुतावातिर रिवायात जिन से इन

हज़रात का झूठ या कोई और गुनाह साबित होता हो सब वाजिबुत्तावील हैं कि उनके ज़ाहिरी मानी मुराद न होंगे। या कहा जाएगा कि यह वाक़ेआत अताए नबुव्वत से पहले के थे। तफ़्सीराते अहमदीया शरीफ़ आयत **ला यनालु अह्दिज़्ज़ालेमीन** की तफ़्सीर में है।

बल्कि मदारिजुन्नबुव्वह शरीफ जिल्द अव्वल बाब चहारुम में तो फरमाया कि इस क़िस्म की आयतें तशाबेहात की मिस्ल हैं जिनमें ख़ामोशी लाज़िम। देखो रब तआला का कुद्दूस, ग़नी, अलीम, क़ादिरे मुतलक़ बल्कि तमाम सिफ़ाते कमालिया से मौसूफ़ होना क़तई और इज्माई है। मगर कुछ आयतें ज़ाहिरी मानी के लिहाज़ से उसके बिल्कुल ख़िलाफ़ हैं। रब फरमाता है। **युख़ादेऊनल्लाहा वहुवा ख़ादेउहुम।** वह रब को धोखा देते हैं। रब उन्हें फरमाता है। **मकरू व मकरल्लाहु** उन्होंने मक्र किया और अल्लाह ने फरमाया **फऐनमा तुवल्लू फसम्मा वज्हुल्लाहे** जिधर तुम मुँह करो उधर ही रब का मुँह है। फरमाता है **यदुल्लाहे फ़ौक़ा ऐदीहिम** इनके हाथों पर अल्लाह का हाथ है फरमाता है **सुम्मस्तवा अलल-अरशे** फिर अल्लाह तआला अर्श पर मुस्तवी हो गया। रब तआला चेहरा, हाथ बराबरी मक्र और धोखा से पाक व मुनज़्ज़ह हैं। और इन आयतों में बज़ाहिर यही साबित हो रहा है लिहाज़ा वाजिब है इनमें तावील की जाए बल्कि इनके हकीकी मानी खुदा के सुपुर्द किए जाएं। जो कोई इन आयतों की वजह से रब को ऐबदार माने वह बेईमान है ऐसे ही जो कोई कुछ आयतों के ज़ाहिरी मानी करके अंबिया-ए-किराम को फ़ासिक़ या मुश्रिक जाने वह बेदीन है। यह एक जवाब ही इंशाअल्लाह तमाम ऐतराज़ात की जड़ काटे देगा। मगर फिर भी हम कुछ तफ़्सीली जवाब अर्ज़ किए देते हैं।

(1) इब्लीस ने भी सज्दा न करके ख़ुदा की नाफरमानी की और आदम अलैहिस्सलाम ने भी गन्दुम खा कर यही जुर्म किया। दोनों को सज़ा भी यक्सां दी गई। कि उसे फ़रिश्तों की जमाअत से और उन्हें जन्नत से खारिज कर दिया गया। जुर्म व सज़ा में दोनों बराबर हुए। बाद में आदम अलैहिस्सलाम ने तौबा करके माफी हासिल कर ली इब्लीस ने यह न किया। मालूम हुआ कि आप मासूम न थे। (मुल्हिद शहना शरीअत कानपुर)

जवाब : शैतान सज्दा न करने में मुज्रिम भी था और सज़ायाब भी हुआ। आदम अलैहिस्सलाम गन्दुम खाने में न गुनगहार थे और न उन्हें कोई सज़ा दी गई। क्योंकि शैतान ने दीदह व दानिस्ता सज्दा से इंकार ही न किया बल्कि हुक्मे रब को ग़लत समझ कर उसके बिल-मुक़ाबिल गुफ़्तगू की हिम्मत की बोला **ख़लक़्तनी मिन नारिन व ख़लक़्तहू मिन तीन।** जिसकी सज़ा में फ़रमाया गया कि **फ़ख़्रुज मिन्हा फ़इन्नका रजीमुन। व इन्ना अलैका लानती इला यौमिद्दीन।** गोया यह ज़मीन उसके लिए काले पानी की तरह

सज़ा की जगह तज्वीज़ की गई कि वह क़यामत तक यहाँ ज़लील व ख़्वार और लाहौला के कोड़े खाता फिरे। आदम अलैहिस्सलाम के मुतअल्लिक़ कुरआने करीम ने बार बार एलान फरमाया कि वह भूल गए उन्होंने गुनाह का इरादा भी न किया।

ग़र्ज़ कि इस वाक़्या का ज़िम्मेदार तो शैतान को बनाया और उनके मुतअल्लिक़ फरमाया कि वह धोखा खा गए। उन से खता हो गई। धोखा यह हुआ कि उन से रब ने फरमाया था कि तुम उस दरख़्त के क़रीब न जाना। शैतान ने कहा कि आपको खाने की मुमानेअत नहीं। वहाँ जाने से रोका गया है। आप वहाँ न जाइए मैं ला देता हूँ। आप खा लीजिए और झूठी क़सम खा गया कि फल फाइदा मन्द है और मैं आपका ख़ैर ख़्वाह आप समझे कि कोई भी रब की झूठी क़सम नहीं खा सकता। या **ला तक़रबा** मुमानेअते तंज़ीही समझे। इसकी पूरी तहक़ीक़ हमारी तफ़्सीर के पहले पारा में इसी आयत के मातहत देखो। यह तो अमलों में फ़र्क़ हुआ। अब रहा ज़मीन पर आना। रब तआला ने उन्हें ज़मीन ही की ख़िलाफ़त के लिए पैदा किया था कि फरमाया था **इन्नी जाइलुन फ़िल-अर्ज़े ख़लीफ़तन** जन्नत में तो कुछ रोज़ इसलिए रखा गया था कि वहाँ के मकानात और बाग़ात देख कर इसी तरह ज़मीन को आबाद करें गोया वह जगह उनके लिए ट्रेनिंग थी। किसी को ट्रेनिंग स्कूल में हमेशा नहीं रखा जाता। उनको रुला कर इसलिए भेजा गया कि तमाम फ़रिश्तों ने सिवाए गिरया व ज़ारी सारी इबादतें की थीं। दर्दे दिल ही तो वह चीज़ है जिसकी वजह से इंसान मलाइका से अफ़्ज़ल हुआ। जन्नत का बहाना था दर हक़ीक़त अपने इश्क़ में रुलाना था।

दर्दे दिल के वास्ते पैदा किया इंसान को
वरना ताअत के लिए कुछ कम न थे कर्रो ब्यां
ऐ ख़्याले यार क्या करना था और क्या कर दिया
तू तो पर्दा में रहा और मुझको रुसवा कर दिया

यह राज़ वह समझे जो लज़्ज़ते इश्क़ से वाक़िफ़ हो। रब ने शैतान से कहा था **उखरुज मिन्हा** और यहाँ फरमाया गया **इहबितू मिन्हा जमीअन।** जिसमें बताया कि तुम अरसा के लिए ज़मीन मे भेजे जा रहे हो। फिर अपनी करोड़हा औलाद के साथ वापस यहीं आओगे यानी दूर जा रहे हो और करोड़ों को साथ लाओगे। बुज़ुर्गाने दीन फरमाते हैं कि आदम अलैहिस्सलाम ने हमको जन्नत से न निकाला बल्कि हम ने उन्हें वहाँ से अलाहिदा किया क्योंकि उनकी पुश्त में कुफ़्फ़ार फुस्साक़ सब ही की रूहें थीं। जो कि जन्नत के क़ाबिल न थे हुक्म हुआ कि ऐ आदम नीचे जा कर इन खुबसा को छोड़ आओ। फिर आपकी जगह यही है। (मिर्क़ात **बाबुल-ईमान बिल-क़दरे** व **रूहुल-बयान** आयत **फ़अज़ल्लहुमश्शैतानु**)

(2) शैतान का ज़मीन में आना परदेस में आना है। मगर आदम अलैहिस्सलाम का यहाँ आना प्रदेश में आना नहीं क्योंकि आदम जिस्म और रूह के मज्मूआ का नाम है और उनका जिस्म चूंकि ज़मीन पर और मिट्टी से बना लिहाज़ा ज़मीन उनका वतने जिस्म हुई और आलमे अरवाह। गोया वतने रूह है और वतने रूह से वतने जिस्म की तरफ आए। जो इंसान मर कर जन्नत में गया वह परदेस में नहीं बल्कि वतने जिस्म से वतने रूह में गया। मगर शैतान की पैदाइश आग से है लिहाज़ा ज़मीन उसके लिए परदेस हुआ।

(3) अगर आदम अलैहिस्सलाम का ज़मीन पर आना अज़ाब होता है। तो यहाँ उन्हें ख़लीफ़ा न बनाया जाता। इनके सर पर ताजे नुबुव्वत न रखा जाता। उनकी औलाद में औलिया व अंबिया ख़ुसूसन सैयदुल-अंबिया सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पैदा न फरमाए जाते। मुल्ज़िम को माफी दे कर क़ैद से निकालते हैं। शाही महल में ला कर फिर उस पर इंआमात की बारिश करते हैं न कि जेल खाना में ही रख कर। हक़ीक़त यह है कि बड़ों की ज़ाहिरी ख़ता छोटों के लिए अता होती है दुनिया और यहाँ की सारी नेअमतें उस ख़ताए अव्वल का ही सदक़ा हैं। लुत्फ़ यह है कि आदम अलैहिस्सलाम के लिए दान-ए-गन्दुम खाना खता क़रार दिया गया। और उनकी औलाद के लिए वही ग़िज़ा तज्वीज़ हुई।

(2) हज़रत आदम व हव्वा ने अपने एक बेटे का नाम अब्दुल-हारिस रखा। हारिस शैतान का नाम है उसको क़ुरआने करीम ने फरमाया **फ़लम्मा अताहुमा सालेहन जअला लहू शुरकाआ।** जिससे मालूम हुआ कि आदम अलैहिस्सलाम का यह काम शिर्क था साबित हुआ कि पैग़म्बर शिर्क कर लेते हैं। हाकिम की रिवायत में है कि इस आयत में हज़रत आदम व हव्वा मुराद हैं।

जवाब : आदम अलैहिस्सलाम इस क़िस्म के ऐब से बिल्कुल पाक हैं। मोतरिज़ ने इस आयत से धोखा दिया। बहुत से मुफ़स्सेरीन फरमाते हैं कि **जअलन** का फाइल **कुसा** और उसकी बीवी है। क्योंकि **ख़लक़कुम मिन नफ़्सिव्वाहिदतिन व जअला मिन्हा ज़ौजहा** के मानी यह हैं कि ऐ क़ुरैश रब ने तुम्हें एक जान यानी कुसन से पैदा फरमाया और उस कुसय की बीवी उसकी जिन्स से बनाई। कुसय ने यह ग़ज़ब किया कि अपने रब से दुआएं करके बेटा मांगा था। और उसका नाम अब्दुल-हारिस रख दिया (तफ़्सीरे ख़ज़ाइने इरफान) इस सूरत में कोई ऐतराज ही नहीं और कुछ ने फरमाया कि ज़मीर **जअला** से पहले दो मुज़ाफ पोशीद हैं। और इसका फाइल औलादे आदम व हव्वा ही हैं यानी आदम व हव्वा की बाज़ औलाद ने शिर्क शुरू कर दिया (देखो रूहुल-बयान व मदारिक) इसी लिए आगे सीग़ा जमा का इरशाद हुआ। **फतआलल्लाहु अम्मा युश्रेकूना।** अगर यह फ़ेअल हज़रत आदम व हव्वा का होता तो **युश्रिकाने** तस्निया का सेग़ा होता। नीज़ एक मामूली सी

ख़ता यानी गन्दुम खा लेने पर एताब हो गया था तो चाहिए था कि शिर्क करने पर बड़ा सख़्त अज़ाब होता। मगर बिल्कुल न हुआ। हाकिम की यह रिवायत बिल्कुल मो'तबर नहीं क्योंकि वह खबरे वाहिद है और इस्मते पैग़म्बर यक़ीनी व क़तई।

(3) रब तआला फ़रमाता है। **व असा आदमु रब्बहू फ़ग़वा** आदम अलैहिस्सलाम ने रब की नाफरमानी की पस गुम्राह हो गए। इससे आदम अलैहिस्सलाम का गुनाह और गुम्राही दोनों मालूम हुए।

जवाब : यहाँ मजाज़न ख़ता को इस्यान फरमाया गया और **ग़वा** के मानी गुम्राही नहीं बल्कि मक़्सूद का न पाना है। यानी हयाते दाइमी के लिए गन्दुम खाया था वह उनको हासिल न हुई। बल्कि गन्दुम से बजाए नफ़ा के नुक़्सान हुआ यानी अपने मक़्सद की तरफ राह न पाई। देखो रूहुल-बयान यही आयत जब रब ने उनके भूल जाने का बार बार एलान फरमाया तो असा से गुनाह साबित करना कलामुल्लाह में इख़्तिलाफ़ पैदा करना है।

(4) इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने चाँद सूरज बल्कि तारों को अपना खुदा माना कि फरमाया **हाज़ा रब्बी** और यह सरीही शिर्क है मालूम हुआ कि आपने पहले शिर्क किया फिर तौबा की।

जवाब : इसका जवाब मुक़द्दमा में गुज़रा कि इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम से बतरीक़े सवाल फ़रमाया कि क्या यह मेरा रब है। फिर खुद ही इसका जवाब मअ दलील भी इरशाद किया कि **ला उहिब्बुल-आफ़ेलीन** क्योंकि इससे पहले इरशाद हुआ **वकज़ालिका नुरेया इब्राहीमा मलकूतस्समावाते वल-अर्ज़े वलेयकूना मिनल-मुक़िनीन**। फिर सितारे देखने का वाक़या बयान हुआ और बाद में फरमाया **व तिल्का हुज्जतुना आतैनाहा इब्राहीमा अला क़ौमेही**। इस तर्तीब से मालूम हुआ कि मलकूते आलम देखने के बाद सितारों का वाक़या हुआ और रब ने इस कलाम की तारीफ फरमाई। अगर यह बात शिर्क थी तो तारीफ फरमाना कैसा? फिर तो सख़्त एताब होना चाहिए था।

(5) इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने तीन बार झूठ बोला कि आप तन्दरुस्त थे मगर क़ौम ने फरमाया **इन्नी सक़ीमुन** (कुरआन) मैं बीमार हूँ (2) खुद बुतों को तोड़ा मगर क़ौम के पूछने पर फरमाया **बल फअलहू कबीरुहुम हाज़ा** इस बड़े बुत ने यह काम किया। (3) अपनी बीवी हज़रत सारा को फरमाया **हाज़ेही उख़्ती** यह मेरी बहन हैं और यक़ीनन झूठ बोलना गुनाह है मालूम हुआ कि आप मासूम नहीं।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि बहालते मजबूरी जब कि जान का खतरा हो तो झूठ गुनाह नहीं। हत्ता कि ऐसी मजबूरी में मुँह से कुफ़्र भी निकाल देने की इजाज़त है। **इल्ला मन उक्रेहा व क़ल्बुहू मुत्मइन्नुन**

बिल-ईमान। जिन मौक़ों पर आप ने यह कलाम फरमाया वहाँ या तो ख़तरा जान थ या ख़तरा इस्मत वह ज़ालिम बादशाह आप से हज़रत सारा को जबरन छीनना चाहता था और दूसरे मौक़ों पर आपको खतरा जान थ इसलिए यह फरमाया (रूहुल-बयान आयत **बल फ़अलहू कबीरुहुम**) लिहाज़ा यह फ़ेअले गुनाह न हुआ। दूसरे यह कि इन में से कोई कलाम झूठ नहीं बल्कि इसमें बईद मानी मुराद लिए गए हैं जिसे तौरिया कहते हैं तौरिया ज़रूरतन जाइज़ है। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक बुढ़िया से फरमाया कोई बुढ़िया जन्नत में न जाएगी। देखो एक शख़्स ने ऊंट मांगा तो फरमाया कि तुझे ऊंट का बच्चा दूंगा। एक सहाबी की आंखों पर हाथ रख कर फरमाया कि इस ग़ुलाम को कौन ख़रीदता है? वग़ैरह (मिश्कात **बाबुल-मज़ाह**) हज़रत सारा को बहन फरमाने से दीनी बहन मुराद थी न कि नसबी। जैसे कि दाऊद अलैहिस्सलाम के पास दो फ़रिश्ते बशक्ल मुद्दई मुद्दआ अलैह हाज़िर हुए और अर्ज़ किया कि **हाज़ा अख़ी लहू तिस्उन व तिस्ऊना नअजतन।** यह मेरा भाई है जिसके पास 99 बकरियां हैं यहाँ भाई और बकरियों के मजाज़ी मानी मुराद हैं। ऐसे ही आपका यह फरमाना कि **इन्नी सक़ीमुन** इसके मानी हैं मैं बीमार होने वाला हूँ न कि फिल-हाल बीमार जैसे **इन्नका मैय्यितुन व इन्नहुम मैय्यितूना या सक़ीमुन** दिली बीमारी यानी नाराज़ी व रंज मुराद है। यानी मेरा दिल तुम से नाराज़ है। इसी तरह **बल फ़अलहू कबीरुहुम** में कबीर से रब तआला मुराद है और हाज़ा से उसी तरफ इशारा है क्योंकि कुफ़्फ़ार रब तआला को बड़ा ख़ुदा और बुतों को छोटे माबूद समझते थे। यानी यह काम उस रब का है जिसे तुम इन सबसे बड़ा समझते हो। नबी का काम रब का ही काम है वह समझे कि इस से बड़े से बड़ा बुत मुराद है या **फ़अलहू** शक के तरीक़ा पर फ़रमाया यानी बड़े बुत ने किया होगा और शक इंशा है जिस में झूठ सच का एहतमाल नहीं। सबसे बड़ी बात यह है कि रब ने यह वाक़ेआत बयान फरमाते हुए इब्राहीम अलैहिस्सलाम पर कोई एतबान न फरमाया बल्कि उन्हें पसन्दीदगी की सनद अता फरमाई। चुनांचे बुत शिकनी के बयान से पहले फरमाया **वलक़द आतैना इब्राहीमा रुश्दहू** मालूम हुआ कि आपका यह फ़ेअल रुश्द व हिदायत था और ज़ाहिर है कि झूठ रुश्द नहीं। बीमारी का वाक़या बयान फ़रमाते हुए इरशाद फ़रमाया। **इज़ जाआ रब्बहू बेक़ल्बिन सलीमिन इज़ क़ाला लेअबीहे** जिससे मालूम हुआ कि यह कलाम सलामते तबीअत पर दलालत करता है और झूठ बीमारी है न कि सलामती।

(6) दाऊद अलैहिस्सलाम ने पराई औरत। यानी औरिया की बीवी को नज़रे बद से देखा जिसका वाक़या सूरः **साद** में है और यह फेअल यक़ीनन जुर्म है।

जवाब : मुअर्रेख़ीन ने दाऊद अलैहिस्सलाम के क़िस्सा में बहुत कुछ ज़्यादती कर दी है और जो कुछ अहादीसे आहाद में है वह भी ना माकूल। इसी लिए हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने एलान फरमाया था कि जो कोई दाऊद अलैहिस्सलाम का क़िस्से कहानियों की तरह बयान करेगा मैं उसे एक सौ साठ कोड़े लगाऊंगा। यानी तोहमत की सज़ा 80 कोड़े हैं उसको दुगने लगेंगे (रुहुल-बयान सूरः **साद** क़िस्स-ए-दाऊद) वाक़या सिर्फ़ यह था कि एक शख़्स औरिया ने एक औरत को निकाह का पैग़ाम दिया। दाऊद अलैहिस्सलाम ने भी उसे पैग़ाम पर पैग़ाम दे दिया उसने आपके साथ निकाह कर लिया और यह शख़्स निकाह न कर सका। चुनांचे तफ़्सीराते अहमदीया आयत **ला यनालु अह्दिज़्ज़ालेमीन** की तफ़्सीर में है।

मगर चूंकि इस जाइज़ काम से भी नुबुव्वत की शान बुलन्द व बाला है। इसलिए रब तआला ने उनके एहतराम को ज़्यादा फरमाते हुए दो फ़रिश्तों को एक फर्ज़ी मुक़द्दमा लेकर भेजा और उन्होंने अपनी तरफ निस्बत करके आपसे फैसला करा कर इशारतन समझा दिया। सुब्हानल्लाह क्या शान है और अंबिया का रब तआला के हां कितना एहतराम कि निहायत उम्दा तरीक़ा से उन्हें मुआमला समझाया गया। रब तो उनकी यह अज़्मत फरमाए और यह बेदीन उन हज़रात पर नज़रे बद का इत्तेहाम लगाएं। ख़ुदा की पनाह।

(7) यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने अज़ीज़े मिस्र की बीवी ज़ुलेखा से गुनाह का इरादा किया जिसे रब फ़रमा रहा है। यानी ज़ुलेखा ने यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का और उन्होंने ज़ुलेखा का इरादा कर लिया अगर अपने रब की बुरहान न देखते तो न मालूम क़िया हो जाता। देखो यह कितना बड़ा गुनाह था जो यूसुफ़ अलैहिस्सलाम से सादिर हुआ?

जवाब : यूसुफ़ अलैहिस्सलाम इरादा गुनाह तो क्या इस ख़्याल से भी महफ़ूज़ रहे जो कहे कि उन्होंने इसका इरादा कर लिया था वह काफिर है। रूहुल-बयान में इसी आयत की तफ़्सीर है।

रहा तुम्हारा एतराज़ इसका जवाब यह है कि इस आयत की दो तफ़्सीरें हैं एक यह कि **वलक़द हम्मत बेही** पर वक़्फ़ कर दो और **हम्मा बेहा** से अलाहिदा आयत शुरू हो मानी यह हुए कि बेशक ज़ुलेखा ने यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का क़स्द कर लिया और वह भी क़स्द कर लेते अगर अपने रब की दलील न देखते। अब कोई ऐतराज़ न रहा यह मानी नक़्लन व अक़्लन हर तरह सही हैं। ख़ाज़िन ने फरमाया कि असल इबारत यह है। **व लौला रआ बुरहाना रब्बेही लहम्मा बेहा** मदारिक शरीफ़ में है कि –

क़ारी को चाहिए कि **बेही** पर वक़्फ़ करे और **हम्मा बेहा** से आयत शुरू करे और यही बात क़रीने क़्यास भी है क्योंकि क़ुरआने करीम ने इस मक़ाम

पर जुलेखा की तो तैयारियां ब्यान फरमाईं **व ग़ल्लक़तिल-अबवाबा वक़ालत हैता लका** कि उसने आपको हर तरह राग़िब करने की कोशिश भी की और बुलाया भी दरवाज़ा भी बन्द कर लिया। मगर यूसुफ अलैहिस्सलाम की बेज़ारी नफ़रत व इस्मत का भी ज़िक्र फरमाया। **क़ाला मआज़ल्लाहे इन्नहू रब्बी अहसना मस्वाया इन्नहू ला युफ़्लेहुज़्ज़ालेमूना।** खुदा की पनाह वह मेरा मुरब्बी है उसके मुझ पर एहसानात हैं। ऐसी हरकत ज़ुल्म है और ज़ालिम कामयाब नहीं। और फिर फरमाया **कज़ालिका लेनस्रिफा अन्हुस्सूआ वल-फ़ह्शाआ।** फ़हशा से ज़िना और सू से इरादा नामज़द है। मालूम हुआ कि रब ने इराद-ए-ज़िना से भी उनको महफ़ूज़ रखा। आख़िर कार ज़ुलेखा ने भी यही कहा कि **अल-आना हसहसल-हक़्क़ु अना रावत्तुहू अन नफ़्सेही व इन्नहू लमिनस्सादेक़ीन।** कि मैंने ही उन्हें रग़बत की कोशिश की थी। वह तो सच्चे हैं। बल्कि शीर ख़्वार बच्चे से भी उनकी पाक दामनी और ज़ुलेखा की खताकारी की गवाही दिलवा दी। कि **व शहेदा शाहिदुन मिन अहलेहा** अज़ीज़े मिस्र ने भी यही कहा। **यूसुफु आरिज अन हाज़ा वस्तग़्फ़िरी लेज़ंबिका इन्नके कुन्ते मिनल-ख़ातेईन।** ऐ ज़ुलेखा तुम अपने गुनाह से तौबा करो तुम ही खताकार हो देखो शीर ख़्वार बच्चे अज़ीज़े मिस्र ख़ुद ज़ुलेखा बल्कि खुद रब तआला ने उनके बेगुनाह होने पर गवाहियाँ दीं। अगर ज़ुलेखा की तरह वह भी इरादा गुनाह कर लेते तो आप भी मुल्ज़िम होते और यह गवाहियाँ ग़लत हो जातीं। हाँ सिर्फ़ यह होता कि ज़ुलेखा ने जुर्म की इब्तिदा की मगर बाद में आप भी शरीक हो गए नीज़ अगर यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने इराद-ए-ज़िना किया होता तो उनकी तौबा और इस्तिग़्फ़ार का ज़िक्र ज़रूर आता। तफ़्सीरे मदारिक में है। **वले अन्नहू लौ वजेदा मिन्हु ज़ालिका लज़ुकिरत तौबतुहू व इस्तिग़फ़ारुहू।**

ग़र्ज़कि इस आयत के यह मानी करना बहुत बेहतर है कि वह भी इरादा कर लेते। अगर रब की बुरहान न देखते। तफ़्सीरे कबीर ने फरमाया **लौ काना** जवाब इस पर मुक़द्दम भी हो सकता है जैसे आयत में है। **इन कादत लेतुब्दी बेही लौला अन रबतना अला क़ल्बेहा।** (कबीर आयत **वलक़द हम्मत बेही**)।

दूसरी तफ़्सीर यह है कि **बेही** पर वक़्फ़ न करो बल्कि **बेहा** तक एक ही जुमला मानो। और आयत के मानी यह हों कि बेशक ज़ुलेखा ने यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का और उन्होंने ज़ुलेखा का **हम** कर लिया। लेकिन इन दोनों **हमों** में फ़र्क़ करना ज़रूरी है। **हम्मत बेही** में **हम्मा** के मानी इरादा ज़िना हैं और **हम्मा बेहा** में इसके मानी हैं क़ल्ब की ग़ैर इख़्तियारी रग़बत जिसके साथ इरादा नहीं होता यानी ज़ुलेखा ने तो यूसुफ़ अलैहिस्सलाम का इरादा किया और उनके दिल में रग़बत ग़ैर इख़्तियारी पैदा हुई जो कि न गुनाह है

न जुर्म जैसे कि रोज़ा में ठंडा पानी देख कर उस तरफ दिल राग़िब तो होता है मगर इसके पी लेने का इरादा तो क्या ख़्याल तक नहीं होता। सिर्फ़ ठंडा-ठंडा पानी अच्छा मालूम होता है अगर दोनों **हम्मों** के एक ही मानी होते तो दो जगह यह लफ़्ज़ न बोला जाता बल्कि **वलक़द हम्मा** तस्निया से कह देना काफी थी। यानी इन दोनों ने इरादा कर लिया। देखो **मकरू** व **मकरल्लाहु** कि यहाँ मक्र के मानी ही और हैं और दूसरे मक्र का मक़सद ही कुछ और। तफ़्सीर ख़ाज़िन में है।

क़ालल-इमामु फ़ख़्रुद्दीन अन्ना यूसुफ़ा अलैहिस्सलामु काना बरीअन **मिनल-अमलिल-बातिले वल-हम्मिल-मुहर्रमे।** ख़्याल रहे कि ज़ुलेखा ने दरवाज़ा पर अज़ीज़े मिस्र को देख कर यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को ज़िना की तोहमत न लगाई बल्कि इराद-ए-ज़िना की। कि कहा **क़ालत मा जज़ाओ काना बरीअन मन अरादा बेअहलिका सूअन इल्ला अन युस्जना।** जो तेरी बीवी के साथ बुराई का इरादा करे उसकी सज़ा जेल के सिवा और क्या है इसी की तरदीद यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने फरमाई कि **हिया रवत्तनी** अन **नफ़्सी** बदकारी का इरादा उसी ने किया था। इसकी तर्दीद शीर ख़्वार बच्चा ने भी की। और उसकी तर्दीद ख़ुद अज़ीज़े मिस्र ने क़मीस मुबारक फटी हुई देख कर की। कि कहा **इन्नहू मिन कैदेकुन्ना** और इसकी तर्दीद मिसरी औरतों ने भी की। और इसकी तर्दीद आख़िर कार ख़ुद ज़ुलेखा ने भी करके अपना जुर्म क़बूल कर लिया अब अगर **हम्मा बेहा** के मानी हों कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने इराद-ए-ज़िना कर लिया था तो लाज़िम आता है कि रब तआला ने ज़ुलेखा की ताईद की। और उन सब हज़रात की तर्दीद। और यह कलाम के मक़सद के ख़िलाफ़ है। यह तक़रीर बहुत ख़्याल में रहे इंशाअल्लाह काम आएगी।

(8) मूसा अलैहिस्सलाम ने एक क़िब्ती को जान से मार दिया। और फरमाया **हाज़ा मिन अमलिश्शैताने** कि यह शैतानी काम है। मालूम हुआ कि आपने ज़ुल्मन क़त्ल किया जो कि बड़ा जुर्म है।

जवाब : आपका इरादा क़त्ल का न था बल्कि क़िब्ती ज़ालिम से मज़्लूम इसराईली को छुड़ाना था। जब क़िब्ती ने न छोड़ा। आपने हटाने के लिए चपत लगा दी। वह ताक़त नबी की न बर्दाश्त कर सका मर गया। तो यह क़त्ले ख़ता हुआ और अंबिया से खता हो सकती है। और यह वाक़िया अताए नुबुव्वत से पहले का है। रूहुल-ब्यान में है। **काना हाज़ा क़ब्लन्नबुव्वते** और वह क़िब्ती काफिर हरबी था जिसका क़त्ल जुर्म नहीं। आपने तो एक ही क़िब्ती को मारा कुछ दिनों बाद तो सारे ही क़िब्ती ग़र्क़ कर दिए गए रहा इस फ़ेअल को अमले शैतान फरमाना। यह आपकी इंतिहाई कसर नफ़्सी और आजिज़ी का इज़्हार है। कि ख़िलाफ़े औला काम को भी अपनी ख़ता समझा

यानी यह काम वक़्त से पहले हो गया। जब किश्तियों की हलाकत का वक़्त आया तो यह भी हलाक होता **फ़ग़फ़र लहू** और **ज़लम्तु नफ़्सी** से धोखा न खाओ कि यह अल्फ़ाज़ खता पर भी बोले जाते हैं।

(9) रब तआला ने हमारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से फरमाया **व वजदका ज़ाल्लन फ़हदा** मालूम हुआ कि आप भी पहले गुम्राह थे बाद को हिदायत मिली।

जवाब : यहाँ जो कोई **जाला** के मानी गुम्राह करे वह ख़ुद गुम्राह है। रब फ़रमाता है **मा जल्ला साहिबुकुम वमा ग़वा।** तुम्हारे महबूब सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम न कभी गुम्राह हुए न बहके यहाँ **ज़ाल** के मानी वारफ़्त-ए-मुहब्बते इलाही हैं और हिदायत से मुराद दरजा सुलूक है। यानी रब ने आपको अपनी मुहब्बत में सरशार और वारफ़्ता पाया तो आपको सुलूक अता फरमाया बिरादराने यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने याकूब अलैहिस्सलाम से अर्ज़ किया था **इन्नका लफ़ी ज़लालिकल-क़दीमे** या **इन्नका लफ़ी ज़लालिम-मुबीन।** यहाँ **ज़ल्ला** बामानी वारफ़्तगी मुहब्बत हैं। शैख़ अब्दुल-हक़ ने मदारिजुन्नबुव्वह जिल्द अव्वल बाब पंजुम में फ़रमाया कि अरबी में **जाल** वह ऊंचा दरख़्त है जिससे गुमे हुए लोग हिदायत पाएं यानी ऐ महबूब हिदायत देने वाला बुलन्द व बाला दरख़्त रब ने तुम्हीं को पाया कि जो अर्श फ़र्श हर जगह से नज़र आए लिहाज़ा तुम्हारे ज़रिया सबको हिदायत दे दी यानी हुदा का मफ़ऊल आम लोग हैं न कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और भी इसके बहुत से मानी किए गए हैं।

(10) रब फरमाता है। **लेयग़्फ़िरा लकल्लाहु मा तक़द्दमा मिन जंबिका व मा तअख़्ख़रा।** यानी ताकि रब तआला तुम्हारे अगले पिछले गुनाह माफ करे। मालूम हुआ कि आप गुनहगार थे हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम भी हमेशा अपने लिए दुआए मग़्फ़िरत करते थे अगर गुनहगार न थे तो इस्तिग़्फ़ार कैसी?

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। एक यह कि मग़्फ़िरत से मुराद इस्मत और हिफ़ाज़त है मतलब यह है कि अल्लाह आपको हमेशा गुनाहों से महफ़ूज़ रखे। रूहुल-बयान में है।

दूसरे यह कि जन्ब से नबुव्वत से पहले की ख़ताएं मुराद हैं। तीसरे यह कि **जंबिका** में एक मुज़ाफ़ पोशीदा है यानी आपकी उम्मत के गुनाह जैसा कि **लका** फरमाने से मालूम हुआ। यानी तुम्हारी वजह से तुम्हारी उम्मत के गुनाह माफ किए। अगर आपके गुनाह मुराद होते तो **लका** से क्या फाइदा होता। (रूहुल-बयान व ख़ाज़िन) इस आयत की तफ़्सीर दूसरी आयत है **व लौ अन्नहुम इज़ ज़लमू** कभी गुनाह की निस्बत गुनहगार की तरफ होती है और कभी बख़्शिश के ज़िम्मादार की तरफ जैसे मुक़द्दमा कभी मुज्रिम की

तरफ मंसूब होता है और कभी वकील की तरफ कि वकील कहता है कि यह मेरा मुक़द्दमा है जिसका मैं ज़िम्मेदार हूँ। यहाँ निस्बत दूसरी तरह की है यानी आपके ज़िम्मा वाले गुनाह जिनकी शफ़ाअत के आप ज़िम्मेदार हैं।

(11) हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से रब ने फरमाया। **व लौला अन सब्बतनाका लक़द कित्ता तरकनु इलैहिम शैअन क़लीलन।** अगर हम आपको न साबित क़दम रखते तो क़रीब था कि आप कुफ़्फ़ार की तरफ कुछ माइल हो जाते। इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम कुफ़्फ़ार की तरफ माइल हो चले थे मगर रब ने रोका। और कुफ़्र की तरफ मैलान भी गुनाह है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि इस में शर्त व जज़ा है यानी यह क़ज़िया शर्तीया है जिसमें दोनों मुक़द्दमों का होना तो क्या इम्कान भी ज़रूरी नहीं। रब फरमाता है : **लौ काना लिर्रहमाने वलदुन फ़अना अव्वलुल-आबेदीन।** अगर रब का बेटा होता तो उसका पहला पुजारी मैं होता। न ख़ुदा का बेटा होना मुम्किन और न नबी अलैहिस्सलाम का उसकी पूजा करना। ऐसे ही यहाँ न रब तआला का हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को महफ़ूज़ न रखना मुम्किन और न आपका उनकी तरफ माइल होना मुम्किन। दूसरे यह कि यहाँ फरमाया गया कि अगर हम आपको पहले ही से मासूम और साबित क़दम न फरमा चुके होते तो आप उनकी तरफ किसी क़द्र झुकने के क़रीब हो जाते क्योंकि उनके मक्र व फरेब बहुत सख़्त ख़तरनाक थे यानी चूंकि आप मासूम हैं लिहाज़ा आप कुफ़्फ़ार की तरफ न झुके बल्कि झुकने के क़रीब भी न हुए इससे तो आपकी इस्मत साबित हुई। देखो ख़ाज़िन, मदारिक, रूहुल-ब्यान। तीसरे यह कि एक तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की तबीअते मुबारका है दूसरे आपकी नबुव्वत और इस्मते इलाही इस आयत से मालूम हुआ कि नुबुव्वत व इस्मत से क़तअ् नज़र करते हुए भी आपकी फ़ितरत पाक ऐब और गुनाहों से ऐसी पाक है जिसमें उसकी सलाहियत ही नहीं क्योंकि आपकी रूहानियत बशरीयत पर ग़ालिब है यानी अगर हम आपको मासूम भी न बनाते तब भी आप कुफ़्फ़ार से मिलते नहीं, उनकी तरफ झुकते नहीं बल्कि कुछ झुकने से क़रीब हो जाते। अब जबकि फितरते सलीमा पर रब का यह करम हुआ कि आपको मासूम भी बनाया, सरे मुबारक पर नुबुव्वत का ताज भी रखा अब तो सुब्हानल्लाह क्या ही कहना। किसी क़ुसूर की गंजाइश ही नहीं। इसकी तफ़्सीरे में रूहुल-बयान में है।

(12) रब तआला फरमाता है। **मा कुन्ता तदरी मल-किताबु वलल-ईमान।** ऐ नबी अलैहिस्सलाम आप न जानते थे कि किताब क्या चीज़ है और न यह कि ईमान क्या है। मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम पैदाइशी आरिफ़ बिल्लाह नहीं। आपको तो ईमान की भी ख़बर न थी।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। एक यह कि यहाँ इल्म की नफी नहीं बल्कि दिरायत यानी अटकल और क़यास से जानने की नफी है। पूरी आयत यह है। **वका ज़ालिका औ हैना इलैका रूहन मिन अम्रेना मा कुन्ता तदरी मल-किताबु** यानी हमने आप पर अपने फ़ज़्ल से कुरआन वही किया। आप खुद बखुद न जानते थे यानी इस इल्म का ज़रिया वही इलाही है न महज़ अटकल व क़यास। दूसरे यह कि इससे पैदाइश मुबारक का हाल नहीं बयान हो रहा है। बल्कि नूरे मुहम्मदी की पैदाइश का हाल है यानी हम ने आपको आलमे अरवाह में सफेद और सियाह पैदा फरमाया था। फिर इस पर उलूम के नक़्श व निगार फरमा कर नुबुव्वत का ताज सर पर रख कर दुनिया में भेजा। आप आलमे अरवाह में ही नबी थे खुद फरमाते हैं। **कुन्तु नबीयन व आदमु बैनल-माए वत्तीन।** हम उस वक़्त नबी थे जब कि आदम अलैहिस्सलाम मिट्टी और पानी में जल्वागर थे। तीसरे यह कि ईमान और कुरआन के तफ़्सीली अहकाम मुराद हैं यानी आप वही से पहले अहकामे इस्लामी तफ़्सीली वार न जानते थे इसकी तफ़्सीर में रूहुल-बयान में है। **अइल-ईमाना बेतफ़ासीले मा फ़ी तज़ाईफ़िल-किताबे** फिर फरमाते हैं। **लेअन्नहू अलैहिस्सलामु अफ़्ज़लु मिन यहया व ईसा व क़द ऊतिया कुल्लल-हिक्मते वल-इल्मे सबीयन।** यानी नबी अलैहिस्सलाम यह्या और ईसा अलैहिस्सलाम से अफ़्ज़ल हैं और उन्हें तो इल्म व हिक्मत बचपन ही में अता हो गई थी। तो यह क्योंकर मुम्किन है कि आप बचपन शरीफ में इल्म से खाली रहे हों।

(13) रब फरमाता है। **फ़अज़ल्लहुमश्शैतानु** आदम हव्वा **अलैहिमस्सलाम** को शैतान ने फिसला दिया। मालूम हुआ कि शैतान का दाँव अंबिया पर चल जाता है। फिर तूने क्यों कहा कि शैतान उन तक नहीं पहुँच सकता।

जवाब : हमने यह कहा है कि शैतान उन्हें गुम्राह नहीं कर सकता और न उन से उम्दा गुनाहे कबीरा करा सकता है। उसने खुद कहा था। **लउग़वेयन्नहुम अज्मईन इल्ला इबादका मिन्हुमुल-मुख़्लेसीन** और यहाँ है **फ़अज़ल्लाहुमश्शैतानु** गुम्राही और चीज़ है और फिसलाना और चीज़ है।

(14) यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के भाईयों को बहुत से लोगों ने पैग़म्बर माना है हालांकि उन्होंने बड़े-बड़े गुनाह किए बेकुसूर भाई को सताना आज़ाद भाई को बेच कर उसकी क़ीमत खाना, अपने वालिद से झूठ बोल कर उन्हें चालीस साल तक रुलाना ग़र्ज़ेकि जुर्मों की इंतिहा कर दी और फिर भी नबी हुए मालूम हुआ कि नबी का मासूम होना शर्त नहीं।

जवाब : जम्हूर उलमा ने उन्हें पैग़म्बर न माना। हाँ एक जमाअत ने कुछ ज़ईफ़ दलाइल से उनकी नबुव्वत का वहम किया है इसी लिए हमने मुक़द्दमा में अर्ज़ किया कि अंबिया-ए-किराम का नुबुव्वत से पहले बद अक़ीदगी से पाक होना इज्माई मसला और गुनाहे कबीरह से पाक होना। जम्हूर का क़ौल

और बादे नुबुव्वत गुनाहे कबीरा से पाक होने पर भी इज्मा है इन हज़रात की नबुव्वत किसी सरीही आयत या हदीस या क़ौले सहाबी से साबित नहीं। हाँ रब ने फ़रमाया। **लेयुतिम्मा नेअ्मतहू अलैका व अला आले याकूबा** यहाँ नेअमत से नुबुव्वत मुराद नहीं और न आले याकूब से उनकी सुलबी सारी औलाद। रब ने मुसलमानों से फरमाया। **व अत्मम्तु अलैकुम नेअमती।** कुछ ने कहा है कि रब फरमाता है। **वमा उंज़िला इला इब्राहीमा व इस्माईला व इस्हाक़ा व याकूबा वल-अस्बाते।** अस्बात याकूब अलैहिस्सलाम के बारह बेटे हैं। इससे मालूम हुआ कि यह भी सब साहिबे वही थे। मगर यह भी कमज़ोर सी बात है न तो **उंज़िला** में बिला वास्ता वही आने का बयान है। न इसकी कोई दलील है कि अस्बात उनके बेटों का ही लक़ब है। रब फ़रमाता है। **कूलू आमन्ना बिल्लाहे वमा उंज़िला इलैना इला इब्राहीम**

यहां **उंज़िला इलैना** का यह मतलब नहीं कि हम सब पर वही आई और हम सब पैग़म्बर हैं और अस्बात बनी इसराईल के बारह क़बीलों का लक़ब है और वाक़ई इनमें अंबिया आते रहे। रब फ़रमाता है। **वक़त्तअनाहुमुस्नता अशरता अस्बातन उममन।** तफ़्सीरे रूहुल-मआनी में **इन्नश्शैताना लिल-इंसाने अदुव्वुम मुबीन** की तफ़्सीर में है।

इसी तरह तफ़्सीरे रूहुल-बयान वग़ैरह ने भी उनकी नबुव्वत की बहुत तरदीद की। हाँ वह सब हज़रात तौबा के बाद औलिया अल्लाह बल्कि पैग़म्बर के सहाबी हुए उन्हें यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने ख़्वाब में तारों की शक्ल देखा क्योंकि वह नबी के सहाबी थे। हुज़ूर फरमाते हैं **अस्हाबी कन्नुजूमे** और उनके यह सारे गुनाह याकूब अलैहिस्सलाम की मुहब्बत हासिल करने के लिए थे। फ़िर उन्होंने उन से भी और यूसुफ़ अलैहिस्सलाम से भी मआफ़ी हासिल कर ली और दोनों हज़रात ने उनके लिए दुआए मग़्फ़िरत की। लिहाज़ा यह मग़्फ़ूर हुए। उनकी शान में गुस्ताख़ी करना सख़्त महरूमी की अलामत है। क़ाबील ने एक औरत की मुहब्बत में गुनाह किया और फिर आदम अलैहिस्सलाम से माफी भी हासिल न कर सका लिहाज़ा वह बेईमान रहा और यह ईमानदार हुए।

(15) कुरआने करीम से साबित है कि जुलेखा ने इरादा ज़िना किया जो कि सख़्त जुर्म है। और तुम कह चुके हो कि नबी की बीवी फाहिशा नहीं होती तो यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की बीवी क्यों हो सकती है? वह फाहिशा बदकार थी! लिहाज़ा या तो मानो कि उनका निकाह नहीं हुआ या यह क़ाइदा ग़लत है।

नोट : गुजरात के कुछ जाहिल देवबन्दियों ने हज़रत ज़ुलेखा के ज़ौज-ए-यूसुफ़ अलैहिस्सलाम होने का इंकार किया और उनकी शान में सख़्त गन्दे अल्फ़ाज़ बके। उन्हीं का यह एतराज़ है।

जवाब : हज़रत ज़ुलेखा अलैहिस्सलाम की ज़ौजा और क़ाबिले एहतराम

बीवी हैं उनका यूसुफ़ यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के निकाह में आना आम तफ़ासीर से साबित है। उन्हीं से यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के दो फ़रज़न्द पैदा हुए। अफ़्राईम और मीशा तफ़्सीरे ख़ाज़िन, तफ़्सीरे कबीर, मदारिक, **मआलिमुत्तंज़ील** वग़ैरह में इसकी तस्रीह है आप न तो फ़ाहिशा थीं न आप से ज़िना जैसा गुनाह कभी सादिर हुआ। यूसुफ़ अलैहिस्सलाम से इरादा ज़िना बेख़ुदी इश्क़ की हालत में हो गया। जमाले यूसुफ़ी ने उन्हें वारफ़्ता व दीवाना बना दिया। इस वालेहाना हालत में यह इरादा कर बैठीं जब मिस्री औरतों ने इसी जमाल से बेख़ुद हो कर अपने हाथ काट डाले। तो अगर हज़रत ज़ुलेखा ने इस हुस्न पर फ़ेफ़्ता हो कर दामने सब्र चाक कर दिया तो क्या तअज्जुब है? फिर इन तमाम ख़ताओं से तौबा भी कर ली। यह भी ख़्याल रहे कि ज़ुलेखा ने सिर्फ़ यूसुफ़ अलैहिस्सलाम से ही रग़बत की न कि किसी दूसरे से और रब ने उन्हें हर तरह महफ़ूज़ रखा। हमने अंबिया की बीवियों को ज़िना और फ़हश से महफ़ूज़ माना है कि मासूम। हज़रत ज़ुलेखा ने यह गुनाह करके तौबा कर ली। कि अर्ज़ किया। **अल-आन हसहसल-हक़्क़ु अना रावत्तुहू अन नफ़्सेही** ज़ुलेखा ने अपनी ख़ता का इक़रार किया और इक़रारे जुर्म बनिदामत तौबा है। रब तआला ने ज़ुलेखा की ख़ता का ज़िक्र तो फरमा दिया मगर उन पर एताब या अज़ाब का ज़िक्र न किया। ताकि मालूम हो कि उनके गुनाह की माफ़ी हो चुकी। अब उनकी ख़ताओं का बेअदबी के तौर पर ज़िक्र करना सख़्त बुरा है। उन से ज़िना या फ़हश कभी सादिर नहीं हुआ। न मालूम देवबन्दियों की किस शैतान ने अक़्ल मार दी। कि उनका हमला हमेशा अंबिया-ए-किराम के इज़्ज़त व आबरू पर होता हैं हज़रत ज़ुलेखा यूसुफ़ अलैहिस्सलाम की अह्ले बैत हैं उनकी तौहीन उस बा-कमाल पैग़म्बर की तौहीन है। रब तआला अक़्ले सलीम अता फरमाए।

ख़ातेमा : ख़्याल रहे कि रब तआला अंबिया का रब है और अंबियाए किराम उसके प्यारे बन्दे वह जिस तरह चाहे उनकी लग़्ज़िशों और ख़ताओं का ज़िक्र फरमाए और यह हज़रात जैसे चाहें अपने रब से अपनी नियाज़मन्दी और बन्दगी का इज़्हार करें। हमें किसी तरह हक़ नहीं कि उनकी लग़्ज़िशों का बयान करते फिरें या गुस्ताख़ियां करके अपना नाम-ए-आमाल सियाह कर लें। रब तआला ने हमको उनकी ताज़ीम व तौक़ीर का हुक्म दिया। देखो यूसुफ़ अलैहिस्सलाम चूंकि मिस्र में बज़ाहिर फरोख़्त हुए थे अह्ले मिस्र समझते थे कि यह अज़ीज़े मिस्र के ज़र ख़रीद हैं। रब तआला ने इसी दाग़ को उनके दामन से मिटाने के लिए सात साल की आम क़हत साली भेजी पहले साल में सबने आपको रुपया पैसा दे कर ग़ल्ला ख़रीदा। दूसरे साल ज़ेवर व जवाहिरात देकर तीसरे साल जानवर और चौपाए देकर चौथे साल अपने गुलाम बांदियाँ देकर पाँचवें साल अपने मकानात व ज़मीन देकर छठे

साल अपनी औलाद देकर सातवें साल मिस्र वालों ने अपने को यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के हाथ फ़रोख़्त कर दिया और अर्ज़ किया कि हम आपके लौंडी गुलाम बनते हैं, हमें ग़ल्ला दो तब आपने उन पर एहसान फ़रमाया कि सबको आज़ाद किया और उनका सारा माल व मुताअ् जानवर जाइदाद वग़ैरह वापस फरमा दी। देखो तफ़्सीरे ख़ाज़िन व मदारिक व रूहुल-बयान वग़ैरह। यह क्यों हुआ? सिर्फ़ इसलिए कि जब सारे मिस्र वाले आपके गुलाम बन गए तो उन्हें अब गुलाम कौन रखे। पता चला कि एक पैग़म्बर की अज़्मत बरक़रार रखने के लिए सारे जहान को मुसीबत में डाला जा सकता है। हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु के ज़माना में एक इमाम हमेशा नमाज़ में सूरः **अबस** पढ़ता था आपको पता लगा तो उसे क़त्ल करा दिया। देखो रूहुल-बयान तफ़्सीर सूरः **अबस** इस सूरः की निहायत उम्दा तफ़्सीर हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान में देखो। जिससे साबित किया गया है कि यह हुज़ूर की नअत है। रब तआला देवबन्दियों को हिदायत दे। उन्होंने अंबियाए किराम पर बक्वास बकने की जुरअत पैदा कर दी।

पहला बाब

बीस रकाअत तरावीह का सुबूत

तरावीह बीस रकाअत पढ़ना सुन्नत और आठ रकाअत पढ़ना ख़िलाफ़े सुन्नत है। हम बिफ़ज़्लेही तआला इसका सुबूत कुरआन पाक की तर्तीब व अहादीसे सहीहा व अक़्वाले उलमा और अक़्ली दलाइल से देते हैं। (1) कुरआन पाक में सूरतें भी हैं आयतें भी और रुकूअ भी। वह मज़्मून जिसका कोई नाम रख दिया गया हो वह सूरत कहलाता है और कुरआन का वह जुमला जिसका अलाहिदा नाम न हो आयत कहलाता है पर देखना यह है कि रुकूअ को रुकूअ क्यों कहते हैं क्योंकि सूरत के मानी एहाता करने वाली चीज़ है और आयत के मानी हैं निशानी सूरः चूंकि एक मज़्मून को घेरे हुई है जैसे शहर को शहर पनाह (सूरतुल-बलद) और आयत कुदरते इलाही की निशानी है। इसलिए उनके यह नाम हुए मगर रुकूअ के मानी हैं झुकना, देखना यह है कि कुरआनी रुकूअ को रुकूअ क्यों कहते हैं। कुतुबे किरात से मालूम हुआ कि हज़रत उमर व उस्मान रज़ि अल्लाहु अन्हुमा तरावीह में जिस क़दर कुरआन पढ़ कर रुकूअ फरमाते थे उस हिस्सा का नाम रुकूअ रखा गया यानी उन हज़रात के रुकूअ करने का मक़ाम कि इतना पढ़ कर रुकूअ हुआ और चूंकि तरावीह बीस रकाअत पढ़ी जाती थीं और सत्ताईसवीं रमज़ान को ख़त्म होता था। इस लिहाज़ से कुरआन पाक के कुल 540 रुकूअ होने चाहिएं। लेकिन चूंकि ख़त्म के दिन कुछ रकअतों में छोटी छोटी दो सूरतें पढ़ ली जाती थीं इस लिए कुरआन करीम के 557 रुकूअ हुए। अगर

तरावीह आठ रकाआत होतीं तो रुकूआ 216 होने चाहिए थे कुरआनी रुकूआत की तादाद बता रही है कि तरावीह बीस रकाअत चाहिएं क्या कोई वहाबी साहब आठ रकाअत तरावीह मान कर रुकूआत कुरआनी की वजह बता सकेंगे?

(2) तरावीह जमा तरवीहा की है जिसके मानी हैं जिस्म को राहत देना चूंकि इनमें हर चार रकाअत पर किसी क़द्र राहत के लिए बैठते हैं इस बैठने का नाम तरवीहा है इसी लिए इस नमाज़ को तरावीह कहा जाता है यानी राहतों का मज्मूआ और तरावीह जमा है। जमा कम से कम तीन पर बोली जाती है। अगर तरावीह आठ रकाअत हो तीन तो इसके दरम्यान में एक ही तरवीहा आता फिर इसका नाम तरावीह न होता तीन तरवीहों के लिए कम अज़ कम सोला रकाअत तरावीह चाहिएं। जिन में हर चार रकाअत के बाद एक तरवीहा हुआ और वित्र से पहले कोई तरवीहा नहीं होता। तरावीह का नाम ही आठ रकआत की तरदीद करता है।

(3) हर दिन में बीस रकाअत नमाज़ ज़रूरी है। सत्तरह फ़र्ज़ और तीन वित्र, दो फर्ज़ फज्र में चार ज़ुहर में चार अस्र में, तीन मग़्रिब में और चार इशा में रमज़ान शरीफ में रब तआला ने इन बीस रकआत की तक्मील के लिए बीस रकाअत तरावीह और मुक़र्रर फरमा दी। जिसकी हर रकाअत उनकी हर रकाअत की तक्मील करे ग़ैर मुक़ल्लिद शाइद नमाज़ पंजगाना में भी आठ रकाअत ही पढ़ते होंगे। वरना आठ तरावीह को इन बीस रकाअत से क्या निस्बत।

(4) **अहादीस :-** ख़्याल रहे कि हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नमाज़े तरावीह बा जमाअत पाबन्दी से अदा न फरमाई सिर्फ़ दो दिन अदा कीं और बाद में फरमा दिया कि अगर इस पर पाबन्दी की गई तो फर्ज़ हो जाने का अन्देशा है जिस से मेरी उम्मत को दुश्वारी होगी लिहाज़ा तुम लोग अपने घर में ही नमाज़ पढ़ लिया करो। बाज़ तो कहते हैं कि यह नमाज़े तहज्जुद ही थी जो माहे रमज़ान में एहतमाम से अदा कराई गई। इसीलिए सहाबा किराम सहरी के आख़िरी वक़्त इससे फ़ारिग़ होते ज़माना सिद्दीक़ी में भी इसका कोई बाक़ायदा इंतिज़ाम न फरमाया गया। लोग मुतफ़र्रिक़ तौर पर पढ़ लेते थे। हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने इसका एहतमाम फरमाया और बीस रकाअत तरावीह मुक़र्रर फरमाईं और बाक़ायदा जमाअत का इंतिज़ाम किया लिहाज़ा सही यह है कि असल तरावीह सुन्नते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम है मगर इसकी पाबन्दी जमाअत बीस रकाआत सुन्नते फारूक़ी चूंकि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने न तो आठ रकाअत का हुक्म दिया और न इस पर पाबन्दी फराई। बल्कि हक़ यह है कि आपका आठ रकाअत तरावीह पढ़ना साफ़ कहीं साबित ही

नहीं हुआ लिहाज़ा सहाबए किराम का बीस पर इत्तिफ़ाक़ करना सुन्नत की मुख़ालिफ़त नहीं। हमें हुक्म दिया गया है कि **अलैकुम बेसुन्नती व सुन्नतिल-ख़ुलफ़ाए अर्राशेदीन।** लिहाज़ा अब हम सहाबाए किराम का अमल पेश करते हैं ग़ैर मुक़ल्लिदों को चाहिए कि कोई हदीस मरफ़ूअ सहीह ऐसी पेश करें जिससे तरावीह की आठ रकाअत साफ़—साफ़ साबित हों। इंशाअल्लाह न कर सकेंगे।

देखो इन रिवायात से मालूम हुआ कि ख़ुद हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम बीस तरावीह पढ़ते थे। और अह्दे फ़ारूक़ी में तो इस बीस रकाआत पर अमल जारी हो गया था। हज़रत इब्ने अब्बास – **अली अबी इब्ने कअब व अमर साइब इब्ने यज़ीद वग़ैरहुम** तमाम सहाबा रज़ि अल्लाहु अन्हुम का यही मामूल था।

यानी अक्सर अह्ले इल्म का अमल इस पर है जो हज़रत अली व उमर व दीगर सहाबा किराम से मरवी है यानी बीस रकाअत। यही फरमान सुफ़ियान सूरी इब्ने मुबारक और इमाम शाफई का है और इमाम शाफई ने फरमाया हमने अपने शहर मक्का मुअज़्ज़मा में यही अमल पाया कि मुसलमान बीस रकाअत तरावीह पढ़ते हैं।

(2) **फ़तहुल-मुस्लिम** शरह मुस्लिम, जिल्द दोम सफ़ः 291 में है।

इससे मालूम हुआ कि बीस रकाअत पर गोया मुसलमान का इज्मा हो गया।

(3) **उम्दतुल-क़ारी** शरह बुख़ारी जिल्द पंजुम सफ़ः 307 में है।

इससे मालूम हुआ कि सहाबा किराम के ज़माना में बीस तरावीह और तीन वित्र पर अमल था।

(4) इसी **उम्दतुल-क़ारी** में इसी जगह है।

(5) इसी **उम्दतुल-क़ारी** जिल्द पंजुम सफ़ः 355 में है।

यानी इब्ने अब्दुल-बर्र ने फरमाया कि बीस रकाअत तरावीह आम उलमा का क़ौल है इसी के अह्ले कूफ़ा और इमाम शाफई और अक्सर फ़ुक़्हा क़ाइल हैं और यही हज़रत अबी इब्ने कअब से मरवी है इसमें किसी सहाबी का इख़्तिलाफ नहीं।

(6) मुल्ला अली क़ारी ने शरह नक़ाया में फरमाया –

सहाबा किराम हज़रत उमर व उस्मान व अली रज़ि अल्लाहु अन्हुम के ज़माना में बीस तरावीह पढ़ते थे लिहाज़ा इस पर इज्मा हो गया।

(7) मौलवी अब्दुल-हई साहब ने अपने फतावा जिल्द अव्वल सफ़ः 182 में अल्लामा इब्ने हजर मक्की हैतमी का क़ौल नक़्ल फरमाया। **इज्मा-उस्सहाबते अला अन्नत्तरावीहा इशरूना रकाअतन।** यानी सहाबा किराम का बीस तरावीह पर इज्मा है।

(8) **उम्दतुल-कारी** शरह बुख़ारी जिल्द पंजुम सफ़: 257 में है।

इन इबारत से मालूम हुआ कि सहाबा किराम ताबईन व तबा ताबईन व फ़ुक़्हा मुहद्देसीन का बीस रकअत तरावीह पर इत्तिफ़ाक़ है। इन में से न किसी ने आठ तरावीह पढ़ीं न इसका हुक्म दिया।

लतीफा : ग़ैर मुक़ल्लिद दरअसल अपनी ख़्वाहिशे नफ़्स के मुक़ल्लिद हैं इस लिए उन्हें अह्ले हवा यानी हवा परस्त कहा जाता है। जिसमें नफ़्स को आराम मिले वही उनका मज़्हब है। हम उनके आराम देह मसाइल दिखाते हैं। मुसलमान देखें और इबरत पकड़ें।

(1) दो मटके पानी कभी गन्दा नहीं होता लिहाज़ा कुंआं कितना ही पलीद हो जाए उसका पानी पिए जाओ।

(2) सफर में चन्द नमाज़ें एक वक़्त में पढ़ लो। रवाफ़िज़ की तरह कौन बार-बार उतरे और पढ़े। रेल में बहुत भीड़ होती है।

(3) औरतों के ज़ेवर पर ज़कात नहीं। हाँ जनाब क्यों हो इसमें ख़र्च जो होता है।

(4) तरावीह आठ रकाअत पढ़ कर आराम करो। हाँ साहिब नमाज़ नफ़्स पर भारी है।

(5) वित्र सिर्फ़ एक रकाअत पढ़ कर सो रहो। क्यों न हो जल्द नमाज़ से छुटकारा अच्छा है।

(6) एक बारगी तीन तलाक़ दे दो। सिर्फ़ एक ही वाक़े होगी। दोबारा रुजूअ हो सकता है। क्यों न हो इसमें आसानी है। ग़र्ज़ेकि जिसमें आराम वह यारों का दीन ईमान।

लतीफा : मुस्लिम शरीफ़ किताबुत्तलाक़ में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम और अबू बकर सिद्दीक़ रज़ि अल्लाहु अन्हु के ज़माना में तीन तलाक़ एक ही होती थी। हज़रत उमर ने फरमाया कि लोगों ने इसमें जल्दी पैदा कर दी लिहाज़ा अब इससे तीन तलाक़ ही वाक़े होनी चाहिएं। आराम तलब ग़ैर मुक़ल्लिदीन ले उड़े कि एक दम तीन तलाक़ें एक ही होती हैं। इन अल्लाह के बन्दों ने यह न सोचा कि क्या उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ख़िलाफ़े सुन्नत हुक्म कर सकते हैं। और फिर लुत्फ़ यह है कि आपने यह क़ानून बना दिया और किसी सहाबी ने मुख़ालफ़त न की। बात सिर्फ़ यह थी कि ज़मानाए नब्वी में बाज़ लोग यूं कह देते थे तुझे तलाक़ है तलाक़ तलाक़ और आख़िर में दो तलाक़ों से पहली तलाक़ की ताकीद करते थे। जैसे कोई कहे मैं कल जाऊंगा। कल कल मैं रोटी खाऊंगा। रोटी-रोटी अब भी अगर कोई इस नीयत से यह अल्फ़ाज़ बोले तो इन्दल्लाह एक ही तलाक़ वाक़े होगी। ज़मानाए फ़ारूक़ी में लोग तीन तलाक़ें ही देने लगे चूंकि अमल बदल गया हुक्म भी बदल गया। तब आपने यह हुक्म नाफ़िज़ फरमाया। इस मस्आला

की निहायत ही नफ़ीस तहक़ीक़ हमारी तफ़्सीर जिल्द दोम आयत अत्तलाक़ मर्रताने की तफ़्सीर में देखो। जहाँ बहुत सी अहादीस से साबित किया है कि एक दम तीन तलाक़ें तीन ही होती हैं।

दूसरा बाब

बीस तरावीह पर ऐतराज़ात व जवाबात

(1) मिश्कात बाब क़्याम शहर रमज़ान और मुअत्ता इमाम मालिक में है कि हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने उबय बिन कअब रज़ि अल्लाहु अन्हु और तमीम दारी को हुक्म दिया कि वह लोगों को ग्यारह रकाअतें पढ़ाएं। साबित हुआ कि आठ रकाअते तरावीह है बाक़ी वित्र।

जवाब : इसके चन्द जवाब में हैं अव्वलन यह कि यह हदीस मुज़्तरब है और मुज़्तरब से दलील नहीं पकड़ी जा सकती क्योंकि इसके रावी मुहम्मद इब्ने यूसुफ़ हैं। मुअत्ता में तो उन से ग्यारह की रिवायत है और मुहम्मद इब्ने नसर मरुज़ी ने उन्हें मुहम्मद इब्ने यूसुफ़ से बतरीक़े मुहम्मद इसहाक़ तेरह रकाअत की रिवायत की और मुहद्दिस अब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने उन्हें मुहम्मद इब्ने यूसुफ़ से दूसरी अस्नाद से 21 रकाअत नक़्ल कीं। इसकी तहक़ीक़ के लिए देखो फत्हुल–बारी शरह बुख़ारी जिल्द चहारुम सफ़: 180 मत्बूआ मतबा ख़ैरिया मिस्र। एक ही रावी के ब्यानात में इस क़द्र तज़ाद और इख़्तलाफ़ है। इसको इज़्तिराब कहते हैं। लिहाज़ा यह तमाम रिवायात ग़ैर मोतबर हैं। इस से इस्तेदलाल ग़लत है। दूसरे यह कि अगर यह हदीस आपके नज़्दीक सही है तो इससे तरावीह आठ रकाअत साबित हुईं मगर वित्र तीन रकाअत कहिए। आप वित्र एक रकाअत क्यों पढ़ते हैं? आपके क़ौल पर तो नौ रकाअतें होनी चाहिएं। क्या एक ही हदीस का आधा हिस्सा मक़्बूल और आधा ग़ैर मक़्बूल। तीसरे यह कि हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु के ज़माना में अव्वलन आठ तरावीह का हुक्म दिया गया। फिर बारह का, फिर आख़िर में बीस पर क़रार हुआ। क्योंकि मिश्कात **बाब क़्यामे शहर रमज़ान।** (सफ़: 115) में इसी हदीस के बाद है।

यानी क़ारी आठ रकाअत में सूरः बक़रह पढ़ता था और जब बारह रकाअत में यह सूरः पढ़ता तो लोगों को हल्का पन महसूस होता। इस हदीस के मातहत मिर्क़ात में है।

यानी इन रिवायात को यूं जमा किया गया कि अव्वलन तो आठ रकाअत का हुक्म हुआ फिर बीस पर क़रार हुआ। यह बीस रकाअत ही मन्कूल है। चौथे यह कि असल तरावीह सुन्नते रसूलुल्लाह अलैहिस्सलाम है और तीन चीज़ें सुन्नते फ़ारूक़ी, हमेशा पढ़ना। बाक़ायदा जमाअत से पढ़ना बीस रकाअत पढ़ना। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बीस रकाअत हमेशा

न पढ़ीं और सहाबा किराम को बाक़ायदा जमाअत का हुक्म दिया। अब अगर आठ रकाअत पढ़ी जाएं। तो सुन्नते फ़ारूक़ी पर अमल छूट गया और अगर बीस पढ़ी जाएं तो सब पर अमल हो गया। क्योंकि बीस में आठ आ जाती हैं। और आठ में बीस नहीं आतीं। हदीस शरीफ में है कि मेरी और ख़ुलफ़ाए राशिदीन की सुन्नतों पर अमल करो। तुम भी तरावीह हमेशा और बाक़ायदा जमाअत से पढ़ते हो हालांकि यह दो बातें हुज़ूर से साबित नहीं। सुन्नते फ़ारूक़ी हैं लिहाज़ा बीस रकाअत पढ़ा करो।

(2) बुख़ारी शरीफ़ (सफ़: 154) में है कि अबू सलमा ने हज़रत आइशा सिद्दीक़ा से पूछा कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम रमज़ान की रातों में कितनी रकाअत पढ़ते थे। आपने जवाब दिया। **मा काना रसूलुल्लाहे सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यज़ीदु फ़ी रमज़ाना वला फ़ी ग़ैरेही अला इहदा अशरा रकआतिन।** मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने तरावीह आठ रकाअत से ज़्यादा कभी न पढ़ी। और बाक़ी वित्र बीस रकाअत पढ़ना बिदअते सैय्यआ है।

जवाब : इसके भी चन्द जवाब हैं। एक यह कि इससे नमाज़े तहज्जुद मुराद है न कि तरावीह। क्योंकि हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने रमज़ान और ग़ैर रमज़ान में आठ रकाअत से ज़्यादा न पढ़ीं। जिससे मालूम हुआ कि यह वही नमाज़ है जो हमेशा पढ़ी जाती है न कि तरावीह क्योंकि तरावीह सिर्फ़ रमज़ान में होती है। नीज़ तिर्मिज़ी में इसी हदीस के लिए बाब बांधा **मा जाआ फ़ी वस्फ़े सलातिन्नबीये सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बिल्लैल।** मालूम हुआ कि यह सलातुल्लैल यानी नमाज़े तहज्जुद है न कि नमाज़े तरावीह। नीज़ इसी हदीस के आख़िर में है कि हज़रत आइशा सिद्दीक़ा फ़रमाती हैं कि मैंने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह आप वित्र से पहले क्यों सो जाते हैं? आपने फ़रमाया ऐ आइशा हमारी आंखें सोती हैं हमारा दिल नहीं सोता। जिससे मालूम हुआ कि यह रकाअतें सो के उठ के अदा फ़रमाते थे और वित्र भी इसके साथ ही पढ़ते थे। तब ही तो हज़रत सिद्दीक़ा को तअज्जुब हुआ कि आपने हम को वित्र पढ़ कर सोने का हुक्म दिया और ख़ुद सो कर मअ तहज्जुद वित्र पढ़ते हैं। जवाब दिया कि चूंकि हमें जागने पर पूरा भरोसा है जिसे भरोसा न हो वह वित्र पढ़ कर सोए और तरावीह सोने से पहले पढ़ी जाती है और तहज्जुद सोने के बाद। मदारिजुन्नबुव्वह जिल्द अव्वल सफ़: 400 में है। दूसरे यह कि अगर बीस रकाअते तरावीह बिदअते सैय्यआ है तो हज़रत उमर व दीगर सहाबा किराम ने क्यों इख़्तियार फ़रमाई और ख़ुद हज़रत आइशा सिद्दीक़ा ने उनकी मुख़ालिफ़त क्यों न की। उन पर क्या फ़तवा लगाओगे। नीज़ आज सारे ग़ैर मुक़ल्लिद पूरे माह रमज़ान में बा

जमाते तरावीह पढ़ते हैं। बताओ इनकी यह हमेशगी बिदअते सैयआ है या नहीं? अगर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने आठ तरावीह पढ़ी तो सिर्फ़ तीन रोज़ ही पढ़ीं। तुम इसकी हमेशगी करके कौन हुए? नीज़ तिर्मिज़ी शरीफ़ की रिवायत से साबित हुआ कि मक्का वालों का बीस तरावीह पर इत्तिफ़ाक़ है और मदीना वालों का इक्तालीस पर इनमें से कोई भी आठ रकाअत का आमिल नहीं। बताओ यह सारे लोग बिदअती और फ़ासिक़ हुए या नहीं? अगर हुए तो इन से हदीस लेना कैसा? फ़ासिक़ की रिवायत मोतबर नहीं। नीज़ बताओ क्या किसी मुल्क में मुसलमानों में आठ रकाअत तरावीह पढ़ीं। तीसरे यह कि इसी हदीस से आठ रकाअत तरावीह साबित हुई। तो तीन रकाअत वित्र भी साबित हुए तब ही तो ग्यारह रकाअत साबित होंगी। फिर आप वित्र एक रकाअत क्यों पढ़ते हो? आराम के लिए हक़ यह है कि आठ रकाअते तरावीह की तस्रीह कहीं नहीं मिलती। क्योंकि जहाँ क़यामे रमज़ान का ज़िक्र है वहाँ तादादे रकाअत से ख़ामोशी है। और जिन अहादीस में ग्यारह का ज़िक्र है वहाँ तरावीह की तस्रीह नहीं बल्कि इससे तहज्जुद मुराद है। ऐसी रिवायत पेश करो जिसमें आठ तरावीह की तस्रीह हो। ऐसी इंशाअल्लाह न मिलेगी।

चूंकि सलतनते मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हमने मुस्तक़िल रिसाला लिख दिया। इसलिए ज़मीमा में यह मज़मून शामिल न किया गया।

बिस्मिल्लाहहिर्रहमानिर्रहीम

व सल्लल्लाहु तआला अला ख़ैरे ख़ल्क़ेही व नूरे अरशेही सैयिदना मुहम्मदिन व आला आलेहि व अस्हाबिहि अजमईन बेरहमतेहि व हुवा अरहमर्राहिमीन।

तीन तलाक़ के हुक्म के बारे में मक़बूल दलील

अगर कोई शख़्स अपनी बीवी को एक दम तीन तलाक़ें दे दे तो अगरचे उसने बुरा किया। मगर इस सूरत में तलाक़ें तीन ही वाक़े होंगी न कि एक। और यह औरत बग़ैर हलाला उस मर्द को हलाल न होगी। चूंकि ज़माना मौजूदा के ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी इसके मुंकिर हैं और ख़्वाहिशे नफ़्सानी के मातहत कहते हैं इस सूरत में तलाक़ एक ही वाक़े होगी। और औरत से रुजूअ करना सही होगा। इसलिए इस बहस में एक मुक़द्दमा और दो बाब लिखे जाते हैं पहले बाब में मसअला के दलाइल और दूसरे बाब में इस पर ऐतराज़ात व जवाबात।

मुक़द्दमा

बेहतर यह है कि अगर औरत को तलाक़ देना हो तो सिर्फ़ एक ही तलाक़ पाकी में दे। और अगर तीन तलाक़ें ही देना हों तो हर पाकी में एक

तलाक़ दे। लेकिन अगर कोई बहालते हैज़ तलाक़ दे दे या तीनों तलाक़ें एक दम दे दे तो अगर चे उसने बुरा किया मगर जो तलाक़ देगा वही वाक़े होगी।

एक साथ तीन तलाक़ें देने की तीन सूरतें हैं।

नम्बर (1) अगर शौहर ने अपनी इस बीवी को जिससे सिर्फ़ निकाह हुआ हो और ख़ल्वत न हुई हो एक दम तीन तलाक़ें इस तरह दे कि तुझे तलाक़ है, तलाक़ है, तलाक़ है। इस सूरत में सिर्फ़ पहली एक तलाक़ वाक़े होगी। और अख़ीरी दो वाक़े न होंगी। क्योंकि पहली तलाक़ बोलते ही वह औरत निकाह से खारिज हो गई और उस पर इद्दत भी वाजिब न हुई। और तलाक़ के लिए निकाह या इद्दत चाहिए। हाँ अगर उस औरत से यूं कहे कि तुझे तीन तलाक़ें हैं तो तीनों पड़ जाएंगी। क्योंकि इस औरत में तीनों तलाक़ें निकाह की मौजूदगी में पड़ीं। (आम्मा कुतुब)

नम्बर (2) अगर शौहर अपनी इस बीवी को जिससे ख़ल्वत हो चुकी है इस तरह तलाक़ें दे कि तुझे तलाक़ है तलाक़ तलाक़। और अख़ीर दो तलाक़ों से पहली तलाक़ की ताकीद की नीयत करे न अलाहिदा तलाक़ों की तब भी दयानतन तलाक़ एक ही होगी (क़ाज़ी इसकी यह बात न मानेगा) क्योंकि उस शख़्स ने एक तलाक़ की दो दो ताकीदें की हैं जैसे कोई कहे कि पानी पी लो। पानी पानी। खाना खा लो। खाना खाना। मैं कल गया था कल कल इन सब सूरतों में पिछले दो लफ़्ज़ों से पहले लफ़्ज़ की ताकीद है।

नम्बर (3) अगर कोई शख़्स अपनी बीवी को जिस से ख़ल्वत हो चुकी है बयक वक़्त तीन तलाक़ें दे ख़्वाह यूं कहे कि तुझे तीन तलाक़ें हैं। या यह कहे कि तुझे तलाक़ है तलाक़ है। बहरहाल तलाक़ें, तीन ही वाक़ें होंगी और यह औरत अब बग़ैर हलाला इस मर्द को हलाल न होगी। इस पर इमाम अबू हनीफ़ा व शाफ़ई व मालिक व अहमद और सल्फ़न ख़ल्फ़न जम्हूर उलमा का इत्तिफ़ाक़ है। हाँ बाज़ ज़ाहिरबीं मौलवी इस आख़िरी सूरत में इख़्तिलाफ़ करते हैं। चुनांचे तफ़्सीरे सावी में पारा दोम ज़ेरे आयत–

फ़इन तल्लक़हा फला तहिल्लु लहू है।

यानी उलमा-ए-उम्मत का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि जो तीन तलाक़ें अलग अलग दे या एक दम। औरत बहर हाल हराम हो जाएगी। और नुववी शरह मुस्लिम जिल्द अव्वल **बाबुत्तलाक़ अस्सुलुस** में है।

तरजमा : यानी जो कोई अपनी बीवी से कहे कि तुझे तीन तलाक़ें हैं तो चारों इमाम और सल्फ़ व ख़ल्फ़ के आम उलमा फरमाते हैं कि तीन ही वाक़े होंगी। हाँ कुछ अह्ले ज़ाहिर ने कहा है कि एक ही वाक़े होगी। बल्कि हुज्जाज इब्ने अरतात और इब्ने मक़ातिल और मुहम्मद बिन इसहाक़ कहते हैं। कि इससे एक तलाक़ भी न पड़ेगी।

देखो नुववी यही मक़ाम चूंकि मौजूदा ज़माना के ग़ैर मुक़ल्लिद हर जगह आराम नफ़्स ढूँढते हैं जिस चीज़ में नफ़्से अम्मारह को राहत मिले ख़्वाह वह बातिल से बातिल और ज़ईफ़ से ज़ईफ़ क़ौल हो वही उनका दीने ईमान है। इसलिए उन्होंने इब्ने तैमिया की इत्तिबा करते हुए यह अक़ीदा रखा है। कि एक दम तीन तलाक़ों से एक ही वाक़े होगी। तफ़्सीरे सावी पारा दोम ज़ेरे आयत **फ़इन तल्लक़हा फ़ला तहिल्लु** है।

तरजमा : यानी यह कहना कि एक दम दी हुई तीन तलाक़ों से एक ही वाक़े होती है। यह सिवा इब्ने तैमिया हंबली के और किसी ने भी नहीं कहा है और इब्ने तैमिया की ख़ुद उसके मज़्हब के इमामों ने तरदीद कर दी। उलमा-ए-किराम तो फरमाते हैं कि इब्ने तैमिया ख़ुद भी गुम्राह है और दूसरों को गुम्राह करने वाला है और इस मसला की नफीस निस्बत इमाम अशहब मालिकी की तरफ ग़लत है।

बहरहाल पता यह लगा कि मौजूदा ग़ैर मुक़ल्लिद महज़ नफ़्सानी आसानी के लिए यह बातिल अक़ीदा लिए बैठे हैं। हमने इस मसला नफ़ीस की तहक़ीक़ अपनी तफ़्सीरे नईमी जिल्द दोम ज़ेरे आयत **फ़इन तल्लक़हा फ़ला तहिल्लु लहू** में कर दी है मगर चूंकि आजकल इस मसला के मुतअल्लिक़ बहुत शोर मचा हुआ है और हमारे पास इस क़िस्म के सवालात बहुत कसरत से आ रहे हैं।

इसलिए हम रब के भरोसे पर इस मसला का फ़ैसला किए देते हैं अल्लाह तआला और उसके रसूल मक़्बूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से उम्मीदे क़बूल है और नाज़िरीन से उम्मीदे इंसाफ। बयान का यही तरीक़ा होगा कि मसला दो बातों में बयान किया जाएगा। पहले बाब में अपने दलाइल और दूसरे बाब में मुख़ालेफ़ीन के ऐतराज़ात और उनके जवाबात।

पहला बाब

उसके सुबूत में

बेहतर तो यह है कि तलाक़ एक ही दे ज़्यादा दे ही नहीं और अगर तीन तलाक़ें ही देना है तो हर पाकी में एक तलाक़ दे तीन पाकी में तीन। एक दम चन्द तलाक़ें देना सख़्त बुरा है। लेकिन अगर किसी ने एक दम चन्द तलाक़ें दे दीं तो अगरचे बुरा किया मगर तीनों वाक़े हो जाएंगी। जैसे तलाक़ बहालते हैज़ कि अगरचे बुरा है मगर तलाक़ वाक़े हो जाती है उसके दलाइल हस्बे ज़ेल हैं।

नम्बर (1) रब तआला फरमाता है **अत्तलाक़ु मर्रताने फ़इम्साकुन बेमारूफ़िन और तस्रीहिन बेएहसानिन।** फिर फरमाता है **फ़इन तल्लक़हा फ़ला तहिल्लु लहू** इस आयत से मालूम हुआ कि दो तलाक़ों तक रुजूअ का

हक़ है तीन में नहीं और मरतान के इतलाक़ से मालूम हुआ कि अलग अलग तलाक़ें देना शर्त नहीं जिसके बग़ैर तलाक़ें वाक़े ही न हों चाहे यक्दम दे या अलग-अलग। हुक्म यही होगा चुनांचे तफ़्सीरे सावी में इस आयत के मातहत है।

यानी आयत का मक्सद यह है कि अगर तीन तलाक़ें दीं तो वाक़े हो जाएंगी चाहे एक दम दे या अलग अलग औरत हलाल न रहेगी। आगे फ़रमाते हैं।

कमा इज़ा काला लहा अन्ते तालिकुन सलासन औ अल-बत्तता व हाज़ा हुवल-मज्मओ अलैहि। यानी अगर कोई शख़्स यूं कह दे कि तुझे तीन तलाक़ें हैं तो तीन ही वाक़े हो जाएंगी। इस पर उम्मत हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इत्तिफ़ाक़ है इसी तरह और तफ़ासीर में भी है।

नम्बर (2) रब तआला फरमाता है।

वमन यतअद्दा हुदूदल्लाहे फ़क़द ज़लमा नफ़्सहू ला तदरी लअल्लल्लाहु युहदिसु बअदा ज़ालिका अमरन। यानी जो कोई अल्लाह की हदें तोड़े कि एक दम तीन तलाक़ें दे दे तो वह अपनी जान पर ज़ुल्म करता है। क्योंकि कभी इंसान तलाक़ दे कर शर्मिन्दा होता है और रुजूअ करना चाहता है। अगर तीन तलाक़ें एक दम दे देगा तो रुजूअ न कर सकेगा। इस आयत में न फरमाया कि एक दम तीन तलाक़ें देने वाले की वाक़े न होंगी। बल्कि फरमाया यह गया कि ऐसा आदमी ज़ालिम है अगर इससे तलाक़ एक वाक़े होती तो ज़ालिम कैसे होता? नुववी शरह मुस्लिम **बाबुत्तलाक़ अस्सलासा** में है।

नम्बर (3) बैहक़ी और तबरानी में सुवेद इब्ने ग़फ़्लतहू से रिवायत है कि हज़रत इमाम हसन इब्ने अली रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा ने अपनी बीवी आइशा ख़शअमीया को एक दम तीन तलाक़ें दे दीं। बाद में खबर मिली कि वह इमाम हसन के फ़िराक़ में बहुत रोती हैं। तो आप भी रो पड़े और फरमाने लगे कि अगर मैंने अपने वालिद सैयदना हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु को यह फरमाते हुए न सुना होता कि जो कोई अपनी बीवी को अलग अलग या एकदम तीन तलाक़ें दे दे तो वह औरत बग़ैर हलाला उसे जाइज़ नहीं तो मैं ज़रूर रुजूअ कर लेता हदीस के अख़ीर में अल्फ़ाज़ यह हैं।

नम्बर (4) इसी सुनने कुबरा बैहक़ी में हज़रत हबीब इब्ने अबी साबित की रिवायत से है।

यानी एक शख़्स सैयदना अली रज़ि अल्लाहु अन्हु की ख़िदमत में हाज़िर हो कर बोला कि मैंने अपनी बीवी को हज़ार तलाक़ें दी हैं फरमाया कि तीन तलाक़ों ने उसे तुझे तुझ पर हराम कर दिया। बाक़ी तलाक़ें अपनी और बीवियों को बांट दे यानी वह बेकार हैं ज़ाहिर है कि उस साइल ने यह हज़ार

तलाक़ें हज़ार महीनों में तो न दी होंगी। वरना 82 साल 2 महीने इसी में सर्फ़ हो जाते। एक दम ही दी थीं। और सैयदना मौला अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने तीनों जाइज़ रखीं।

नम्बर (5) बैहक़ी में है।

यानी इमाम जाफर सादिक़ अपने जद्दे अम्जद सैयदना अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत करते हैं कि आपने फरमाया कि जो कोई अपनी बीवी को एक दम तीन तलाक़ें दे तो बीवी बग़ैर हलाला हलाल नहीं। इसकी ताईद बैहक़ी की इस रिवायत से होती है जो इस मक़ाम पर अबी याला से मरवी है कि –

नम्बर (6) बैहक़ी ने मुहम्मद इब्ने अयाज़ इब्ने बकीर से रिवायत की है कि एक शख़्स ने अपनी बीवी को ख़ल्वत से पहले एक दम तीन तलाक़ें दे दें। फिर ख़्याल आया कि इससे दोबारा निकाह करे तो वह अबू हुरैरह और अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हुमा की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। इन दोनों सहाबियों ने फरमाया कि हम इस निकाह के जवाज़ की कोई सूरत नहीं देखते जब तक कि वह दूसरे शौहर से निकाह न करे वह बोला हज़रत मैंने एक ही लफ़्ज़ से तीन तलाक़ें दी थीं। इस पर हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास ने फरमाया कि जो कुछ तेरे क़ब्ज़ा में बचा कुचा था तूने इकट्ठा ही दे दिया।

नम्बर (7) इसी बैहक़ी में अब्दुल हमीद इब्ने राफ़ेअ से बरिवायत अता है कि किसी ने सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से पूछा कि मैंने अपनी बीवी को सौ तलाक़ें दी हैं। फरमाया तीन ले लो और सत्तानवे छोड़ दो।

नम्बर (8) बैहक़ी में सईद इब्ने जुबैर से रिवायत है कि एक शख़्स ने अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से अर्ज़ किया कि मैंने अपनी बीवी को हज़ार तलाक़ें दी हैं। आपने फरमाया तीन ले लो और नौ सौ सुत्तानवे छोड़ दो इबारत यह है। (सुनने कुबरा बैहक़ी जिल्द 7 सफ़: 337)

नम्बर (9) बैहक़ी ने बरिवायत सईद इब्ने जुबैर है कि सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास ने उस शख़्स से फरमाया कि जिसने अपनी बीवी को एक दम तीन तलाक़ें दी थीं कि तुझ पर तेरी बीवी हराम हो गई। इबारत यह है।

नम्बर (10) बैहक़ी में बरिवायत अम्र इब्ने दीनार है कि किसी शख़्स ने अब्दुल्लाह इब्ने अब्बासन से पूछा कि जो कोई अपनी बीवी को सितारों के बराबर तलाक़ें दे इसका क्या हुक्म है? फरमाया इससे कह दो कि तुझे बुर्जे जौज़ा का सर ही काफी है। ख़्याल रहे कि बुर्जे जौज़ा के सर पर तीन सितारे हैं।

नम्बर (11) इब्ने माजा में है कि फ़ातिमा बिन्ते क़ैस फरमाती हैं कि मुझे मेरे शौहर ने यमन जाते वक़्त तीन तलाक़ें एक दम दे दीं। इन तीनों को

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जाइज़ रखा।

नम्बर (12) हाकिम इब्ने माजा अबू दाऊद ने अब्दुल्लाह इब्ने अली इब्ने ज़ैद इब्ने रुकाना से रिवायत की है उन्होंने फरमाया मेरे दादा रुकाना ने अपनी बीवी को तलाक़े बत्ता दी। फिर वह बारगाहे नब्वी में हाज़िर हुए और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इस बारे में सवाल किया और अर्ज़ किया कि मैंने एक की नीयत की थी। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि क्या अल्लाह की क़सम तुमने एक ही नीयत की थी। अर्ज़ किया क़सम है रब की मैंने न नीयत की मगर एक की। पस हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनकी बीवी को उन पर वापस फरमा दिया। चुनांचे इब्ने माजा और अबू दाऊद में है।

अगर एक दम तीन तलाक़ों से एक ही तलाक़ वाक़े होती है तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम हजरत रुकाना से इस नीयत की क़सम क्यों लेते उन्होंने कहा था **अन्ता तालिकुन तालिकुन तालिकुन** और आख़िरी दो तलाक़ों से पहली तलाक़ की ताकीद थी इसलिए इसे एक क़रार दिया गया। यह रिवायत निहायत सही क़ाबिले ऐतमाद है। चुनांचे इब्ने माजा फरमाते हैं कि **मा अशरफ़ा हाज़ल-हदीसु** यह हदीस क्या ही शरीफुल-असनाद है। अबू दाऊद ने फ़रमाया है। **हाज़ा असह्हु मिन हदीस इब्ने जुरैहिन**। यह रिवायत बमुक़ाबला रिवायत इब्ने जुरैज ज़्यादा सही है।

नम्बर (13) मोअत्ता इमाम मालिक व शाफ़ई व अबू दाऊद व बैहक़ी में बरिवायत मुआविया इब्ने अबी अयाश है कि किसी ने हज़रत अबू हुरैरह और अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से पूछा कि जो कोई अपनी बीवी को एक दम तीन तलाक़ें दे दे इसका क्या हुक्म है। हज़रत अबू हुरैरह ने फरमाया कि एक तलाक़ उसे जुदा कर देगी और तीन हराम कि बग़ैर हलाला निकाह दुरुस्त न होगा। अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास ने इसकी ताईद फरमाई। इबारत यह है।

नम्बर (14) बैहक़ी ने बसाम सरीक़ी से रिवायत की कि इमाम जाफर इब्ने मुहम्मद फरमाते हैं कि जो कोई अपनी बीवी को नादानी से या जान बूझ कर तीन तलाक़ें दे दे वह औरत उस पर हराम हो जाएगी।

नम्बर (15) इसी बैहक़ी ने मुसल्लमा इब्ने जाफर अहमद से रिवायत की कि मैंने इमाम जाफर इब्ने मुहम्मद रज़ि अल्लाहु अन्हु से पूछा कि क्या आप यह फरमाते हैं कि जो कोई एक दम तीन तलाक़ें दे तो एक ही तलाक़ वाक़े होगी? फरमाया मआज़ल्लाह हमने यह कभी न कहा उसकी तलाक़ें तीन ही होंगी। (तफ़सीरे रूहुल-ब्यान पारह दोम)

नम्बर (16) मुस्लिम शरीफ़ **किताबुत्तलाक़ बाबुत्तलाक़ अस्सलासा** (सफ़: 478) में है कि उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु के ज़माना में यह क़ानून बना दिया

गया कि एक दम तीन तलाक़ें तीन ही होंगी।

नम्बर (17) इस हदीस की शरह नुववी में है कि सहाबा किराम का इज्मा इस पर है कि तीन तलाक़ें तीन ही होंगी। और ज़ाहिर है कि सहावा किराम कभी ग़लत पर इज्मा नहीं कर सकते।

नम्बर (18) जब शौहर को तीन तलाक़ें देने का हक़ है तो क्या वजह है कि वह दे तीन और पड़े एक मालिक का तसर्रुफ मोतबर होना चाहिए।

नम्बर (19) फ़ेअल हराम होने से क़ानून नहीं बदल जाता। एक दम तीन तलाक़ें देना बेशक सख़्त मना है लेकिन जब शौहर तीन तलाक़ें मुँह से बोल रहा है तो वाक़े क्यों न हों। देखो चोरी की छुरी से जानवर ज़िबह करना हराम है लेकिन अगर कोई ज़िबह करे तो ज़बीहा बेशक हलाल है। बहालते हैज़ तलाक़ देना हराम है लेकिन अगर कोई दे दे तो वाक़े हो जाएगी।

नम्बर (20) इस्क़ात में मुसब्बब, सबब से वाबस्ता होता है कि सबब के होते ही मुसब्बब का होना ज़रूरी है। हिदाया जिल्द सोम **किताबुल-वकालत** में है। **लेअन्नल-हुक्मा फ़ीहा ला यक़्बलुल-फ़स्ला अनिस्सबबे लेअन्नहू इस्क़ातुन फ़युतलाशा**। इस्क़ात में हुक्म अपने सबब से अलाहिदा नहीं हो सकता तलाक़ बोलना सबब है और तलाक़ वाक़े होना इसका हुक्म। और तलाक़े ज़ौज की मिल्कीयत का महज़ साक़ित करना है। नामुम्किन है कि सबब पाया जाए और हुक्म न पाया जाए कि बोले तीन और पड़े एक।

नम्बर (21) जम्हूर उलमा खुसूसन चारों इमाम अबू हनीफ़ा व शाफ़ई व मालिक व अहमद रहमतुल्लाह अलैहिम का यही मज़हब कि एक दम तीन तलाक़ें देने से तीन ही वाक़े होंगी। इसकी मुख़ालिफ़त उम्मते मुस्लेमा की मुख़ालिफ़त है जो गुम्राही है। ग़र्ज़कि यह मसला कुरआन व हदीस व इज्मा-ए-सहाबा व अक़्वाले उलमा मुहद्दसीन व मुफ़स्सेरीन व दलाइले अक़्लीया सब ही से साबित है इसकी मुख़ालिफ़त अक़्ल व नक़्ल की मुख़ालिफ़त है।

दूसरा बाब

इस मसअला पर ऐतराज़ात व जवाबात

ग़ैर मुक़ल्लेदीन इस मसअला पर अब तक हस्बे जैल ऐतराजात कर सकते हैं इंशाअल्लाह इससे ज़्यादा उन्हें न मिलेंगे बल्कि आम ग़ैर मुक़ल्लिदों को तो इतने भी नहीं मालूम जो हम उनकी वकालत में बयान करते हैं।

पहला ऐतराज़ : रब तआला फरमाता है। **अत्तलाक़ु मर्रताने फ़इम्साकुन बेमअ्रूफ़िन औ तस्रीहुन बेएहसानिन**। कुछ आगे चल कर इरशाद होता है। **फ़इन तल्लक़हा फ़ला तहिल्लु लहू मर्रताने** और **फ़इन** की 'फ़' से मालूम हुआ कि तलाक़ें अलग अलग चाहिएं। एक दम तीन तलाक़ें अलग अलग कहाँ हुई। और **मर्रताने** अलाहिदगी बताता है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि इस आयत का यह मतलब हरगिज़ नहीं कि एक दम तीन तलाक़ें एक ही होंगी बल्कि मक़सद यह है कि तलाक़े रज्ई दो तलाक़ें हैं। **अत्तलाक़ु** में अलिफ लाम अह्दी है। फिर फरमाया गया कि जो क़ोई दो से ज़्यादा यानी तीन दे तो बग़ैर हलाला उसे औरत हलाल नहीं। तफ़्सीरे अहमदी व सावी व जलालैन में है। **अत्तलाक़ु अयित-ततलीकु अल्लज़ी युराजओ बअदहू मर्रताने ऐ इस्नताने।** दूसरे यह कि अगर मान लिया जाए कि **मर्रताने** से तलाक़ों की अलाहिदगी मुराद है तो यह कहना कि तुझे तलाक़ है तलाक़ है इसमें भी तलाक़ों की लफ़्ज़न अलाहिदगी है और यह कहना कि तुझे तीन तलाक़ें हैं। इसमें अददी अलाहिदगी क्योंकि अलाहिदगी के बग़ैर अदद कैसे बनेगा? आयत का मतलब कहाँ से निकाला गया कि तलाक़ों के दरम्यान एक हैज़ का फ़ासला होना शर्त है। रब तआला फरमाता है। **सुम्मा इरजेइल-बसरा कर्रतैने।** फिर आसमान को बार बार देखो इसका यह मतलब नहीं कि एक महीना एक ही बार देख लिया करो। तीसरे यह कि तुम्हारी तफ़्सीर से भी आयत का यह मतलब बनेगा कि तलाक़ें अलग अलग होनी चाहिए। हम भी यही कहते हैं कि बेशक एक दम तलाक़ें देना सख़्त मना है अलग-अलग ही देना ज़रूरी है मगर सवाल तो यह है कि जो कोई हिमाक़त से एक दम तीन तलाक़ें दे दे तो वाक़े भी होंगी या नहीं। इस से आयत साकित है।

दूसरा ऐतराज़ : मुस्लिम शरीफ़ **किताबुत्तलाक़** (सफ़: 477) में अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि ज़मानए नबवी और ज़माना सिद्दीक़ी बल्कि शुरू अह्दे फ़ारूक़ी में भी हुक्म यह था कि एक दम तीन तलाक़ें एक होंगी।

और इसी मुस्लिम (सफ़: 478) में इसी जगह है कि अबू अस्सहबा ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से पूछा कि क्या आप जानते हैं कि ज़माना नब्वी और ज़माना सिद्दीक़ी में तीन तलाक़ें एक मानी जाती थीं। उन्होंने फ़रमाया हां इबारत यह है।

इन हदीसों से सराहतन मालूम हुआ कि एक दम तीन तलाक़ें एक हैं।

तंबीह : ग़ैर मुक़ल्लिदों का यह एक इंतेहाई ऐतराज़ है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। एक यह कि यह हदीस मन्सूख़ है क्योंकि सय्यदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास ही की तो यह रिवायत है और ख़ुद उन ही का यह फतवा है कि एक दम तीन तलाक़ें, तीन तलाक़ें ही होंगी। जिसका ज़िक्र पहले बाब में हो चुका। और जहाँ रावी हदीस का अमल अपनी रिवायत के ख़िलाफ़ हो वहाँ मालूम होगा कि उस रावी के इल्म में यह हदीस मन्सूख़

है। और सहाबा किराम की मौजूदगी में हज़रत उमर फ़ारूक़ का यह क़ानून बना देना कि एक दम तीन तलाक़ें तीन ही होंगी। और इस पर अमल दर आमद हो जाना और किसी सहाबी बल्कि ख़ुद सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास का इस पर ऐतराज़ न करना बआवाज़ बुलन्द ख़बर देता है कि वह हदीस या मन्सूख़ या माऊल है क्या सहाब-ए-किराम हदीस के ख़िलाफ़ इज्मा कर सकते हैं। दूसरे यह कि इस हदीस में उस औरत का तलाक़ देना मुराद है जिससे ख़ल्वत न हुई हो और वाक़ई अगर कोई शख़्स अपनी ऐसी बीवी को तीन तलाक़ें एक दम इस तरह दे कि तुझे तलाक़ है तलाक़ है तलाक़ है। तो अव्वल तलाक़ ही वाक़े होगी। और अख़ीर की दो तलाक़ें बेकार। चुनांचे अबू दाऊद **किताबुत्तलाक़ बाब नस्ख़ुल-मुराजअते बअ्दत्ततलीक़ाते अस्सलासे।** (सफ़: 299, मत्बा असहहुल-मताबे) में है कि अबू अस्सहबा ने अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से पूछा कि आपको ख़बर नहीं कि ज़माना नब्वी और ज़माना सिद्दीक़ी और शुरू ख़िलाफ़ते फ़ारूक़ी में जो कोई अपनी बीवी को तीन तलाक़ें देता तो एक ही मानी जाती थी। फरमाया हाँ जो ग़ैरे मदख़ूल बहा बीवी को तीन तलाक़ें देता था उनकी तलाक़ एक पड़ती थी। इबारत यह है।

इस हदीस में सराहतन मालूम हुआ कि मुस्लिम की रिवायत का यही मतलब है। और यह हुक्म अब भी बाक़ी है जैसा कि हम मुक़द्दमा में अर्ज़ कर चुके। तीसरे यह कि ज़मानाए नबवी और ज़मानाए सिद्दीक़ी में लोग तीन तलाक़ें इस तरह देते थे कि तुझे तलाक़ है तलाक़ तलाक़। गोया पिछली दो तलाक़ों से पहली तलाक़ की ताकीद करते थे। और ज़मानाए फारूक़ी में लोगों का यह हाल बदल गया कि वह तीन तलाक़ें ही देने लगे लिहाज़ा सूरत मसअला बदलने से हुक्म बदल गया नुववी शरीफ में है।

यानी चूंकि ज़मानाए नबवी में आम तौर पर लोग तीन तलाक़ों में अव्वल तलाक़ से तलाक़ की नीयत करते और पिछली दो से ताकीद करते थे। इसलिए जो कोई बेग़ैर नीयत के भी एक दम तीन तलाक़ें देता तो एक ही मानी जाती थी कि उस वक़्त ग़ालिब यही था मगर ज़मानाए फ़ारूक़ी में लोग आम तौर पर तीन तलाक़ों से तीन ही की नीयत करने लगे। इसलिए तीन जारी कर दी गईं। सूरते मसअला बदल ने से हुक्म मसला बदल गया। देखो कुरआन शरीफ़ में ज़कात के सिर्फ़ आठ मसरफ़ बयान हुए। मुअल्लिफ़तुल-कुलूब (कुफ़्फ़ार माइल ब–इस्लाम) को भी ज़कात देने की इजाज़त दी गई। मगर ज़मान-ए-फ़ारूक़ी में सहाबा किराम का इज्मा हो गया कि यह मसरफ़ ज़कात सिर्फ़ सात हैं मुअल्लिफ़तुल-कुलूब ख़ारिज क्यों कि नुज़ूले कुरआन

के वक़्त मुसलमानों की जमाअत थोड़ी और कमज़ोर थी इसलिए ऐसे काफ़िरों को ज़कात देकर माइल किया जाता था। अह्दे फ़ारूक़ी में न मुसलमानों की क़िल्लत रही न कमज़ोरी लिहाज़ा इनको ज़कात देना बन्द कर दिया गया। वजह बदलने से हुक्म बदला। नस्ख़ नहीं किया गया। अब तक ज़ैद फ़क़ीर था उसे ज़कात लेने का हुक्म दिया गया अब ग़नी हो गया तो ज़कात देने का हुक्म हो गया। कपड़ा नापाक था इससे नमाज़ नाजाइज़ क़रार दी अब पाक हो गया इससे नमाज़ जाइज़ हो गई। हिन्दुस्तान में आजकल कोई तलाक़ की ताकीद जानता भी नहीं तीन ही की नीयत से तलाक़ें देते हैं तो अजीब बात है कि सूरते मसअला कुछ और हुक्म और दिया जाए। अल्लाह ग़ैर मुक़ल्लिदों को अक़्ल दे जिससे हदीस का मक़सद सही समझा करें।

तीसरा ऐतराज़ : अबू दाऊद जिल्द अव्वल और मंसूर जिल्द अव्वल सफ़: 279 व अब्दुर्रज़्ज़ाक़ बैहक़ी ने अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से रिवायत की है कि अब्दे यज़ीद अबू रुकाना ने अपनी बीवी उम्मे रुकाना को तलाक़ दी हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया कि तलाक़ से रुजूअ कर लो। उन्होंने अर्ज़ किया कि हुज़ूर मैंने तीन तलाक़ें दी हैं। फरमाया हाँ हम जानते हैं मगर रुजूअ करो। और यह आयत तिलावत फरमाई।

अगर इकट्ठी तीन तलाक़ें तीन ही वाक़े होतीं तो रुजूअ ना मुम्किन था वहाँ तो हलाला की ज़रूरत दर पेश आती। मालूम हुआ कि एक तलाक़ बाक़ी रखी गई और दो को रद कर दिया गया। ख़्याल रहे कि ख़ुद अबू रुकाना अर्ज़ कर रहे हैं कि मैंने तीन तलाक़ें दी हैं यहाँ ताकीद का गुमान नहीं और फिर भी तलाक़ एक ही मानी गई।

जवाब : अफसोस कि मोतरिज़ ने अबू दाऊद और बैहक़ी की आधी रिवायत नक़्ल की आगे इस ऐतराज़ का निहायत नफ़ीस जवाब वहाँ ही दिया गया है जिसे मोतरिज़ छोड़ गया। इस जगह अबू दाऊद व बैहक़ी में है कि नाफ़े इब्ने अजीर और अब्दुल्लाह इब्ने अली इब्ने यज़ीद इब्ने रुकाना ने अपने दादा रुकाना से रिवायत की कि उन्होंने अपनी बीवी को तलाक़े बत्ता दी थी लिहाज़ा हुज़ूर ने उनकी बीवी को उनकी तरफ वापस कर दिया। यह हदीस दीगर अहादीस से ज़्यादा सही है। क्योंकि उनका बेटा और उसके घर वाले उसके हालात से बमुक़ाबला ग़ैरों के ज़्यादा वाक़िफ़ होते हैं रुकाना के पोते तो फरमाते हैं कि मेरे दादा ने मेरी दादी को तलाक़े बत्ता दी और दीगर हज़रात फरमाते हैं कि तलाक़ें तीन दीं। ला मुहाला पोते की रिवायत ज़्यादा सही होगी।

ख़ुलासा यह कि तीन तलाक़ वाली रिवायत सब ज़ईफ़ हैं बल्कि इमाम बैहक़ी ने इसी जगह फ़रमाया है कि अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास की रिवायत तो यह है कि अबू रुकाना ने तीन तलाक़ें दी थीं और उन्हें अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से आठ रिवायतें इसके ख़िलाफ़ हैं और फिर रुकाना की औलाद से भी तलाक़े बत्ता की रिवायत है। बताओ कि तीन तलाक़ों वाली एक रिवायत मोतबर होगी या तलाक़े बत्ता वाली आठ और एक नौ रिवायतें।

हम पहले बाब में अर्ज़ कर चुके हैं कि अबू रुकाना ने बारगाहे नबी में अर्ज़ किया था कि या हबीबल्लाह मैंने एक तलाक़ की नीयत की थी। और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उस पर क़सम भी ली थी तब उन्हें रुजूअ का हुक्म दिया। इमाम नुववी ने फ़रमाया कि अबू रुकाना की तीन तलाक़ों की रिवायत ज़ईफ़ है और मजहूल लोगों से मरवी है उनकी तलाक़ के मुतअल्लिक़ सिर्फ़ वही रिवायत सही है जो हम बयान कर चुके हैं कि उन्होंने तलाक़े बत्ता दी थी। और लफ़्ज़ बत्ता में एक का भी पहलू होता है। और तीन का भी। शायद तीन तलाक़ के ज़ईफ़ रावी ने समझा कि बत्ता तीन तलाक़ को कहते हैं। इसलिए बजाए बत्ता के तीन की रिवायत बिल-माना कर गया जिसमें उसने सख़्त ग़लती की है।

चौथा ऐतराज़ : सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने अपनी बीवी को बहालते हैज़ तीन तलाक़ें इकट्ठी दी थीं। जिन्हें हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक क़रार दिया। और इससे रुजूअ करने का हुक्म दिया अगर यह तलाक़ें तीन ही होतीं तो रुजूअ नामुम्किन होता।

जवाब : यह ग़लत है हक़ यह है कि सैयदना अब्दुल्लाह बिन उमर ने अपनी बीवी को बहालते हैज़ तलाक़ एक ही दी थी नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने रुजूअ का हुक्म दिया क्योंकि तलाक़ बहालते तुहर देनी चाहिए। चुनांचे मुस्लिम शरीफ़ जिल्द अव्वल **बाब तहरीमुत्तलाक़े अल-हाइज़** में है।

पाँचवाँ ऐतराज़ : तफ़सीरे कबीर जिल्द दौम सफ़ः 47 **अत्तलाक़ु मर्रताने** की तफ़्सीर में है।

यानी तलाक़े शरई अलग अलग बग़ैर जमा किए देना वाजिब है यही उन लोगों की तफ़्सीर है जिन्होंने कहा है कि इकट्ठी तीन तलाक़ें देना हराम है इससे मालूम हुआ कि एक दम तीन तलाक़ें शरई तलाक़ नहीं।

जवाब : इसका कौन मुंकिर है। बेशक तलाक़ें अलग अलग ही देना ज़रूरी हैं गुफ़्तगू इसमें है कि अगर कोई अपनी हिमाक़त से तीन तलाक़ें इकट्ठी दे दे तो वाक़े भी होंगी या नहीं। तफ़सीर कबीर की इस इबारत में यह

कहाँ है कि तीन वाक़े न होंगी सिर्फ़ यह है कि यह काम नाजाइज़ है। किसी चीज़ का हराम होना और चीज़ है और इस पर शरई अहकाम का मुरत्तब होना कुछ और। रमज़ान शरीफ़ में खाना पीना हराम है लेकिन अगर कोई खा जाए तो उसका रोज़ा ज़रूर टूट जाएगा। ज़िना हराम है लेकिन अगर कोई करे तो उस पर गुस्ल ज़रूर वाजिब हो जाएगा। हुर्मत का असर असबाब की सबबीयत पर नहीं पड़ता।

छठा ऐतराज़ : तफ़्सीरे कबीर मिसरी जिल्द दोम सफ़ः 247 में है।

यानी बहुत उलमा-ए-दीन ने यह भी इख़्तियार किया है कि अगर कोई इकट्ठी दो या तीन तलाक़ें दे दे तो उससे एक ही वाक़े होगी। मालूम हुआ कि आम उलमा-ए-इस्लाम के नज़्दीक इकट्ठी तीन तलाक़ें एक ही होती हैं।

जवाब : मोतरिज़ ने यह न बताया कि वह कौन से उलमा हैं जिनका यह मज़हब है। आओ हम बताएं वह उलमा इब्ने तैमिया और इसके वहाबी पैरोकार हैं उन्हीं का यह मज़्हब है जैसा कि हम पहले बाब में तफ़्सीरे सावी के हवाला से नक़्ल कर चुके हैं और इब्ने तैमिया और उसके मुत्तबईन को उलमा-ए-किराम ने गुम्राह और गुम्राह गर लिखा है। नीज़ मोतरिज़ ने तफ़्सीरे कबीर की पूरी इबारत नक़्ल न की। इस इबारत के आगे यह है।

वल-क़ौलुस्सानी वहुवा क़ौलुन अबी हनीफ़तन रज़ि अल्लाहु अन्हु इन्नहू व इन काना मुहर्रमन इल्ला अन्नहू यक़ओ। यानी दूसरा क़ौल इमाम अबू हनीफ़ा का है कि इकट्ठी तीन तलाक़ें देना अगरचे मना है लेकिन वाक़ेअ् हो जायेगी। कुछ आगे जाकर तफ़्सीर कबीर ने फ़रमाया कि अइम्मा मुज्तहेदीन का यही मज़्हब है कि जिसे तीन तलाक़ें दी जाएं वह शौहर के लिए हलाल नहीं। देखो तफ़्सीर कबीर मिसरी जिल्द दोम सफ़ः 295।

सातवाँ ऐतराज़ : अक़्ल भी चाहती है कि इकट्ठी तीन तलाक़ें एक ही मानी जाएं। क्योंकि जिन जिन चीज़ों की अलाहिदगी का हुक्म है। उनको इकट्ठा कर देना एक के हुक्म में होता है। मसलन लेआन में अलग अलग चार क़समें खाना वाजिब है। और हज में जमरों पर अलग अलग सात कंकर मारना वाजिब हैं अगर कोई चारों क़सम एक लफ़्ज़ से खाए। तो यह एक क़सम मानी जाएगी कि तीन क़समें और खानी पड़ेंगीं। अगर कोई सातों कंकर एक दम फेंक दे तो वह एक ही रमी मानी जाएगी और छेः कंकर उसके अलावा मारने होंगे। ऐसे ही अगर कोई क़सम खाए कि मैं हज़ार दरूद पढ़ूँगा और फिर इस तरह पढ़े **अल्लाहुम्मा सल्ले अला सैयदना मुहम्मदिन अल्फ़ा मर्रतिन।** तो इसका यह दरूद हज़ार न माना जाएगा बल्कि एह की

माना जाएगा। लिहाज़ा चाहिए कि अगर कोई एक दम तीन तलाक़ें दे दे तो एक ही वाक़े हो न कि तीन।

जवाब : अल्हम्दुं लिल्लाह आप क़्यास के तो क़ाइल हुए और आपने क़्यास करने की ज़हमत गवारह फरमाई मगर जैसे आप वैसे आपका क़्यास। जनाब लेआन और रमी में फ़ेअल मक़्सूद है न कि उसका असर और तलाक़ में असर मक़्सूद है न कि महज़ फ़ेअल। लिहाज़ा यह क़्यास सही नहीं। लेआन की हर क़सम एक गवाह के क़ाइम मक़ाम है जब कि ज़िना में गवाहियाँ चार हैं तो लेआन में जो इसका क़ाइम मक़ाम है यानी फ़ेअल क़सम भी चार ही चाहिए। बयक लफ़्ज़ चार क़समें खाने में फ़ेअल एक ही हुआ। नीज़ रमी जमरों में सात फ़ेअल चाहिएं। एक दम सात कंकर फेंक देने में मफ़ऊल सात हुए। मगर फ़ेअल एक चूंकि हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने रमी में सात फ़ेअल फरमाए हैं इसकी पैरवी चाहिए। दरूद शरीफ़ में सवाब बक़द्रे मेहनत मिलता है एक हज़ार दरूद की मिन्नत इतनी मेहनत की मिन्नत है और ज़ाहिर है कि एक बार **अल्फ़ु मर्रतिन** कह लेने में हज़ार दरूद की मेहनत नहीं पड़ती। लिहाज़ा उनके अहकाम भी मुख़्तलिफ़, क़सम का मदार उर्फ़ पर होता है तलाक़ कौन सा सवाब का काम है ताकि इसमें ज़्यादा मेहनत का ज़्यादा सवाब मिले। ग़र्ज़ेकि तमाम ऐतराज़ात मकड़ी के जाले की तरह कमज़ोर हैं इन सब की बिना तन आसानी और नफ़्स परवरी है। खुदा तआला कुरआन व हदीस की सही फ़हम अता फरमाए।

अगर तीन तलाक़ों से एक ही वाक़े हो और शौहर बीवी से अलग हो जाए तो कोई हरज नहीं लेकिन अगर तीनों वाक़े हो जाएं और बग़ैर हलाला रुजूअ कर लिया जाए तो उम्र भर हराम कारी होगी लिहाज़ा एहतियात भी इसी में है कि तीन तलाक़ें तीन ही मानी जाएं इसलिए उलेमाए उसूल फ़रमाते हैं कि जायज़ और टकराव में जब हराम हो तो हराम को तरजीह होती है।

वसल्लल्लाहु तआला अला ख़ैरे ख़ल्क़ेही व नूरे अरशेही सैय्यिदना व मौलाना मुहम्मदिन व आलेही व अस्हाबेही अज्मईन बेरहमतेही वहुवा अरहमुर्राहेमीन।

अहमद यार ख़ाँ

بِسْمِ اللّٰہِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

मुसम्मा बेहि

जा-अल-हक़

व-ज़हक़ल बातिल

1403 हिजरी

फ़ैसल-ए-मसाइल

हिस्सा दोम

जिसमें मौजूदा ज़माना के आम इख़्तिलाफ़ी मसाइल का निहायत तहक़ीक़ी और दलील के साथ फ़ैसला कर दिया गया है

लेखक

हज़रत मौलाना मुफ़्ती

अहमद यार ख़ाँ

साहब नईमी अलैहिर्रहमा

प्रकाशक

रज़वी किताब घर

425, उर्दू मार्किट, मटिया महल, जामा मस्जिद, दिल्ली-110006 Phone : 011 - 23264524

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

अल्हम्दु लिल्लाहे वकफा वस्सलातु वस्सलामु अला सैय्यिदिल-अंबियाए मुहम्मदनिल-मुस्तफ़ा व अला आलेही व अस्हाबेही ऊलिस्सिदक़े वस्साफ़ा।

जानना चाहिए कि मौजूदा दौर बहुत फ़ितना व फसाद का ज़माना है। कुफ़्र व इल्हाद बेदीनी की होश रुबा आंधियाँ चल रही हैं। बद मज़हबी ला दीनी नई नई सूरतों में नमूदार हो रही है मुसलमान को ईमान संभालना मुश्किल हो गया है इस वक़्त वही ईमान संभाल सकता है जो किसी मक़बूले बारगाह बन्दे के दामन से जुड़ा हो।

इन फितनों में से एक खतरनाक फितना वहाबियत नज्दियत ग़ैर मुक़ल्लदीयत का है जो इत्तिबा-ए-सुन्नत के पर्दा में नमूदार हुआ है। यह लोग अह्ले हदीस के नाम से लोगों को फ़रेब देते हैं। अपने सिवा सब को मुश्रिक समझते हैं तक़्लीदे शख़्सी को शिर्क कहते हैं उनकी हालत यह है कि जाहिल से जाहिल ग़ैर मुक़ल्लिद अपने को मुज्तहिद मुतलक़ समझ कर बड़े बड़े उलमा सूफिया अइम्मा दीन के मुँह लगने की कोशिश करता है।

जिस अहमक़ को यह भी पता नहीं कि हदीस क्या है और सुन्नत क्या। बल्कि जिसे अरबी इबारत पढ़नी नहीं आती वह आमीन बिल-जेहर व रफ़अ़ यदैन की चार हदीसें याद करके अपने आपको इमाम अबू हनीफ़ा से बढ़ कर समझता है। फ़क़ीर ने अपनी किताब जा-अल-हक़ जिल्द अव्वल में मसअलए तक़्लीद और ज़मीमा ज़ा-अल-हक़ में बीस रकाअत तरावीह और तीन तलाक़ पर मारकतुल-आरा बहस की। जा-अल-हक़ में यह वादा किया गया था कि हम इसका हिस्सा दोम भी तहरीर करेंगे। बहुत अरसा तक यह वादा पूरा करने का मौक़ा न मिला।

फिर कुछ अहबाब का इसरार हुआ कि दूसरे हिस्सा में ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों की पुर ज़ोर तरदीद की जाए और अहनाफ के खिलाफ दलाइल ग़ैर मुक़ल्लिदों के दंदां शिकन जवाब दिए जाएं। मगर इस हुक्म की तामील में देर ही होती चली गई। और हमने इन मसाइल पर अपने फतावा नईमिया और हाशिया बुख़ारी नईमुल-बारी अरबी में मुफ़स्सल गुफ़्तगू की। ख़्याल था कि अब अलाहिदा किताब लिखने की ज़रूरत नहीं। मगर बुज़ुर्गों का इसरार हुआ कि इन मसाइल पर मुस्तक़िल किताब उर्दू ज़बान में लिखी जाए तो कल्ला अलल्लाह इधर तवज्जोह की इस हिस्सा का तरीक़ा वही होगा। जो जा-अल-हक़ हिस्सा अव्वल का है कि हर मसअला अलग बाब में बयान

होगा। और हर बाब में दो फस्लें होंगी पहली फस्ल में हन्फ़ीयों के दलाइल दूसरी फ़स्ल में ग़ैर मुक़ल्लिदों के सवालात व जवाबात।

ग़ैर मुक़ल्लिदों का तरीक़ा यह है कि अपने मुख़ालिफ़ की हर हदीस को ज़ईफ़ कहे देते हैं और किसी न किसी माकूल ना माकूल हवाला की आड़ लेते हैं हालांकि मुहद्देसीन के नज़्दीक जरहे मुब्हम मोतबर नहीं। और अगर जरह व तादील में मुक़ाबला हो तो तादील मुक़द्दम है।

और किसी सनद के ज़ईफ़ होने से मतने हदीस का ज़ुअफ़ लाज़िम नहीं और बाद का ज़ुअफ़ पहले वालों को मुज़िर नहीं यह तमाम बहसें इंशाअल्लाह मुक़द्दमा में की जाएंगी।

मगर इन अक़्लमन्दों को इससे क्या ग़रज़ उन्हें सिर्फ़ ज़ईफ़ का सबक़ याद है उनके इस ज़ईफ़ ज़ईफ़ के रट लगाने से आज मुसलमानों में मुन्केरीने हदीस पैदा कर दिए जो कहने लगे कि किसी हदीस का ऐतबार नहीं सब ज़ईफ़ ही हैं सिर्फ़ कुरआन को मानो।

और मक़ाम तअज्जुब है कि ग़ैर मुक़ल्लिद इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु वग़ैरहुम की तक़्लीद को शिर्क कहते हैं। मगर इब्ने जौज़ी वग़ैरह नाक़ेदीने हदीस कि ऐसे अंधे मुक़ल्लिद हैं कि जिस हदीस को वह ज़ईफ़ कह दें इसे बग़ैर सोचे समझे आंखें बन्द करके मान लेते हैं चूंकि इस वक़्त ग़ैर मुक़ल्लेदीन का फ़ित्ना बढ़ रहा है।

इसलिए फ़क़ीर ने उनके जवाब में क़लम उठाया। क़लम तो उठा दिया मगर मुझे अपनी बे बज़ाअती व कम इल्मी का ऐतराफ़ व इक़रार है। अपने रब्बे करीम के करम और उसके हीबी रऊफ़ व रहीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के फ़ज़्ल पर भरोसा है।

रब तआला इस रिसाला को क़बूल फ़रमाए मेरे लिए इसे कफ़्फ़ाराए सैय्आत व सदक़ए जारिया बनाए। इसका नाम जा-अल-हक़ हिस्सा दोम रखता हूँ जो कोई इससे फाइदा उठाए वह मुझ फ़क़ीर बे नवा के हुस्ने ख़ातमा की दुआ करे अल्लाह उसे जज़ाए ख़ैर दे।

वमा तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाहे अलैहि तवक्कल्तु व इलैहि उनीब।

अहमद यार ख़ाँ- नईमी अशरफ़ी

बदायूनी ख़तीब जामा मस्जिद ग़ौसिया चौक
पाकिस्तान गुजरात, यकुम माह रमज़ानुल–मुबारक 1376 हिज.
2 अप्रैल 1957 ई. दो शंबा मुबारका

मुक़द्दमा

असल किताब के पढ़ने से, पहले नीचे लिखे क़वाइद अच्छी तरह पढ़कर याद फ़रमा लें यह क़वाइद बहुत ही कार आमद हैं।

क़ायदा नम्बर 1 : अस्नाद के लिहाज से हदीस की बहुत क़िस्में हैं। मगर हम सिर्फ़ तीन क़िस्मों का ज़िक्र करते हैं। हदीसे सहीह, हदीसे हसन, हदीसे ज़ईफ़।

सहीह : वह हदीस है जिसमें चार ख़ूबियाँ हों (1) इसकी अस्नाद मुत्तसिल हो कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से लेकर मुअल्लिफ किताब तक कोई रावी किसी जगह छोटा न हो। (2) इसके सारे रावी अव्वल दरजा के मुत्तक़ी परहेज़गार हों। कोई फासिक़ या मस्तूरुल-हाल न हो। (3) तमाम रावी निहायत क़वीयुल-हाफ़िज़ा हों कि किसी का हाफ़िज़ा बीमारी या बुढ़ापे की वजह से कमज़ोर न हो। (4) वह हदीसे शाज़ यानी अहादीसे मशहूरा के ख़िलाफ़ न हो।

हसन : वह हदीस है जिसके किसी रावी में यह सिफ़ात आला दरजा के न हों। यानी किसी तक़्वा या कुव्वते हाफ़िज़ा आला दरजा का न हो।

ज़ईफ़ : वह हदीस है जिसका कोई रावी मुत्तक़ी या क़वीयुल-हाफ़िज़ा न हो यानी जो सिफात हदीस सहीह में मोतबर थीं उन में से कोई एक सिफ़त न हो।

क़ायदा नम्बर २ : पहली दो क़िस्में यानी सहीह और हसन अहकाम और फ़ज़ाइल सब में मोतबर हैं। लेकिन हदीसे ज़ईफ़ सिर्फ़ फज़ाइल में मोतबर है। अहकाम में मोतबर नहीं। यानी इस से हलाल व हराम अहकाम साबित न होंगे हाँ आमाल या किसी शख़्स की अज़्मत व फ़ज़ीलत साबित हो सकती है।

नतीजा : ज़ईफ़ हदीस झूठी या ग़लत या गढ़ी हुई हदीस को नहीं कहते जैसा कि ग़ैर मुक़ल्लिदों ने अवाम के ज़हन नशीन करा दिया है कि लोगों ने उसे खा जाने वाला हव्वा समझ रखा है बल्कि मुहद्देसीन ने महज़ एहतियात की बिना पर इस हदीस का दरजा पहली दो से कुछ कम रखा है।

क़ायदा नम्बर 3 : अगर हदीसे ज़ईफ़ किसी वजह से हसन बन जाए तो वह भी मुतलक़न मोतबर है। इससे अहकाम व फ़ज़ाइल सब कुछ साबित हो सकते हैं।

क़ायदा नम्बर 4 : हस्बे ज़ैल चीज़ों से हदीस ज़ईफ़ हसन बन जाती है। दो या ज़्यादा सनदों से रिवायत हो जाना अगर चे वह सब अस्नादें ज़ईफ़ हों यानी अगर एक हदीस चन्द ज़ईफ़ रिवायतों से मरवी हो जाए तो तो अब

वह ज़ईफ़ न रही हसन बन गई।

1 : मिर्क़ात, मौज़ूआते कबीर, शामी, मुक़द्दमा मिशकात शरीफ़ मौलाना अब्दुल-हक़, रिसाल-ए-उसूल हदीस लिल-जर जानी अव्वल तिर्मिज़ी शरीफ़ वग़ैरह।

2 : उलमा-ए-कामिलीन के अमल से ज़ईफ़ हदीस हसन बन जाती है यानी अगर हदीस ज़ईफ़ पर उलमाए दीन अमल शुरू कर दें तो वह ज़ईफ़ न रहेगी। हसन हो जाएगी। इसीलिए इमाम तिर्मिज़ी फरमा देते हैं।

तरजमा : यह हदीस है तो ग़रीब या ज़ईफ़ मगर अह्ले इल्म का इस पर अमल है।

तिर्मिज़ी के इस क़ौल का मतलब यह नहीं कि यह हदीस है तो ज़ईफ़ ना क़ाबिले अमल मगर उलमा-ए-उम्मत ने बेवकूफ़ी से अमल कर लिया और सब गुम्राह हो गए। बल्कि मतलब यही है कि हदीस रिवायत के लिहाज़ से ज़ईफ़ थी। मगर उलमा-ए-उम्मत के अमल से क़वी हो गई।

3 : उलमा के तजरबा और औलिया के कश्फ़ से ज़ईफ़ हदीस क़वी हो जाती है। शैख़ मुहीयुद्दीन इब्ने अरबी ने एक हदीस सुनी थी कि जो सत्तर हज़ार बार कलिमा तैयबा पढ़े उसकी मग़्फ़िरत हो जाती है। एक दफ़ा एक जवान ने कहा कि मैं अपनी मरी हुई माँ को दोज़ख़ में देखता हूँ। शैख़ सत्तर हज़ार बार कलिमा पढ़े हुए थे अपने दिल में उसकी मां को बख़्श दिया। देखा कि जवान हंस पड़ा और बोला अपनी मां को जन्नत में देखता हूँ। शैख़ फरमाते हैं कि मैंने इस हदीस की सेहत उस वली के कश्फ़ से मालूम की (सहीहुल-बिहारी) तहज़ीरुन्नास मुसन्नेफ़ा मौलाना मुहम्मद क़ासिम में यही वाक़या जुनैद रहमतुल्लाह अलैह का नक़्ल फरमाया।

क़ायदा नम्बर 5 : अस्नाद के ज़ुअफ़ से मतने हदीस का ज़ुअफ़ लाज़िम नहीं। लिहाज़ा यह हो सकता है कि एक हदीस एक अस्नाद में ज़ईफ़ हो दूसरी अस्नाद में हसन हो। तीसरी में सहीह इसी लिए इमाम तिर्मिज़ी एक हदीस के मुतअल्लिक़ फरमा देते हैं।

हाज़ल-हदीसु हसनुन सहीहुन ग़रीबुन।

तरजमा : यह हदीस हसन भी है सहीह भी है ग़रीब भी।

तिर्मिज़ी के इस क़ौल का मतलब यही होता है कि यह हदीस चन्द सनदों से मरवी है एक अस्नाद से हसन है दूसरी से सहीह तीसरी से ग़रीब।

क़ायदा नम्बर 6 : बाद का ज़ुअफ़ अगले मुहद्दिस या मुज्तहिद के लिए मुज़िर नहीं। लिहाज़ा अगर एक हदीस इमाम बुख़ारी या तिर्मिज़ी को ज़ईफ़ हो कर मिली हो क्योंकि इसमें एक रावी ज़ईफ़ शामिल हो गया। तो हो सकता है कि वही हदीस इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह को सनदे सहीह से मिली हो। आपके ज़माना तक वह ज़ईफ़ रावी इसकी अस्नाद में

शामिल न हुआ हो। लिहाज़ा किसी वहाबी को यह साबित करना आसान नहीं कि यह हदीस इमाम आज़म को ज़ईफ़ हो कर मिली।

लतीफ़ा : एक दफ़ा एक वहाबी ग़ैर मुक़ल्लि से **क़िराअते ख़ल्फ़ल-इमाम** पर हमारी मामूली गुफ़्तगू हुई हमने यह हदीस पेश की।

क़िराअते ख़ल्फ़ल-इमामे लहू क़िराअतुन।

तरजमा : इमाम की क़िराअत मुक़्तदी की क़िराअत है।

वहाबी जी बोले कि यह हदीस ज़ईफ़ है इसकी अस्नाद में जाबिर जअफ़ी है जो ज़ईफ़ है हम ने पूछा कि जाबिर जअफ़ी कब पैदा हुआ था जिसकी वजह से यह हदीस ज़ईफ़ है तड़प कर बोले 253 हिज. में हमने कहा कि जब इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु ने इस हदीस से इस्तेदलाल फ़रमाया था तब जाबिर अपने बाप की पुश्त में भी न आए थे क्योंकि इमामे आज़म की विलादत 80 हिज. में है और वफ़ात 150 हिज. में लिहाज़ा उस वक़्त यह हदीस बिल्कुल सहीह थी। बाद के मुहद्देसीन को ज़ईफ़ हो कर मिली वहाबी साहब से इसका जवाब न बन पड़ा बग़ैर जवाब दिए फ़ौत हो गए।

लिहाज़ा हन्फ़ी उलमा को ख़्याल रखना चाहिए कि वहाबी को ज़ईफ़ कहने से रोकें वजह ज़ईफ़ पूछें फिर यह तहक़ीक़ करें कि ज़ुअफ़ इमामे आज़म से पहले का है या बाद का इंशाअल्लाह वहाबी जी पानी माँग जाएंगे और ज़ईफ़ ज़ईफ़ का सबक़ भूल जाएंगे। क्योंकि इमाम आज़म का ज़माना हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बहुत ही क़रीब है उस वक़्त हदीसें बहुत कम ज़ईफ़ थीं। इमाम साहब ताबई हैं।

क़ायदा नम्बर 7 : जरहे मुब्हम क़ाबिले क़बूल नहीं यानी किसी नाक़िदे हदीस ख़ुसूसन इब्ने जौज़ी वग़ैरह का यह कह देना कि फलां हदीस या रावी ज़ईफ़ है ग़ैर मोतबर है जब तक यह न बताए कि क्यों ज़ईफ़ है और इस रावी में क्या ज़ुअफ़ है क्योंकि वज्ह ज़ुअफ़ में अइम्मा का इख़्तिलाफ़ है एक चीज़ को कुछ ऐब समझते हैं कुछ नहीं। देखो तदलीस। इरसाल, घोड़े दौड़ाना, मज़ाक़ नौ उमरी फ़िक़ह में मश्ग़ूलियत को कुछ लोगों ने रावी का ऐब जाना है मगर हन्फ़ियों के नज़्दीक इन में से कुछ भी ऐब नहीं।

(नूरुल-अनवार बहस **तअन अलल-हदीसे**)

क़ायदा नम्बर 8 : अगर जरह व तादील में टकराव हो तो तादील क़बूल है न कि जरह यानी एक रावी को किसी मुहद्दिस ने ज़ईफ़ कहा किसी ने उसे क़वी फ़रमाया। कुछ तवारीख़ से उसका फ़िस्क़ साबित हुआ बाज़ ने फ़रमाया कि वह मुत्तक़ी सालेह था तो उसे मुत्तक़ी माना जाएगा और उसकी रिवायत ज़ईफ़ न होगी क्योंकि मोमिन में तक़्वा है।

क़ायदा नम्बर 9 : किसी हदीस के सहीह न होने से उसका ज़ईफ़ होना लाज़िम नहीं लिहाज़ा अगर कोई मुहद्दिस किसी हदीस के मुतअल्लिक़ यह

फ़रमा दें कि यह सहीह नहीं इसके मानी यह नहीं कि ज़ईफ़ है हो सकता है कि वह हदीस हसन हो सहीह व ज़ईफ़ के दरम्यान वहुत दरजे हैं।

क़ायदा नम्बर 10 : सहीह हदीस का दारो मदार मुस्लिम बुख़ारी या सिहाहे सित्ता पर नहीं। सिहाहे सित्ता को सहीह कहने का मतलब यह नहीं कि इनकी सारी हदीसें सहीह हैं इनके सिवा दूसरी कुतुब की सारी हदीसें ज़ईफ़ बल्कि सिर्फ़ मतलब यह है कि इनमें सहीह हदीसें ज़्यादा हैं। हमारा ईमान हुज़ूर मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर है न कि महज़ बुख़ारी मुस्लिम वग़ैरह पर। हुज़ूर की हदीस जहाँ से मिले हमारे सर आंखों पर है। बुख़ारी में हो या न हो। तअज्जुब है ग़ैर मुक़ल्लिदों पर कि इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु की तक़्लीद को शिर्क क़रार देते हैं। मगर मुस्लिम बुख़ारी पर ऐसा ईमान रखते हैं और उनकी ऐसी अंधी तक़्लीद करते हैं कि खुदा की पनाह!

क़ायदा नम्बर 11 : किसी आलिम फ़क़ीह मुहद्दिस का किसी हदीस को बग़ैर ऐतराज़ क़बूल कर लेना इस हदीस के क़वी होने की दलील है। अगर कोई फ़क़ीह आलिम मुज्तहिद ज़ईफ़ हदीस को क़बूल फ़रमावे तो इससे वह ज़ईफ़ हदीस क़वी हो जाएगी। वलीयुद्दीन मुहम्मद इब्ने अब्दुल्लाह ख़तीब तबरेज़ी साहब मिश्कात ख़ुत्ब-ए-मिश्कात में फ़रमाते हैं।

तरजमा : मैंने जब हदीस को इन मुहद्देसीन की तरफ मंसूब कर दिया तो गोया हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ ही मंसूब कर दिया।

इन क़वाइद से आप समझ गए होंगे कि इमाम आज़म अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु ने जिन अहादीस से इस्तिदलाल किया है इनमें कोई ज़ईफ़ नहीं। कि इन पर उम्मत का अमल है इनको उलमा फ़ुक़हा ने मक़्बूल फ़रमा लिया है। इनमें से हर हदीस बहुत अस्नादों से मरवी है। फ़क़ीर हक़ीर इंशाअल्लाह हर मसला पर इतनी हदीसें पेश करेगा जिन से कोई हदीस ज़ईफ़ न कही जा सके क्योंकि अस्नादों की कसरत ज़ईफ़ को हसन बना देती है। अहमद यार ख़ाँ।

क़ायदा नम्बर 12 : अगर हदीस व क़ुरआन में टकराव नज़र आए तो हदीस के मानी ऐसे करने चाहिएं जिससे दोनों में मुवाफ़िक़त हो जाए टकराव जाता रहे। ऐसे ही अगर हदीसें आपस में मुख़ालिफ़ मालूम हों तो उनके ऐसे मानी करने लाज़िम हैं कि मुख़ालिफ़त न रहे और सब पर अमल हो जाए इसकी मिसाल यह है कि रब फ़रमाता है।

तरजमा : जिस क़द्र क़ुरआन आसान हो, नमाज़ में पढ़ लो।

लेकिन हदीस शरीफ में है।

तरजमा : जो सूरः फ़ातिहा न पढ़े उसकी नमाज़ नहीं होती।

यह हदीस इस आयत की मुख़ालिफ़ मालूम होती है। लिहाज़ा हदीस के

मानी यह करो कि सूरः फ़ातिहा के बग़ैर नमाज़ कामिल नहीं होती। मुतलक़न क़िराअत नमाज़ में फ़र्ज़ है और सूरः फ़ातिहा पढ़ना वाजिब। टकराव उठ गया और कुरआन व हदीस दोनों पर अमल हो गया। और रब फ़रमाता है।

तरजमा : जब कुरआन पढ़ा जाए तो उसे कान लगा कर सुनो और चुप रहो।

लेकिन हदीस शरीफ में है।

तरजमा : जो सूरः फ़ातिहा न पढ़े उसकी नमाज़ नहीं होती।

यह हदीस इस आयत के खिलाफ मालूम होती है कि कुरआन मुतलक़न ख़ामोशी का हुक्म देता है और हदीस शरीफ मुक़्तदी को सूरः फ़ातिहा पढ़ने का हुक्म देती है लिहाज़ा यह मानो कि कुरआन का हुक्म मुतलक़ है और हदीस शरीफ़ का हुक्म अकेले नमाज़ी या इमाम के लिए है। मुक़्तदी के लिए इमाम का पढ़ लेना काफी है। कि यह इसकी हुक्मी क़िराअत है। ग़रज़कि यह क़ायदा निहायत अहम है। अगर कोई हदीस आयते कुरआनी के या अपनी से ऊपर वाली हदीस के ऐसे मुख़ालिफ़ मिले कि किसी तरह मुताबेक़त हो ही न सके तो फिर कुरआने करीम या उस से ऊपर वाली हदीस को तरजीह होगी। और यह हदीस क़ाबिले अमल न होगी। यह हदीस मन्सूख़ मानी जाएगी या हुज़ूर की खुसूसियत में से शुमार होगी। इसकी बहुत सी मिसालें हैं।

क़ायदा नम्बर 13 : हदीस का ज़ईफ़ हो जाना ग़ैर मुक़ल्लिदों के लिए क़्यामत है क्योंकि इनके मज़्हब का दारो मदार इन रिवायतों पर ही है। रिवायत ज़ईफ़ हुई तो उनका मसला भी फना हुआ मगर हन्फ़ियों के लिए कुछ मुज़िर नहीं क्योंकि हन्फियों के दलाइल यह रिवायतें नहीं उनकी दलील सिर्फ़ क़ौले इमाम है। क़ौले इमाम की ताईद यह रिवायतें हैं। हाँ इमाम की दलील कुरआन व हदीस हैं। मगर इमाम साहब को जब हदीसें मिलीं तो सहीह थीं कि उनकी अस्नादें यह न थीं जो मुस्लिम बुख़ारी की हैं। अगरचे पुलिस मुल्ज़िम को जेल में दे दे तो पुलिस की दलील हाकिम का फ़ैसला है न कि ताज़ीराते हिन्द के दफ़आत। हाँ हाकिम की दलील यह दफ़आत हैं यह बात ख़ूब याद रखो। तक़्लीद अल्लाह की रहमत है ग़ैर मुक़ल्लिदीयत रब का अज़ाब।

पहला बाब

कानों तक हाथ उठाना

नमाज़ में तक्बीरे तहरीमा के वक़्त मर्दों को कानों तक हाथ उठाना सुन्नत है। मगर वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिद औरतों की तरह कन्धों से अंगूठे छू कर हाथ बांध लेते हैं। लिहाज़ा हम इस बाब की दो फस्लें करते हैं। पहली फ़स्ल में

अपने हन्फ़ियों के दलाइल दूसरी फ़स्ल में ग़ैर मुक़ल्लिदों के ऐतराज़ात मअ् जवाबात। रब तआला क़बूल फ़रमाए।

पहली फ़स्ल

कानों तक हाथ उठाने की बहुत ही अहादीस हैं जिन में से हम चन्द पेश करते हैं।

हदीस नम्बर 1 ता 3 : बुख़ारी, मुस्लिम, तहतावी ने मालिक इब्ने हुवैरिस से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब तक्बीर फरमाते तो अपने हाथ मुबारक कानों तक उठाते दीगर अल्फ़ाज़ यह हैं कि कानों की लौ तक उठाते।

हदीस नम्बर 4 : अबू दाऊद शरीफ में हज़रत बरा बिन आज़िब से रिवायत है।

तरजमा : मैंने हुज़ूर को देखा कि जब नमाज़ शुरू फरमाते तो अपने हाथ मुबारक कान के क़रीब तक उठाते फिर रफा यदैन न फरमाते।

हदीस नम्बर 5 : मुस्लिम शरीफ ने हज़रत वाइल इब्ने हजर से रिवायत की।

तरजमा : उन्होंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखा कि हुज़ूर जब नमाज़ में दाख़िल होते तो अपने हाथ उठाते। एक रावी ने फरमाया कि अपने कानों के मुक़ाबिल फिर कपड़े में हाथ छुपा लिए।

जदीस नम्बर 6 ता 8 : बुख़ारी, अबू दाऊद, नसाई ने हज़रत अबू क़लाबा से रिवायत की।

तरजमा : मालिक इब्ने हुवैरिस ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखा कि आप हाथ शरीफ उठाते थे जब तक्बीरे तहरीमा फ़रमाते और जब रुकूअ से सर शरीफ उठाते यहाँ तक कि हाथ कानों की लौ को पहुँच जाते।

हदीस नम्बर 9 ता 12 : इमाम अहमद, अस्मा इब्ने राहवैह, दारे कुतनी, तहतावी ने बरा इब्नें आज़िब से रिवायत की।

तरजमा : जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़ पढ़ते तो यहाँ तक हाथ शरीफ उठाते कि आपके अंगूठे कानों के मुक़ाबिल हो जाते।

हदीस नम्बर 13 ता 15 : हाकिम ने मुस्तदरक में दार कुतनी और बैहक़ी ने निहायत सहीह अस्नाद से जो बशर्त मुस्लिम व बुख़ारी है हज़रत अनस से रिवायत की।

तरजमा : मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखा कि आपने तक्बीर कही और अपने अंगूठे अपने कानों के मुक़ाबिल कर दिए।

हदीस नम्बर 16 ता 17 : अब्दुर्रज़्ज़ाक़ और तहावी ने हज़रत बरा इब्ने आज़िब से रिवायत की।

तरजमा : जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़ शुरू फरमाने के लिए तक्बीर फरमाते तो यहाँ तक हाथ उठाते कि आपके अंगूठे की गुदिया के मुक़ाबिल हो जाते।

हदीस नम्बर 18 : अबू दाऊद ने हज़रत वाइल इब्ने हजर से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हाथ मुबारक उठाए यहाँ तक कि हाथ शरीफ तो कन्धों के और अंगूठे कानों के मुक़ाबिल हो गए।

हदीस नम्बर 19 : दारे कुतनी ने हज़रत बरा इब्ने आज़िब से रिवायत की।

तरजमा : जब उन्होंने देखा जब आपने नमाज़ शुरू की तो अपने हाथ मुबारक उठाए यहाँ तक कि उन्हें कानों के मुक़ाबिल फरमा दिया फिर नमाज़ से फ़रागत तक हाथ न उठाए।

हदीस नम्बर 20 : तहतावी शरीफ़ ने अबू हमीद साअदी से रिवायत की।

तरजमा : वह हुज़ूर के सहाबा से फरमाया करते थे कि तुम सबसे ज़्यादा हुज़ूर की नमाज़ को मैं जानता हूँ आप जब खड़े होते नमाज़ में तो तक्बीर फरमाते और अपने हाथ मुबारक चेहरा शरीफ के मुक़ाबिल तक उठाते।

कानों तक हाथ उठाने की और बहुत अहादीस पेश की जा सकती हैं सिर्फ़ बीस हदीसों पर किफायत करता हूँ। अगर ज़्यादा मतलूब हों तो कुतुबे अहादीस ख़ुसूसन सहीहुल-बिहारी शरीफ का मुताला करो कि इस जैसी किताब हन्फ़ी मज़हब की ताईद में अहादीस की जामेअ् आज तक न देखी गई।

अक़्ली इलाइल : अक़्ल भी चाहती है कि नमाज़ शुरू करते वक़्त कानों तक हाथ उठाए जाएं क्योंकि नमाज़ी नमाज़ शुरू करते वक़्त इबादत में मश्गूल होता है और दुनियावी झगड़ों से बेज़ार व बेतअल्लुक़ होता है खाना पीना बोलना इधर उधर देखना सबको अपने ऊपर हराम कर लेता है गोया दुनिया से निकल कर आलमे बाला की सैर करता है और उर्फ़ में जब किसी चीज़ से तौबा या बेज़ारी कराते हैं तो कानों पर हाथ रखवाते हैं। कन्धे नहीं पकड़वाते गोया नमाज़ी क़ौल से नमाज़ शुरू करता है और अपने अमल से कानों पर हाथ रख कर दुनिया से बेज़ार होता है। ऐसे मौक़े पर कन्धे पकड़ना बिल्कुल ही ख़िलाफ़े अक़्ल है जैसे सज्दे में मुसलमान ज़बान से तो रब तआला की अज़्मत व किब्रियाई का इक़रार करता है और सर ज़मीन पर रख कर अपने इज्ज़ व नियाज़ का इज़्हार। ऐसे ही शुरू नमाज़ के वक़्त एक हिस्से का इक़रार ज़बान से है दूसरे हिस्से का इज़्हार अमल से।

दूसरी फस्ल

इस मसअला पर ऐतराज़ व जवाब में

ग़ैर मुक़ल्लेदीन के पास इस मसला पर दो ऐतराज़ हैं जो हर जगह पेश करते हैं।

(1) मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत अबू हमीद साअदी से एक तवील हदीस नक़्ल की जिस में अल्फ़ाज़ यह हैं :

तरजमा : हुज़ूर जब तक्बीर फरमाते थे तो अपने हाथ शरीफ कन्धों के मक़ाबिल करते थे।

इन्हीं मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हुमा से यह अल्फ़ाज़ नक़्ल किए।

तरजमा : नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपने हाथ मुबारक अपने कंधों के मुक़ाबिल करते थे।

यह हदीस बहुत अस्नादों से मरवी है मालूम हुआ कि कन्धों तक हाथ उठाना सुन्नत है और कानों तक हाथ उठाना ख़िलाफ़े सुन्नत।

जवाब : यह अहादीस हन्फ़ियों के बिल्कुल ख़िलाफ नहीं क्योंकि कानों से अंगूठे लगने में हाथ कांधों तक हो जाएंगे और दोनों हदीसों पर अमल हो जाएगा। लेकिन कांधों तक अंगूठे लगाने में इन अहादीस पर अमल न हो सकेगा। जिन में कानों तक का ज़िक्र है हन्फ़ी मज़्हब दोनों क़िस्म की हदीसों पर अमल करता है। वहाबी मज़्हब एक क़िस्म की हदीसें छोड़ देता है लिहाज़ा हन्फ़ी जामेअ़ हैं।

बल्कि हदीस नम्बर 18 में इसकी वज़ाहत गुज़र गई कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हाथ शरीफ ऐसे उठाते थे कि हाथ कांधों तक होते थे और अंगूठे कानों तक। लिहाज़ा न अहादीस मुतार्रज़ हैं न इन दोनों हदीसों का जमा करना मुश्किल सिर्फ़ तुम्हारी समझ में फेर है।

सारे ग़ैर मुक़ल्लिदों को ऐलान आम है कि कोई मरफ़ूअ हदीस ऐसी दिखाओ जिसमें यह हो कि हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम अपने अंगूठे कांधों तक उठाते थे। जहाँ कांधों का जिक्र है वहाँ हाथ इरशाद हुआ। और जहाँ कानों का ज़िक्र है वहाँ अंगूठा फरमाया गया। जिस से मालूम हुआ कि कांधों तक हाथ इस तरह उठते थे कि अंगूठे कानों तक पहुँच जाते थे।

ऐतराज़ नम्बर 2 : कानों की जितनी अहादीस आपने पेश कीं वह सब ज़ईफ़ हैं। लिहाज़ा क़ाबिले अमल नहीं।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिद अपनी आदत से मजबूर हैं कि अपने मुख़ालिफ़ हदीसों को बिला वज्ह ज़ईफ़ कह देते हैं। दूसरे यह कि हमने इसी सिलसिला में मुस्लिम व बुख़ारी की

अहादीस भी पेश की हैं। जिन पर तुम्हारा पुख़्ता ईमान है। तीसरे यह कि ज़ईफ़ हदीस जब कई अस्नादों से मन्क़ूल हो तो क़वी और हसन बन जाती है कमज़ोर तिन्के मिल कर मज़बूत रस्सी बन जाते हैं तो कमज़ोर अस्नादें मतने हदीस को क़वी कैसे न करेंगी। देखो इसी किताब का मुक़द्दमा। चौथे यह कि इन अहादीस पर उम्मत के उलमा, औलिया, सालेहीन ने अमल किया है। उम्मत के अमल से ज़ईफ़ हदीस क़वी हो जाती है। पाँचवें यह कि अगर अहादीस ज़ईफ़ भी हों तब भी इमामे आज़म अबू हनीफ़ा जैसी हस्ती का उसे क़बूल करना ही क़वी बना देगा। क्योंकि आलिम सालेह का क़बूल कर लेना ज़ईफ़ हदीस को क़वी कर देता है। छठे यह कि आपका इन अहादीस को ज़ईफ़ कह देना जरहे मज्हूल है। जो किसी तरह क़ाबिले क़बूल नहीं क्योंकि इसमें वजह ज़ुअफ न बताई गई। कि क्यों ज़ईफ है। सातवें यह कि अगर मुहद्देसीन को यह अहादीस ज़ईफ़ हो कर मिलीं तो इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु पर इसका असर नहीं हो सकता। क्योंकि उनके वक़्त में ज़ईफ़ रावी अस्नादों में शामिल नहीं हुए थे बाद का ज़ुअफ़ पहले वालों को मुज़िर नहीं वहाबियों के इस माया नाज़ ऐतराज़ के टुकड़े उड़ गए। **अल्हम्दुलिल्लाहे रब्बिल-आलमीन।**

दूसरा बाब

नाफ़ के नीचे हाथ बांधना सुन्नत है

गैर मुक़ल्लिद वहाबी नमाज़ में सीने पर यानी नाफ के ऊपर हाथ बांधते हैं इसलिए हम इस बाब की भी दो फस्लें करते हैं। पहली फस्ल में अपने दलाइल दूसरी फस्ल में वहाबियों के ऐतराज़ात व जवाबात।

पहली फस्ल

नमाज़ में मर्द को नाफ के नीचे हाथ बांधना सुन्नत है सीने पर हाथ बांधना सुन्नत के ख़िलाफ है। इसके मुतअल्लिक़ बहुत सी अहादीस वारिद हैं हम सिर्फ़ चन्द हदीसें पेश करते हैं।

हदीस 1 : तरजमा : हज़रत वाइल इब्ने हजर से रिवायत है कि मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखा कि आपने अपना दाहिना हाथ बाएं हाथ पर रखा नाफ के नीचे यह हदीस इब्ने अबी शैबा ने सहीह अस्नाद से नक़्ल की इसके सब रावी सिक़ह हैं।

हदीस नम्बर 2 : इब्ने शाहीन ने हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : तीन चीज़ें नुबुव्वत की आदात में से हैं। इफ़्तार में जल्दी करना। सहरी में देर करना। नमाज़ में दाहिना हाथ बाएं हाथ पर नाफ के नीचे रखना।

हदीस नम्बर 3 : अबू दाऊद शरीफ़ नुस्खा इब्ने आराबी में हज़रत अबू वाइल रज़ि अल्लाहु अन्हु व सल्लम से रिवायत है। अबू वाइल रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि नमाज़ में नाफ के नीचे हाथ पर हाथ रखना चाहिए।

हदीस नम्बर 4 व 5 : दार कुतनी और अब्दुल्लाह इब्ने अहमद ने हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : नमाज़ में हाथ पर हाथ रखना और एक रिवायत में है। दाहिना हाथ बाएं पर रखना नाफ के नीचे सुन्नत है।

हदीस नम्बर 6 ता 9 : अबू दाऊद नुस्खा इब्ने आराबी, अहमद, दारे कुतनी और बैहक़ी ने हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : नाफ के नीचे हाथ पर हाथ रखना सुन्नत है।

हदीस नम्बर 10 : रज़ीन ने हज़रत अबी जहीफा रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : नमाज़ में हाथ बांधना सुन्नत है और दोनों हाथ नाफ के नीचे रखते।

हदीस नम्बर 11 : इमाम मुहम्मद ने किताबुल-आसार शरीफ़ में इब्राहीम नख़्ई से रिवायत की।

तरजमा : आप अपना दाहिना हाथ बाएं हाथ पर नाफ के नीचे रखते थे।

हदीस नम्बर 12 : इब्ने अबी शैबा ने हज़रत इब्राहीम नख़्ई से रिवायत की।

तरजमा : आपने फरमाया कि अपना दाहिना हाथ बाएं हाथ पर नाफ के नीचे रखते थे।

हदीस नम्बर 13 : इब्ने हज़्म ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : आपने फरमाया दाहिना हाथ बाएं हाथ पर नाफ के नीचे रखना नुबुव्वत के अख़्लाक़ में से है।

हदीस नम्बर 14 : अबू बकर इब्ने अबी शैबा ने हुज्जाज इब्ने हस्सान से रिवायत की।

तरजमा : मैंने अबू मुजलज़ से पूछा कि नमाज़ में हाथ कैसे रखे। आपने फरमाया कि अपने दाहिने हाथ की हथेली बाएं हाथ की पुश्त पर रखे नाफ के नीचे इसकी अस्नाद बहुत क़वी है और सारे रावी सिक़ह हैं।

इसके मुतअल्लिक़ और बहुत हदीसें पेश की जा सकती हैं सिर्फ़ चौदा पर क़नाअत करता हूँ इसकी तहक़ीक़ देखो संहीहुल-बिहारी और फ़त्हुल-क़दीर में।

अक़्ल भी चाहती है कि नमाज़ में नाफ के नीचे हाथ रखे। क्योंकि गुलाम आक़ा के सामने ऐसे ही खड़े होते हैं। इसमें इंतिहाई अदब है। नमाज़ में चूंकि

बन्दा रब की बारगाह में हाज़िरी देता है। लिहाज़ा अदब से खड़ा होना चाहिए। ग़ैर मुक़ल्लिद जब नमाज़ में खड़े होते हैं तो पता नहीं लगता कि मस्जिद में खड़े हैं या अखाड़े में। नियाज़मन्दी के लिए खड़े हैं या कुश्ती लड़ने ख़म ठोंक कर।

अल्लाह के बन्दो जब रुकूअ में अदब का इज़्हार सज्दा में अदब। अत्तहीयात में अदब और नियाज़मन्दी का लिहाज़ है तो क़याम में अकड़ कर ख़म ठोंक कर बे अदबी से पहलवानों की तरह क्यों खड़े होते हो यहाँ भी नाफ के नीचे हाथ बांध कर ग़ुलामों की तरह खड़े हो अल्लाह तआला समझ नसीब करे। ग़ैर मुक़ल्लिदों के पास एक भी मरफ़ूअ सहीह हदीस मुस्लिम बुख़ारी की नहीं जिसमें मर्दों को सीने पर हाथ रखने का हुक्म दे दिया हो।

दूसरी फस्ल

उस पर ऐतराज़ात व जवाबात में

ऐतराज़ नम्बर १ : अबू दाऊद शरीफ में इब्ने जरीर हल्बी ने अपने वालिद से रिवायत की।

तरजमा : मैंने हज़रत अली मुर्तज़ा को देखा कि आपने बायां हाथ दाहिने हाथ से कलाई पर पकड़ा नाफ के ऊपर।

इस हदीस से मालूम हुआ कि अली मुर्तज़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु नाफ के ऊपर हाथ बांधते थे।

जवाब : इस के चन्द जवाब हैं एक यह कि आपने अबू दाऊद शरीफ की यह हदीस पूरी नहीं लिखी इसके बाद मुफ़स्सल यह है। (नुस्ख़ा बिन एराबी)

तरजमा : अबू दाऊद ने फरमाया कि सईद इब्ने जुबैर से नाफ के ऊपर की रिवायत है जला ने नाफ के नीचे रिवायत की। अबी हुरैरह से भी यह रिवायत है मगर यह कुछ क़वी नहीं।

नोट ज़रूरी : ज़ेरे नाफ या नाफ के ऊपर हाथ बांधने की अहादीसे मुरव्वजा अबू दाऊद के नुस्ख़ों में नहीं इब्ने आराबी वाले अबू दाऊद के नुस्ख़ों में मौजूद हैं जैसा कि हाशियाए अबू दाऊद में इसकी तस्रीह है। इसी नुस्ख़े से फ़त्हुल-क़दीर और सहीहुल-बिहारी ने रिवायात कीं।

बहरहाल आपकी पेश करदा अबू दाऊद की हदीस में टकराव वाक़ेअ़ हो गया और इन तमाम मुतआरेज़ा रिवायतों को ख़ुद अबू दाऊद ने ज़ईफ़ फरमाया। तअज्जुब है कि आप अबू दाऊद की ज़ईफ़ हदीस से दलील पकड़ते हैं।

दूसरे यह कि जब हदीस में टकराव हो तो क़यास से तरजीह होती है

क़यास चाहता है कि ज़ेरे नाफ वाली अहादीस क़ाबिले अमल हों। क्योंकि सज्दा रुकूअ अत्तहीयात की नशिस्त सब में अदब मल्हूज़ है तो चाहिए कि क़याम में भी अदब ही का लिहाज़ रहे ज़ेरे नाफ हाथ बांधना अदब है सीने पर हाथ रखना बेअदबी गोया किसी को कुश्ती की दावत देना है रब को ज़ोर न दिखाओ। वहाँ आजिज़ी करो।

ऐतराज़ नम्बर 2 : आपकी पेश करदा अहादीस ज़ईफ़ हैं और ज़ईफ़ से दलील पकड़ना ग़लत है।

जवाब : जईफ़ ज़ईफ की रट लगाना आप बुज़ुर्गों की पुरानी आदत है इसके सात जवाब हम बाबे अव्वल की दूसरी फ़स्ल में दे चुके हैं। कि जो रिवायत चन्द अस्नादों से मरवी हो जाए वह ज़ईफ़ नहीं रहती हम ने दस अस्नादें पेश की हैं। और उम्मत के अमल से ज़ईफ हदीस क़वी हो जाती है। और इमाम आज़म अबू हनीफ़ा जैसे जलीलुल-क़द्र इमाम के क़बूल फरमा लेने से उनका ज़ुअफ़ जाता रहा। और इनमें अगर ज़ुअफ़ है तो वह इमाम आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु के बाद पैदा हुआ बाद का ज़ुअफ़ इमाम आज़म को मुज़िर क्यों होगा। वग़ैरह

लतीफ़ा : हमने छः रमज़ानुल-मुबारक दो शंबा को हाफिज़ इलाही बख़्श साहब साकिन जमाल पुर गुजरात को फ़ख़रे अह्ले हदीस मौलाना हाफिज़ इनायतुल्लाह साहब मुक़ीम गुजरात की ख़िदमत में अरीज़ा दे कर भेजा जिसमें इन से दरख़्वास्त की। कि बराहे मेहरबानी सीने पर हाथ बांधने की अहादीस मअ् हवाला तहरीर फ़रमा कर इरसाल फ़रमाइए। हमारा ख़्याल था कि चूंकि हाफिज़ मौलाना इनायतुल्लाह साहब अह्ले हदीस के चोटी के माया नाज़ आलिम हैं वह ज़रूर मुस्लिम बुख़ारी या सहाहे सित्ता से इसके मुतअल्लिक़ बेशुमार अहादीस नक़्ल फ़रमा कर भेजेंगे जो आज तक हमने देखी भी न होंगी मगर मौलाना मौसूफ़ की तरफ़ से जो जवाब आया वह सुनिए और सर धुनिए। एक इंच परचा पर एक सतर लिखी थी जिसमें यह था।

तरजमा : वाइल इब्ने हजर से मरवी है कि उन्होंने फरमाया मैंने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पीछे नमाज़ पढ़ी पस आपने अपना दाहिना हाथ बाएं हाथ पर अपने सीना पर रखा।

और मौलाना मौसूफ़ ने ज़बानी यह इरशाद कहला भेजा कि तफ़्सीरे क़ादरी उर्दू में भी लिखा है कि **फ़सल्ले लेरब्बिका वन्हर** के मानी यह हैं कि आप अपने रब के लिए नमाज़ पढ़ें और नहर यानी सीने पर नमाज़ में हाथ रखें।

यह जवाब देख कर और सुन कर हमारी हैरत की इंतिहा न रही हमें सिर्फ़ यह अफ़सोस है कि यह अकाबिर हम से हर मसला में मुस्लिम बुख़ारी की हदीस का मुतालबा फरमाते हैं और सिहाहे सित्ता से बाहर नहीं निकलने

देते और जब अपनी बारी आती है तो ऐसी रिवायत पर क़नाअत फरमाते हैं जिसका सर न पाँव न कोई उसकी सनद न किसी मुस्तनद किताब का हवाला। हाफ़िज़ इलाही बख़्श साहब ने हमें बताया कि बुलूग़ुल-मराम कोई तीस चालीस वर्क़ का रिसाला था जिसमें से यह हदीस मौलाना साहब ने नक़्ल फरमा दी। अगर किसी मसला पर हम ऐसे रिसाला से कोई हदीस नक़्ल करते तो क़्यामत आ जाती बुख़ारी मुस्लिम का मुतालवा होता।

अव्वल तो पता नहीं कि यह हदीस मौज़ूअ है ज़ईफ़ है या कैसी है। अगर मान लो कि हदीस सहीह है तो हदीस में भी ज़िक्र नहीं कि हुज़ूर ने नमाज़ में सीने पर हाथ रखे बल्कि फ़वज़आ की फ आतेफ़ा तअ़क़ीबिया से ज़ाहिरन मालूम होता है कि नमाज़ के बाद किसी हाजत से सीना मुबारक पर हाथ रखे रब फरमाता है :

तरजमा : जब तुम खाना खाओ तो चले जाओ।

इसका मतलब यह नहीं कि खाने के दौरान में रोटी हाथ में लिए चले जाओ इस सूरत में यह हदीस हमारी पेश करदा अहादीस के ख़िलाफ़ न होगी। फिर इस हदीस में इसका तरीक़ा मज़्कूर न हुआ कि आया औरतों की तरह सीने पर हाथ रखे या पहलवानों की तरह। लिहाज़ा हदीस मुज्मल है क़ाबिले अमल नहीं। आयते करीमा के मुतअ़ल्लिक़ सिर्फ़ यह गुज़ारिश है कि **वन्हर** के यह अछूते मानी न किसी मरफ़ूअ सहीह हदीस में आए न जम्हूर मुफ़स्सेरीन ने बयान फ़रमाए। सब यही मानी करते हैं कि रब तआला के लिए नमाज़ पढ़ो और क़ुरबानी करो और हवाला कैसी बड़ी मोतबर तफ़्सीर का दिया। तफ़्सीर क़ादरी उर्दू। जल्ला जलालुहू, अगर बफ़र्ज़े मुहाल मान लो तो तमाम अह्ले हदीस हज़रात को चाहिए कि अब से नमाज़ में बजाए सीने के गले पर हाथ रखा करें क्योंकि नहर गले के आख़िरी हिस्सा को कहते हैं जो सीने से मुत्तसिल ऊपर की जानिब है क़ुरबानी को नहर इसलिए कहते हैं कि इसमें ज़िबह के वक़्त जानवर का गला चीरा जाता है न कि सीना लिहाज़ा अब इन बुज़ुर्गों को तरक़्क़ी करके सीने से ऊपर गला पकड़ना चाहिए।

बहरहाल हम को मौलाना मौसूफ़ के इस जवाब पर सख़्त अफ़सोस हुआ और हम इस नतीजा पर पहुँचे कि इन बुज़ुर्गों के पास सीने पर हाथ रखने की कोई हदीस मुस्लिम बुख़ारी या सिहाहे सित्ता की मौजूद नहीं इन बेचारों को सिहाहे सित्ता की हदीस सहीह क्या मिलती इसके बारे में इमाम तिर्मिज़ी रहमतुल्लाह अलैह ने सिर्फ़ यह फरमाया।

तरजमा : कुछ उलेमा की राय यह है कि हाथ नाफ के ऊपर रखे कुछ की राय यह है कि नाफ के नीचे रखे उन में से हर एक जाइज़ है उनके नज़दीक।

अगर इमाम तिर्मिज़ी रहमतुल्लाह अलैह को सीने पर हाथ बांधने की कोई हदीस मिलती तो ज़रूर नक़्ल फरमाते सिर्फ़ उलमा की राय का ज़िक्र न फ़रमाते।

तीसरा बाब

नमाज़ में बिस्मिल्लाह आहिस्ता पढ़ना

सुन्नत यह है कि नमाज़ी सूरः फातिहा के अव्वल बिस्मिल्लाह शरीफ आहिस्ता पढ़े। **अल्हम्दु लिल्लाह** से क़िराअत शुरू करे मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी बिस्मिल्लाह भी ऊंची आवाज़ से पढ़ते हैं जो बिल्कुल ख़िलाफ़े सुन्नत है। बिस्मिल्लाह आहिस्ता पढ़ने के मुतअल्लिक़ बहुत अहादीसे शरीफ़ा हैं जिन में से यहाँ चन्द पेश की जाती हैं। रब तआला क़बूल फरमाए।

हदीस नम्बर 1 ता 3 : मुस्लिम व बुख़ारी व इमाम अहमद ने हज़रत अनस से रिवायत की।

तरजमा : मैंने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और अबू बकर सिद्दीक़ उमर फारूक़ उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु अन्हुम के पीछे नमाज़ें पढ़ीं उन में से किसी को न सुना कि बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम पढ़ते हों।

हदीस नम्बर 4 : मुस्लिम शरीफ ने हज़रत अनस से रिवायत की।

तरजमा : बेशक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और हज़रत अबू बकर व उमर रज़ि अल्लाहु अन्हुम अल्हम्दुलिल्लाहे रब्बिल-आलमीन से क़िराअत शुरू फरमाते थे।

हदीस नम्बर 5 ता 7 : नसाई, इब्ने हब्बान, तहावी शरीफ ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : मैंने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और अबू बकर व उस्मान के पीछे नमाज़ें पढ़ीं इन हज़रात में से किसी को बिस्मिल्लाह ऊंची आवाज़ से पढ़ते न सुना। रज़ि अल्लाहु अन्हुम।

हदीस नम्बर 8 ता 11 : तबरानी ने मुअजमे कबीर में अबू नईम ने हिलिया में इब्ने ख़ुज़ैमा और तहावी ने हज़रत अनस से रिवायत की।

तरजमा : बेशक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और अबू बकर व उमर बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम आहिस्ता पढ़ा करते थे।

हदीस नम्बर 12 ता 14 : अबू दाऊद, दारमी, तहावी ने हज़रत अनस से रिवायत की।

तरजमा : बेशक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और अबू बकर व उमर व उस्मान रज़ि अल्लाहु अन्हुम अल्हम्दु लिल्लाहे रब्बिल–आलमीन से क़िराअत शुरू फरमाते थे।

हदीस नम्बर 15 : मुस्लिम शरीफ ने हज़रत अनस इब्ने मालिक रज़ि

अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : यक़ीनन नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और अबू बकर व उमर व उस्मान रज़ि अल्लाहु अन्हुम अल्हम्दुलिल्लाह से क़िराअत शुरू फ़रमाते थे बिस्मिल्लाह न क़िराअत के शुरू में ज़िक्र करते थे न क़िराअत के आख़िर में।

हदीस नम्बर 16 : इब्ने अबी शैबा ने सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने मस्ऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : अब्दुल्लाह इब्ने मस्ऊद बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम और अऊज़ुबिल्लाह और रब्बना लकल-हम्दु आहिस्ता पढ़ा करते थे।

हदीस नम्बर 17 : इमाम मुहम्मद ने किताबुल-आसार में हज़रत इब्राहीम नख़्ई से रिवायत की।

तरजमा : आपने फरमाया कि चार चीज़ों को इमाम आहिस्ता पढ़े बिस्मिल्लाह, सुब्हानाकल्लाहुम्मा, अऊज़ू बिल्लाह और आमीन।

हदीस नम्बर 18 ता 19 : मुस्लिम अबू दाऊद शरीफ ने हज़रत आइशा सिद्दीका रज़ि अल्लाहु अन्हा से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाती हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़े तक्बीर से शुरू फ़रमाते थे और क़िराअत अल्हम्दुलिल्लाह से।

हदीस नम्बर 20 : अब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने अबू फ़ाख़्ता से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत अली मुर्तज़ा बिस्मिल्लाह ऊंची आवाज़ से न पढ़ते थे **अल्हम्दु लिल्लाह** ऊंची आवाज़ से पढ़ते थे।

इसके मुतअल्लिक़ और बहुत सी अहादीस पेश की जा सकती हैं मगर हम यहाँ सिर्फ़ बीस हदीसों पर किफायत करते हैं अगर शौक़ हो तो तहावी और सहीहुल-बिहारी शरीफ का मुताला फरमाएं।

अक़्ल भी चाहती है कि बिस्मिल्लाह बुलन्द आवाज़ से न पढ़ी जाए क्योंकि सूरतों के अव्वल में जो बिस्मिल्लाह लिखी हुई है वह इन सूरतों का हिस्सा नहीं फ़क़त सूरतों में फ़स्ल करने के लिए लिखी गई। और हदीस शरीफ में इरशाद हुआ कि जो अच्छा काम बिस्मिल्लाह से शुरू न हो वह नाक़िस है तो जैसे बरकत के लिए नमाज़ी क़िराअत से पहले अऊज़ुबिल्लाह पढ़ते हैं मगर आहिस्ता क्योंकि इस अऊज़ु सूरत का हिस्सा नहीं ऐसे ही बरकत के लिए बिस्मिल्लाह पढ़े। मगर आहिस्ता क्यों कि यह भी हर सूरः का जुज़ नहीं। हाँ सूरः नमल शरीफ़ में बिस्मिल्लाहिर्रमानिर्रहीम सूरः का हिस्सा है इमाम वहाँ बुलन्द आवाज़ से पढ़ता है। क्योंकि वह वहाँ की आयत है। ग़र्ज़कि इमाम सिर्फ़ कुरआने करीम को आवाज़ से पढ़े लेकिन जो बिस्मिल्लाह सूरः के अव्वल में है वह सूरः का हिस्सा नहीं लिहाज़ा आहिस्ता पढ़नी चाहिए।

दूसरी फ़स्ल

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

ऐतराज़ नम्बर 1 : चूंकि बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम हर सूरः का हिस्सा है अगर हिस्सा न होती तो कुरआन में लिखी न जाती कुरआन करीम में सिर्फ़ आयाते कुरआनिया लिखी गईं। ग़ैर कुरआनी न लिखा गया। लिहाज़ा जैसे और आयतें बुलन्द आवाज़ से पढ़ी जाती हैं वैसे ही बिस्मिल्लाह भी ऊंची आवाज़ से पढ़ना चाहिए।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द जवाब हैं। एक यह कि बिस्मिल्लाह हर सूरः का हिस्सा नहीं क्योंकि हर सूरः के साथ नाज़िल नहीं हुई। चुनांचे शुरू बुख़ारी शरीफ **बाब कैफ़ा काना बदाइल-वह्ये** में सब से पहली वह्य के मुतअल्लिक़ रिवायत की है कि जिब्राईले अमीन ने हुज़ूर की ख़िदमत में अर्ज़ की **इक़्रा** पढ़ो हुज़ूर ने फ़रमाया **मा अना बेक़ारी** मैं पढ़ने वाला नहीं फिर अर्ज़ किया **इक़्रा** हुज़ूर ने फिर वही जवाब दिया। आख़िर में अर्ज़ किया **इक़्रा बेइस्मे रब्बिकल्लज़ी ख़लक़ा अलख़** ग़र्ज़े कि पहली वह्य यह है कि जिसमें बिस्मिल्लाह का ज़िक्र नहीं मालूम हुआ कि सूरतों के अव्वल में बिस्मिल्लाह शरीफ़ नाज़िल हुई दूसरे यह कि अगर बिस्मिल्लाह हर सूरः का हिस्सा होती तो सूरः के ऊपर अलाहिदा करके लम्बे हुरूफ़ से न लिखी जाती बल्कि जैसे और आयतें मिली हुई लिखी गई हैं ऐसे ही बिस्मिल्लाह तमाम आयतों के साथ लिखी जाती देखो सूरः नमल शरीफ में बिस्मिल्लाह सूरः का हिस्सा है तो वहाँ अलाहिदा इम्तियाज़ी शक्ल न लिखी गई बल्कि तमाम आयात के साथ तहरीर हुई। मालूम हुआ कि सूरतों के अव्वल में बिस्मिल्लाह का इम्तियाज़ी शक्ल में अलाहिदा लिखना फ़ासिला के लिए है।

ऐतराज़ नम्बर 2 : तहावी शरीफ़ में हज़रत उम्मुल-मुमिनीन उम्मे सलमा रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है।

तरजमा : नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेरे घर में नमाज़ पढ़ते थे तो पढ़ते थे। **बिस्मिस्सलाहिर्रहमानिर्रहीम अलख़**

मालूम हुआ कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़ में बिस्मिल्लाह आवाज़ से पढ़ते थे वरना उम्मे सलमा कैसे सुन लेतीं।

जवाब : अव्वलन इस हदीस में आवाज़ सुनने का ज़िक्र नहीं सिर्फ़ बिस्मिल्लाह पढ़ने का ज़िक्र है। हम भी कहते हैं कि बिस्मिल्लाह पढ़े मगर आहिस्ता पढ़े। दूसरे ज़ाहिर यही है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस मौक़ा पर आहिस्ता ही पढ़ते थे ताकि अहादीस में तत्बीक़ रहे। तीसरे अगर सुनना तस्लीम कर लिया जाए तो हम कहते हैं कि यहाँ बिस्मिल्लाह भी आहिस्ता थी और अल्हम्दुलिल्लाह भी आहिस्ता। चूंकि उम्मे सलमा उस

मौक़ा पर हुज़ूर के क़रीब होती थीं। इसीलिए हुज़ूर की आहिस्ता आवाज़ शरीफ़ सुन लेती थीं। लिहाज़ा इस हदीस से आप का मुद्दआ साबित नहीं।

ऐतराज़ नम्बर 3 : तिर्मिज़ी शरीफ में अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपनी नमाज़ बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम से शुरू फरमाते थे।

जवाब : इसके दो जवाब हैं एक यह कि अफसोस है आप ने तिर्मिज़ी का यह मकाम आगे न देखा फरमाते हैं।

तरजमा : यह ऐसी हदीस है जिसकी अस्नाद कुछ भी नहीं।

अफसोस कि हमारी पेश करदा हदीसों को बिला वजह ज़ईफ़ करके रद करते हो और ख़ुद ऐसी हदीस पेश कर रहे हो जिसका सिरा न पता। दूसरे यह कि अगर इस हदीस को सहीह मान भी लो तो भी इसमें बिस्मिल्लाह बुलन्द आवाज़ से पढ़ने का ज़िक्र नहीं। सिर्फ़ यह है कि नमाज़ बिस्मिल्लाह से शुरू फरमाते थे। हम भी कहते हैं कि बिस्मिल्लाह पढ़नी चाहिए। मगर आहिस्ता आहिस्ता तीसरे यह कि हो सकता है कि तक्बीरे तहरीमा से पहले बिस्मिल्लाह पढ़ते हों क्योंकि **सलातुहू** फरमाया न **क़िरातहू।**

ऐतराज़ नम्बर ५ : तहावी शरीफ ने हज़रत अब्दुर्रहमान इब्ने अबज़ा से रिवायत की।

तरजमा : मैंने हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु के पीछे नमाज़ पढ़ी। आपने बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम बुलन्द आवाज़ से पढ़ी मेरे वालिद भी बुलन्द आवाज़ से पढ़ते थे। मालूम हुआ कि हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु बिस्मिल्लाह बुलन्द आवाज़ से पढ़ते थे।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। एक यह कि यह हदीस तमाम उन मशहूर अहादीस के ख़िलाफ़ है जो हम पहली फस्ल में ज़िक्र कर चुके हैं जिन में बुख़ारी मुस्लिम वग़ैरह की अहादीस हैं जिन से बहुत कुव्वत से साबित है। कि नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और हज़रात ख़ुलफ़ाए राशिदीन अल्हम्दुलिल्लाह से क़िराअत शुरू करते थे। बिस्मिल्लाह आहिस्ता पढ़ते थे। लिहाज़ा यह हदीस शाज़ है। इसकी तस्रीह नहीं कि हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु नमाज़ के अन्दर सुबहान पढ़ने के बाद अल्हम्द से पहले बिस्मिल्लाह ऊंची आवाज़ से पढ़ते थे। इसके मानी यह भी हो सकते हैं कि हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु नमाज़ ख़त्म फ़रमा कर दुआ से पहले बरकत के लिए बिस्मिल्लाह शरीफ़ पढ़ते थे। फिर दुआ फरमाते थे इस सूरत में यह हदीस हमारी पेश करदा अहादीस के खिलाफ नहीं जहाँ तक हो सके अहादीस में मुताबेक़त करनी चाहिए। तीसरे यह कि सूरत से पहले बिस्मिल्लाह का ऊंची आवाज़ से पढ़ना इसलिए है कि बिस्मिल्लाह हर सूरत

का हिस्सा है और सूरत का हिस्सा होना क़तई यक़ीनी हदीस से साबित हो सकता है। न कि हदीस वाहिद से। आपकी पेश करदा हदीस ख़बरे वाहिद है जो यह साबित करने के लिए काफी नहीं। अफसोस यह है कि हम आहिस्ता बिस्मिल्लाह के लिए बुख़ारी मुस्लिम की रिवायात पेश करें। और आप इसके मुक़ाबिल तहावी शरीफ की आड़ लें हालांकि तहावी शरीफ पर आपका एतमाद नहीं।

चौथा बाब

इमाम के पीछे मुक़्तदी क़िराअत न करे

इमाम के पीछे मुक़्तदी को कुरआन शरीफ़ पढ़ना सख़्त मना है। मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी मुक़्तदी पर सूरः फातिहा पढ़ना फर्ज़ जानते हैं। इस मुमानेअत पर कुरआने करीम अहादीसे शरीफ़ा, अक़्वाले सहाबए किबार, अक़्ली दलाइल बेशुमार हैं। लिहाज़ा हम इस बाब की दो फस्लें करते हैं। पहली फस्ल में इस मुमानेअत का सुबूत और दूसरी फस्ल में इस पर सवालात मअ़ जवाबात रब तआला क़बूल फरमाए।

पहली फस्ल

इमाम के पीछे मुक़्तदी को कुरआन की तिलावत करना मना है। ख़ामोश रहना ज़रूरी है। दलाइल मुलाहिज़ा हों। कुरआन शरीफ फरमाता है।

तरजमा : और जब कुरआन शरीफ़ पढ़ा जाए तो उसे कान लगा कर सुनो और ख़ामोश रहो ताकि रहम किए जाओ।

ख़्याल रहे कि शुरू इस्लाम में नमाज़ में दुनियावी बात चीत भी जाइज़ थी। और मुक़्तदी क़िराअत भी करते थे। बात चीत तो इस आयत से मंसूख़ हुई।

तरजमा : और खड़े हो अल्लाह के लिए इताअत करते हुए ख़ामोश।

चुनांचे मुस्लिम ने **बाब तहरीमिल-कलामे फ़िस्सलात** और बुख़ारी ने **बाबु मा युंहा मिनल-कलामे फ़िस्सलाते** में हज़रत ज़ैद बिन अरक़म रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : हम लोग नमाज़ में बातें करते थे हर एक अपने साथी से नमाज़ की हालत में गुफ़्तगू कर लेता था। यहाँ तक कि यह आयत उतरी **व क़ूमू लिल्लाहे अलख़** पस हम को हुक्म दिया गया ख़ामोश रहने का और कलाम से मना फरमा दिया गया।

फिर नमाज़ में कलाम तो मना हो गया मगर तिलावते कुरआन मुक़्तदी करते रहे। जब यह आयत उतरी तो मुक़्तदियों को तिलावत भी मना हो गई।

तरजमा : जब कुरआन पढ़ा जाए तो ग़ौर से सुनो और चुप रहो।

चुनांचे तफ़सीरे मदारिक शरीफ में इसी आयत **व इज़ा कुरेया** की तफ़सीर में है।

तरजमा : आम सहाबाए किराम का फरमान यह है कि यह आयत मुक़्तदी के क़िराअत इमाम सुनने के मुतअल्लिक़ है।

तफ़सीरे ख़ाज़िन में इसी आयत **व इज़ा कुरेआ** की तफ़सीर में एक रिवायत नक़्ल फरमाई।

तरजमा : हज़रत इब्ने मस्ऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु ने कुछ लोगों को इमाम के साथ कुरआन पढ़ते सुना जब फारिग़ हुए तो फ़रमाया कि क्या अभी तक यह वक़्त न आया कि तुम इस आयत को समझो। **व इज़ा कुरेअल-कुरआनु। अलख़**

तनवीरे मिक़्यास मिन तफ़सीरे इब्ने अब्बास शरीफ़ में इसी आयत की तफ़सीर में है।

तरजमा : जब फर्ज़ नमाज़ में कुरआन पढ़ा जाए तो उसकी किरत को कान लगा कर सुनो और कुरआन पढ़े जाते वक़्त ख़ामोश रहो।

हमारी इस तहक़ीक़ से मालूम हुआ कि अव्वले इस्लाम में इमाम के पीछे मुक़्तदी क़िराअत करते थे। इस आयते मज़कूरा के नुज़ूल के बाद इमाम के पीछे क़िराअत मंसूख़ हो गई। अब अहादीस मुलाहिज़ा हों।

हदीस नम्बर 1 : मुस्लिम शरीफ **बाब सुजूदुत्तिलावह** में अता इब्ने यसार से मरवी है।

तरजमा : इन्होंने हज़रत ज़ैद इब्ने साबित रज़ि अल्लाहु अन्हु सहाबी से इमाम के साथ क़िराअत करने के मुतअल्लिक़ पूछा तो आपने फरमाया कि इमाम के साथ क़िराअत जाइज़ नहीं।

हदीस नम्बर 2 : मुस्लिम शरीफ़ बाबुत्तशह्हुद में है।

तरजमा : अबू बकर ने सुलेमान से पूछा कि अबू हुरैरह की हदीस कैसी है तो आपने फरमाया कि बिल्कुल सहीह है यानी यह हदीस कि जब इमाम क़िराअत करे तो तुम ख़ामोश रहो बिल्कुल सहीह है।

हदीस नम्बर 3 : तिर्मिज़ी शरीफ़ ने हज़रत जाबिर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : जो कोई नमाज़ पढ़े कि उसमें सूरः फ़ातिहा न पढ़े उसने नमाज़ ही न पढ़ी मगर यह कि इमाम के पीछे हो (यानी तब न पढ़े) यह हदीस हसन सहीह है।

हदीस नम्बर 4 : नसाई शरीफ़ में हज़रत अबी हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूर ने फ़रमाया कि इमाम इसलिए मुक़र्रर किया गया है कि उसकी पैरवी की जाए। तो जब वह तकबीर कहे तो तुम भी तकबीर कहो।

और जब वह क़िराअत करे तो ख़ामोश रहो।

हम हदीस नम्बर 2 में मुस्लिम शरीफ के हवाला से बयान कर चुके हैं कि हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु की यह हदीस सहीह है।

हदीस नम्बर 5 : तहावी शरीफ ने हज़रत जाबिर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : जिसका कोई इमाम हो तो इमाम की तिलावत उसकी तिलावत है।

हदीस नम्बर 6 ता 10 : इमाम मुहम्मद ने मुअत्ता शरीफ में इमाम अबू हनीफ़ा अन मूसा इब्ने अबी आइशा अन अब्दुल्लाह इब्ने शद्दाद अन जाबिर इब्ने अब्दुल्लाह है।

तरजमा : हुज़ूर ने फरमाया कि जिसका इमाम हो तो इमाम की तिलावत उसकी तिलावत है। मुहम्मद इब्ने मुनीअ और इमाम इब्ने हम्माम ने फरमाया कि यह अस्नाद सहीह है और मुस्लिम बुख़ारी की शर्त पर है।

यह हदीस इमाम अहमद, इब्ने माजा, दारे कुतनी, बैहक़ी ने भी रिवायत की। (सहीहुल-बुख़ारी)

हदीस नम्बर 11 : तहावी शरीफ़ में हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत अनस फ़रमाते हैं कि एक बार हुज़ूर ने नमाज़ पढ़ाई फिर सहाबा पर मुतवज्जेह हुए और फ़रमाया कि क्या इमाम की क़िराअत की हालत में तुम तिलावत करते हो। सहाबा ख़ामोश रहे हुज़ूर ने तीन बार यह सवाल फरमाया तो सहाबा ने अर्ज़ किया हां फ़रमाया आइंदा ऐसा न करना।

हदीस नम्बर 12 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : जो इमाम के पीछे तिलावत करे वह दीने फितरत पर नहीं।

हदीस नम्बर 13 : दार कुतनी ने हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : एक शख़्स ने हुज़ूर से सवाल किया कि मैं इमाम के पीछे तिलावत करूं या ख़ामोश रहूँ। फ़रमाया ख़ामोश रहो इमाम तेरे लिए काफी है।

हदीस नम्बर 14 : दार कुतनी ने हज़रत शअबी से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूर ने फ़रमाया कि इमाम के पीछे तिलावत जाइज़ नहीं।

हदीस नम्बर 15 : बैहक़ी ने क़िराअत की बहस में हज़रत अबू हुरैरह से रिवायत की।

तरजमा : उन्होंने हुज़ूर से रिवायत की आपने फरमाया जिस नमाज़ में सूरः फ़ातिहा न पढ़ी जाए वह नाक़िस है सिवा उस नमाज़ के जो इमाम के पीछे हो।

हदीस नम्बर 16 व 17 : इमाम मुहम्मद ने मुअत्ता में अब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने अपनी मुसन्नफ़ (किताब) में हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : जो इमाम के पीछे तिलावत करे काश उसके मुँह में पत्थर हो।

हदीस नम्बर 18 ता 24 : इमाम तहावी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मस्ऊद, ज़ैद इब्ने साबित, अब्दुल्लाह इब्ने उमर, अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास, जाबिर इब्ने अब्दुल्लाह, हज़रत अल्क़मा, हज़रत अली मुर्तज़ा, हज़रत उमर वग़ैरहुम सहाबाए किराम से मुकम्मल अस्नादों से रिवायात पेश कीं। कि यह तमाम हज़रात इमाम के पीछे क़िराअत के सख़्त ख़िलाफ़ थे। उन में से कोई साहब फ़रमाते हैं कि जो इमाम के पीछे तिलावत करे उसके मुँह में आग हो। कोई फ़रमाते हैं कि उसके मुँह में पत्थर हो कोई फ़रमाते हैं वह फ़ितरत के ख़िलाफ़ है। अगर हम को इस रिसाला के बढ़ जाने का अन्देशा न होता तो वह तमाम रिवायात यहाँ नक़्ल करते। इनके अलावा क़िराअते ख़ल्फ़ुल-इमाम के ख़िलाफ़ बहुत ज़्यादा अहादीस हैं जिन में से हम ने सिर्फ़ 24 पर किफ़ायत की अगर किसी को उनके मुताला का शौक़ हो तो तहावी शरीफ़, मुअत्ता इमाम मुहम्मद, सहीहुल-बिहारी हमारा हाशिया बुख़ारी नईमुल-बारी वग़ैरह कुतुब का मुतालआ करे।

अक़्ल भी चाहती है कि मुक़्तदी इमाम के पीछे तिलावत न करे चन्द वजूह से।

नम्बर 1 : नमाज़ में जैसे सूरः फ़ातिहा पढ़ना ज़रूरी है ऐसे ही सूरः मिलानी भी ज़रूरी है। मुस्लिम शरीफ़ में है।

तरजमा : उसकी नमाज़ नहीं होती जो सूरः फ़ातिहा और कुछ और न पढ़े।

ग़ैर मुक़ल्लेदीन भी मानते हैं कि मुक़्तदी इमाम के पीछे सूरः न पढ़े। तो चाहिए कि सूरः फ़ातिहा भी न पढ़े कि जैसे सूरः में इमाम की क़िराअत काफ़ी है ऐसे ही सूरः फ़ातिहा में भी काफ़ी है।

नम्बर 2 : जो कोई रुकूअ में इमाम के साथ मिल जाए उसे रकाअत मिल जाती है। अगर मुक़्तदी पर सूरः फ़ातिहा पढ़नी लाज़िम होती तो उसे रकाअत न मिलनी चाहिए थी। देखो अगर शख़्स यह तक्बीरे तहरीमा न कहे या तक्बीर तहरीमा के साथ एक तस्बीह के बक़द्र क़याम न करे बल्कि सीधा रुकूअ में चला जाए तो उसे रकाअत न मिलेगी। क्योंकि तक्बीरे तहरीमा और क़याम मुक़्तदी पर फ़र्ज़ है तो ऐसे ही अगर उस पर सूरः फ़ातिहा फ़र्ज़ होती तो उसके बग़ैर रकाअत न मिलती। मालूम हुआ कि इमाम की क़िराअत उसके लिए काफ़ी है जब उस मुक़्तदी के लिए क़िराअत होगी तो चाहिए कि दूसरे मुक़्तदियों से भी साक़ित हो।

नम्बर 3 : अगर मुक़्तदी पर क़िराअते फ़ातिहा भी हो और आमीन भी तो

बताओ कि अगर इमाम मुक़्तदी से पहले सूरः फ़ातिहा से फ़ारिग़ हो जाए तो यह मुक़्तदी जो अभी फ़ातिहा के बीच में है आमीन कहे या न कहे। अगर कहे तो अपनी फ़ातिहा ख़त्म करके भी आमीन कहे या न कहे जो भी जवाब दो हदीस दिखा कर दो। न दो आमीन जाइज़ हैं न फ़ातिहा के बीच में आमीन दुरुस्त है।

नम्बर 4 : अगर मुक़्तदी फातिहा के बीच में हो और इमाम रुकूअ में चला जाए तो बताओ यह मुक़्तदी आधी फ़ातिहा छोड़ दे या रुकूअ छोड़ दे जो भी जवाब दो हदीस दिखाओ अपनी अक़्ल व क़्यास से जवाब न देना।

नम्बर 5 : शाही दरबार में जब कोई वफ़्द जाता है तो दरबार के आदाब सब बजा लाते हैं मगर अर्ज़ व मअरूज़ सब न करेंगे जो नुमाइन्दा होगा वही करेगा। ऐसे ही बा जमाअत नमाज़ी रब की बारगाह में वफ़्द की शक्ल में हाज़िर होते हैं तो तक्बीर, तस्बीह, तशह्हुद वग़ैरह सब पढ़ें कि यह इस दरबार का सलामी मुजरा है सब अदा करें मगर तिलावते क़ुरआन जो अर्ज़ व मअरूज़ है सिर्फ़ क़ौम का नुमाइंदा करे यानी इमाम।

दूसरी फसल

इस मसला पर सवालात व जवाबात

इस मसला पर ग़ैर मुक़ल्लेदीन अब तक जिस क़द्र ऐतराज़ात कर सके हैं। हम बफ़ज़्लेही तआला हर एक नक़्ल करके सबके जवाबात अलग अलग देते हैं और जिस सलीक़े से उनके सवालात हम नक़्ल कर रहे हैं इनशाअल्लाह इस तरीक़ा से वह भी न कर सकेंगे। रब तआला कबूल फ़रमाए।

ऐतराज़ नम्बर 1 : आयते करीमा **व इज़ा कुरेअल-कुरआनु** में कुरआन से मुराद जुमा का ख़ुत्बा है न कि मुक़्तदी की नमाज़ जैसा कि कुछ मुफ़स्सेरीन ने इसी आयत के मा तहत फरमाया। लिहाज़ा ख़ुत्ब-ए-जुमा के वक़्त ख़ामोशी ज़रूरी है। मगर मुक़्तदी का सूरः फातिहा पढ़ना मना नहीं।

जवाब : यह ग़लत है, क्योंकि यह आयते करीमा मक्कीया है। सूरः आराफ की आयत है और जुमा की नमाज़ व ख़ुत्बा मदीना मुनव्वरह में बाद हिजरत शुरू हुए फिर उस आयत में ख़ुत्बा मुराद कैसे हो सकता है। दूसरे यह कि अगर बफर्ज़ महाल मान लो तब भी चूंकि आयत में ख़ुत्बा की क़ैद नहीं सिर्फ़ क़िराअते क़ुरआन का ज़िक्र है। लिहाज़ा यह हुक्म सब को शामिल है क्योंकि आयत के उमूम का लिहाज़ होता है। न कि शाने नुज़ूल की ख़ुसूसियत का। तीसरे यह कि जब ख़ुत्बा में लोगों को बोलना हराम है। हालांकि सारा ख़ुत्बा क़ुरआन नहीं बल्कि इस में एक दो आयात क़ुरआन की पढ़ी जाती हैं। तो इमाम के पीछे जब कि सारा क़ुरआन ही पढ़ा जा रहा है

ख़ामोशी क्यों ज़रूरी न होगी। तअज्जुब है कि आप ख़ुत्बाए जुमा में तो ख़ामोशी ज़रूरी कहते हैं और इमाम के पीछे नहीं।

ऐतराज़ नम्बर 2 : आयते करीमा **व इज़ा क़रेआ** में मुश्रेकीने मक्का से ख़िताब है जो हुज़ूर की तिलावत के वक़्त शोर मचाते थे और आयत का मंशा यह है कि क़ुरआन पढ़ते वक़्त दुनियावी बातें करके शोर न किया करो लिहाज़ा सूरः फ़ातिहा पढ़ना इसमें दाख़िल नहीं।

जवाब : यह भी ग़लत है आयत में ख़िताब सिर्फ़ मुसलमानों से है। क्योंकि कुफ़्फ़ार पर कोई इबादत वाजिब नहीं जब तक कि ईमान न लाएं। क़ुरआन सुनना भी इबादत है। यह उन पर बग़ैर ईमान लाए कैसे वाजिब होगी। दूसरे यह कि आयते करीमा के आख़िर में है। **लअल्लकुम तुरहमून** ताकि तुम पर रहमत की जाए। क़ुरआन सुनने से रहमत सिर्फ़ मुसलमानों पर आती है काफिर ईमान के बग़ैर कोई भी नेकी करे रहमत का मुस्तहिक़ नहीं। रब फ़रमाता है।

तरजमा : यानी और कुछ कुफ़्फ़ार आप की तरफ़ कान लगाते हैं हमने उनके दिलों पर पर्दे डाल दिए।

देखो कुफ़्फ़ार का कान लगाना मुफ़ीद न हुआ। और फरमाता है।

तरजमा : और जो कुछ उन्होंने काम किए थे हमने क़स्द फ़रमा कर उन्हें बारीक ग़ुबार के रेज़ों की तरह बना दिया।

अगर काफिर सारा क़ुरआन हिफ़्ज़ भी करे और रोज़ाना तिलावत भी किया करे तब भी सवाब का मुस्तहिक़ नहीं। बग़ैर वुज़ू नमाज़ दुरुस्त नहीं। बग़ैर ईमान कोई इबादत क़बूल नहीं। दूसरे यह कि क़ुरआन करीम में इरशाद हुआ **वंसेतू** ख़ामोश रहो ख़ामोशी के मायने यह हैं कि न बात करो न कुछ पढ़ो। अगर सुरः फातिहा पढ़ते रहे तो ख़ामोशी कहाँ हुई। ग़र्ज़ेकि यह आयत न तो कुफ़्फ़ार के हक़ में नाज़िल हुई न ख़ुत्बाए जुमा के लिए नमाज़ियों को इमाम के पीछे क़िराअत से रोकने के लिए नाज़िल हुई। चुनांचे बैहक़ी शरीफ में हज़रत मुजाहिद से रिवायत है।

तरजमा : हुज़ूर संल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़ में क़िराअत फ़रमा रहे थे कि आपने एक अंसारी जवान की क़िराअत सुनी तब यह आयते करीमा नाज़िल हुई। **व इज़ा क़ुरेआ।**

इब्ने मरदवीया ने अपनी तफ़सीर में अस्नाद के साथ मुआविया इब्ने क़ुर्रा से रिवायत की कि उन्होंने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मुग़फ़्फ़ल सहाबी रसूल से इस आयत के नुज़ूल के बारे में पूछा तो उन्होंने जवाब दिया।

तरजमा : यह आयत व इज़ा क़ुरेआ अलख़ इमाम के पीछे क़िराअत करने के मुतअल्लिक़ नाज़िल हुई। लिहाज़ा जब इमाम क़िराअत कर ले तो तुम कान लगा कर सुनो और ख़ामोश रहो।

ऐतराज़ नम्बर ३ : अगर तिलावते कुरआन के वक़्त सब को ख़ामोश रहने का हुक्म हो तो मुसीबत आ जाएगी। आज रेडियो पर तिलावते कुरआन होती है जो तमाम मुल्क में सुनी जाती है। तो सब को कारोबार कलाम सलाम हराम हो जाएगा। इमाम तरावीह पढ़ा रहा है एक आदमी आया जिसने अभी फर्ज़ नहीं पढ़े वह उसी मस्जिद में फर्ज़ इशा पढ़ता है। जहाँ क़िराअत की आवाज़ आ रही है यह भी हराम होगा। ग़र्ज़ेकि यह मानी उम्मत के लिए सख़्त तक्लीफ का बाइस हैं। (मौजूदा वहाबी)

जवाब : सारी उम्मत का इज्मा है कि तिलावते कुरआन सुनना फर्ज़े किफाया है न कि फर्ज़े ऐन। अगर क़ारी की क़िराअत एक मुसलमान भी सुन रहा है तो काफी है जैसे नमाज़े जनाज़ा कि अगरचे सब पर फर्ज़ है मगर एक के अदा करने से सब बरीउज़्ज़िम्मा हो गए। इमाम के पीछे सब मुक़्तदी एक शख़्स के हुक्म में हैं जैसे नमाज़े जनाज़ा की जमाअत। लिहाज़ा मुक़्तदियों में से तो कोई कलाम सलाम, तिलावत नहीं कर सकता। ग़ैर मुक़्तदी के लिए इन मुक़्तदियों का सुन लेना काफी है। हां अगर सब लोग कारोबार में लगे हों कोई न सुन रहा हो तो बुलन्द आवाज़ से तिलावत मना है। ऐसे ही एक मज्लिस में चन्द लोगों का बुलन्द आवाज़ से कुरआन करीम पढ़ना मना है या तो एक तिलावत करे बाक़ी सब सुनें या सब ख़ामोशी से पढ़ें इसकी तहक़ीक़ शामी वग़ैरह कुतुबे फ़िक़्ह में देखो। लिहाज़ा न कोई आफत है न मुसीबत।

ऐतराज़ नम्बर 4 : इस से लाज़िम आता है कि मक्तब में चन्द बच्चे एक साथ कुरआन शरीफ बुलन्द आवाज़ से याद नहीं कर सकते फिर भी मुसीबत ही रही।

जवाब : वहाँ तालीमे कुरआन है तिलावते कुरआन नहीं तिलावत का सुनना फर्ज़ है न कि तालीम कुरआन का इसलिए रब ने **इज़ा कुरेआ** फरमाया **इज़ा तुअल्लिम** न फरमाया। देखो रब फरमाता है।

फइज़ा क़रअतल-कुरआना फ़स्तइज़ बिल्लाह। जब तुम कुरआन पढ़ो तो अऊज़ुबिल्लाह पढ़ लिया करो।

तिलावते कुरआन पर अऊज़ु पढ़ना चाहिए। मगर जब शागिर्द उस्ताद को कुरआन सुनाए तो अऊज़ु न पढ़े कि यह तिलावते कुरआन नहीं तालीमे कुरआन है। (शामी वग़ैरह) ऐसे ही कुरआने करीम ख़िलाफ़े तर्तीब छापना मना है। तर्तील व तर्तीब चाहिए। मगर बच्चों की तालीम के लिए आख़िरी पारा उल्टा छापते भी हैं और उन्हें उल्टा पढ़ाते भी हैं तालीम व क़िराअत के अहकाम में फ़र्क़ होता है। कुरआन ने भी तिलावत व तालीम में फ़र्क़ किया। रब फ़रमाता है—

तरजमा : वह नबी मुसलमानों पर आयतें तिलावत करते हैं उन्हें पाक

करते हैं उन्हें क़िराअत व हिक्मत सिखाते हैं। अगर तिलावत और तालीम में फ़र्क़ नहीं तो यहाँ इन दोनों का ज़िक्र अलग क्यों हुआ।

ऐतराज़ नम्बर 5 : आपकी पेश करदा हदीस **क़िराअतुल-इमाम लहू क़िराअतुन** और हदीस **व इज़ा क़ुरेआ फ़ंसेतू** में लफ़्ज़ क़रआ है जिसके मानी हैं पढ़ना तो इन अहादीस का मतलब यह है कि जब इमाम पढ़े तो तुम ख़ामोश रहो। क्या पढ़े क़ुरआन या कुछ और तो चाहिए कि इमाम के पीछे सुब्हान, अत्तहीयात, दरूद वग़ैरह कुछ न पढ़ा जाए। क्योंकि इमाम जो पढ़ रहा है। (मौजूदा अक़्लमन्द वहाबी)

जवाब : इसके दो जवाब हैं एक इल्ज़ामी दूसरा तहक़ीक़ी। इल्ज़ामी जवाब तो यह है कि अगर ऐसे ही लफ़्ज़ों के लुग़वी मानी किए गए तो आपको मुसीबत पड़ जाएगी। आप अपने को अह्ले हदीस कहते हैं। हदीस के मानी हैं बात चीत या क़िस्सा कहानी। रब फ़रमाता है।

तरजमा : इसके बाद अब किस बात पर ईमान लाओगे हमने उन क़ौमों को क़िस्से कहानियाँ बना दिया।

तो अह्ले हदीस के मानी या तो हुए बातें बनाने वाला बक्की या क़िस्से कहानियाँ नाविल पढ़ने सुनाने वाला। जनाब यहाँ हदीस के इस्तेलाही मानी मुराद हैं फ़रमाने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वह्य के लुग़वी मानी हैं इशारा। इस्लाम के मानी हैं फ़रमां बरदारी। क़लिमे के मानी हैं लफ़्ज़ इन तमाम मानी में यह अल्फ़ाज़ क़ुरआने करीम में इस्तेमाल हुए हैं। कहो अब कहाँ जाओगे। सारा इस्लाम ही ख़त्म और क़ुरआन के अहकाम ही फ़ना। जवाब तहक़ीक़ी यह है कि नमाज़ के ज़िक्र में जब भी लफ़्ज़ **क़िराअत** बोला जाता है तो इस से तिलावते क़ुरआन मुराद होती है। हम कहते हैं नमाज़ के छे: रुक्न हैं तक्बीरे तहरीमा, क़याम, क़िराअत, रुकूअ, सज्दा, अत्तहीयात में बैठना। तो यहाँ क़याम के मानी नाचने के लिए खड़ा होना और क़िराअत के मानी नाविल पढ़ना नहीं। ज़रा समझ से बात किया करो। क्या इतनी ही समझ पर हदीसे रसूल समझने का दावा है।

ऐतराज़ नम्बर 6 : मुस्लिम व बुख़ारी शरीफ़ में है कि हुज़ूर ने इरशाद फ़रमाया।

तरजमा : उसकी नमाज़ नहीं होती जो सूरः फ़ातिहा न पढ़े।

इस हदीस से दो मसले मालूम हुए। एक यह कि नमाज़ में सूरः फ़ातिहा पढ़ना फ़र्ज़ है कि इसके बग़ैर नमाज़ बिल्कुल सहीह नहीं होती। जैसे क़याम व रुकूअ वग़ैरह दूसरे यह कि सब पर फ़र्ज़ है नमाज़ी अकेला हो या इमाम या मुक़्तदी हदीस में कोई क़ैद नहीं।

जवाब : इसके तीन जवाब हैं दो इल्ज़ामी एक तहक़ीक़ी। पहला जवाब इल्ज़ामी तो यह है कि यह हदीस इमाम मुस्लिम ने इस तरह नक़्ल फ़रमाई।

तरजमा : उसकी नमाज़ नहीं होती जो सूरः फ़ातिहा और कुछ ज़्यादा न पढ़े।

और मुअत्ता इमाम मालिक में यही हदीस इस तरह है।

नमाज़ नहीं होती मगर सूरः फातिहा से और एक सूरः से आपको चाहिए कि मुक़्तदी पर सूरः फातिहा भी फर्ज़ जानो और सूरः मिलाना भी। क्या बाज़ हदीसों पर ईमान है बाज़ का इंकार है।

दूसरा जवाब इल्ज़ामी यह है। तुम्हारी पेश करदा हदीस कुरआन के भी ख़िलाफ़ है और इन हदीसों के भी जो हमने पहली फस्ल में पेश कीं। बल्कि तुम्हारे भी मुख़ालिफ़ है। कुरआने करीम फ़रमाता है।

तरजमा : जिस क़द्र कुरआन आसान हो पढ़ लिया करो।

फिर सूरः फ़ातिहा पढ़ना फ़र्ज़ कैसे हो सकता है। नीज़ फ़रमाता है।

तरजमा : जब कुरआन पढ़ा जाए तो कान लगा कर सुनो और ख़ामोश रहो।

फिर मुक़्तदी इमाम के साथ सूरः फ़ातिहा पढ़ कर इस हुक्मे रब्बानी की मुख़ालिफ़त कैसे करे। हम बहुत अहादीस बयान कर चुके हैं। जिन में इरशाद हुआ कि इमाम की क़िराअत मुक़्तदी की क़िराअत है जब इमाम क़िराअत करे तो तुम चुप रहो वग़ैरह।

तुम भी कहते हो कि जो रुकूअ में इमाम के साथ मिल गया उसे रकाअत मिल गई। अगर मुक़्तदी पर सूरः फ़ातिहा फर्ज़ थी तो उसके बग़ैर रकाअत कैसे मिल गई। उस पर वज़ू व तहारत तक्बीरे तहरीमा क़याम फर्ज़ रहा कि अगर उन में से कुछ भी छोड़ कर रुकूअ में शामिल हो जाए तो नमाज़ न पाएगा सूरः फातिहा कैसे मआफ हो गई वह फर्ज़ थी।

जवाब तहक़ीक़ी यह है कि इस हदीस के ऐसे मानी करने चाहिए जिस से कुरआन व हदीस में मुख़ालिफ़त न रहे अहादीस आपस में टकरा न जाएं कोई ऐतराज़ भी न पड़े। वह यह कि **ला सलात** में ला नफी जिन्स है। जिसका इस्म तो है **सलात** खबर पोशीदा है। यानी **कामिलुन** मतलब यह हुआ कि नमाज़ बग़ैर सूरः फातिहा कामिल नहीं होती मुतलक़ क़िराअत बहुक्मे कुरआन फर्ज़ है और सूरः फातिहा बहुक्मे हदीस वाजिब जैसे।

तरजमा : नमाज़ नहीं होती मगर हुज़ूरे क़ल्ब से जो मस्जिद के क़रीब रहता हो उसकी नमाज़ नहीं होती मगर मस्जिद में।

फिर **लम यक्रा** क़िराअते हुक्मी व हक़ीक़ी दोनों को शामिल है कि इमाम और अकेले नमाज़ी पर हक़ीक़तन फातिहा पढ़ना वाजिब है और मुक़्तदी पर हुक्मन कि इमाम का पढ़ना उसका पढ़ना है। **हमारी पेश करदा अहादीस इस हदीस की तफ़्सीरें हैं। या यह हदीस आम है और हमारी पेश करदा अहादीस उसकी तख़्सीस करती हैं जिन्होंने मुक़्तदी को उसके हुक्म से ख़ास कर दिया।**

ऐतराज़ नम्बर 7 : तिर्मिज़ी शरीफ में हज़रत उबादा इब्ने सामित से एक हदीस है जिसके आख़िरी अल्फाज़ यह हैं।

हुज़ूर ने सहाबा से फ़रमाया कि मेरे ख़्याल में तुम अपने इमाम के पीछे क़िराअत करते हो हमने अर्ज़ किया हां फरमाया सूरः फातिहा के सिवा कुछ न पढ़ा करो।

इस हदीस में साफ़–साफ़ इरशाद है कि इमाम के पीछे मुक़्तदी सूरः फ़ातिहा पढ़े और दूसरी सूरत न पढ़े यही हम कहते हैं उबादा इब्ने सामित की यह हदीस अबू दाऊद व निसाई बैहक़ी में भी है।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द जवाब हैं एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ है क्योंकि तुम भी कहते हो कि इमाम के साथ रुकूअ में मिल जाने से रकाअत मिल जाती है क्यों जनाब जब मुक़्तदी पर सूरः फातिहा पढ़नी फर्ज़ है तो उस मुक़्तदी को यह रकाअत बग़ैर सूरः फातिहा पढ़े कैसे मिल गई। इसका जवाब सोचो जो तुम जवाब दोगे वही हमारा जवाब भी होगा।

दूसरे यह कि सिर्फ़ उबादा इब्ने सामित रज़ि अल्लाहु अन्हु से यह हदीस मरफ़ूअ नक़्ल है जिस में हुज़ूर ने इमाम के पीछे सूरः फातिहा का हुक्म दिया लेकिन इसके ख़िलाफ़ हज़रत जाबिर, अल्क़मा, अब्दुल्लाह इब्ने मस्ऊद, ज़ैद इब्ने साबित, अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास, अब्दुल्लाह इब्ने उमर, हज़रत अली व उमर से बकसरत रिवायात मन्क़ूल हैं जिन में से कुछ रिवायतें हम पहली फ़स्ल में पेश कर चुके। और तहावी शरीफ़ सहीहुल-बिहारी शरीफ में बहुत ज़्यादा मन्कूल हैं तो हज़रत उबादा की यह रिवायत हदीसे वाहिद है और उन सहाबाए किराम की वह रिवायात हदीस मशाहीर हैं लिहाज़ा उन्हें तरजीह है।

तीसरे यह कि तुम्हारी पेश करदा हदीसे उबादा कुरआने करीम के ख़िलाफ है कुरआन ने तिलावते कुरआन के वक़्त ख़ामोशी का हुक्म दिया हमारी पेश करदा अहादीस की चूंकि कुरआन ताईद कर रहा है लिहाज़ा उन्हें तरजीह है।

चौथे यह कि तुम्हारी पेश करदा हदीस में इमाम के पीछे सूरः फ़ातिहा पढ़ने का हुक्म है और इन अहादीस में जो हमने पेश कीं इसकी मुमानेअत है। नुसूस में मुक़ाबला हो तो मुमानेअत की नस को तरजीह होती है। देखो ग़ैरुल्लाह को सज्दा ताज़ीमी का हुक्म कुरआने करीम में मौजूद है फ़रिश्तों को इसका हुक्म दिया गया बल्कि शैतान इस ग़ैरुल्लाह के सज्दा न करने की वजह से मरदूद कर दिया गया। मगर दूसरी नुसूस में इस सज्दे की मुमानेअत की गई। अब इस मुमानेअत पर अमल है।

पाँचवें यह कि उबादा इब्ने सामित रज़ि अल्लाहु अन्हु की यह हदीस न तो बुख़ारी ने नक़्ल की न मुस्लिम ने मुमानेअत की। हदीस मुस्लिम शरीफ़

में मौजूद। इमाम तिर्मिज़ी ने इसे नक़्ल करके इसे सहीह न फ़रमाया। बल्कि हसन कहा। और फ़रमाया कि ज़्यादा सहीह कुछ और है। हवाला मुलाहिज़ा हो तिर्मिज़ी में इसी तुम्हारी हदीस के साथ है।

तरजमा : अबू ईसा कहते हैं कि उबादा की यह हदीस हसन है। (सहीह नहीं) यही हदीस ज़हरी ने महमूद इब्ने रबीअ से उन्होंने उबादा इब्ने सामित से रिवायत की कि हज़रत उबादा ने फरमाया कि जो सूरः फातिहा न पढ़े उसकी नमाज़ नहीं होती यही रिवायत ज़्यादा सहीह है।

पता लगा कि ज़्यादा सही वह अल्फाज़ हैं जिन में मुक़्तदी के इमाम के पीछे फातिहा पढ़ने का ज़िक्र नहीं तअज्जुब है कि आप सहीह हदीसों के मुक़ाबला में एक ऐसी हदीस पेश कर रहे हैं जो कुरआन के ख़िलाफ मश्हूर हदीसों के भी ख़िलाफ और इमाम तिर्मिज़ी के नज़्दीक सहीह भी नहीं बल्कि हसन है और इसके ख़िलाफ ज़्यादा सहीह है जो इल्ज़ाम हन्फियों पर दिया करते हो वह ख़ुद भी कर रहे हो।

ऐतराज़ नम्बर 8 : अक्सर सहाबा किराम का अमल यही है कि वह इमाम के पीछे क़िराअत करते थे। इमाम तिर्मिज़ी इस हदीसे उबादा इब्ने सामित के मातहत फरमाते हैं।

तरजमा : इमाम के पीछे क़िराअत करने के मुतअल्लिक़ अक्सर सहाबा व ताबईन का इस हदीसे उबादा पर अमल है।

जब अक्सर सहाबा किराम का अमल इस पर है तो फातिहा ज़रूर पढ़नी चाहिए।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि इमाम तिर्मिज़ी का यहाँ अक्सर फरमाना इज़ाफी नहीं बल्कि हक़ीक़ी है। इसके मानी यह नहीं कि ज़्यादा सहाबा तो इमाम के पीछे फातिहा पढ़ते थे और कम सहाबा न पढ़ते थे बल्कि अक्सर बमानी चन्द और मुतअद्दिद है। कुरआन करीम फरमाता है।

तरजमा : इससे बहुतों को गुम्राह करता है और बहुतों को हिदायत करता है।

हक़ यह कि ज़्यादा सहाबा **क़िराअते ख़ल्फ़ल-इमाम** के सख़्त ख़िलाफ़ हैं। (1) हज़रत ज़ैद इब्ने साबित फरमाते हैं कि जो इमाम के पीछे तिलावत करे उसकी नमाज़ी नहीं होती। (सहीहुल-बिहारी)

(2) हज़रत अनस फरमाते हैं कि जो इमाम के पीछे तिलावत करे उसका मुँह आग से भर जाए (इब्ने हब्बान) (3) हज़रत अब्दुल्लाह फरमाते हैं कि जो इमाम के पीछे तिलावत करे उसके मुँह में बदबू भर जाए। (इब्ने हब्बान) (4) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद और (5) हज़रत अल्क़मा फ़रमाते हैं कि जो इमाम के पीछे क़िराअत करे उसके मुँह में ख़ाक (तहावी शरीफ) (6) हज़रत अली मुर्तज़ा फरमाते हैं कि जो इमाम के पीछे तिलावत करे वह फितरत पर

नहीं (तहावी) (7) हज़रत ज़ैद इब्ने साबित फरमाते हैं जो इमाम के पीछे तिलावत करे उसकी नमाज़ नहीं होती (इब्ने जौज़ी फिल-अलल) (8) हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु फरमाते हैं जो इमाम के पीछे तिलावत करे काश उसके मुँह में पत्थर हो (मुअत्ता इमाम मुहम्मद व अब्दुर्रज़्ज़ाक़) (9) हज़रत सअद इब्ने अबी वक़्क़ास फरमाते हैं कि जो इमाम के पीछे तिलावत करे उसके मुँह में अंगारे हों (मुअत्ता इमाम मुहम्मद अब्दुर्रज़्ज़ाक़) (10) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर ख़ुद भी इमाम के पीछे तिलावत न करते थे और सख़्ती से मना भी फरमाते थे कहते थे कि इमाम की क़िराअत काफी है (मुअत्ता इमाम मुहम्मद) यह तमाम रिवायात तहावी शरीफ़ और सहीहुल-बिहारी में मौजूद हैं यह तो बतौर नमूना अर्ज़ किया गया वरन्ना अस्सी सहाबा से मन्क़ूल है कि वह हज़रात इमाम के पीछे क़िराअत से सख़्त मना फरमाते थे। देखो शामी, फ़त्हुल-क़दीर वग़ैरह अगर कुछ रिवायात में आ जाए कि उन में से कुछ हज़रात फातिहा पढ़ते थे तो या तो उनका पहला फ़ेअल होगा जो बाद को मन्सूख़ हो गया। या वह रिवायात क़ाबिले तर्क होंगी। क्योंकि कुरआन के ख़िलाफ हैं।

ऐतराज़ नम्बर 9 : यह तमाम रिवायात ज़ईफ़ हैं (वही पुराना सबक़)

जवाब : जी हाँ इस लिए ज़ईफ़ हैं कि आपके ख़िलाफ हैं आपको उनके ज़ुअफ़ का इल्हाम हुआ होगा। हम ज़ईफ़ के मुतअल्लिक़ इससे पहले बहुत कुछ अर्ज़ कर चुके हैं कि जरहे मुब्हम मोतबर नहीं। और इमाम साहब ने जब यह अहादीस लीं उस वक़्त कोई ज़ईफ़ न थी बाद में ज़ुअफ़ आया बाद का ज़ुअफ़ इमाम साहब को मुज़िर नहीं। और चन्द ज़ईफ़ अस्नादें मिल कर हदीस को हसन बना देती हैं वग़ैरह

ऐतराज़ नम्बर 10 : अगर इमाम आहिस्ता तिलावत कर रहा है जैसे ज़ुहर व असर में या मुक़्तदी बहुत दूर हो कि वहाँ तक इमाम की तिलावत की आवाज़ न पहुँचती हो तो चाहिए कि वह सूरः फ़ातिहा पढ़ ले क्योंकि अब फ़ातिहा पढ़ना कुरआन सुनने में हारिज नहीं।

जवाब : यह ऐतराज़ जब दुरुस्त होता जब कि ख़ामोशी सिर्फ़ कुरआन सुनने के लिए होती हालांकि ख़ामोशी का अलाहिदा हुक्म है और सुनने का अलग हुक्म। रब फ़रमाता है। **फस्तमेऊ लहू व अंसेतू** यह ऐसा ही है। जैसे इरशादे बारी है। **अक़ीमुस्सलाता व आतुज़्ज़काता** जैसे की फ़र्ज़ियत नमाज़ की वजह से नहीं बल्कि यह नमाज़ से अलाहिदा मुस्तक़िल फ़र्ज़ है ऐसे ही ख़ामोशी मुस्तक़िल ज़रूरी चीज़ है। ख़ुफ़िया नमाज़ों में ख़ामोशी है सुनना नहीं जेहरी नमाज़ों में ख़ामोशी भी है और सुनना भी।

ऐतराज़ नम्बर 11 : जब मुक़्तदी नमाज़ के सारे अरकान अदा करता है जैसे तक्बीरे तहरीमा क़्याम रुकूअ वग़ैरह तो तिलावत भी नमाज़ का एक

रुक्न है वह भी अदा करे यह क्या कि सब अरकान अदा करे एक छोड़ दे।

जवाब : इसका जवाब हम पहले दे चुके हैं कि जमाअत की नमाज़ में मुसलमान वफ़्द बन कर दरबारे ख़ुदावन्दी में हाज़िर होते है जिनका नुमाइंदा इमाम होता है। आदाबे शाही क़्याम रुकूअ सज्दा और तहीयत व सना। सब अर्ज़ करेंगे मगर अर्ज़ मअरूज़ यानी तिलावते कुरआन सिर्फ़ उनका नुमाइन्दा उन सब की तरफ से करेगा। मुक़्तदी पर इसी लिए तिलावत फर्ज़ नहीं। बल्कि मना है इस पर अदब से ख़ामोश रहना बहुक्मे कुरआने करीम फर्ज़ है।

ऐतराज़ नम्बर 12 : रुकूअ में मिलने वाले मुक़्तदी पर सूरः फातिहा पढ़ना माफ है जैसा कि मुसाफिर पर चार रकाअत वाली नमाज़ में दो रकाअत माफ हैं क्योंकि हदीस शरीफ में वारिद है।

जवाब : अल्हम्दुलिल्लाह आप क़रीबन हन्फी हो गए बस यही हम कहते हैं कि इमाम के पीछे सूरः फातिहा पढ़ना माफ है जैसे मुसाफिर पर दो रकाअतें फर्ज़ की माफ़ हैं क्योंकि इमाम की क़िराअत उसकी क़िराअत है आपने मान लिया कि **ला सलाता लेमन लम यक़्रा** वाली हदीस अपने ज़ाहिरी उमूम पर नहीं कुछ नमाज़ी इससे ख़ास हैं। हमारे नज़्दीक आम मुक़्तदी। हदीस में इस्तस्ना मानते हैं हम और आप बराबर हुए सिर्फ़ मिक़्दारे इस्तिस्ना (ख़ास होना) में थोड़ी बहस रह गई इंशाअल्लाह वह भी आप मान जाएंगे। यह जवाब इल्ज़ामी था। जवाब तहक़ीक़ी यह है कि शरीअत में नमाज़ कुछ सूरतों में आधी रह जाती है। जैसे सफर और कभी बिल्कुल माफ हो जाती है जैसे दाइमी जुनून और औरत की पलीदगी की हालत लेकिन नमाज़ के शराइत व अरकान किसी सूरत में माफ़ नहीं होते अल्बत्ता बाज़ मज्बूरियों में उनका बदल कर दिया जाता है। बिल्कुल माफ कभी नहीं होते। वज़ू का बदल तयम्मुम और क़्याम का बदल कुऊद कर दिया गया। मगर बग़ैर वज़ू किसी मज्बूरी से भी जाइज़ न हुई। अगर मुक़्तदी के लिए सूरः फातिहा पढ़ना नमाज़ का रुक्न होता तो उसके छूट जाने से रकाअत हरगिज़ न मिलती। मालूम हुआ कि इसके लिए इमाम की क़िराअत बदल है। बस यही हम कहते हैं लिहाज़ा मसला को सफर की नमाज़ पर क़्यास करना बिल्कुल बेअक़्ली है। देखो अगर नमाज़े ईद में कोई शख़्स रुकूअ में शामिल हो तो वाजिब है कि रुकूअ में ही ईद की तक्बीरें कहे। नमाज़े जनाज़ा में जो कोई आख़िरी तक्बीर में मिले तो उस पर वाजिब है कि पहली तक्बीरें कह ले। जब रुकूअ में शामिल होने वाले पर तक्बराते ईदैन माफ न हुईं और आख़िर में शामिल होने वाले पर नमाज़े जनाज़ा की तक्बीरें माफ नहीं होतीं तो अगर मुक़्दी पर सूरः फ़ातिहा पढ़नी फर्ज़ थी तो रुकूअ में शामिल होने पर क्यों माफ होगी।

ऐतराज़ नम्बर 13 : रुकूअ पाने वाले पर इसी रकाअत का क़्याम माफ

हो गया जो फ़र्ज़ था तो अगर सूरः फ़ातिहा माफ़ हो जाए तो क्या हरज है।

जवाब : यह ग़लत है उस पर क़याम माफ़ नहीं हुआ ज़रूरी है कि तक्बीरे तहरीमा कह कर बक़द्रे एक तस्बीह क़याम करे। फिर दूसरी तक्बीर कह कर रुकूअ करे वरना नमाज़ न मिलेगी।

पांचवाँ बाब आमीन आहिस्ता कहनी चाहिए

अहनाफ के नज़्दीक हर नमाज़ी ख़्वाह इमाम हो या मुक़्तदी या अकेला और नमाज़ जेहरी हो या सिर्री आमीन आहिस्ता कहे। मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के नज़्दीक जेहरी नमाज़ में इमाम व मुक़्तदी बुलन्द आवाज़ से चीख़ कर आमीन कहें। इसलिए इस बाब की भी दो फ़स्लें की जाती हैं। पहली फस्ल में हमारे दलाइल। दूसरी फस्ल में वहाबियों के ऐतराज़ात मअ़ जवाबात।

पहली फस्ल

आहिस्ता आमीन कहना हुक्मे ख़ुदा और रसूल के मुवाफ़िक़ है चीख़ कर आमीन कहना कुरआने करीम के भी ख़िलाफ है। और हदीस व सुन्नत के भी मुख़ालिफ़। दलाइल हस्बे ज़ैल हैं। रब तआला फ़रमाता है।

अपने रब से दुआ मांगो आजिज़ी से और आहिस्ता। आमीन भी दुआ है। लिहाज़ा यह भी आहिस्ता कहनी चाहिए रब फ़रमाता है।

तरजमा : ऐ महबूब जब लोग आप से मेरे मुतअल्लिक़ पूछें तो मैं बहुत नज़्दीक हूँ माँगने वाले की दुआ क़बूल करता हूँ जब मुझ से दुआ करता है।

मालूम हुआ कि चीख़ कर दुआ उससे की जाए जो हम से दूर हो। रब तो हमारी शहे रग से भी ज़्यादा क़रीब है। फिर आमीन चीख़ कर कहना बेकार बल्कि ख़िलाफ़े तालीमे कुरआनी है। इसलिए कि आमीन दुआ है।

हदीस नम्बर 1 ता 8 : बुख़ारी, मुस्लिम, अहमद, मालिक, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, नसाई, इब्ने माजा ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जब इमाम आमीन कहे तो तुम भी आमीन कहो क्योंकि जिसकी आमीन फरिश्तों की आमीन के मुवाफ़िक़ होगी उसके गुज़िश्ता गुनाह बख़्श दिए जाएंगे।

इस हदीस से मालूम हुआ कि गुनाह की माफ़ी उस नमाज़ी के लिए है। जिसकी आमीन फरिश्तों की आमीन की तरह हो और ज़ाहिर है कि फ़रिश्ते आहिस्ता आमीन कहते हैं। हमने उनकी आमीन आज तक न सुनी तो चाहिए कि हमारे आमीन भी आहिस्ता हो ताकि फरिश्तों की मुवाफ़िक़त हो और गुनाहों की माफ़ी हो जो वहाबी चीख़ कर आमीन कहते हैं। वह जैसे मस्जिद में आते हैं वैसे ही जाते हैं उनके गुनाहों की माफ़ी नहीं होती। क्योंकि वह फरिश्तों की आमीन की मुख़ालिफ़त करते हैं।

हदीस नम्बर 9 ता 13 : बुख़ारी, शाफ़ई, मालिक, अबू दाऊद, निसई ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जब इमाम कहे **ग़ैरिल-मग़ज़ूबे अलैहिम वलज़्ज़ाल्लीन।** तो तुम कहो आमीन क्यों कि जिसका यह आमीन कहना फ़रिश्तों की आमीन कहने के मुताबिक़ होगा उसके गुनाह बख़्श दिए जायेंगे।

इस हदीस से दो मसले मालूम हुए एक यह कि मुक़्तदी इमाम के पीछे सूरः फ़ातिहा हरगिज़ न पढ़े अगर मुक़्तदी पढ़ता तो हुज़ूर फ़रमाते कि जब तुम **वलज़्ज़ाल्लीन** कहो तो तुम आमीन कहो। मालूम हुआ कि तुम सिर्फ़ आमीन कहोगे। **वलज़्ज़ाल्लीन** कहना इमाम का काम है। रब तआला फ़रमाता है।

तरजमा : जब तुम्हारे पास मोमिन औरतें वतन छोड़ कर आएं तो उनका इम्तिहान लो।

देखो इम्तिहान लेना सिर्फ़ मोमिनों का काम है न कि मोमिना औरतों का किसी हदीस में नहीं आया कि **इज़ा कुल्तुम वलज़्ज़ाल्लीन फ़क़ूलू आमीन।** जब तुम **वलज़्ज़ाल्लीन** कहो तो आमीन कह लो मालूम हुआ कि मुक़्तदी **वलज़्ज़ाल्लीन** कहेगा ही नहीं।

दूसरे यह कि आमीन आहिस्ता होनी चाहिए क्योंकि फ़रिश्तों की आमीन आहिस्ता होती है। जो आज तक हमने नहीं सुनी ख़्याल रहे कि यहाँ की आमीन की मुवाफ़िक़त से मुराद वक़्त में मुवाफ़िक़त नहीं बल्कि तरीक़ा अदा में मुवाफ़िक़त है फ़रिश्तों की आमीन का वक़्त तो वही है जब इमाम सूरः फ़ातिहा ख़त्म करता है। क्योंकि हमारे मुहाफ़िज़ फ़रिश्ते हमारे साथ ही नमाज़ों में शरीक होते हैं और उसी वक़्त आमीन कहते हैं।

हदीस नम्बर 14 ता 18 : इमाम अहमद, अबू दाऊद तय्यासी, अबू यअला मूसली तिबरानी, दार क़ुतनी और हाकिम ने मुस्तदरक में हज़रत वाइल इब्ने हजर से रिवायत की। हाकिम ने फ़रमाया कि इसकी अस्नाद निहायत सहीह है।

तरजमा : हज़रत वाइल इब्ने हजर ने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ नमाज़ पढ़ी। जब हुज़ूरे वाला **ग़ैरिल-मग़ज़ूबे अलैहिम वलज़्ज़ाल्लीन** पर पहुँचे तो आपने फ़रमाया आमीन और आमीन में आवाज़ आहिस्ता रखी।

मालूम हुआ कि आमीन आहिस्ता कहना सुन्नते रसूलुल्लाह है। बुलन्द आवाज़ से कहना बिल्कुल ख़िलाफ़े सुन्नत है।

हदीस नम्बर 19 ता 21 : अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, इब्ने अबी शैबा ने हज़रत वाइल इब्ने हजर से रिवायत की।

फ़रमाते हैं कि मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सुना कि

आपने पढ़ा **ग़ैरिल-मग़ज़ूबे अलैहिम व लज़्ज़ाल्लीन।** तो फरमाया आमीन और आवाज़े मुबारका आहिस्ता रखी।

हदीस नम्बर 22 व 23 : तबरानी ने तहज़ीबुल-आसार में और तहावी ने हज़रत वाइल इब्ने हजर से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत उमर व अली रज़ि अल्लाहु अन्हुमा न तो बिस्मिल्लाह ऊंची आवाज़ से पढ़ते थे न आमीन।

मालूम हुआ कि आहिस्ता आमीन कहनी सुन्नते सहाबा भी है।

हदीस नम्बर 24 : ऐनी शारेह हिदाया ने हज़रत अबू मुअम्मर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने फरमाया इमाम चार चीज़ें आहिस्ता कहे। **अऊज़ुबिल्लाह, बिस्मिल्लाह, आमीन** और **रब्बना लकल-हम्दु।**

हदीस नम्बर 25 : बैहक़ी ने हज़रत अबू वाइल से रिवायत की अब्दुल्लाह इब्ने मस्ऊद ने फरमाया।

तरजमा : इमाम चार चीज़ें आहिस्ता कहे। **बिस्मिल्लाह, रब्बना लकल-हम्दु अऊज़ु** और **अत्तहीयात।**

हदीस नम्बर 26 : इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु हज़रत हम्माद से उन्होंने इब्राहीम नख़्ई से रिवायत की।

तरजमा : आपने फ़रमाया कि इमाम चार चीज़ें आहिस्ता कहे। **अऊज़ुबिल्लाह, बिस्मिल्लाह, सुब्हानका अल्लाहुम्मा** और आमीन यह हदीस इमाम मुहम्मद ने आसार में और अब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने अपनी मुसन्नफ़ में बयान की।

अक़्ल भी चाहती है कि आमीन आहिस्ता कही जाए क्योंकि आमीन कुरआने करीम की आयत या कलिमा कुरआन नहीं इसी लिए न जिब्रीले अमीन इसे लाए न कुरआने करीम में लिखी गई। बल्कि दुआ और ज़िक्रुल्लाह है। तो जैसे कि सना, अत्तहीयात, दरूदे इब्राहीमी, दुआए मासूरह वग़ैरह आहिस्ता पढ़ी जाती हैं। ऐसे ही आमीन भी आहिस्ता होनी चाहिए। यह क्या कि तमाम ज़िक्र आहिस्ता हुए आमीन पर तमाम लोग चीख़ पड़ें। यह चीख़ना कुरआन के भी खिलाफ है। अहादीसे सहीहा के भी सहाबाए किराम के अमल के भी और अक़्ले सलीम के भी रब तआला अमल की तौफ़ीक़ दे। दूसरे इसलिए कि अगर मुक़्तदी पर सूरः फातिहा पढ़ना भी फर्ज़ हो और उसे आमीन कहने का भी हुक्म हो तो अगर मुक़्तदी सूरः फ़ातिहा के दरम्यान में हो और इमाम **वलज़्ज़ाल्लीन** कह दे अब यह मुक़्तदी आमीन न कहे तो इस सुन्नत का ख़िलाफ़ हुआ और अगर आमीन कहे और चीख़े तो आमीन दरम्यान में आएगी कुरआन में ग़ैर कुरआन आएगा। और दरम्यान सूरः फातिहा में शोर मचेगा।

दूसरी फस्ल
इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

अब तक हमने ग़ैर मुक़ल्लेदीन के जिस क़द्र ऐतराज़ात सुने हैं तफ़्सील वार मअ़ जवाबात अर्ज़ करते हैं।

ऐतराज़ नम्बर 1 : आमीन दुआ नहीं है लिहाज़ा अगर यह बुलन्द आवाज़ से कही जाए। तो क्या हरज है। रब ने दुआ आहिस्ता मांगने का हुक्म दिया न कि दीगर अज़्कार का।

जवाब : आमीन दुआ है इसका दुआ होना कुरआन शरीफ से साबित है देखो मूसा अलैहिस्सलाम ने बारगाहे इलाही में दुआ की।

तरजमा : ऐ रब हमारे उनके माल बर्बाद कर दे और उनके दिल सख़्त कर दे कि ईमान न लाएं जब तक दर्दनाक अज़ाब न देख लें।

रब ने उनकी दुआ क़बूल फरमाते हुए इरशाद किया।

तरजमा : रब ने फ़रमाया तुम दोनों की दुआ क़बूल की गई तो साबित क़दम रहो।

फरमाइए दुआ तो सिर्फ़ मूसा अलैहिस्सलाम ने मांगी थी। मगर रब ने फ़रमाया कि तुम दोनों की दुआ क़बूल की गई। यानी तुम्हारी और हज़रत हारून अलैहिस्सलाम की। हज़रत हारून ने दुआ कब मांगी थी। वजह यह थी कि उन्होंने मूसा अलैहिस्सलाम की दुआ पर आमीन कही थी। रब ने आमीन को दुआ फरमाया। मालूम हुआ कि आमीन दुआ है और आहिस्ता होना चाहिए। यह मसाइले कुरआनिया में से है।

ऐतराज़ नम्बर 2 : तिर्मिज़ी शरीफ़ में हज़रत वाइल इब्ने हजर से रिवायत है।

तरजमा : मैंने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सुना कि आपने **ग़ैरिल-मग़ज़ूबे अलैहिम वलज़्ज़ाल्लीन**। पढ़ा और आमीन फरमाया अपनी आवाज़ को इस पर बुलन्द किया।

मालूम हुआ कि आमीन बुलन्द आवाज़ से कहना सुन्नत है।

जवाब : आपने हदीस का तरजमा ग़लत किया इसमें मद्दा इरशाद हुआ मद मदुन से बना। इसके मानी बुलन्द करना नहीं बल्कि आवाज़ खींचना हैं। मतलब यह है कि हुज़ूर ने आमीन बरवज़न करीम क़सर से न फरमाई। बल्कि बरवज़न क़ालीन अलिफ और मीम ख़ूब खींच कर पढ़ी। लिहाज़ा इसमें आपकी कोई दलील नहीं। तरजमा की ग़लती है। ख़्याल रहे कि मद का मुक़ाबिल क़स्र है ख़फ़ा का मुक़ाबिल जेहर है और रफ़ा का मुक़ाबिल ख़फ़ज़ अगर यहाँ जेहर होता तो दलील सहीह होती। जेहर किसी रिवायत में नहीं रब फरमाता है।

तरजमा : बेशक रब तआला जानता है बुलन्द और परत आवाज़ को देखो रब ने यहाँ ख़फ़ा का मक़ाबिल जेहर फरमाया न कि मद्द।

ऐतराज़ नम्बर 3 : अबू दाऊद शरीफ में हज़रत वाइल बिन हजर से रिवायत है।

तरजमा : नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब फरमाते वलज़्ज़ाल्लीन तो फरमाते थे आमीन और इसमें अपनी आवाज़ शरीफ बुलन्द फरमाते थे।

यहाँ रफा फरमाया जिसके मानी हैं ऊंचा किया बुलन्द किया मालूम हुआ कि आमीन ऊंची आवाज़ से कहना सुन्नत है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। एक यह कि हज़रत वाइल इब्ने हजर की असल रिवायत में मद्द है। जैसा कि तिर्मिज़ी शरीफ में वारिद हुआ। जिसके मानी खींचने के हैं। न कि बुलन्द करना यहाँ अस्नाद के किसी रावी ने रिवायत बिल-माना मद को रफ़अ् से ताबीर फ़रमाया और मुराद वह खींचना है न कि बुलन्द करना रिवायत बिल-माना का आम दस्तूर था। दूसरे यह कि तिर्मिज़ी और अबू दाऊद की रिवायतों में नमाज़ का ज़िक्र नहीं सिर्फ़ हुज़ूर की क़िराअत का ज़िक्र है मुम्किन है कि नमाज़ के अलावा ख़ार्जी क़िराअत का ज़िक्र फरमाया हो मगर जो रिवायात हमने पेश की हैं उन में नमाज़ का खुला ज़िक्र है लिहाज़ा अहादीस में टकराव नहीं और यह अहादीस हमारे ख़िलाफ़ नहीं। तीसरे यह कि आमीन बिल-जेहर और आमीन ख़फी की अहादीस में टकराव है। मगर जेहर वाली रिवायतें कुरआने करीम के ख़िलाफ़ हैं लिहाज़ा छोड़ने के लाइक़ हैं और आहिस्ता की रिवायतें कुरआन के मुताबिक़ हैं। लिहाज़ा लाइकुल-अमल हैं। चौथे यह कि आहिस्ता आमीन की हदीसें क़यासे शरई के मुवाफ़िक़ हैं और जेहरी आमीन की हदीसें उसके ख़िलाफ़ लिहाज़ा आहिस्ता आमीन की हदीसें क़ाबिले अमल हैं। इसके ख़िलाफ़ क़ाबिले तर्क। कुरआनी आयतों और क़यासे शरई का ज़िक्र हम पहली फस्ल में कर चुके हैं। पाँचवें यह कि आमीन जेहरी वाली हदीसें कुरआन शरीफ़ से और उन अहादीस से जो हम पेश कर चुके हैं मन्सूख़ हैं। इसी लिए सहाबा किराम हमेशा आहिस्ता आमीन कहते थे। और इसी का हुक्म देते थे और ज़ोर से आमीन कहने से मना करते थे। जैसा कि पहली फस्ल में ज़िक्र किया गया। अगर जेहर की हदीसें मन्सूख़ नहीं थीं तो सहाबा ने अमल क्यों छोड़ दिया।

ऐतराज़ नम्बर 4 : इब्ने माजा में हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब **ग़ैरिल-मग़ज़ूबि अलैहिम वलज़्ज़ाल्लीन** फरमाते तो आमीन फरमाते यहाँ तक कि पहली सफ़ वाले सुन लेते तो मस्जिद गूंज जाती थी।

इस हदीस में किसी तावील की गुंजाइश नहीं। यहाँ तो मस्जिद गूंज जाने का ज़िक्र है। गूंज बग़ैर शोर के नहीं पैदा होती।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द जवाब हैं एक यह कि आपने हदीस पूरी पेश नहीं की अव्वल इबारत छोड़ दी वह यह है मुलाहिज़ा हो।

तरजमा : लोगों ने आमीन कहना छोड़ दी हालांकि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम। अलख़

इस जुमला से मालूम हुआ कि आम सहाबा किराम ने बुलन्द आवाज़ से आमीन छोड़ दी थी जिस पर सैयदना अबू हुरैरह यह शिकायत फरमा रहे हैं और सहाबा का किसी हदीस पर अमल छोड़ देना इस हदीस के नस्ख़ की दलील है। यह हदीस तो हमारी ताईद करती है न कि तुम्हारी। दूसरे यह कि अगर यह हदीस सही मान भी ली जाए तो अक़्ल और मुशाहदा के ख़िलाफ़ है और जो हदीस अक़्ल व मुशाहिदा के ख़िलाफ़ है वह क़ाबिले अमल नहीं। खुसूसन जब कि तमाम मश्हूर और आयाते कुरआनिया के भी ख़िलाफ़ है।

क्योंकि इस हदीस में मस्जिद गूंज जाने का ज़िक्र है। हालांकि गुंबद वाली मस्जिद में गूंज पैदा होती है न कि छप्पर वाली मस्जिद में। हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मस्जिद शरीफ आपके ज़माना में मअमूली छप्पर वाली थी। वहाँ गूंज पैदा हो ही कैसे सकती थी। आज कोई ग़ैर मुक़ल्लिद साहब किसी छप्पर वाले घर में शोर मचा कर गूंज पैदा कर के दिखा दें। इंशाअल्लाह चीख़ते चीख़ते मर जाएंगे मगर गूंज न पैदा होगी। इस ऐतराज़ के बाक़ी वह जवाब हैं जो ऐतराज़ नम्बर 3 के मातहत अर्ज़ किए गए। तीसरे यह कि यह हदीस कुरआने करीम के भी ख़िलाफ़ है रब फरमाता है **ला तरफ़ऊ अस्वातकुम फ़ौक़ा सौतिन्नबीये** अपनी आवाज़ें नबी की आवाज़ से ऊंची न करो अगर सहाबा ने इतनी ऊंची आमीन कही कि मस्जिद गूंज गई तो इन सब की आवाज़ हुज़ूर की आवाज़ से ऊंची हो गई। कुरआने करीम की खुली मुख़ालफ़त हुई जो हदीस मुख़ालिफ़े कुरआन हो क़ाबिले अमल नहीं।

ऐतराज़ नम्बर 5 : बुख़ारी शरीफ़ में है।

तरजमा : हज़रत अता फ़रमाते हैं कि आमीन दुआ है और हज़रत इब्ने ज़ुबैर और उनके पीछे वालों ने आमीन कही यहाँ तक कि मस्जिद में गूंज पैदा हो गई।

इस हदीस से साफ मालूम हुआ कि आमीन इतनी चीख़ कर कहना चाहिए कि मस्जिद गूंज जाए।

जवाब : इस ऐतराज़ के भी चन्द जवाब हैं। एक यह कि इसका पहला जुमला हमारे मुताबिक़ है कि आमीन दुआ है और कुरआने करीम फरमाता

है कि दुआ आहिस्ता मांगो देखो फसले अव्वल दूसरे यह कि इस हदीस में नमाज़ का ज़िक्र नहीं न मालूम ख़ारिजे नमाज़ यह तिलावत हुई या नमाज़ में। ज़ाहिर यह है कि ख़ारिजे नमाज़ होगी। ताकि इन अहादीस के ख़िलाफ़ न हो जो हमने पेश कीं। तीसरे यह कि हदीस अक़्ल व मुशाहिदे के ख़िलाफ़ है क्योंकि कच्ची और छप्पर वाली मस्जिद में गूंज पैदा नहीं हो सकती। लिहाज़ा वाजिबुत्तावील है। जनाब अगर कुरआन की आयत भी अक़्ले शरई और मुशाहिदे के ख़िलाफ़ हो तो वहाँ तावील वाजिब होती है वरना कुफ़्र लाज़िम आ जाता है। आयाते सिफात को मुतशाबेह मान कर सिर्फ़ ईमान लाते हैं। इसके ज़ाहिरी मानी नहीं करते क्योंकि ज़ाहिरी मानी अक़्ले शरई के ख़िलाफ़ हैं। जैसे।

तरजमा : इनके हाथों पर अल्लाह का हाथ तुम जिधर फिरोगे उधर ही अल्लाह का मुँह है।

ख़ुदा के लिए हाथ मुँह होना अक़्ल के ख़िलाफ़ है लिहाज़ा यह आयात वाजिबुत्तावील हैं रब फरमाता है।

ज़ुल-क़रनैन ने सूरज को कीचड़ के चश्मे में डूबते देखा। सूरज का डूबते वक़्त आसमान से उतरना और कीचड़ में डूबना ख़िलाफ़े अक़्ल था। लिहाज़ा इसकी तावील की ज़ाती है यह तावील हमारे **हाशियतुल-कुरआन** में मुलाहिज़ा करो जनाब हदीस पढ़ना और है हदीस समझना कुछ और।

ख़ुलासा यह है कि ऐसी कोई हदीस सहीह मरफ़ूअ मौजूद नहीं जिसमें नमाज़ में आमीन बिल-जेहर की तस्रीह हो ऐसी सहीह हदीस न मिली है न मिलेगी। वहाबियों को चाहिए कि ज़िद छोड़ दें और सिद्क़ दिल से इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु का दामन पकड़ें कि यही हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का रास्ता है। इस मसला की ज़्यादा तहक़ीक़ हमारे हाशिया बुख़ारी अरबी में मुलाहिज़ा फरमाओ।

ऐतराज़ नम्बर 6 : आहिस्ता आमीन के मुतअल्लिक़ आपने जिस क़द्र हदीसें पेश की हैं वह सब ज़ईफ़ हैं और ज़ईफ़ से इस्तिदलाल नहीं कर सकते। (वही पुराना याद किया हुआ सबक़) देखो वाइल इब्ने हजर की तिर्मिज़ी वाली रिवायत जो तुमने पेश की उसके मुतअल्लिक़ इमाम तिर्मिज़ी फ़रमाते हैं।

तरजमा : आमीन के बारे में सुफ़ियान की हदीस शुअबा की हदीस से ज़्यादा सही है। शुअबा यहाँ कहते हैं ख़फज़ यानी हुज़ूर ने पस्त आवाज़ से कहा हालांकि यहाँ मद है यानी आवाज़ खींच कर आमीन फरमाई।

जवाब : ख़ुदा का शुक्र है कि आप मुक़ल्लिद तो हुए इमाम अबू हनीफ़ा के न सही इमाम तिर्मिज़ी के सही कि हर जरह आंख बन्द करके क़बूल कर लेते हैं। जनाब इस हदीस के ज़ुअफ़ की असल वजह यह है कि यह आपके

ख़िलाफ़ है। अगर आपके हक़ में होती तो आंख बन्द करके मान लेते आपके इस सवाल के चन्द जवाब हैं।

(1) एक यह कि हमने आहिस्ता आमीन की छब्बीस सनदें पेश कीं। क्या सब सनदें ज़ईफ़ हैं और सब में शुअबा रावी आ रहे हैं। और शुअबा हर जगह ग़लती कर रहे हों यह नामुम्किन है।

(2) दूसरे यह कि अगर यह छब्बीस अस्नादें सारी की सारी ज़ईफ़ भी हों जब भी सब मिल कर क़वी हो गईं जैसा कि हम मुक़द्दमा में अर्ज़ कर चुके हैं।

(3) तीसरे यह कि शुअबा इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के बाद सनद में शामिल हुए जिन से यह हदीस ज़ईफ़ हुई। इमाम साहब को यही हदीस बिल्कुल सहीह मिली थी। बाद का ज़ुअफ़ पहले वालों को मुज़िर नहीं।

(4) चौथे यह कि अगर पहले से ही यह हदीस ज़ईफ़ थी। जब भी इमामे आज़म सिराजे उम्मत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के क़बूल फरमा लेने से क़वी हो गई जैसा कि हम मुक़द्दमा में अर्ज़ कर चुके।

(5) पाँचवें यह कि चूंकि इस हदीस पर आम उम्मते मुस्लेमा ने अमल कर लिया है लिहाज़ा हदीस का ज़ुअफ़ जाता रहा और हदीस क़वी हो गई। जैसा कि हम मुक़द्दमा में अर्ज़ कर चुके हैं।

(6) छठे यह कि इस हदीस की कुरआने करीम ताईद कर रहा है और बुलन्द आवाज़ की हदीस कुरआने करीम के ख़िलाफ़ है लिहाज़ा आहिस्ता आमीन की हदीस कुरआन की ताईद की वजह से क़वी हो गई जैसा कि हम मुक़द्दमा में अर्ज़ कर चुके।

(7) सातवें यह कि इस हदीस की क़यास शरई ताईद कर रहा है और बुलन्द आवाज़ की हदीस क़यासे शरई के और अक़्ले शरई के ख़िलाफ़ है लिहाज़ा आहिस्ता आमीन की हदीस क़वी है और बुलन्द आवाज़ की हदीस नाक़ाबिले अमल। ग़र्ज़कि आहिस्ता आमीन की हदीस बहुत क़वी है इस पर अमल चाहिए।

ऐतराज़ नम्बर 7 : अबू दाऊद शरीफ में हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर जब सूरः फातिहा से फारिग़ होते तो।

तरजमा : इस तरह आमीन कहते कि सफ़े अव्वले में जो आपसे क़रीब होता वह सुन लेता।

जवाब : इस हदीस के दो जवाब हैं एक यह कि हदीस आपके भी ख़िलाफ़ है क्योंकि पहली आपकी रिवायतों में था कि मस्जिद गूंज जाती थी। और इसमें यह आया कि सिर्फ़ पीछे एक दो आदमी ही सुनते थे। दूसरे यह कि इसी हदीस की अस्नाद में बशीर इब्ने राफ़े आ रहा है। इसे तिर्मिज़ी ने किताबुल-जनाइज़ में हाफिज़ ज़हबी से मीज़ान में सख़्त ज़ईफ़ फरमाया

अहमद ने इसे मुंकेरुल-हदीस कहा इब्ने मुईन ने इस की रिवायत को मौज़ूअ क़रार दिया इमाम नसाई ने इसे क़वी नहीं माना। (देखो आफताबे मुहम्मदी लिहाज़ा यह हदीस सख़्त ज़ईफ़ है क़ाबिले अमल नहीं)।

छठा बाब रफ़अ् यदैन करना मना है

अहनाफ अह्ले सुन्नत के नज़्दीक रुकूअ में जाते वक़्त और रुकूअ से उठते वक़्त दोनों हाथ उठाना ख़िलाफ़े सुन्नत और मना है। मगर वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिद इन दोनों वक़्तों में रफअ यदैन करते हैं। और इस पर बहुत ज़ोर देते हैं।

लिहाज़ा इस मसले को भी दो फस्लों में बयान करते हैं। पहली फस्ल में अपने मसला का सुबूत। दूसरी फस्ल में इस मसला पर ऐतराज़ात मअ् जवाब। रब तआला क़बूल फरमाए।

पहली फस्ल

नमाज़ में रुकूअ जाते आते रफअ् यदैन करना मक्रूह और ख़िलाफ़े सुन्नत है जिस पर बेशुमार अहादीस और क़्यासे मुज्तहेदीन वारिद हैं हम इन में से कुछ अर्ज़ करते हैं।

हदीस नम्बर 1 ता 4 : तिर्मिज़ी, अबू दाऊद, निसाई, इब्ने अबी शैबा ने हज़रत अल्क़मा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : एक दफा हम से हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद ने फरमाया क्या मैं तुम्हारे सामने हुज़ूर की नमाज़ न पढ़ूँ, पस आपने नमाज़ पढ़ी इसमें सिवा तक्बीरे तहरीमा के कभी हाथ न उठाए। इमाम तिर्मिज़ी ने फरमाया कि इब्ने मसऊद की हदीस हसन है। इस रफ़अ यदैन न करने पर बहुत से उलमा सहाबा व उलमा ताबईन का अमल है।

ख़्याल रहे कि हदीस चन्द वजूह से बहुत क़वी है एक यह कि इसके रावी हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद हैं जो सहाबा में बड़े फ़क़ीह आलिम हैं। दूसरे यह कि आप जमाअते सहाबा के सामने हुज़ूर की नमाज़ पेश करते हैं और कोई सहाबी इसका इंकार नहीं फरमाते। मालूम हुआ कि सब ने इसकी ताईद की। अगर रफ़अ यदैन सुन्नत होता तो सहाबा इस पर ज़रूर ऐतराज़ करते। क्योंकि इन सब ने हुज़ूर की नमाज़ देखी थी। तीसरे यह कि इमाम तिर्मिज़ी ने इस हदीस को ज़ईफ़ न फरमाया। बल्कि हसन फरमाया। चौथे यह कि इमाम तिर्मिज़ी ने फरमाया कि बहुत उलमा व सहाबा व ताबईन रफ़अ् यदैन न करते थे। इनके अमल से इस हदीस की ताईद हुई। पाँचवें यह कि इमाम अबू हनीफ़ा जैसे जलीलुल-क़द्र अज़ीमुश्शान मुज्तहिद वक़्त ने इसको क़बूल फरमाया और इस पर अमल किया। छठे यह कि आम उम्मते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इस पर अमल है। सातवें

यह कि यह हदीस क़यास व अक़्ल के बिल्कुल मुताबिक़ है जैसा कि हम आइंदा अर्ज़ करेंगे। इंशाअल्लाह इन वजूह से ज़ईफ़ हदीस भी क़वी हो जाती है चे जाएकि यह हदीस तो ख़ुद भी हसन है।

हदीस नम्बर 5 : इब्ने अबी शैबा ने हज़रत बरा इब्ने आज़िम से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब नमाज़ शुरू फरमाते थे तो अपने हाथ उठाते थे फिर नमाज़ से फारिग़ होने तक न उठाते थे।

ख़्याल रहे कि हदीस बरा इब्ने आज़िब को तिर्मिज़ी ने इस तरह नक़ल फ़रमाया कि **फ़िल-बाबे अनिल-बराए।**

हदीस नम्बर 6 : अबू दाऊद ने हज़रत बरा इब्ने आज़िब से रिवायत की।

तरजमा : मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखा कि जब आपने नमाज़ शुरू की तो दोनों हाथ उठाए फिर नमाज़ से फारिग़ होने तक न उठाए।

हदीस नम्बर 7 : तहावी शरीफ ने सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : और हुज़ूर से रिवायत करते हैं कि आप पहली तक्बीर में हाथ उठाते थे फिर कभी न उठाते थे।

हदीस नम्बर 8 ता 14 : हाकिम व बैहक़ी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास व अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हुमा से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि सात जगह हाथ उठाए जाएं नमाज़ शुरू करते वक़्त कअबा के सामने मुँह करते वक़्त सफा मरवा पहाड़ पर और दो मोक़िफ़ मिना व मुज़्देलिफा में और दोनों जुम्रों के सामने।

यह हदीस बज़्ज़ार ने हज़रत इब्ने उमर से इब्ने अबी शैबा से हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से बैहक़ी ने हज़रत इब्ने अब्बास से तबरानी ने और बुख़ारी ने किताबुल-मुफ़रद में अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से कुछ फ़र्क़ से ब्यान की। बाज़ रिवायात में नमाज़े ईदैन का भी जिक्र है।

हदीस नम्बर 15 : इमाम तहावी ने हज़रत मुग़ीरह से रिवायत की कि मैंने इब्राहीम नख़ई से अर्ज़ किया कि हज़रत वाइल ने हुज़ूर को देखा कि आप शुरू नमाज़ में और रुकूअ के वक़्त और रुकूअ से उठते वक़्त हाथ उठाते थे तो आपने जवाब दिया।

तरजमा : अगर हज़रत वाइल ने हुज़ूर को एक बार रफ़अ़ यदैन करते देखा है तो हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद ने हुज़ूर को पचास दफा रफ़अ़ यदैन न करते देखा।

इससे मालूम हुआ कि सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद की हदीस बहुत क़वी है क्योंकि वह सहाबा में फ़क़ीह व आलिम हैं हुज़ूर की सोहबत में अक्सर रहने वाले नमाज़ में हुज़ूर से क़रीब तर खड़े होने वाले हैं। क्योंकि हुज़ूर के क़रीब वह खड़े होते थे जो आलिम व आक़िल होते थे जैसा कि रिवायात में वारिद है।

हदीस नम्बर 16 व 17 : तहावी और इब्ने अबी शैबा ने हज़रत मुजाहिद से रिवायत की।

तरजमा : कहा कि मैंने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हुमा के पीछे नमाज़ पढ़ी आप नमाज़ में पहली तक्बीर के सिवा किसी वक़्त हाथ न उठाते थे।

हदीस नम्बर 18 : ऐनी शरह बुख़ारी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने ज़ुबैर से रिवायत की।

तरजमा : कि आपने एक शख़्स को रुकूअ में जाते देखा और रुकूअ से उठते वक़्त हाथ उठाते हुए देखा तो उस से फरमाया कि ऐसा न किया करो। क्योंकि यह वह काम है जो हुज़ूर ने पहले किया था। फिर छोड़ दिया।

इस हदीस से मालूम हुआ कि रुकूअ के आगे पीछे रफअ यदैन मन्सूख़ है जिन सहाबा से या हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रफअ यदैन साबित है वह पहला फेअल है बाद में मन्सूख़ हो गया।

हदीस नम्बर 19 व 20 : बैहक़ी व तहावी शरीफ़ ने हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : कि आप नमाज़ की पहली तक्बीर में हाथ उठाते थे फिर किसी हालत में हाथ न उठाते थे।

हदीस नम्बर 21 : तहावी शरीफ ने हज़रत असवद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : मैंने हज़रत उमर इब्न ख़त्ताब रज़ि अल्लाहु अन्हु को देखा कि आपने पहली तक्बीर में हाथ उठाए फिर न उठाए इमाम तहावी ने फरमाया कि यह हदीस सहीह है।

हदीस नम्बर 22 : अबू दाऊद शरीफ ने हज़रत सुफ़्यान से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत सुफ़्यान इसी अस्नाद से फरमाते हैं कि हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद ने पहली बार ही हाथ उठाए बाज़ रावियों ने फरमाया कि एक ही दफ़ा हाथ उठाए।

हदीस नम्बर 23 : दार कुतनी ने हज़रत बरा इब्ने आज़िब रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : कि उन्होंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखा जब कि हुज़ूर ने नमाज़ शुरू की तो हाथ इतने उठाए कि कानों के मुक़ाबिल कर दिए। फिर नमाज़ से फारिग़ होने तक किसी जगह हाथ न उठाए।

हदीस नम्बर 24 : इमाम मुहम्मद ने किताबुल-आसार में हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा अन हम्माद अन् इब्राहीम अन्नख़ई इस तरह रिवायत की।

तरजमा : आपने फरमाया कि पहली बार के सिवा नमाज़ में कभी हाथ न उठाओ।

हदीस नम्बर २५ : अबू दाऊद ने बरा इब्ने आज़िब से रिवायत की।

तरजमा : बेशक हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब नमाज़ शुरू करते थे तो कानों के क़रीब तक हाथ उठाते थे फिर लौटाया न करते।

रफ़अ यदैन की मुमानेअत की और बहुत सी अहादीस हैं हमने यहाँ बतौर इख़्तिसार सिर्फ़ पचीस रिवायतें पेश कर दीं अगर शौक़ हो तो मुअत्ता इमाम मुहम्मद, तहावी शरीफ, सहीहुल बिहारी शरीफ का मुताला फरमाएं।

आख़िर में हम हज़रत इमाम आज़म अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु का वह मुनाज़रह पेश करते हैं जो रफ़अ् यदैन के मुतअल्लिक़ मक्का मुअज़्ज़मा में इमाम औज़ाई से हुआ नाज़ेरीन देखें कि इमामे आज़म किस पाया के मुहद्दिस हैं और कितनी क़वी सहीहुल-अस्नाद हदीस पेश फरमाते हैं।

इमाम अबू मुहम्मद बुख़ारी मुहद्दिस रहमतुल्लाह अलैह ने हज़रत सुफ़यान इब्ने उयैना से रिवायत की कि एक दफा हज़रत इमाम आज़म और इमाम औज़ाई रहमतुल्लाह अलैहिमा की मक्का मुअज़्ज़मा के दारुल-हनातीन में मुलाक़ात हो गई तो उन बुज़ुर्गों की आपस में हस्बे ज़ैल गुफ़्तगू हुई। सुनिए और ईमान ताज़ा कीजिए। यह मुनाज़रा फ़त्हुल-क़दीर, और मिर्क़ात शरह मिश्कात वग़ैरह में भी मज़्कूर है।

इमाम औज़ाई : आप लोग रुकूअ में जाते और रुकूअ से उठते वक़्त रफ़अ् यदैन क्यों नहीं करते।

इमाम अबू हनीफ़ा : इसलिए कि रफ़अ् यदैन इन मौक़ों पर हुज़ूर से साबित नहीं।

इमाम औज़ाई : आपने यह क्या फरमाया मैं आपको रफ़अ् यदैन की सहीह हदीस सुनाता हूँ।

तरजमा : मुझे ज़ुहरी ने हदीस बयान की कि उन्होंने सालिम से सालिम ने अपने वालिद से उन्होंने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से कि आप हाथ उठाते वक़्त जब नमाज़ शुरू फरमाते और रुकूअ के वक़्त और रुकूअ से उठते वक़्त।

इमाम आज़म : मेरे पास इस से क़वी तर हदीस इसके ख़िलाफ़ मौजूद है।

इमाम औज़ाई : अच्छा फौरन पेश फरमाइए।

इमाम आज़म : लीजिए सुनिए।

तरजमा : हम से हज़रत हम्माद ने हदीस ब्यान की उन्होंने इब्राहीम नख़ई से उन्होंने हज़रत अल्क़मा और असवद से उन्होंने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद से कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सिर्फ़ शुरू नमाज़ में हाथ उठाते थे फिर किसी वक़्त न उठाते थे।

इमाम औज़ाई : आपकी पेश करदा हदीस को मेरी पेश करदा हदीस पर क्या फौक़ियत है। जिसकी वजह से आपने इसे क़बूल फरमाया और मेरी हदीस को छोड़ दिया।

इमाम आज़म : इसलिए कि हम्माद ज़ुहरी से ज़्यादा आलिम व फ़क़ीह हैं और इब्राहीम नख़ई सालिम से बढ़ कर आलिम फ़क़ीह हैं। अल्क़मा सालिम के वालिद यानी अब्दुल्लाह बिन उमर से इल्म में कम नहीं। असवद बहुत ही बड़े मुत्तक़ी फ़क़ीह व अफ़्ज़ल हैं। अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद फ़िक़्ह में क़िराअत में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सोहबत में हज़रत इब्ने उमर से कहीं बढ़ चढ़ कर हैं कि बचपन से हुज़ूर के साथ रहे चूंकि हमारी हदीस के रावी तुम्हारी हदीस के रावियों से इल्म व फ़ज़्ल में ज़्यादा हैं लिहाज़ा हमारी पेश करदा हदीस बहुत क़वी और क़ाबिले क़बूल हैं।

इमाम औज़ाई : ख़ामोश।

ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी साहिबान इमाम साहब की यह अस्नाद देखें और इसमें कोई नुक़्स निकालें इमाम औज़ाई को सिवाए ख़ामोशी के चार-ए-कार न हुआ। यह है इमाम आज़म की हदीस दानी और यह है उनकी हदीस की अस्नाद। अल्लाह तआला हक़ क़बूल करने की तौफ़ीक़ दे। ज़िद का कोई इलाज नहीं। यह लम्बी लम्बी अस्नादें और इन में ज़ईफ़ रावियों की शिर्कत। हज़रत इमाम आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु के बाद की पैदावार हैं। इमाम साहब ने जो भी हदीस क़बूल फ़रमाई वह निहायत सहीह थी।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यह है कि रुकूअ में रफ़अ यदैन न हो क्योंकि तमाम का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि तक्बीरे तहरीमा में रफ़अ यदैन हो। और तमाम का इस पर भी इत्तिफ़ाक़ है कि सज्दा और क़अदा की तक्बीरों में रफ़अ यदैन न हो। रुकूअ की तक्बीर में इख़्तिलाफ़ है। देखना चाहिए कि रुकूअ की तक्बीर, तहरीमा की तरह है या सज्दा और अत्तहीयात की तक्बीरों की तरह। ग़ौर करने से मालूम होता है कि रुकूअ की तक्बीर, तक्बीरे तहरीमा की तरह नहीं। बल्कि सज्दा और अत्तहीयात की तक्बीरों की तरह है क्योंकि तक्बीर तहरीमा फ़र्ज़ है। जिसके बग़ैर नमाज़ नहीं होती और सज्दे की तक्बीरें सुन्नत कि इनके बग़ैर भी नमाज़ हो जाएगी। तक्बीरे तहरीमा नमाज़ में सिर्फ़ एक दफ़ा होती है रुकूअ सज्दे की तक्बीरें बार-बार होती हैं। तक्बीरे

तहरीमा की असल नमाज़ शुरू होती है। रुकूअ सज्दे की तक्बीरों से रुक्ने नमाज़ शुरू होता है न कि असल नमाज़, तक्बीरे तहरीमा नमाज़ी पर दुनियावी काम खाना पीना वग़ैरह हराम करती है रुकूअ सज्दा की तक्बीरों का यह हाल नहीं इन से पहले ही यह हुर्मत आ चुकी है जब रुकूअ की तक्बीरे सज्दा की तक्बीर की तरह हुई न कि तक्बीरे तहरीमा की तरह तो चाहिए कि रुकूअ की तक्बीर का भी वही हाल हो जो सज्दा की तक्बीर का हाल है यानी हाथ न उठाना। लिहाज़ा हक़ यह है कि रुकूअ में रफ़अ़ यदैन हरगिज़ न करें। (अज़ तहावी शरीफ़)

खुलासा यह है कि रफ़अ् यदैन बवक़्ते रुकूअ हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत और हज़रात सहाबा ख़ुसूसन ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन के अमल के ख़िलाफ़ है अक़्ल शरई के भी मुख़ालिफ़ जिन रिवायात में रफ़अ् यदैन आया है वह तमाम मंसूख़ हैं। जैसा कि हदीस नम्बर 18 में सराहतन मज़्कूर है। या वह सब मरजूह और नाक़ाबिले अमल हैं। वरना अहादीस में सख़्त टकराव वाक़ेय होगा।

यह भी ख़्याल रहे कि नमाज़ में सुकून व इत्मीनान चाहिए बिला वजह हरकत व जुंबिश मक्रूह और सुन्नत के ख़िलाफ़ है इसी लिए नमाज़ में बिला ज़रूरत पाँव हिलाना, उंगलियों को जुंबिश देना मम्नूअ है।

रफ़अ् यदैन में बिला ज़रूरत जुंबिश है। तो रफ़अ् यदैन की हदीसें सुकून नमाज़ के ख़िलाफ़ हैं और तर्क रफ़अ् की हदीसें सुकून नमाज़ के मुवाफ़िक़ लिहाज़ा अक़्ल का भी तक़ाज़ा है कि रफ़अ् यदैन न करने की हदीसों पर अमल हो।

दूसरी फसल

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों की तरफ से अब तक मसला रफ़अ यदैन पर जो ऐतराज़ात हम तक पहुँचे हैं हम निहायत मतानत से तफ़सील वार मअ् जवाबात अर्ज़ करते हैं। रब तआला क़बूल फ़रमाए।

ऐतराज़ नम्बर 1 : रफ़अ यदैन न करने के मुतअल्लिक़ जिस क़दर रिवायात पेश की गई वह सब ज़ईफ़ हैं। और ज़ईफ़ हदीस क़ाबिले अमल नहीं होती। (वही पुराना सबक़)।

जवाब : जी हाँ सिर्फ़ इसलिए ज़ईफ़ हैं कि आपके ख़िलाफ़ हैं। अगर आपके हक़ में होतीं तो अगरचे मन घड़त मौज़ूअ भी होतीं आपके सर व आंखों पर होतीं। जनाब आपकी ज़ईफ़ ज़ईफ़ की रट ने लोगों को हदीस का मुंकिर बना दिया वास्ता रब का यह आदत छोड़ो हम ज़ईफ़ के बहुत जवाबात पिछले बाबों में अर्ज़ कर चुके।

ऐतराज़ नम्बर 2 : अबू दाऊद की बरा इब्ने आज़िब वाली हदीस के मुतअल्लिक़ ख़ुद अबू दाऊद ने फरमाया :

यह हदीस सहीह नहीं।

मालूम हुआ कि यह हदीस ज़ईफ़ है फिर आपने इसे पेश क्यों फ़रमाया।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि किसी हदीस के सहीह न होने से यह लाज़िम नहीं आता कि ज़ईफ़ हो। सहीह और ज़ईफ़ के दरम्यान हसन बेनफ़्सेही, हसन बेग़ैरेही का दरजा भी है। अबू दाऊद ने सेहत का इंकार किया है न कि ज़ुअफ़ का दावा। दूसरे यह कि अबू दाऊद का फरमाना कि यह हदीस सहीह नहीं। जरह मुब्हम है। उन्होंने सहीह न होने की वजह न बताई कि कौन सा रावी ज़ईफ़ है और क्यों ज़ईफ़ है। जरह मुब्हम मोतबर नहीं हम अबू दाऊद के मुक़ल्लिद नहीं कि उनकी हर जरह आंख मीच कर मान लें।

ऐतराज़ नम्बर 3 : अबू दाऊद आपकी पेशकर्दा हदीस नम्बर 25 के मुतअल्लिक़ इरशाद फरमाते हैं कि इस हदीस में यज़ीद इब्ने अबी ज़्याद हैं। जिनको आख़िर उम्र में भूल की बीमारी हो गई थी। उन्होंने बुढ़ापे में फ़रमाया **सुम्मा ला यऊदु** वरना असल हदीस में यह अल्फ़ाज़ मौजूद नहीं लीजिए जरहे मुफ़स्सल हाज़िर है अब यह हदीस यक़ीनन ज़ईफ़ है जो क़ाबिले अमल नहीं।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि यज़ीद इब्ने अबी ज़्याद अबू दाऊद की इस रिवायत में हैं मगर इमाम साहब अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु की अस्नाद में नहीं तो यह अस्नाद अबू दाऊद की ज़ईफ़ हो कर मिली। मगर इमाम अबू हनीफ़ा को सहीह हो कर मिली थी। अबू दाऊद का ज़ुअफ़ इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के लिए मुज़िर क्यों होगा। दूसरे यह कि रफ़अ यदैन न करने की हदीस बहुत अस्नादों से मरवी है सब में यज़ीद इब्ने ज़्याद मौजूद नहीं। अगर यह अस्नाद ज़ईफ़ है तो बाक़ी अस्नादें क्यों ज़ईफ़ होंगी। तीसरे यह कि इमाम तिर्मिज़ी ने रफ़अ यदैन न करने की हदीस को हसन फरमाया और बहुत सहाबा का इस पर अमल बयान किया आपकी नज़र अबू दाऊद के ज़ईफ़ कहने पर तो गई मगर इमाम तिर्मिज़ी के हसन फरमाने पर न गई। और सहाबा के अमल पर न गई यह क्यों। चौथे यह कि अगर इस हदीस की सारी अस्नादें भी ज़ईफ़ हों तब भी सब ज़ईफ़ अस्नादें मिल कर क़वी हो जाएंगी जैसा कि हम मुक़द्दमा में अर्ज़ कर चुके हैं। पाँचवें यह कि आम उलमा औलिया जम्हूर मिल्लते इस्लामिया का रफ़अ यदैन न करने पर अमल रहा और है इस से भी यह हदीस क़वी हो जाती है। सिवा मुट्ठी भर वहाबियों के सब ही इस पर आमिल हैं। तअज्जुब है कि आपकी डेढ़ आदमियों की जमाअत तो हक़ पर हो मगर आम उम्मते

रसूलुल्लाह गुमराही पर। ख़्याल रहे कि दुनिया में पिचानवे फीसदी मुसलमान हन्फ़ियुल-मज़्हब हैं और पाँच फीसदी दीगर मज़ाहिब इस अंदाज़ा की सेहत हरमैन तैयबैन जा कर मालूम होती है। जहाँ हर मुल्क के मुसलमान जमा होते हैं। बेचारे वहाबी तो किसी शुमार में नहीं। यह शायद हज़ार में एक होंगे। सरकार फरमाते हैं।

तरजमा : जिसे आम्मतुल-मुमिनीन अच्छा समझें वह अल्लाह के नज़्दीक भी अच्छा है।

और फरमाते हैं सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम।

तरजमा :मेरी उम्मत के बड़े गरोह की पैरवी करो जो बड़ी जमाअत से अलग रहा वह दोज़ख़ में अलग जाएगा।

ख़्याल रहे कि शाफई मालिकी हंबली हन्फी सब एक गरोह है कि अक़ाइद सब के एक हैं सब मुक़ल्लिद हैं, ग़ैर मुक़ल्लिद मुटठी भर जमाअत मुसलमानों से अक़ाइद में भी अलाहिदा है आमाल में जुदागाना लिहाज़ा हन्फ़ियों की कोई हदीस ज़ईफ़ हो सकती ही नहीं उम्मत के अमल से क़वी है। देखो मुक़द्दमा।

ऐतराज़ नम्बर 4 : तुम्हारी पेश क़रदा हदीस नम्बर 1 जो तिर्मिज़ी वग़ैरह ने हज़रत इब्ने मसऊद से नक़्ल की वह मुज्मल है क्योंकि इसमें नमाज़ का सारा तरीक़ा ब्यान न किया गया। सिर्फ़ यह फरमाया गया कि इब्ने मसऊद ने सिर्फ़ एक दफ़ा हाथ उठाया आगे क्या किया यह मज़्कूर नहीं और मुज्मल हदीस नाक़ाबिले अमल होती है। (डेरा ग़ाज़ी खान के एक लाइक़ वहाबी)

जवाब : जनाब यह हदीस मुज्मल नहीं, मुतलक़ नहीं, आम नहीं, मुश्तरक लफ़्ज़ी या मानवी नहीं बल्कि हदीस मुख़्तसर है। मुख़्तसर पर अमल को किस ने मना किया। और मुज्मल भी बाद बयान मुतकल्लिम क़ाबिले अमल बल्कि वाजिबुल-अमल हो जाती है। क्योंकि मुज्मल बयान मुतकल्लिम के बाद महकम हो जाती है।

हमारा एलान : दुनिया भर के वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिदों को एलान है कि मुतलक़, आम, मुज्मल, मुश्तरके मानवी, मुश्तरके लफ़्ज़ी में फ़र्क़ बताए और उन में से हर एक की जामेअ मानेअ तारीफ करें। मगर कुरआन व हदीस की रौशनी में उसूले फ़ेक़ह या मंतिक़ को हाथ न लगाएं।

वहाबियो! तुम हदीस के ग़लत तरजमे किए जाओ। तुम्हें इन इल्मी चीज़ों से क्या तअल्लुक़ किसी हन्फ़ी आलिम से मुज्मल का लफ़्ज़ सुन लिया होगा तो धोंस जमाने के लिए यहाँ ऐतराज़ जड़ दिया और उसमें यह सुना हुआ लफ़्ज़ इस्तेमाल कर दिया। अल्लाह तआला ने उलूम के दरिया तो मुक़ल्लेदीन के सीनों में बहाए हैं।

ऐतराज़ नम्बर 5 : अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, दारमी इब्ने माजा ने हज़रत

अबू हमीद साअदी से एक तवील हदीस नक़्ल की जिसमें रफ़अ यदैन के मुतअल्लिक़ इबारत यह है।

तरजमा : फिर आप तक्बीर कहते थे और अपने हाथ इतने उठाते कि कंधों के मुक़ाबिल हो जाते और अपनी हथेलियाँ अपने घुटनों पर रखते फिर अपना सर उठाते फिर कहते समेअल्लाहुलिमन हमेदा फिर अपने हाथ उठाते यहाँ तक कि कंधों के मुक़ाबिल हो जाते।

अबू हमीद साअदी ने जमाअते सहाबा में यह हदीस पेश की। जिसकी बवक़्त रुकूअ रफ़अ यदैन का ज़िक्र है और सब ने इनकी तस्दीक़ की मालूम हुआ कि रफ़अ यदैन हुज़ूर का फ़ेअल है और सहाबा की तस्दीक़ व अमल लिहाज़ा इस पर अमल हमको भी चाहिए। (नोट) यह हदीस वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिदों की इंतिहाई दलील है जिस पर उन्हें बहुत नाज़ है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं ग़ौर से मुलाहिज़ा करो। एक यह कि यह हदीस अस्नाद के लिहाज़ से क़ाबिले अमल नहीं क्योंकि इस हदीस की अस्नाद अबू दाऊद वग़ैर में यह है।

तरजमा :हम से मुसद्दद ने हदीस ब्यान की वह फरमाते हैं हमें यह्या ने हदीस सुनाई। अहमद ने फ़रमाया कि हमें अब्दुल-हमीद इब्ने जाफ़र ने वह कहते हैं कि मुझे मुहम्मद इब्ने उमर व इब्ने अता ने ख़बर दी वह कहते हैं कि मैंने अबू हमीद साअदी से दस सहाबा की जमाअत में सुना।

इन में से अब्दुल-हमीद इब्ने जाफ़र सख़्त मज्रूह व ज़ईफ़ हैं। देखो तहावी। दूसरे मुहम्मद इब्ने अम्र इब्ने अता ने अबू हमीद साअदी से मुलाक़ात ही नहीं की और कह दिया मैंने इन से सुना है लिहाज़ा यह ग़लत है। दरम्यान में कोई रावी छूट गया जो मज्हूल है (तहावी) इन दो नुक़्सों की वजह से यह हदीस ही नाक़ाबिले अमल है। मगर चूंकि आपके मुवाफ़िक़ है इसलिए आपको मक़्बूल है। कुछ तो शर्म करो।

दूसरे यह कि हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है क्योंकि इस हदीस में यह भी है।

फिर जब दो रकाअतें पढ़ कर उठते तो तक्बीर फरमाते और अपने हाथ उठाते यहाँ तक कि कंधों के मुक़ाबिल हो जाते जैसे कि नमाज़ के शुरू पर किया था।

फ़रमाओ आप दो रकअतों से उठते वक़्त रफ़अ यदैन क्यों नहीं करते।

तीसरे यह कि जब अबू हमीद साअदी ने यह हदीस सहाबा के मजमा में पेश की तो उन बुज़ुर्गों ने फ़रमाया जो अबू दाऊद में है।

उन्होंने फ़रमाया कि तुम हम से ज़्यादा हुज़ूर की नमाज़ के कैसे वाक़िफ़ हो गए न तो तुम हम से ज़्यादा हुज़ूर के साथ रहे न हम से पहले तुम सहाबी बने तो अबू हमीद बोले बेशक ऐसा ही है।

इस से मालूम हुआ कि अबू हमीद न तो सहाबा में फ़क़ीह व आलिम हैं न उन्हें हुज़ूर की ज़्यादा सोहबत मयस्सर हुई। और सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद आलिम फ़क़ीह सहाबी हैं जो हुज़ूर के साथ साया की तरह रहे वह रफ़अ यदैन के ख़िलाफ़ रिवायत करते हैं। तो यक़ीनन अबू हमीद की रिवायत के मुक़ाबला में हज़रत इब्ने मसऊद की रिवायत ज़्यादा मोतबर है। जैसा कि तआरुज़े अहादीस का हुक्म है लिहाज़ा तुम्हारी यह हदीस बिल्कुल नाक़ाबिले अमल है।

चौथे यह कि अबू हुमैद साअदी ने यह न फरमाया कि हुज़ूर ने आख़िर हयात शरीफ तक रफ़अ यदैन किया। सिर्फ़ यह फरमाया कि हुज़ूर ऐसा करते थे मगर कब तक। इससे ख़ामोशी है। हम पहली फस्ल में हदीस पेश कर चुके हैं कि रफ़अ यदैन की हदीसें मन्सूख़ हैं। लिहाज़ा यह उस मंसूख़ हदीस का बयान है कि एक ज़माना में हुज़ूर ऐसा करते थे। अब लाइक़े अमल नहीं।

पाँचवें यह कि यह हदीस क़्यासे शरई के ख़िलाफ़ है और सैयदना इब्ने मसऊद की रिवायत क़्यास के मुताबिक़ लिहाज़ा वह हदीस वाजिबुल-अमल है। और तुम्हारी यह रिवायत वाजिबुत्तर्क क्योंकि जब अहादीस में टकराव हो तो क़्यासे शरई से एक को तरजीह होती है इसकी बहुत सी मिसालें मौजूद हैं।

देखो एक हदीस में है।

तरजमा : आग की पकी चीज़ के इस्तेमाल से वुज़ू करना वाजिब है।

दूसरी हदीस शरीफ़ में वारिद हुआ कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने खाना मुलाहिज़ा फरमा कर बग़ैर वुज़ू किए नमाज़ पढ़ी। यहाँ हदीसों में टकराव हुआ तो पहली हदीस छोड़ दी गई कि क़्यास के ख़िलाफ़ है। दिन रात गर्म पानी से वुज़ू किया जाता है। दूसरी हदीस वाजिबुल-अमल हुई कि क़्यास के मुताबिक़ है। ऐसे ही यहाँ है।

छठे यह कि आम सहाबाए किराम का अमल तुम्हारी पेश करदा हदीस के ख़िलाफ़ रहा जैसा कि हम पहली फ़स्ल में अर्ज़ कर चुके मालूम हुआ कि सहाबा की नज़र में रफ़अ यदैन की हदीस मंसूख़ है।

सातवें यह कि अबू हमीद साअदी की इस रिवायत में अब्दुल हमीद इब्ने जाफर और मुहम्मद इब्ने उमर व इब्ने अता ऐसे ग़ैर मोतबर रावी हैं कि ख़ुदा की पनाह। चुनांचे इमाम मारवी ने जौहर नक़ी में फरमाया कि अब्दुल-हमीद मुंकेरुल-हदीस है। यह इमाम मारवी वह हैं जिन्हें यहया इब्ने सईद फ़रमाते हैं हुवा इमामुन्नासे फ़ी हाज़ल-बाबे। हदीस के फन में वह इमाम हैं। मुहम्मद इब्ने अमर ऐसा झूठा रावी है कि उसकी मुलाक़ात अबू हमीद साअदी से हरगिज़ न हुई मगर कहता है **समेअ्तु** मैंने उन से सुना। ऐसे झूठे आदमी

की रिवायत मौज़ूअ या कम से कम अव्वल दरजा की मुदल्लस है नीज़ इस हदीस की अस्नाद में सख़्त इज़्तिराब है। अस्नाद भी मुज़्तरब है और मतन भी चुनांचे अताफ इब्ने ख़ालिद ने जब यही रिवायत की तो मुहम्मद इब्ने अम्र और अबू हमीद साअदी के दरम्यान एक मज्हूलुल-हाल रावी ब्यान किया लिहाज़ा यह हदीस मज्हूल भी है ग़रज़ कि इस हदीस में एक नहीं बहुत ख़राबियाँ हैं, यह मुंकर भी है मुज़्तरब भी। मुदल्लस या मौज़ूअ भी है मज्हूल भी है देखो हाशिया अबू दाऊद यही मक़ाम ऐसी रिवायत तो नाम लेने के क़ाबिल भी नहीं। चेह जाए कि इससे दलील पकड़ी जाए।

आठवीं यह कि बुख़ारी ने भी अबू हमीद साअदी की यह रिवायत ली है। मगर न इसमें ऐसे रावी हैं न वहाँ रफ़अ यदैन का ज़िक्र है। देखो मिश्कात शरीफ **बाब सिफ़तिस्सलाते** अगर उनकी रिवायात में रफ़अ यदैन का ज़िक्र दुरुस्त होता तो इमाम बुख़ारी हरगिज़ न छोड़ते बहर हाल तुम्हारी यह हदीस किसी लिहाज़ से तवज्जोह के क़ाबिल नहीं।

हन्फ़ी भाइयो! रफ़अ यदैन ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों का चोटी का मसला है और यह हदीस अबू हमीद साअदी इनकी माया नाज़ दलील है जो वहाबियों के बच्चा बच्चा को हिफ़्ज़ होती है। आम हन्फ़ी लोग उनकी लन तरानियाँ देख कर समझते हैं कि उनके दलाइल बड़े ख़ूब क़वी हैं अल्हम्दुलिल्लाह कि इस दलील के परख़चे उड़ गए। अब वहाबी यह हदीस पेश करने की हिम्मत नहीं कर सकते।

ख़्याल रहे कि वहाबियों की किसी अस्नाद का मज्रूह हो जाना, वहाबियों के लिए क़्यामत है क्योंकि उनके मज़्हब की बुनियाद सिर्फ़ इन अस्नादों पर ही है। अगर एक सनद ग़लत हो गई तो समझो कि उनके मज़्हब की एक आँख फूट गई। क्योंकि इन बेचारों का सिवा इन अस्नादों के कोई सहारा नहीं। यह बे पैरे, बे इमामे, बेमुर्शिदे, बे नूरे, इस आयत के मिस्दाक़ हैं।

रब फरमाता है।

तरजमा : जिसे अल्लाह गुम्राह करे उसे न कोई वली मिले न पीर मुर्शिद।

नीज़ रब फरमाता है।

तरजमा : जिस पर ख़ुदा लानत करता है उसका कोई मददगार नहीं।

लेकिन अहनाफ़ की अहादीस किसी अस्नाद के मज्रूह होने से अहनाफ़ पर कोई असर नहीं पड़ता। हमारे मसाइले फ़क़हिया का दारो मदार इन अस्नादों पर नहीं। बल्कि हज़रत इमाम अल-अइम्मा काशिफुल-गुम्मा सिराजुल-अइम्मा इमाम आज़म अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के फ़रमान पाक पर है। वह इमाम आज़म जो उम्मत का चिराग़ है। इमाम बुख़ारी के

तमाम मुहद्देसीन के उस्ताज़ों का उस्ताज़ है जिसके ज़ेरे अमन हज़ारहा औलिया और उलमा हैं जिसका मज़्हब हर उस जगह मौजूद है जहाँ दीने रसूलुल्लाह मौजूद है उनके क़ौल हमारे मसाइल की दलील हैं। हाँ इमाम आज़म की दलीलें आयाते कुरआनिया और वह सहीह अहादीस हैं जिन पर न कोई ख़दशा है न गुबार क्योंकि इमाम आज़म हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बहुत क़रीब ज़माना में हैं।

मिसाल : देखो हज़रत अबू बकर सिद्दीक़ रज़ि अल्लाहु अन्हु ने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मीरास तक़्सीम न फरमाई हालांकि कुरआने करीम में तक़्सीमे मीरास का हुक्म है। जब उनकी ख़िदमत में यह सवाल हुआ तो फरमाया कि मैंने हुज़ूर से सुना है कि अंबिया किराम की मीरास तक़्सीम नहीं होती चूंकि सिद्दीक़े अक्बर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने खुद बराहे रास्त यह हदीस सुनी थी बेधड़क उस पर अमल किया। अगर इस हदीस से हम इस्तिदलाल करते तो हम को हज़ारहा मुसीबतें पेश आ जातीं अस्नाद पर हज़ारहा क़िस्म की जरह हो जाती मगर सिद्दीक़े अक्बर की आँखों ने ख़ामोश कुरआन में तक़्सीमे मीरास का हुक्म दिया था लेकिन उनके कानों ने बोलते हुए कुरआन सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को फरमाते हुए सुना कि इस हुक्म से अंबिया-ए-किराम अलग हैं। जैसे सिद्दीक़ अक्बर की हदीस जरह व क़दह से पाक है। ऐसे ही इमाम आज़म अबू हनीफा रज़ि अल्लाहु अन्हु की रिवायात जरह व क़दह से पाक कि उनका ज़माना हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मिला हुआ है। लिहाज़ा वहाबियों के लिए यह अस्नादें आफत हैं। हम मुक़ल्लिदों पर इन जरहों का कोई असर नहीं देखो हम ने पहली फस्ल में जो इमाम आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु की अस्नाद पेश की सुब्हानल्लाह कैसी पाकीज़ा अस्नाद है क्या किसी वहाबी में हिम्मत है कि इस सनद पर जिरह कर सके।

ऐतराज़ नम्बर 6 : बुख़ारी व मुस्लिम ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : बेशक रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हाथ शरीफ कांधों तक उठाते थे जब नमाज़ शुरू फरमाते और जब रुकूअ के लिए तक्बीर फरमाते और जब रुकूअ से सर उठाते थे तब भी ऐसे ही हाथ उठाते थे और फरमाते **समेअल्लाह हुलिमन हमेदा रब्बना लकल-हम्द** और सज्दा में रफ़अ यदैन न करते थे।

यह हदीस मुस्लिम व बुख़ारी की है निहायत सहीहुल-अस्नाद है जिस से रफ़अ यदैन रुकूअ के वक़्त भी साबित है और बाद रुकूअ भी।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। एक यह कि इस हदीस में यह तो ज़िक्र है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रुकूअ में रफ़अ यदैन करते थे मगर

यह ज़िक्र नहीं कि आख़िर वक़्त तक हुज़ूर का यह फ़ेअल शरीफ़ रहा हम भी कहते हैं कि वाक़ई रफ़अ यदैन इस्लाम में पहले था। बाद को मंसूख़ हो गया इस हदीस में इसी मंसूख़ फ़ेअल शरीफ का ज़िक्र है। इसका मंसूख़ होना हम पहली फ़स्ल में ब्यान कर चुके।

दूसरे यह कि सहाबा किराम ने रफ़अ यदैन छोड़ दिया। इसकी वजह सिर्फ़ यह है कि उनकी नज़र में रफ़अ यदैन मंसूख़ है चुनांचे दार क़ुतनी में सफः ।।। पर सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और हज़रत अबू बकर सिद्दीक़ व उमर फारूक़ रज़ि अल्लाहु अन्हुम के साथ नामज़ें पढ़ी हैं इन हज़रात ने शुरू नमाज़ तक्बीरे ऊला के सिवा और किसी वक़्त हाथ न उठाए।

फ़रमाओ जनाब अगर रफ़अ यदैन सुन्नते बाक़िया है तो उन बुज़ुर्गों ने इस पर अमल क्यों छोड़ दिया। तीसरे यह कि इस हदीस के रावी सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर हैं और इनका ख़ुद अपना अमल उसके ख़िलाफ़ कि आप रफ़अ यदैन न करते थे। जैसा कि हम पहली फस्ल में नक़्ल कर चुके और जब रावी का अपना अमल अपनी रिवायत के ख़िलाफ़ हो तो मालूम होगा कि यह हदीस ख़ुद रावी के नज़्दीक मंसूख़ है। हम पहली फस्ल में यह भी दिखा चुके कि हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु भी रफ़अ यदैन न करते थे। इन सहाबा के अमल ने हदीस का नस्ख़ साबित किया। चौथे यह कि रिसाला आफताबे मुहम्मदी में है कि यह हदीस इब्ने उमर से चन्द इस्नादों से मरवी है और वह सख़्त ज़ईफ़ हैं क्योंकि एक रिवायत में यूनुस है जो सख़्त ज़ईफ़ है जैसा कि तहज़ीब में है। इसकी दूसरी इस्नाद में अबू क़लाबा है जो ख़ारजीयुल-मज़्हब था। यानी नासबी देखो तहज़ीब। तीसरी अस्नाद में उबैदुल्लाह है यह पक्का राफ़्ज़ी था। चौथी अस्नाद में शुऐब इब्ने इसहाक़ है यह भी मर्जिया मज़्हब का था। ग़र्ज़कि रफ़अ यदैन की हदीसों के रावी क़रीबन कुल रवाफ़िज़ हैं क्योंकि रवाफ़िज़ का अमल है वह रफ़अ यदैन करते हैं।

ऐतराज़ नम्बर 7 : बुख़ारी शरीफ़ ने हज़रत नाफ़ेअ से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर जब नमाज़ में दाख़िल होते तो तक्बीर कहते और अपने दोनों हाथ उठाते और जब **समअल्लाहुलिमन हमेदा** कहते जब भी दोनों हाथ उठाते और जब दो रकाअतों से खड़े होते तब भी दोनों हाथ उठाते थे और इस फ़ेअल को आप नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ मरफ़ूअ फरमाते थे।

देखो सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर बवक़्त रुकूअ रफअ यदैन करते थे। रफ़अ यदैन सुन्नते सहाबा भी है।

जवाब : इसके दो जवाब हैं एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है कि इसमें दो रकाअतों से उठते वक़्त भी रफ़अ् यदैन साबित है तुम लोग सिर्फ़ रुकूअ् पर करते हो दो रकाअतों से उठते वक़्त नहीं करते। दूसरे यह कि हम पहली फस्ल में हदीस ब्यान कर चुके हैं कि हज़रत मुजाहिद फरमाते हैं मैंने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर के पीछे नमाज़ पढ़ी वह सिर्फ़ तक्बीर तहरीमा के वक़्त हाथ उठाते थे। अब हज़रत इब्ने उमर के दो फ़ेअल नक़्ल हुए बवक़्त रुकूअ हाथ उठाना। और न उठाना। इन दोनों हदीसों को इस तरह जमा किया जा सकता है कि नस्ख़ की ख़बर से पहले आप हाथ उठाते थे और नस्ख़ की ख़बर के बाद न उठाते थे। क्योंकि इस हदीस में वक़्त का ज़िक्र नहीं कि कब और किस ज़माना में उठाते थे लेहाज़ा दोनों हदीसें जमा हो गईं। चुनांचे तहावी शरीफ़ में है।

तरजमा : जाइज़ है कि सैयदना इब्ने उमर का रफ़अ यदैन जो ताऊस ने देखा सुबूते नस्ख़ से पहले किया हो फिर जब सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर को रफ़अ यदैन के नस्ख़ की तहक़ीक़ हो गई तो छोड़ा दिया और वह किया जो मुजाहिद ने देखा (रफ़अ यदैन न करना)।

बहरहाल हमारे नज़्दीक दोनों हदीसें दुरुस्त हैं मुख़्तलिफ़ वक़्तों में मुख़्तलिफ़ अमल में मगर वहाबियों को एक हदीस छोड़ना पड़ती है। किसी हदीस को छोड़ने से दोनों को जमा करना बेहतर है।

ऐतराज़ नम्बर 8 : मुस्लिम शरीफ़ ने हज़रत वाइल इब्ने हजर से रिवायत की जिसके बाज़ अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : जब हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने समेअल्लाहुलेमन हमेदह फरमाया तो अपने दोनों हाथ उठाए और जब सज्दा किया तो दोनों हाथों से बीच में किया।

इससे भी रफ़अ यदैन साबित है।

जवाब : हज़रत वाइल इब्ने हजर रज़ि अल्लाहु अन्हु की यह रिवायत सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद की रिवायत के मुक़ाबला में मोतबर नहीं। हज़रत वाइल इब्ने हजर सिर्फ़ एक बार हाथ उठाने की रिवायत करते हैं क्योंकि वाइल इब्न हजर देहात के रहने वाले थे। जिन्होंने एक आध बार हुज़ूर के पीछे नमाज़ पढ़ी उन्हें नस्ख़े अहकाम की ख़बर बमुश्किल होती थी। मगर हज़रत इब्ने मसऊद हमेशा हुज़ूर के साथ रहते थे। बड़े आलिम व फ़क़ीह सहाबी थे। और हज़रत वाइल इब्ने हजर हुज़ूर के पीछे आख़िरी सफ में खड़े हुए होंगे। हज़रत इब्ने मसऊद सफ़े अव्वल में ख़ास हुज़ूर के पीछे खड़े होने वाले सहाबी हैं क्योंकि हुज़ूर के पीछे उलमा फ़ुक़्हा सहाबा खड़े होते थे। ख़ुद सरकार ने हुक्म दिया था कि –

तरजमा : तुम में से मुझ से क़रीब वह रहे जो इल्म व अक़्ल वाला हो।

चुनांचे मुस्नदे इमामे आज़म में है कि किसी ने सैयदना इब्राहीम नख़ई से हज़रत वाइल इब्ने हजर की इस रिवायत के मुतअल्लिक़ दरयाफ़्त किया जिस में उन्होंने रफ़अ यदैन का ज़िक्र किया है तो हज़रत इब्राहीम नख़ई ने यह नफ़ीस जवाब दिया।

तरजमा : आपने फरमाया कि वाइल इब्ने हजर देहात के रहने वाले थे इस्लाम के अहकाम से पूरे वाक़िफ़ न थे। हुज़ूर के साथ एक आध ही नमाज़ पढ़ सके और मुझ से बेशुमार शख़्सों ने हज़रत इब्ने मसऊद से रिवायत की कि आप सिर्फ़ इब्तिदा नमाज़ में हाथ उठाते थे और यह हुज़ूर से नक़्ल फरमाते थे अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद अहकामे इस्लाम से ख़बरदार हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हालात की तहक़ीक़ी ख़बर रखने वाले हुज़ूर के सफर व हजर के साथी थे। उन्होंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ बेशुमार नमाज़ें पढ़ीं।

ख़ुलासा यह कि आलिम व फ़क़ीह और हुज़ूर के साथ हमेशा रहने वाले सहाबी की रिवायत को तरजीह होती है। लिहाज़ा हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद की रिवायत क़ाबिले अमल है और इस रिवायत के मुक़ाबिल सैयदना वाइल इब्ने हजर की रिवायत नाक़ाबिले अमल। उन्होंने रफ़अ यदैन के नस्ख़ से पहले का फ़ेअल मुलाहिज़ा किया और वही नक़्ल फरमा दिया।

ऐतराज़ नम्बर 9 : अगर तक्बीरे तहरीमा के सेवा रफ़अ यदैन न करना चाहिए तो आप लोग नमाज़े ईद और नमाज़े वित्र में रुकूअ के वक़्त रफ़अ यदैन क्यों करते हो क्या वह दोनों नमाज़ें नमाज़ नहीं (बाज़ डेरा ग़ाज़ी खानी वहाबी)।

जवाब : इस सवाल से आपकी बेबसी ज़ाहिर हो रही है। अहादीस में तो आप रह गए। अब लगे अटकल पच्चू बहाना बनाने। जनाब यहाँ गुफ़्तगू इस रफ़अ यदैन में है जिसे आप सुन्नते नमाज़ या सुन्नते रुकूअ समझे बैठे हैं। ईदैन और वित्र के रफ़अ यदैन सुन्नते रुकूअ नहीं। बल्कि नमाज़ ईद और दुआ-ए-कुनूत की सुन्नतें हैं इसी लिए ईद में एक रकाअत में तीन बार रफ़अ यदैन होता है और वित्र में रुकूअ से पहले नहीं बल्कि दुआए कुनूत से पहले होता है जैसे नमाज़े ईद में ख़ुतबा जमाअत वग़ैरह और नमाज़े वित्र में दुआए कुनूत। तीन रकाअत वग़ैरह ख़ुसूसी सिफ़ात हैं। ऐसे ही छेः तक्बीरें और छः दफ़अ रफ़अ यदैन नमाज़े ईद की ख़ुसूसियत है अगर नमाज़ पंजगाना को नमाज़े ईद या नमाज़े वित्र पर क़्यास करते हो तो ऐ वहाबियो हर रुकूअ पर तीन दफ़अ रफ़अ यदैन किया करो। और हर नमाज़ में दुआए कुनूत पढ़ा करो।

ऐतराज़ नम्बर 10 : हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि जब सूरः कौसर शरीफ़ नाज़िल हुई तो हुज़ूर ने हज़रत जिब्रीईल अलैहिस्सलाम

से पूछा कि ऐ जिब्रईल नहर क्या चीज़ है, जिस का मुझे नमाज़ के साथ हुक्म दिया तो हज़रत जिब्रील ने फरमाया कि इस नहर से मुराद कुरबानी नहीं बल्कि —

तरजमा : जब आप नमाज़ की तक्बीरे तहरीमा कहें तो अपने हाथ उठाएं और जब रुकूअ करें और जब अपना सर उठाएं क्योंकि यही हमारी नमाज़ है और उन फ़रिश्तों की नमाज़ है जो सात आसमानों में है।

इससे मालूम हुआ कि कुरआने करीम ने जैसे नमाज़ का हुक्म दिया वैसे ही रफ़अ यदैन का भी हुक्म दिया लिहाज़ा रफ़अ यदैन ऐसा ही ज़रूरी है जैसे नमाज़ ज़रूरी कि रब ने फरमाया **फ़सल्ले लेरब्बिका वन्हर**। यह भी मालूम हुआ कि फ़रिश्ते भी रफ़अ यदैन करते हैं। तो जो लोग रफ़अ यदैन न करें वह हुज़ूर के भी मुख़ालिफ़ हैं सहाबाए किराम के भी और फ़रिश्तों के भी फ़र्श व अर्श पर रफ़अ यदैन होता है तुम लोग एक इमाम अबू हनीफ़ा की पैरवी में इन तमाम मुक़द्देसीन की मुख़ालिफ़त न करो।

नोट ज़रूरी : डेरा ग़ाज़ी ख़ाँ के वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिदों की तरफ़ से रफ़अ यदैन के मुतअल्लिक़ एक ट्रैक्ट मुफ़्त तक़्सीम हुआ। मुझे भी भेजा गया इसमें यह ऐतरज़ा बहुत जोश के लब व लहजा में मज़्कूर है अब तक पुराने वहाबियों को न सूझा था।

जवाब : वहाबी जी तुम ने या तुम्हारे किसी हम नवा ने झूठी हदीस गढ़ तो ली मगर गढ़ना न आई। झूठ बोलने के लिए भी सलीक़ा दरकार है तुम्हारी इस गढ़ी हुई हदीस ने तुम्हारे मज़हब का बेड़ा ग़र्क़ कर दिया चूंकि तुम ने इसकी अस्नाद बयान न की इसलिए अस्नाद पर बहस नहीं की जा सकती और नहीं कहा जा सकता कि इसका गढ़ने वाला कौन है अल्बत्ता मतने हदीस पर चन्द तरह गुफ़्तगू है।

एक यह कि आप ने नहर के मानी किए रुकूअ से पहले और रुकूअ के बाद हाथ उठाना यह लुग़त की कौन सी किताब से साबित हैं। नहर के मानी हाथ उठाना रुकूअ से पहले और बाद। इतने मानी की पोटली एक लफ़्ज़े **नहर** में किसने भर दी। क्या हज़रत जिब्रील अलैहिस्सलाम को लुग़ते अरबी की भी ख़बर न थी जो **नहर** के मानी यह बता गए। फिर नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और अह्ले बैत अतहार ने भी न पूछा कि ऐ जिब्रील **नहर** के यह अनोखे मानी कहाँ से लिए गए और कैसे लिए गए। लुग़त का हवाला पेश करो। अगर कुरआन व हदीस के मानी ऐसे होने शुरू हो गए तो दीन का रब ही हाफ़िज़ है। सलात के मानी रोटी खाना, ज़कात के मानी पानी पीना, हज के मानी कपड़े पहनना, सौम के मानी चारपाई पर सोना, जिहाद के मानी दुकानदारी करना। कर लो। चलो इस्लाम के पाँचो अरकान ख़त्म। ज़रा शर्म करो अपने ना मुहज़्ज़ब मज़हब को बनाने के लिए क्यों ऐसी हदीसें

गढ़ते हो। दूसरे यह कि यहाँ **नहर** सलात पर मअ्तूफ़ है और मअ्तूफ़ हमेशा मअ्तूफ़ अलैह का ग़ैर होता है तो चाहिए कि नहर से मुराद रफ़अ यदैन न हो कि यह नमाज़ का जुज़ रहे न कि नमाज़ का ग़ैर। तीसरे यह कि जब **वंहर** के मानी हुए रफ़अ यदैन करो और यह अम्र कुरआने करीम में नमाज़ में हुक्म के साथ मज़कूर हुआ तो चाहिए कि जैसे नमाज़ फर्ज़ क़तई है कि इसका मुंकिर दीन से ख़ारिज हो जाता है ऐसे ही रफ़अ यदैन फर्ज़ क़तई हो कि इसके सारे मुंकिर काफिर हों तो तुम और तुम्हारी सारी जमाअत इसे फर्ज़ क्यों नहीं कहते सिर्फ़ सुन्नत क्यों कहते हो। और जब ग़ैर मुक़ल्लिद हन्फ़ियों में फंसें तो रफ़अ यदैन छोड़ क्यों देते हैं। यह कह कर रअफ़ यदैन करना भी सुन्नत है न करना भी जिस पर चाहो अमल कर लो बताओ इसकी फ़र्ज़ियत के मुंकिर हो कर तमाम वहाबी कौन हुए।

चौथे यह कि किसी मुहद्दिस ने रफ़अ यदैन को फर्ज़े क़तई न कहा इमाम तिर्मिज़ी ने रफ़अ यदैन न करने की हदीस को हसन फ़रमा कर फरमाया कि इस पर बहुत उलमा सहाबा व ताबईन का अमल है फरमाओ इमाम तिर्मिज़ी और सारे मुहद्देसीन रफ़अ यदैन की फ़र्ज़ियत का इंकार करके तुम्हारे नज़्दीक इस्लाम के दाइरा में रहे या नहीं और अब इनकी कुतुब से हदीस लेना शरअन जाइज़ है या ना जाइज़।

पाँचवें यह कि हम पहली फ़स्ल में दलाइल से साबित कर चुके कि हज़रत अबू बकर सिद्दीक़, उमर फारूक़, अली मुर्तज़ा, अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास, अब्दुल्लाह इब्ने उमर, अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद, अब्दुल्लाह इब्ने ज़ुबैर रज़ि अल्लाहु अन्हुम अज्मईन जैसे जलीलुल-क़द्र सहाबा रफ़अ यदैन न करते थे बल्कि सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु इससे सख़्त मना फरमाते थे तो इतना बड़ा फ़रीज़-ए-कुरआनी जो नमाज़ की तरह फर्ज़ हो उन सहाबा पर मख़्फ़ी रहा और आज चौदह सौ बरस के बाद डेरा ग़ाज़ी ख़ाँ के एक मौलवी को मालूम हुआ हैरत दर हैरत का बाइस है या नहीं।

छटे यह कि तुमने यह गढ़ी हुई हदीस हज़रत अमीरुल-मुमिनीन मौला-ए-काइनात अली मुर्तज़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु की तरफ निस्बत की तो हैरत है कि हज़रत अली ख़ुद यह रिवायत बयान फ़रमाते हैं और ख़ुद ही इसके ख़िलाफ़ करते हैं कि रफ़अ यदैन नहीं फरमाते। आख़िर ख़ुद क्यों अमल छोड़ दिया।

सातवें यह कि ख़ुद हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत जिब्रील से **वंहर** के मानी पूछे और फिर ख़ुद इस पर अमल न फरमाया जैसा कि हम पहली फस्ल में अर्ज़ कर चुके चाहिए तो यह था कि रफ़अ यदैन की ऐसी ही तबलीग़ फरमाई जाती जैसे नमाज़ की फ़र्ज़ियत की तबलीग़ की

गई। और रफ़अ यदैन न करने वालों पर ऐसे ही जिहाद किया जाता जैसे हज़रत सिद्दीक़ अक्बर ने ज़कात के मुंकिरों पर फरमाया। मुल्ला जी हदीस गढ़ने से पहले तमाम ऊंच नीच सोच लेनी चाहिए।

मुसलमानो! ग़ौर करो यह है उन लोगों की इत्तिबाअे हदीस जो हम से हर मसला पर बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस का मुतालबा करते हैं। और अपने लिए ऐसी बेतुकी हदीसें गढ़ लेने में ख़ौफ़े ख़ुदा नहीं करते। शायद अह्ले हदीस के मानी ही हदीस बनाने वाले। हदीस ढालने वाले हों।

ऐतराज़ नम्बर 11 : हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा फरमाते हैं।

तरजमा :: जब कोई हदीस साबित हो जाए तो वही मेरा मज़्हब है।

चूंकि रफ़अ यदैन क़िराअते ख़ल्फ़ुल-इमाम के मुतअल्लिक़ हम को साबित हो गया कि इमाम अबू हनीफ़ा का क़ौल हदीस के ख़िलाफ़ है इसलिए हमने उनका क़ौल दीवार से मार दिया और हदीसे रसूल पर अमल किया ख़ुद तहक़ीक़ करके हदीस पर अमल करना यही हन्फ़ीयत है। (आम वहाबी)

जवाब : जी हाँ और ख़ास कर जब कि हदीस के मुहक़्क़िक़ आप जैसे मुहक़्क़ेक़ीन (हुक़्क़ा पीने वाले) हों जिन्हें इस्तिंजा करने की तमीज़ नहीं जो बुख़ारी को बुखारी मुस्लिम को मुसल्लम हदीस को हदीस फरमाएं। जनाब हज़रत इमाम ने आप जैसे बुज़ुर्गों को यह खुली इजाज़त नहीं दी इमाम के फ़रमान का तरजमा यह है।

तरजमा :जब हदीस साबित हो गई तो वह मेरा मज़्हब हो गई है।

यानी ऐ मुसलमानो! हमने हर मसला पर हदीसे रसूल तलाश की और उसके हर पहलू पर हर तरह ग़ौर व ख़ौज़ व बहस तमहीस की। अस्नाद और मतन पर ख़ूब गरमा गर्म जरह व क़दह की जब हर तरह साबित हुई तो उसे अपना मज़्हब बनाया गया। यह मज़्हब बहुत पुख़्ता और तहक़ीक़ी है। लिहाज़ा तुम ख़ुद हदीस के समुन्द्र में न कूदना ईमान खो बैठोगे। हमारे निकाले हुए मोती इस्तेमाल करना। समुन्द्र से मोती निकालना हर एक का काम नहीं सिर्फ़ ग़व्वास का काम है अगर पंसारी की दुकान की दवाएं बीमार अपनी राय से इस्तेमाल करेगा तो हलाक हो जाएगा। हकीम की तज्वीज़ से इस्तेमाल करो कुरआन व हदीस रूहानी दवाओं का दवाखाना है। इमाम आज़म तबीबे आज़म हैं कुरआन व हदीस की दवाएं हों इमाम बरहक़ मुज्तहिद की तज्वीज़ हो। देखो फिर फाइदा होता है या नहीं।

हज़रत इमाम के फरमान का यह मतलब नहीं कि मैंने शरीअत के सारे क़वानीन व मसाइल बग़ैर सोचे समझे अटकल पच्चू बयान कर दिए हैं ऐ ना समझ ना दानो! तुम हदीस के ग़लत सलत तरजमे करते जाना और मज़्हब में फ़ितने फैलाते जाना जब एक क़ाबिल तबीब बग़ैर तहक़ीक़ और बग़ैर सोचे

समझे एक बीमार के लिए नुस्ख़ा नहीं लिखता तो इमाम अबू हनीफ़ा जैसे हकीमे मिल्लत सिराजे उम्मत ने आंखें बन्द करके बग़ैर कुरआन व हदीस देखे रूहानी नुस्ख़े क़यामत तक के मुसलमानों के लिए कैसे लिख दिए रब तआला समझा दे।

सातवाँ बाब

वित्र वाजिब हैं और तीन रकअत हैं

वित्र के लुग़वी मानी हैं ताक़ अदद यानी जिसके बराबर दो हिस्से न हो सकें जैसे तीन, पाँच, सात वग़ैरह इसका मुक़ाबिल है। शफ़अ् यानी जुफ़्त अदद जो दो बराबर हिस्सों पर तक़्सीम हो जाए इस्तेलाह शरीअत में वित्र उस ताक़ नमाज़ को कहा ज़ाता है जो बाद नमाज़ इशा चाहे तहज्जुद में या इशा के बाद पढ़ी जाती है।

हमारा मज़हब यह है कि वित्र वाजिब है कि इसका छोड़ने वाला सख़्त गुनहगार है। इसकी क़ज़ा लाज़िम। और वित्र की तीन रकाअतें हैं। लेकिन ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी कहते हैं कि वित्र वाजिब नहीं। सुन्नते ग़ैर मुअक्किदा यानी नफ़्ल है और वित्र एक रकअत है। मज़हब हन्फ़ी हक़ है और वहाबियों का क़ौल बातिल महज़। हम को यहाँ असल बहस तो वित्र की तीन रकअतों पर करना है इससे पहले ज़िम्नी तौर पर वित्र के वजूब पर चन्द हदीसें पेश करते हैं।

वित्र वाजिब हैं

हदीस नम्बर 1 ता 3 : अबू दाऊद, नसई, इब्ने माजा ने हज़रत अबू अय्यूब से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि हर मुसलमान पर वित्र लाज़िम हैं।

हदीस नम्बर 4 : ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि हर मुसलमान पर वित्र वाजिब हैं।

हदीस नम्बर 5 व 6 : अबू दाऊद हाकिम ने हज़रत बरीदा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की उन्होंने फरमाया।

तरजमा : मैंने हुज़ूर को फरमाते हुए सुना कि वित्र लाज़िम ज़रूरी हैं। जो वित्र न पढ़े वह हम में से नहीं।

हदीस नम्बर 7 : अब्दुल्लाह इब्ने अहमद ने अब्दुर्रहमान इब्ने राफ़ेअ तनूख़ी से रिवायत की कि हज़रत मआज़ इब्ने जबल जब शाम में तशरीफ़ लाए तो मुलाहिज़ा फरमाया कि शाम के लोग वित्र में सुस्ती करते हैं तो आपने हज़रत अमीर मुआविया से इसकी शिकायत की कि शामी लोग वित्र

क्यों नहीं पढ़ते।

तरजमा : तो अमीर मुआविया ने पूछा कि क्या मुसलमानों पर वित्र वाजिब हैं। मआज़ इब्ने जबल ने फरमाया हाँ मैंने हुज़ूर को फरमाते हुए सुना कि मुझे रब ने एक नमाज़ और दी है जो वित्र है इशा और फज्र के तुलूअ के दरम्यान।

हदीस नम्बर 8 : तिर्मिज़ी ने हज़रत ज़ैद इब्ने असलम से मुर्सलन रिवायत की।

तरजमा : जो वित्र छोड़ कर सो जाए वह सुब्ह के वक़्त उसकी क़ज़ा पढ़ ले।

हदीस नम्बर 9 ता 14 : अबू दाऊद, नसाई, इब्ने माजा, अहमद, इब्ने हब्बान, हाकिम ने अपनी मुस्तदरक में हज़रत अबू अय्यूब अंसारी से रिवायत की और हाकिम ने कहा कि यह हदीस सहीह है शर्त शैख़ैन पर है।

तरजमा : हुज़ूर ने फ़रमाया कि वित्र लाज़िम है वाजिब है हर मुसलमान पर।

इन अहादीस से दो बातें साबित हुईं एक यह कि वित्र नफ़्ल नहीं बल्कि वाजिब है। दूसरे यह कि वित्र की क़ज़ा वाजिब है और ज़ाहिर है कि क़ज़ा सिर्फ़ फ़र्ज़ या वाजिब की होती है नफ़्ल की क़ज़ा नहीं वजूबे वित्र की बहुत अहादीस हैं हमने सिर्फ़ 14 रिवायतें पेश कीं।

वित्र तीन रकअत हैं

हदीस नम्बर १ ता ४ : नसाई शरीफ़, तहावी, तबरानी ने सग़ीर में, हाकिम ने मुस्तदरक में हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा से रिवायत की हाकिम ने फ़रमाया कि यह हदीस सहीह है मुस्लिम व बुख़ारी की शर्त पर है।

तरजमा : फ़रमाती हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तीन रकाअत वित्र पढ़ते थे न सलाम फेरते थे मगर आख़िर में।

हदीस नम्बर 5 व 6 : दार क़ुतनी और बैहक़ी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाया नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि रात के वित्र तीन रकाअत हैं जैसे दिन के वित्र नमाज़ मग़्रिब।

हदीस नम्बर 7 : तहावी शरीफ ने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : बेशक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वित्र पढ़ते थे तीन रकाअतें।

हदीस नम्बर 8 : नसाई शरीफ़ ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की कि एक शब मैं हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर था। आप रात को बेदार हुए और वज़ू फ़रमाया। मिस्वाक की और यह आयते करीम तिलावत फ़रमाते थे। **इन्ना फ़ी ख़ल्क़िस्समावाते।** फिर दो रकाअतें नफ़्ल पढ़ीं।

तरजमा : फिर आप दोबारा सो गए यहाँ तक कि मैंने हुज़ूर के ख़र्राटे सुने फिर उठे और मिस्वाक की फिर दो रकाअतें पढ़ीं फिर उठे और वुज़ू मआ मिस्वाक किया और दो रकाअतें पढ़ीं और तीन रकाअतें वित्र पढ़ीं।

हदीस नम्बर 9 ता 13 : तिर्मिज़ी, नसाई, दारमी, इब्ने माजा इब्ने अबी शैबा ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हुम से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वित्र में **सब्बेह हिस्मा रब्बिकल-आला** और **कुल या ऐयुहल-काफ़िरून** और **कुल हुवल्लाह** पढ़ा करते थे एक एक रकाअत में एक एक सूरत।

हदीस नम्बर 13 ता 18 : तिर्मिज़ी शरीफ़, अबू दाऊद, इब्ने माजा, नसाई, इमाम अहमद इब्ने हंबल ने हज़रत अब्दुल-अज़ीज़ बिन इब्ने जुरैह, अब्दुर्रहमान इब्ने अब्ज़ा से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि हमने हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा से दरयाफ़्त किया कि हुज़ूर वित्र में क्या पढ़ा करते थे तो आपने फ़रमाया कि पहली रकाअत में **सब्बेह इस्मे रब्बिकल-आला,** दूसरी में कुल या तीसरी में **कुल हुवल्लाहु** और **फ़लक़ व नास।**

हदीस नम्बर 19 : नसाई शरीफ़ ने हज़रत अबी इब्ने कअब से रिवायत की।

तरजमा : बेशक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वित्र में **बसब्बेह इस्मे रब्बिकल-आला** और दूसरी रकाअत में **कुल या ऐयुहल-काफ़िरून।** और तीसरी रकाअत में **कुल हुवल्लाह** पढ़ा करते थे और सलाम न फेरते थे मगर उन तीनों रकाअतों के आख़िर में।

हदीस नम्बर 20 : इब्ने अबी शैबा ने हज़रत इमाम हसन रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : इस पर सारे मुसलमान मुत्तफ़िक़ हैं कि वित्र तीन रकाअतें हैं न सलाम फेरे मगर उनके आख़िर में।

हदीस नम्बर 21 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत अबू ख़ालिद से रिवायत की।

तरजमा : मैंने हज़रत अबुल-आलिया से वित्र के मुतअल्लिक़ पूछा तो आपने फ़रमाया कि हम सब सहाबा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तो यही जानते हैं कि वित्र नमाज़े मग़्रिब की तरह हैं। यह रात के वित्र हैं और मग़्रिब दिन के वित्र।

यह इक्कीस हदीसें बतौर नमूना पेश की गई हैं वरना वित्र की तीन रकअतों पर बहुत ज़्यादा हदीसें मौजूद हैं अगर तफ़्सील मुलाहिज़ा करना हो

तो तहावी शरीफ़ और सहीहुल-बिहारी मुलाहिज़ा फरमाइए इन अहादीस से यह पता लगा कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का अमल शरीफ़ तीन रकअत वित्र पर था तमाम सहाबा का यही अमल और इस तीन रकाअतों पर सारे मुसलमान मुत्तफ़िक़ रहे हन्फ़ी कहते हैं कि तीनों रकअतें एक सलाम से पढ़े मगर नफ़्से अम्मारह पर चूंकि नमाज़ भारी है इसलिए हवाए नफ़्स वालों ने सिर्फ़ एक रकाअत वित्र पढ़ कर सो रहने की आदत डाली। नाज़ेरीन ने इन मज़्कूरा अहादीस में देख लिया कि हुज़ूर वित्र की पहली रकअत में फ़लां सूरत पढ़ते थे। दूसरी में फ़लां सूरत तीसरी में फलां। वहाबी हज़रात बताएं कि अगर वित्र एक रकाअत है तो यह सूरतें कैसे पढ़ी जाएंगी।

अक़्ल का भी तक़ाज़ा है कि वित्र एक रकअत न हो क्योंकि वित्र नमाज़ तो फ़र्ज़ है न नफ़्ल बल्कि वाजिब है कि इसका पढ़ना ज़रूरी है न पढ़ने वाला फासिक़ है लेकिन इसके वजूब का इंकार कुफ़्र नहीं। वाजिब का यही हुक्म है और हर ग़ैर फर्ज़ इबादत की मिसाल फर्ज़ इबादत में ज़रूर होनी चाहिए यह नहीं हो सकता कि कोई ग़ैर फर्ज़ इबादत बिल्कुल जुदागाना हो कि इसकी मिसाल में न हो। यह शरीअत का आम क़ायदा है जो ज़कात हज वग़ैरह में जारी है अगर वित्र एक रकअत होती तो चाहिए था कि कोई फर्ज़ नमाज़ भी एक रकअत होती हालांकि कोई फर्ज़ नमाज़ एक रकअत नहीं फर्ज़ तो क्या कोई नफ़्ल व सुन्नते मुअक्किदा व सुन्नते ग़ैर मुअक्कदा भी एक रकअत नहीं। नमाज़ फर्ज़ या तो दो रकअत है जैसे फज्र या चार रकअत जैसे जुहर, अस्र, इशा, या तीन रकअत जैसे मग़्रिब वित्र न तो चार रकाअत हो सकती है न दो कि यह अदद शफ़अ हैं। वित्र नहीं। तो ला यक़ीनन तीन ही रकअत चाहिए। एक रकअत नमाज़ इस्लामी क़ानून के ख़िलाफ़ है जिसकी मिसाल किसी नमाज़ में नहीं मिलती। एक रकअत ना मुकम्मल है नाक़िस है बतरा है ग़र्ज़ कि एक रकअत वित्र अक़्ल के भी ख़िलाफ़ है और नक़्ल के भी उम्मत का इज्माअ सहाबा किराम का अमल, हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़रमान सब ही इसके ख़िलाफ़ हैं।

दूसरी फसल

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

मसला वित्र पर अब तक जिस क़द्र दलाइल ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों की तरफ से हम को मिले हम सब नम्बर वार मअ़ जवाब अर्ज़ करते हैं रब तआला क़बूल फरमाए।

ऐतराज़ नम्बर १ : इब्ने माजा ने हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाती हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक रकअत वित्र पढ़ते थे फिर बाद वित्र दो नफ़्ल पढ़ते थे।

मालूम हुआ कि वित्र एक रकअत चाहिए हुज़ूर ने यही पढ़ी है।

जवाब : आपने हदीस का तरजमा ग़लत किया। जिसकी वजह से यह हदीस तमाम उन अहादीस के ख़िलाफ़ हो गई जिन में तीन रकअतों का ज़िक्र है और अहादीस आपस में मुतआरिज़ हो गईं हदीस का तरजमा ऐसा करना चाहिए जिस से अहादीस मुत्तफ़िक़ हो जाएं इस हदीस शरीफ़ में **"ब"** इस्तेआना की है जैसे **कतब्तु बिल-क़लमे** मैंने क़लम से लिखा क्योंकि वित्र बाब अफ़्आल से मुतअद्दी बेनफ़्सेही है तो हदीस के मानी यह हुए कि हुज़ूर ने नमाज़े तहज्जुद को वित्र यानी ताक़ बनाया एक रकअत के ज़रिया से इस तरह की दो रकअतों के साथ एक रकाअत मिलाई जिससे नमाज़े तहज्जुद का अदद जुफ़्त से ताक़ बन गया मसलन आठ रकअत तहज्जुद अदा फ़रमाई यह अदद जुफ़्त था फिर तीन वित्र पढ़ी तो वित्र की तीसरी रकाअत के सबब कुल रकअतें ग्यारह हो गईं जो ताक़ हैं इस तमाम नमाज़ को ताक़ बनाने वाली वित्र की यह एक रकअत है जो दो से मिल कर अदा हुई इस सूरत में यह हदीस गुज़िश्ता तमाम अहादीस के मुवाफ़िक़ हो गई। मैं ग़ैर मुक़ल्लिदों से पूछता हूँ कि अगर तुम्हारे मानी किए जाएं तो इन अहादीस का क्या जवाब दोगे जिन में साफ़–साफ़ तीन का अदद मज़्कूर है या जिन में वारिद हुआ कि हुज़ूर पहली रकअत में फ़लां सूरत पढ़ते थे दूसरी रकअत में फलां और तीसरी रकअत में फलां सूरत जो पहली फस्ल में मज़्कूर हुई।

ऐतराज़ नम्बर 2 : मुस्लिम शरीफ़ ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि हुज़ूर ने फ़रमाया कि तहज्जुद की नमाज़ दो दो रकअत हैं जब तुम में से कोई सुबह हो जाने का ख़ौफ़ करे तो एक रकअत पढ़ ले। यह रकअत गुज़िश्ता नमाज़ को वित्र बना देगी।

इस से चार मसले मालूम हुए एक यह कि नमाज़े तहज्जुद में दो दो रकअत नफ़्ल अदा करनी चाहिए। दूसरे यह कि नमाज़े तहज्जुद रात में हो सुबह से पहले। तीसरे यह कि वित्र तहज्जुद की नमाज़ के बाद अफ़्ज़ल है। चौथे यह कि वित्र एक रकअत है। हन्फ़ी लोग पहले तीन मसले तो मानते हैं चौथे के इंकारी हैं अगर यह हदीस सहीह है तो चारों मसले मानें अगर सहीह नहीं तो चारों न मानें।

जवाब : ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी तो इस हदीस का तरजमा यह करते हैं कि जब सुबह का ख़ौफ़ हो तो अकेली एक रकाअत अलाहिदा तौर पर पढ़ ले इस तरजमा से यह हदीस उन तमाम हदीसों के ख़िलाफ़ हो गई जो हम पहली फस्ल में पेश कर चुके हैं और दोनों क़िस्म की हदीसों पर अमल ना

मुमकिन। हन्फ़ी इसके मानी यह करते हैं कि जब सुबह का ख़ौफ़ हो तो दो के साथ एक रकाअत मिला कर पढ़ ले जिन का ज़िक्र हो रहा है यानी **रकअतन वाहिदतन** के बाद **मअर्रकअतैन** पोशीदा है क्योंकि पहले मसना मसना का ज़िक्र हो चुका है। इस सूरत में अहादीस में कोई टकराव न रहा और दोनों हदीसों पर अमल हो गया जैसे कि रब फ़रमाता है।

तरजमा : असहाबे कहफ अपने ग़ार में तीन सौ साल ठहरे नौ बढ़ा लिए।

इस आयत में यह नौ साल तीन सौ साल से अलाहिदा नहीं हैं बल्कि उनके साथ हैं मतलब यह है कि तीन सौ नौ साल क़याम किया चूंकि तीन सौ साल शम्सी थे और तीन सौ नौ साल क़मरी इसलिए रब तआला ने इस तरह इरशाद फ़रमाया। ऐसे ही वित्र की यह रकअत अलाहिदा इन दो दो से नहीं बल्कि इन में से आख़िरी मसना यानी दो के साथ है लेकिन चूंकि वह दो दो रकाअतें तहज्जुद की थीं और नफ़्ल थीं यह तीन रकाअतें वित्र की हैं और वाजिब हैं इसलिए इस **आलमुल-अव्वलीन वल-आख़िरीन अफ़्सहुल** सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस तरह इरशाद फ़रमाया कहो वहाबी जी हदीसों को लड़ाना अच्छा या अहादीस में मुवाफ़िक़त पैदा करके सब पर अमल करना बेहतर काश कि आपने किसी मुक़ल्लिद से हदीस पढ़ी होती।

ऐतराज़ नम्बर 3 : मुस्लिम शरीफ़ ने हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : वित्र आख़िर रात में एक रकाअत है।

इस से मालूम हुआ कि वित्र सिर्फ़ एक रकाअत है।

जवाब : इसका जवाब भी दूसरे ऐतराज़ के जवाब से मालूम हो गया कि वहाबी इसके मानी करते हैं कि वित्र एक रकाअत है अकेली सब रकअतों से अलाहिदा इस सूरत में यह हदीस बहुत अहादीस की मुख़ालिफ़ होगी। और अहादीस का जमा नामुम्किन होगा। हन्फ़ी इसका तरजमा करते हैं कि वित्र एक रकअत है। दो के साथ जिसकी तफ़्सीर दूसरी वह हदीसें हैं जो हम पहली फ़स्ल में अर्ज़ कर चुके या इस हदीस में वित्र यानी इस्मे फाइल है यानी तहज्जुद की नमाज़ को ताक़ बनाने वाली एक रकअत है कि यह दो से मिल कर सारी नमाज़ को ताक़ बना देती है कि नमाज़ी ने आठ रकअत तहज्जुद पढ़ी फिर जब वित्रों की नीयत बांधी जब तक दो रकअतें पढ़ीं तो नमाज़ जुफ़्त ही रही जब इन दो रकअतों से एक रकअत और मिला दी तो ताक़ यानी ग्यारह रकआतें बन गईं इस सूरत में यह हदीस तमाम दूसरी हदीसों से मुवाफ़िक़ हो गई। अहादीस का टकराव दूर करना ज़रूरी है।

ऐतराज़ नम्बर 4 : अबू दाऊद व नसाई शरीफ़ ने हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अल्लाह वित्र (बेजोड़) है वित्र को पसन्द फ़रमाता है पस वित्र पढ़ा करो ऐ कुरआन मानने वालो।

हन्फ़ी बताएं कि अल्लाह एक है या तीन। जब वह एक है तो वित्र भी एक ही रकअत चाहिए न कि तीन। हुज़ूर ने नमाज़ को रब तआला के वित्र होने से मिसाल दी है।

जवाब : इसके दो जवाब हैं एक इल्ज़ामी दूसरा तहक़ीक़ी। जवाब इल्ज़ामी तो यह है कि फिर वहाबियों को चाहिए कि मग़्रिब के फ़र्ज़ भी एक रकअत पढ़ा करें न कि तीन क्योंकि मग़्रिब के फ़र्ज़ दिन के वित्र हैं। और यह वित्र रात के वित्र जैसा कि हदीस शरीफ़ में वारिद है और हम पहली फस्ल में हदीस पेश कर चुके अगर वहाबी कहें कि दूसरी रिवायतों में आ गया कि हुज़ूर मग़्रिब के तीन फ़र्ज़ पढ़ते थे तो हम कहते हैं कि यह भी रिवायतों में आ गया कि हुज़ूर नमाज़े वित्र भी तीन रक्अत पढ़ते थे। देखो पहली फस्ल। तहक़ीक़ी जवाब यह है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने रब तआला की महज वितरियत यानी ताक़ बेजोड़ होने में मिसाल दी है न कि एक होने में तीन भी वित्र है एक भी वित्र तम्सील में अदना मुनासिबत काफी होती है हर तरह मिस्ल होना ज़रूरी नहीं। इसलिए हुज़ूर ने वित्र फ़रमाया वाहिदुन न फ़रमाया यानी यह न फ़रमाया कि अल्लाह तआला एक है एक रकअत को पसन्द फ़रमाता है देखो रब फ़रमाता है।

तरजमा : अल्लाह के नूर की मिसाल ऐसी है जैसे एक ताक़ जिस में चिराग़ है।

यहाँ रब तआला ने अपने नूर की मिसाल चिराग़ से दी मुतलक़न नूरानियत में अब अगर कोई कहे कि चिराग़ में तेल बत्ती होती है तो चाहिए कि अल्लाह तआला के नूर में भी रौग़न व बत्ती हो तो इसकी हिमाक़त है। हम कहते हैं कि फ़लां शख़्स शेर है। मतलब होता है कि सिर्फ़ ताक़त में शेर की तरह है यह नहीं कि उसके पूंछ और पंजा भी है।

ऐतराज़ नम्बर 5 : बुख़ारी शरीफ़ में हज़रत इब्ने अबी मिल्कीया से रिवायत की है।

तरजमा : सैयदना अमीर मुआविया रज़ि अल्लाहु अन्हु ने इशा के बाद एक रकअत वित्र पढ़ी उस वक़्त उनके पास सैयदना इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु के ग़ुलाम हाज़िर थे उन्होंने हज़रत इब्ने अब्बास से इसका ज़िक्र फ़रमाया तो आप ने फ़रमाया उन्हें कुछ न कहो वह सहाबीए रसूल हैं।

मालूम हुआ कि हज़रत अमीर मुआविया रज़ि अल्लाहु अन्हु एक रकअत वित्र पढ़ते थे यह फ़ेअल सहाबी है।

जवाब : यह हदीस तो अहनाफ़ की क़वी दलील है कि वित्र तीन

रकाअत हैं क्योंकि जब अमीर मुआविया ने एक रकअत वित्र पढ़ी तो सैयदना इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु के ग़ुलाम को हैरत हुई। इसकी शिकायत हज़रत इब्ने अब्बास से की। हैरत व तअज्जुब उस काम पर होता है जो निराला और अजीब हो इस से तो यह मालूम हुआ कि कोई सहाबी एक रकअत वित्र न पढ़ते थे वरना न उन्हें तअज्जुब होता न शिकायत करते हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु ने एतराज़ करने से मना फ़रमाया क्योंकि अमीर मुआविया मुज्तहिद फ़क़ीह सहाबी हैं फ़क़ीह मुज्तहिद की ग़लती व ख़ता पर ऐतराज़ जाइज़ नहीं इसका ज़िक्र इस बुख़ारी की दूसरी रिवायत में इस तरह है।

तरजमा : हज़रत इब्ने अब्बास से अर्ज़ किया गया कि आपको हज़रत अमीरुल-मुमिनीन मुआविया पर कोई ऐतराज़ है वह तो वित्र एक ही रकाअत पढ़ते हैं आप ने फ़रमाया ठीक करते हैं। वह मुज्तहिद आलिम हैं।

साफ मालूम हुआ कि वित्र तमाम सहाबा और ख़ुद सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास तीन रकअत पढ़ता करते थे। इसी लिए अमीर मुआविया रज़ि अल्लाहु अन्हु के एक रकअत पढ़ने की शिकायत की गई मगर चूंकि सैयदना अमीर मुआविया सहाबी हैं, आलिम हैं फ़क़ीह हैं मुज्तहिद हैं और मुज्तहिद फ़क़ीह की ख़ता भी दुरुस्त होती है उन पर ऐतराज़ न करो। मेहरबाने मन यह हदीस तो हन्फ़ियों की दलील है। आप धोखे के से अपनी दलील समझ बैठे यह तो आपके ख़िलाफ़ है।

ऐतराज़ नम्बर ६ : हन्फ़ियों की अजीब हालत है हम एक रकाअत वित्र पढ़ें तो ऐतराज़ करते हैं। अमीर मुआविया एक रकाअत वित्र पढ़ें तो उन पर कोई ऐतराज़ नहीं हम रफ़अ यदैन या ऊंची आमीन कहें तो हम पर मलामत है। इमाम शाफ़ई हमारी सी नमाज़ पढ़ें तो न उन्हें वहाबी कहा जाए न उन पर कोई ऐतराज़ हो यह दो रुख़ी पालीसी कैसी और यह फ़र्क़ क्यों है। (आम वहाबी)

जवाब : जी हाँ बिल्कुल ठीक है आलिम फ़क़ीह मुज्तहिद की ख़ता पर भी सवाब है। मगर जाहिल। जब दीदह दानिस्ता आलिमों से मुँह मोड़ कर ग़लती करे तो सज़ा का मुस्तहिक़ है अगर सिविल सर्जन सनद याफ़्ता मुलाज़िम सरकार किसी बीमार को ग़लत दवा दे दे तो उस पर कोई एताब नहीं। लेकिन अगर कोई जाहिल आदमी यूं ही अटकल पच्चू किसी को ग़लत दवा खिला दे तो शरअन व क़ानूनन मुज्रिम है। जज, हाकिम किसी मुल्ज़िम को सज़ा दे हक़ है अगरचे ग़लती करे। मगर जो ऐरे ग़ैरे क़ानून हाथ में लेकर ख़ुद ही लोगों को सज़ा देने लगे मुज्रिम है जेल का मुस्तहिक़ है।

देखो हज़रत अली व मुआविया रज़ि अल्लाहु अन्हुमा में ख़ूंरेज़ जंग हुई जिसमें यक़ीनन अली मुर्तज़ा बरहक़ थे और अमीर मुआविया ख़ता पर।

लेकिन इन में से गुनहगार कोई नहीं जिसको भी बुरा कहा जाए तो बुरा कहने वाला बे ईमान हो जाए। कुरआने करीम ने हज़रत दाऊद व सुलेमान अलैहिमस्सलाम के एक मुक़द्दमे में दो मुख़्तलिफ़ फ़ैसलों का ज़िक्र फरमाया।

तरजमा : जब वह दोनों हज़रात एक खेत के मुतअल्लिक़ फ़ैसला फरमाते थे जब उसमें क़ौम की बकरियाँ फैल गईं हम उनका फ़ैसला मुशाहदा फरमा रहे थे। पस हमने हज़रत सुलेमान को वह समझा दिया और हमने उन में से हर एक को हिक्मत व इल्म बख़्शा।

देखो खेत के इस मुक़द्दमा में दाऊद व सुलेमान अलैहिमस्सलाम दोनों बुज़ुर्गों ने अलग अलग फ़ैसला किया। हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम का फ़ैसला बरहक़ था जिसकी रब तआला ने ताईद फरमाई हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम का फ़ैसला ख़त-ए-इज्तिहादी थी। लेकिन उन पर किसी क़िस्म का एताब हुआ हरगिज़ नहीं क्योंकि इसलिए कि आप मुज्तहिद मुतलक़ थे और मुज्तहिद की ख़ता पर एताब नहीं। वहाबियो! अगर तुम भी रफअ़ यदैन या आमीन ऊंची शाफ़ई बन कर करो तो तुम्हें वहाबी न कहा जाएगा न तुम से यह शिकायत हो तुम ख़ुद बेइल्म होते हुए क़ानून हाथ में लेते हो और अपनी ज़िम्मेदारी पर यह हरकतें करके दीन पर फ़ितना वाक़े करते हो इस पर तुम्हारी यह दुर्गत बनती है।

ऐतराज़ नम्बर 7 : तीन रकअत वित्र की जितनी हदीसें हैं वह सब ज़ईफ़ हैं और ज़ईफ़ हदीसें हुज्जत नहीं।

जवाब : जी हाँ इसलिए ज़ईफ़ हैं कि आपके ख़िलाफ़ हैं। या इसलिए कि सारी हदीसें साढ़े तेरह सौ बरस पुरानी हो चुकीं आदमी तो साठ बरस में बूढ़ा ज़ईफ़ हो जाता है तो क़रीबन चौदह सौ बरस की हदीसें ज़ईफ़ क्यों न हों। आपकी इस ज़ईफ़ ज़ईफ़ की रट लगाने ने लोगों की हदीस को मुंकिर कर दिया। आपके इस ऐतराज़ के जवाबात हम इस किताब में बार बार दे चुके हैं।

आठवाँ बाब

कुनूते नाज़िला पढ़ना मना है

नमाज़े वित्र की तीसरी रकाअत में रुकूअ से पहले दुआ-ए-कुनूत हमेशा पढ़ना सुन्नत है और फज्र के फर्ज़ की दूसरी रकाअत में बादे रुकूअ कुनूते नाज़िला पढ़ना सख़्त मकरूह और ख़िलाफ़े सुन्नत है। मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों का अमल इसके बरअक्स है। वह वित्र में दुआ-ए-कुनूत हमेशा नहीं पढ़ते। बल्कि रमज़ान की कुछ तारीख़ों में लेकिन फज्र में हमेशा कुनूते नाज़िला पढ़ते हैं दूसरी रकाअत के रुकूअ के बाद कुछ देवबन्दी वहाबी भी जो दरासल दरे पर्दा ग़ैर मुक़ल्लिद हैं बहाना बना कर फज्र में कुनूते नाज़िला

पढ़ने लगते हैं। इसलिए इस बाब की भी दो फ़स्लें की जाती हैं पहली फ़स्ल में इस मसला का सुबूत दूसरी फ़स्ल में इस मसला पर सवालात मअ़ जवाबात।

पहली फस्ल

कुनूते नाज़िला के मानी हैं आफ़त व मुसीबत के वक़्त की दुआ हुज़ूर सैयद आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक बार एक ख़ास मुसीबत पर चन्द रोज़ यह दुआ-ए-कुनूत फज्र की रकाअत दोम में बाद रुकूअ पढ़ी फिर आयते कुरआनी ने यह दुआ मन्सूख़ फरमा दी इसके बाद नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फिर कभी न पढ़ी। दलाइल हस्बे ज़ैल हैं।

हदीस नम्बर 1 व 2 : बुख़ारी व मुस्लिम ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की कि उन्होंने हज़रत आसिम अहूल के एक सवाल के जवाब में इरशाद फ़रमाया।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कुनूते नाज़िला सिर्फ़ एक माह पढ़ी आपने सत्तर सहाबा को जो क़ारी थे एक जगह तबलीग़ के लिए भेजा वह शहीद कर दिए गए तो हुज़ूर ने एक माह तक रुकूअ के बाद उन कुफ़्फ़ार पर बद दुआ फ़रमाते हुए कुनूते नाज़िला पढ़ी।

एक माह की क़ैद से मा'लूम हुआ कि हुज़ूर का यह फ़ेअल शरीफ़ हमेशा न था। उज्र की वजह से सिर्फ़ एक माह रहा फिर मन्सूख़ हो गया।

हदीस नम्बर 3 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सिर्फ़ एक माह कुनूते नाज़िला पढ़ी क़बील-ए-रअल व ज़कवान पर बद-दुआ फरमाई जब हुज़ूर उन पर ग़ालिब आ गए तो छोड़ दी।

इस हदीस में छोड़ देने का सराहतन ज़िक्र आ गया।

हदीस नम्बर 4 ता 7 : अबू यअ़्ला मूसली, अबू बकर बज़्ज़ार तबरानी ने कबीर में बैहक़ी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सिर्फ़ एक माह कुनूते नाज़िला पढ़ी जिसमें क़बीला उसैया व ज़कवान पर बद-दुआ फरमाई जब उन पर ग़ालिब आ गए तो छोड़ दी। बज़्ज़ार ने अपनी रिवायत में फरमाया कि हुज़ूर ने सिर्फ़ एक माह कुनूते नाज़ेला पढ़ी। इस से पहले या इसके बाद कभी न पढ़ी।

हदीस नम्बर 8 व 9 : अबू दाऊद व निसाई ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : यक़ीनन नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सिर्फ़ एक माह कुनूते नाज़िला पढ़ी फिर छोड़ दी।

हदीस नम्बर 10 ता 12 : तिर्मिज़ी, निसाई, इब्ने माजा ने हज़रत अबू मालिक अश्जई से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि मैंने अपने वालिद से पूछा कि अब्बा जान आपने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और अबू बकर व उमर व उस्मान और अली रज़ि अल्लाहु अन्हुम के पीछे कूफ़ा में तक़रीबन पाँच साल नमाज़ पढ़ी क्या यह हज़रात कुनूते नाज़िला पढ़ते थे उन्होंने फरमाया कि ऐ बच्चे यह बिदअत है।

यानी हमेशा कुनूते नाज़ेला पढ़ना बिल्कुल सुन्नत के ख़िलाफ़ है और बिदअते सैय्यआ है।

हदीस नम्बर 13 व 14 : मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से एक लंबी हदीस नक़्ल की जिस में आख़िरी अल्फ़ाज़ यह हैं।

हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहिं व सल्लम अपनी कुछ नमाज़ों में फरमाया करते थे कि ख़ुदाया फ़लां फ़लां (अरब के बअज़ क़बीले) पर लानत कर यहाँ तक कि यह आयते करीमा नाज़िल हुई।

इस हदीस से चन्द मसले मालूम हुए एक यह कि दुआ कुनूते नाज़िला फज्र की नमाज़ में पढ़ना मंसूख़ है। दूसरे यह कि हदीस शरीफ़ आयते कुरआनी से मंसूख़ हो सकती है। कि कुनूते नाज़िला पढ़ना हदीस से साबित है और इसका नस्ख़ कुरआने करीम से साबित। तीसरे यह कि दीन के दुश्मनों पर बद-दुआ या लानत करना जाइज़ है। जिन लोगों पर हुज़ूर ने बद-दुआ फरमाई वह हुज़ूर की ज़ात शरीफ़ के दुश्मन न थे। बल्कि दीने इस्लाम के दुश्मन थे। जब उन पर जिहाद कर सकते हैं तो बद-दुआ भी कर सकते हैं। हाँ हुज़ूर ने अपने ज़ाती दुश्मनों को मआफ़ियाँ दी हैं लिहाज़ा अहादीस में तआरुज़ नहीं।

हदीस नम्बर 15 : हाफ़िज़ तलहा इब्ने मुहम्मद मुहद्दिस ने अपनी मस्नद में इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु की अस्नाद से रिवायत की।

तरजमा : इमाम आज़म अबू हनीफ़ा हज़रत इब्ने अयाश से रिवायत फरमाते हैं वह इब्राहीम नख़्ई से वह हज़रत अल्क़मा से वह हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मस्ऊद से उन्होंने फरमाया कि हुज़ूर ने नमाज़े फज्र में कुनूते नाज़िला कभी न पढ़ी। सिवा एक महीना के क्योंकि हुज़ूर ने मुश्रेकीन से जंग की थी तब उन पर एक माह बद-दुआ फरमाई थी।

हदीस नम्बर 16 व 17 : हाफ़िज़ इब्ने ख़ुस्रू ने अपनी मुस्नद में और

क़ाज़ी उमर इब्ने हसन अश्नानी ने हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा से उन्होंने हम्माद से उन्होंने हज़रत इब्राहीम नख्ई से रिवायत की।

तरजमा : न हज़रत अबू बकर व उमर ने न हज़रत उस्मान ने न अली मुर्तज़ा ने कुनूते नाज़िला पढ़ी यहाँ तक कि हज़रत अली ने अह्ले शाम से जंग की तो कुनूते नाज़िला पढ़ी।

हदीस नम्बर 18 : अबू मुहम्मद बुख़ारी ने इमाम आज़म अबू हनीफ़ा से उन्होंने अतीया औफ़ी से उन्होंने हज़रत अबू सईद ख़ुदरी सहाबी से रिवायत की।

तरजमा : उन्होंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत की कि हुज़ूर ने चालीस दिन के सिवा कुनूते नाज़िला न पढ़ी उन चालीस दिन में उसैय्या व ज़कवान पर बद-दुआ फरमाई फिर वफ़ात तक कभी न पढ़ी।

यह अट्ठारह अहादीस बतौरे नमूना पेश की गईं वरना कुनूते नाज़िला न पढ़ने के मुतअल्लिक़ बहुत ज़्यादा अहादीसे शरीफ़ा मौजूद हैं। अगर शौक़ हो तो तहावी शरीफ़, सहीहुल-बिहारी वग़ैरह का मुताला फरमाएं।

अक़्ल का तक़ाज़ा यह है कि कुनूते नाज़िला नमाज़ में न पढ़ी जाए चन्द वजह से। एक यह कि पंजग़ाना फराइज़ की रकाअतें मुख़्तलिफ़ हैं। फज्र की दो, ज़ुहर, अस्र, इशा की चार। मग़्रिब की तीन मगर कोई फर्ज़ नमाज़ अरकाने नमाज़ या दुआ वग़ैरह में दूसरी नमाज़ से मुख़्तलिफ़ नहीं सब के अरकान व दुआएं वग़ैरह एक जैसी हैं तो जब चार नमाज़ों में कुनूते नाज़िला नहीं तो चाहिए कि फज्र के फर्ज़ों में भी न हो। दूसरे यह कि बा जमाअत फराइज़ में दुआएं और ज़िक्रे मुख़्तसर हैं नवाफ़िल में इनकी आज़ादी है। देखो रुकूअ से उठते वक़्त अकेला नमाज़ी **समेअल्लाहुलिमन हमेदा** भी कहता है और **रब्बना लकल-हम्दु** भी। मगर जब जमाअत से पढ़ता है तो इमाम **रब्बना लकल-हम्दु** नहीं कहता सिर्फ़ **समेअल्लाहुलिमन हमेदा** कहता है और मुक़्तदी उसके बरअक्स कि **रब्बना लकल-हम्दु** तो कहता है मगर **समेअल्लाहुलिमन हमेदा** नहीं कहता। जब इन नमाज़ों में इस क़द्र इख़्तिसार मतलूब है तो फज्र के रुकूअ के बाद इतनी लंबी यानी दुआ-ए-कुनूते नाज़िला पढ़ना मक़्सदे शरअ के बिल्कुल ख़िलाफ़ है। तीसरे यह कि नमाज़ खुसूसन फराइज़े पंजगाना के अरकान एक दूसरे से बिल्कुल मिले होने चाहिएं क़्याम के बाद फौरन रुकूअ व रुकूअ के बाद फौरन सज्दा। और सज्दा के बाद फौरन क़्याम या जल्सा इनमें फासिला करना मक़्सदे शरअ के ख़िलाफ़ है। रुकूअ फ़ज्र के बाद जो क़ोमा है उसमें सिर्फ़ **समेअल्लाहुलिमन हमेदा** के बक़द्र ठहरना चाहिए। अगर इस में कुनूते नाज़िला पढ़ी गई तो सज्दा में जो नमाज़ का आला रुक्न है देर लगेगी। ताख़ीरे फर्ज़ अगर भूल कर हो तो

सज्द-ए-सह्व वाजिब करती है और अगर अमदन हो नमाज़ फासिद कर देती है। लिहाज़ा अन्दरूने नमाज़ कुनूते नाज़िला न पढ़ना चाहिए ताकि नमाज़ के अरकान में इत्तिसाल रहे।

मसला फ़िक़्ही : मज़हबे हनफ़ी यह है कि जंग या दूसरी आफ़ाते आम्मा के मौक़ा पर बेहतर यही है कि कुनूते नाज़िला नमाज़ ख़ारिज पढ़े ताकि सहाबाए किराम के इख़्तिलाफ़ से बचा रहे क्योंकि बाज़ सहाबा आफ़ात व जंगों के मौक़ा पर कुनूते नाज़िला पढ़ते थे कुछ इसे बिल्कुल मंसूख़ मानते थे। लेकिन अगर फज्र के फर्ज़ों की दूसरी रकअत में रुकूअ के बाद कुनूते नाज़िला पढ़े तो अगरचे अच्छा न किया मगर जाइज़ है। ज़रूरत से मम्नूआत जायज़ हो जाते हैं। लेकिन आहिस्ता पढ़े बुलन्द आवाज़ से न पढ़े फज्र के सिवा किसी और नमाज़ में पढ़ेगा तो नमाज़ फासिद हो जाएगी। क्योंकि उसने बिला वजह अमदन सज्दा में ताख़ीर कर दी ताख़ीरे फर्ज़ मुफ़्सिदे नमाज़ है।

एक शुब्हा : कुछ लोग कहते हैं कि आफते आम्मा या जिहाद के मौक़ा पर हर जेहरी नमाज़ यानी फज्र, मग़्रिब, इशा में कुनूते नाज़िला पढ़ना चाहिए। क्योंकि शरह नक़ाया और ग़ायतुल-औतार में है।

तरजमा : इस मौक़ा पर इमाम जेहरी नमाज़ में कुनूते नाज़िला पढ़े इमाम सौरी व अहमद का यही कौल है।

पंजाब में बहुत रोज़ तक कुछ जाहिल इमामों ने इसी दलील से मग़्रिब व इशा व फज्र बल्कि नमाज़े जुमा में कुनूते नाज़िला पढ़ कर लोगों की नमाज़ें बर्बाद कीं।

शुब्हा का इज़ाला : शरह नक़ाया व ग़ायतुल-औतार में यहाँ कातिब ने ग़लती से बजाए फज्र के जेहर लिख दिया है यानी फ़ को जीम बना दिया। चुनांचे इश्बाह वन्नज़ाइर में इस जगह बजाए सलातुल-जेहर के सलातुल-फज्र है और तहतावी अला रद्दुल-मुख़्तार और अल्लामा इब्ने आबिदीन शामी ने मिन्हतुल-ख़ालिक़ अला बहरुर्राइक़ में फरमाया।

तरजमा : शायद कि लफ़्ज़े जेहर फज्र से बिगड़ कर बन गया है।

तहतावी की इबारत यूं है।

तरजमा : बहरुर्राइक़ ने जो फरमाया कि अगर मुसलमानों पर कोई आफत पड़े तो इमाम जेहरी नमाज़ में कुनूते नाज़िला पढ़े। मेरा ख़्याल है कि यह कातिब की ग़लती है। सही यह है कि यहाँ फज्र है।

हमने बहुत इख़्तिसार से इसके मुतअल्लिक़ कुछ लिख दिया है। अगर कुनूते नाज़िला की ज़्यादा तहक़ीक़ करना हो तो हमारा फतावा नईमीया मुलाहिज़ा फरमाएं। चूंकि अब देवबन्दी भी बाज़ जगह कुनूते नाज़िला पढ़ने लगे हैं। इसलिए वहाँ इस मसला पर कुछ जम कर बहस कर दी गई है।

दूसरी फ़स्ल

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों की तरफ से अब तक जिस क़द्र ऐतराज़ात हम तक पहुँचे हैं वह हम निहायत दयानतदारी से मअ़ जवाब पेश करते हैं। अगर आइंदा कोई नया शुब्हा नज़र से गुज़रा तो इंशाअल्लाह इसका जवाब भी अर्ज़ कर दिया जाएगा।

ऐतराज़ नम्बर 1 : तुमने कुनूते नाज़िला पढ़ने की जिस क़द्र अहादीस पेश की हैं वह तमाम की तमाम ज़ईफ़ हैं और ज़ईफ़ हदीसों से हुज्जत नहीं पकड़ी जा सकती। (पुराना सबक़)

जवाब : इसके जवाबात हम बारहा दे चुके हैं। अब एक फ़ैसला कुन जवाब अर्ज़ करते हैं वह यह है कि हमारे दलाइल यह रिवायात नहीं हमारी असल दलील तो इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु का फरमान है। हम यह आयात व अहादीस मसाइल की ताईद के लिए पेश करते हैं। अहादीस या आयात इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु की दलीलें हैं। उनकी अहादीस की यह अस्नादें नहीं उनकी अस्नाद निहायत मुख़्तसर और खरी टक्साली होती है जिसमें दो तीन रावी होते हैं वह भी निहायत सिक़ इस बाब की पहली फस्ल में आप हदीस नम्बर 18 में मुलाहिज़ा कर चुके कि इमाम साहब की अस्नाद में सिर्फ़ दो रावी हैं। अतीया औफ़ी, अबू सईद ख़ुदरी और हदीस नम्बर 15 में सिर्फ़ चार रावी हैं। अबान इब्ने अयाश, इब्राहीम नख़्ई, अल्क़मा, इब्ने मसऊद, बताओ इनमें कौन ज़ईफ़ है। चूंकि इमाम साहब का ज़माना ख़ैरुल-कुरुन में से है उनकी अहादीस की अस्नादों में बहुत कम रावी हैं। लिहाज़ा वहाँ ज़ईफ़ का सवाल ही पैदा नहीं होता। ज़ुअ़फ़ तदलीस वग़ैरह बीमारियाँ बाद में लगीं। हाँ तुम्हारी किसी रिवायत का ज़ईफ़ होना तुम्हारे लिए क़यामत है कि यही रिवायतें तुम्हारी दलीलें हैं। जिन पर तुम्हारे मज़्हब का दारो मदार है और तुम्हारा ज़माना हुज़ूर से बहुत दूर तुम्हारी रिवायतों की अस्नादें बहुत लम्बी जिन में हर तरह की बीमारियां मौजूद हैं लिहाज़ा ज़ईफ़ ज़ईफ़ की रट से किसी ग़ैर मुक़ल्लिद को डराओ हनफ़ी के लिए इस से कुछ ख़तरा नहीं बाक़ी जवाबात वह हैं जो हम पहले बाबों में अर्ज़ कर चुके हमने हर हदीस की बफ़ज़्लेही तआला इतनी अस्नादें पेश की हैं कि वह अहादीस हसन हो गईं। ज़ुअ़फ़ जाता रहा।

ऐतराज़ नम्बर 2 : इब्ने माजा ने रिवायत की कि किसी ने अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से सवाल किया कि हुज़ूर ने कब कुनूत पढ़ी तो जवाब दिया।

तरजमा : हुज़ूर ने रुकूअ के बाद कुनूत पढ़ी और एक रिवायत में है कि रुकूअ से पहले भी कुनूत पढ़ी और बाद भी।

इस से मालूम हुआ कि कुनूते नाज़िला पढ़ना सुन्नते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि इस हदीस में कुनूते नाज़िला का ज़िक्र नहीं और साहिबे मिश्कात यह हदीस दुआए कुनूत के बहस में लाए हैं जो वित्रों में पढ़ी जाती है। जिससे मालूम होता है कि यहाँ दुआए कुनूत मुराद है। लिहाज़ा आपका इस्तिदलाल ग़लत है। दूसरे यह कि अगर कुनूते नाज़िला ही मुराद हो तो यहाँ यह ज़िक्र नहीं कि हुज़ूर ने हमेशा पढ़ी। और हम पहली फस्ल में साबित कर चुके हैं कि हुज़ूर ने कुनूते नाज़िला सिर्फ़ एक या सवा माह पढ़ी। फिर हमेशा के लिए छोड़ दी लिहाज़ा यह हदीस मंसूख़ है और मंसूख़ से दलील पकड़ना सख़्त जुर्म। तीसरे यह कि अगर इस हदीस में कुनूते नाज़िला ही मुराद हो तो इसमें यह फ़ैसला न फरमाया गया कि रुकूअ से पहले पढ़ी या बाद में तो तुम ने बाद रुकूअ का फैसला कैसे कर लिया। यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है। चौथे यह कि यह हदीस इब्ने माजा की है इसकी अस्नाद मज्रूह है। इसी लिए इसे मुस्लिम व बुख़ारी ने न लिया मुस्लिम व बुख़ारी की रिवायतें इसके ख़िलाफ़ हैं। जो हम पहली फस्ल में पेश कर चुके लिहाज़ा यह हदीस मज्रूह है ग़र्ज़कि यह हदीस तुम्हारे लिए किसी तरह हुज्जत नहीं।

ऐतराज़ नम्बर 3 : तहावी शरीफ़ ने बहुत सी सनदें से हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की इतनी अस्नादों वाली रिवायत ज़ईफ़ नहीं हो सकती।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब नमाज़ फज्र की क़िराअत से फ़ारिग़ होते और तक्बीर कह कर रुकूअ फरमाते और रुकूअ से सरे मुबारक उठाते और समेअल्लाहुलेमन हमेदा फरमाते तो खड़े हुए यह दुआ पढ़ते ऐ अल्लाह वलीद इब्ने वलीद को नजात दे।

तहावी शरीफ़ हन्फ़ियों की किताब है। इससे कुनूते नाज़िला का सुबूत है।

जवाब : शायद आपने तहावी शरीफ़ के इसी सफ़: पर हज़रत अब्दुर्रहमान इब्ने अबी बकर की यह रिवायत न देखी और देखते भी कैसे यह आपके ख़िलाफ़ जो थी मुलाहिज़ा हों आख़िरी अल्फाज़।

तरजमा : हुज़ूर फज्र में कुनूते नाज़िला पढ़ते थे पस यह आयत उतरी लैसा लका इसके बाद हुज़ूर ने किसी पर नमाज़ में बद-दुआ न फरमाई।

लिहाज़ा आपकी पेशकर्दा तमाम अहादीस इस आयते करीमा से मन्सूख़ हैं। और मन्सूख़ अहादीस अपनी दलील में पेश करना आप जैसे बुज़ुर्गों का ही काम है।

ऐतराज़ नम्बर 4 : अहादीस से साबित है कि हज़रत अली रज़ि अल्लाहु

अन्हु जंगे सफ़्फ़ीन के ज़माना में फज्र में कुनूते नाज़िला पढ़ते थे। बाज़ रिवायत में हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से कुनूते नाज़िला पढ़ना मन्कूल है ऐसे जलीलुल-क़द्र सहाबा का कुनूते नाज़िला पढ़ना इसके सुन्नत होने की रौशन दलील है।

जवाब : इसके दो जवाब हैं इल्ज़ामी और तहक़ीक़ी। जवाब इल्ज़ामी तो यह है कि यह रिवायत तुम्हारे भी ख़िलाफ़ हैं क्योंकि इनमें बहालते जंग का ज़िक्र है कि हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु जंग कुफ़्फ़ार के ज़माना में और हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ख़वारिज या बाग़ात की जंग में यह दुआ पढ़ते थे। मालूम हुआ कि अमन के ज़माना में नहीं पढ़ते थे। मगर तुम हमेशा पढ़ते हो तुमने आज तक कुफ़्फ़ार से कितनी जंगें कीं। तुमने मुसलमानों को मुश्रिक बनाने और मुसलमानों से लड़ने के सिवा कौन से जिहाद किए।

तहक़ीक़ी जवाब यह है कि हम पहली फ़स्ल में अर्ज़ कर चुके हैं कि कुनूते नाज़िला के मुतअल्लिक़ सहाबाए किराम में इख़्तिलाफ़ रहा। कुछ सहाबा किराम इसे बिल्कुल मंसूख़ मानते और बिदअत फरमाते हैं जैसे हज़रत अबू मालिक अश्जई रज़ि अल्लाहु अन्हु जैसा कि हम बहवाला निसाई व इब्ने माजा पहली फस्ल में अर्ज़ कर चुके और कुछ सहाबाए किराम बहालते जंग कुनूते नाज़िला पढ़ते थे जैसे हज़रत उमर व अली अली रज़ि अल्लाहु अन्हुम इसलिए हमारे फ़ुक़हा फरमाते हैं कि अब भी बहालते जंग कुनूते नाज़िला पढ़ना जाइज़ है। अगरचे बेहतर नहीं। लेकिन हमेशा पढ़ना किसी सहाबी का क़ौल नहीं हमारी सारी गुफ़्तगू हमेशा पढ़ने के मुतअल्लिक़ है। आपका दावा कुछ और है दलील कुछ और तमाम वहाबियों को ऐलाने आम है कि एक हदीस मरफ़ूअ सही ऐसी दिखाओ जिसमें हमेशा कुनूते नाज़िला पढ़ने का हुक्म या ज़िक्र हो इंशाअल्लाह क़यामत तक न मिलेगी लिहाज़ा क्यों ज़िद करते हो मुक़ल्लिद बन कर सही नमाज़ें पढ़ा करो।

ख़ात्मा

वित्र में दुआ-ए-कुनूत हमेशा पढ़ो

चूंकि ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी वित्रों में हमेशा दुआ-ए-कुनूत पढ़ने को मना करते हैं। सिर्फ़ आख़िरी पन्द्रह रमज़ान में दुआ-ए-कुनूत पढ़ते हैं। हम हन्फ़ी साल भर तक पढ़ते हैं। इसलिए बतौर इख़्तिसार कुछ इसके मुतअल्लिक़ भी अर्ज़ करता हूँ। हमेशा दुआ-ए-कुनूत वित्र के आख़िर रकाअत में क़िराअत के बाद रुकूअ से पहले पढ़ना सुन्नत है इसके ख़िलाफ़ करना सख़्त बुरा है। अहादीस मुलाहिज़ा हों।

हदीस नम्बर 1 व 2 : इमाम मुहम्मद ने आसार में और हाफिज़ इब्ने ख़ुसरू व मुहद्दिस ने इमाम अबू हनीफा रज़ि अल्लाहु अन्हु से उन्होंने हज़रत

हम्माद से उन्होंने इब्राहीम नख़ई से उन्होंने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु सहाबी-ए-रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत की।

कि आप वित्रों में तमाम साल रुकूअ से पहले दुआ-ए-कुनूत पढ़ते थे।

हदीस नम्बर 3 व 4 : दार कुतनी और बैहक़ी ने हज़रत सुवेद इब्ने ग़फ़्ला रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : वह फरमाते हैं कि मैंने हज़रत अबू बकर सिद्दीक़, उमर फ़ारूक़, उस्मान ग़नी, अली मुर्तज़ा से सुना कि वह सब हज़रात फरमाते थे कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वित्र की अख़ीर रकाअत में दुआ-ए-कुनूत पढ़ते थे और तमाम सहाबा भी यही रकाअत पढ़ते थे।

हदीस नम्बर 5 ता 8 : अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, निसाई, इब्ने माजा ने हज़रत अमीरुल-मुमिनीन अली मुर्तज़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : यक़ीनन हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपनी आख़िरी रकाअत वित्र में यह दुआ पढ़ते थे **अल्लाहुम्मा इन्नी अऊज़ुबिका**

यह अहादीस बतौर नमूना अर्ज़ कर दीं वरना इस बारे में अहादीस बहुत हैं इनमें कहीं यह ज़िक्र नहीं कि हुज़ूर ने या सहाबा किराम ने सिर्फ़ आख़िरी आधे रमज़ान में दुआ-ए-कुनूत पढ़ी आगे पीछे न पढ़ी। बल्कि सैयदना इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से सराहतन मन्क़ूल हुआ कि आप सारे साल दुआ-ए-कुनूत पढ़ते थे। मालूम हुआ कि सारे साल वित्रों में रुकूअ से पहले दुआ कुनूत पढ़ना हुज़ूर की भी सुन्नत है और सहाबा किराम की भी।

ख़्याल रहे कि ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के पास आख़िरी आधे रमज़ान में दुआ-ए-कुनूत पढ़ने की सिर्फ़ एक हदीस है जो अबू दाऊद ने हज़रत हसन बसरी से रिवायत की अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : हज़रत उमर इब्ने ख़त्ताब ने लोगों को उबय बिन कअब पर जमा कर दिया वह उन्हें बीस रकाअत तरावीह पढ़ाते थे और कुनूत न पढ़ते थे मगर बाक़ी आधे रमज़ान में ग़ैर मुक़ल्लिद कहते हैं कि आख़िरी निस्फ़ रमज़ान में दुआ-ए-कुनूत पढ़ना सुन्नते सहाबा है।

जवाब : इसके दो जवाब हैं। एक यह कि ऐ वहाबियो! तुम्हारा पूरी हदीस पर ईमान है या आधी पर अगर आधी पर है तो क्यों और अगर पूरी पर है तो इसमें यह भी मज़्कूर है कि हज़रत उबय बिन कअब तमाम सहाबा को बीस रकाअत तरावीह पढ़ाते थे। तुम आठ तरावीह हमेशा क्यों पढ़ते हो। बीस रकाअत क्यों नहीं पढ़ते। इस क़िस्म की हरकात के मुतअल्लिक़ कुरआने करीम फरमाता है।

क्या कुछ किताब पर ईमान लाते हो और कुछ का इंकार करते हो। अगर इस हदीस से पन्द्रह दिन दुआ-ए-कुनूत साबित होती है तो बीस

रकाअत तरावीह बीस रात में भी साबित होती हैं। लिहाज़ा यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है।

दूसरा जवाब यह है कि इस हदीस में दुआ-ए-कुनूत का ज़िक्र नहीं ज़ाहिर है कि यह दुआ कोई और होगी। जिसमें कुफ़्फ़ार की हलाकत की दुआ की गई हो चूंकि उस ज़माना में कुफ़्फ़ार से जिहाद बहुत ज़्यादा होते थे तो सहाबा किराम आख़िर रमज़ान में जिसमें शबे क़द्र भी है एतेकाफ़ की रातें भी कुफ़्फ़ार की हलाकत और इस्लाम की फ़तह की दुआएं करते होंगे। अगर इस से दुआ-ए-कुनूत मुराद हो तो यह हदीस उन हदीस के ख़िलाफ़ होगी जो हम पेश कर चुके जिनमें फरमाया गया कि सहाबाए किराम सारे साल दुआ-ए-कुनूत पढ़ते थे जहाँ तक हो सके अहादीस में टकराव पैदा न होने दिया जाए।

तीसरा जवाब यह है कि इस हदीस से भी पन्द्रह दिन दुआ-ए-कुनूत साबित नहीं होती क्योंकि उबय इब्ने कअब ने बीस रात तरावीह पढ़ाईं जिनमें से आख़िरी आधे में दुआ-ए-कुनूत हुई तुम पन्द्रहवीं से तीस तक क्यों पढ़ते हो।

हमारा एलान : हम तमाम दुनिया के वहाबियों को एलान करते हैं कि हदीस मरफ़ूअ सहीह मुस्लिम बुख़ारी की ऐसी पेश करो जिस में पन्द्रह दिन दुआ-ए-कुनूत का हुक्म हो आगे पीछे पढ़ने की मुमानिअत हो। क़यामत तक न ला सकोगे। लिहाज़ा अपने मौजूदा अमल से तौबा करो और हमेशा दुआ-ए-कुनूत पढ़ा करो। हमेशा रब से दुआ माँगने से शर्म करो।

नवाँ बाब

अत्तहीयात में बैठने की कैफ़ियत

मर्द के लिए सुन्नत यह है कि दोनों अत्तहीयात में दाहिना पाँव खड़ा करे और बायाँ पाँव बिछा कर उस पर बैठे। औरत दोनों पाँव दाहिनी तरफ निकाल दे और ज़मीन पर बैठे वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिद पहली अत्तहीयात में तो मर्दों की तरह बैठते हैं। मगर दूसरी में औरतों की तरह यह सुन्नत के ख़िलाफ़ है और बहुत बुरा। इसलिए हम इस बाब की भी दो फ़स्लें करते हैं। पहली फ़स्ल में इस का सुबूत दूसरी फस्ल में इस पर एतराज़ात मअ़ जवाबात।

पहली फस्ल

अत्तहीयात में ख़्वाह पहली हो या दूसरी मर्द दाहिना पाँव खड़ा करके और उसकी उंगलियों का सिरा कअबा की तरफ। बायाँ पाँव बिछाए उस पर बैठे इस पर बहुत सी अहादीस वारिद हैं बतौर नमूना कुछ पेश की जाती हैं।

हदीस नम्बर 1 : मुस्लिम शरीफ़ ने हज़रत उम्मुल-मुमिनीन आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा से एक लंबी हदीस रिवायत की जिसके आख़िरी

अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : आप अपना बायाँ पाँव शरीफ़ बिछाते थे और दाहिना पाँव खड़ा फरमाते थे।

हदीस नम्बर 2 व 3 : बुख़ारी व निसाई ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़िअल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : सुन्नत यह है कि तू अपना दाहिना पाँव खड़ा करे और बायाँ पाँव बिछाए नसाई में यह ज़ाइद है कि दाहिने पाँव की उंगलियाँ क़िब्ला की तरफ करे।

हदीस नम्बर 4 ता 7 : बुख़ारी शरीफ़, मालिक, अबू दाऊद, नसाई ने सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हुम अज्मईन से रिवायत की।

तरजमा : कि वह अपने वालिद अब्दुल्लाह बिन उमर को देखते थे कि आप नमाज़ में चहार ज़ानों बैठते थे फ़रमाते हैं कि एक दिन मैं भी ऐसे ही बैठा उस वक़्त मैं नौ उम्र था मुझे हज़रत अब्दुल्लाह ने इससे मना फ़रमाया और कहा कि नमाज़ की सुन्नत यह है कि तुम अपना दाहिना पाँव खड़ा करो और बायां पांव बिछाओ मैंने कहा कि आप तो यह कहते हैं यानी चहार ज़ानू बैठते हैं। तो फरमाया कि मेरे पाँव मेरा बोझ नहीं उठा सकते। (यानी मअ़ज़ूरी है)।

हदीस नम्बर 8 व 9 : तिर्मिज़ी शरीफ़ और तबरानी ने हज़रत वाइल इब्ने हजर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाया कि मैं मदीना मुनव्वरह में आया तो मैंने दिल में कहा कि मैं हुज़ूर की नमाज़ देखूँगा जब आप नमाज़ में बैठे यानी अत्तहीयात में तो आपने अपना बायाँ पाँव बिछा दिया और बायाँ हाथ बाएं रान पर रखा और दाहिना पाँव खड़ा कर दिया।

हदीस नम्बर 10 ता 13 : इमाम अहमद, इब्ने हब्बान, तबरानी ने कबीर में हज़रत रिफ़ाआ इब्ने राफ़ेअ रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फिर जब तुम बैठो तो अपनी बाईं रान पर बैठो।

हदीस नम्बर 14 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत इब्राहीम नख़ई रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : आप मुस्तहब जानते थे कि मर्द नमाज़ में अपना बायाँ पाँव बिछाए ज़मीन पर और उस पर बैठे।

हदीस नम्बर 15 : अबू दाऊद शरीफ़ ने हज़रत इब्राहीम नख़ई से रिवायत की।

तरजमा : वह फरमाते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब नमाज़ में बैठते तो अपना बायाँ पाँव बिछाते थे यहाँ तक कि इस क़दम शरीफ़

की पुश्त सियाह हो गई थी।

हदीस नम्बर 16 : बैहक़ी शरीफ़ ने सैयदना अबू सईद ख़ुदरी से एक लंबी हदीस नक़्ल की जिसके आख़िरी अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : जब नमाज़ में बैठे तो अपने दाहिने पाँव को खड़ा करे और बायाँ पाँव बिछाए।

हदीस नम्बर 17 : तहावी शरीफ़, हज़रत वाइल इब्ने हजर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : मैंने हुज़ूर के पीछे नमाज़ पढ़ी तो दिल में कहा कि मैं हुज़ूर की नमाज़ याद करूँगा। फ़रमाते हैं कि जब हुज़ूर अत्तहीयात के लिए बैठे तो बायाँ पाँव बिछाया फिर उसी पर बैठ गए।

हदीस नम्बर 18 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत अबू हुमैद साअदी से एक लंबी हदीस रिवायत की जिसके आख़िरी अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : जब हुज़ूर अत्तहीयात के लिए बैठे तो आपने अपना बायाँ पाँव बिछाया और दाहिना पाँव उसके अगले हिस्से पर खड़ा किया और अत्तहीयात पढ़ते थे।

यह अट्ठारह हदीसें बतौर नमूना पेश की गई हैं वरना इस बारे में बहुत हदीसें हैं इन तमाम हदीसों में अत्तहीयात का ज़िक्र है अव्वल आख़िर की क़ैद नहीं मालूम हुआ कि मर्द अत्तहीयात में बाएं पाँव पर बैठे औरतों की तरह दोनों पाँव एक तरफ़ निकाल कर ज़मीन पर न बैठे।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यही है कि दूसरी अत्तहीयात में भी बाएं पाँव पर बैठे क्योंकि इस पर सब का इत्तिफ़ाक़ है कि पहली अत्तहीयात में मर्द बाएं पाँव पर बैठे और दो सज्दों के दरम्यान में इसी तरह बैठे आख़िरी अत्तहीयात में वहाबियों का इख़्तिलाफ़ है। पहली अत्तहीयात में बैठना वाजिब है और दो सज्दों के दरम्यान बैठना फ़र्ज़ है। दूसरी अत्तहीयात में बैठने को अगर फ़र्ज़ मानते हो तो इसे दो सज्दों की दरम्यानी बैठक की तरह होना चाहिए यानी बाएं पाँव पर और अगर इस बैठक को वाजिब माना जाए तो इसे पहले अत्तहीयात की बैठक की तरह होना चाहिए यानी बाएँ पाँव पर यह क्या कि वह दोनों बैठकें बाएं पाँव पर हों और आख़िरी बैठक ज़मीन पर दोनों पाँव एक तरफ़ निकाल कर इस बैठक की मिसाल नमाज़ में नहीं मिलती। ग़र्ज़कि बाएं पाँव पर बैठना क़रीने क़्यास है और ज़मीन पर सुरीन रख कर बैठना अक़्ल व नक़्ल सब के ही ख़िलाफ़ है। इस से बचना चाहिए ख़्याल रहे कि औरत ज़मीन पर सुरीन रख कर दोनों पाँव दाहिनी तरफ़ निकाल कर ज़रूर बैठती है मगर वह पहली अत्तहीयात में भी ऐसे ही बैठती है और दो सज्दों के बीच में भी इसी तरह। लिहाज़ा इसका इस तरह बैठना क़रीने क़्यास है कि उसकी बैठक इसी तरह है। ग़र्ज़कि औरतों की हर बैठक ज़मीन पर है

मर्दों की हर बैठक बाएं पाँव पर न मालूम वहाबियों की यह दो रंगी अल्लर्की बैठक किस में शामिल है.।

दूसरी फस्ल

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

अब तक इस मसला के मुतअल्लिक़ वहाबियों ग़ैर मुक़ल्लिदों के जिस क़द्र दलाइल हम को मिल सके हैं हम उन्हें मअ़ जवाबात पेश करते हैं। रब तआला क़बूल फरमाए आमीन।

एतराज़ नम्बर 1 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत यह्या बिन सईद से रिवायत है।

तरजमा : कि क़ासिम इब्ने मुहम्मद ने उन लोगों को नमाज़ में बैठना दिखाया तो अपना दाहिना पाँव खड़ा किया और बायाँ पाँव बिछाया और अपने बाएँ सुरीन पर बैठे आप दोनों क़दमों पर न बैठे फिर क़ासिम ने फरमाया कि यही मुझे अब्दुल्लाह इब्ने अब्दुल्लाह इब्ने उमर ने दिखाया और मुझे ख़बर दी कि उनके वालिद हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर ऐसा ही करते थे।

इस से मालूम हुआ कि दोनों पाँव दाहिनी तरफ निकाल कर ज़मीन पर बैठना सुन्नते सहाबा है और सहाबा किराम ने यह अमल इसीलिए किया कि हुज़ूर को ऐसे ही करते देखा होगा।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि यह हदीस आपके भी ख़िलाफ़ है क्योंकि इससे मालूम हुआ कि सैय्यदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर नमाज़ की हर अत्तहीयात में इसी तरह बैठते थे। मगर तुम कहते हो कि पहली अत्तहीयात में बाएं पाँव पर बैठे दूसरे में इस तरह बैठे लिहाज़ा यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है।

दूसरे यह कि यह हदीस उस रिवायत के ख़िलाफ़ है जो हम पहली फस्ल में पेश कर चुके हैं। कि सैय्यदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर दोनों अत्तहीयात में बाएं पाँव पर बैठते थे वह हदीस निहायत क़वी थी। यह हदीस अस्नाद के लिहाज़ से भी ज़ईफ़ है क़्यासे शरई के भी ख़िलाफ़ और जब हदीसों में टकराव हो तो जो हदीस क़्यासे शरई के मुवाफ़िक़ होगी उसे तरजीह होगी।

तीसरे यह कि इस हदीस से तुम्हारा क़ौल साबित नहीं होता। क्योंकि इसमें यह ख़ुलासा नहीं कि अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु दोनों पाँव दाहिनी तरफ निकाल कर ज़मीन पर सुरीन रख कर बैठते थे यह है कि दोनों क़दमों पर न बैठते थे। वाक़ई नमाज़ी दोनों क़दमों पर नहीं बैठता बल्कि सिर्फ़ एक क़दम यानी बाएं पर बैठता है। लिहाज़ा इसमें तुम्हारी कोई दलील नहीं।

एतराज़ नम्बर 2 : तहावी शरीफ़ और अबू दाऊद ने मुहम्मद इब्ने उमर व इब्ने अता से एक लंबी हदीस रिवायत की उसका मुलख़्ख़स (ख़ुलासा) यह है।

तरजमा : मैंने अबू हुमैद साअदी को दस सहाबाए किराम की जमाअत में फरमाते हुए सुना आपने फ़रमाया कि मैं तुम सब में हुज़ूर की नमाज़ को ज़्यादा जानता हूँ फरमाया कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पहली अत्तहीयात में अपना बायाँ पाँव बिछाते और उस पर बैठते थे जब वह सज्दा फ़रमा लेते जिसके आख़िर में सलाम है तो अपना बायाँ पाँव एक जानिब निकाल देते और अपने बाएं सुरीन पर ज़मीन पर बैठते तो सहाबा ने फ़रमाया कि तुम सच कहते हो।

इस हदीस में साफ़ तौर पर फरमाया गया कि पहली अत्तहीयात में पाँव पर और दूसरी अत्तहीयात में ज़मीन पर बैठना सुन्नत है और अबू हुमैद साअदी ने यह हदीस दस सहाबा की जमाअत में ज़िक्र की और इन सबने उसकी तस्दीक़ फरमाई मालूम हुआ कि आम सहाबा का वही तरीक़ा था जिस पर हम आमिल हैं। यह ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों की माया नाज़ हदीस है।

जवाब : यह हदीस ज़ईफ़ ही नहीं बल्कि महज़ गढ़ी हुई है क्योंकि इसका रावी मुहम्मद इब्ने उमर व इब्ने अता है जो बहुत झूठा है वह कहता था **समेअ्तु अबा हुमैदिन व अबा क़तादत्ता** मैंने अबू हमीद और अबू क़तादा से सुना। हालांकि हज़रत अबू क़तादा हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु के साथ थे उन्हीं के ज़माना में शहीद हुए। हज़रत अली ने ही अबू क़तादा की नमाज़े जनाज़ा पढ़ी और मुहम्मद इब्ने उमर व ख़िलाफ़ते हैदरी के बाद पैदा हुआ फिर अबू क़तादा से कैसे मिला। ऐसे झूठा आदमी हरगिज़ क़ाबिले ऐतबार नहीं न उसकी हदीस क़ाबिले अमल। देखो तहावी शरीफ़ इसी बाब का आख़िर।

अबू हुमैद साअदी की सहीह हदीस वह है जो तहावी शरीफ़ ने इसी बाब में बरिवायत अब्बास इब्ने सुहैल रिवायत की जो हम पहली फस्ल में बयान कर चुके जिस में फरमाया कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बायाँ पाँव बिछा कर उस पर बैठते और अत्तहीयात पढ़ते थे अफ़्सोस है कि आप ऐसे वाही और ज़ईफ़ बल्कि झूठे रावियों की रिवायतों पर अपने मज़्हब की बुनियाद क़ाइम करते हैं और जब हन्फ़ी अपनी ताईद में सहीह हदीस पेश करें तो उस पर हीलों बहानों से ज़ईफ़ ज़ईफ़ की रट लगाते हैं और अगर यह हदीस सहीह मान भी ली जाए तब भी गुज़िश्ता उन अहादीस के ख़िलाफ़ होगी जो हम अर्ज़ कर चुके हैं। हमारी तमाम अहादीस चूंकि क़यासे शरई की ताईद से कुव्वत हासिल कर चुकीं लिहाज़ा वही क़ाबिले अमल हैं। यह हदीस बिल्कुल नाक़ाबिले अमल।

एतराज़ नम्बर 3 : तिर्मिज़ी शरीफ़ ने अब्बास इब्ने सुहैल साअदी से रिवायत की।

तरजमा : एक बार अबू हुमैद और उसैद, सहल इब्ने सअद और मुहम्मद इब्ने मुस्लेमा जमा हुए। उन्होंने हुज़ूर की नमाज़ का तज़्किरा किया तो अबू हुमैद फ़रमाने लगे। कि तुम सबसे ज़्यादा हुज़ूर की नमाज़ को मैं जानता हूँ हुज़ूर अत्तहीयात के लिए बैठे तो आपने बायाँ पाँव बिछा दिया और दाहिने पाँव का अगला हिस्सा क़िब्ला की तरफ कर दिया और अपनी दाहिनी हथेली दाहिने घुटने पर रखी, बाईं हथेली बाएँ घुटने पर रखी और अपनी उंगली (कलिमे की उंगली) से इशारा फ़रमाया।

इस से मालूम हुआ कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इसी तरह अत्तहीयात में बैठते थे जैसे हम बैठते हैं। वरना आपके दाहिने पाँव का सीना क़िब्ला की तरफ न होता। बल्कि यह पाँव खड़ा होता।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है क्योंकि इससे साबित होता है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हर अत्तहीयात में ज़मीन पर बैठते थे तुम पहली अत्तहीयात में तो बाएं पाँव पर बैठते हो। दूसरी में ज़मीन पर यह क्यों जो तुम जवाब दोगे वही हमारा जवाब होगा अपनी फ़िक्र करो।

दूसरे यह कि तुम्हारी अत्तहीयात में तीन काम होते हैं। बाएं पाँव का दाहिनी तरफ निकलना, दाहिने पाँव का खड़ा होना, सुरीन का ज़मीन पर लगना, औरतों की तरह। इस हदीस में इन तीन बातों में से एक भी साबित नहीं न तो बाएं पाँव का दाहिनी तरफ निकलना, न सुरीन का ज़मीन पर रखना, न दाहिने पाँव का खड़ा होना। तअज्जुब है कि इसे आपने अपनी ताईद में कैसे समझ लिया यह आपकी खुश फ़हमी है दाहिने पाँव के अगले हिस्सा का दूसरी रकाअत में क़िब्ला की तरफ होना तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है।

तीसरे यह कि अबू हुमैद साअदी रज़ि अल्लाहु अन्हु की यह हदीस उन तमाम हदीसों के ख़िलाफ़ है जो पहली फस्ल में अर्ज़ कर चुके और खुद उन्हें अबू हुमैद साअदी से इसके ख़िलाफ़ भी मन्कूल है वह तमाम अहादीस इस हदीस से ज़्यादा क़वी हैं। जैसा कि हम पहली फस्ल और खुद इस फस्ल में अर्ज़ कर चुके लिहाज़ा वह अहादीस क़ाबिले अमल हैं और यह नाक़ाबिले अमल।

चौथे यह कि इसी तिर्मिज़ी में उसी जगह हज़रत अबू वाइल की वह हदीस भी मौजूद है जिसमें हन्फ़ियों की तरह बैठना मज़्कूर है उसके मुतअल्लिक़ इमाम तिर्मिज़ी ने फ़रमाया कि यह हदीस हसन है सहीह है और फ़रमाया कि अक्सर उलमा का इस पर अमल है। आपने ऐसी सही व साफ़

हदीस को क्यों छोड़ा और यह मुज्मल हदीस पर क्यों अमल किया जो आपके भी मुवाफ़िक़ नहीं। मालूम हुआ कि आप हदीस के मुत्तबा नहीं अपनी राय की इत्तिबा करते हैं आप अपना नाम अह्ले हदीस नहीं बल्कि अह्ले राय या अह्ले ज़िद रखें।

ऐतराज़ नम्बर 4 : बाएं पाँव पर बैठने के मुतअल्लिक़ आपने जिस क़द्र अहादीस पेश की हैं वह सब ज़ईफ़ हैं क़ाबिले हुज्जत नहीं। (पुराना सबक़)

जवाब : किसी हन्फ़ी को आप इस मंतर से न डराया करें। हन्फ़ी पर रिवायत के ज़ईफ़ होने का कोई असर नहीं पड़ता। हन्फ़ी बेहम्देही तआला इतनी हदीसें पेश करते हैं कि अगर बफ़र्ज़े मुहाल वह सब ज़ईफ़ भी हों तो भी क़वी जो जाएं। और इमामे आज़म जैसे ज़लीलुल-क़द्र मुज्तहिद सिराजे उम्मत का क़बूल फ़रमा लेना ही उसको क़वी करने के लिए काफ़ी है। हन्फ़ी मज़्हब की दलाइल यह रिवायात नहीं यह तो ताईदें हैं। हन्फ़ियों की दलील क़ौले इमाम है। हमारा ईमान किताब पर भी है सुन्नत पर भी और इज्मा-ए-उम्मत व क़यासे मुज्तहिद पर भी। हमारे सामने यह आयते करीमा है।

अल्लाह की इताअत करो और रसूल की और अपने में से अम्र वालों (मुज्तहेदीने उम्मत) की।

दसवाँ बाब

बीस रकाअत तरावीह

हम बीस रकाअत तरावीह के मुतअल्लिक़ एक मुस्तक़िल रिसाला लिख चुके हैं जिसका नाम है **"लम्आतुल-मसाहबीह अला रकआतित्तरावीह"** जिसमें बहुत तफ़्सील से यह मसला बयान किया है इस किताब को मुकम्मल करने के लिए कुछ बतौर इख़्तिसार यहाँ अर्ज़ किया जाता है। जिन को तफ़्सील देखनी हो वह हमारा मज़्कूरा रिसाला मुलाहिज़ा करें। ख़्याल रहे कि सारी उम्मते रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि तरावीह आठ रकाअत नहीं। हाँ अक्सर मुसलमान बीस पढ़ते हैं और कुछ मुसलमान चालीस अल्बत्ता ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी वह फ़िर्क़ा है जिसे नमाज़ गिरां है महज़ नफ़्स पर बोझ समझ कर तरावीह सिर्फ़ आठ रकाअत पढ़ कर सो रहते हैं और कुछ रिवायतों का बहाना बनाते हैं इसलिए हम इस मसला को दो फ़स्लों में ब्यान करते हैं। पहली फ़स्ल में बीस रकाअत तरावीह के दलाइल दूसरी फ़स्ल में वहाबियों के ऐतराज़ात मअ़ जवाबात रब तआला क़बूल फ़रमाए। आमीन।

पहली फस्ल

बीस रकाअत तरावीह का सुबूत

बीस रकाअत तरावीह सुन्नते रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सुन्नते सहाबा सुन्नत आम्मतुल-मुस्लेमीन है। आठ रकाअत तरावीह ख़िलाफ़े सुन्नत है। दलाइल मुलाहिज़ा हों।

हदीस नम्बर 1 ता **5 :** इब्ने अबी शैबा तबरानी ने कबीर में बैहक़ी, अब्द इब्ने हमीद और इमाम बग़वी ने सैय्यदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : बेशक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम माहे रमज़ान शरीफ़ में बीस रकाअत पढ़ते थे। वित्र के अलावा बैहक़ी ने यह ज़्यादा फरमाया कि बग़ैर जमाअत तरावीह पढ़ते थे।

इन अहादीस से मालूम हुआ कि ख़ुद हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बीस रकाअत तरावीह पढ़ा करते थे। जिन रिवायात में आया है कि आपने सिर्फ़ तीन दिन तरावीह पढ़ीं वहाँ बा जमाअत पढ़ना मुराद है यानी बग़ैर जमाअत तो हमेशा पढ़ते थे। जमाअत से सिर्फ़ तीन दिन पढ़ीं। लिहाज़ा अहादीस में टकराव नहीं। यह भी मालूम हुआ कि तरावीह सुन्नते मुअक्किदा अलल-ऐन है कि हुज़ूर ने हमेशा पढ़ीं और लोगों को रग़बत भी दी।

हदीस नम्बर 6 : इमाम मालिक ने हज़रत यज़ीद इब्ने रूमान से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु के ज़माना में रमज़ान में लोग तेईस रकाअतें पढ़ा करते थे।

इस से दो मसले मालूम हुए एक यह कि तरावीह बीस रकाअत हैं। दूसरे यह कि वित्र तीन रकाअत हैं। इसीलिए कुल तेईस रकाअतें हुईं।

हदीस नम्बर 7 : बैहक़ी ने मारफ़ा में सहीह अस्नाद से हज़रत साइब इब्ने यज़ीद से रिवायत की।

तरजमा : हम सहाबाए किराम हज़रत उमर फ़ारूक़ के ज़माना में बीस रकाअत और वित्र पढ़ते थे।

हदीस नम्बर 8 : इब्ने मुनीअ् ने हज़रत उबय इब्ने कअब रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत उमर ने उन्हें हुक्म दिया कि तुम लोगों को रात में तरावीह नमाज़ पढ़ाओ क्योंकि लोग दिन में रोज़ा रखते हैं। और कुरआने करीम अच्छी तरह नहीं पढ़ सकते। बेहतर यह है कि तुम इन पर कुरआन

पढ़ा करो रात में हज़रत उबय ने अर्ज़ किया कि ऐ अमीरुल-मुमिनीन यह वह काम है जो इस से पहले न था आपने फरमाया मैं जानता हूँ लेकिन यह अच्छा काम है तो हज़रत उबय ने उनको बीस रकाअतें पढ़ाईं।

इस हदीस से चन्द मसले मालूम हुए एक यह कि अह्दे फ़ारूक़ी से पहले मुसलमानों में तरावीह जारी थी। मगर बाजमाअत एहतमाम से हमेशा तरावीह का रिवाज हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु के ज़माना से हुआ असल तरावीह सुन्नते रसूलुल्लाह है और जमाअत, एहतमाम, हमेशगी, सुन्नते फ़ारूक़ी है।

दूसरे यह कि बीस रकाअत तरावीह पर तमाम सहाबा का इज्मा हुआ क्योंकि हज़रत इब्ने कअब ने तमाम सहाबा को बीस रकाअत पढ़ाईं सहाबाए किराम ने पढ़ीं किसी ने ऐतराज़ न किया।

तीसरे यह कि बिदअते हसना अच्छी चीज़ है कि हज़रत उबय इब्ने कअब ने अर्ज़ किया कि हुज़ूर तरावीह की बाक़ायदा जमाअत एहतमाम से बिदअत है इस स पहले न हुई फारूके आज़म ने फरमाया बिल्कुल ठीक है वाक़ई यह बिदअत है मगर अच्छी है।

चौथे यह कि जो काम हुज़ूर के ज़माना में न हो वह बिदअत है अगर चे अह्दे सहाबा में राइज हो कि तरावीह की जमाअत अगरचे ज़माना फ़ारूक़ी में हुई मगर इसे बिदअते हसना फरमाया गया।

हदीस नम्बर 9 : बैहक़ी ने अपनी सुनन में हज़रत अबू अब्दुर्रहमान सल्मा से रिवायत की।

तरजमा : कि अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने रमज़ान शरीफ़ में क़ारियों को बुलाया फिर एक शख़्स को हुक्म दिया कि लोगों को बीस रकाअत पढ़ाओ हज़रत अली उन्हें वित्र पढ़ाते थे।

हदीस नम्बर 10 : बैहक़ी शरीफ़ ने हज़रत अबूल-हस्ना से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु ने एक शख़्स को हुक्म दिया कि लोगों को पाँच तरावीहे यानी बीस रकाअत पढ़ाईं।

बतौर नमूना चन्द हदीसें पेश की गईं वरना बीस रकाअत की अहादीस बहुत हैं। अगर शौक़ हो तो हमारी **लम्आतुल-मसाबीह** और **सहीहुल-बिहारी** मुलाहिज़ा करें।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यह है कि तरावीह बीस रकाअत हों न कि आठ चन्द वजूह से एक यह कि दिन रात में बीस रकाअत फ़र्ज़ वाजिब हैं। 17 रकाअत फर्ज़ तीन रकाअत वाजिब माहे रमज़ान में बीस तरावीह पढ़ी जाएं इन रकआत की तक्मील और मदारिज बढ़ाने के लिए लिहाज़ा आठ रकाअत तरावीह बिल्कुल ख़िलाफ़े क़्यास हैं।

दूसरी यह कि सहाबाए किराम तरावीह की हर रकाअत में एक रुकूअ पढ़ते थे बल्कि कुरआने करीम के रुकूअ को रुकूअ इसी लिए कहते हैं कि इतनी आयात पर हज़रत उमर व उस्मान व सहाबाए किराम तरावीह में रुकूअ करते थे। और सत्ताईसवीं शब को ख़त्मे कुरआन होता था आठ रकाअत होतीं तो चाहिए था कि कुरआने करीम के रुकूअ कुल दो सौ वाला होते हालांकि कुरआने करीम के कुल रुकूअ 557 हैं। 20 रकाअत के हिसाब से 540 रुकूअ होते हैं। कोई वहाबी साहब आठ रकाअत तरावीह मान कर कुरआने करीम के रुकूअ की तादाद की वजह बयान फ़रमा दें।

तीसरे यह कि तरावीह तरवीहा की जमा है। तरवीहा हर चार रकाअत के बाद कुछ देर बैठ कर राहत करने को कहते हैं। अगर तरावीह आठ रकाअत होतीं तो बीच में एक तरवीहा होता इस सूरत में इसका नाम तरावीह जमा न होता जमा कम अज़ कम तीन पर बोली जाती है।

उल्मा-ए-उम्मत का अमल हमेशा से क़रीबन सारी उम्मत का अमल बीस रकाअत तरावीह पर रहा और आज भी है। हरमैन शरीफ़ैन और सारी दुनिया के मुसलमान बीस रकाअत तरावीह ही पढ़ते हैं। चुनांचे तिर्मिज़ी शरीफ़ बाब क़यामे शहरे रमज़ान में इस तरह फरमाते हैं।

तरजमा : और अक्सर उलमा का अमल इसी पर है जो हज़रत उमर व अली व दीगर सहाबा रज़ि अल्लाहु अन्हुम से मन्कूल है यानी बीस रकाअत तरावीह और यही सुफ़यान सूरी, इब्ने मुबारक और इमाम शाफ़ई रहमहुमुल्लाह का फरमान है। इमाम शाफ़ई ने फरमाया कि हमने मक्का वालों को बीस रकाअत तरावीह पढ़ते पाया।

उम्दतुल-क़ारी शरह बुख़ारी जिल्द पंजुम सफ़: 355 में इरशाद फरमाया।

तरजमा : इब्ने अब्दुलबर फरमाते हैं कि बीस रकाअत तरावीह ही जम्हूर का क़ौल है यही कूफ़ी हज़रात और इमाम शाफई और अक्सर उलमा व फुक़हा फरमाते हैं और सही यही है उबय इब्ने कअब से मन्कूल है। इसमें सहाबा का इख़्तिलाफ़ नहीं।

मौलाना अली क़ारी शरह नक़ाया में बीस रकाअत तरावीह के बारे में फरमाते हैं।

तरजमा : बीस रकाअत तरावीह पर मुसलमानों का इज्मा है क्योंकि बैहक़ी ने सही अस्नाद से रिवायत की सहाबा किराम और सारे मुसलमान हज़रत उमर व उस्मान व अली रज़ि अल्लाहु अन्हुम के ज़माना में बीस रकाअत तरावीह पढ़ा करते थे।

अल्लामा इब्ने हजर हतीमी फरमाते हैं।

तरजमा : तमाम सहाबा का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि तरावीह बीस रकाअत हैं।

इन तमाम हवालों से मालूम हुआ कि बीस रकाअत तरावीह सुन्नते रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम है बीस रकाअत तरावीह पर सहाबा का इज्मा है। बीस रकाअत तरावीह पर आम मुसलमानों का अमल है। बीस रकाअत तरावीह हरमैन शरीफ़ैन में पढ़ी जाती हैं। बीस रकाअत तरावीह अक़्ल के मुताबिक़ हैं। बीस रकाअत तरावीह कुरआनी रुकूआत की तादाद के मुनासिब हैं बल्कि आज हरमैन तैय्येबीन में नज्दियों की सलतनत है। मगर अब भी वहाँ बीस रकाअत तरावीह पढ़ी जाती हैं। जिसका जी चाहे जा कर देख ले। न मालूम हमारे हाँ के वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिद किस की तक़्लीद करते हैं जो आठ रकाअत तरावीह पढ़ते हैं। आठ रकाअत तरावीह सुन्नते रसूल के ख़िलाफ़ सुन्नते सहाबा के ख़िलाफ़ सुन्नते मुस्लेमीन के ख़िलाफ़ सुन्नत उल्मा-ए-मुज्तहेदीन के ख़िलाफ़ सुन्नते हरमैन तैय्येबीन के ख़िलाफ़ है हाँ हवाए नफ़्स के मुताबिक़ है कि नमाज़ नफ़्से अम्मारह पर बोझ है। रब तआला नफ़्से अम्मारह के फन्दों से निकाले और सुन्नते रसूल पर अमल की तौफ़ीक़ बख़्शे आमीन।

दूसरी फसल

बीस रकाअत तरावीह पर ऐतराज़ात व जवाबात

हक़ीक़त यह है कि ग़ैर मुक़ल्लिदों के पास आठ रकाअत तरावीह की कोई मज़बूत दलील नहीं। कुछ औहामे रकीका और कुछ शुब्हाते फासेदा हैं दिल तो नहीं चाहता था। कि हम उनका ज़िक्र भी करें। मगर बहस मुकम्मल करने के लिए उनके ऐतराज़ात मअ् जवाबात अर्ज़ करते हैं रब तआला उन्हें हिदायत नसीब करे।

ऐतराज़ नम्बर १ : इमाम मालिक ने साइब इब्ने यज़ीद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

वह फरमाते हैं कि उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने उबय इब्ने कअब और तमीम दारी को हुक्म दिया कि लोगों को ग्यारह रकाअत पढ़ाया करें।

इस हदीस से मालूम हुआ कि हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु ने आठ तरावीह का हुक्म दिया था अगर तरावीह बीस रकाअत होतीं तो कुल रकाअत 23 बनतीं मअ् वित्र के।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी सख़्त ख़िलाफ़ है क्योंकि इस से जहाँ आठ तरावीह को सुबूत हुआ वहाँ ही तीन

वित्र का भी सुबूत हुआ तब ही तो कुल रकाअतें ग्यारह होंगी। आठ तरावीह तीन वित्र अगर वित्र एक रकाअत होती तो कुल नौ रकाअतें होतीं न कि ग्यारह। बताओ तुम एक रकाअत वित्र क्यों पढ़ते हो क्या एक ही हदीस के बाज़ हिस्सा का इक़रार है बाज़ का इंकार लिहाज़ा इस रिवायत का जो तुम जवाब दोगे वही जवाब हमारा है।

दूसरे यह कि इस हदीस के रावी मुहम्मद इब्ने यूसुफ़ हैं। उनकी रिवायात में सख़्त इज़्तिराब है। मुअत्ता इमाम मालिक की इस रिवायत में तो उन से ग्यारह रकाअतें मंकूल हुईं। और मुहम्मद इब्ने नसर मुरूज़ी ने उन्हीं से तेरह रकआत नक़्ल कीं। मुहद्दिस अब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने उन्हीं से इक्कीस रकाअतें नक़्ल फरमाईं। देखो फ़त्हुल-बारी शरह बुख़ारी जिल्द चहारुम सफः 180 मत्बूआ मत्बा ख़ैरिया मिस्र। लिहाज़ा उनकी कोई रिवायत मोतबर नहीं। तअज्जुब है कि आप अपने नफ़्से अम्मारह की ख़्वाहिश पूरी फरमाने के लिए ऐसी वाहियात रिवायतों की आड़ पकड़ते हैं।

तीसरे यह कि अह्दे फ़ारूक़ी में अव्वलन आठ रकाअत तरावीह का हुक्म हुआ। फिर बारह रकाअत का फिर आख़िर में बीस रकाअत पर हमेशा के लिए अमल हुआ। चुनांचे इसी मुअत्ता इमाम मालिक में हज़रत ऐरज से एक तवील हदीस नक़्ल फरमाई जिसके आख़िरी अल्फ़ाज़ यह हैं।

क़ारी आठ रकाअत तरावीह में सूरः बक़र पढ़ते थे फिर जब बारह रकाअतों में पढ़ने लगे तो लोगों ने महसूस किया कि उन पर आसानी हो गई।

इस हदीस की शरह में मौलाना अली क़ारी मिर्क़ात शरह मिश्कात में फरमाते हैं।

हाँ बीस का हुक्म हज़रत उमर के ज़माना में साबित हुआ मुअत्ता शरीफ़ में ग्यारह रकाअत का ज़िक्र है। इन दोनों रिवायतों को इस तरह जमा किया गया है कि अह्दे फ़ारूक़ी में पहले तो आठ रकाअत का हुक्म था फिर बीस रकाअत पर तरावीह का इक़रार हुआ यही मुसलमानों में राइज है।

मालूम हुआ कि आठ रकाअत तरावीह पर अमले मत्रूक है बीस रकाअत तरावीह सहाबा किराम और तमाम मुसलमानों में मामूल।

ऐतराज़ नम्बर 2 : तुम्हारी पेशकरदा अहादीस से साबित हुआ कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बीस रकाअत तरावीह पढ़ते थे तो हज़रत उमर ने पहले आठ रकाअत तरावीह का हुक्म ही क्यों दिया ख़िलाफ़े सुन्नत हुक्मे सहाबा की शान से बईद है।

जवाब : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ख़ुद तो बीस रकाअत

तरावीह पढ़ीं मगर सहाबा को इस तादाद का सरीही हुक्म न दिया था सिर्फ रमज़ान की रातों में नमाज़े ख़ुसूसी की रग़बत दी थी। बल्कि ख़ुद जमाअत भी बाक़ायदा हमेशा न कराई वजह ये इरशाद फरमाई कि तरावीह फ़र्ज़ हो जाने का अंदेशा है। इसलिए सहाबा किराम पर तरावीह की रकाअत की तादाद ज़ाहिर न हुई हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु ने अव्वलन अपने इज्तिहाद से आठ फिर बारह मुक़र्रर फरमाएं। बीस की सनद मिल जाने पर बीस ही का दाइमी हुक्म दे दिया। उस ज़माना में आज की तरह हदीस किताबों में जमा न थी। एक एक हदीस बहुत कोशिश मेहनत से हासिल की जाती थी।

ऐतराज़ नम्बर ३ : बुख़ारी शरीफ़ में है कि हज़रत अबू सलमा ने उम्मुल-मुमिनीन हज़रत आइशा सिद्दीक़ा से पूछा कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रमज़ान की रातों में कितनी रकआत पढ़ते थे। तो उम्मुल-मुमिनीन ने इरशाद फरमाया।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रमज़ान और ग़ैर रमज़ान में ग्यारह रकाअत से ज़्यादा न पढ़ते थे।

इस हदीस से मालूम हुआ कि हुज़ूर तरावीह आठ रकाअत पढ़ते थे। अगर बीस रकाअत पढ़ते तो कुल रकआत २३ होतीं।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द ज़वाब हैं। एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है इसलिए कि अगर इस से आठ रकाअत तरावीह साबित होती है तो तीन रकाअत वित्र भी साबित हुईं। तब ही तो कुल रकाअत ग्यारह हुईं बताओ तुम वित्र एक रकाअत क्यों पढ़ते हो जवाब दो क्या बाज़ हदीस पर ईमान है बाज़ का इंकार।

दूसरे यह कि हज़रत उम्मुल-मुमिनीन यहाँ नमाज़े तहज्जुद का ज़िक्र फरमा रही हैं। न कि नमाज़े तरावीह का इसी लिए आपने इरशाद फरमाया कि रमज़ान और ग़ैर रमज़ान दीगर महीनों में ग्यारा रकआत से ज़्यादा न पढ़ते थे तरावीह रमज़ान के अलावा दूसरे महीनों में कब पढ़ी जाती है अगर आप इस पर ग़ौर कर लेते तो ऐसी जुरअत न करते इसलिए तिर्मिज़ी शरीफ़ ने इस हदीस को **बाब सलातिल्लैल** यानी तहज्जुद के बाब में ज़िक्र फरमाया। नीज़ इसी हदीस के आख़िर में है कि हज़रत आइशा सिद्दीक़ा फरमाती हैं कि मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज़ किया कि या रसुलल्लाह आप वित्र से पहले क्यों सो जाते हैं तो फ़रमाया कि ऐ आइशा हमारी आँखें सोती हैं दिल नहीं सोता। जिससे मालूम हुआ कि यह नमाज़ सरकार आख़िर रात में सो कर उठ कर अदा फ़रमाते थे। तरावीह सोने के बाद नहीं पढ़ी जातीं तहज्जुद पढ़ी जाती है।

तीसरे यह कि अगर इस नमाज़ से मुराद तरावीह है और आठ तरावीह हुज़ूर ने पढ़ी तो हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने बीस तरावीह का हुक्म क्यों दिया और तमाम सहाबा ने यह हुक्म क्यों क़बूल किया और खुद उम्मुल-मोमिनीन ने यह सब कुछ देख कर क्यों न ऐलान फ़रमाया कि मैंने हुज़ूर को आठ रकाअत तरावीह पढ़ते देखा है तुम बीस रकाअत पढ़ते हो यह ख़िलाफ़े सुन्नत और बिदअते सैयआ है आप क्यों ख़ामोश रहीं ज़रा होश करो हदीस को सही समझने की कोशिश करो।

वहाबियों से सवालात : तमाम दुनिया के वहाबियों से हस्बे ज़ैल सवालात हैं सारे मिल कर इनके जवाबात दें।

(1) वहाबियो! तुम कहते हो कि आठ रकाअत तरावीह सुन्नत है बीस रकाअत बिदअते सैयआ और ख़िलाफ़े सुन्नत तो बताओ। (1) कि हज़रत उमर व उस्मान व अली रज़ि अल्लाहु अन्हुम ने बीस रकाअत का हुक्म क्यों दिया। क्या इस सुन्नत की उन्हें खबर न थी आज क़रीबन चौदह सौ बरस बाद तुम को पता लगा।

(2) अगर नऊज़ुबिल्लाह ख़ुलफ़ाए राशिदीन ने बिदअते सैयआ का हुक्म दे दिया था तमाम सहाबा ने बेचूं व चरा क़बूल कर लिया क्या उनमें कोई भी हक़ गो और मुत्तबा सुन्नत न था आज इतने अरसा के बाद तुम हक़ गो पैदा हुए और मुत्तबा सुन्नत भी।

(3) अगर तमाम सहाबा भी ख़ामोश रहे तो उम्मुल-मुमिनीन आइशा सिद्दीक़ा ने एक सुन्नते रसूल के ख़िलाफ़ बिदअते सैयआ का रिवाज देखा तो वह क्यों ख़ामोश रहीं उन पर तबलीगे हक़ फर्ज़ थी या नहीं जैसे आज तुम आठ रकाअत तरावीह के लिए एड़ी का ज़बानी व क़लमी, बदनी व माली ज़ोर लगा रहे हो उन्होंने यह क्यों न किया फिर तो उम्मुल मोमिनीन से तुम अफ़ज़ल हुए।

(वह तमाम ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन और सारे सहाबा बल्कि खुद हज़रत उम्मुल मुमिनीन आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हुम) चोटी बीस रकाअत तरवीह पढ़ कर पढ़वा कर या जारी होते हुए देख कर ख़ामोश रह कर हिदायत पर थे या नऊज़ुबिल्लाह गुमराह। अगर आज हनफी बीस रकाअत तरावीह पढ़ने की बिना पर गुमराह और बिदअती हैं तो इन हज़रात पर तुम्हारा क्या फतवा है। जवाब दो। जवाब दो। जवाब दो।

(5) अगर बीस रकाअत तरावीह बिदअते सैयआ है और आठ रकाअत तरावीह सुन्नत और तुम बहादुरों ने चौदह सौ बरस बाद यह सुन्नत जारी की तो बताओ हरमैन तैय्यबैन के तमाम मुसलमान बिदअती और गुम्राह हैं या

नहीं अगर नहीं तो क्यों और अगर हैं तो तुम आज नज्दी वहाबियों को इसकी तबलीग़ क्यों नहीं करते। तुम्हारे फ़तवे सिर्फ़ हिन्द व पाकिस्तान में फसाद फैलाने ही के लिए हैं।

(6) हज़रत अइम्म-ए-मुज्तहेदीन और उनके सारे मुत्तबईन जिनमें लाखों औलिया उलमा मुहद्दिस मुफ़स्सेरीन दाख़िल हैं जो सब बीस तरावीह पढ़ते थे वह सब बिदअती और गुम्राह थे या नहीं।

(7) अगर सारे यह हज़रात गुम्राह थे और हिदायत पर तुम्हारी मुट्ठी भर जमाअत है तो उन गुम्राहों की किताबों से हदीस लेना पढ़ना जाइज़ है या हराम और उनकी रिवायत हदीस सही है या नहीं जब बद अमल की रिवायत सही नहीं तो बद अक़ीदा की रिवायत सही क्यों कर हो सकती है।

(8) तमाम दुनिया के मुसलमान जो बीस तरावीह पढ़ते हैं तुम्हारे नज़्दीक गुम्राह और बिदअती हैं या नहीं अगर हैं तो इस हदीस का क्या मतलब है। **इत्तबेउस्सवादल-आज़म**। मुसलमानों के बड़े गिरोह की इत्तिबा करो।

और कुरआन करीम ने आम्मतुल-मुस्लेमीन को ख़ैर उम्मत और **शुहदाओ अलन्नासे** क्यों फरमाया। उम्मीद है कि हज़राते वहाबिया नज्द तक उलेमा से मिल कर इन सवालात के जवाब दें हम मुंतज़िर हैं।

हमारा मुतालबा : हम सारी दुनिया के वहाबियों नज्दियों से मुतालबा करते हैं कि एक सही मरफ़ूअ हदीस मुस्लिम व बुख़ारी या कम अज़ कम सहाहे सित्ता की ऐसी हदीसें पेश करें जिस में साफ़ साफ़ मज़्कूर हो कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम आठ रकाअत तरावीह पढ़ते थे और उसका हुक्म फरमाते थे। मगर तरावीह का लफ़्ज़ हो या सहाबा किराम ने आठ तरावीह दाइमी तौर पर क़ाइम फरमाईं।

और कहे देते हैं कि क़यामत तक न दिखा सकोगे। सिर्फ़ ज़िद पर हो। रब तआला तौफ़ीक़ बख़्शे। आमीन। बीस रकाअत तरावीह का सुबूत अल्हम्दुलिल्लाह हुज़ूर के फ़ेअल शरीफ़ सहाबा किराम के फरमान व अमल, आम्मतुल-मुस्लेमीन के तरीक़ा शरई और अक़्ल से हुआ।

लतीफा : ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी जब कभी हन्फ़ियों में फंस जाते हैं तो तरावीह बीस रकाअत पढ़ लेते है। जिसका बारह मुशाहिदा हुआ और हो रहा है मालूम हुआ कि उन्हें ख़ुद भी अपने मज़्हब पर एतमाद नहीं।

ग्यारहवाँ बाब

ख़त्मे कुरआन पर रौशनी करना

आम्मतुल-मुस्लेमीन का हमेशा से यह दस्तूर रहा है कि सवाब और रौशनी क़ब्र हासिल करने के लिए यूं तो हमेशा ही मगर रमज़ान शरीफ़ या

शबे क़दर और ख़त्मे कुरआन के दिन ख़ुसूसियत से मस्जिदों में चिराग़ाँ यानी धूम धाम से रौशनी करते हैं। मस्जिदों को खूब आरास्ता करते हैं। वहाबियों की मस्जिदें बेरौनक़ बेनूर रहती हैं। उन्हें मस्जिदों में चिराग़ाँ करने वहाँ ज़ीनत देने की तौफ़ीक़ नहीं मिलती। वहाबी मुसलमानों के इस कारे सवाब को बिदअत व हराम बल्कि शिर्क तक कहते हैं इसलिए हम इस बाब की भी दो फस्लें करते हैं। पहली फस्ल में उन मसाइल का सुबूत दूसरी फस्ल में उन मसाइल पर ऐतराज़ात मअ़ जवाबात। नाज़ेरीन से उम्मीदें इंसाफ और अपने रब से उम्मीदे क़बूल है।

पहली फस्ल

रौशनी मस्जिद का सुबूत

मस्जिदों में हमेशा रौशनी करना ख़ुसूसन माहे रमज़ान ख़ुसूसन शबे क़द्र या ख़त्मे कुरआन शरीफ़ के दिन वहाँ चिराग़ाँ करना आला दरजा की इबादत है। जिसका बहुत सवाब है। दलाइल मुलाहिज़ा हों।

(1) अल्लाह रब्बुल-इज़्ज़त कुरआने करीम में इरशाद फरमाता है। अल्लाह की मस्जिदों को वह लोग आबाद करते हैं जो अल्लाह तआला और क़यामत पर ईमान रखते हैं।

मुफ़स्सेरीने किराम फरमाते हैं कि मस्जिदों में जमाअतें नमाज़ क़ाइम करना वहाँ सफ़ाई रखना उम्दा चटाइयाँ फ़र्श वग़ैरह बिछाना वहाँ रौशनी व चिराग़ाँ करना वग़ैरह। सब मस्जिद की आबादी में दाख़िल हैं। तफ़सीरे रूहुल-बयान ने फ़रमाया कि हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम मस्जिद बैतुल-मुक़द्दस में किब्रियते अहमर की रौशनी फरमाते थे। जिसकी रौशनी में मीलों तक औरतें चरख़ा कात लेती थीं। इस आयत से मालूम हुआ कि मस्जिदों में रौनक़ व चिराग़ाँ करना ईमान की अलामत है तो ज़ाहिर है कि मस्जिदों को बेनूर बेआबाद रखना कुफ़्फ़ार की निशानी।

(2) इब्ने माजा ने हज़रत अबू सईद खुदरी रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की। वह फरमाते हैं कि जिसने पहले मस्जिदों में चिराग़ जलाए वह तमीमदारी सहाबी हैं।

इससे मालूम हुआ कि मस्जिद में रौशनी करना सुन्नते सहाबी है ख़्याल रहे कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माना में चिराग़ का आम रिवाज न था बवक़्ते जमाअत खजूर की लकड़ियाँ जला कर रौशनी कर ली जाती थी। हज़रत तमीम दारी ने वहाँ चिराग़ाँ किया।

(3) अबू दाऊद शरीफ़ ने हज़रत उम्मुल-मोमिनीन मैमूना रज़ि अल्लाहु अन्हा से रिवायत की।

तरजमा : उन्होंने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह हमें मस्जिद बैतुल-मुक़द्दस शरीफ़ के मुतअल्लिक़ हुक्म दें तो हुज़ूर ने इरशाद फ़रमाया कि इस मस्जिद में जाओ और वहाँ नमाज़ पढ़ो उस ज़माना में शहरों में जंग थी तो फ़रमाया कि अगर तुम वहाँ न पहुँच सको और नमाज़ न पढ़ सको तो वहाँ तेल भेज दो कि वहाँ की क़िन्दीलों में जलाया जाए।

इस हदीस से चन्द मसले मालूम हुए। एक यह कि बैतुल-मुक़द्दस की मस्जिद में नमाज़ पढ़ने के लिए सफ़र करके जाना सुन्नत है। हमारे हुज़ूर ने मेअराज में वहाँ तमाम नबियों को नमाज़ पढ़ाई खुद हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सारे पैग़म्बर सफर करके वहाँ नमाज़ पढ़ने पहुँचे। दूसरे यह कि बैतुल-मुक़द्दस की मस्जिद में बहुत क़िन्दीलें रौशन की जाती थीं। जैसा क़नादील जमा फ़रमाने से मालूम हुआ। तीसरे यह कि मस्जिद में रौशनी करने का सवाब वहाँ नमाज़ पढ़ने की तरह है यानी आला दरजा की इबादत और बाइसे सवाब है। चौथे यह कि मस्जिद में चिरागाँ करने के लिए दूर से तेल भेजना सुन्नते सहाबा है।

(4) हदीस इमाम राफई मुहद्दिस ने हज़रत मआज़ बिन जबल रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

फ़रमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जो अल्लाह तआला के लिए मजिस्द बनाएगा अल्लाह तआला उसके लिए जन्नत में घर बनाएगा और जो मस्जिद में क़िन्दील जलाएगा उस पर सत्तर हज़ार फ़रिश्ते दुआ-ए-रहमत करेंगे जब तक कि यह चिराग़ बुझ न जाए।

मालूम हुआ कि मस्जिद की रौशनी सत्तर हज़ार फ़रिश्तों की दुआ लेने का ज़रिया है।

(5) हदीस इब्ने बुख़ारी ने हज़रत मआज़ बिन जबल रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जो मस्जिद में कोई क़िन्दील लटकाए तो उस पर सत्तर हज़ार फ़रिश्ते दुआ-ए-रहमत करते हैं यहाँ तक कि यह क़िन्दीले गुल हो।

मालूम हुआ कि जैसे मस्जिद में चिराग़ जलाना सवाब है ऐसे ही मस्जिद में चिराग़ या तेल या बत्ती देना भी सवाब है चाहे एक चिराग़ हो या बहुत।

(6) हदीस इब्ने शाहीन मुहद्दिस ने हज़रत अबू इसहाक़ हम्दानी से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि रमज़ान की पहली शब को हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु तशरीफ़ लाए मस्जिदे नबवी में क़िन्दीलें जगमगा रही थीं और

कुरआन की तिलावत हो रही थी तो आपने फ़रमाया ऐ उमर इब्ने ख़त्ताब अल्लाह तआला तुम्हारी क़ब्र रौशन करे जैसे तुम ने अल्लाह की मस्जिदों को कुरआन के वक़्त रौशन कर दिया।

(7) हदीस सहीहुल-बिहारी शरीफ़ ने बाज़ मुहद्देसीन से रिवायत की कि उन्हें अमीरुल-मुमिनीन अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत पहुँची।

तरजमा : आपने फरमाया अल्लाह तआला हज़रत उमर की क़ब्र रौशन करे जैसे उन्होंने हमारी मस्जिदों को रौशन कर दिया।

इन आख़िरी रिवायतों से मालूम हुआ कि रमज़ान शरीफ़ में मस्जिदों में चिराग़ां करना हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु के ज़माना से मुरव्वज है। हज़रात सहाबा किराम ने उस पर ऐतराज़ न फरमाया बल्कि हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु ने उस पर उन्हें दुआएं दीं यह भी मालूम हुआ कि रौशनी मस्जिद से इंशाअल्लाह क़ब्र मुनव्वर होगी। लिहाज़ा अब जो उस मस्जिद की रौशनी को रोकता है वह दर पर्दा सुन्नते सहाबा पर ऐतराज़ करता है। उस चिराग़ां के रोकने वाले अपनी क़ब्रें तारीक कर रहे हैं।

(8) (कुरआन) रब तआला उन बन्द करने वालों के मुतअल्लिक़ इरशाद फरमाता है।

इस से बढ़ कर ज़ालिम कौन है जो अल्लाह की मस्जिदों को अल्लाह के ज़िक्र से रोके और उनकी बेआबादी में कोशिश करे।

इस आयत में उन लोगों पर भी एताब है जो मस्जिदों में नमाज़ ज़िक्रे इलाही, तिलावते कुरआन नअ़त ख़्वानी से मना करें। और उन लोगों पर भी एताब है, जो मस्जिदों में चटाइयाँ डालने फ़र्श बिछाने रौशनी करने चिराग़ाँ वग़ैरह से रोकें कि आबादी में यह सब चीज़ें दाख़िल हैं।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी है कि मौजूदा ज़माना में मस्जिदों को आरास्ता करना वहाँ हमेशा या बाज़ ख़ुसूसी मौक़ा पर चिराग़ां करना अच्छा है। क्योंकि आज हम अपने मकानों में ज़ेब व ज़ीनत करते हैं। विवाह शादी वग़ैरह पर ख़ूब दिल खोल कर रौशनी व चिराग़ां करते हैं। इमारतें सजाते हैं। जब हमारे घर आरास्तगी, रौशनी, चिराग़ां के मुस्तहिक़ हैं तो अल्लाह का घर जो तमाम घरों से अफ़ज़ल है उसे आम घरों से ज़्यादा आरास्ता किया जाए ताकि मस्जिदों की अज़्मत लोगों के दिलों में क़ाइम हो। यह काम एहतरामे मस्जिद और तबलीग़े दीन का ज़रिया बने।

दूसरी फस्ल

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के जिस क़द्र ऐतराज़ात अब तक हम ने सुने हैं वह निहायत दियानतदारी से मअ् जवाबात अर्ज़ करते हैं रब तआला क़बूल फरमाए।

ऐतराज़ नम्बर 1 : मस्जिदों में चिराग़ां करना फुज़ूल ख़र्ची और असराफ़ है और असराफ से कुरआन करीम में मना फरमाया गया। रब तआला फरमाता है।

खाओ और पियो और फुज़ूल ख़र्ची न करो बेशक अल्लाह तआला फुज़ूल ख़र्चो को पसन्द नहीं फरमाता।

जवाब : मस्जिद के चिराग़ां को फ़िज़ूल ख़र्ची कहना ग़लत है फ़िज़ूलख़र्ची उस ख़र्च को कहा जाता है जिसमें कोई दीनी व दुनियावी नफ़ा न हो। मस्जिद के चिराग़ां में मस्जिद की ज़ीनत है जो इबादत और बाइसे सवाब है।

ऐतराज़ नम्बर 2 : जब एक चिराग़ से रौशनी हासिल हो सकती है तो बाक़ी चिराग़ां बेकार हैं। और बेकार ख़र्च फ़िज़ूलख़र्ची में दाख़िल है।

जवाब : जब एक क़मीज़ व पाइजामा से सतर का छुपना हासिल हो जाता है तो चाहिए कि अचकन, बास्किट पहनना फ़िज़ूल ख़र्ची और हराम हो। जब छः आना गज़ के गाढ़े से सतर छुप जाता है तो चाहिए कि दो रुपए गज़ की मलमल लट्ठा चिकन वाइल पहनना हराम हो जब घर में दो आना के चिराग़ से रौशनी हासिल हो सकती है तो वहाँ सदहा रुपया ख़र्च करके बिजली फिटिंग कराना और गैस की रौशनी करना इसराफ़ व हराम होना चाहिए। जब थर्ड क्लास से भी रास्ता तय हो जाता है तो इन्टर बल्कि सैकेंड, फ़र्स्ट में रुपया ख़र्च करना हराम होना चाहिए। जनाब एक दिए से तो रौशनी हासिल होती है और ज़्यादा चिराग़ों से मस्जिद की ज़ीनत व रौनक़। मस्जिद की रौशनी भी इबादत है और वहाँ की ज़ीनत भी इबादत।

ऐतराज़ नम्बर 3 : अगर मस्जिद में चिराग़ां करना अच्छी चीज़ है तो ख़ुद नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने ज़मान-ए-शरीफ़ में मस्जिदे नबवी शरीफ में चिराग़ां क्यों न किया क्या तुम हुज़ूर से अफ़ज़ल हो या दीन के ज़्यादा हमदर्द हो जो काम हुज़ूर न करें तुम्हें करने का क्या हक़ है।

जवाब : अगर बास्किट अचकन आला दरजा की मलमलें पहनना अच्छा काम है तो हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने क्यों न इस्तेमाल

फरमाईं जो काम हुज़ूर ने न किया वह ऐ वहाबियो तुम क्यों करते हो तुम अपने घरों में बिजली फिटिंग क्यों करते हो तुम अपने घरों में बिजली गैस क्यों जलाते हो जनाब हुज़ूर के ज़माना शरीफ में लोगों के घर भी सारे मामूली थे। जिहादों का ज़माना था। इस तरफ तवज्जोह फरमाने का मौक़ा न था जब सहाबा किराम के ज़माना में लोगों ने अपने घर अच्छे बनाए तो फुक़हा सहाबा ने सोचा कि दीन तो दुनिया से आला है और अल्लाह का घर यानी मस्जिदे नबवी शरीफ हमारे घरों से अफ़्ज़ल। जब हमारे घर शानदार हैं तो अल्लाह का घर बहुत शानदार होना चाहिए। यह सोच कर हज़रत उसमान ने मस्जिदे नबवी शरीफ़ बहुत आली शान बनाई और वहाँ बहुत ज़ेब व ज़ीनत की। हुज़ूर फरमाते कि —

तुम मेरी और मेरे ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत मज़्बूती से पकड़ो।

जैसे हुज़ूर की सुन्नत क़ाबिले अमल है ऐसे ही हुज़ूर के सहाबा किराम की सुन्नत लाइक़े अमल हुज़ूर के सहाबा ने मस्जिदे नबवी शरीफ़ में चिराग़ां किया बल्कि ख़ुद हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बैतुल-मुक़द्दस की मस्जिद में चिराग़ां करने के लिए तेल भेजने का हुक्म दिया।

ऐतराज़ नम्बर 4 : अबू दाऊद शरीफ़ ने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि फ़रमाया नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि मुझे मस्जिदें सजाने का हुक्म नहीं दिया गया। हज़रत इब्ने अब्बास ने फ़रमाया कि तुम यहूद व नसारा की तरह आरास्ता करोगे।

इस हदीस से यह भी मालूम हुआ कि मस्जिदें सजाने का हुक्म नहीं यह भी पता लगा कि इबादत खाने सजाना यहूद व नसारा की सुन्नत है। न कि मुसलमानों का तरीक़ा और ज़ाहिर है कि मस्जिद में चिराग़ां करना भी सजावट ही है। लिहाज़ा यह भी मना है।

जवाब : इसके दो जवाब हैं एक यह कि अगर इस हदीस का मतलब यह है कि मस्जिदों की ज़ीनत और वहाँ चिराग़ां करना मना है तो उन्हें इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु ने हज़रत उमर व उसमान को मस्जिदों की ज़ीनत देते वहाँ चिराग़ां करते देखा। और मना न फ़रमाया क्या ख़ुद ही अपनी रिवायत की मुख़ालिफ़त की। नीज़ क्या तमाम सहाबा किराम इस हदीस का वह मतलब न समझे जो तुम समझे। नीज़ इस सूरत में यह हदीस क़ुरआने करीम के मुख़ालिफ़ होगी कि रब तआला ने मस्जिद की ज़ीनत व आबादी को ईमान की अलामत क़रार दिया कि फ़रमाया **इन्नमा यअ्मुरु मसाजिदल्लाहे** पता लगा कि तुमने हदीस का मतलब ग़लत समझा।

दूसरे यह कि यहाँ हर ज़ीनत की मुमानेअत नहीं बल्कि नाजाइज़ टीप टाप पर एताब है जैसे फोटो तस्वीरों से सजाना इसीलिए यहूद व नसारा से तशबीह दी गई उनके इबादत खाने तसावीर व फोटो से सजाए जाते हैं। या वह ज़ीनत मुराद है जो अल्लाह के लिए न हो दिखलावे और नाम व नुमूद रियाकारी के लिए हो जैसा के अगली हदीस से मालूम हो रहा है। मगर जो ज़ीनत व चिरागां सिर्फ़ मस्जिद के एहतराम और रब तआला की रज़ा के लिए हो वह बेहतर है। रब तआला अपने और अपने महबूब के कलाम की सही फहम नसीब फरमाए।

ऐतराज़ नम्बर 5 : अबू दाऊद, नसाई, दारमी और इब्ने माजा ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

वह फरमाते हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि यक़ीनन अलामाते क़्यामत से यह कि लोग मस्जिदों में फ़ख़ करेंगे।

इस हदीस से मालूम हुआ कि मस्जिदों की ज़ीनत अलामते क़्यामत है इस से अल्लाह बचाए।

जवाब : इस हदीस के वही मानी हैं जो हम ऐतराज़ नम्बर 4 के जवाब में अर्ज़ कर चुके हैं यानी फ़ख़्रिया मस्जिदें बनाना और शेख़ी के तौर पर मस्जिदें सजाना अलामाते क़्यामत है कि एक मुहल्ले वाले दूसरे मुहल्ला वालों के मुक़ाबला में मस्जिद को ज़ीनत दे कर उन्हें तअना दें कि हमारी मस्जिद तुम्हारी मस्जिद से ज़्यादा आरास्ता है। जनाब फ़ख़ व रिया के लिए नमाज़ पढ़ना मम्नूअ है तो इस से लाज़िम यह नहीं आता कि इख़लास की नमाज़ भी मना हो जाए।

या हदीस के मानी यह हैं कि क़रीब क़्यामत लोग मस्जिदों में जा कर बजाए ज़िक्रुल्लाह दुनियावी बातें एक दूसरे के मुक़ाबिल शेख़ी मारा करेंगे। यह सख़्त गुनाह है और अगर हदीस के वही मानी हों जो तुम समझे यानी मस्जिदों की ज़ीनत अलामाते क़्यामत से है तो भी इस से मुमानेअत साबित नहीं होती क़्यामत की हर अलामत बुरी नहीं। ईसा अलैहिस्सलाम का नुज़ूल, इमाम मेहदी का ज़ुहूर भी अलामते क़्यामत है मगर बुरा नहीं बल्कि बहुत बाबरकत है।

ऐतराज़ नम्बर 6 : मस्जिदों में चिरागां करना बिदअत है और हर बिदअत गुम्राही।

जवाब : यह ग़लत है यह तो सुन्नते सहाबा है जैसा कि हम पहली फस्ल में ब्यान कर चुके हैं और अगर यह बिदअत भी हो तो हर बिदअत न हराम है न गुम्राही बुख़ारी शरीफ़ छापना बिदअत है। मगर हराम नहीं बल्कि सआब

है। हदीस का फन इसकी क़िस्में बिदअत हैं। मगर हराम नहीं। बिदअत की नफीस तहक़ीक़ इसी जा-अल-हक़ के पहले हिस्सा में देखो जिसमें साबित किया गया है कि आज कलिमा व नमाज़ बल्कि सारी इबादतों में बहुत बिदअतें शामिल हैं इन बिदअतों पर सवाब है।

बारहवाँ बाब

शबीना पढ़ना सवाब है

हमेशा से नेकर मुसलमानों का दस्तूर है कि माहे रमज़ानुल-मुबारक में शबीना करते हैं। कभी एक रात में कभी दो में कभी तीन रातों में पूरा क़ुरआन शरीफ तरावीह में ख़त्म करते हैं। कुछ बुज़ुर्गों से मन्क़ूल है कि वह रमज़ान के अलावा भी रोज़ाना एक क़ुरआन शरीफ़ पढ़ लेते थे। यह सब कुछ जाइज़ और सवाब है। बशर्तेकि इतनी जल्दी न पढ़े कि हुरूफ़े क़ुरआन दुरुस्त अदा न हों। न सुस्ती और कसल से पढ़ें। मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी इसे भी हराम कहते हैं। रात भर सिनेमा देखने वालों को बुरा नहीं कहते। मगर तमाम रात क़ुरआन पढ़ने वालों पर लअन तअन करते हैं उन पर शिर्क व बिदअत के फतवे लगाते हैं। इसलिए हम इस बाब की भी दो फस्लें करते हैं। पहली फस्ल में शबीना का सुबूत और दूसरी फस्ल में उस पर ऐतराज़ात व जवाबात।

पहली फस्ल

शबीना का सुबूत

एक शब में क़ुरआन ख़त्म करना बाइसे सवाब है। इसका सुबूत क़ुरआन व हदीस अक़्ल बल्कि ख़ुद वहाबियों की किताबों से है दलाइल मुलाहिज़ा हों।

(1) क़ुरआने करीम अपने महबूब सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से फरमाता है।

तरजमा : ऐ चादर ओढ़ने वाले महबूब रात भर क़याम फरमाओ सिवा कुछ रात के आधी रात या उस से कुछ कम करो या उस पर कुछ बढ़ाओ और क़ुरआन ठहर ठहर कर पढ़ो।

इस आयते करीमा में हुज़ूर को तक़रीबन तमाम रात नमाज़ पढ़ने का हुक्म दिया और शुरू इस्लाम में रात भर इबादत करना फर्ज़ था। कुछ थोड़ा हिस्सा आराम के लिए रखा गया था। फिर एक साल के बाद यह फर्ज़ियत मन्सूख़ हो गई। मगर इस्तेहबाब अब भी बाक़ी है। अब जो शख़्स शबीना में

तमाम रात जागे बहुत कम सोए वह इस आयत पर आमिल मगर चाहिए यह कि शबीना वह पढ़े जो कुरआन सही पढ़ सके जैसा कि तर्तील के हुक्म से मालूम हो रहा है।

(2) हदीसे मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से एक तवील हदीस रिवायत की जिसमें नमाज़े ख़ुसूफ़ का ज़िक्र है उसके कुछ अल्फ़ाज़ यह हैं :

तरजमा : हुज़ूर ने गिरहन की नमाज़ में बहुत दराज़ क़्याम फरमाया क़रीबन सूरः बक़रह की बक़द्र।

मालूम हुआ कि हुज़ूर ने गिरहन की नमाज़ में सूरः बक़र यानी ढाई पारा के बराबर क़िराअत की शबीना में फी रकाअत डेढ़ पारा आता है। जब एक रकाअत में ढाई पारा पढ़ना साबित है तो डेढ़ पारा पढ़ना बदरजा औला जाइज़ है।

(3) हदीस अबू दाऊद ने हज़रत हुज़ैफा रज़ि अल्लाहु अन्हु से हुज़ूर की नमाज़े तहज्जुद के मुतअल्लिक़ एक बहुत दराज़ हदीस नक़्ल फरमाई जिसके आख़िरी अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : हुज़ूर ने नमाज़े तहज्जुद में चार रकाअत पढ़ीं जिन में सूरः बक़र और आले इमरान और सूरः निसा और सूरः माइदा सूरः इंआम पढ़ीं।

देखो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तहज्जुद की चार रकाअतों में क़रीबन आठ पारे यानी फी रकाअत क़रीबन दो पारे पढ़े शबीना में हर रकाअत में इतनी क़िराअत नहीं होती डेढ़ पारा फ़ी रकाअत होता है तो यह क्यों हराम होगा।

(4) हदीस मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत मुग़ीरह इब्ने शोअबा रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूर ने नमाज़े शब में इतना क़्याम फरमाया कि क़दमे मुबारक पर वर्म आ गया तो अर्ज़ किया गया कि आप ऐसी मशक़्क़त क्यों करते हैं। बदौलत आप की उम्मत के अगले पिछले गुनाह बख़्श दिए गए तो फरमाया कि, क्या मैं बन्दा शुक्र गुज़ार न बनूँ।

इस हदीस से मालूम हुआ कि इबादत में मशक़्क़त उठाना सुन्नते रसूलुल्लाह अलैहिस्सलातु वस्सलाम है अगर किसी शबीना में किसी मोमिन के पाँव पर वर्म आ जाए तो उस ख़ुश नसीब को यह सुन्नत नसीब हो गई। वहाबियों को ख़ुद तो इबादत की तौफ़ीक़ नहीं मिलती दूसरों को भी इबादत से रोकते हैं।

(5) हदीस तहावी शरीफ ने हज़रत इब्ने सीरीन से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि हज़रत तमीम दारी तमाम रात जागते थे और एक रकाअत में सारा कुरआन शरीफ़ पढ़ते थे।

शबीना में तो बीस रकाअत तरावीह में कुरआन शरीफ़ पढ़ा जाता है। हज़रत तमीम दारी सहाबी रसूल तो एक रकाअत में सारा कुरआन शरीफ़ पढ़ा करते थे।

(6) हदीस तहावी शरीफ ने हज़रत इसहाक़ इब्ने सईद से रिवायत की।

तरजमा : वह अपने वालिद से रिवायत करते हैं कि हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने ज़ुबैर ने एक रकाअत में सारा कुरआन शरीफ़ पढ़ा।

(7) हदीस अबू नईम ने हिलया में हज़रत उस्मान इब्ने अब्दुर्रहमान तैमी से रिवायत की।

तरजमा : मुझ से मेरे वालिद ने फ़रमाया कि आज तमाम रात मक़ामे इब्राहीम पर जागूंगा जब मैं नमाज़े इशा पढ़ चुका तो मक़ामे इब्राहीम पर पहुँचा मैं खड़ा ही हुआ था कि अचानक एक साहब ने मेरी पुश्त पर हाथ रखा वह हज़रत उस्मान इब्ने अफ़्फ़ान रज़ि अल्लाहु अन्हु थे आपने सूरः फातिहा से कुरआन शुरू किया। पस पढ़ते रहे यहाँ तक कि कुरआन ख़त्म कर लिया। फिर रुकूअ किया और सज्दा किया फिर अपने नअ़लैन शरीफ़ उठाए यह मुझे ख़बर नहीं कि उस से पहले नमाज़ पढ़ी या नहीं।

(8) हदीस अबू नईम ने हिलया में हज़रत इब्राहीम नख़्ई से रिवायत की।

तरजमा : कि हज़र असवद रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु माहे रमज़ान में हर दो रात में एक कुरआन ख़त्म फरमाते थे और मग़्रिब व इशा के दरम्यान सोते थे।

(9) हदीस तहावी शरीफ़ ने हज़रत हम्माद से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत सईद इब्ने ज़ुबैर सहाबी ने बैतुल्लाह शरीफ़ में एक रकाअत में सारा कुरआन शरीफ पढ़ा।

इन अहादीस से साबित हुआ कि अक्सर रात जागना नमाज़ पढ़ना, रोज़ाना क़्याम फरमाना हत्ता कि पाँव पर वर्म आ जाए। एक रकाअत में ढाई पारे पढ़ना सुन्नते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम है और एक रात दो रात बल्कि एक रकाअत में सारा कुरआन पढ़ना सुन्नते सहाबा है। जो शबीना को हराम या शिर्क या फ़िस्क़ कहे वह निरा जाहिल है।

(10) मिर्क़ात शरह मिश्कात **बाब तिलावतिल-कुरआन** में सफ़: 615 पर सहाबा किराम का दस्तूर इस तरह बयान फ़रमाया।

एक जमाअत ने दिन रात में एक ख़त्म किया एक ने दो बार बाज़ों ने तीन बार और एक रकाअत में कुरआन पढ़ने वाले तो बेशुमार हैं।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यही है कि शबीना इबादत हो न कि हराम क्योंकि इबादत का सवाब बक़द्रे मशक़्क़त मिलता है गर्मियों के रोज़े, तल्वार का जिहाद, मशक़्क़त के हज पर सवाब मिलेगा अज़ाब न होगा तो यह कैसे हो सकता है कि मुसलमान रब की रज़ा के लिए तमाम रात नमाज़ भी पढ़े कुरआन शरीफ़ की तिलावत भी करे और बजाए सवाब के अज़ाब पाए कुरआन के एक हरफ पढ़ने पर दस नेकियाँ हैं तो तअज्जुब है कि सारे कुरआन पढ़ने पर बजाए नेकियों के उलटा अज़ाब हो। हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम बतौरे मोजज़ा थोड़ी देर में सारी ज़बूर शरीफ़ पढ़ लेते थे। जैसा कि हदीस शरीफ़ में है तो अगर एक शब में कुरआन पढ़ने पर अज़ाब होता हो तो फिर नऊज़ुबिल्लाह दाऊद अलैहिस्सलाम बक़ौले वहाबिया पूरी ज़बूर पढ़ने पर गुनहगार होते होंगे रब तआला समझ दे।

लतीफ़ा : वहाबियों ने अपनी किताब अरवाहे सलासा में अपने बानीए मज़हब मौलवी इस्माईल साहब के फ़ज़ाइल बयान करते हुए लिखा कि मौलवी इस्माईल साहब अस्र से मग़्रिब तक कुरआने करीम ख़त्म कर लेते थे लोगों ने खुद उन से इतनी देर में सारा कुरआन सुना। अब मैं वहाबियों से पूछता हूँ कि तुम हमारे इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु पर इसलिए लअन तअन करते और उनकी जनाब में गालियाँ बकते हो कि वह जनाब माहे रमज़ान में रोज़ाना दिन को एक कुरआन शरीफ़ और शब को एक कुरआन ख़त्म करते थे। बोलो तुम्हारे इस्माईल तो अस्र से मग़्रिब तक एक कुरआन ख़त्म कर लेते थे। वह भी इस लअन तअन के मुस्तहिक़ हैं या नहीं वह भी फासिक़ व फाजिर हुए या नहीं या तुम्हारा इमाम जो करे वह जायज़ है जवाब दो।

दूसरी फ़स्ल

शबीना पर ऐतराज़ात व जवाबात

शबीना के मुतअल्लिक़ हम वह ऐतराज़ात करते हैं जो ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी करते हैं और वह ऐतराज़ात भी बयान करते हैं। जो आज तक उनको सूझे नहीं हम उनकी वकालत में अर्ज़ करते हैं मअ़ जवाबात के रब तआला क़बूल फ़रमाए।

ऐतराज़ नम्बर 1 : कुरआन करीम फ़रमाता है।

व रत्तेलिल-कुरआना तरतीलन।

तरजमा : कुरआन शरीफ़ की तिलावत ठहर ठहर कर करो।

और ज़ाहिर है कि जब हर रकाअत में डेढ़ पारा पढ़ कर सारा कुरआन

एक रात में खत्म किया जाएगा तो हाफ़िज़ को बहुत तेज़ पढ़ना पड़ेगा जिस से सिवाए **यालमून तालमून** समझ न आएगा लिहाज़ा शबीना पढ़ना हुक्मे कुरआन के ख़िलाफ़ है।

जवाब : इस ऐतराज़ के दो जवाब हैं। एक यह कि तुम्हारे बानी मज़्हब मौलवी इस्माईल देहलवी अस्र से मग़्रिब तक पूरा कुरआन पढ़ लेते थे। बताओ वह ठहर ठहर कर पढ़ते थे या **यअ्लमूना तअ्लमूना** वह हराम के मुर्तकिब थे या नहीं। हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम बहुत जल्द सारी ज़बूर पढ़ लेते थे। हज़रत उस्मान ग़नी, तमीम दारी, अब्दुल्लाह इब्ने जुबैर वग़ैरहुम अकाबिर सहाबा ने एक रकाअत में सारा कुरआन पढ़ा है। खुद हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तहज्जुद की एक रकाअत में दो पारे और नमाज़े ख़सूफ़ में एक रकाअत में ढाई पारे तिलावत फरमाते थे जिनके हवाले पहली फस्ल में गुज़र गए। क्या आपका यह ऐतराज़ इन हस्तियों पर भी जारी होगा। अगर नहीं तो क्यों?

दूसरा जवाब यह है कि रब तआला ने बहुत सों को कुव्वते लेसानी ऐसी बख़्शी है कि वह बहुत तेज़ पढ़ कर भी साफ़ और वाज़ेह पढ़ सकते हैं कुछ में यह कुव्वत नहीं वह अगर तेज़ पढ़ें तो सिर्फ़ **यअ्लमून तअ्लमून** ही समझ में आएगा। शबीना सिर्फ़ पहली क़िस्म के हुफ़्फ़ाज़ पढ़ें दूसरी क़िस्म के हुफ़्फ़ाज़ हरगिज़ न पढ़ें इस आयते करीमा का यही मंशा है। आयते करीमा अपनी जगह हक़ है और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और उन बुज़ुर्ग सहाबा किराम का अमल शरीफ़ जिन्होंने एक रकाअत में बहुत दराज़ तिलावत की अपनी जगह हक़ है।

ऐतराज़ नम्बर 2 : हदीस तिर्मिज़ी, अबू दाऊद, दारमी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर से रिवायत की। (मिश्कात)

तरजमा : बेशक फरमाया रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जो तीन दिन से कम में कुरआन पढ़े वह कुरआन न समझेगा।

इस हदीस से मालूम हुआ कि तीन दिन से कम में पूरा कुरआन हरगिज़ न पढ़ना चाहिए क्योंकि फिर कुरआन समझ में न आएगा। लिहाज़ा शबीना बिल्कुल मना है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है। तुम तो तीन शब का शबीना भी हराम कहते हो और इस हदीस में इसकी इजाज़त आ गई। दूसरे यह कि तुम्हारे पेशवा मौलवी इस्माईल देहलवी अस्र से मग़्रिब तक कुरआने करीम ख़त्म कर लेते थे। वह भी इस ज़द में आ जाते हैं उनकी सफ़ाई पेश करो। जो तुम्हारा जवाब है वही हमारा।

तीसरे यह कि सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस हदीस में आम लोगों की हालत बयान फ़रमाई कि अलल-उमूम हुफ़्फ़ाज़ अगर एक या दो दिन में ख़त्मे कुरआन करें तो समझ न सकेंगे। बाज़ बन्दे जो इस पर क़ादिर हैं वह इस हुक्म से अलग हैं जैसे हज़रत उस्मान वग़ैरहुम सहाबा किराम एक रकाअत में कुरआन ख़त्म करते थे इसी लिए इस हदीस की शरह में मिर्क़ात व लम्आत शरीफ़ में है कि बाज़ बुज़ुर्ग एक दिन व रात में तीन ख़त्म करते थे कुछ हज़रात आठ ख़त्म फ़रमा लेते थे। और शैख़ अबू मदयन मग़्रिबी एक दिन व रात में सत्तर हज़ार कुरआन पढ़ लेते थे। उन्होंने एक दफ़ा हजरे असवद चूम कर दरवाज़ा काबा पर आते आते ख़त्मे कुरआन कर लिया। और लोगों ने हरफ बहरफ सुना। (मिर्क़ात जिल्द दोम सफ़: 216 बाब तिलावतिल-कुरआन में है)

तरजमा : हक़ यह है कि यह हुक्म मुख़्तलिफ़ लोगों के लिहाज़ से मुख़्तलिफ़ है।

ऐतराज़ नम्बर 3 : हदीस मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर से तवील हदीस नक़्ल फ़रमाई जिसके आख़िरी अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : हर हफ़्ता में एक कुरआन ख़त्म करो इस पर ज़्यादा न करो।

देखो हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर ने हुज़ूर से जल्द ख़त्म करने की इजाज़त मांगी हुज़ूर ने अव्वलन हुक्म दिया कि एक माह में एक ख़त्म करो इसरार करने पर इरशाद हुआ कि एक हफ़्ता से कम में कुरआन ख़त्म न करना चाहिए। लिहाज़ा शबीना मना है।

जवाब : सरकार का यह जवाब सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु की हालत के लिहाज़ से है वह एक दो रात में ख़त्म करने पर साफ न पढ़ सकते होंगे। या यहाँ दाइमी तिलावत का ज़िक्र है कि अगर रोज़ाना हर इंसान एक ख़त्म किया करे तो दुनियावी कारोबार मुअत्तल हो जाएंगे। अगर साल में एक आध दिन में कुरआन खत्म किया जाए तो कोई हरज नहीं जिन सहाबा ने एक एक रकाअत में एक एक कुरआन पढ़ा है उन्हें यह हदीस मालूम थी फिर भी एक रकाअत में ख़त्म करते थे।

ऐतराज़ नम्बर 4 : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कभी एक दो रात में पूरा कुरआन न पढ़ा लिहाज़ा शबीना बिदअत है और बिदअत से बचना चाहिए।

जवाब : हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का एक शब में पूरा कुरआन न पढ़ना दो वजह से है एक यह कि आपकी अव्वल हयात शरीफ में पूरा कुरआन उतरा ही न था वफ़ात से कुछ पहले कुरआन की तक्मील

हुई। लिहाज़ा वहाँ ख़त्मे कुरआन का सवाल ही पैदा नहीं होता। दूसरे यह कि आपने अपनी उम्मत पर रहम फरमाया ताकि शबीना पढ़ना उन पर ज़रूरी सुन्नत न हो जाए। फिर सहाबा ने शबीना पढ़ा जैसे हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तरावीह हमेशा न पढ़ी फिर सहाबा ने बाकायदा जमाअत से पढ़ी। शबीना सुन्नते सहाबा है। जिस पर अमल करने से इंशाअल्लाह वही सवाब मिलेगा जो सुन्नते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर अमल करने से मिलता है। सुन्नते सहाबा को बिदअत कह कर मना करना वहाबियों को ही सजता है हम अह्ले सुन्नत यह नहीं कह सकते।

ऐतराज़ नम्बर 5 : आज कल शबीना का यह हाल है कि हाफ़िज़ तिलावत कर रहा है मुक़्तदियों में कोई सो रहा है कोई ऊँघ रहा है कोई सुस्त बैठा है उसमें कुरआने करीम की बेअदबी है इसलिए शबीना बन्द हो जाना चाहिए।

जवाब : यह महज़ झूठा इल्ज़ाम है। शबीना में बाज़ लोग बाक़ायदा शबीना सुनने आते हैं वह खड़े हो कर खूब शौक़ से सुनते हैं। बाज़ महज़ शबीना देखने आते हैं वह लेटे बैठे रहते हैं जिसमें कोई हरज नहीं कुरआन सुनना फर्ज़े किफ़ाया है। बाज़ का सुनना काफ़ी है और अगर बफर्ज़े मुहाल मान भी लिया जाए कि सारे मुसलमान सुस्ती से सुनते हैं तो कोशिश करके सुस्ती दूर करो शबीना बन्द न करो आजकल शादी विवाह में बहुत गुनाह किए जाते हैं। नाच, तमाशे, बाजे, आतिशबाज़ी सब ही कुछ होती है बराहे मेहरबानी निकाह बन्द न करो बल्कि उन चीज़ों को रोकने की कोशिश करो। हुज़ूर के ज़माना में काबा शरीफ में बुत थे तो हुज़ूर ने काबा न ढाया बल्कि जब रब ने कुव्वत दी तब बुतों को निकाल दिया। अगर मस्जिद में कुत्ता घुस जाए तो मस्जिद को न गिराओ कुत्ते को निकालो। अगर चार पाई में खटमल कपड़ों या सर के बालों में जुएं हो जाएं तो यह कीड़े मार दो चारपाई या कपड़े या बालों को आग न लगा दो। वहाबियों का यह अजीब क़ायदा है कि इबादतों से ख़राबियाँ दूर करने की बजाए ख़ुद इबादत को रोकने की कोशिश करते हैं। यह लोग इसी क़िस्म के बहानों से सारे उमूरे ख़ैर को रोकते हैं जैसे मीलाद शरीफ़ ख़त्म बुज़ुर्गान वग़ैरह अगर सुन्नी भाईयों ने हमारा यह जवाब याद रखा तो इंशाअल्लाह वहाबियों के फितनों से बचे रहेंगे हमने शबीना के मसला पर क़दरे तफ़्सील से गुफ़्तगू इस लिए कर दी कि आज कल आम तौर से वहाबी इसके पीछे पड़े हुए हैं। जहाँ रमज़ान शरीफ में किसी जगह, शबीना का एहतमाम हुआ झट देवबन्दी और ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों ने हराम व शिर्क के फतवे जड़े।

तेरहवाँ बाब

बवक़्त जमाअत सुन्नते फज्र पढ़ना

फ़ेक़्ही मसला यह है कि अगर कोई फज्र के वक़्त मस्जिद में आए जब कि जमाअत हो रही हो और अभी उसने सुन्नत फज्र न पढ़ी हों तो उसे चाहिए कि जमाअत से कुछ फासिला पर खड़े हो कर सुन्नत फज्र पढ़ ले मगर वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिद इसके सख़्त ख़िलाफ़ हैं और इसी मसला की वजह से हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि. अल्लाहु अन्हु पर लअन तअन करते हैं और कहते हैं कि ऐसे मौक़ा पर सुन्नते फज्र छोड़ दे और जमाअत में शिरकत करे हम निहायत दयानतदारी से इस बाब की दो फस्लें करते हैं। पहली फस्लें में मज़हबे हन्फी के दलाइल दूसरी फस्ल में ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के सवालात मअ़ जवाबात रब तआला क़बूल फरमाए।

(1) तहावी शरीफ ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अबी मूसा अश्अरी से रिवायत की।

तरजमा : वह अपने वालिद हज़रत अबू मूसा अशअरी से रिवायत करते हैं कि जब उन्हें सईद इब्ने आस ने बुलाया उसने हज़रत अबू मूसा हज़रत हुज़ैफ़ा और अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद को बुलाया नमाज़े फज्र पढ़ने से पहले फिर यह हज़रात सईद इब्ने आस के पास वापस हुए हालांकि फज्र की तक्बीर हो चुकी थी तो हज़रत इब्ने मसऊद मस्जिद के एक सुतून के पास बैठ गए फिर वहाँ दो रकाअतें पढ़ीं फिर नमाज़ में शामिल हुए देखो हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद ने जो फ़क़ीह सहाबी हैं हज़रत अबू मूसा अशअरी और हज़रत हुज़ैफ़ा की मौजूदगी में जमाअते फज्र होते हुए सुन्नते फज्र पढ़ीं फिर जमाअते में शामिल हुए और उस पर न तो उन दोनों सहाबियों ने कुछ ऐतराज़ किया न किसी और नमाज़ी ने, मालूम हुआ कि तमाम सहाबा का आम तरीक़ा यही था। कि बवक़्ते जमाअत फज्र सुन्नत पढ़ते फिर जमाअत में शामिल होते थे और सहाबाए किराम बग़ैर हुज़ूर के हुक्म के ऐसा न कर सकते थे ग़र्ज़कि यह फ़ेअल सुन्नते सहाबा है।

(2) इसी तहावी ने हज़रत अबू मजलज़ से रिवायत की।

तरजमा : वह फरमाते हैं कि मैं हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर और अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास के साथ मस्जिद में गया। हालांकि इमाम नमाज़ पढ़ा रहा था हज़रत इब्ने उमर तो सफ़ में दाख़िल हो गए लेकिन हज़रत इब्ने अब्बास ने अव्वलन दो सुन्नतें पढ़ीं फिर इमाम के साथ नमाज़ में दाख़िल हुए फिर जब इमाम ने सलाम फेरा तो इब्ने उमर वहाँ ही बैठे रहे जब सूरज

निकल आया तो दो रकाअत नफ़्ल पढ़ीं।

हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु ने जो बड़े फ़क़ीह सहाबी और हुज़ूर के अह्ले बैते अतहार में से हैं हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु व तमाम सहाबा की मौजूदगी में जमाअत फज्र के वक़्त दो सुन्नतें पढ़ कर जमाअत में शिर्कत फरमाई और किसी ने आप पर ऐतराज़ न किया।

(3) इसी तहावी ने हज़रत अबू उसमान अंसारी से रिवायत की।

तरजमा : कि हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास मस्जिद में इस हाल में आए कि इमाम नमाज़े फज्र में थे और हज़रत इब्ने अब्बास ने भी सुन्नत फज्र न पढ़ी थीं तो आपने इमाम के पीछे (दूर) दो रकाअतें पढ़ीं फिर उन सबके साथ शामिल हुए।

(4) तहावी शरीफ ने हज़रत मुहम्मद इब्ने कअब से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि हज़रत इब्ने उमर अपने घर से निकले और उद्दार नमाज़े सुबह की तक्बीर हुई। तो आपने मस्जिद में आने से पहले ही दो सुन्नतें पढ़ीं। हालांकि आप रास्ता में थे फ़िर मस्जिद में आए और लोगों के साथ नमाज़ पढ़ी।

(5) तहावी शरीफ़ ने हज़रत अबी उबैदुल्लाह से रिवायत की।

तरजमा : कि हज़रत अबू अद्दरदा रज़ि अल्लाहु अन्हु मस्जिद में तशरीफ़ लाते थे। हालांकि लोग नमाज़े फज्र में सफ़ बस्ता होते थे। तो आप मस्जिद के एक गोशा में दो रकाअतें पढ़ लेते थे फिर कौम के साथ नमाज़ में शामिल होते थे।

(6) तहावी शरीफ़ ने हज़रत अबू उसमान नहदी से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि हम हज़रत उमर फारूक़ के पास सुन्नते फज्र पढ़ने से पहले आते थे हालांकि हज़रत उमर नमाज़ में होते थे। तो हम मस्जिद के किनारे पर सुन्नते फज्र पढ़ लेते थे फिर क़ौम के साथ उनकी नमाज़ में शामिल हो जाते थे।

(7) तहावी शरीफ़ ने हज़रत यूनुस से रिवायत की।

तरजमा : कि इमाम हसन फरमाते थे कि सुन्नते फज्र मस्जिद के एक गोशा में पढ़ ले फिर क़ौम के साथ उनकी नमाज़ में शामिल हो जाए।

(8) तहावी शरीफ़ ने हज़रत नाफ़ेअ से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि मैंने हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर को नमाज़े फज्र के लिए बेदार किया हालांकि फ़ज्र की तक्बीर हो रही थी तो आपने पहले सुन्नते फज्र पढ़ीं।

(9) तहावी शरीफ़ ने हज़रत इमाम शोअबी से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत मस्रूक़ कौम के पास आते थे जबकि वह फज्र में मश्ग़ूल होते और मस्रूक़ ने सुन्नते फज्र न पढ़ी होतीं तो आप मस्जिद में पहले दो सुन्नतें पढ़ लेते फिर कौम के साथ नमाज़ में शामिल होते थे।

(10) तहावी शरीफ़ ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अली मूसा अशअरी से रिवायत की।

तरजमा : कि हज़रत अबू मूसा अशअरी मस्जिद में आए हालांकि इमाम नमाज़ में था। तो आपने पहले दो सुन्नते फज्र पढ़ीं।

यह दस हदीसें बतौर नमूना पेश की गईं वरना इसके मुतअल्लिक़ बहुत रिवायात हैं। अगर शौक़ हो तो तहावी शरीफ़ का मुताअला फरमाएं।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यही है कि ऐसी हालत में सुन्नते फज्र पहले पढ़े फिर जमाअत में शरीक हो क्योंकि तमाम मुअक्किदा सुन्नतों में सुन्नते फज्र की ज़्यादा ताकीद है हत्ता कि मुस्लिम बुख़ारी, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और नसाई शरीफ ने उम्मुल–मुमिनीन आइशा सिद्दीक़ा से रिवायत की।

(11 ता 15) **तरजमा :** हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जितनी निगहबानी व पाबन्दी सुन्नते फज्र की फरमाते थे उतनी किसी सुन्नत की न फरमाते थे।

और अहमद, तहावी, अबू दाऊद शरीफ़ ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

(16 ता 18) **तरजमा :** फ़रमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि सुन्नत फज्र न छोड़ो अगर चे तुम्हें दुश्मन का लश्कर भगा रहा हो।

ग़र्ज़कि सुन्नते फज्र की बहुत ताकीद है और सुन्नते फज्र रह जाएं फ़र्ज़ पढ़ लिए जायें तो उन की क़ज़ा नहीं होती सुन्नते ज़ुहर तो फर्ज़ ज़ुहर के बाद भी पढ़ लिए जाते हैं इधर जमाअत भी वाजिब है। अगर यह शख़्स सुन्नते फज्र की वजह से जमाअत छोड़ दे तो वाजिब का तारिक हुआ, और अगर जमाअत की वजह से सुन्नते फज्र छोड़ दे। तो इतनी अहम सुन्नते मुअक्किदा का तारिक हुआ, लिहाज़ा इन में से किसी को न छोड़े। अगर जमाअत मिल सके तो पहले सुन्नते फज्र पढ़ ले, फिर जमाअत में शामिल हो जाए। दो इबादतें करना बेहतर है। एक को छोड़ना बेहतर नहीं।

यह भी ख़्याल रहे कि जहाँ जमाअत हो रही हो, वहाँ ही सुन्नते फज्र पढ़ना मना है कि इसमें जमाअत की मुख़ालिफ़त और इस से मुँह फेरना है। लिहाज़ा ऐसी जगह खड़ा हो जहाँ जमाअत में शामिल न मालूम हो, मस्जिद के गोशा या दूसरे हिस्सा में।

ज़ुहर की पहली सुन्नतें मुअक्किदा हैं, मगर बाद फ़र्ज़ पढ़ी जा सकती हैं और सुन्नत अस्र व इशा मुअक्किदा नहीं। ग़ैर मुअक्किदा हैं। इसलिए उन्हें बवक़्त जमाअत नहीं पढ़ सकते। सुन्नते फज्र मुअक्किदा भी हैं और बाद फ़र्ज़ पढ़ी भी नहीं जातीं। इसलिए अगर जमाअत मिल जाने की उम्मीद हो, तो पढ़ ले लेकिन अगर जमाअत न मिल सके, तो फिर सुन्नते फज्र छोड़ दे, कि जमाअत वाजिब है। वाजिबे सुन्नत से ज़्यादा अहम है।

दूसरी फस्ल

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

अब तक इस मसला पर हम जिस क़द्र ऐतराज़ात मालूम कर सके हैं वह मअ़ जवाबात निहायत दयानतदारी से अर्ज़ किए देते हैं। अगर आइंदा कोई और ऐतराज़ हमारे इल्म में आया, तो इंशा अल्लाह तआला इस किताब के दूसरे एडीशन में इसका भी जवाब अर्ज़ कर देंगे।

ऐतराज़ नम्बर 1 : तहावी वग़ैरह ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : आप नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहे व सल्लम से रिवायत करते हैं कि हुज़ूर ने फ़रमाया जब नमाज़ की तक्बीर कही जाए तो फ़र्ज़ के सिवा कोई नमाज़ नहीं।

इस हदीस से साबित हुआ कि फ़ज्र की तक्बीर हो जाने पर सुन्नतें पढ़ना, इस हदीस के सरीह ख़िलाफ़ है, क्योंकि तक्बीर हो चुकने के बाद सिर्फ़ फ़र्ज़ नमाज़ ही पढ़ी जानी चाहिए।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है क्योंकि तुम भी कहते हो कि फज्र की तक्बीर हो जाने पर अपने घर में या मस्जिद के अलावा दूसरी जगह सुन्नतें पढ़ ले, अगरचे वह जगह मस्जिद के बिल्कुल बराबर हो। जहाँ तक कि इमाम की क़िराअत की आवाज़ जा रही हो, और जमाअत वहाँ से नज़र आ रही हो। जो तुम जवाब दोगे वही हमारा जवाब है।

दूसरे यह कि अगर किसी ने सुन्नते फज्र या दूसरे फ़र्ज़ जमाअत से पहले शुरू कर दिए हों, और दरम्यान में फज्र की जमाअत खड़ी हो जाए तो तुम भी इस नमाज़ का तोड़ना वाजिब नहीं कहते बल्कि जाइज़ है कि यह नमाज़ पूरी करके जमाअत में शरीक हो, हालांकि इस हदीस में कुछ तफ़सील नहीं, लिहाज़ा यह हदीस मुज्मल है, जिस पर बग़ैर तफ़सील अमल नामुम्किन है।

तीसरे यह कि यह हदीस मरफ़ूअ सही नहीं, सही यह है कि यह हज़रत

अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का अपना फ़रमान है, जैसा कि इसी जगह तहावी शरीफ़ ने बहुत तहक़ीक़ से बयान फ़रमाया, और हम पहली फ़स्ल में साबित कर चुके हैं कि फ़ुक़हा-ए-सहाबा जमाअते फ़ज्र के वक़्त सुन्नते फ़ज्र पढ़ कर जमाअत में शरीक होते थे लिहाज़ा उनका अमल व क़ौल हज़रत अबू हुरैरह के क़ौल पर तरजीह पाएगा।

चौथे यह कि इस हदीस पर हर शख़्स अमल नहीं कर सकता, क्योंकि साहिबे तरतीब जिस पर तरतीब नमाज़ फ़र्ज़ है अगर उसकी इशा क़ज़ा हो गई हो और जमाअते फ़ज्र क़ाइम हो जाए तो अव्वलन इशा क़ज़ा करे, फिर जमाअत में शिरकत करे वरना तरतीब के ख़िलाफ़ होगा।

पाँचवें यह कि अगर यह हदीस मरफ़ूअ दुरुस्त हो तब उसके मानी यही होंगे कि तक्बीरे फ़ज्र के वक़्त जमाअत की जगह यानी सफ़ से बराबर सुन्नते फ़ज्र न पढ़े बल्कि मस्जिद के गोशा में जमाअत से अलाहिदा पढ़े ताकि मज़्कूरा बाला ख़राबियाँ लाज़िम न आवें हनफ़ी यही कहते हैं कि जमाअत से क़रीब सुन्नते फ़ज्र हरगिज़ न पढ़े।

छठे यह कि बैहक़ी शरीफ़ में यह हदीस इस तरह मरवी है।

तरजमा : जब नमाज़ की तक्बीर कही जाए तो सिवाए फ़र्ज़ कोई नमाज़ जाइज़ नहीं सिवाए सुन्नते फ़ज्र के। **(अज़ हाशिया तहावी)**

इस सूरत में आपका ऐतराज़ जड़ से कट गया। बैहक़ी की यह रिवायत अगर ज़ईफ़ भी हो तो भी अमले सहाबा की वजह से क़वी हो जाएगी। अमल सहाबा हम पहली फ़स्ल में अर्ज़ कर चुके। वहाँ मुलाहिज़ा फ़रमाओ।

सातवें यह कि आपकी पेश करदा हदीस के मानी यह हैं कि तक्बीर नमाज़ के बाद कोई नफ़्ल नमाज़ जाइज़ नहीं, यानी यह दुरुस्त नहीं कि जमाअत हो रही हो और दूसरा आदमी उस जगह नफ़्लें पढ़े जाए। सुन्नते फ़ज्र नफ़्ल नहीं बल्कि मुअक्किदा सुन्नत है यह तावील इसलिए है ताकि अहादीस में तआरुज़ न रहे।

ऐतराज़ नम्बर 2 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत मालिक इब्ने बेहुसैना से रिवायत की।

तरजमा : कि एक दिन फ़ज्र की तक्बीर कही गई पस हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक शख़्स पर गुज़रे जो सुन्नते फ़ज्र पढ़ रहा था उस पर खड़े हो गए और लोगों ने भी उसे घेर लिया फ़रमाया कि क्या तू फ़ज्र के फ़र्ज़ चार पढ़ता है। यह तीन बार फ़रमाया।

इस हदीस में सुन्नते फ़ज्र का साफ़ ज़िक्र हो गया, जिसमें कोई तावील नहीं हो सकती मालूम हुआ कि तक्बीरे फ़ज्र के वक़्त सुन्नते फ़ज्र सख़्त मना है।

जवाब : यह साहब मालिक इब्ने बेहुसैनेही के साहबज़ादे अब्दुल्लाह थे और वहाँ ही सुन्नते फज्र पढ़ रहे थे जहाँ जमाअत हो रही थी, यानी सफ से क़रीब, यह वाक़ई मक्रूह है इसी पर हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने एताब फरमाया, चुनांचे इसी तहावी शरीफ में इसी हदीस से कुछ आगे यह हदीस मुफ़स्सल तौर पर इस तरह मज़्कूर है।

तरजमा : मुहम्मद इब्ने अब्दुर्रहमान से रिवायत है कि एक दिन हुज़ूर अलैहिस्सलाम अब्दुल्लाह इब्ने मालिक इब्ने बेहुसैनेही पर गुज़रे हालांकि वह वहाँ ही खड़े हुए थे तक्बीरे फज्र के बिल्कुल सामने तो हुज़ूर ने फरमाया कि इस सुन्नते फज्र को ज़ुहर की पहली पिछली सुन्नतों की तरह न बनाओ सुन्नते फज्र और फरज़े फज्र में फासिला करो।

इस हदीस ने आपकी पेश करदा हदीस को बिल्कुल वाज़ेह कर दिया कि अगर सुन्नत फज्रे जमाअत से दूर पढ़ी जाए तो बिला कराहत जाइज़ है, जमाअत से क़रीब पढ़ना मना है यही हम कहते हैं, लिहाज़ा आपका ऐतराज़ असल से ही ग़लत है।

ऐतराज़ नम्बर 3 : जमाअते फज्र के वक़्त चूंकि इमाम की तिलावत की आवाज़ उस शख़्स के कान में भी आएगी। इसलिए उस वक़्त सुन्नते फज्र न पढ़ना चाहिए। रब तआला फरमाता है कि जब कुरआन पढ़ा जाए तो उसे कान लगा कर सुनो और ख़ामोश रहो, लिहाज़ा सुन्नते फज्र जमाअत के वक़्त पढ़ना कुरआने करीम के भी ख़िलाफ है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं, एक यह कि हम को सख़्त तअज्जुब है, कि यहाँ तो आप सुन्नते फज्र इसी लिए मना फरमाते हैं कि तिलावते कुरआन के वक़्त ख़ामोश रहना फर्ज़ है और ख़ुद आप ही इमाम के पीछे मुक़्तदी पर सूरः फातिहा पढ़ना फर्ज़ कहते हैं, क्या क़िराअत ख़ल्फ़े इमाम में आपको यह आयत याद न रही। दूसरे यह कि यह ऐतराज़ ख़ुद तुम पर भी पड़ता है, तुम कहते हो कि मस्जिद के बाहर सुन्नते फज्र पढ़ सकते हैं। अगरचे वह जगह मस्जिद से बिल्कुल क़रीब हो जहाँ कुरआन शरीफ़ पढ़ने की आवाज़ पहुँच रही हो।

तीसरे यह कि कुरआन पाक का सुनना और तिलावात के वक़्त ख़ामोश रहना फर्ज़े किफ़ाया है, फर्ज़े ऐन नहीं, मुक़्तदियों का सुनना और ख़ामोश रहना काफी है। अगर फर्ज़े ऐन होता तो बहुत मुश्किल दर पेश आती, एक शख़्स की तिलावत पर जहाँ तक उसकी आवाज़ पहुँचती वहाँ तक तआम, कलाम और दुनियावी कारोबार बन्द हो जाते, आज साइंस का ज़ोर है रेडियो पर तिलावते कुरआन होती है जिसकी आवाज़ सारी दुनिया में पहुँचती है,

अगर सुनना ख़ामोश रहना फ़र्ज़े ऐन हो तो मुसीबत आ जाए। बहरहाल यह ऐतराज महज़ बेकार है।

ऐतराज़ नम्बर 4 : जमाअते फ़ज्र के वक़्त सुन्नते फ़ज्र पढ़ने में जमाअत की मुख़ालिफ़त है कि लोग क़याम में हैं, यह रुकूअ या सज्दा में, लोग सज्दा में हैं यह अत्तहीयात में, और मुख़ालिफ़त जमाअत सख़्त बुरी चीज़ है।

जवाब : यह मुख़ालिफ़त जब होगी जबकि जमाअत से क़रीब सुन्नते फ़ज्र पढ़ी जाएं इसे हम भी सख़्त मकरूह कहते हैं, अगर जमाअत से दूर मस्जिद के गोशा या दूसरे हिस्सा में पढ़े तो मुख़ालिफ़त बिल्कुल नहीं, बल्कि बवक़्ते ज़रूरत यह मुख़ालिफ़त भी जाइज़ होती है। देखो जिस मुक़्तदी का वुज़ू टूट जाए और वह वुज़ू करके वापस आए उसी बीच में दो एक रकाअत हो चुकीं, तो अपनी जगह पहुँच कर यह शख़्स पहले अपनी छूटी हुई रकाअतें पढ़ेगा, फिर जमाअत के साथ शामिल होगा। उन रकाअतों के अदा करने में ज़ाहिर है कि जमाअत की मुख़ालिफ़त होगी मगर ज़रूरतन जाइज़ है, सुन्नते फ़ज्र भी ज़रूरी हैं अगर जमाअत से दूर रह कर अदा कर ली जाएं तो कोई हरज नहीं।

चौदहवाँ बाब

नमाज़ें जमा करना मना है

हर मुसलमान पर लाज़िम है कि हर नमाज़ उसके वक़्त पर अदा करे मुक़ीम हो या मुसाफ़िर, बीमार हो या तन्दुरुस्त, मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी बहालते सफ़र ज़ुहर व अस्र ऐसे ही मग़्रिब व इशा जमा करके पढ़ते हैं। यानी अस्र के वक़्त में ज़ुहर व अस्र मिला कर और इशा के वक़्त में मग़्रिब व इशा अदा करते हैं। उनका यह अमल क़ुरआन शरीफ़ के भी ख़िलाफ़ है। और अहादीसे सहीहा के भी मुख़ालिफ़। हम इस बाब की भी दो फ़स्लें करते हैं। पहली फ़स्ल में मज़्हबे हनफ़ी के दलाइल, दूसरी फ़स्ल में ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के ऐतराज़ात मअ् जवाबात।

पहली फ़स्ल

हर नमाज़ अपने वक़्त में पढ़ना फ़र्ज़ है, और अमदन किसी नमाज़ को अपने वक़्त के बाद पढ़ना बिला उज़्र सख़्त गुनाह और मना है, दलाइल हस्बे ज़ैल हैं।

नम्बर (1) रब तआला नमाज़ के औक़ात के बारे में इरशाद फ़रमाता है।

तरजमा : मुसलमानों पर नमाज़ फ़र्ज़ है अपने वक़्त में।

इस आयत से मालूम हुआ कि जैसे नमाज़ फ़र्ज़ है, वैसे ही हर नमाज़

का अपने वक़्त में पढ़ना भी फ़र्ज़ है, जैसे नमाज़ का तारिक गुनहगार है, ऐसे ही बिला उज़्र नमाज़ को बेवक़्त पढ़ने वाला भी मुज्रिम है। इस आयत में मुक़ीम व मुसाफिर का कोई फर्क़ नहीं हर मोमिन को यह हुक्म है कोई हो।

नम्बर (2) रब तआला इरशाद फरमाता है।

तरजमा : ख़राबी है उन नमाज़ियों के लिए जो अपनी नमाज़ों में सुस्ती करते हैं।

इस आयत में नमाज़ सुस्ती से पढ़ने वालों पर एताब है, बिला उज़्र वक़्त गुज़ार कर नमाज़ पढ़ना भी सुस्ती में दाख़िल है, बल्कि अव्वल दरजा की सुस्ती है।

नम्बर (3) रब तआला फरमाता है।

तरजमा : नमाज़ क़ाइम करो ज़कात दो और रुकूअ करने वालों के साथ रुकूअ करो।

कुरआने करीम ने कहीं नमाज़ पढ़ने का हुक्म नहीं दिया, हर जगह नमाज़ क़ाइम करने का हुक्म दिया है नमाज़ क़ाइम करना यह है कि हमेशा नमाज़ पढ़े, सही पढ़े, सही वक़्त पर पढ़े, नमाज़ का वक़्त गुज़ार कर पढ़ना नमाज़ क़ाइम करने के खिलाफ़ है।

नम्बर (4) रब तआला मुत्तक़ियों की तारीफ़ इस तरह फरमाता है।

तरजमा : कुरआन उन मुत्तक़ी लोगों के लिए हादी है जो ग़ैब पर ईमान रखते हैं और नमाज़ क़ाइम करते हैं और हमारे दिए में से ख़र्च करते हैं।

मालूम हुआ कि मुत्तक़ी व परहेज़गार वह मोमिन है जो नमाज़ क़ाइम करे यानी हर नमाज़ क़ाइम करे यानी हर नमाज़ उसके वक़्त पर पढ़े और हमेशा, चाहे मुक़ीम हो या मुसाफिर, सफर में ज़ुहर या अस्र का वक़्त निकाल कर नमाज़ पढ़ना इन आयाते करीमा के सरीह ख़िलाफ़ है।

नम्बर (5-6) हदीस मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि मैंने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पूछा कि कौन सा अमल सब से अच्छा है फरमाया वक़्त पर नमाज़ पढ़नी मैंने कहा फिर कौन सा अमल फरमाया माँ बाप की ख़िदमत मैंने अर्ज़ किया फिर कौन सा अमल फ़रमाया अल्लाह की राह में जिहाद, फ़रमाते हैं कि हुज़ूर ने मुझे यह बातें फरमाईं अगर ज़्यादा पूछता तो ज़्यादा बताते।

नम्बर (7 ता 10) अहमद अबू दाऊद, मालिक, निसाई ने हज़रत उबादा बिन सामित रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

फरमाते हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि रब

ने पाँच नमाज़ें फ़र्ज़ कीं जो मुसलमान उनका वज़ू अच्छी तरह करे और उन्हीं के वक़्त पर अदा करे और उनका रुकूअ़ अच्छी तरह और हुज़ूर क़लबी से पूरा करे तो उसके मुतअल्लिक़ अल्लाह के करम पर वादा है कि उसे बख़्श दे।

नम्बर (11) तिर्मिज़ी शरीफ़ ने हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

बेशक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया ऐ अली तीन चीज़ों में देर मत लगाओ नमाज़ जब आ जाए और जनाज़ा जब मौजूद हो लड़की जब तुम उसका कुफ़ू पाओ।

नम्बर (12 ता 14) अहमद, तिर्मिज़ी, अबू दाऊद ने हज़रत उम्मे फर्दा से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाती हैं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से दरयाफ़्त किया गया कि कौन सा अमल अफ़ज़ल है फरमाया नमाज़ पढ़ना उसके अव्वले वक़्त मुस्तहब में।

नम्बर (15) मुस्लिम शरीफ़ ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह मुनाफ़िक़ की नमाज़ है कि बैठा हुआ सूरज का इंतिज़ार करता रहे यहाँ तक कि जब ज़र्द हो जाए और सूरज शैतान के दो सींगों के दरम्यान पहुँच जाए तो चार चोंच मारे जिनमें रब का ज़िक्र थोड़ा करे।

इस क़िस्म की अहादीस बेशुमार हैं जिनमें नमाज़ को वक़्त पर अदा करने की ताकीद फरमाई गई है और देर से या वक़्ते मकरूह में नमाज़ पढ़ने पर सख़्त एताब फरमाया गया। इसे मुनाफ़िक़ों का अमल क़रार दिया गया यहाँ बतौर नमूना अहादीस पेश की गईं। अफ़सोस है इन वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिदों पर जो घर से दो मील जा कर, सफर का बहाना बना कर वक़्त निकाल कर नमाज़ें पढ़ते हैं, न कोई मज्बूरी होती है, न कोई उज़्र, सिर्फ़ नफ़्से अम्मारह का धोखा है। खाना वक़्त पर खाएं, दुनियावी तमाम काम ख़ूब संभाल कर करें, मगर नमाज़ें बिगाड़ें, जो इस्लाम का पहला फरीज़ा और आला रुक्न है। मुसलमानों को चाहिए कि वहाबियों की सोहबत से बचें, और सफर व हज़र में हर नमाज़ अपने वक़्त पर पढ़ें।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यह है कि सफर में हर नमाज़ अपने वक़्त पर पढ़ी जाए, ज़ुहर को अस्र के वक़्त में और मग़्रिब को इशा के वक़्त में न पढ़े, क्योंकि शरीअत पाँचों नमाज़ें और नमाज़े जुमा, नमाज़े ईदैन, नमाज़े

तहज्जुद, नमाज़े इशराक़, नमाज़े चाश्त सब के औक़ात अलाहिदा अलाहिदा मुक़र्रर फरमाए, कि इन में से किसी नमाज़ को दूसरी नमाज़ के वक़्त में अदा नहीं किया जाता। मुसाफिर, बहालते सफर नमाज़े फज्र, नमाज़े अस्र, नमाज़े इशा को अपने वक़्त में ही पढ़ता है, ऐसे ही अगर मुसाफिर नमाज़े तहज्जुद, नमाज़े इशराक़, नमाज़े चाश्त, नमाज़े जुमा पढ़े तो उनके मुक़र्ररा वक़्तों ही में पढ़ेगा यह नहीं कर सकता कि नमाज़े तहज्जुद सूरज निकलने के बाद या नमाज़े जुमा अस्र के वक़्त में या नमाज़े फज्र आफताब निकलने या नमाज़े इशा सुबहे सादिक़ हो जाने पर पढ़े। तो ज़ुहर और मग़्रिब ने क्या क़ुसूर किया है कि मुसाफिर साहब ज़ुहर तो अस्र के वक़्त में पढ़ें और मग़्रिब इशा के वक़्त में हालांकि सफर में उन दोनों नमाज़ों के वही वक़्त हैं जो हज़र में हैं दूसरे यह कि वहाबी साहिबान बताएं कि जब वह सफर में ज़ुहर को अस्र के वक़्त में और मग़्रिब को इशा के वक़्त में पढ़ते हैं। तो यह ज़ुहर और मग़्रिब अदा होती है या क़ज़ा अगर क़ज़ा होती है तो दीदा दानिस्ता नमाज़ क़ज़ा करना सख़्त गुनाह है और अगर अदा होती है तो क्यों हज़रत जिब्रीले अमीन ने जो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमते अक़्दस में नमाज़ों के औक़ात अर्ज़ किए तो यह न फरमाया कि मुसाफिर के लिए ज़ुहर का वक़्त आफ़्ताब डूबने तक और मग़्रिब का वक़्त सुबहे सादिक़ तक होगा, बल्कि हर मुसलमान के लिए वक़्त ज़ुहर अस्र से पहले ख़त्म होने और वक़्त मग़्रिब इशा से पहले ख़त्म होने का हुक्म दिया था। फिर तुमने मुसाफिर के लिए उन दो नमाज़ों में यह वक़्त की गुंजाइश कहाँ से निकाली और मुसलमानों की नमाज़ें क्यों ख़राब कीं। बहरहाल पाँचों नमाज़ों के औक़ात मुसाफिर व मुक़ीम हर एक के लिए एक जैसे हैं। हर मुसलमान पर फर्ज़ है कि हर हाल में हर नमाज़ उसके वक़्त में पढ़े।

दूसरी फस्ल

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

गै़र मुक़ल्लिद वहाबी अब तक इस मसला के मुतअल्लिक़ जिस क़द्र ऐतराज़ात कर सके हैं हम वह तमाम नक़्ल करके हर एक के जवाबात अर्ज़ करते हैं। आइंदा अगर कोई और ऐतराज़ हमारे इल्म में आया तो इंशाअल्लाह दूसरे एडीशन में इसका जवाब भी अर्ज़ कर दिया जाएगा।

ऐतराज़ नम्बर 1 : बुख़ारी शरीफ में हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुम से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब सफर

में होते तो नमाज़े ज़ुहर व अस्र जमा फरमा लेते थे और मग़्रिब व इशा भी जमा फरमाते थे।

यह हदीस अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, मोअत्ता इमाम मालिक, मोअत्ता इमाम मुहम्मद, तहावी शरीफ़ वग़ैरह बहुत मुहद्देसीन ने मुख़्तलिफ़ रावियों से कुछ फ़र्क़ से ब्यान फरमाई है। यही हदीस वहाबियों की इंतिहाई दलील है। जिसे वह बहुत क़वी दलील समझते हैं।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। बग़ौर मुलाहिज़ा फरमाओ।

एक यह कि अबू दाऊद शरीफ़ और तहावी शरीफ़ वग़ैरहुम ने उन्हें हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से यह भी रिवायत की कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बग़ैर सफर बग़ैर ख़ौफ़ के मदीना मुनव्वरा में भी ज़ुहर व अस्र ऐसे ही मग़्रिब व इशा जमा फरमा लेते थे। चुनांचे अबू दाऊद शरीफ़ के अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : इब्ने अब्बास ने फ़रमाया कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ज़ुहर व अस्र व मग़्रिब व इशा मदीना मुनव्वरह में बग़ैर बारिश और बग़ैर ख़ौफ़ के जमा फरमा लेते थे।

बल्कि इसी अबू दाऊद व तहावी शरीफ़ ने उन्हीं हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हुम से रिवायत की कि हुज़ूर मदीना मुनव्वरह में सात बल्कि आठ नमाज़ें जमा फरमा लेते थे। चुनांचे अबू दाऊद के अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : हज़रत इब्ने अब्बास ने फरमाया कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम न मदीना मुनव्वरह में सात नमाज़ें आठ नमाज़ें जमा करके हम को पढ़ाईं ज़ुहर, अस्र, मग़्रिब, इशा।

तो ऐ वहाबियो! तुम सिर्फ़ सफर में, सिर्फ़ ज़ुहर व अस्र या मग़्रिब या इशा पर ही मेहरबानी क्यों करते हो? तुम्हें चाहिए कि रवाफ़िज़ की तरह सात सात आठ आठ, नमाज़ें एक दम पढ़ कर आराम किया करो, सफर में भी और घर में भी। क्या बाज़ अहादीस को मानते हो बाज़ के इंकारी हो?

दूसरे यह कि तुम्हारी पेश करदा बुख़ारी की रिवायत में यह तो मज़्कूर है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ज़ुहर व अस्र जमा फरमाई। मगर यह तफ़्सील नहीं कि कैसे जमा फरमाई। आया अस्र को ज़ुहर के वक़्त पढ़ा या ज़ुहर को अस्र के वक़्त में ऐसे ही मग़्रिब इशा के वक़्त में पढ़ी या इशा मग़्रिब के वक़्त में। लिहाज़ा यह हदीस मुज्मल है। और मुज्मल हदीस बग़ैर तफ़्सील क़ाबिले अमल नहीं होती।

तीसरे यह कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का सफर में इन नमाज़ों को जाम फरमाना उज़्रे सफर की वजह से था। ज़रूरत पर बहुत सी

मम्नूअ चीज़ें हलाल हो जाती हैं। और जमा भी सिर्फ़ सूरतन था हक़ीक़तन न था। यानी हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने ज़ुहर अस्र के वक़्त में न पढ़ी, बल्कि सफर करते करते ज़ुहर के आख़िर वक़्त में क़याम फरमाया, ज़ुहर आख़िर वक़्त में अदा फरमाई। और अस्र अव्वले वक़्त में बज़ाहिर मालूम यह हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने दो नमाज़ें एक वक़्त में अदा फरमाईं। लेकिन हक़ीक़तन हर नमाज़ अपने वक़्त में हुई ज़ुहर या मग़्रिब आपने आख़िर में पढ़ी। अस्र या इशा अव्वले वक़्त में। इस सूरत में यह हदीस न कुरआन के ख़िलाफ़ हुई न दूसरी इन अहादीस के जो हमने पहली फस्ल में पेश कीं। यह जमा बिल्कुल जाइज़ है। यही हमारा मज़हब है।

हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास की वह हदीस जो तहावी व अबू दाऊद ने रिवायत की जिसमें फरमाया गया, कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम मदीना मुनव्वरह में बग़ैर ख़ौफ़ बग़ैर बारिश सात आठ नमाज़ें जमा फरमा लेते थे, वहाँ सात आठ नमाज़ें मुराद नहीं, बल्कि सात आठ रकाअतें मुराद हैं कि मग़्रिब व इशा सूरतन जमा फरमाईं। तो फर्ज़ की सात रकाअतें जमा हो गईं। तीन मग़्रिब की, चार इशा की और अगर ज़ुहर व अस्र जमा फरमाईं, तो आठ रकाअत जमा हो गईं। चार ज़ुहर की चार अस्र की। चूंकि यह जमा सूरतन थी न कि हक़ीक़तन लिहाज़ा सफर में भी जाइज़ थी और हज़रत में भी, ब्यान जवाज़ के लिए। हदीस समझने के लिए शरई अक़्ल और हदीस वाले महबूब सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिश्ता गुलामी चाहिए जिस से वहाबी दूर हैं।

इस मानी की ताईद

नमाज़ें जमा करने के जो मानी हम ने ब्यान किए इस मानी की ताईद बहुत सी अहादीस से होती है। जिन में से कुछ अहादीस नक़्ल की जाती हैं, सुनो और इबरत पकड़ो।

हदीस नम्बर 1 : तबरानी से हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद से रिवायत की।

तरजमा : बेशक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मग़्रिब व इशा इस तरह जमा फरमाते थे कि मग़्रिब उसके आख़िर में अदा फरमाते थे और इशा उसके अव्वले वक़्त में।

हदीस नम्बर 2 : बुख़ारी शरीफ़ में हज़रत सालिम से एक लंबी हदीस रिवायत की जिसके कुछ अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : अब्दुल्लाह इब्ने उमर भी हुज़ूर अलैहिस्सलाम का सा अमल करते थे कि जब सफर में जल्दी होती तो मग़्रिब की तक्बीर कहते और तीन

रकाअत पढ़ते फिर सलाम फेरते फिर थोड़ी देर ठहरते फिर इशा की तक्बीर फ़रमाते और दो रकाअत इशा पढ़ते।

हदीस नम्बर 3 : नसाई शरीफ़ ने हज़रत नाफ़े से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि हम मक्का मुअज़्ज़मा से हज़रत इब्ने उमर के साथ आए। जब यह रात हुई तो आप चलते रहे यहाँ तक कि शाम हो गई हम सझमे कि हज़रत अब्दुल्लाह नमाज़ भूल गए हम ने उन से कहा कि नमाज़ पढ़ लीजिए मगर आप चलते ही रहे यहाँ तक कि शफ़क़ डूबने के क़रीब हो गई तो उतरे और मग़्रिब पढ़ी। फिर शफ़क़ ग़ाइब हो गई तो नमाज़े इशा पढ़ी फिर हमारी तरफ मुतवज्जेह हुए और फ़रमाया कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ भी ऐसा ही करते थे जब सफर में जल्दी होती।

इस क़िस्म की बेशुमार हदीसें जिन में साफ़-साफ़ इरशाद हुआ है कि सफर में अस्र व जुहर या मग़्रिब व इशा सिर्फ़ सूरतन जमा की जाएंगी कि मग़्रिब अपने आख़िर वक़्त में पढ़ी जाए इशा अपने अव्वले वक़्त में, न तो ज़ुहर अस्र के वक़्त में पढ़ी जाए न मग़्रिब ईशा के वक़्त में। अगर इन अहादीस की तफ़्सील देखनी हो तो तहावी शरीफ़ और सहीहुल-बिहारी वग़ैरह का मुताला फरमाओ। हमने सिर्फ़ तीन हदीसों पर इक्तिफा की। लिहाज़ा हनफ़ियों की तौजीह बिल्कुल दुरुस्त है। इसकी ताईद कुरआने करीम भी कर रहा है और दीगर अहादीसें भी वहाबियों की तौजीह महज़ बातिल है। क़ुरआने करीम के भी ख़िलाफ़ है और अहादीस के भी।

ऐ वहाबियो! अगर तुम इन अहादीस की वजह से सफर में जमा हक़ीक़ी मानते हो तो हज़रत इब्ने अब्बास की हदीस की वजह से बहालते इक़ामत सात बल्कि आठ नमाज़ें एक दम पढ़ लिया करो, यह हदीस हम पहली फस्ल में ब्यान कर चुके हैं। जब तुम इस हदीस में जमा सूरी मुराद लेते हो तो यहाँ जमा हक़ीक़ी क्यों मुराद लेते हो? क्या कुछ हदीसों पर ईमान है कुछ का इन्कार।

ऐतराज़ नम्बर 2 : बुख़ारी शरीफ़ में हज़रत अनस से रिवायत है जिसके बाज़ अल्फाज़ यह हैं।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि अगर हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सूरज ढलने से पहले सफर करते तो जुहर को अस्र के वक़्त तक मुअख़्ख़र करते फिर दोनों नमाज़ें जमा फरमाते।

इस हदीस में साफ में साफ तौर पर मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ज़ुहर अस्र के वक़्त में पढ़ते थे जैसा कि **इलल-अस्र** से ज़ाहिर है।

जवाब : आपने इस हदीस का तरजमा ग़लत किया, **इला** से मालूम होता

है अस्र के वक़्त से पहले नुज़ूल फरमाते थे ग़ायत मग़या से ख़ारिज है न कि दाख़िल, अस्र तक मुअख़्ख़र फरमाने के मानी यह हैं कि अस्र के क़रीब तक मुअख़्ख़र फरमाते थे। जैसा कि ऐतराज़ नम्बर 1 के जवाब की अहादीस से मालूम हुआ, लिहाज़ा जमा सूरी मुराद है न कि जमा हक़ीक़ी।

ऐतराज़ नम्बर 3 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत नाफ़े से रिवायत की जिसके बाज़ अल्फ़ाज़ यह हैं।

हज़रत इब्ने उमर चलते रहे। यहाँ तक कि शफ़क़ ग़ायब होने का वक़्त आ गया तो उतरे पस मग़्रिब व इशा जमा फरमाईं और फरमाया कि मैंने हुज़ूर को ऐसे ही करते देखा है जब सफर में जल्दी होती।

इस हदीस में साफ़ साफ़ मज़कूर है कि हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर शफ़क़ ग़ायब होने के वक़्त उतरे यक़ीनन आपने मग़्रिब इशा के वक़्त में पढ़ी।

जवाब : यह भी आपकी ग़लत फ़हमी पर मब्नी है इसके मानी यह कब हैं कि शफ़क़ ग़ायब होने के बाद उतरे, मानी बिल्कुल ज़ाहिर हैं कि जब शफ़क़ ग़ायब होने लगी यानी ग़ायब होने के क़रीब हुई तब उतरे, नमाज़े मग़्रिब पढ़ते ही शफ़क़ ग़ायब हो गई और वक़्ते इशा आ गया, इशा पढ़ ली हम पहले ऐतराज़ के जवाब में इन ही हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु का अमल शरीफ बयान कर चुके हैं जिसमें तसरीह है कि आप ने मग़्रिब आख़िर वक़्त में पढ़ी और इशा अव्वल वक़्त में वह हदीस तुम्हारी इस हदीस की तफ़्सीर है।

ऐतराज़ नम्बर 4 : अगर हर नमाज़ अपने वक़्त में ही पढ़नी चाहिए। और सफर वग़ैरह उज़्र की हालत में भी एक नमाज़ दूसरी नमाज़ के वक़्त में पढ़ना गुनाह है, तो हाजी लोग अरफात में नवीं ज़िल-हिज्जा को ज़ुहर व अस्र मिला कर क्यों पढ़ते हैं, ज़ुहर के वक़्त में अस्र और दसवीं ज़िल-हिज्जा की शब को मुज़्दलफ़ा में मग़्रिब व इशा मिला कर इशा के वक़्त में क्यों पढ़ते हैं। हनफी भी वहाँ नमाज़ों का जमा करना जाइज़ कहते हैं, जब हज के मौक़ा पर नमाज़ ज़ुहर व अस्र ऐसे ही मग़्रिब व इशा हक़ीक़ी तौर पर एक ही वक़्त में जमा हो गईं तो अगर सफर में जमा हो जाएं तो क्या हरज है, ऐ हन्फ़ियो! तुम क़ुरआनी आयत और यह अहादीस हज में क्यों भूल जाते हो? (यह वहाबियों का इंतिहाई ऐतराज़ है)

जवाब : जनाब न तो अरफा में अस्र ज़ुहर के वक़्त में अदा होती है, न मुज़्दलफ़ा में मग़्रिब इशा के वक़्त में, बल्कि वहाँ हुज्जाज के लिए अस्र का वक़्त ज़ुहर की तरफ और मग़्रिब का वक़्त इशा की तरफ मुंतक़िल हो गया

हो। यानी वहाँ मग़रिब का वक़्त शफ़क़ ग़ायब होने के बाद शुरू होता है और अस्र का वक़्त ज़ुहर पढ़ते ही शुरू हो जाता है। जैसे वित्र का वक़्त इशा के फ़र्ज़ पढ़ते ही शुरू हो जाता है, लिहाज़ा वहाँ नमाज़ें अपने वक़्त से न हटीं। बल्कि नमाज़ों के औक़ात हट गए, नमाज़ें अपने वक़्त ही में हुईं, और तुम सफर में नमाज़ों को अपने वक़्त से हटाते हो, वक़्त हट जाने और नमाज़ हट जाने में बड़ा फ़र्क़ है।

इसकी खुली दलील यह है कि अगर इमाम अरफा में ज़ुहर अपने हमेशा के वक़्त में पढ़े और अस्र हमेशा के वक़्त, तो सख़्त गुनहगार होगा, गोया उसने अस्र क़ज़ा कर दी और अगर उस दिन मग़रिब की नमाज़ अपने हमेशा के वक़्त में पढ़ी, और इशा अपने मामूली वक़्त में तो नमाज़े मग़रिब होगी ही नहीं, और ऐसा करने वाला सख़्त गुनहगार होगा, गोया उसने मग़रिब की नमाज़ वक़्त से पहले पढ़ ली। मालूम हुआ कि आज उन नमाज़ों में वक़्त ही बदल दिए गए हैं।

लेकिन अगर मुसाफिर ज़ुहर व अस्र जमा न करे बल्कि ज़ुहर अपने वक़्त में पढ़े और अस्र अपने वक़्त में, ऐसे ही मग़रिब अपने वक़्त में पढ़े। और इशा अपने वक़्त में, तो तुम भी उसे गुनहगार नहीं मानते, बिला कराहत जाइज़ कहते हो, मालूम हुआ कि तुम्हारे नज़्दीक भी सफर में वक़्ते नमाज़ नहीं बदलता। बल्कि नमाज़ दूसरे वक़्त में अदा की जाती है। लिहाज़ा हाजियों की अरफा व मुज़्दलेफा वाली नमाज़ें न क़ुरआनी आयात के ख़िलाफ़ हैं न अहादीस के मुख़ालिफ़ वहाँ हर नमाज़ अपने वक़्त में अदा होती है और मुसाफ़िर का हक़ीक़ी तौर पर नमाज़ों का जमा करना क़ुरआने करीम के भी ख़िलाफ़ है, अहादीस के भी।

हज में औक़ाते नमाज़ में तब्दीली, हदीस मश्हूर बल्कि हदीस मुतावातिर मानवी से साबित है, इस पर इसी तरह अमल वाजिब है जैसे आयते क़ुरआनिया पर अमल ज़रूरी है।

हमने यहाँ जमा नमाज़ का मसला मुख़्तसर तौर से अर्ज़ कर दिया है, अगर इसकी पूरी तहक़ीक़ देखना हो, तो हमारा हाशिया बुख़ारी नईमुल-बारी में यही बहस मुलाहिज़ा करो इन शाअल्लाह वहाँ लुत्फ आ जाएगा।

नाज़रीन : को इन बहसों से पता लग गया होगा कि मज़्हबे हनफ़ी, बेफ़ज़्लेही तआला निहायत मज़्बूत मुदल्लल और बहुत ही क़वी और क़ुरआन मजीद व अहादीस के बिल्कुल मुताबिक़ है।

वहाबी ग़लतफ़हमी में मुब्तला हैं, उनके मज़्हब की बुनियाद महज़ ग़लती

पर क़ायम है रब तआला हम को इसी मज़्हबे हन्फ़ी पर क़ायम रखे।

हमारा दीन हनीफ़ी है, मज़्हब हनफ़ी यानी मिल्लते इब्राहीमी और मज़्हबे नोमानी।

पन्द्रहवाँ बाब

सफ़र का फ़ासला तीन दिन की राह है

शरीअते इस्लामिया ने मुसाफिर को यह सहूलत दी है कि इस पर चार रकाअत फर्ज़ में बजाए चार के दो वाजिब फरमाई हैं लेकिन वहाबियों ग़ैर मुक़ल्लिदों ने महज़ नफ़्सानी ख़्वाहिश से नमाज़ में कमी करने के लिए सफर को ऐसा आम कर दिया है कि ख़ुदा की पनाह घर से खेत देखने गए मुसाफिर बन गए। एक आध मील सैर व तफ़रीह करने शहर से बाहर निकले मुसाफिर बन बैठे और नमाज़ में क़मी कर दी। शरअन सफर की दूरी तीन दिन की राह है। कि जब इंसान अपने वतन से तीन दिन की दूरी का इरादा करके निकले तो वह मुसाफिर है उस पर सिर्फ़ चार रकाअत वाली फ़र्ज़ों में क़स्र वाजिब है यानी बजाए चार के दो पढ़े।

यह तीन दिन की दूरी आम अच्छे रास्तों पर तक़रीबन सत्तावन मील अंग्रेज़ी बनते हैं हर मंज़िल 19 मील की कुल तीन मंज़िलें 57 मील और टीले या पहाड़ी रास्ता इस से कम बनेगा ग़र्ज़कि तीन दिन के राह का ऐतबार है।

हाजियों को ज़रूरी हिदायत

आज कल हरमैन तैय्यबैन में नज्दियों की हुकूमत है नज्दी इमाम हज के ज़माना में मक्का मुअज़्ज़मा से मिना व अरफ़ात में आ कर क़स्र नमाज़ अदा करता है। हालांकि मिना का फासिला मक्का मुअज़्ज़मा से सिर्फ़ तीन मील है और अरफात का फासिला नौ मील। हन्फ़ी मज़हब की रू से वह इमाम क़स्र नहीं कर सकता। इसलिए हन्फी लोग उसके पीछे हरगिज़ नमाज़ न पढ़ें वरना नमाज़ ही न होगी।

शाफ़ई या हंबली इमाम को ऐसे मौक़ा पर यह चाहिए कि ज़िल-हिज्जा की आठ तारीख़ मक्का मुअज़्ज़मा से 57 मील दूर निकल जाए। फिर वापस होते हुए मिना व अरफात में क़स्र पढ़े ताकि हन्फ़ियों की नमाज़ें भी उसके पीछे दुरुस्त हों हाजियों को बहुत एहतियात चाहिए। इस बाब की भी हम दो फस्लें करते हैं। पहली फस्ल में सफर की उस दूरी का सुबूत दूसरी फस्ल में इस मसला पर ऐतराज़ात मअ़ जवाबात।

पहली फस्ल

मसाफते सफर तीन दिन का सुबूत

सफ़र की दूरी कम अज़ कम तीन दिन की राह है इस से कम फ़ासला शरअन सफ़र नहीं न ऐसे शख़्स पर सफर के अहकाम जारी हों। दलाइल हस्बे ज़ैल हैं।

(1) हदीस बुख़ारी शरीफ़ ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर से रिवायत की।

तरजमा : बेशक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि औरत तीन दिन की मसाफत का सफर बग़ैर क़रीबी रिश्तेदार के न करे।

इस हदीस से मालूम हुआ कि औरत को अकेले सफर करना हराम है, ज़ी रहम क़राबत दार के साथ सफर कर सकती है सफर की मुद्दत हुज़ूर ने तीन दिन फ़रमाई मालूम हुआ कि सफर की दूरी तीन दिन है।

(2) हदीस मुस्लिम शरीफ़ ने हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मोज़ों पर मसह की मुद्दत मुसाफिर के लिए तीन दिन तीन रातें मुक़र्रर फरमाई और मुक़ीम के लिए एक दिन रात।

हदीस नम्बर 3 ता 9 : अबू दाऊद, नसाई, इब्ने हब्बान, तहावी, अबू दाऊद तयालसी तबरानी, तिर्मिज़ी ने ख़ुज़ैमा इब्ने साबित अंसारी वग़ैरहुम रज़ि अल्लाहु अन्हुम से रिवायत की।

तरजमा : वह नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत करते हैं हुज़ूर ने फ़रमाया कि मुक़ीम के लिए मोज़ों पर मसह की मुद्दत एक दिन एक रात है और मुसाफिर के लिए तीन दिन तीन रातें हैं।

हदीस नम्बर 10 ता 12 : असरम ने अपनी सुनन में इब्ने ख़ुज़ैमा दारे क़ुतनी ने हज़रत अबू बकरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : वह रिवायत करते हैं नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से कि हुज़ूर ने मुसाफिर के लिए तीन दिन व तीन रात तक मसह की इजाज़त दी और मुक़ीम के लिए एक दिन एक रात जब कि वुज़ू करके मोज़े पहने हों। ख़त्ताबी कहते हैं कि यह हदीस सहीहुल-अस्नाद है।

हदीस नम्बर 13 ता 15 : तिर्मिज़ी, नसाई ने हज़रत सफ़वान इब्ने अस्साल से रिवायत की।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हम को हुक्म देते थे कि जब हम मुसाफिर हों अपने मोज़े तीन दिन तीन रात न उतारें। अलख़

इन अहादीसे शरीफ़ा से मालूम हुआ कि हर मुसाफिर को तीन दिन मोज़े पर मसह करने की इजाज़त है। कोई मुसाफिर इस इजाज़त से अलाहिदा नहीं अगर तीन दिन से कम दूरी भी सफ़र बन जाए तो इस इजाज़त से बहुत से मुसाफिर फ़ाइदा नहीं उठा सकते। मसलन अगर वहाबी साहब अपने खेत पर सैर करने एक मील के फ़ासला पर जा कर मुसाफिर बन जाएं तो तीन दिन मसह करके दिखाएं ऐसे ही जो आदमी एक दिन चल कर घर पहुँच जाए वह इस इजाज़त से कैसे फ़ायदा उठाए लिहाज़ा तीन दिन से कम सफर बन सकता ही नहीं वरना मोज़ों पर मसह की यह अहादीस उमूमी तौर पर क़ाबिले अमल न रहेंगी। इस दलील पर अच्छी तरह ग़ौर कर लिया जाए।

हदीस नम्बर 16 : इमाम मुहम्मद ने आसार में हज़रत अली इब्ने रबीआ वालबी से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि मैंने सैय्यदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर से पूछा कि कितनी दूरी पर नमाज़ का क़स्र हो सकता है तो आपने फ़रमाया कि क्या तुमने मक़ामे सुवैदा देखा है। मैंने कहा देखा तो नहीं। सुना है। फ़रमाया वह यहाँ से तीन रातं के (क़ासिद की रफ़्तार से) फ़ासला पर है।

हम जब वहाँ तक जाए तो क़स्र कर सकते हैं।

हदीस नम्बर 17 : दार क़ुतनी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से रिवायत की।

तरजमा : बेशक हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मक्का वालो चार बरीद से कम सफर में नमाज़े क़स्र न करना। यह फासिला मक्का मुअज़्ज़मा से अस्फ़ान का है।

हदीस नम्बर 18 : मोअत्ता इमाम मालिक में हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है।

कि आप नमाज़े क़स्र करते थे मक्का और ताइफ़ और मक्का अस्फ़ान और मक्का और जद्दा की बराबर फासिला में। यहिया फरमाते हैं कि इमाम मालिक ने फरमाया यह फासिला चार बरीद था।

हदीस नम्बर 19 : इमाम शाफ़ई ने यह ब-अस्नादे सहीह हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से रिवायत की।

तरजमा : कि हज़रत इब्ने अब्बास से सवाल किया गया कि क्या अरफात तक (9 मील) जाने में नमाज़े क़स्र की जाएगी। फ़रमाया नहीं। लेकिन क़स्र की जाएगी अस्फ़ान या जद्दा या ताइफ तक इसे इमाम शाफ़ई ने नक़्ल फरमाया और फरमाया कि इसकी अस्नाद सही है।

हदीस नम्बर 20 : इमाम मुहम्मद ने मोअत्ता शरीफ़ में हज़रत नाफ़े से रिवायत की।

कि आप हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर के साथ एक बरीद सफर करते थे तो क़स्र न फरमाते थे।

ख़्याल रहे कि 4 बरीद अंग्रेज़ी मील के हिसाब से क़रीबन 57 मील होता है। यानी 36 कोस तीन मंज़िलें यह चन्द हदीसें बतौर नमूना पेश की गईं वरना इसके मुतअल्लिक़ बहुत सी अहादीस वारिद हैं। जिस को शौक़ हो वह सहीहुल-बिहारी शरीफ़ का मुताला करे। इन तमाम अहादीस से मालूम हुआ कि मुतलक़न शहर से निकल जाना सफर नहीं वरना उस पर सफर के अहकाम जारी हों सफर के लिए चार बरीद फासिला यानी तीन मंज़िलें चाहिएं सहाबा किराम का इसी पर अमल था।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यह है कि मुतलक़न शहर से निकल जाना सफर न हो क्योंकि शहर के आस पास की ज़मीन शहर की फना कहलाती है जिस से शहरी ज़रूरियात पूरी होती हैं जैसे क़ब्रिस्तान, ईदगाह, चराहगाह, घोड़ दोड़ के मैदान यहाँ पहुँच जाना शहर में पहुँच जाना समझा जाता है कोई शख़्स इस जगह सैर व तफ़रीह के लिए जा कर अपने को मुसाफ़िर नहीं समझता। नीज़ अगर इस जैसी मसाफ़त को सफ़र कहा जाए तो चाहिए कि कोई औरत बग़ैर महरम के मुतलक़न शहर से बाहर न जा सके क्योंकि औरत को बग़ैर महरम सफर हराम है। नीज़ इस्लामी क़ानून है कि मुसाफिर तीन दिन व रात मोज़ों पर मसह कर सकता है। यह क़ानून हर मुसाफिर को आम न हो सकेगा जैसा कि हम पहले अर्ज़ कर चुके हैं। तो चाहिए कि सफर की कम अज़ कम कोई हद मुक़र्रर होनी चाहिए। जिसे अक़्ल शरई भी सफर माने और जिस से यह इस्लामी क़ानून भी हर मुसलमान पर जारी हो वह हद तीन दिन ही है।

और तीन दिन की दूरी का सफर होना तो यक़ीनी है इस से कम दूरी का सफर होना मश्कूक नमाज़ की चार रकाअतें यक़ीन से साबित हैं तो यक़ीनी चीज़ को मश्कूक से नहीं छोड़ सकते। यक़ीन को यक़ीन ही ज़ाइल कर सकता है।

दूसरी फस्ल

इस मसला पर ऐतराज़ात व जवाबात

इस मसला पर वहाबियों को सिर्फ़ एक ही हदीस मिल सकी है जो मुख़्तलिफ़ कुतुबे हदीस में मुख़्तलिफ़ रावियों से मन्कूल है। चुनांचे मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नमाज़े ज़ुहर मदीना मुनव्वरह में चार रकाअत पढ़ीं। और ज़ुल हुलैफ़ा में नमाज़े अस्र दो रकाअतें अदा फरमाईं।

देखो ज़ुल-हुलैफ़ा मदीना मुनव्वरह से सिर्फ़ तीन मील के फासिला पर है जिसे आज कल बिअरे अली कहा जाता है। यही अह्ले मदीना के लिए हज का मीक़ात है जब हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मदीना से बाहर तशरीफ़ ले जाते थे तो सिर्फ़ 3 मील के फासिला पर पहुँच कर क़स्र फरमाते थे।

जवाब : इस हदीस में सैर व तफ़रीह के लिए सिर्फ़ ज़ुल-हलैफ़ा तक जाने का ज़िक्र नहीं है। बल्कि यहाँ हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुज्जतुल-विदा का वाक़या ब्यान हो रहा है कि सरकार बइरादा हज मदीना मुनव्वरह से रवाना हुए। ज़ुल-हुलैफ़ा पहुँच कर वक़्ते अस्र आ गया। तो चूंकि आप आगे जा रहे थे। लिहाज़ा यहाँ क़स्र फरमाया। इसलिए यहाँ फ़रमाया गया **सल्लज़्ज़ुहरा** एक बार यह वाक़या हुआ। **काना युसल्लीयु** न फरमाया जिस से यह होता कि आप हमेशा किया करते थे। इस हदीस की तफ़्सीर है जो मोअत्ता इमाम मालिक और मोअत्ता इमाम मुहम्मद में हज़रत नाफ़े से रिवायत की।

तरजमा : कि हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर जब हज या उमरा करने के लिए मदीना मुनव्वरह से रवाना होते तो ज़ुल-हुलैफ़ा पहुँच कर क़स्र पढ़ते थे।

हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु का यह अमल शरीफ़ तुम्हारी पेश करदा हदीस की तफ़्सीर है। इस से मसला फ़िक़्ही यह मालूम हुआ कि जो शख़्स सफर के इरादे से अपने वतन से रवाना हो जाए तो आबादी से निकलते ही नमाज़े क़स्र पढ़ेगा। और वापसी पर आबादी में दाख़िल होने पर वह मुक़ीम बनेगा। यह हदीस हमारे बिल्कुल मुवाफ़िक़ है।

ऐतराज़ नम्बर 2 : मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जो औरत अल्लाह तआला और क़्यामत पर ईमान रखती हो उसे यह हलाल नहीं कि एक दिन रात की दूरी का सफर बग़ैर महरम करे।

इस हदीस से मालूम हुआ कि एक दिन व रात की दूरी तय करना सफर है कि इसे हुज़ूर ने सफर फरमाया और इस पर सफर के अहकाम जारी किए कि औरत को बग़ैर महरम इतनी दूर जाना हराम फरमा दिया गया। मालूम हुआ कि सफर के लिए तीन दिन की दूरी ज़रूरी नहीं एक दिन का भी हो जाता है।

जवाब : इसके दो जवाब हैं। एक यह कि तुम्हारा मज़्हब इस हदीस से भी साबित न हुआ तुम्हारा मज़्हब तो यह है कि शहर से मील दो मील सैर व तफ़्रीह के लिए जाना भी सफर है। और इस हदीस में एक दिन व रात दूरी की क़ैद है लिहाज़ा यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है। दूसरे यह कि हम पहली फस्ल में तीन दिन की रिवायत इसी बुख़ारी शरीफ़ की पेश कर चुके हैं। हम को दो रिवायतें मिलीं तीन दिन और एक दिन वाली अगर एक दिन की हदीस पहली हो और तीन दिन की हदीस बाद की तो एक दिन वाली हदीस मन्सूख़ है और अगर तीन दिन वाली हदीस पहली है एक दिन वाली हदीस पीछे तो तीन दिन की हदीस एक दिन वाली हदीस से मन्सूख़ नहीं हो सकती। क्योंकि तीन दिन में एक दिन भी आ जाता है और जब एक दिन की दूरी पर औरत को अकेले सफर हराम है तो तीन दिन का सफर भी हराम होगा। लिहाज़ा तीन दिन की रिवायत बहरहाल क़ाबिले अमल है और एक की हदीस पर अमल मश्कूक इसलिए एक दिन की हदीस क़ाबिले अमल नहीं। तीन दिन की हदीस क़ाबिले अमल है कि हुर्मत शक से साबित नहीं होती बहरहाल सफर की मुद्दत तीन दिन की दूरीही हो सकती है।

ऐतराज़ नम्बर 3 : आज कल मोटर और रेल वग़ैरह से तीन दिन का सफर एक घन्टा में तय हो जाता है तो बताओ मोज़ों पर मसह की मुद्दत तीन दिन में यह मुसाफिर कैसे पूरी करेगा? तुम्हारे क़ौल पर भी यह हदीस अलल-उमूम क़ाबिले अमल न हुई।

जवाब : यह ऐतराज़ बिल्कुल बेकार है। एक है क़ानून का अपना सक़्म कि क़ानून खुद हर जगह जारी न हो सके यह क़ानून का ऐब है। एक है कि आरिज़ा की वजह से क़ानून जारी न होना। यह क़ानून का अपना सक़्म नहीं शरीअत में सफर पैदल या ऊंट की रफ़्तार से मोतबर है। अगर वह तीन दिन की है तो सफ़र है इसी रफ़्तार में हर मुसाफिर पर यह मसह का क़ानून हावी और जारी होना चाहिए अगर कोई शख़्स एक घन्टा में इतना सफर तय कर लेता है तो यह एक ख़ार्जी आरज़ा है जिसकी वजह से यह क़ानून की ज़द से बच गया क़ानून अपनी जगह दुरुस्त है तुम्हारे क़ौल की वजह से क़ानून में सक़्म लाज़िम नहीं आता। लिहाज़ा तुम्हारा क़ौल बातिल है हमारा क़ौल दुरुस्त।

सोलहवाँ बाब

सफ़र में सुन्नत व नफ़्ल

मुसाफिर को बहालते सफ़र सिर्फ़ फर्ज़ नमाज़ में क़स्र करने का हुक्म है कि चार रकाअत फर्ज़ दो पढ़े, फर्ज़ के अलावा तमाम नफ़्ल व सुन्नत, वित्र

घर की तरह पूरी पढ़े, इन नमाज़ों का जो हुक्म घर में है वही सफर में है, न तो इन में क़स्र है न यह मना हैं न बिल्कुल माफ मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी सफर में नफ़्ल न ख़ुद पढ़ते हैं न औरों को पढ़ने देते हैं। बाज़ तो इस में बहुत सख़्त हैं। इसलिए हम इस बाब की भी दो फस्लें करते हैं पहली फस्ल में इस मसला शरई का सुबूत, दूसरी फस्ल में इस पर वहाबियों के ऐतराज़ात मआ जवाबात। हक़ तआला क़बूल फरमाए।

पहली फस्ल

सफ़र में सुन्नत व वित्र, नफ़्ल पूरी पढ़ो

मुसाफिर सिर्फ़ चार रकाअत फर्ज़ में क़स्र करे। बाक़ी सारी नमाज़ पूरी पढ़े उसे रोकना या मना करना सख़्त जुर्म है दलाइल हस्बे जैल हैं।

हदीस नम्बर 1 : रब तआला इरशाद फरमाता है।

तरजमा : क्या आपने इस मरदूद को देखा जो बन्द-ए-मोमिन को रोकता है जब वह नमाज़ पढ़ता है।

मालूम हुआ कि मुसलमान को नमाज़ से रोकना कुफ़्फ़ार का तरीक़ा है। और रब तआला का बहुत नापसन्द इसी लिए फुक़हा फरमाते हैं कि अगर कोई शख़्स वक़्ते मक्रूह में नमाज़ पढ़ने लगे, तो उसे न रोको, ताकि इस आयत की ज़द में न आ जाओ, जब नमाज़ पढ़ चुके तो मस्अला बता दो। (शामी वगै़रह)

इस से वहाबियों को इबरत पकड़ना चाहिए, जो मुसाफिर मुसलमानों को सुन्नत व नफ़्ल से बहुत सख़्ती से रोकते हैं, बल्कि लड़ने मरने पर तैयार हो जाते हैं आख़िर वह नमाज़ ही तो है, इस से इतनी चिढ़ क्यों है?

हदीस नम्बर 2 : रब तआला कुफ़्फ़ारे मक्का के ऐबों को इस तरह बयान फरमाता है।

तरजमा : उसकी बात न मानो जो बहुत क़समें खाने वाला ज़लील चुग़ल ख़ोर, भलाई से रोकने वाला आगे बढ़ने वाला सख़्त गुनहगार है।

मालूम हुआ कि लोगों को भलाई से रोकना कुफ़्फ़ार का तरीक़ा है। उनकी बात हरगिज़ न मानना चाहिए। मुसलमानों को भलाइयों से रोकना वहाबियों की ज़िन्दगी का महबूब मशग़ला है, सिनेमा, जुए और शराब से नहीं चिढ़ते, चिढ़ते हैं तो किस से? सफर में सुन्नत, नफ़्ल नमाज़ पढ़ने से। कोई मुसलमान उनकी बात हरगिज़ न माने, इस आयत पर अमल करे।

हदीस नम्बर 3 : रब तआला मोमिनों की तारीफ़ फरमाते हुए इरशाद फरमाता है।

तरजमा : मोमिन वह हैं कि अगर हम उन्हें ज़मीन में सलतनत दे दें तो

...नमाज़ें काइम करें और ज़कात दें और अच्छी बातों का हुक्म दें और बुरी बातों से रोकें।

अगर (खुदा न करे) ज़मीन में वहाबियों की सलतनत हो जाए तो लोगों को किस किस चीज़ से रोकें, सफर में सुन्नत व नफ़्ल नमाज़ पढ़ने से, अल्लाह के ज़िक्र की मज्लिसों से, मीलाद शरीफ़, ख़त्म व फ़ातिहा व तिलावते कुरआन से। किन चीज़ों का हुक्म दें। गन्दे कुओं से वुज़ू करने का, कव्वे, खुसिए खाने का, लड़के के पेशाब और मनी के पाक समझने का। अपने नुत्फ़े की ज़िना की लड़की से निकाह कर लेने का जैसा कि हम आख़िर किताब में वहाबियों के खुसूसी मसाइल बयान करेंगे।

हदीस नम्बर 4 व 5 : तिर्मिज़ी शरीफ़ और तहावी शरीफ ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की। मगर क़दरे लफ़्ज़ी इख़्तिलाफ़ है।

तरजमा : फरमाते हैं कि मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ वतन और सफर में नमाज़ें पढ़ी हैं पस मैंने आपके साथ वतन में ज़ुहर चार रकाअत पढ़ी इसके बाद दो रकाअत सुन्नत और आपके साथ सफर में जुहर दो रकाअत पढ़ीं इसके बाद दो रकाअतें सुन्नतें अस्र दो रकाअत इसके बाद कुछ न पढ़ा और मग़्रिब वतन व सफर में बराबर तीन रकाअतें। इसमें कमी न फरमाते थे वतन में न सफर में वह दिन के वित्र हैं उनके बाद दो रकाअत सुन्नत पढ़ीं।

तहावी में यह अल्फाज़ और ज़्यादा हैं।

तरज़मा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने इशा की दो रकाअतें पढ़ीं उसके बाद दो रकाअतें।

देखो नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सफर में जुहर के फर्ज़ दो और बाद में सुन्नत दो, मग़्रिब के फर्ज़ तीन और बाद में सुन्नतें दो, इशा के फर्ज़ दो, और बाद में सुन्नतें दो पढ़ीं। अगर सफर में सुन्नत या नफ़्ल पढ़ना मम्नूअ होता तो सरकार पुर अनवार सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम क्यों पढ़ते? यह वहाबी सुन्नत से चिढ़ते हैं।

हदीस नम्बर 6 व 7 : अबू दाऊद, तिर्मिज़ी ने हज़रत बरा इब्ने आज़िब रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ अट्ठारह सफर किए मैंने आपको न देखा कि आपने आफ़्ताब ढलने के बाद ज़ुहर के पहले की दो नफ़्ल छोड़े हों।

हदीस नम्बर 8 : अबू दाऊद शरीफ़ ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु

से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब सफ़र करते और नफ़्ल पढ़ना चाहते तो अपनी ऊंटनी को काबा की तरफ़ मुतवज्जेह फरमा देते, फिर तक्बीर कह कर नफ़्ल पढ़ते।

हदीस नम्बर 9 व 10 : मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सफर में अपनी सवारी पर नफ़्ल पढ़ते थे जिधर भी उसका मुँह होता आप इशारे से नमाज़ पढ़ते तहज्जुद की नमाज़ सिवाए फ़र्ज़ के वित्र भी सवारी पर पढ़ते।

इस हदीस से मालूम हुआ कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सफर में रास्ता तय करते हुए नमाज़े तहज्जुद भी पढ़ा करते थे और यह लोग ठहरे हुए मुसाफिर को सुन्नते मुअक्किदा तक से रोकते हैं।

हदीस नम्बर 11 : मोअत्ता इमाम मालिक में हज़रत नाफ़े रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि बेशक अब्दुल्लाह इब्ने उमर अपने फरज़न्द उबैदुल्लाह को सफर में नफ़्ल पढ़ते देखते थे तो आप मना न फरमाते थे।

हदीस नम्बर 12 : तिर्मिज़ी शरीफ़ ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ सफर में ज़ुहर की दो रकाअतें पढ़ीं इसके बाद दो रकाअत सुन्नत इसे तिर्मिज़ी ने रिवायत किया और फरमाया कि यह हदीस हसन है।

हदीस नम्बर 13 व 14 : मुस्लिम व अबू दाऊद ने हज़रत अबू क़तादा रज़ि अल्लाहु अन्हु से सफर में तअ्रीस की रात नमाज़ सुबह क़ज़ा हो जाने की बहुत लंबी हदीस रिवायत की जिसके बाज़ अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फज्र की सुन्नतें फर्ज़ से पहले पढ़ीं फिर फज्र के फर्ज़ पढ़े जैसे हमेशा पढ़ा करते थे।

हदीस नम्बर 15 ता 18 : बुख़ारी, मुस्लिम, अबू दाऊद ने हज़रत इब्ने अबी याली से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि हमें हज़रत उम्मे हानी के सिवा और किसी ने यह ख़बर न दी कि उसने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को नमाज़ चाश्त पढ़ते देखा। उम्मे हानी फरमाती हैं कि फतहे मक्का के दिन हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनके घर में ग़ुस्ल फरमाया और आठ रकाअत नफ़्ल चाश्त पढ़ीं।

देखो फ़तहे मक्का के दिन हुज़ूर अलैहिस्सलाम मक्का मुअज़्ज़मा में मुसाफिर हैं, इसके बावजूद हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने अपनी बहन उम्मे हानी बिन्ते अबी तालिब के घर में नमाज़े चाश्त आठ रकाअत पढ़ी, हालांकि नमाज़े चाश्त नफ़्ल है।

हदीस नम्बर 19 : इब्ने माजा ने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने वतन में भी नमाज़े फर्ज़ अदा फरमाई और सफर में भी हम वतन में फर्ज़ नमाज़ से पहले और बाद नफ़्ल पढ़ते थे और सफर में भी फर्ज़ से पहले और बाद नफ़्ल पढ़ते थे।

हदीस नम्बर 20 : बुख़ारी शरीफ़ ने हज़रत जाबिर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सवारी पर ग़ैर क़िब्ला की तरफ नमाज़े नफ़्ल पढ़ा करते थे।

यह बीस हदीसें बतौर नमूना पेश की गईं। अगर ज़्यादा अहादीस देखना हो तो सहीहुल-बिहारी मिश्कात शरीफ़ वग़ैरह का मुताला करें।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यह है कि सफर में सुन्नत व नफ़्ल की न तो मआफी हो और न क़स्र। चन्द वजह से।

एक यह कि अहादीस से मालूम होता है कि मेअ्राज की रात नमाज़ें दो दो रकाअत फर्ज़ की गईं। फिर सफर में तो वही दो रहीं। हज़र में कुछ नमाज़ों में ज़्यादती कर दी गई। और ज़ाहिर है कि मेअ्राज में फर्ज़ नमाज़ें ही लाज़िम की गई थीं, न कि सुन्नत व नवाफ़िल वग़ैरह, लिहाज़ा क़स्र सिर्फ़ फर्ज़ में हुआ न कि नफ़्ल व सुन्नत में। दूसरे यह कि बहालते सफर फर्ज़ नमाज़ में बहुत पाबन्दी है, कि सवारी पर, चलती रेल में, ग़ैर क़िब्ला की तरफ अदा नहीं हो सकती। सुन्नत व नफ़्ल में यह कोई पाबन्दी नहीं, सवारी पर, ग़ैर क़िब्ला की तरफ भी अदा हो जाती हैं, फर्ज़ के लिए मुसाफिर को सफर तोड़ना पड़ता है, जिस से देर लगती है, इसलिए वह नमाज़ आधी कर दी गई, चूंकि सुन्नत व नफ़्ल के लिए सफर तोड़ना नहीं पड़ता। सवारी पर अदा हो जाती हैं। इसलिए न तो उनमें क़स्र की ज़रूरत है न माफ़ी का सवाल पैदा होता है। यह समझना कि सफर में फर्ज़ कम हो गए तो सुन्नतें भी कम होनी चाहिएं ग़लत है। देखो जुमा के फर्ज़ बजाए चार के दो रकाअत हैं। मगर सुन्नत कोई कम न हुई, फर्ज़ अलाहिदा नमाज़ है और सुन्नत व नफ़्ल अलाहिदा, यानी सुन्नत व नफ़्ल फर्ज़ की ऐसी ताबे नहीं कि अगर फर्ज़ पूरे

पढ़े जाएं तो सुन्नतें भी पूरी हों और अगर फर्ज़ में क़स्र हो तो सुन्नतों में भी क़स्र हो या बिल्कुल माफ़ हो जाएं।

दूसरी फस्ल

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के पास इस मसला पर बहुत ही थोड़े दलायल हैं, जिन्हें वह हर जगह अल्फ़ाज़ बदल कर बयान करते हैं, हम उनकी वकालत में उनके सवालात के जवाबात पेश करते हैं।

ऐतराज़ नम्बर 1 : मुस्लिम व बुख़ारी वग़ैरह ने हज़रत हफ़्स इब्ने आसिम रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि मैं हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु के साथ मक्का मुअज़्ज़मा के रास्ता में था तो आपने हमको नमाज़े ज़ुहर दो रकाअत पढ़ाईं फिर आप अपने मंज़िल पर तशरीफ़ लाए और बैठ गए तो कुछ लोगों को खड़ा हुआ देखा, फरमाया यह लोग क्या कर रहे हैं? मैंने अर्ज़ किया कि नफ़्ल पढ़ रहे हैं आपने फ़रमाया कि अगर मैं नफ़्ल पढ़ता तो नमाज़ ही पूरी पढ़ता मैं हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ रहा तो आप सफर में दो रकाअतों से ज़्याद न पढ़ते थे और मैंने हज़रत अबू बकर व उमर व उस्मान रज़ि अल्लाहु अन्हुम को ऐसे ही देखा।

इस से मालूम हुआ कि सफर में नफ़्ल व सुन्नत पढ़ना सुन्नते रसूल (अलैहिस्सलाम) व सुन्नत ख़ुलफ़ाए राशिदीन के ख़िलाफ़ है। इसलिए मुसाफिर दो रकाअत फर्ज़ पढ़े बाक़ी कुछ न पढ़े।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द जवाब हैं, एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है क्योंकि इस हदीस से यह भी साबित हुआ कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन ने सफर में कहीं दो फर्ज़ से ज़्यादा न पढ़े, और तुम कहते हो कि मुसाफिर चाहे क़स्र पढ़े या पूरी। तुमने पूरी नमाज़ पढ़ने का हुक्म इस हदीस के ख़िलाफ़ क्यों दिया?

दूसरे यह कि आपकी इस हदीस से नफ़्ल न पढ़ना साबित है और हमारी पेश करदा बहुत सी अहादीस से नफ़्ल पर पढ़ना साबित हुआ, तो आप इन बहुत सी अहादीस के मुक़ाबिल सिर्फ़ इस एक हदीस पर क्यों अमल करते हो, इन अहादीस पर क्यों अमल नहीं करते? सिर्फ़ नफ़्सानी ख़्वाहिश की वजह से कि नफ़्से अम्मारा पर नमाज़ भारी है।

तीसरे यह कि ख़ुद सैयदना अ़ब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु की वह अहादीस हम पहली फस्ल में पेश कर चुके, जिन में वह फरमाते

है कि मैंने हुज़ूर पुर नूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सफर में सवारी पर नफ़्ल पढ़ते देखा, फिर इन सुबूत की अहादीस को आपने क्यों न क़बूल किया? सिर्फ़ एक ऐसी हदीस पर ही क्यों अमल किया? क्या नमाज़ कम करने का शौक़ है?

चौथे यह कि जब सुबूत व नफ़ी में टकराव हो तो सुबूत को नफ़ी पर तरजीह होती है, जब हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु की दो रिवायतें हैं सुबूत नफ़्ल की भी और नफ़ी की भी तो सुबूत की रिवायत क़ाबिले अमल होगी न नफ़ी की। देखो हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा फरमाती हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को जिस्मानी मेअ्राज नहीं हुई, दीगर सहाबाए किराम फरमाते हैं कि हुई, आज तमाम दुनिया मेअ्राजे जिस्मानी की क़ाइल है, क्यों? इसलिए कि सुबूत नफ़ी पर मुक़द्दम है।

पाँचवें यह कि जब अहादीस में टकराव नज़र आए, तो उनके ऐसे माने किया जाएं, जिन से टकराव दूर हो जाए, जब हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु की रिवायात में टकराव है, तो तुम्हारी इस हदीस के मानी यह हैं कि नफ़्ल नमाज़ एहतमाम से पढ़ना, उनके लिए सफर तोड़ना बाक़ायदा उतर कर, ज़मीन पर खड़े हो कर पढ़ना, चलती सवारी पर नफ़्ल दुरुस्त न समझना, यह न हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से साबित है न उन ख़ुलफ़ाए राशिदीन से रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुम, चुनांचे इस हदीस के बाज़ अल्फ़ाज़ भी यही बता रहे हैं रावी फ़रमाते हैं कि आपने बाज़ लोगों को डेरे पर खड़े हुए नफ़्ल पढ़ते देख कर यह फरमाया। हालत भी सफर की थी सफर भी हज का था रास्ता बहुत था जल्द पहुँचना था उन हज़रात के इस तरीक़ा अमल से सफर में दुश्वारी होती थी। इसलिए आपने यह फरमाया। लिहाज़ा यह हदीस न तो दूसरी अहादीस के ख़िलाफ़ है, न ख़ुद हज़रत इब्ने उमर की दूसरी रिवायतों के मुख़ालिफ़ हदीस में मुक़ाबला पैदा न करो। बल्कि मुवाफ़िक़त की कोशिश करो।

छठे यह कि तुम्हारी इस हदीस में भी सफर में नफ़्ल पढ़ने की मुमानेअत नहीं। हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने सिर्फ़ क़यास फरमा कर यह फरमाया कि अगर नफ़्ल का ऐसा एहतमाम ज़रूरी होता तो नमाज़ फर्ज़ ही पूरी क्यों न पढ़ी जाती।

ऐतराज़ नम्बर 2 : जब सफर में फर्ज़ नमाज़ ही बजाए चार के दो रकाअत हो गई तो सुन्नत व नफ़्ल तो फ़र्ज़ से दरजा में कम हैं। चाहिए कि यह भी या तो बजाए चार के दो हो जाएं। या बिल्कुल माफ हो जाएं।

जवाब : अल्हम्दुलिल्लाह कि आप क़यास के क़ाइल हो गए कि सुन्नत को

फर्ज़ पर क़्यास करने लगे। लेकिन जैसे आप वैसा आपका क़्यास। बेहतर थां कि मुज्तहेदीने अइम्मा की तक़्लीद कर ली होती ताकि आपको ऐसे क़्यासात न करने पड़ते। जनाब सुन्नत व नफ़्ल को फर्ज़ पर क़्यास नहीं कर सकते। फर्ज़ नमाज़ में सिर्फ़ दो रकाअतें भरी पढ़ी जाती हैं। बाक़ी खाली मगर सुन्नत व नफ़्ल की चारों रकाअत भरी हैं फरमाइए वहाँ सुन्नत व नफ़्ल फ़र्ज़ की तरह क्यों न हुईं। वहाँ भी कह दो कि जब फर्ज़ में दो रकाअत ख़ाली हैं तो चाहिए सुन्नतें व नफ़्ल की दो दो रकाअत ख़ाली हों। जुमा की नमाज़ में फर्ज़ नमाज़ बजाए चार के दो रकाअत हो जाती हैं। मगर सुन्नतें बजाए घटने के बढ़ जाती हैं। कि बाद फर्ज़ जुमा चार सुन्नतें मुअक्किदा हैं। चाहिए कि वहाँ भी यही क़्यास करो कि जब जुमा के फर्ज़ बजाए चार के दो रह गए तो चाहिए कि जुमा के बाद की सुन्नतें बजाए चार के दो रकाअत ही रह जाएं। सुन्नत व नफ़्ल में क़स्र न होने की वजह हम पहली फ़स्ल की अक़्ली दलीलों में अर्ज़ कर चुके। कि मुसाफ़िर को सुन्नत के लिए सफर तोड़ना नहीं पड़ता सवारी पर ही पढ़ सकता है इसलिए इनमें क़स्र का सवाल ही नहीं पैदा होता।

ज़रूरी नोट : यह जो कहा गया कि नफ़्ल व सुन्नत सवारी पर पढ़ी जा सकती हैं। सवारी का रुख़ किधर ही हो। यह मुसाफिर के लिए रास्ता तय करने की हालत में है। जब कि वह जंगल में हो। शहर में, या किसी जगह ठहरने की हालत का यह हुक्म नहीं। अगर मुसाफिर किसी बस्ती में दो चार दिन के लिए ठहरा हुआ हो तो सुन्नत व नफ़्ल भी फर्ज़ की तरह तमाम शराइत व अरकान के साथ अदा करेगा। ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के नज़्दीक मुसाफिर चाहे रास्ता तय कर रहा हो या कहीं दो चार दिन के लिए ठहरा हुआ हो सुन्नत व नफ़्ल न पढ़े।

ऐतराज़ नम्बर 3 : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रहमतुल-लिल-आलमीन हैं। जब रब तआला ने सफर में अपनी फर्ज़ नमाज़ में रिआयत कर दी तो चाहिए कि हुज़ूर भी अपनी सुन्नतों में कमी कर दें। सुन्नत का इसी तरह रहना हुज़ूर की रहमत के ख़िलाफ़ है।

जवाब : जी हाँ चूंकि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रहमते आलम हैं इसलिए हुज़ूर ने अपनी सुन्नतें कम न फरमाईं नमाज़ रहमत है बोझ नहीं। शायद वहाबियों के नफ़्स पर नमाज़ बोझ होगी इसलिए उन्हें ऐसे सवालात सूझते हैं। जनाब अल्लाह के फर्ज़ मोमिन के बालिग़ होने पर लगते हैं और मरने से पहले छोड़ देते हैं मगर सुन्नते रसूलुल्लाह किसी वक़्त और किसी हालत में मोमिन का साथ नहीं छोड़ती। मोमिन सुन्नते रसूल की आग़ोश में

पैदा होता है। सुन्नत के साया में परवरिश पाता है। सुन्नत के दामन में मरता है और इंशाअल्लाह सुन्नत वाले महबूब सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पुश्त पनाही में क़यामत में उठेगा। देखो ख़त्ना, अक़ीक़ा, बच्चे के दो साल तक दूध पिलाना सुन्नत ही तो है फिर मरते वक़्त वुज़ू, काबा को रुख़ होना, मर्द का कफ़न तीन कपड़े, औरत का कफ़न पाँच कपड़े, यह सब सुन्नतें ही हैं। इसलिए हमारा नाम अह्ले फ़र्ज़ या अह्ले वाजिब नहीं बल्कि अह्ले सुन्नत है। हमारे हुज़ूर की सुन्नत रहमत है बोझ नहीं रहमत का कम न होना ही अच्छा। रब तआला मालिकुल-मुल्क है। जब चाहे जितनी चाहे रहमत दे। उसकी रहमतें यक्सां नहीं होतीं। कभी कम कभी ज़्यादा। ऐसे ही फ़र्ज़ नमाज़ मुक़ीम के लिए पूरी मुसाफ़िर के लिए आधी।

सत्तरहवाँ बाब

सफर में क़स्र वाजिब है

मसला शरई यह है कि मुसाफिर पर चार रकाअत वाली फर्ज़ नमाज़ में क़स्र फर्ज़ है। मुसाफिर यह नमाज़ पूरी नहीं पढ़ सकता। अगर भूल कर बजाए दो के चार पढ़ ले तो इसका वही हुक्म होगा जो कोई फज्र के फर्ज़ चार पढ़ ले कि अगर पहली अत्तहीयात पढ़ कर तीसरी रकाअत में खड़ा हुआ तो सज्द-ए-सह्व करे वरना नमाज़ का एआदा करे। लेकिन अगर दीदा-व-दानिस्ता बजाए दो के चार पढ़े तो न होगी। मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी कहते हैं कि मुसाफिर को इख़्तियार है चाहे क़स्र पढ़े या पूरी मुसाफिर किसी चीज़ का पाबन्द नहीं इसलिए हम इस बाब की भी दो फस्लें करते हैं। पहली फस्ल में अपने दलाइल दूसरी फस्ल में इस मसला पर सवालात व जवाबात रब तआला क़बूल फ़रमाए।

पहली फस्ल

सफर में क़स्र ज़रूरी है

सफ़र में क़स्र ज़रूरी होने पर अहनाफ के पास बहुत दलाइल हैं जिन में से कुछ पेश किए जाते हैं।

ऐतराज़ नम्बर 1 ता 4 : बुख़ारी, मुस्लिम, मोअत्ता इमाम मुहम्मद, मोअत्ता इमाम मालिक में हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा से कुछ लफ़्ज़ी फर्क के साथ रिवायत की यह लफ़्ज़ मुस्लिम व बुख़ारी के हैं।

तरजमा : फ़रमाती हैं कि अव्वलन नमाज़ दो दो रकाअतें फर्ज़ हुईं फिर हुज़ूर ने हिजरत की तो नमाज़ें चार रकाअत फर्ज़ की गईं और नमाज़े सफ़र पहले ही फरीज़ा पर रही।

इस हदीस से मालूम हुआ कि हिजरत से पहले हर नमाज़ की दो रकाअतें थीं। बाद हिजरत कुछ की चार रकाअतें कर दी गईं। मगर सफर की नमाज़ वैसे ही रही तो जैसे हिजरत से पहले अगर कोई शख़्स चार रकाअत पढ़ लेता तो उसकी नमाज़ न होती ऐसे ही अब भी जो मुसाफिर सफर में चार फर्ज़ पढ़ ले तो भी नमाज़ न होगी। लफ़्ज़ फर्ज़ और फरीज़ा को ग़ौर से मुलाहिज़ा करो।

मोअत्ता इमाम मुहम्मद व इमाम मालिक की रिवायत के अल्फाज़ यह हैं। अव्वलन सफर व हज़र में नमाज़ें दो दो रकाअतें फर्ज़ हुई थीं। फिर नमाज़े सफर तो वैसे ही रही और नमाज़े हज़र में ज़्यादती कर दी गई।

हदीस नम्बर 5 ता 7 : मुस्लिम शरीफ़, नसाई, तबरानी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि अल्लाह तआला ने तुम्हारे नबी की ज़बान शरीफ पर वतन में चार रकाअतें और सफर में दो रकाअतें ख़ौफ में एक रकाअत फर्ज़ कीं। (यानी जमाअत से एक रकाअत)

इस में साफ़ मालूम हुआ कि सफर में दो रकाअत ही फर्ज़ हैं जैसे वतन में फज्र की नमाज़।

हदीस नम्बर 8 ता 13 : मुस्लिम, बुख़ारी, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, नसाई, इब्ने माजा ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि हम हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ मदीना मुनव्वरह से मक्का मुअज़्ज़मा की तरफ गए तो हुज़ूरे अनवर दो दो रकाअतें ही पढ़ते रहे।

हदीस नम्बर 14 ता 16 : बुख़ारी, मुस्लिम, नसाई ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि मैंने मिना में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और अबू बकर व उमर रज़ि अल्लाहु अन्हुम के पीछे दो दो रकाअतें पढ़ीं और ख़िलाफ़ते उस्मानी के शुरू में भी फिर हज़रत उस्मान ने पूरी पढ़ना शुरू कर दी।

हदीस नम्बर 17 : तिबरानी ने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सफर में दो रकाअत ही फर्ज़ फरमाईं जैसे वतन में चार रकाअत फर्ज़ कीं।

हदीस नम्बर 18 ता 20 : नसाई, इब्ने माजा, इब्ने हब्बान ने हज़रत उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि सफर की नमाज़ दो रकाअतें हैं। चाश्त की नमाज़ दो रकाअतें, ईदुल-फ़ित्र की नमाज़ दो रकाअतें हैं, जुमा की नमाज़ दो रकाअतें हैं, यह दो रकाअतें पूरी हैं नाक़िस नहीं। हुज़ूर मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़बान शरीफ़ पर।

इस से साफ मालूम हुआ कि नमाज़े सफर दो रकाअत पढ़ना ऐसा ही ज़रूरी है जैसे जुमा ईदैन दो रकाअत पढ़ना।

हदीस नम्बर 21 : मुस्लिम शरीफ़ ने हज़रत उमर इब्नुल-ख़त्ताब रज़ि अल्लाहु अन्हु से कुछ लंबी हदीस नक़्ल की जिसके आख़िरी अल्फाज़े शरीफ़ा यह हैं।

तरजमा : मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से नमाज़े क़स्र के बारे में पूछा तो हुज़ूर ने फरमाया यह अल्लाह का सदक़ा है जो सदक़ा फरमाया इस सदक़ा को क़बूल करो।

इस हदीस में **फ़अक़्बेलू** सेग़ा अम्र है। अम्र वजूब के लिए आता है। मालूम हुआ कि जो शख़्स सफर में चार रकाअत पढ़े वह ख़ुदा तआला के सदक़ा से मुँह फेरता है रब का सदक़ा क़बूल करना और सफर में क़स्र करना फर्ज़ है।

हदीस नम्बर 22 : तबरानी ने मोअजमे सग़ीर में सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : मैंने सफर में हुज़ूर के पीछे दो रकाअतें पढ़ीं और अबू बकर सिद्दीक़ उमर फारूक़ के पीछे दो दो रकाअतें पढ़ीं फिर तुम लोगों को मुख़्तलिफ़ राहों ने मुतफ़र्रिक़ कर दिया। क़सम रब की मैं तमन्ना करता हूँ कि मुझे बजाए चार रकाअतों के दो मक़्बूल रकाअतों का हिस्सा मिले।

हमने बतौर नमूना सिर्फ़ बाईस हदीसें पेश कीं। वरना इसके मुतअल्लिक़ बेशुमार अहादीस हैं इन पेश करदा रिवायतों से मालूम होता है कि सफर में क़स्र ही फर्ज़ है। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम व ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन ने क़स्र ही पढ़ी चार रकाअत पढ़ने से सहाबा ने मना फरमाया। या इस पर नाराज़ी का इज़्हार किया।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी है कि सफर में क़स्र फर्ज़ है। मुसाफिर को क़स्र व इतमाम दोनों का इख़्तियार देना अक़्ले शरई के बिल्कुल ख़िलाफ़ हैं। इसलिए कि सफर में हर चार रकाअत वाली नमाज़ की पहली दो रकाअतें बिल-इत्तिफ़ाक़ फर्ज़ हैं आख़िरी दो रकाअतों के मुतअल्लिक़ सवाल होता है कि वह भी मुसाफिर पर फर्ज़ हैं या नहीं। अगर फर्ज़ हैं तो उनके न पढ़ने का इख़्तियार क्यों। फर्ज़ में इख़्तियार नहीं होता। फर्ज़ व इख़्तियार जमा

नहीं होते और अगर फर्ज़ नहीं बल्कि नफ़्ल हैं तो एक तहरीमा से फर्ज़ व नफ़्ल नमाज़ों का अदा होना शरई क़ाएदे के ख़िलाफ़ है। जिसकी मिसाल किसी जगह न मिलेगी। फर्ज़ की तक्बीर तहरीमा अलाहिदा होती है। नफ़्ल की अलाहिदा एक तहरीमा से एक ही नमाज़ हो सकती है न कि दो।

बहरहाल यह इख़्तियार कि चाहे दो रकाअत पढ़े चाहे चार शरई अक़्ल के बिल्कुल ख़िलाफ़ है। नीज़ जैसे वतन में चार रकाअत ही फर्ज़ हैं कम व बेश का इख़्तियार नहीं ऐसे ही सफर में सिर्फ़ दो रकाअतें पढ़नी चाहिएं। इख़्तियार नहीं।

दूसरा बाब

इस मसला पर ऐतराज़ात व जवाबात

इस मसला पर हम ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों की तरफ से वकालत करते हुए इतने ऐतराज़ात मअ़ जवाबात अर्ज़ किए देते हैं जो इंशाअल्लाह ख़ुद उन्हें भी याद न होंगे। रब तआला क़बूल फ़रमाए।

ऐतराज़ नम्बर 1 : रब तआला इरशाद फरमाता है।

तरजमा : और जब तुम ज़मीन में सफर करो तो तुम पर गुनाह नहीं कि कुछ नमाज़ें क़स्र से पढ़ो अगर तुम्हें अन्देशा हो कि काफिर तुम्हें तकलीफ़ देंगे।

इस आयत से मालूम हुआ कि सफ़र में क़स्र फर्ज़ नहीं। बल्कि इसकी इजाज़त है क्योंकि इरशाद बारी हुआ कि तुम पर क़स्र में गुनाह नहीं न क़स्र पढ़ने में गुनाह है न क़स्र न पढ़ने में।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द जवाब हैं। एक यह कि यह आयत ज़ाहिरी मानी से तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है। क्योंकि यहाँ क़स्र के लिए कुफ़्फ़ार के ख़ौफ़ की शर्त है कि अगर तुम्हें कुफ़्फ़ार से ख़ौफ हो तो क़स्र में गुनाह नहीं और तुम कहते हो कि अमन के सफर में भी क़स्र की इजाज़त है। अब जो तुम जवाब दोगे वही हमारा जवाब है।

दूसरे यह कि यह **ला जुनाहुन** हाजी के सफा मरवा की सई के बारे में भी इरशाद हुआ है। रब फरमाता है।

तरजमा : तो जो बैतुल्लाह का हज या उमरा करे उस पर इसमें गुनाह नहीं कि सफा व मरवा का तवाफ करे।

हालांकि सफा व मरवा का तवाफ़ हज में वाजिब है उमरा में फर्ज़ ऐसे ही सफर में क़स्र फर्ज़ है। ला जुनाहा फर्ज़ियत के ख़िलाफ़ नहीं।

तीसरे यह कि अगर सफ़र में क़स्र सिर्फ़ जायज़ होता तो कुरआने करीम यूं इरशाद फ़रमाता कि तुम पर क़स्र न करने में गुनाह नहीं। क्योंकि जायज़

की पहचान यह है कि इसके करने न करने में गुनाह नहीं वरना फ़र्ज़ काम करने में गुनाह नहीं होता। बल्कि इसके न करने में गुनाह होता है। लिहाज़ा करने में गुनाह न होना जायज़ होने की दलील नहीं। फ़र्ज़ वाजिब भी ऐसे ही होते हैं। चौथे यह कि ज़माना नबवी में सहाबा किराम को ख़्याल हुआ कि बजाए चार रकाअत के दो रकाअतें पढ़ना गुनाह होगा कि यह नमाज़ नाक़िस है उन्हें समझाने के लिए यह इरशाद हुआ लिहाज़ा आयत बिल्कुल वाज़ेह है तुम्हारे लिए मुफ़ीद नहीं।

ऐतराज़ नम्बर 2 : शरह सुन्नह में हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा से रिवायत है।

तरजमा : फ़रमाती हैं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सब कुछ किया। क़स्र भी किया और पूरी नमाज़ भी पढ़ी।

इस हदीस से मालूम हुआ कि सफर में क़स्र भी सुन्नत है और पूरी पढ़नी भी सुन्नत। सिर्फ़ क़स्र फ़र्ज़ नहीं।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द ज़वाबात हैं।

एक यह कि इसकी अस्नाद में इब्राहीम इब्ने यहिया है। जो तमाम मुहद्देसीन के नज़्दीक ज़ईफ़ हैं। लिहाज़ा यह हदीस बिल्कुल क़ाबिले अमल नहीं, देखो मिरक़ात शरह मिशक़ात इसी हदीस की शरह।

दूसरे यह कि यह हदीस उन तमाम अहादीस के मुख़ालिफ़ है जो हम पहली फस्ल में अर्ज़ कर चुके कि जलीलुल-क़द्र सहाबा फरमाते हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने हमेशा सफर में दो रकाअतें पढ़ीं।

तीसरे यह कि यह हदीस ख़ुद उम्मुल-मोमिनीन आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा की इस रिवायत के भी ख़िलाफ़ है जो हमने पहली फस्ल में पेश की। आप फरमाती हैं कि अव्वलन नमाज़ दो दो रकाअत फ़र्ज़ हुई, फिर सफर में दो ही दो रकाअतें फ़र्ज़ रहीं वतन में बाज़ नमाज़ों में ज़्यादती कर दी गई। यह कैसे हो सकता है कि सफर में दो रकाअतें फ़र्ज़ भी हों, और कभी हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने चार रकाअत भी पढ़ ली हों लिहाज़ा यह हदीस वाजिबुत्तावील है।

चौथे यह कि इस हदीस में लफ़्ज़े सफर नहीं, यानी आपने यह न फ़रमाया कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने सफर में क़स्र व इतमाम फरमाया, लिहाज़ा हदीस के मानी यह हैं कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने शुरू इस्लाम में अव्वलन क़स्र यानी हर नमाज़ दो दो रकाअत पढ़ी। फिर जब रकाअतें बढ़ा दी गईं कि कुछ चार रकाअत कर दी गईं और बाज़ तीन, तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने इतमाम फ़रमाया। यानी दो से ज़्यादा पढ़ीं। इस

सूरत में यह हदीस बिल्कुल वाज़ेह भी हो गई, और गुज़िश्ता अहादीस के ख़िलाफ़ भी न रही।

पाँचवीं यह कि अगर यहाँ हालते सफर में क़स्र व इतमाम मुराद हो तब भी मतलब यह होगा कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने बहालते सफर क़स्र पढ़ी, और जब कहीं पन्द्रह दिन ठहरने की नीयत फरमा ली तो इतमाम फ़रमाया, अब भी हदीस बिल्कुल वाज़ेह है।

लतीफ़ा अजीबा : ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी हमेशा हन्फ़ियों से मुस्लिम बुख़ारी की हदीस का मुतालबा किया करते हैं। मगर जब उन्हें ख़ुद पेश करना पड़े तो बुख़ारी मुस्लिम की हो या न हो, सहीह हो या ज़ईफ़ हर क़िस्म की हदीस पेश कर देने से शर्म नहीं करते।

यह हदीस ऐसी ज़ईफ़ है कि इसे सिहाहे सित्ता ने रिवायत न किया, इमाम तिर्मिज़ी ने भी इस हदीस का ज़िक्र न किया, बल्कि वह यह कहने पर मज्बूर हुए कि क़स्र तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और हज़रात खुलफ़ा-ए-राशिदीन से साबित है, इतमाम सिर्फ़ आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा का अपना फ़ेअल है, चुनांचे इमाम तिर्मिज़ी क़स्र नमाज़ के बाब में इरशाद फरमाते हैं।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सहीह हदीस यही साबित है कि आप हमेशा सफर में क़स्र करते थे और अबू बकर सिद्दीक़ भी उमर फारूक़ भी हज़रत उस्मान भी अपनी शुरू ख़िलाफ़त में और इसी पर अक्सर उलमा सहाबा व ग़ैर सहाबा का अमल है।

और सफर में इतमाम के मुतअल्लिक़ इमाम तिर्मिज़ी निहायत ज़ईफ़ तरीक़े से फरमाते हैं।

तरजमा : हाँ आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा से रिवायत है आप सफ़र में इतमाम फरमाती थीं।

अगर हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा की वह मरफ़ूअ हदीस क़ाबिले ऐतबार होती जो तुमने पेश की, तो इमाम तिर्मिज़ी हदीस मरफ़ूअ को छोड़ कर सिर्फ़ आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा के अमल शरीफ का ज़िक्र न फरमाते।

पुर लुत्फ़ बात वह है जो आगे फरमाते हैं।

तरजमा : अमल इस पर है जो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आप के सहाबा से मरवी है यानी (क़स्र)

इमाम तिर्मिज़ी के इस फरमान से मालूम होता है कि हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा भी क़स्र व इतमाम दोनों का इख़्तियार

न देती थीं, बल्कि आप हमेशा सफर में इतमाम फरमाती थीं अहले इल्म ने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के फ़ेअ्ल शरीफ़ पर अमल किया यानी हमेशा क़स्र पढ़ना।

ऐतराज़ नम्बर 3 : नसाई व दार क़ुतनी और बैहक़ी ने हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा से रिवायत की।

तरजमा : फरमाती हैं कि मैं हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ रमज़ान के उमरा में गई, तो आपने रोज़ा न रखा मैंने रखा, आपने नमाज़े क़स्र पढ़ी, मैंने पूरी पढ़ी यानी इतमाम किया, तो मैंने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह आपने क़स्र किया, मैंने पूरी पढ़ी, आपने इफ़्तार किया मैंने रोज़ा रखा फ़रमाया ऐ आइशा तुम ने अच्छा किया मुझ पर ऐतराज़ न किया।

इस हदीस से मालूम हुआ कि सफर में क़स्र भी जाइज़ है और इतमाम भी।

जवाब : यह हदीस ज़ईफ़ ही नहीं बल्कि महज़ ग़लत और बनावटी है, क्योंकि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कोई उमरा रमज़ान में न किया, हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने कुल चार उमरे किए हैं। जो सब के सब ज़ी क़अ्दा में थे। अल्बत्ता हुज्जतुल-विदाअ के उमरा का एहराम तो ज़ी क़अ्दा में था। और अफ़्आल उमरा ज़िल-हिज्जा में अदा हुए। खुसूसन हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा का रमज़ान के उमरा में हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के साथ होना ऐसा अजीब और पेचीदा मसला है जिसे वहाबी साहिबान ही हल फरमा सकते हैं। वहाबियो! पहले अपनी बात अक़्ल की तराज़ू में तौलो, बाद को बोलो।

ऐतराज़ नम्बर 4 : मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मिना में दो रकाअतें पढ़ीं अबू बकर सिद्दीक़ ने उनके बाद उमर फ़ारूक़ ने और उस्मान ग़नी ने अपनी शुरू ख़िलाफ़त में फिर हज़रत उस्मान ने चार रकाअतें मिना में पढ़ीं हज़रत इब्ने उमर जब इमाम के साथ पढ़ते तो चार पढ़ते जब अकेले पढ़ते तो दो पढ़ते थे।

अगर सफर में क़स्र फर्ज़ और इतमाम नाजाइज़ होता, तो हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु मिना शरीफ़ में इतमाम क्यों करते?

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं।

एक यह कि यह हदीस आपके बिल्कुल ख़िलाफ़ है। आपने तो मुसाफ़िर को क़स्र व इतमाम का इख़्तियार दिया है कि चाहे क़स्र करे, चाहे पूरी पढ़े,

मगर इस हदीस से मालूम हुआ कि हुज़ूरे अनवर ने और हज़रत सिद्दीक़ व फ़ारूक़ रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा ने हमेशा क़स्र पढ़ी हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने अपनी शुरू ख़िलाफ़त में जब क़स्र पढ़ी तो इतमाम न किया, फिर जब पूरी पढ़ने लगे तो कभी क़स्र न पढ़ी, इख़्तियार किसी बुज़ुर्ग ने न दिया, आपका यह इख़्तियार कहाँ से साबित है?

दूसरे यह कि हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने सिर्फ़ मिना शरीफ़ में इतमाम किया आम सफरों में नहीं। मालूम हुआ कि हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु भी सफर में इतमाम के क़ाइन न थे, किसी वजहे ख़ास से सिर्फ़ मिना शरीफ़ में इतमाम फरमाते थे।

तीसरे यह कि हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का मिना में इतमाम फरमाना इसलिए न था कि आप क़स्र व इतमाम दोनों जाइज़ मानते थे। बल्कि इसकी वजह कुछ और थी क्या वजह थी इसके मुतअल्लिक़ दो रिवयतें हैं। इमाम अहमद इब्ने हंबल ने रिवायत की, कि जब हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने मिना में चार रकाअत पढ़ीं तो लोगों ने इसका इंकार किया तो आपने इरशाद फरमाया कि मैं मक्का मुअज़्ज़मा में अह्ल वाला हो गया हूँ, और मैंने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को फरमाते सुना है कि जो कोई किसी शहर में घर वाला हो जाए, वह वहाँ मुक़ीम की नमाज़ पढ़े चुनांचे मुस्नद इमाम अहमद की हदीस के आख़िरी अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : हज़रत उस्मान ने मिना शरीफ़ में चार रकाअत पढ़ीं तो लोगों ने आप पर ऐतराज़ किया तो आपने फरमाया कि जब से मैं मक्का मुअज़्ज़मा में आया, मैं घर वाला हो गया हूँ।

इस रिवायत से तीन मसले मालूम हुए, एक यह कि हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने सिर्फ़ मिना में चार रकाअतें पढ़ीं, हर सफर में नहीं। दूसरे यह कि आम सहाबा ने आपके इस फ़ेअ्ल पर ऐतराज़ किया जिस से पता लगा कि तमाम सहाबा हमेशा सफर में क़स्र ही करते थे, इतमाम कभी न करते थे, वरना आप पर ऐतराज़ न करते। तीसरे यह कि हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने मक्का मुअज़्ज़मा में ज़मीन ख़रीद ली, वहाँ मकान बनवा लिया वहाँ अपनी बीवी को रखा, इसलिए मक्का मुअज़्ज़मा आपका एक क़िस्म का वतन बन गया, और अपने वतन अगर कोई एक दिन के लिए भी जाए तो मुक़ीम होगा, और क़स्र न पढ़ेगा, पूरी नमाज़ पढ़ेगा, लिहाज़ा हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का यह अमल वहाबियों के इस मसला इख़्तियार से कोसो दूर है।

दूसरी रिवायत यह है कि ज़मान-ए-उसमानी के नौ मुस्लिम लोगों ने हज में हज़रत उस्मान रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु को दो रकाअत पढ़ते हुए देख कर समझा, कि इस्लाम में नमाज़ें दो दो रकाअतें ही फ़र्ज़ हैं। जब हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु अन्हु को इस ग़लत फ़हमी का इल्म हुआ तो आपने इस ग़लत फ़हमी को दूर करने के लिए सिर्फ़ मिना में इतमाम किया, यानी चार रकाअतें पढ़ीं, चुनांचे अब्दुर्रज़्ज़ाक़ और दार कुतनी ने इब्ने जुरैह से रिवायत की।

तरजमा : मुझे यह ख़बर पहुँची है कि हज़रत उस्मान रज़ि अल्लाहु अन्हु ने सिर्फ़ मिना ही में चार रकाअतें पढ़ीं क्योंकि एक देहाती ने मस्जिदे ख़फ़ीफ़ में आपको पुकार कर कहा कि मैं तो बराबर दो रकाअतें ही पढ़ रहा हूँ जब से कि साले गुज़िश्ता मैंने आपको दो रकाअतें पढ़ते देखा तो उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु अन्हु को ख़तरा पैदा हुआ कि जुहला नमाज़ की दो रकाअतें ही समझ लेंगे इसलिए आपने मिना में चार रकाअतें पढ़ीं।

इमाम अहमद और अब्दुर्रज़्ज़ाक़ की यह दोनों रिवायतें इस तरह जमा की जा सकती हैं कि जब हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु को लोगों की इस ग़लत फ़हमी का इल्म हुआ, तो आपने मक्का मुअज़्ज़मा में भी अपना घर बार बना लिया ताकि आप यहाँ आ कर मुक़ीम हुआ करें और नमाज़ पूरी पढ़ा करें।

लिहाज़ा हज़रत उसमान रज़ि अल्लाहु अन्हु के इस फ़ेअल शरीफ़ से वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिद किसी तरह दलील नहीं पकड़ सकते।

ऐतराज़ नम्बर 5 : जैसे शरीअत ने मुसाफिर को रोज़ा का इख़्तियार दिया है कि रोज़ा रखे या न रखे मुसाफिर पर सफर में न रोज़ा रखना फर्ज़ है न क़ज़ा करना फर्ज़ ऐसे ही चाहिए कि मुसाफिर को सफर में नमाज़ का इख़्तियार हो, कि चाहे क़स्र करे चाहे पूरी पढ़े, इस पर क़स्र लाज़िम कर देना रोज़े के इख़्तियार के ख़िलाफ़ है?

जवाब : शुक्र है कि आप भी क़यास के क़ाइल हो गए, कि नमाज़ के क़स्र को रोज़े की क़ज़ा पर क़यास करने लगे, मुक़ल्लिद हनफ़ी क़यास को मानें तो तुम्हारे नज़्दीक मुश्रिक हो जाएं और आप क़यास करें तो पुख़्ता तौहीदिए रहें, अफसोस।

जनाब रोज़ा सफर में माफ़ नहीं हुआ, बल्कि मुसाफिर को रोज़ा क़ज़ा कर देने की इज़ाज़त मिली है, अगर सफर में रखे तो पूरा, अगर क़ज़ा करे तो पूरे की, लेकिन फ़र्ज़ नमाज़ सफर में आधी माफ़ हो गई है, कि चार रकाअत वाली नमाज़ की सिर्फ़ दो रकाअत बाक़ी रह गईं, बाक़ी दो रकाअतें

न अब पढ़िए न वतन पहुँच कर, माफ़ी और चीज़ है ताख़ीर की इजाज़त कुछ और। लिहाज़ा नमाज़ के क़स्र को रोज़े की ताख़ीर पर क़्यास करना मअ़ल फ़ारक़ है। मुसाफिर पर रोज़ा माफ़ न हुआ वरना इसकी क़ज़ा वाजिब न होती, इस पर रोज़ा फर्ज़ है।

मगर यह दो रकाअतें उसे माफ़ हैं, इसी लिए उनकी क़ज़ा नहीं लिहाज़ा यह रकाअतें उसके लिए नफ़्ल हैं और नफ़्ल नमाज़ फर्ज़ के तहरीमा से अदा होना ख़िलाफ़े क़ायदा शरईया है।

मसला : मुसाफिर पर फर्ज़ है कि वतन में पहुँचते ही सफर के रहे हुए रोज़ों की क़ज़ा शुरू कर दे। अगर सफर में आठ रोज़े क़ज़ा हो गए, फिर वतन पहुँच कर चार दिन बाद फौत हो गया, तो क़्यामत में उन चार रोज़ों की पकड़ होगी, बाक़ी चार रोज़ों पर पकड़ नहीं कि उनके क़ज़ा करने का वक़्त ही न पाया। यही बीमार और हाइज़ा औरत का हुक्म है कि शिफ़ा पाते ही रोज़ों की क़ज़ा शुरू कर दें।

अट्ठारहवाँ बाब

नमाज़े फज्र उजियाले में पढ़ो

हन्फ़ियों के नज़्दीक बेहतर यह है कि नमाज़े फज्र ख़ूब उजियाले में पढ़ी जाए जब सूरज तुलूअ होने में आध घन्टा बाक़ी हो, तो जमाअत खड़ी हो, मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के नज़्दीक नमाज़े फज्र बिल्कुल अव्वल वक़्त यानी बहुत अंधेरे में पढ़ना चाहिए, इसलिए इस बाब की भी दो फस्लें करते हैं पहली फस्ल में इसका सुबूत दूसरी फस्ल में इस पर सवालात मअ़ जवाबात।

ज़रूरी नोट : ख़्याल रहे कि मज़्हबे हन्फी में दो नमाज़ों यानी नमाज़े मग़्रिब और मौसमे सरमा की ज़ुहर के सिवा तमाम नमाज़ें कुछ देर से पढ़ना अफ़्ज़ल हैं। नमाज़े मग़्रिब में जल्दी करना मुस्तहब है, ऐसे ही सर्दी के मौसम में नमाज़े ज़ुहर में। अगर हम को इस किताब के तवील हो जाने का अन्देशा न होता तो हम हर नमाज़ की ताख़ीर पर दलाइल क़ाइम करते। सिर्फ़ नमाज़े फज्र की ताख़ीर पर मुकम्मल बहस करते हैं ताकि नाज़िरीन ग़ौर करें कि मज़हबे हन्फ़ी कितना पुख़्ता और मुदल्लल है।

पहली फस्ल

नमाज़े फज्र में उजियाला बाइसे सवाब है

हर ज़माना और हर मौसम में मुस्तहब यह है, कि नमाज़े फज्र ख़ूब रौशनी हो जाने पर पढ़ी जाए। अल्बत्ता दसवीं ज़िल-हिज्जा को हाजी लोग

मुज़्दलफ़ा में फज्र अंधेरे में पढ़ें इस पर बहुत अहादीस शाहिद हैं, जिन में से बतौर नमूना कुछ पेश की जाती हैं।

हदीस नम्बर 1 ता 8 : तिर्मिज़ी, अबू दाऊद, नसाई, इब्ने माजा, बैहक़ी, इब्ने हब्बान, अबू दाऊद त्यालसी व तबरानी ने कुछ फ़र्क़ से हज़रत हज़रत राफ़े इब्ने ख़दीज रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : वह फ़रमाते हैं कि फ़रमाया नबी सल्लल्लाहु तआला लैहि व सल्लम ने कि नमाज़े फज्र ख़ूब उजियाला करके पढ़ो कि उसका सवाब ज़्यादा है तिर्मिज़ी ने फरमाया कि यह हदीस सही है।

ख़्याल रहे कि इस हदीस में उजियाला करने से मुराद ख़ूब उजियाला करना है। जबकि रौशनी फैल जाए यह मतलब नहीं कि फज्र यक़ीनन हो जाए क्योंकि इसके लिए बग़ैर तो नमाज़ होती ही नहीं जिस उजियाले से सवाब ज़्यादा होता है वह यही रौशनी है जो हम ने अर्ज़ की।

हदीस नम्बर 9 ता 10 : बुख़ारी व मुस्लिम ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को कभी न देखा कि आपने कोई नमाज़ ग़ैर वक़्त में पढ़ी जो सिवा मुज़्दलफ़ा के कि वहाँ हुज़ूर ने मग़रिब व इशा जमा फरमाई और उसकी सुबह नमाज़ फज्र अपने वक़्त से पहले पढ़ी।

इस से मालूम हुआ कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हमेशा फज्र की नमाज़ ख़ूब रौशनी में पढ़ते थे। मगर मुज़्दलफ़ा में दसवीं ज़िल-हिज्जा को अंधेरे में यानी वक़्ते मोअ़ताद से पहले अगर हुज़ूर हमेशा ही अव्वले वक़्त फज्र पढ़ते होते तो मुज़्दलेफ़ा में पहले पढ़ने के क्या मानी। क्योंकि इससे पहले तो फज्र का वक़्त होता ही नहीं।

ख़्याल रहे कि मुज़्दलफ़ा में कोई नमाज़ अपने वक़्त से पहले नहीं होती हाँ नमाज़ मग़रिब इशा के वक़्त में अदा होती है और नमाज़े फज्र अपने वक़्त में उस पर सारी उम्मत का इत्तिफ़ाक़ है और इस हदीस के यह मानी नहीं कि हुज़ूर ने नमाज़ फज्र वक़्त से पहले यानी रात में पढ़ी बल्कि रोज़ाना के वक़्त माहूद से पहले इस मानी पर हदीस बिल्कुल वाज़ेह है।

हदीस नम्बर 1 ता 14 : अबू दाऊद, त्यालसी, इब्ने अबी शैबा, इसहाक़ इब्ने राहवैह, तबरानी ने मोअ़जम में हज़रत राफ़े इब्ने ख़दीज से रिवायत की।

फरमाते हैं कि हुक्म दिया हुज़ूर ने हज़रत बिलाल को फ़रमाया ऐ बिलाल नमाज़ सुबह में उजियाला कर लिया करो यहाँ तक कि लोग उजियाले की वजह से अपने फेंके हुए तीर गिरने की जगह देख लिया करें।

इस हदीस से मालूम हुआ कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम

ने नमाज़े फज्र ऐसे वक़्त पढ़ने का हुक्म दिया। जब कि तीर अंदाज़ अपने तीर गिरने की जगह का मुशाहिदा कर सके और यह जब भी हो सकता है जब ख़ूब रौशनी फैल जाए।

हदीस नम्बर 15: दैलमी ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

फ़रमाते हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जो नमाज़े फज्र रौशनी में पढ़े अल्लाह तआला उसकी क़ब्र और उसके दिल में रौशनी करे एक रिवायत में है कि उसकी नमाज़ में रौशनी करे।

हदीस नम्बर 16 ता 17 : बतरानी ने औसत में और बज़्ज़ार ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि फरमाया रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मेरी उम्मत दीने फितरत पर रहेगी जब तक कि नमाज़े फज्र उजियाले में पढ़े।

हदीस नम्बर 18 ता 23 : तहावी, बुख़ारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, नसाई, इब्ने माजा ने थोड़े फर्क़ से हज़रत यसार इब्ने सलामा से रिवायत की।

तरजमा : मैं अपने वालिद के साथ हज़रत अबू बरज़ा सहाबी के पास गया। मेरे वालिद उन से हुज़ूर की नमाज़ के मुतअल्लिक़ पूछते थे। तो उन्होंने फ़रमाया कि हुज़ूर नमाज़े सुबह से उस वक़्त फ़ारिग़ होते थे जब हर शख़्स अपने साथी का चेहरा पहचान लेता था, हालांकि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम साठ से सौ आयतों तक पढ़ते थे।

हदीस नम्बर 24 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत अब्दुर्रहमान इब्ने यज़ीद से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि हम अब्दुल्लाह इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु के साथ फज्र की नमाज़ पढ़ते थे आप ख़ूब उजियाले में नमाज़ पढ़ते थे।

हदीस नम्बर 25 : बैहक़ी ने सुनने कुबरा में अबू उसमान नहदी से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि मैंने हज़रत उमर के पीछे नमाज़े फज्र पढ़ी तो आपने न सलाम फेरा यहाँ तक कि अक़्ल वाले लोगों ने समझा कि सूरज निकल आया जब आपने सलाम फेरा तो लोगों ने अर्ज़ किया कि ऐ अमीरुल-मुमिनीन सूरज निकलने ही वाला है आपने कुछ फरमाया जो मैं न समझ सका। मैंने लोगों से पूछा कि हज़रत उमर ने क्या फरमाया लोगों ने बताया कि यह फ़रमाया अगर सूरज निकल आता तो हम को ग़ाफ़िल न पाता।

हदीस नम्बर 26 : बैहक़ी ने सुनने कुबरा में हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि हम को अबू बकर सिद्दीक़ ने नमाज़े फज्र पढ़ाई इसमें सूरः आल इमरान पढ़ी लोगों ने कहा कि सूरज निकलने के क़रीब है आपने फरमाया कि अगर निकल आता तो हम को ग़ाफिल न पाता।

हदीस नम्बर 27, 28 : तहावी और मुल्ला खुसरू मुहद्दिस ने अपनी सनद में इमाम आज़म अबू हनीफ़ा से उन्होंने हम्माद से उन्होंने इब्राहीम नख़ई से रिवायत की।

फरमाते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सहाबा किसी मसला पर ऐसे मुत्तफ़िक़ न हुए जैसे नमाज़े फज्र की रौशनी और नमाज़े मग़रिब की जल्दी पर मुत्तफ़िक़ हुए इमाम तहावी फरमाते हैं कि यह नामुम्किन है कि सहाबाए किराम हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ख़िलाफ़ अमल पर मुत्तफ़िक़ हो जाएं।

इन अहादीस से मालूम हुआ कि हज़रत अबू बकर सिद्दीक़ व उमर फारूक़ ख़ूब उजियाले में नमाज़े फज्र पढ़ते थे, हत्ता कि लोगों को सूरज निकल आने का शुबह हो जाता था। और सहाबा किराम का मुत्तफ़ेक़ा अमल उस पर था कि नमाज़े फज्र ख़ूब रौशनी में पढ़ी जाए।

हदीस नम्बर 29 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत अली इब्ने रबीआ से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं मैंने हज़रत अली मुर्तज़ा को फरमाते हुए सुना कि फरमाते थे ऐ क़ंबर उजियाला करो उजियाला करो।

मालूम हुआ कि हज़रत अली रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ख़ूब उजियाले में नमाज़े फज्र पढ़ते थे जैसा कि अस्फ़िर दो बार फरमाने से मालूम होता है।

हम ने यहाँ यह उन्तीस हदीसें बतौर नमूना पेश कीं। अगर ज्यादा तहक़ीक़ मक़्सूद हो तो तहावी शरीफ़ और सहीहुल-बिहारी शरीफ़ का मुताला फ़रमाओ। बहरहाल पता लगा कि उजियाले में फज्र पढ़ना सुन्नते रसूलुल्लाह सुन्नते सहाबा और सहाबा किराम का इत्तिफ़ाक़ी अमल है।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यह है कि फज्र की नमाज़ उजियाले में पढ़ी जाए चन्द वजह से। एक यह कि फज्र के लुग़वी मानी हैं उजियाला और रौशनी। लिहाज़ा नमाज़े फज्र उजियाले में पढ़ने से काम नाम के मुताबिक़ होगा और अंधेरे में पढ़ना, नाम के मुख़ालिफ़ है। दूसरे यह कि उजियाले में नमाज़ पढ़ना ज़्यादती जमाअत का जरिया है। क्योंकि अक्सर मुसलमान सुब्ह को

देर से उठते हैं। अगर जल्दी भी उठें तो उस वक़्त इस्तिन्जा बाज़ को गुस्ल वुज़ू करना, सुन्नतें पढ़ना होता है बाज़ लोग इस वक़्त सुन्नतों के बाद इस्तिग़फार और कुछ आमाल अफ़्कार अज़्कार करते हैं। अव्वल वक़्त फज्र की जमाअत कर लेने में बहुत से लोग जमाअत से या तक्बीरें ऊला से रह जाते हैं उजियाले में पढ़ने से तमाम नमाज़ी बख़ूबी जमाअत की तक्बीरे ऊला में शिरकत कर सकते हैं। देखो नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत मआज़ को दराज़े क़िराअत से इसलिए मना फरमा दिया था कि उनके मुक़्तदियों पा बार होती थी। जिस चीज़ से जमाअत घट जाए उस पर परहेज़ करना बेहतर है। जो जमाअत की ज़्यादती का सबब हो तो वह बेहतर है अंधेरा जमाअत की कमी का सबब है। अस्फ़ार जमाअत की ज़्यादती और मुसलमानों की आसानी का ज़रिया लिहाज़ा अस्फार बेहतर है। तीसरे यह कि अंधेरे में मुसलमानों को मस्जिद में आना दुशवार होगा उजियाले में आसान चुनांचे हज़रत उमर को जब अंधेरे में ऐने नमाज़ की हालत में शहीद किया गया तो सहाबाए किराम ने फ़ज्र में बहुत उजियाला करने का एहतिमाम किया देखो तहावी शरीफ़ सहीहुल-बिहारी और इब्ने माजा वग़ैरह।

चौथे यह कि नमाज़े फज्र को चन्द उमूर में नमाज़े मग़्रिब से मुनासिबत है। मग़्रिब रात की पहली नमाज़ है। फज्र दिन की पहली नमाज़ मग़्रिब कारोबार बन्द होने का वक़्त है। फज्र कारोबार खुलने का वक़्त मग़्रिब नींद का फज्र बेदारी का पेश खेमा है। हमेशा वक़्ते फज्र वक़्ते मग़्रिब के बराबर होता है यानी जिस ज़माना में जितना वक़्त मग़्रिब का होगा उतना ही फ़ज्र का जब नमाज़े फज्र नमाज़े मग़्रिब के मुनासिब हुई तो जैसे नमाज़े मग़्रिब उजियाले में पढ़ना अफ़्ज़ल है। ऐसे ही नमाज़े फज्र उजियाले में पढ़ना बेहतर है।

दूसरी फ़स्ल

इस पर ऐतराज़ात व जवाबात

ताख़ीरे फज्र पर अब तक वहाबियों ग़ैर मुक़ल्लिदों की तरफ से जिस क़द्र ऐतराज़ात हम को मालूम हो सके वह हम तफ़्सील वार मअ़ जवाब अर्ज़ करते हैं। अगर बाद में और कोई ऐतराज़ मालूम हो तो इंशाअल्लाह दूसरे ऐडीशन में इसका जवाब भी दिया जाएगा।

ऐतराज़ नम्बर 1 : तिर्मिज़ी शरीफ़ में हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है।

तरजमा : कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन से फरमाया ऐ अली! तीन चीज़ों में देर न लगाओ। नमाज़ जब उसका वक़्त आ जाए,

जनाज़ा जब हाज़िर हो, लड़की का निकाह जब उसके लिए कुफ़्व मिल जाए।

और इसी तिर्मिज़ी में सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर से रिवायत है।

तरजमा : फरमाते हैं कि फरमाया हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि नमाज़ का अव्वल वक़्त रब की रज़ा व ख़ुशनूदी है और नमाज़ का आख़िर वक़्त अल्लाह तआला की माफी है।

इन हदीसों से मालूम हुआ कि हर नमाज़ अव्वल वक़्त पढ़नी चाहिए हन्फी लोग फज्र देर में पढ़ कर रब तआला की रज़ा मन्दी से महरूम हैं।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द जवाब हैं एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है क्योंकि तुम भी नमाज़ इशा और गर्मियों की ज़ुहर में ताख़ीर मुस्तहब व बेहतर जानते हो–तुम भी ख़ुदा की ख़ुशनूदी से महरूम हो जो तुम्हारा जवाब है वही हमारा।

दूसरे यह कि इन हदीसों में अव्वल वक़्त से वक़्ते मुस्तहब का अव्वल मुराद है न कि मुतलक़ वक़्त का। अव्वल यानी जब नमाज़ का मुस्तहब वक़्त शुरू हो जाए तब देर न लगाओ। नमाज़े फज्र में रौशनी ही अव्वले वक़्त है जैसे नमाज़े इशा के लिए तिहाई रात अव्वल वक़्त है।

ऐतराज़ नम्बर 2 : मुस्लिम बुख़ारी और तमाम मुहद्देसीन ने रिवायत की कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हमेशा नमाज़े फज्र ग़लस यानी अंधेरे में पढ़ते थे। लिहाज़ा हन्फियों का देर से फज्र पढ़ना सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

जवाब : इस ऐतराज़ के भी दो जवाब हैं। एक यह कि ग़लस के मानी हैं अंधेरा ख़्वाह वक़्त के ऐतबार से अंधेरा हो या मस्जिद का अंधेरा हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़े फज्र रौशनी में ही पढ़ते थे।

मगर मस्जिद में अंधेरा होता था। क्योंकि मस्जिदे नब्वी शरीफ़ बहुत गहरी बनी हुई थी। छत में रौशन-दान वग़ैरा न थे अब भी अगर मस्जिदे नब्वी में रौशन दान न हों तो अन्दर बहुत अंधेरा रहे क्योंकि बहुत गहरी बनी हुई है। सहन दूर है। इस सूरत में यह हदीस उन अहादीस के ख़िलाफ़ नहीं जो हम पहली फस्ल में पेश कर चुके। दूसरा यह कि अगर ग़लस से सुबह का अंधेरा ही मुराद हो तो यह हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़ेअल शरीफ है और क़ौल शरीफ़ वह है जो हम पहली फस्ल में बता चुके यानी हुज़ूर ने अंधेरे में फज्र पढ़ी। मगर हम को उजियाले में पढ़ने का हुक्म दिया। और जब हदीस क़ौली व फ़ेअ्ली में टकराव मालूम हो तो हदीस क़ौली को तरजीह होती है क्योंकि फ़ेअली हदीस में ख़ुसूसियत का एहतमाल है। देखो

सरकार ने खुद नौ बीवियाँ निकाह में रखीं मगर हम को चार बीवियों की इजाज़त दी। हम हुक्म पर अमल करके चार चार बीवियाँ रख सकते हैं आपके फ़ेअल पर न करेंगे यह क़ायदा याद रखना चाहिए कि क़ौल अमल पर बेहतर है।

तीसरे यह कि हम पहली फस्ल में अर्ज़ कर चुके कि आम सहाबाए किराम उजियाले में फज्र पढ़ते थे हालांकि उन्होंने हुज़ूर का यह अमल शरीफ देखा था मालूम हुआ कि हदीस क़ौली को तरजीह दे कर उस पर अमल करते थे दूसरी हदीस को लाइक़े अमल न समझते थे।

चौथे यह कि नमाज़े फज्र का अंधेरे में होना क़यासे शरई के ख़िलाफ़ है। उजियाले में होना क़यास के मुताबिक़ लिहाज़ा उजियाले वाली हदीस को तरजीह होगी। क्योंकि जब अहादीस में तआरुज हो तो उस हदीस को तरजीह होती हे जो मुताबिक़े क़यास हो।

देखो एक हदीस में है। **अल-वुज़ूओ मिम्मा मस्सत्हुन्नारु** आग की पकी चीज़ खाने से वुज़ू वाजिब हो जाता है। दूसरी हदीस में है कि हुज़ूर ने खाना खा कर नमाज़ पढ़ ली। वुज़ू न किया पहली हदीस ख़िलाफ़े क़यास है दूसरी मुताबिक़े क़यास, लिहाज़ा दूसरी हदीस को तरजीह हुई। पहली हदीस की तावील की गई कि वहाँ वुज़ू से मुराद खाना खा कर हाथ धोना कुल्ली करना है ऐसे ही यहाँ तावील की जाए कि ग़लस से मुराद मस्जिद का अंधेरा है न कि वक़्त का, बहरहाल तरजीह रौशनी की हदीस को है।

हमारा ऐलान : है कि कोई वहाबी साहब ऐसी मरफ़ूअ़ हदीस पेश करें जिस में फज्र अंधेरे में पढ़ने का हुक्म दिया गया हो जैसे हमने उजियाले में फज्र पढ़ने की एक दो नहीं बहुत अहादीस पेश कर दीं जिनमें उनका हुक्म दिया गया है।

पाँचवें यह कि अंधेरे की तमाम अहादीस ब्यान जवाज़ के लिए हैं और उजियाले की तमाम अहादीस ब्यान इस्तेहबाब के लिए, लिहाज़ा दोनों हदीसें मुवाफ़िक़ हैं मुख़ालिफ़ नहीं यानी अंधेरे में फज्र पढ़ना जाइज़ है, क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने उस पर अमल फरमाया और उजियाले में फज्र पढ़ना मुस्तहब है, क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने इसका हुक्म दिया।

ऐतराज़ नम्बर 3 : मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत उम्मुल-मोमिनीन आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाती हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम नमाज़े सुब्ह से ऐसे वक़्त फ़ारिग़ होते थे कि औरतें अपनी चादरों में लिपटी हुई मस्जिद से वापस होतीं और अंधेरे की वजह से पहचानी न जाती थीं।

मालूम हुआ कि नमाज़े फज्र इतनी जल्दी शुरू करना सुन्नत है कि जब साठ या सौ आयतें पढ़ कर नमाज़ से फ़ारिग़ हो तो कोई नमाज़ी अंधेरे की वजह से पहचाना न जा सके, हनफ़ी इतना उजियाला करके फज्र पढ़ते हैं कि शुरू नमाज़ के वक़्त ही लोग पहचाने जाते हैं उनका यह अमल सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

जवाब : इसके जवाबात ऐतराज़ात नम्बर 2 के जवाब में गुज़र चुके कि या तो यह मस्जिद का अंधेरा होता था न कि वक़्त का, या इस अमल शरीफ़ पर हुज़ूर अलैहिस्सलाम के फरमान और हुक्म को तरजीह है वग़ैरह। यहाँ एक जवाब और भी हो सकता है, वह यह कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के ज़माना शरीफ़ में औरतों को जमाअत नमांज़ में हाज़िरी का हुक्म था, उनके लिहाज़ से नमाज़े फज्र जल्दी पढ़ी जाती थी, कि वह बीवियाँ पर्दा से घर चली जाएं, फिर अह्दे फ़ारूक़ी में औरतों को मस्जिद से रोक दिया गया, तो यह रिआयत भी ख़त्म हो गई, औरतों को जमाअत से रोकने की पूरी तहकीक़ और इसकी वजह हमारी किताब इस्लामी ज़िन्दगी में मुलाहिज़ा करो।

ऐतराज़ नम्बर 4 : तिर्मिज़ी शरीफ़ ने उम्मुल-मुमिनीन हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा से रिवायत की।

तरजमा : फरमाती हैं कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दो दफ़ा भी कोई नमाज़ आख़िर वक़्त में न पढ़ी यहाँ तक कि रब ने आपको वफ़ात दी।

इस से मालूम हुआ कि तमाम नमाज़ें ख़ुसूसन नमाज़े फज्र अव्वल वक़्त पढ़ना हुज़ूर अलैहिस्सलाम की दाइमी सुन्नत है, यह हुक्म मन्सूख़ न हुआ, हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने आख़िर हयात शरीफ़ तक इस पर अमल किया अफ़सोस कि हन्फ़ी ऐसी दाइमी सुन्नत से महरूम हैं जो हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने हमेशा की।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द जवाब हैं। एक यह कि यह हदीस सहीह भी नहीं और इसकी अस्नाद मुत्तसिल भी नहीं क्योंकि इस हदीस को इसहाक़ इब्ने उमर ने हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा से रिवायत किया और इसहाक़ इब्ने उमर ने हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा से कभी मुलाक़ात न की लिहाज़ा दरम्यान में रावी रह गया है। इसलिए इमाम तिर्मिज़ी ने इस हदीस के साथ फरमाया।

तरजमा : अबू ईसा ने फ़रमाया कि यह हदीस ग़रीब है और इसकी अस्नाद मुत्तसिल नहीं।

इसके हाशिया में है।

तरजमा : क्योंकि इसहाक़ की मुलाक़ात हज़रत आइशा सिद्दीक़ा से साबित न हुई।

लिहाज़ा यह हदीस क़ाबिले अमल नहीं। अफ़सोस है कि वहाबी हम से तो बिल्कुल सही और टकसाली हदीस का मुतालबा किया करते हैं और खुद ऐसी ज़ईफ़ और नाक़ाबिले अमल हदीसें पेश कर देने में तअम्मुल नहीं करते।

दूसरे यह कि यह हदीस बहुत अहादीस के ख़िलाफ़ है क्योंकि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बहुत दफ़ा नमाज़ें आख़िर वक़्त पढ़ी हैं। जब हज़रत जिब्रील नमाज़ के औक़ात अर्ज़ करने आए तो उन्होंने दो दिन हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को नमाज़ें पढ़ाईं पहले दिन तमाम नमाज़ें अव्वल वक़्त में, दूसरे दिन आख़िर वक़्त में। एक दफ़ा एक शख़्स ने हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से नमाज़ के औक़ात पूछे तो आपने उसे दो दिन अपने पास ठहराया, एक दिन नमाज़ें अव्वल वक़्त में पढ़ाईं दूसरे दिन आख़िर वक़्त, तअ्रीस की रात में हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फज्र की नमाज़ क़ज़ा पढ़ी। गज़्व-ए-ख़न्दक़ में हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने कई नमाज़ें क़ज़ा करके पढ़ीं। आम तौर पर सफर में हुज़ूर अलैहिस्सलाम नमाज़े ज़ुहर आख़िर वक़्त और अस्र अव्वल वक़्त पढ़ते थे। ऐसे ही मग़रिब आख़िर वक़्त, इशा अव्वल वक़्त पढ़ते थे। एक दफ़ा हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम नमाज़े फज्र के लिए बिल्कुल आख़िर वक़्त तशरीफ़ लाए और बहुत जल्द फज्र पढ़ाई। बाद में फरमाया कि आज हम एक ख़्वाब देख रहे थे कि रब तआला ने अपने दस्ते कुदरत हमारे सीन-ए-अक़्दस पर रखा (मिश्कात बाबुल-मसाजिद) ग़र्ज़ेकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने बारहा नमाज़ें आख़िर वक़्त में पढ़ीं, और इस हदीस में है कि आपने कोई नमाज़ आख़िर वक़्त में दो बार भी न पढ़ी, लिहाज़ा यह रिवायत नाक़ाबिले अमल है।

तीसरे यह कि हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है, फिर तुम नमाज़े इशा आख़िर वक़्त यानी तिहाई रात गए पढ़ना मुस्तहब क्यों कहते हो, और गर्मियों में ज़ुहर आख़िर वक़्त में मुस्तहब क्यों बताते हो जो जवाब तुम्हारा है वही जवाब हमारा।

ऐतराज़ नम्बर 5 : तुम ने जो हदीस पेश की थी कि फज्र को उजियाले में पढ़ो इसमें उजियाले से मुराद सुबहे सादिक़ की वह रौशनी है जिस से वक़्ते फज्र आ जाना यक़ीनी हो जाए और हदीस का मतलब यह है कि नमाज़े फज्र शक की हालत में न पढ़ो, बल्कि जब यक़ीन हो जाए कि वक़्त हो गया तब पढ़ो, वहाँ असफार से वह रौशनी मुराद नहीं, जो हन्फ़ियों ने समझी यानी ख़ूब उजियाला, बहुत से मुहद्देसीन ने इस हदीस का यही मतलब बयान किया।

जवाब : हरगिज़ नहीं, क्योंकि इतना उजियाला करना तो फर्ज़ है, शक की हालत में नमाज़े फज्र पढ़ना जाइज़ ही नहीं और यहाँ फरमाया गया कि इस उजियाले का सवाब ज़्यादा है यानी यह उजियाला मुस्तहब है न कि फ़र्ज़। लिहाज़ा इस उजियाले से मुराद वही रौशनी सुबह है जिस में फज्र पढ़ना मुस्तहब है और जो हमने मानी किए, वही दुरुस्त हैं। हदीस समझने के लिए तफ़क्कुह ज़रूरी है।

उन्नीसवाँ बाब

ज़ुहर ठंडी करके पढ़ो

वक़्ते ज़ुहर सूरज ढलने से शुरू होता है और उस वक़्त तक रहता है जब कि हर चीज़ का साया उसके निस्फ़ुन्नहार के साया के अलावा दो गुना हो जाए, सर्दियों में नमाज़े ज़ुहर जल्दी पढ़ना और गर्मियों में कुछ देर से पढ़ना कि दोपहर की तेज़ी जाती रहे, कुछ ठंडक हो जाए, सुन्नत है, मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी नमाज़े ज़ुहर चिलचिलाती दोपहर ही में पढ़ लेते हैं और एक मिस्ल साया के बाद अस्र पढ़ लेते हैं। तरह तरह से हन्फ़ियों को बहकाते हैं कि तुम्हारा मज़हब हदीस के ख़िलाफ़ है। इसलिए इस बाब की भी दो फ़स्लें की जाती हैं। पहली फस्ल में इस का सुबूत दूसरी फस्ल में इस मसला पर एतराज़ात मअ् जवाबात। हन्फ़ियों को चाहिए कि अपने दलाइल और वहाबियों के जवाबात याद रखें।

पहली फस्ल

सर्दियों में चूंकि दोपहर ठंडी होती है लिहाज़ा इस ज़माना में सूरज ढलते ही ज़ुहर पढ़नी सुन्नत है लेकिन गर्मियों में देर से पढ़नी सुन्नत है कि ठंडक हो जाए और दोपहर का जोश कम हो जाए। दलाइल हस्बे ज़ैल हैं।

हदीस नम्बर 1 ता 5 : बुख़ारी, मुस्लिम, नसाई, अबू दाऊद और तिर्मिज़ी ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

फरमाते हैं कि फरमाया रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जब गर्मी तेज़ हो तो नमाज़े ज़ुहर ठंडी करके पढ़ो तिर्मिज़ी ने फरमाया कि यह हदीस हसन सही है।

हदीस नम्बर 6 ता 10 : अबू दाऊद त्यालसी ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से मुस्लिम, बुख़ारी, निसाई, बैहक़ी ने अबू सईद ख़ुदरी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से कुछ इख़्तिलाफ़ के साथ रिवायत की।

फ़रमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने गर्मी की तेज़ी दोज़ख़ की भड़क से है। लिहाज़ा ज़ुहर ठंडी करो आग ने रब की बारगाह में शिकायत

की अर्ज़ किया कि मौला मेरे कुछ हिस्से ने कुछ को खा डाला तो रब ने उसे दो सांसो की इजाज़त दी। एक सांस सर्दी में एक सांस गर्मी में।

हदीस नम्बर 11 : निसाई शरीफ़ में हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

फ़रमाते हैं कि जब गर्मी ज़्यादा होती थी तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ज़ुहर की नमाज़ ठंडी करके पढ़ते थे और जब सर्दी होती थी तो जल्द पढ़ लेते थे।

इन अहादीस से मालूम हुआ कि गर्मियों में ज़ुहर जल्द पढ़ना सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

हदीस नम्बर 12 ता 19 : बुख़ारी, अबू दाऊद, इब्ने अबी शैबा, तिर्मिज़ी, अबू दाऊद त्यालसी, तहावी, अबू ओवाना, बैहक़ी ने हज़रत अबू ज़र ग़िफ़ारी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि हम एक सफर में हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ थे तो मुअज़्ज़िन ने ज़ुहर की अज़ान देनी चाही तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि ठंडा करो फिर उन्होंने अज़ान का इरादा किया तो फरमाया ठंडा करो यहाँ तक कि हम ने टीलों का साया देख लिया तो फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि गर्मी की तेज़ी दोज़ख़ की भड़क से है पस जब गर्मी तेज़ हो तो नमाज़ ठंडी किया करो। तिर्मिज़ी ने फरमाया यह हदीस हसन व सही है।

हदीस नम्बर 20 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत अबू मस्ऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : उन्होंने देखा नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को ज़ुहर की नमाज़ सर्दियों में जल्दी पढ़ते और गर्मियों में देर से पढ़ते थे।

इस के मुताल्लिक़ और बहुत सी अहादीस पेश की जा सकती हैं, मगर इख़्तिसारन इन्हीं बीस हदीसों पर इक्तिफ़ा करता हूँ। अगर तफ़्सील देखनी हो तो सहीहुल-बिहारी, तहावी वग़ैरह का मुताला फरमाओ।

ख़्याल रहे कि नमाज़े जुमा का वक़्त भी ज़ुहर की तरह है कि गर्मियों में ठंडक करके पढ़ी जाए। बाज़ लोग सख़्त गर्मी में भी जुमा की नमाज़ बिल्कुल अव्वल वक़्त में पढ़ लेते हैं यह ख़िलाफ़े सुन्नत है। ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी तो ज़वाल से पहले नमाज़े जुमा पढ़ लेने से गुरेज़ नहीं करते।

बुख़ारी शरीफ़ ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु तआला, अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि जब सख़्त ठंडक होती तो हुज़ूर सल्लल्लाहु

अलैहि व सल्लम नमाज़ जल्द पढ़ते थे और जब गर्मी तेज़ होती तो नमाज़ ठंडी करके पढ़ते थे यानी नमाज़े जुमा।

ग़र्ज़कि नमाज़े जुमा ज़ुहर की तरह सर्दियों में जल्द और गर्मियों में कुछ देर करके गर्मी की तेज़ी टूट जाने पर पढ़नी चाहिए।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यही है कि नमाज़े ज़ुहर गर्मियों में ठंडी करके पढ़ना चाहिए कि तेज़ गर्मी में ज़ुहर पढ़ना मुसलमानों की तक्लीफ़ का बाइस है। इस से जमाअत घट जाने का अन्देशा है क्योंकि गर्मियों में आम कारोबारी लोग दोपहर का खाना खा कर क़ैलूला यानी दोपहर में आराम करते हैं और दोपहर की तपिश घर में गुज़ारना चाहते हैं। अगर इस हालत में नमाज़े ज़ुहर पढ़ी जाए तो वह लोग सुन्नते क़ैलूला से भी महरूम रहेंगे, और उन पर उस वक़्त मस्जिद की हाज़िरी गिरां भी पड़ेगी ऐसे मौक़ा पर शरीअते मुतह्हरा आसानी कर देती है।

नतीजा : मज़्कूरा बाला अहादीसे शरीफ़ा और दलीले अक़्ली से मालूम हुआ कि नमाज़े ज़ुहर का वक़्त दो मिस्ल साया तक रहता है और अस्र का वक़्त दो मिस्ल साया से शुरू होता है। इसकी चन्द दलीलें हैं। एक यह कि गुज़िश्ता अहादीस से मालूम हुआ कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम ज़ुहर ठंडक करके पढ़ते थे, और इसका हुक्म देते थे, और ज़ाहिर है कि तमाम जगह ख़ुसूसन मुल्के अरब में एक मिस्ल साया के बाद दोपहर की तपिश टूटती है। एक मिस्ल तक सख़्त भड़क रहती है, अगर एक मिस्ल पर वक़्त ज़ुहर निकल जाए, तो यह अहादीस ग़लत होंगी। दूसरे यह कि गुज़िश्ता अहादीस से मालूम हुआ कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम ने उस वक़्त नमाज़े ज़ुहर पढ़ी जब टीलों का साया नमूदार हो गया। एक मिस्ल साया के वक़्त टीले का साया नमूदार नहीं होता, क्योंकि फैलावे की वजह से इसका साया एक मिस्ल के बाद ज़ाहिर हो सकता है। अगर एक मिस्ल पर वक़्ते ज़ुहर निकल जाए तो यह हदीस भी ग़लत होगी।

तीसरे यह कि नमाज़े अस्र का वक़्त हमेशा ज़ुहर के वक़्त से कम होना चाहिए अगर एक मिस्ल पर वक़्ते अस्र हो जाया करे तो ज़ुहर के बराबर कभी ज़ुहर से बढ़ जाएगा, यह क़ानूने शरई के ख़िलाफ़ है। क्योंकि बुख़ारी शरीफ़ ने हज़रत इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से एक हदीस मरफ़ू नक़्ल फ़रमाई कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी उम्मत की मिसाल यहूद व नसारा के मुक़ाबिल इस तरह दी, कोई शख़्स किसी मज़दूर को सुबह से दोपहर तक एक क़ीरात पर रखे, दूसरे को दोपहर से नमाज़े अस्र तक एक क़ीरात पर रखे, तीसरे को नमाज़े अस्र से सूरज डूबने तक

दो क़ीरात उजरत पर रखे, पहले मज़दूर यहूद हैं, दूसरे मज़दूर नसारा और तीसरे मज़दूर मुसलमान, कि उनके अमल का वक़्त थोड़ा, मज़दूरी दो गुनी, हदीस के आख़िरी अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : ख़बरदार हो कि तुम ही वह लोग हो जो नमाज़े अस्र से सूरज डूबे तक काम करते हो तुम्हारी मज़दूरी दो गुनी है।

अगर अस्र का वक़्त एक मिस्ल से शुरू हो जाता, तो ज़ुहर के बराबर बल्कि कभी इस से ज़्यादा होता। इस सूरत में मुसलमानों की यह मिसाल बयान न फरमाई जाती। लिहाज़ा नमाज़े अस्र का वक़्त ज़ुहर से कम होना चाहिए। यह जब ही हो सकता है, जब वह दो मिस्ल साया से शुरू हो, अगर एक मिस्ल पर अस्र शुरू हो जाए, तो बुख़ारी शरीफ़ की यह हदीस भी ग़लत हो जाती है। इसलिए मानना पड़ेगा कि अस्र दो मिस्ल पर शुरू हो जाती है।

दूसरी फस्ल

इस मसला पर ऐतराज़ात व जवाबात

इस मसला पर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के कुछ ऐतराज़ात तो वह हैं जिनके जवाबात हम इस से पहले बाब में दे चुके हैं। जैसे हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फरमाते हैं कि नमाज़ अव्वल वक़्त में पढ़ना अफ़ज़ल है। कुछ ऐतराज़ात इन के अलावा हैं। हम वह ऐतराज़ात मअ़ जवाबात अर्ज़ करते हैं। रब तआला क़बूल फ़रमाए।

ऐतराज़ नम्बर 1 : अबू दाऊद, तिर्मिज़ी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से एक हदीस रिवायत की जिसमें इरशाद फरमाया कि हज़रत जिब्रील ने मुझे दो दिन नमाज़ पढ़ाई एक दिन हर नमाज़ अव्वल वक़्त पढ़ी दूसरे दिन हर नमाज़ आख़िर वक़्त में इसके कुछ अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : हज़रत जिब्रील ने मुझे पहले दिन अस्र उस वक़्त पढ़ाई जब हर चीज़ का साया एक मिस्ल हो गया।

इस हदीस से मालूम हुआ कि अस्र का वक़्त एक मिस्ल साया पर शुरू हो जाता है और ज़ुहर का वक़्त इस से पहले निकल जाता है।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द जवाब हैं।

एक यह कि हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है क्योंकि इसी हदीस में उसी जगह यह भी है।

तरजमा : जब दूसरा दिन हुआ तो मुझे हज़रत जिब्रील ने नमाज़े ज़ुहर पढ़ाई जब कि हर चीज़ का साया उसकी मिस्ल हो गया।

फरमाइए पहले दिन एक मिस्ल साया पर नमाज़े अस्र पढ़ाई और दूसरे

दिन ख़ास उसी वक़्त नमाज़ पढ़ाई हालांकि वक़्ते अस्र, ज़ुहर का वक़्त निकल जाने के बाद शुरू होता है। अगर एक मिस्ल साया पर वक़्ते अस्र दाख़िल हो जाता है तो दूसरे दिन उसी वक़्त नमाज़े ज़ुहर क्यों पढ़ाई गई। दूसरे यह कि इस हदीस में उसी जगह यह अल्फ़ाज़ हैं।

तरजमा : और दूसरे दिन मुझे नमाज़े अस्र जब पढ़ाई जब कि हर चीज़ का साया दो मिस्ल हो गया।

इस से मालूम होता है कि नमाज़े अस्र का आख़िरी वक़्त दो मिस्ल साया है हालांकि आख़िरी वक़्त सूरज का ग़ुरूब है।

तीसरे यह कि इस हदीस में अव्वल दिन की नमाज़े अस्र में सिर्फ़ एक मिस्ल साया का ज़िक्र है और दूसरे दिन के आख़िर अस्र में दो मिस्ल साया का ज़िक्र है। असल साया का जो दोपहर का वक़्त होता है बिल्कुल ज़िक्र नहीं। हालांकि तुम भी कहते हो कि एक मिस्ल या दो मिस्ल असल साया के अलावा होना चाहिए तो जो तुम्हारा जवाब है वह हमारा।

चौथे यह कि इस हदीस में तो यह है कि हुज़ूर को एक मिस्ल साया पर नमाज़े अस्र पढ़ा दी गई और जो हदीसें हम पहली फस्ल में पेश कर चुके हैं उन में ज़िक्र है कि हुज़ूर ने गर्मी में नमाज़े ज़ुहर ठंडी करके और टीले का साया पड़ जाने पर अदा फरमाई जो एक मिस्ल के बाद होता है तो हदीसें आपस में टकराव वाली हुईं लिहाज़ा हमारी पेश करदा हदीसों को तरजीह होगी क्योंकि वह क़यासे शरई के मुताबिक़ हैं और यह हदीस क़ाबिले अमल नहीं क्योंकि क़यासे शरई के ख़िलाफ़ है। टकराव के वक़्त हदीस को क़यास से तरजीह होती है।

पाँचवें यह कि हज़रत जिब्रील का यह अमल पहले वाक़े हुआ क्योंकि शबे मेअराज की सुबह को जब कि नमाज़ फर्ज़ ही हुई थी और हुज़ूर का अमल जो हम साबित कर चुके हैं यानी ठंडक में नमाज़ पढ़ना बाद का अमल है। लिहाज़ा तुम्हारी पेश करदा हदीस मन्सूख़ है हमारी पेश करदा अहादीस उसकी नासिख़ इसलिए यह हदीस क़ाबिले अमल नहीं।

छठे यह कि शरई क़ायदा है कि यक़ीनी चीज़ शक से ज़ाइल नहीं हो सकती यक़ीन को यक़ीन ही दफ़ा कर सकता है। इस क़ायदा पर सैकड़ों मसाइल निकाले गए हैं। सूरज ढलने से वक़्ते ज़ुहर यक़ीनन आ गया और एक मिस्ल साया पर उस वक़्त का निकलना मश्कूक है तो इस शक से वक़्ते ज़ुहर न निकलेगा। और वक़्ते अस्र दाख़िल न होगा दो मिस्ल पर ज़ुहर का निकल जाना यक़ीनी है लिहाज़ा यही हुक्म क़ाबिले अमल है न कि तुम्हारा क़ौल।

ऐतराज़ नम्बर 2 : सहाबाए किराम फ़रमाते हैं कि हम हुज़ूर के साथ नमाज़े ज़ुहर इतनी जल्दी पढ़ते थे कि फ़र्श बहुत गर्म होता था। हम उस पर सज्दा न कर सकते थे इसी लिए सज्दे की जगह कपड़ा या ठंडी बजरी रखते थे। इससे मालूम हुआ कि नमाज़े ज़ुहर गर्मियों में भी अव्वले वक़्त ही पढ़नी चाहिए।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। एक यह कि यह हदीस उन तमाम हदीसों के ख़िलाफ़ है जिन में गर्मियों की ज़ुहर की ताख़ीर करने ठंडी करने का हुक्म है। और वह हदीसें क़्यासे शरई के मुताबिक़ हैं लिहाज़ा वही क़ाबिले अमल हैं। यह हदीस नाक़ाबिले अमल या मन्सूख़ है।

दूसरे यह कि फ़र्श की गर्मी ख़ुसूसन मुल्के अरब में बहुत देर तक यानी एक मिस्ले साया के बाद तक रहती है। यह गर्मी पहले की होती थी वक़्त ठंडा हो चुकता था। लिहाज़ा यह हदीस उन अहादीस के बिल्कुल ख़िलाफ़ नहीं जिन में ठंडक का हुक्म है। जहाँ तक हो सके अहादीस में मुताबिक़त की जाए।

ऐतराज़ नम्बर 3 : सहाबा किराम फ़रमाते हैं कि हम हुज़ूर के साथ अस्र इतनी जल्दी पढ़ते थे कि बाद नमाज़े अस्र ऊंट ज़िबह करके बोटियाँ बना कर भून कर आफताब डूबने से पहले खा लेते थे और हम में से बाज़ लोग नमाज़े अस्र के बाद तीन मील दूरी तय करके अपने घर पहुँच जाते थे और अभी सूरज चमकता होता था। जैसा कि मुस्लिम शरीफ़ वग़ैरह में है। इस से मालूम हुआ कि अस्र की नमाज़ दो मिस्ल से पहले पढ़ी जाती थी। क्योंकि दो मिस्ल के बाद इतना वक़्त नहीं बचता कि यह काम किए जाये।

(आम वहाबी)

जवाब : यह तमाम हदीसें दुरुस्त हैं मगर आपका यह मज़कूरा नतीजा निकालना ग़लत। दो मिस्ल के बाद अस्र पढ़ कर तीन मील फासिला बख़ूबी तय हो सकता है अह्ले अरब बहुत तेज़ रफ़्तार हैं। हमारे हाँ भी कुछ लोग दस मिनट में एक मील चल लेते हैं। तीन मील आधा घन्टा में चले जाते हैं अस्र का वक़्त बाज़ ज़माना में दो घन्टा से भी ज़्यादा होता है ऐसे ही ऊंट का ज़िबह कर लेना और भून कर खा लेना ग़ुरूबे आफ़ताब से पहले हो सकता है अह्ले अरब ज़िबह और गोश्त साफ़ करने पकाने में बहुत ही फुर्तीले होते हैं। जैसा कि तजरबा है।

ऐतराज़ नम्बर 4 : मुस्लिम बुख़ारी में हज़रत सहल इब्ने सअद से रिवायत है।

तरजमा : हम सहाबा नहीं कैलूला करते थे न नाश्ता खाते थे मगर जुमा के बाद।

इस से मालूम हुआ कि जुमा की नमाज़ सख़्त गर्मी में भी बहुत जल्द पढ़नी चाहिए कि दोपहर का आराम बल्कि सुबह का नाश्ता भी बाद नमाज़ किया जाए फिर तुम कैसे कहते हो कि गर्मियों में जुमा ठंडा करके पढ़ो।

जवाब : इसके दो जवाब हैं एक यह कि यह हदीस ज़ाहिरी माना से तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है क्योंकि इस से लाज़िम आता है कि नमाज़े जुमा नाश्ता और कैलूला यानी दोपहर के आराम से पहले पढ़ी जाए तो चाहिए कि फज्र के बाद फौरन जुमा पढ़ लिया जाए क्योंकि नाश्ता तो बिल्कुल सवेरे होता है तुम भी इतनी जल्द जुमा पढ़ लेने के क़ाइल नहीं। दूसरे यह कि हदीस का मतलब यह है कि हम जुमा के दिन जुमा की तैयारी की वजह से नमाज़ से पहले न नाश्ता करते थे न दोपहर का आराम बाद नमाज़ यह सब कुछ करते थे यानी नमाज़ की वजह से नाश्ता और आराम पीछे कर देते थे। न कि नाशता और आराम की वजह से जुमा पहले पढ़ लेते थे। जैसा कि तुम समझे। तीसरे यह कि इस हदीस में सर्दियों के जुमा का ज़िक्र है कि उस ज़माना में दिन छोटा होता है। दोपहर में गर्मी नहीं होती इसलिए सूरज ढलते ही जुमा पढ़ लेते थे। दोपहर का खाना और आराम बाद जुमा करते थे अब भी मदीना वाले ऐसा ही करते हैं। बुख़ारी शरीफ़ में हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है।

तरजमा : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम आफताब ढलने के बाद जुमा पढ़ते थे।

लिहाज़ा इस मज़कूरा हदीस के मानी यह नहीं कि नमाज़े जुमा सूरज ढलने से पहले पढ़ ली जाती थी चूंकि नमाज़े जुमा ज़ुहर की नाइब है लिहाज़ा ज़ुहर के वक़्त में ही अदा होगी। और गर्मियों में ठंडक करके सर्दियों में सूरज ढलते ही पढ़ी जाएगी ज़ुहर की तरह अब अहादीस में कोई तआरुज नहीं।

बीसवाँ बाब

अज़ान व तक्बीर के अल्फाज़

शरीअत में अज़ान व इक़ामत (तक्बीर) के अल्फाज़ और अहकाम क़रीबन एक जैसे हैं जो अल्फाज़ अज़ान के हैं। वहीं तक्बीर के सिर्फ़ **हैय्या अलल-फ़लाह** के बाद **क़द क़ामतिस्सलातु** दो बार ज़्यादा है। तरजीअ् न अजान में है न इक़ामत में। अज़ान के कुल पन्द्रह कलिमे हैं और इक़ामत

के सत्तरह कलिमे जैसा कि आम तौर पर मुसलमानों में राइज है। मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों की अज़ान भी इस अज़ान से अलाहिदा है और इक़ामत भी इस इक़ामत के सिवा है वह अज़ान की दोनों शहादतों को दो दो बार की बजाए चार चार बार कहते हैं। अव्वलन दो बार आहिस्ता फिर बुलन्द आवाज़ से इसे तरजीअ् कहते हैं यानी पहले **अश्हदु अन ला इलाहा इल्लल्लाह** आहिस्ता कहते हैं। फिर चीख़ कर ऐसे ही **अश्हदु अन्ना मुहम्मदर्रुसूलुल्लाह** को इस हिसाब से उनके नज़दीक अज़ान के कलिमात पन्द्रह के बजाए उन्नीस हैं। और इक़ामत (तक्बीर) के कलिमात एक एक बार कहते हैं इस तरह कि दोनों शहादतें और **हैय्यअलस्सलाह** और **हैय्या अलल-फ़लाह** एक एक बार। लिहाज़ा उनके नज़दीक इक़ामत के कलिमात बजाए सत्तरह के तेरा हैं। और दावा करते हैं कि इस्लामी अज़ान व इक़ामत वही है जो हम कहते हैं। और हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु पर इस वजह से लअन तअन करते हैं और उस ज़ाते करीम को गालियाँ देते हैं। पहली फस्ल में इस मुरव्वजा इस्लामी अज़ान का सुबूत दूसरी फस्ल में इस पर ऐतराज़ात मअ् जवाबात अल्लाह व रसूल क़बूल फरमाए।

पहली फस्ल

मौजूदा अज़ान व इक़ामत का सुबूत

हक़ यह है कि अज़ान इक़ामत के कलिमात दो दो हैं न अज़ान में तरजीअ है न इक़ामत (तक्बीर) के कलिमात एक एक पहली तक्बीर चार बार आख़िर में कलिमा **ला इलाहा इल्लल्लाह** एक बार बाक़ी तमाम अल्फ़ाज़ दो दो बार दलाइल हस्बे ज़ैल हैं।

हदीस नम्बर 1 ता 6 : अबू दाऊद, नसाई, इब्ने ख़ुज़ैमा, इब्ने हिब्बान, बैहक़ी, दार कुतनी ने सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा से रिवायत की।

तरजमा : वह फरमाते हैं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माना में अज़ान के कलिमात दो दो बार थे और तक्बीर एक एक बार इसके सिवा कि तक्बीर में **क़द क़ामतिस्सलातु** भी कहते थे।

इस हदीस के मुतअल्लिक़ इब्ने जौज़ी जैसे नाक़िद कहते हैं।

यह अस्नाद सही है। सईदुल-मक़बरी की इब्ने हिब्बान ने तौसीक़ की।

इस हदीस से मालूम हुआ कि अज़ान में तरजीअ नहीं वरना अज़ान के कलिमात दो दो न होते शहादतें चार चार बार होतीं। इक़ामत के एक बार होने का जवाब दूसरी फस्ल में अर्ज़ किया जाएगा।

हदीस नम्बर 7 : तिबरानी ने मोअजमे औसत में अबू महज़ूरह मुअज़्ज़िन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पर पोते हज़रत इब्राहीम इब्ने इस्माईल इब्ने अब्दुल-मलिक इब्ने अबी महज़ूरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि मैंने अपने दादा अब्दुल-मलिक इब्ने अबी महज़ूरह को सुना वह फरमाते थे कि उन्होंने अपने वालिद अबू महज़ूरह को फरमाते सुना कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुझे अज़ान का एक एक लफ़्ज बताया कि अल्लाहु अक्बर अल्लाहु अक्बर आख़िर तक इसमें तरजीअ़ का ज़िक्र न फरमाया।

इस हदीस से मालूम होता है कि अज़ान में तरजीअ का हुक्म हुज़ूर ने न दिया लिहाज़ा तरजीअ सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

हदीस नम्बर 8 व 9 : इब्ने अबी शैबा, तिर्मिज़ी ने हज़रत इब्ने अबी लैला ताबई से कुछ इख़्तिलाफ़े अल्फ़ाज़ से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि अब्दुल्लाह इब्ने ज़ैद अंसारी हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुअज़्ज़िन अज़ान और तक्बीर दो दो बार कहते थे।

इस हदीस से दो मसले मालूम हुए एक यह कि अज़ान में तरजीअ़ नहीं। दूसरे यह कि इक़ामत यानी तक्बीर के कलिमात दो दो बार कहे जाएं न कि एक एक बार।

हदीस नम्बर 10 : बैहक़ी ने हज़रत अली रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

तरज़मा : आप फरमाते थे कि अज़ान भी दो दो बार है। तक्बीर भी दो दो बार और आप (हज़रत अली) एक शख़्स पर गुज़रे जो इक़ामत एक एक बार कह रहा था तो आपने फरमाया इसे दो दो बार कह एक बार बुरा है।

हदीस नम्बर 11 : अबू दाऊद शरीफ़ ने हज़रत मआज़ इब्ने जबल से एक लंबी हदीस बयान फ़रमाई जिसमें अब्दुल्लाह इब्ने ज़ैद अंसारी की ख़्वाब का वाक़िया मज़कूर है। जो उन्होंने अज़ान के मुतअल्लिक़ देखी थी उन्होंने हुज़ूर की ख़िदमत में आ कर अर्ज़ किया कि मैंने फ़रिश्ते को ख़्वाब में देखा जिसने क़िब्ला की तरफ मुँह करके **अल्लाहु अक्बर अल्लाहु अक्बर। अश्हदु अन ला इलाहा इल्लल्लाहु** कहा। फिर कुछ ठहर कर अज़ान की तरह तक्बीर भी कही हदीस के आख़िरी अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : रावी कहते है कि हुज़ूर ने अब्दुल्लाह से फरमाया कि यह अज़ान हज़रत बिलाल पर तल्क़ीन करो। पस हज़रत बिलाल ने अज़ान इन्हीं कलिमात से दी।

इस हदीस से मालूम हुआ कि न तो ख़्वाब वाले फ़रिश्ते ने अज़ान में तरजीअ की तालीम दी न इस्लाम की पहली अज़ान में तरजीअ थी जो हज़रत बिलाल ने हुज़ूर की मौजूदगी में अब्दुल्लाह इब्ने ज़ैद की तालीम से कही यह भी मालूम हुआ कि इक़ामत भी अज़ान की तरह दो दो बार है। लेकिन इस में **क़द क़ामतिस्सलातु** भी है।

हदीस नम्बर 12 व 13 : इब्ने अबी शैबा और बैहक़ी ने अब्दुर्रहमान इब्ने अबी लैला से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि हम को हुज़ूर के बहुत सहाबा ने ख़बर दी कि अब्दुल्लाह इब्ने ज़ैद अंसारी हुज़ूर की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अर्ज़ किया कि मैं ने ख़्वाब में देखा जैसे एक मर्द खड़ा हो उस पर दो सब्ज़ कपड़े हैं। पस वह दीवार पर खड़ा हुआ और अज़ान भी दो दो बार दी तक्बीर भी दो दो बार कही।

ख़्याल रहे कि अज़ान की तालीम रब तआला ने सहाब-ए-किराम को ख़्वाब में फ़रिश्ता के ज़रिया दी इस ख़्वाब में न तो अज़ान में तरजीअ है न इक़ामत एक-एक बार। मालूम हुआ कि हन्फ़ी अज़ान वह तक्बीर है जिसकी रब ने तालीम दी।

हदीस नम्बर 14 ता 16 : दार क़ुतनी, अब्दुर्रज़्ज़ाक़, तहावी शरीफ़ ने हज़रत इब्ने ज़ैद से रिवायत की।

बेशक हज़रत बिलाल अज़ान भी दो दो बार कहते थे और इक़ामत भी दो दो बार इन दोनों को तक्बीर से शुरू करते थे तक्बीर पर ही ख़त्म करते थे।

हदीस नम्बर 17 : तबरानी ने अपनी किताब मसनदुश्शामैन में हज़रत जनादा इब्ने अबी उमैया से रिवायत की।

तरजमा : वह हज़रत बिलाल से रिवायत करते हैं कि वह अज़ान व इक़ामत दोनों बराबर कहते थे यानी दो दो बार।

हदीस नम्बर 18 : दार क़ुतनी ने हज़रत अबू हुजैफ़ा से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत बिलाल हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने अज़ान दो दो बार कहते थे और इक़ामत दो दो बार।

हदीस नम्बर 19 : तहावी ने हज़रत हम्माद इब्ने इब्राहीम से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत सौबान अज़ान दो दो बार कहते थे।

हदीस नम्बर 20 : तहावी ने हज़रत उबैद मौला सलमा इब्ने अकवा से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत सलमा इब्ने अकवा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु अज़ान व इक़ामत दो बार कहते थे।

हम ने यह बीस हदीसें बतौर नमूना पेश कीं। वरना इसके मुतअल्लिक़ बहुत ज़्यादा अहादीस हैं। अगर तफ़्सील देखनी हो तो सहीहुल-बिहारी, तहावी शरीफ़ वग़ैरह का मुताला फरमाओ। इन अहादीस से हस्बे ज़ैल चीज़ें मालूम हुईं।

(1) अब्दुल्लाह इब्ने ज़ैद इब्ने अब्दुल्लाह इब्ने सालबा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का ख़्वाब जो इस्लामी अज़ान की असल है, इस में न तरजीअ का ज़िक्र है न इक़ामत एक एक बार का, बल्कि वही अज़ान व तक्बीर मज़कूर है जो आम तौर पर राइज है।

(2) फरिश्ते ने जो अज़ान की तालीम दी, उसमें तरजीअ भी नहीं, और इक़ामत एक एक बार भी नहीं, वही हमारी अज़ान है।

(3) हुज़ूर अलैहिस्सलाम के मश्हूर मुअज़्ज़िन हज़रत बिलाल, हज़रत सौबान वग़ैरा हमेशा वही अज़ान व इक़ामत देते थे जो आम मुसलमानों में मुरव्वज है यानी हन्फ़ी अज़ान व इक़ामत।

(4) जलीलुल-क़द्र सहाबा व ताबईन जैसे हज़रत अली अब्दुल्लाह इब्ने उमर, सलमा इब्ने अकवा, अब्दुल्लाह इब्ने ज़ैद, इब्राहीम नख़्ई, हज़रत उबैद, अबू हुज़ैफा वग़ैरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुम यही अज़ान कहते और कहलवाते थे जो मुरव्वजा है। तरजीअ या इक़ामत एक एक बार के क़ाइल न थे।

(5) हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु एक एक बार इक़ामत कहने वाले पर नाराज़ होते थे, दो दो बार कहलवाते थे, अगर तरजीअ या इक़ामत एक एक बार सुन्नत होती तो यह हज़रात जो मिज़ाज शनासे रसूल, सुन्नत के मुत्तबेअ़, बिदअत से मुतनफ़्फ़िर थे उन्होंने इसको क्यों तर्क किया, और करने वालों को क्यों रोका और उन पर क्यों मलामत की?

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यह है कि अज़ान की शहादतों में तरजीअ न हो क्योंकि अज़ान में असल चीज़ सलात और फलाह है कि अज़ान नमाज़ ही के एलान व दावत के लिए है। बाक़ी कलिमात तक्बीर व शहादत वग़ैरह बरकत या तम्हीद या नमाज़ की तरग़ीब के लिए हैं। जब सलात और फलाह में तकरार और तरजीअ नहीं जो असल अज़ान है तो इन कलिमात में भी तरजीअ न होनी चाहिए जो उसके ताबे हैं।

दूसरे यह कि अज़ान का मक़सद है नमाज़ की आम इत्तिला इसलिए अज़ान बुलन्द मक़ाम पर ऊंची आवाज़ से कहनी चाहिए। कानों में उंगलियाँ

लगाई जायें ताकि आवाज़ ख़ूब ऊंची निकले अब इन दो शहादतों को अव्वलन आहिस्ता आहिस्ता कहना मक़सदे अज़ान के बिल्कुल ख़िलाफ़ है। उसका हर कलिमा बुलन्द आवाज़ से चाहिए। देखो अज़ान के अव्वल में तक्बीर चार दफ़ा कही जाती है। मगर चारों बार ख़ूब ऊंची आवाज़ से अगर शहादतें भी चार दफ़ा होतीं तो चारों बार ऊंची आवाज़ से होतीं।

तीसरे यह कि इक़ामत अज़ान ही की तरह है हत्ता कि उसे कुछ अहादीस में अज़ान फ़रमाया गया। कि हुज़ूर अलैहिस्सातु वस्सलाम ने इरशाद फ़रमाया। **बैना कुल्ले अज़ाने सलातुन** हर दो अज़ानों के दरमियान नमाज़ है यानी अज़ान व इक़ामत के दरमियान हाँ फ़र्क़ सिर्फ़ **क़द क़ामतिस्सलातु** का है कि इक़ामत में है अज़ान में नहीं। तो चाहिए कि इक़ामत के अल्फ़ाज़ भी अज़ान की तरह दो दो बार हों।

चौथे यह कि अज़ान में कुछ अल्फ़ाज़ मुकर्रर आए हैं कि अव्वल में भी हैं आख़िर में भी जैसे तक्बीर और कलिमा, और बाज़ अल्फ़ाज़ ग़ैर मुकर्रर हैं कि सिर्फ़ एक जगह आए जैसे सलात फलाह, जो अल्फ़ाज़ मुकर्रर हैं वह पहली बार दो गुने हैं। दूसरी बार उसके निस्फ़ तक्बीर पहली बार चार दफ़ा है और पिछली बार दो दफ़ा, शहादतें तौहीद पहली बार दो दफ़ा है, तो आख़िर बार एक दफ़ा, तो चाहिए कि तक्बीर में भी ऐसा ही हो।

लिहाज़ा हन्फ़ी अज़ान व इक़ामत जो आज आम मुसलमानों में राइज है बिल्कुल सही और सुन्नत के मुताबिक़ है इस पर तअन करना जहालत व हिमाक़त है।

दूसरी फ़स्ल

इस मसला पर सवालात मअ् जवाबात

हन्फ़ी अज़ान व इक़ामत पर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी अब तक जो ऐतराज़ात कर सके हैं और जिनकी इत्तिला हम को पहुँची है वह तमाम मअ् जवाबात अर्ज़ करते हैं। अगर आइंदा और नए ऐतराज़ात हमारे इल्म में आए तो इंशाअल्लाह दूसरे एडीशन में इनके जवाबात भी अर्ज़ कर दिए जाएंगे।

ऐतराज़ नम्बर 1 : मुस्लिम शरीफ़ ने हज़रत अबू महज़ूरह् रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से पूरी अज़ान की हदीस नक़्ल की कि हुज़ूर ने उन्हें बनफ़्से नफ़ीस अज़ान तल्क़ीन फ़रमाई। उसके अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : दोनों शहादतों के बाद फिर बोलो और कहो **अश्हदु अन ला इलाहा इल्लल्लाहु।**

इस से मालूम हुआ कि ख़ुद हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम

ने हज़रत अबू महज़ूरह को अज़ान की शहादतैन में तरजीअ सिखाई, लिहाज़ा अज़ान में तरजीअ सुन्नत है।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द जवाब हैं।

एह यह कि हज़रत अबू महज़ूरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु की रिवायात सख़्त टकराव वाली हैं इस हदीस में तो वह तरजीअ् का ज़िक्र फरमाते हैं और उन ही की जो रिवायत हम पहली फस्ल में बहवाला तिबरानी पेश कर चुके हैं इस में तरजीअ का ज़िक्र बिल्कुल नहीं, तहावी शरीफ़ ने इन्हें अबी महज़ूरह से जो हदीस नक़्ल की उसमें अव्वल अज़ान में बजाए चार के दो बार तक्बीर का ज़िक्र है लिहाज़ा अबी महज़ूहरा की रिवायत टकराव की वजह से नाक़ाबिले अमल है। जैसा कि टकराव का हुक्म है।

दूसरे यह कि हज़रत अबू महज़ूरह की यह तरजीअ वाली हदीस तमाम उन मश्हूर हदीसों के ख़िलाफ़ है जो हम पहली फस्ल मे पेश कर चुके हैं जिन में तरजीअ का ज़िक्र नहीं, लिहाज़ा वह अहादीसे मशहूरा क़ाबिले अमल हैं न कि यह हदीसे वाहिद।

तीसरे यह कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के मश्हूर मुअज़्ज़िन हज़रत बिलाल और हज़रत सौबान रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा हैं उन्होंने हुज़ूर अलैहिस्सलाम के ज़माना में और बाद में कभी अज़ान में तरजीअ न फरमाई, लिहाज़ा उनका अमल ज़्यादा क़ाबिले क़बूल है।

चौथे यह कि इस हदीस अबू महज़ूरह को आम सहाबा ने तर्क कर दिया, उनका अमल तरजीअ पर न था, बल्कि तरजीअ के ख़िलाफ़ था लिहाज़ा वही ज़्यादा क़वी है।

पाँचवीं यह कि यह हदीसे अबू महज़ूरह क़यासे शरई के भी ख़िलाफ़ है और हमारी पेश करदा अहादीस क़यास के मुताबिक़ लिहाज़ा वह अहादीस क़ाबिले अमल हैं न कि यह हदीस जैसा कि तआरुज़ का हुक्म है।

छटे वह जवाब है जो इनाया शरह हिदाया ने दिया कि सैयदना अबू महज़ूरह को ज़माना कुफ्र में तौहीद व रिसालत से सख़्त नफ़रत थी और हुज़ूर अलैहिस्सलाम की बहुत मुख़ालफत की थी, जब यह इस्लाम लाए और हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने उन्हें अज़ान देने का हुक्म दिया तो उन्होंने शर्म की वजह से **अश्हदु अन ला इलाहा इल्लल्लाह** और **अश्हदु अन्ना मुहम्मदर्रसूलुल्लाह** आहिस्ता आहिस्ता कहा, बुलन्द आवाज़ से न कहा, तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने उन्हें दोबारा बुलन्द आवाज़ से यह कलिमात अदा करने का हुक्म दिया, यह दोबारा कहलवाना उस वक़्त था तालीम के लिए और शर्म दूर करने के लिए, लिहाज़ा यह हुक्मे आरज़ी है, जैसे अगर आज कोई शख़्स आहिस्ता आहिस्ता

अज़ान कह दे तो दोबारा बुलन्द आवाज़ से कहलवाई जाती है। इस सूरत में अबू महज़ूरह रज़ि अल्लाहु अन्हु की यह हदीस हमारी पहली फस्ल की हदीसों के ख़िलाफ़ नहीं।

सातवें वह जवाब है जो फ़त्हुल-क़दीर ने दिया कि हज़रत अबू महज़ूरह ने यह दोनों शहादतें बेग़ैर मद के कह दी थीं, इसलिए दोबारा मद के साथ कहलवायीं, बहरहाल यह तरजीअ एक ख़ुसूसी वाक़िया था न कि सुन्नते इस्लाम।

एतराज़ नम्बर 2 : अबू दाऊद, नसाई और दारमी ने हज़रत अबू महज़ूरह से रिवायत की।

तरजमा : बेशक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन्हें अज़ान 19 कलिमे और तक्बीर 17 कलिमे सिखाए।

इस हदीस से मालूम हुआ कि अज़ान के कलिमे उन्नीस हैं, यह तरजीअ से ही बनते हैं, अगर अज़ान में तरजीअ न हो तो कुल पन्द्रह कलिमे हैं, लिहाज़ा तरजीअ अज़ान में चाहिए।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं, एक यह कि यह हदीस आपके भी ख़िलाफ़ है क्योंकि अगर इस हदीस से अज़ान में तरजीअ साबित होती है तो इस से यह भी साबित हुआ कि इक़ामत के कलिमात दो दो बार हैं। अगर तुम्हारी तरह एक एक बार कलिमात होते तो उसके कलिमात बजाए सत्तरह के तेरह होते क्या आधी हदीस पर ईमान लाते हो आधी के इंकारी हो?

तरजीअ अज़ान के तमाम वह जवाबात हैं जो ऐतराज़ नम्बर 1 के मातेहत गुज़र गए कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने हज़रत अबू महज़ूरह को तरजीअ एक ख़ास वजह से तालीम दी थी। वग़ैरह।

एतराज़ नम्बर 3 : मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि सहाबा ने एलान नमाज़ के लिए आग और नाक़ूस की तज़वीज़ की तो यहूद व ईसाइयों का ज़िक्र भी किया कि वह भी इन चीज़ों से एलाने इबादत करते हैं तो हज़रत बिलाल को हुक्म दिया गया कि अज़ान दो दो बार कहें और इक़ामत एक एक बार।

इस हदीस से मालूम हुआ कि इक़ामत के कलिमात एक एक बार कहे जायें।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है क्योंकि इस से मालूम हुआ कि इक़ामत के सारे कलिमात एक एक बार हों, मगर तुम कहते हो कि इक़ामत में अव्वलन तक्बीर चार बार हो। क़द

क़ामतिस्सलातु दो बार हो, फिर तक्बीर दो बार हो लिहाज़ा जो जवाब तुम्हारा है वही हमारा। अगर कहो कि दूसरी हदीसों में **क़द क़ामतिस्सलातु** को दो बार कहने का हुक्म है तो हनफी कहेंगे कि दूसरी अहादीस में यह भी है कि इक़ामत के तमामी कलिमात दो बार कहे जायें। वह अहादीस क़ाबिले अमल क्यों नहीं?

दूसरे यह कि इस हदीस में हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने ज़ैद की ख़्वाब का बिल्कुल ज़िक्र नहीं बल्कि फ़रमाया गया कि जब सहाबा ने आग या नाक़ूस के ज़रिया एलाने नमाज़ का मशवरा किया और बाज़ सहाबा ने फरमाया कि इस में यहूद व नसारा से मुशाबेहत है इस्लामी एलान उनके ख़िलाफ़ चाहिए। तो फौरन ही हज़रत बिलाल को अज़ान व इक़ामत का हुक्म दिया गया तो इस अज़ान व इक़ामत से मौजूदा मुरव्वजा शरई अज़ान मुराद नहीं बल्कि लुग्वी अज़ान यानी एलाने नमाज़ है जो मुहल्ला में जा कर किया जाए और इक़ामत से मुराद बवक़्ते जमाअत मस्जिद वालों को जमा करने के लिए किया जाए कि आ जाओ, जमाअत खड़ी हो रही है, चूंकि यह एलान एक ही बार काफी था इसलिए एक बार का ज़िक्र हुआ, फिर इसके बाद अब्दुल्लाह इब्ने ज़ैद रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु की ख़्वाब का वाक़िया पेश आया, जिस से मुरव्वजह अज़ान व इक़ामत क़ायम की गई, वह एलानात छोड़ दिए गए।

तीसरे यह कि हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने ज़ैद की ख़्वाब में फ़रिश्ते ने जो इक़ामत की तालीम दी, उसमें अल्फ़ाज़ इक़ामत दो दो बार हैं और वह ख़्वाब ही अज़ान व इक़ामत की असल है, लिहाज़ा वही रिवायत क़ाबिले अमल है, दूसरी रिवायात जो उसके ख़िलाफ़ हैं वाजिबुत्तावील हैं या नाक़ाबिले अमल।

ख़्याल रहे कि यह ख़्वाब सिर्फ़ अब्दुल्लाह की नहीं बल्कि उनके अलावा सात सहाबा ने यही ख़्वाब देखा। गोया यह हदीस मुतवातिर के हुक्म में हो गई।

चौथे यह कि रिवायात का इसी पर इत्तिफ़ाक़ है, कि हज़रत बिलाल और इब्ने मक्तूम रज़ि अल्लाहु अन्हुमा ने अज़ान में तरजीअ अपने आख़िर तक न की। देखो मिर्क़ात शरह मिश्कात और उन बुज़ुर्गों की इक़ामत में इक़ामत के कलिमात दो दो ही रहे। तो यह कैसे हो सकता है कि हज़रत बिलाल जैसे मशहूर मुअज़्ज़िन और हज़रत इब्ने उम्मे मक्तूम अपनी सारी उम्र न तो अज़ान में तरजीअ करें न तक्बीर के कलिमात एक एक बार कहें, हालांकि उन्हें हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने यह हुक्म दिया हो लिहाज़ा तरजीअ वग़ैरह की सारी रिवायतें वाजिबुत्तावील हैं।

पाँचवीं यह कि यह रिवायात क़्यासे शरई के मुख़ालिफ़ हैं, और हमारी

पेश करदा अहादीस क़्यास के मुवाफ़िक़, लिहाज़ा उन्हीं को तरजीह होगी, जब अहादीस में टकराव हो तो क़्यास से तरजीह होती है देखो हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया **अल-वज़ूओ मिम्मा मस्सतहुन्नारू** आग की पकी चीज़ इस्तेमाल करने से वज़ू वाजिब है, दूसरी रिवायत में आया कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने गोश्त खा कर नमाज़ पढ़ी, वज़ू न फरमाया इन अहादीस में टकराव हुआ तो क़्यास की वजह से दूसरी हदीस को तरजीह हुई अब कोई नहीं कहता कि खाना खाने से वज़ू टूट जाता है, यह कुल्ली क़ानून है।

इक्कीसवाँ बाब

मुतनफ़्फ़िल के पीछे फ़र्ज़ नमाज़

मसला शरई यह है कि नफ़्ल वाले के पीछे फर्ज़ नमाज़ अदा नहीं होती, हाँ फर्ज़ वाले के पीछे नफ़्ल नमाज़ हो ज़ाती है, फर्ज़ नमाज़ हो जाती है, फर्ज़ नमाज़ में यह भी ज़रूरी है कि इमाम भी फर्ज़ पढ़ रहा हो, यह भी ज़रूरी है कि इमाम व मुक़्तदी दोनों एक ही नमाज़ पढ़ें, ज़ुहर वाला अस्र वाले के पीछे नमाज़ नहीं पढ़ सकता मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी कहते हैं कि फर्ज़ नमाज़ नफ़्ल वाले के पीछे जाइज़ है।

ज़रूरी नोट : बालिग़ मुसलमान की कोई नमाज़ नाबालिग़ बच्चे के पीछे जाइज़ नहीं, न फर्ज़ न तरावीह न नफ़्ल, क्योंकि बच्चे पर नमाज़ फर्ज़ नहीं महज़ नफ़्ल है और बच्चे की नफ़्ल शुरू करने के बाद भी नफ़्ल ही रहती है, अगरचे नफ़्ल शुरू करके तोड़ दे, तो उस पर उसकी क़ज़ा ज़रूरी नहीं। लेकिन बालिग़ की नफ़्ल शुरू हो कर ज़रूरी हो जाती है। कि अगर तोड़ दे तो क़ज़ा लाज़िम है इसलिए बालिग़ कोई नमाज़ बच्चे के पीछे नहीं पढ़ सकता, मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के नज़्दीक यह सब कुछ जाइज़ है, इसलिए हम इस बाब की भी दो फ़स्लें करते हैं। पहली फ़स्ल में इस मसला का सुबूत, दूसरी फ़स्ल में इस पर एतराज़ात मअ् जवाबात।

पहली फस्ल

मुतनफ़्फ़िल के पीछे मुतफ़र्रिज़ की नमाज़ नाजाइज़ है

फर्ज़ नमाज़ नफ़्ल वाले के पीछे अदा नहीं हो सकती, इस पर बहुत अहादीस शरीफ़ा और क़्यासे शरई हैं जिन में से कुछ पेश की जाती हैं।

हदीस नम्बर 1 ता 4 : तिर्मिज़ी, अहमद, अबू दाऊद, शाफ़ई, मिश्कात ने बाबुल-अज़ान में हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इमाम ज़ामिन है और मुअज़्ज़िन अमीन है ऐ अल्लाह इमामों को हिदायत दे और मुअज़्ज़िनों को बख़्श दे।

इस हदीस से मालूम हुआ कि इमाम सारे मुक़्तदियों की नमाज़ को अपनी नमाज़ के ज़िम्न में लिए होता है और ज़ाहिर है कि आला चीज़ अदना को अपने ज़िम्न में ले सकती है न कि अदना चीज़ आला को। फर्ज़ नफ़्ल को अपने अन्दर ले सकता है कि नफ़्ल से आला है नफ़्ल फर्ज़ को अपने ज़िम्न में नहीं ले सकती, कि फर्ज़ से अदना है ऐसे ही हर फर्ज़ नमाज़ अपने मिस्ल फर्ज़ को अपने ज़िम्न में ले सकती है न कि दूसरे फर्ज़ को। लिहाज़ा अगर इमाम नमाज़े अस्र पढ़ रहा हो तो उसके पीछे ज़ुहर की क़ज़ा नहीं पढ़ी जा सकती कि नमाज़े अस्र नमाज़े ज़ुहर को अपने ज़िम्न में नहीं ले सकती कि यह दोनों नमाज़ें अलाहिदा हैं।

हदीस नम्बर 5 : इमाम अहमद ने हज़रत सलीम सलमा से रिवायत की।

तरजमा : कि हज़रत सलीम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अर्ज़ की कि या रसूलल्लाह हज़रत मआज़ इब्ने जबल हमारे पास हमारे सो जाने के बाद आते हैं। हम लोग दिन में अपने कारोबार में मश्गूल रहते हैं फिर नमाज़ की अज़ान देते हैं हम निकल कर उसके पास आते हैं वह नमाज़ बहुत दराज़ पढ़ाते हैं तो उन से हुज़ूर ने फरमाया कि ऐ मआज़ फित्ना का बाइस न बनो या तो मेरे साथ नमाज़ पढ़ लिया करो या अपनी क़ौम को हल्की नमाज़ पढ़ाया करो।

ख़्याल रहे कि हज़रत मआज़ इब्ने जबल रज़ि अल्लाहु अन्हु नमाज़े इशा हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पीछे पढ़ कर अपनी क़ौम में पहुँच कर उन्हें नमाज़ पढ़ाते और दराज़ पढ़ाते थे जिसकी शिकायत बारगाहे नबवी में हुई जिसका वाक़िया यहाँ ज़िक्र हुआ।

मालूम हुआ कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत मआज़ इब्ने जबल रज़ि अल्लाहु अन्हु को इसकी इजाज़त न दी कि हुज़ूर के साथ नमाज़ पढ़ कर अपनी क़ौम को पढ़ायें। क्योंकि नफ़्ल वाले के पीछे फर्ज़ जाइज़ नहीं बल्कि फरमाया कि मेरे पीछे पढ़ो तो क़ौम को न पढ़ाओ या क़ौम को पढ़ाओ तो मेरे पीछे न पढ़ो।

हदीस नम्बर 6 : इमाम आज़म अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु ने हज़रत हम्माद से उन्होंने हज़रत इब्राहीम नख़ई से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि जब तुम क़ौम की नमाज़ में शामिल हो और

उनकी नमाज़ की नीयत न करो तो तुम्हें यह नमाज़ काफी नहीं और अगर इमाम एक नमाज़ पढ़े और पीछे वाला मुक़्तदी दूसरी नमाज़ की नीयत करे तो इमाम की नमाज़ तो हो जाएगी और पीछे वाले की न होगी।

इस से मालूम हुआ कि उलमा-ए-मिल्लत का भी यही मसलक है कि नफ़्ल वाले के पीछे फर्ज़ नमाज़ नहीं पढ़ी जा सकती। ऐसे ही एक फर्ज़ के पीछे दूसरा फर्ज़ अदा नहीं हो सकता।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यह है कि नफ़्ल वाले के पीछे फर्ज़ अदा न हो क्योंकि इमाम पेशवा है मुक़्दती उसका ताबेदार। इमाम की नमाज़ असल है, मुक़्तदी की नमाज़ इस पर मुतफ़र्रे। इसलिए इमाम के सह्व से मुक़्तदी पर सज्दा सह्व वाजिब हो जाता है। लेकिन मुक़्तदी के सह्व से न इमाम पर सज्दा सह्व वाजिब न ख़ुद उस मुक़्तदी पर। इमाम की क़िराअत मुक़्तदी के लिए काफी है मगर मुक़्तदी की क़िराअत इमाम के लिए काफी नहीं। हन्फ़ियों के नज़दीक तो मुतलक़न वहाबियों के नज़दीक सूरः फातिहा के सिवा हैं। अगर इमाम बेवज़ू नमाज़ पढ़ा दे तो मुक़्तदी की नमाज़ भी न होगी। लेकिन अगर मुक़्तदी बेवज़ू पढ़ ले तो इमाम की नमाज़ दुरुस्त होगी। इमाम सज्दा की आयत तिलावत करे तो मुक़्तदी पर सज्दा तिलावत वाजिब है मुक़्दती सुने या न सुने। लेकिन अगर मुक़्तदी इमाम के पीछे सज्दा की आयत तिलावत करे तो न इमाम पर सज्दा तिलावत वाजिब हो न ख़ुद उस मुक़्तदी पर। अगर इमाम मुक़ीम हो और मुक़्तदी मुसाफिर तो मुक़्तदी को पूरी नमाज़ पढ़नी पड़ेगी। लेकिन अगर इमाम मुसाफिर हो और मुक़्तदी मुक़ीम तो इमाम पूरी नमाज़ न पढ़ेगा, बल्कि क़स्र करेगा। इस क़िस्म के बहुत मसाइल हैं। जिन से मालूम होता है कि ख़ुद मुक़्तदी और उसकी नमाज़ ताबे है इमाम और इमाम की नमाज़ असल व मत्बूअ है। मत्बूअ ताबे से या तो बराबर हो या आला। और नफ़्ल नमाज़, फर्ज़ नमाज़ से दर्जा में कम है तो चाहिए कि नफ़्ल के पीछे फर्ज़ अदा न हों, ताकि आला व अफ़ज़ल अदना के ताबे न हो जाए। इसी तरह एक फर्ज़ दूसर फर्ज़ के पीछे नहीं हो सकते। क्योंकि एक नौअ दूसरे नौअ के ताबे नहीं हो सकती। जब नमाज़े ईद पढ़ाने वाले इमाम के पीछे नमाज़े फ़ज्र नहीं हो सकती और मग़्रिब पढ़ाने वाले के पीछे वित्र नहीं हो सकते। तो ज़ुहर वाले के पीछे इशा की क़ज़ा भी नहीं हो सकती ग़र्ज़कि ज़रूरी यह है कि या तो इमाम व मुक़्तदी की नमाज़ एक हो या मुक़्तदी की नमाज़ इमाम की नमाज़ से अदना हो कि इमाम फर्ज़ पढ़ रहा हो और मुक़्तदी नफ़्ल।

दूसरी फस्ल

इस मसला पर एतराज़ात व जवाबात

हम इस पर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों की वकालत में उनकी तरफ से वह एतेराज़ात भी अर्ज़ किए देते हैं जो वह किया करते हैं। और वह भी जवाब तक उनको सूझे भी न होंगे। और उन तमाम के जवाबात दिए देते हैं।

ऐतराज़ा नम्बर 1 : आम मुहद्देसीन ने हदीस रिवायत की कि मेअराज की रात नमाज़ें पंजगाना फर्ज़ हुईं उसके बाद दो दिन तक हज़रत जिब्रील अलैहिस्सलाम ने हुज़ूर को पाँचों नमाज़ें पढ़ाईं पहले दिन हर नमाज़ अव्वल वक़्त में दूसरे दिन आख़िर वक़्त में और फिर अर्ज़ किया, कि हुज़ूर इन वक़्तों के दरमियान इन नमाज़ों के औक़ात हैं। देखो हुज़ूर पर यह नमाज़ें फर्ज़ थीं और हज़रत जिब्रील के लिए नफ़्ल क्यों कि नमाज़ पंजगाना फरिश्तों पर फर्ज़ नहीं मगर इसके बावजूद हज़रत जिब्रील अलैहिस्सलाम इमाम हैं और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मुक़्तदी। मालूम हुआ कि नफ़्ल वाले के पीछे फर्ज़ नमाज़ दुरुस्त है बल्कि इस्लाम में पहली नमाज़ ऐसी ही हुई। यानी नफ़्ल के पीछे फर्ज़ और यह फेअ्ल सुन्नते नब्वी भी है और सुन्नते जिब्रीली भी।

जवाब : इसके दो जवाब हैं एक यह कि बताओ जिब्रील अलैहिस्सलाम यह नमाज़ें पढ़ाने रब के हुक्म से आए थे या खुद अपनी तरफ से आ गए बग़ैर हुक्मे इलाही। दूसरी बात तो बातिल है क्योंकि हज़रत जिब्रील अलैहिस्सलाम बग़ैर हुक्मे इलाही कभी नहीं आते रब फरमाता है।

वमा नतनज़्ज़लु इल्ला बेअम्रे रब्बिका।

हम रब के हुक्म के बग़ैर नहीं उतरते।

लिहाज़ा मानना पड़ेगा कि रब तआला के हुक्म से आए। जब हज़रत जिब्रील को रब ने उन नमाज़ों का हुक्म दिया तो उन पर फर्ज़ हो गईं रब का हुक्म ही फर्ज़ बनाने वाली चीज़ है लिहाज़ा उन नमाज़ों में नफ़्ल के पीछे फर्ज़ न पढ़े गए।

दूसरे यह कि इन दोनों में न हुज़ूर पर यह नमाज़ें फर्ज़ थीं न सहाबा पर क्योंकि अगरचे मेअ्राज की रात में नमाज़ें फर्ज़ कर दी गईं, लेकिन अभी उनका तरीक़-ए-अदा और वक़्त की तालीम न दी गई। क़ानून तशरीह से पहले वाजिबुल-अमल नहीं होता। इसलिए तमाम मुसलमानों ने न तो हज़रत जिब्रील अलैहिस्सलाम के पीछे यह नमाज़ें पढ़ीं न उन दिनों की नमाज़ें क़ज़ा कीं। लिहाज़ा हुज़ूर ने हज़रत जिब्राईल अलैहिस्सलाम के पीछे नफ़्ल पढ़ीं **अल्हम्दु लिल्लाह** कि तुम्हारा ऐतराज़ जड़ से उखड़ गया।

ऐतराज़ नम्बर 2 : मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत जाबिर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि हज़रत मआज़ इब्ने जबल हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ नमाज़ पढ़ते थे फिर अपनी क़ौम में आते और उन्हें नमाज़ पढ़ाते।

देखो हज़रत मआज़ इशा के फर्ज़ हुज़ूर के पीछे पढ़ लेते थे। फिर अपनी क़ौम में आ कर पढ़ाते थे। आपकी नमाज़ नफ़्ल थी और सारे मुक़्तदियों की नमाज़ फर्ज़। मालूम हुआ कि नफ़्ल वाले के पीछे फर्ज़ पढ़ना सुन्नते सहाबा है।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द जवाब हैं। एक यह कि हो सकता है कि हज़रत मआज़ बिन जबल रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पीछे नफ़्ल पढ़ते हों और क़ौम के साथ फर्ज़ अदा करते हों। हज़रत मआज़ ने यह कहीं नहीं फरमाया कि मैं हुज़ूर के पीछे फर्ज़ पढ़ लिया करता हूँ और मुक़्तदियों के आगे नफ़्ल की नीयत करता हूँ। लिहाज़ा आपके लिए यह हदीस बिल्कुल बेफाइदा है।

दूसरे यह कि इस हदीस में यह नहीं आया कि हज़रत मआज़ ने यह काम हुज़ूर की इजाज़त से किया कि उन्हें हुज़ूर ने इजाज़त दी हो कि फर्ज़ मेरे पीछे पढ़ लिया कर और नफ़्ल मुक़्तदियों के साथ। यह हज़रत मआज़ रज़ि अल्लाहु अन्हु का इज्तिहाद था जो कि वाक़िया में दुरुस्त न था। बारहा सहाबाए किराम से इज्तिहादी ग़लती हुई।

तीसरे यह कि हम पहली फस्ल में हदीस पेश कर चुके हैं। कि जब हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमते अक़्दस में हज़रत मआज़ के इस अमल की इत्तिला दी गई तो हुज़ूर ने उन्हें इस से मना फरमा दिया और हुक्म दिया कि या तो मेरे साथ नमाज़ पढ़ा करो या मुक़्तदियों को हल्की नमाज़ पढ़ाया करो। मालूम हुआ कि हज़रत मआज़ का यह इज्तिहादे मज़कूरा इरशादे नब्वी के ख़िलाफ़ होने ही वजह से नाक़ाबिले अमल है।

हदीस नम्बर 3 : बैहक़ी और बुख़ारी ने इन्हीं हज़रत जाबिर रज़ि अल्लाहु अन्हु से हज़रत मआज़ का यही वाक़िया रिवायत किया। उसके अल्फाज़ यह हैं।

तरजमा : फ़रमाते हैं कि हज़रत मआज़ हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ नमाज़े इशा पढ़ लेते थे। फिर अपनी क़ौम की तरफ लौटते थे तो उन्हें इशा पढ़ाते थे यह नमाज़ उनकी नफ़्ल होती थी।

इस हदीस से साफ मालूम हुआ कि हज़रत मआज़ बिन जबल हुज़ूर

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ नफ़्ल न पढ़ते थे बल्कि फ़र्ज़ ही पढ़ते थे। और मुक़्तदियों के आगे नफ़्ल अदा करते थे। लिहाज़ा यह नहीं कहा जा सकता कि आप हुज़ूर के पीछे नफ़्ल और मुक़्तदियों के साथ फ़र्ज़ पढ़ते थे।

जवाब : आपकी यह हदीस हज़रत जाबिर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से मन्कूल है वह हज़रत मआज़ का यह वाक़िया नक़्ल करके अपने अंदाज़ और क़यास से फरमाते हैं कि हुज़ूर के साथ फर्ज़ पढ़ते थे इस में यह नहीं कि हज़रत मआज़ ने अपनी नीयत व इरादे का पता दिया हो। दूसरे की नीयत के मुतअल्लिक़ उस से बग़ैर पूछे यक़ीन से नहीं कहा जा सकता। और न इस में यह है कि उन्हें हुज़ूर ने इसकी इजाज़त दी। लिहाज़ा यह हदीस किसी तरह आपकी दलील नहीं बन सकती।

हदीस नम्बर 4 : बुख़ारी शरीफ़ ने हज़रत अमर इब्ने सलमा रज़ि अल्लाहु अन्हु से एक तवील हदीस रिवायत की। जिस में वह फरमाते हैं कि हमारी क़ौम एक घाट पर रहती थी जहाँ से क़ाफ़िले गुज़रा करते थे। मैं हिजाज़ी क़ाफ़िलों से नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हालात और कुरआनी आयात पूछता रहता था। फ़त्हे मक्का के बाद मेरे वालिद मदीना मुनव्वरह हाज़िर हो कर अपनी क़ौम की तरफ़ से इस्लाम लाए और वहाँ से नमाज़ के अहकाम मालूम किए उन से हुज़ूर ने फरमाया कि अज़ान कोई दे दिया करे मगर नमाज़ वह पढ़ाए जिसे ज़्यादा कुरआने करीम याद हो। जब वापस हुए तो उन्हें पता लगा कि मुझे कुरआने करीम सब से ज़्यादा याद था। मुझे इमाम बना दिया उस वक़्त मेरी उम्र छेः साल की थी मैं क़ौम को नमाज़ पढ़ाता था। हदीस के आख़िरी अल्फ़ाज़ यह हैं।

तरजमा : मुझ पर एक चादर होती थी कि जब मैं सज्दा करता तो खुल जाती तो क़बीले की एक़ औरत ने कहा कि अपने क़ारी साहब की रानें क्यों नहीं ढकते तो लोगों ने मेरे लिए कपड़ा ख़रीद कर क़मीस सी दी।

देखो अमर इब्ने सलमा सहाबी हैं और तमाम सहाबा उनके पीछे नमाज़ फर्ज़ पढ़ते हैं अमर इब्ने सलमा की उमर शरीफ़ छेः साल है उन पर कोई नमाज़ फर्ज़ नहीं बच्चे की नफ़्ल भी बहुत अदना होती है। लेकिन जो उन बुड्ढे उनके पीछे फर्ज़ अदा करते हैं मालूम हुआ कि नफ़्ल वाले के पीछे फर्ज़ अदा हो जाते हैं।

जवाब : उसके वही जवाबात हैं जो ऐतराज़ात नम्बर 2 के मातहत गुज़र गए कि उनका यह अमल अपनी राय से था न कि हुज़ूर के फरमाने से चूंकि यह हज़रात ताज़ा इस्लाम लाए थे अहकामे शरईया की ख़बर न थी बेख़बरी में ऐसा किया। अगर आप इस हदीस से यह मसला साबित करते हो तो यह

भी मान लो कि नंगे इमाम के पीछे भी नमाज़ जाइज़ है क्योंकि अमर बिन सलमा ख़ुद फरमाते हैं कि मेरा कपड़ा इतना छोटा था कि सज्दा में चादर हट जाती और रानें नंगे हो जाते थे इसके बावजूद यह हज़रात नमाज़ें पढ़ते रहे। किसी ने नमाज़ न लौटाई। क्यों मसाइले शरईया से बेख़बरी की वजह से अफसोस कि आप हज़रात आँख बन्द करके हदीस पढ़ते हैं।

इस तमाम गुफ़्तगू से मालूम हुआ कि इस मसला के मुतअल्लिक़ वहाबियों के पास सरीह मरफूअ हदीस मौजूद नहीं न हदीस क़ौली न फ़ेअ्ली यूं ही चन्द शुब्हात की बिना पर इस मसले के पीछे पड़े हुए हैं और इमाम आज़म अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु पर महज़ अदावत से तबर्रा करते और उनकी जनाब में गुस्ताख़ियाँ गाली गलोज बकते हैं।

बाईसवाँ बाब

ख़ून और क़य से वुज़ू टूट जाता है

शरई मसला यह है कि आठ चीज़ें वुज़ू तोड़ देती हैं, जो चीज़ पेशाब पाखाना की राह से निकले, ग़फ्लत की नींद, ग़शी, नशा, जुनून, नमाज़ में ठट्ठा लगा कर हंसना, बहता हुआ ख़ून, मुँह भर कर क़य इनकी तफ़्सील कुतुबे फ़िक़ह में देखो।

मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के नज़दीक न तो बहता हुआ ख़ून वुज़ू तोड़े, न मुँह भर के क़य, लिहाज़ा कोई हन्फ़ी किसी ग़ैर मुक़ल्लिद के पीछे नमाज़ न पढ़े, क्योंकि यह लोग बद अक़ीदा भी हैं और इनके वुज़ू का भी ऐतबार नहीं, क्या ख़बर है कि क़य करके या नक्सीर वग़ैरह करके आयें और बग़ैर वुज़ू किए मुसल्ले पर खड़े हो जायें। चूंकि ग़ैर मुक़ल्लिद इस मस्अले पर भी बहुत शोर मचाते हैं। इसलिए हम इस बाब की भी दो फसलें करते हैं, पहली फसल में इसका सुबूत और दूसरी फसल में इस पर ऐतराज़ात मआ जवाबात, रब तआला कुबूल फ़रमाए।

पहली फस्ल

क़य और बहता ख़ून भी वुज़ू तोड़ता है

हन्फियों के नज़दीक मुँह भर के क़य और जिस्म से ख़ून का निकल कर ज़ाहिर बदन पर बह कर पहुँच जाना वुज़ू तोड़ देता है। ज़ाहिर बदन वह है जिसका धोना, ग़ुस्ल में फर्ज़ है दलाइल मुलाहिज़ा हों।

हदीस नम्बर 1 : दार क़ुतनी ने हज़रत तमीम दारमी रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि वुज़ू वाजिब है हर बहते हुए ख़ून से।

हदीस नम्बर 2 : इब्ने माजा ने हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जिस किसी को क़य या नक्सीर या मज़ी आ जाए तो नमाज़ से अलाहिदा हो जाए और वुज़ू करे।

हदीस नम्बर 3 : इब्ने माजा ने हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हा से रिवायत की कि हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में फातिमा बिन्ते अबी जैश हाज़िर हो कर अर्ज़ करने लगीं कि मुझे इस्तेहाज़ा का ख़ून इतना है कि मैं कभी पाक नहीं होती, क्या नमाज़ छोड़ दूँ? फ़रमाया कि यह हैज़ नहीं है रग का ख़ून हैं। लिहाज़ा।

तरजमा : हैज़ के ज़माना में नमाज़ से बचो फिर ग़ुस्ल करो और हर नजाज़ के लिए वुज़ू करो फिर नमाज़ पढ़ो अगरचे ख़ून चटाई पर टपकता रहे।

इस हदीस से मालूम हुआ कि इस्तेहाज़ा का ख़ून वुज़ू तोड़ देता है वरना हुज़ूर अलैहिस्सलाम इन बी बी साहिबा पर माज़ूर के अहकाम जारी न फ़रमाते और हर नमाज़ के वक़्त उन पर वुज़ू लाज़िम न फ़रमाते। देखो जिसे रीह या क़तरे की बीमारी हो वह हर नमाज़ के वक़्त एक वुज़ू करके नमाज़ पढ़ता रहे क्योंकि रीह और पेशाब वुज़ू तोड़ने वाली चीज़ है।

हदीस नम्बर 4 : इब्ने माजा ने हज़रत आइशा सिद्दीक़ा से रिवायत की।

तरजमा : आप नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत फ़रमाती हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया जिस को नमाज़ में क़य या नक्सीर आ जाए वह नमाज़ से अलग हो जाए और वुज़ू करे और अपनी नमाज़ पर बना करे जब तक कि बात न की हो।

हदीस नम्बर 5 व 6 : तिर्मिज़ी व अबू दाऊद ने हज़रत तलक़ इब्ने अली से रिवायत की।

तरजमा : एक देहाती ने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह हम में से कोई शख़्स जंगल में होता है उसकी रीह निकल जाती है और पानी में तंगी होती है तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि जब तुम में से कोई क़य करे तो वुज़ू करे।

हदीस नम्बर 7 : तिर्मिज़ी ने हज़रत अबुद्दरदा रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : एक बार नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को क़य आई तो आप ने वज़ू किया फिर मैं दमिश्क़ की मस्जिद में हज़रत सौबान से मिला तो अबुद्दरदा की यह हदीस बयान की आपने फ़रमाया अबुद्दरदा ने सच कहा पानी मैं ने ही डाला था यानी मैं ने ही वुज़ू कराया था।

हदीस नम्बर 8 : तबरानी ने कबीर में हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : आप मरफ़ूअ फरमाते हुए कहते हैं कि जब तुम में से किसी को नमाज़ में नक्सीर आ जाए तो अलाहिदा हो जाए और ख़ून को धो दे फिर वुज़ू लौटाए।

हदीस नम्बर 9 : दारे कुतनी ने हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जब तुम से किसी को नमाज़ में क़य या नक्सीर आ जाए या और कोई हदस करे तो अलाहिदा हो जाए और वुज़ू करे।

हदीस नम्बर 10 : इब्ने अबी शैबा ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

फरमाते हैं कि जिसे नमाज़ में नक्सीर आ जाए तो वह अलग हो जाए और वुज़ू करे फिर अगर कलाम न किया हो तो बाक़ी नमाज़ पूरी करे और अगर कलाम कर लिया हो तो नए सिरे से पढ़े।

हदीस नम्बर 11 : इमाम मालिक ने हज़रत यज़ीद इब्ने क़िस्त लैसी से रिवायत की।

तरजमा : उन्होंने हज़रत सईद बिन मुसैय्यिब को देखा कि उन्हें नमाज़ में नक्सीर आ गई तो आप हज़रात उम्मे सलमा ज़ौजा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के घर में आए तो उन्हें पानी दिया गया। उन्होंने वुज़ू किया फिर वापस हुए और बक़िया नमाज़ पूरी की।

हदीस नम्बर 12 : अबू दाऊद ने हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा से रिवायत की।

तरजमा : फरमाती हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जब नमाज़ में किसी का वुज़ू टूट जाए तो वह अपनी नाक पकड़ ले फिर चला जाए। (मिश्कात बाब मायजूज़ु मिनल-अमले)

इस हदीस में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने नमाज़ी को तदबीर

यह बताई कि अगर नमाज़ में किसी की रीह निकल जाए तो अपने ऐब को छुपाने के लिए नाक पर हाथ रख ले ताकि लोग समझें कि इसकी नक्सीर फूट गई, फिर मस्जिद से निकल कर वुज़ू की जगह जा कर वुज़ू कर ले, अगर नक्सीर से वज़ू न टूटता होता तो यह तदवीर वेफाइदा होती। हम ने बतौर नमूना बारह हदीसें पेश कर दीं वरना इसके मुतअल्लिक़ वहुत अहादीस मौजूद हैं। अगर शौक़ हो तो सहीहुल-बिहारी शरीफ़ का मुताला फरमाओ।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यही है कि बहता ख़ून और मुँह भर क़य वुज़ू को तोड़ दे क्योंकि वुज़ू तहारत और पाकी है। नापाकी निकलने से वुज़ू टूट जाना चाहिए। इसलिए पेशाब, पाखाना और रीह से वुज़ू जाता रहता है, बहता ख़ून, मुँह भर क़य नापाक है, कुरआने करीम फरमाता है और दमन मस्फ़ूहन इसी लिए बहते ख़ून वाला जानवर ज़िबह से हलाल होता है, ताकि नापाक ख़ून अल्लाह के नाम पर निकल जाए तो जैसे पेशाब, पाखाना और रीह निकलने पर वुज़ू टूट जाता है क्यों? इसलिए कि नापाक चीज़ निकली ऐसे ही बहता हुआ ख़ून और क़य निकलने से भी वुज़ू टूट जाना चाहिए। क्योंकि यह भी नजिस है जो ज़िस्म से निकला, नीज़ इस्तेहाज़ा और बवासीर के ख़ून से और मर्द की पेशाब की जगह से ख़ून निकलने से बिल-इत्तिफ़ाक़ वुज़ू टूट जाता है। इस्तेहाज़ा के ख़ून के मुतअल्लिक़ तो हदीस मरफ़ूअ भी वारिद है, जैसा कि हम इसी फस्ल में अर्ज़ कर चुके। जब यह तीन क़िस्म के ख़ून वुज़ू तोड़ देते हैं तो ला मुहाला दूसरी जगह से ख़ून निकल कर भी वुज़ू तोड़ेगा।

दूसरी फस्ल

इस मसला पर ऐतराज़ात व जवाबात

हक़ीक़त यह है कि ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के पास इस मसला पर कोई क़वी दलील नहीं, सिर्फ़ कुछ शुबहात और वहमियात हैं, मगर तक्मीले बहस के लिए हम इनके जवाबात भी दिए देते हैं।

ऐतराज़ नम्बर 1 : अहमद व तिर्मिज़ी ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

फरमाते हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि नहीं है वुज़ू मगर आवाज़ से या आहिस्ता रीह से।

इस से मालूम हुआ कि वुज़ू सिर्फ़ रीह से टूटता है, ख़ून क़य उसके अलावा है लिहाज़ा इस से वुज़ू नहीं टूटना चाहिए अल-अहसर के लिए है।

जवाब : इसके दो जवाब हैं। एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी

ख़िलाफ़ है क्योंकि तुम भी कहते हो पेशाब, पाखाना, वल्कि औरत या शर्मगाह को छूने से भी वुज़ू टूट जाता है और अल-अहसर से मालूम होता है कि सिवाए रीह के किसी चीज़ से वुज़ू न जाए। तो जो तुम्हारा जवाव है वही हमारा जवाब है।

दूसरे यह कि यह हस्र इज़ाफ़ी है न कि हक़ीक़ी, मतलब यह है कि अगर किसी को रीह निकलने का शुबहा हो तो बग़ैर आवाज़ या बदबू या यक़ीनी एहसास हुए वुज़ू नहीं टूटेगा।

इसकी तफ़्सीर वह हदीस है जो मुस्लिम शरीफ़ ने हज़रत अबू हुरैरह से रिवायत की।

तरजमा : जब तुम से कोई अपने पेट में कुछ हरकत पाए इसलिए उसे शुबह हो जाए कि कुछ हवा निकली या नहीं तो मस्जिद से न निकले यहाँ तक कि आवाज़ सुने या बू पाए।

इस हदीस शरीफ़ से मालूम हुआ कि आप की पेश करदा हदीस उस शख़्स के मुतअल्लिक़ है जिसे रीह निकलने का शुबह हो, हदीस का मंशा, कुछ और है और आप कुछ और कह रहे हैं।

ऐतराज़ नम्बर 2 : हाकिम ने हज़रत जाबिर इब्ने अब्दुल्लाह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : कि आप ग़ज़वा ज़ातुर्रिका में थे कि एक सहाबी के तीर लगा उनके ख़ून निकला, मगर उन्होंने रुकूअ किया सजदा किया और नमाज़ पूरी कर ली।

इस से मालूम हुआ कि सहाबी को ऐने नमाज़ की हालत में तीर लगा ख़ून निकला, मगर उन्होंने नमाज़ न तोड़ी बल्कि रुकूअ सज्दा करके नमाज़ मुकम्मल कर ली, अगर ख़ून निकलना वुज़ू तोड़ता तो उसी वक़्त आप नमाज़ तोड़ कर वुज़ू करते, फिर नमाज़ या नए सिरे से पढ़ते या वही पूरी फरमाते। मालूम हुआ कि ख़ून वुज़ू नहीं तोड़ता।

जवाब : इस एतराज़ के चन्द जवाब हैं। एक यह कि यह हदीस आपके भी ख़िलाफ़ है, क्योंकि जब इन सहाबी के तीर लगा, ख़ून बहा तो यक़ीनन उनके कपड़े और जिस्म ख़ून आलूदा हो गए, लेकिन इसके बावजूद वह नमाज़ पढ़ते ही रहे, तो चाहिए कि आप ख़ून, पेशाब पाखाना से भरे हुए कपड़ों में नमाज़ जाइज़ कहो, हालांकि तमाम अह्ले इस्लाम का इत्तिफ़ाक़ है कि नमाज़ी का बदन व कपड़ा पाक होना चाहिए। लिहाज़ा यह हदीस किसी तरह क़ाबिले अमल नहीं।

दूसरे यह कि इस हदीस में यह मज़कूरा नहीं कि उन सहाबी ने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इजाज़त से यह अमल किया, मालूम होता है कि मसला की वाक़्फ़ीयत उन्हें न थी इसलिए ऐसा कर गुज़रे।

तीसरे यह कि यह हदीस तमाम उन मरफ़ूअ व मौक़ूफ़ हदीसों के ख़िलाफ़ हे जो हम पहली फ़स्ल में अर्ज़ कर चुके, लिहाज़ा नाक़ाबिले अमल है।

चौथे यह कि यह हदीस क़ुरआने करीम के भी ख़िलाफ़ है क्योंकि रब तआला ने बदन व कपड़े पाक रखने का हुक्म दिया है, रब तआला फ़रमाता है। **वर्रुज़्ज़ा फ़हजुर** गन्दगी से दूर रहो, और फ़रमाता है। **व सियाबका फ़तह्हिर** अपने कपड़े पाक रखो और इस हदीस से मालूम हुआ कि इन बुज़ुर्ग ने गन्दे जिस्म और गन्दे पकड़ों में नमाज़ पढ़ ली, लिहाज़ा यह हदीस हरगिज़ क़ाबिले अमल नहीं।

पाँचवें यह कि पता नहीं चलता कि वह सहाबी जिन का यह वाक़िया है कौन हैं फ़क़ीह हैं या ग़ैर फ़क़ीह अगर फ़क़ीह हैं तो उन्होंने इज्तिहाद से यह काम किया जो हदीसे मरफ़ूअ और तमाम फ़ुक़हा सहाबा के ख़िलाफ़ है और जो इज्तिहाद हदीस के ख़िलाफ़ हो वह वाजिबे तर्क है और ग़ैर फ़क़ीह हैं तो उन से ख़ताअन यह हुआ, बहरहाल हदीस किसी तरह क़ाबिले अमल नहीं।

एतराज़ नम्बर 3 : अगर ख़ून वुज़ू तोड़ता है तो चाहिए कि थोड़ा ख़ून जो बहता न हो वह भी वुज़ू तोड़ दे, जैसे पेशाब नाक़िज़े वुज़ू है बहे या सिर्फ़ एक क़तरा ही निकले, जब थोड़ा ख़ून यानी न बहने वाला वुज़ू नहीं तोड़ता तो ज़्यादा ख़ून भी नाक़िज़े वुज़ू नहीं, ऐसे ही क़य अगर नाक़िज़े वुज़ू है तो चाहे मुँह भर कर हो या थोड़ी, वुज़ू तोड़ देती है यह फ़र्क़ तुम ने कहां से निकाला?

जवाब : अल्हम्दुलिल्लाह आप क़्यास के क़ाइल तो हुए कि ज़्यादा ख़ून को थोड़े ख़ून पर और ख़ून को पेशाब पर क़्यास करने लगे, मगर जैसे आप हैं वैसे ही आपका क़्यास। जनाब गन्दगी का निकलना वुज़ू तोड़ता है, पेशाब मुतलक़न गन्दा है, थोड़ा हो या ज़्यादा, ख़ून बहने वाला गन्दा है, रब तआला फ़रमाता है। **औ दमन मस्फ़ूहन** न बहने वाला गन्दा नहीं, आपका यह क़्यास क़ुरआनी आयत के ख़िलाफ़ है, और हर गन्दगी अपने मअ्दन में जहाँ वह पैदा हो पाक होती है मअ्दन से निकल कर नापाक होती है देखो आँतों में पाखाना और मसाना में पेशाब भरा है मगर पाक है इसलिए आपकी नमाज़ दुरुस्त होती है अगर यह नापाक होते तो नमाज़ किसी तरह जाइज़ न होती

कि गन्दगी उठाए हुए कि नमाज़ नहीं होती ऐसे ही गन्दा अंडा जो अन्दर से ख़ून हो गया है जेब में डाल कर नमाज़ पढ़ सकते हैं, उसके अन्दर का ख़ून चूंकि अपने मक़ाम में है पाक है जब यह समझ लिया तो अब पेशाब और ख़ून निकलने में फ़र्क़ समझो पेशाब की जगह मसाना है, वह मसाना से हट कर पेशाब की नाली में आ कर चमकता है लिहाज़ा नजिस है, अगरचे एक बूंद हो मगर ख़ून सारे जिस्म में दौड़ रहा है और खाल के नीचे उसका मक़ाम है, अगर कहीं सूई चुभ गई और ख़ून चमक गया मगर बहा नहीं तो वह अपनी मक़ाम में रह कर चमका नापाक नहीं, हाँ जब बहे तो समझो, कि अपने मक़ाम से अलग हो गया और नापाक। इस फ़र्क़ की बिना पर पेशाब तो चमक कर भी वुज़ू तोड़ देता है। मगर ख़ून बह कर तोड़ेगा। ग़र्ज़कि ख़ून का निकलना और है चमकना कुछ और। लिहाज़ा ख़ून को पेशाब पर क़यास करना ग़लत है।

एतराज़ नम्बर 4 : ऐनी शरह बुख़ारी ने ऐसी बहुत सी हदीसें नक़्ल कीं।

तरजमा : बेशक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने क़य की और वुज़ू न किया।

अगर क़य वज़ू तोड़ती, तो हुज़ूर क़य करके वुज़ू क्यों न फरमाते?

जवाब : माशाअल्लाह कैसा नफ़ीस एतराज़ है, जनाब यह भी अहादीस में आता है। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम बैतुल-ख़ला से तशरीफ़ लाए और वुज़ू के लिए पानी पेश किया गया मगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने वुज़ू न किया तो कह देना कि पेशाब पाख़ाना भी वुज़ू नहीं तोड़ता, जनाब वुज़ू न करने की वजह यह थी कि उस वक़्त वुज़ू की ज़रूरत न थी। वुज़ू टूट जाने पर फौरन वुज़ू करना वाजिब नहीं, हाँ अगर हुज़ूर फरमाते कि क़य वुज़ू नहीं तोड़ती तो आप पेश कर सकते थे। अगर यह अहादीस इस मसला की दलील हो सकतीं तो इमाम तिर्मिज़ी रहमतुल्लाह अलैहि ज़रूर पेश फ़रमाते इमाम तिर्मिज़ी ने ख़ून व क़य के नाक़िज़े वुज़ू होने पर निहायत सही हदीस पेश की और नाक़िज़ न होने पर कोई हदीस बयान न की। सिर्फ़ उलेमा का मज़हब बयान फ़रमाया, मालूम हुआ कि उनकी नज़र में क़य व ख़ून के वुज़ू न तोड़ने की कोई हदीस नहीं, क्योंकि वह हर मसला पर हदीस पेश करते हैं।

एतराज़ नम्बर 5 : क़य व ख़ून के मुतअल्लिक़ आपने जो अहादीस पेश कीं जिन में इरशाद हुआ कि जिस नमाज़ी को नमाज़ में क़य या नक्सीर आ जाए तो वह वुज़ू करे वहाँ वज़ू से मुराद ख़ून व क़य से कपड़ा धो लेना है न कि शरई वुज़ू जैसे कि हदीस शरीफ़ में आता है। **अल-वज़ूओ मिम्मा मस्सत्हुन्नारु** आग की पकी चीज़ खाने से वज़ू है वहाँ से मुराद हाथ धोना,

कुल्ली करना, न कि शरई वज़ू, क्योंकि खाना खा कर हाथ धोना कुल्ली करना सुन्नत है यह नाकिज़े वुज़ू नहीं। ऐसे ही यहाँ है लिहाज़ा तुम्हारे दलाइल ग़लत हैं।

जवाब : वाक़ई आपका यह सवाल ऐसा है जो आज तक किसी को न सूझा होगा, ज़हन ने बहुत रसाई की, उसका नाम तहरीफ़ है, अव्वलन तो आपने यह ग़ौर न किया कि वहाँ वुज़ू के अरबी मानी ख़ुद हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने ब्यान फ़रमा दिए कि एक बार खाना तनावुल करके हाथ धोए कुल्ली की और फरमाया **हाज़ा वुज़ूओ मिम्मा मस्सत्तहुन्नारु** आग की पकी चीज़ खाने से वुज़ू यह है। यहाँ आप यह मानी छोड़ कर ग़ैर मारूफ़ मानी क्यों मुराद ले रहे हो, नीज़ इस हदीस में यह है कि जिसको नमाज़ में क़य या नक्सीर आ जाए तो वुज़ू करे और नमाज़ बिना करे यानी बाक़ी नमाज़ पूरी करे अगर कपड़ा धोना मुराद होता तो नमाज़ की बिना पर जाइज़ न होती, बल्कि दोबारा पढ़नी पड़ती, जिसका कपड़ा नमाज़ में नजिस हो जाए और वह धोए वह बिना नहीं कर सकता दोबारा पढ़ेगा, लिहाज़ा आपकी यह तौजीह महज बातिल है।

तेईसवाँ बाब

नापाक कुवाँ पाक करना

मसला शरई यह है कि अगर कुएँ, गढ़े या घड़े वग़ैरह में थोड़ी सी भी नापाकी गिर जाए तो उनका पानी नजिस हो जाएगा। कि न पिया जा सकता है न उस से वुज़ू वग़ैरह जाइज़, एक क़तरा पेशाब कुएँ को गन्दा कर देता है, समुन्द्र, तालाब या बहता पानी उन के अहकाम जुदागाना हैं मगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी कहते हैं कि जब पानी दो मटके हो तो उस में ख़्वाह कितनी ही नापाकी पड़ जाए नापाक न होगा जब तक कि उसका रंग या बू या मज़ा न बदले, लिहाज़ा उनके नज़्दीक कुएँ में ख़ूब हगो मूतो कुवाँ पाक है, शौक़ से उसका पानी पियो, वुज़ू करो, फिर तुर्रह यह है कि इस मसले पर इमाम आज़म अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु को गालियाँ देते हैं कि उन्होंने गन्दगी गिर जाने पर कुएँ को नापाक क्यों क़रार दिया, मुसलमानों को पेशाब क्यों न पीने दिया हन्फ़ियों को चाहिए कि न तो ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों के पीछे नमाज़ें पढ़ें न उनके कुवों का पानी बे-तहक़ीक़ पियें। उनके कुएं अक्सर गन्दे होते हैं, जिन से यह लोग कपड़े धोते नहाते और वुज़ू करते हैं, न उनके बदन पाक, न कपड़े पाक चूंकि इस मसला का यह लोग बहुत मज़ाक़ उड़ाते और आवाज़ें कसते हैं। और कहते हैं कि यह मसला अहादीस़ के बिल्कुल

ख़िलाफ़ है, इसलिए हम इस मसला की भी दो फ़स्लें करते हैं पहली फ़स्ल में इस मसला के दलाइल, दूसरी फ़स्ल में उस पर सवालात मअ़ जवाबात।

पहली फ़स्ल

कुएँ का नापाक होना

कुवाँ चाहे कितना ही गहरा हुआ, और उसमें कितना ही पानी हो अगर उसमें एक क़तरा शराब या पेशाब या चूहा बिल्ली वग़ैरह गिर कर मर जाए तो नापाक है, बग़ैर पाक किए उसका पानी इस्तेमाल के क़ाबिल नहीं इसके मुतअल्लिक़ बहुत सी अहादीस वारिद हैं जिन में से हम बतौर नमूना पेश करते हैं मुलाहिज़ा हों।

हदीस नम्बर 1 ता 4 : मुस्लिम, नसाई, इब्ने माजा, तहावी ने हज़रत जाबिर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : मना फ़रमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस से कि ठेहरे पानी में पेशाब किया जाए फिर उस से वज़ू किया जाए।

हदीस नम्बर 5 ता 9 : मुस्लिम तहावी ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि कोई शख़्स ठहरे पानी में जनाबत से ग़ुस्ल न करे अबू साइब ने पूछा कि ऐ अबू हुरैरह फिर जुनबी किया करे फरमाया अलाहिदा पानी ले ले।

यह हदीस अहमद, इब्ने हिब्बान, अब्दुर्रज़्ज़ाक़ वग़ैरहुम बहुत मुहद्देसीन ने मुख़्तलिफ़ राविियों से ब-अल्फ़ाज़े मुख़्तलेफ़ा रिवायत फरमाई।

इन अहादीस से मालूम हुआ कि गढ़े, कुएँ और तमाम ठहरे हुए पानियों में न पेशाब करे न जनाबत का ग़ुस्ल, अगर ऐसा कर लिया गया तो पानी गन्दा हो कर क़ाबिले इस्तेमाल न रहेगा, अगर दो मटके पानी गन्दगी करने से नापाक न होता। तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यह मुमानेअत न फरमाते।

हदीस नम्बर 10 ता 12 : तिर्मिज़ी, हाकिम (मुस्तदरक) इब्ने असाकिर ने हज़रत अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से मुख़्तलिफ़ अल्फ़ाज़ से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं कि फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जब बर्तन में कुत्ता चाट जाए तो सात बार धोया जाए पहली बार मिट्टी से मांझा जाए और जब बिल्ली चाट जाए तो एक बार धोया जाए।

इन अहादीस से पता लगा कि अगर बर्तन में कुत्ता मुँह डाल दे तो वर्तन सात बार धोया जाए और एब बार मिट्टी से भी मांझा जाए, और अगर बिल्ली बर्तन से पी ले तो एक बार ही धोया जाए बर्तन ख़्वाह छोटा हो जैसे हांडी, लोटा या बड़ा जिस में दो चार मटके पानी आ जाए अगर दो मटके पानी किसी गंदगी से नापाक नहीं होता तो वह बर्तन क्यों नापाक हो जाता है जिस में यह पानी है। कुत्ते का मुँह तो पानी में पड़ा, और पानी बर्तन से लगा हुआ है, जब बर्तन नापाक हो गया तो यक़ीनन नजिस हो गया चाहे दो मटके हो या क़म व बेश।

हदीस नम्बर 13 ता 15 : दार कुतनी, तहावी ने अबुल-तुफ़ैल से और बैहक़ी ने हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : ज़मानए सहाबा में चाहे ज़मज़म में एक लड़का गिर गया तो कुएँ का पानी निकाला गया।

हदीस नम्बर 16 व 17 : इब्ने अबी शैबा और तहावी ने हज़रत अता से रिवायत की, अता ताबई हैं।

तरजमा : कि एक हब्शी चाहे ज़मज़ुमा में गिर कर मर गया हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने ज़ुबैर ने हुक्म दिया, पानी निकाला गया, पानी ख़त्म न होता था अन्दर देखा तो एक चश्म-ए-आब संगे असवद की तरफ से आ रहा था इब्ने ज़ुबैर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि काफी है।

हदीस नम्बर 18 : बैहक़ी ने हज़रत क़तादा से रिवायत की।

वह हज़रत इब्ने अब्बास से रिवायत करते हैं कि चाहे ज़मज़म में एक हब्शी गिर कर मर गया तो आपने एक आदमी को उतारा जिसने उसे निकाला फिर इब्ने अब्बास ने फरमाया कि जो पानी कुएँ में है उसे निकाल दो।

इन अहादीस से चन्द मसले मालूम हुए एक यह कि अगर कुएँ में कोई ख़ून वाला जानदार मर जाए तो कुवाँ नापाक हो जाएगा, दूसरे यह कि नापाक कुएँ के पाक करने का तरीक़ा यह है कि उसका पानी निकाल दिया जाए उसकी दीवारें वग़ैरह धोने की ज़रूरत नहीं, तीसरे यह कि अगर कुएँ का पानी टूट न सके तो परवाह न की जाए जो पानी फिलहाल मौजूद है वही निकाल दिया जाए जो बाद में आता रहे उसका हर्ज नहीं। चौथे यह कि जिस डोल व रस्सी से नापाक कुएँ का पानी निकाला जाए उसे धोना ज़रूरी नहीं, कुएँ के साथ वह भी पाक हो जायेंगे, अगर ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी इन अहादीस में ग़ौर फरमा लें तो इमाम साहब को गालियाँ देना, हन्फ़ियों का मज़ाक़ उड़ाना, आवाज़ें कसना छोड़ दें।

हदीस नम्बर 19 : तहावी शरीफ़ ने इमाम शअ़बी ताबई रज़ि. अल्लाहु

अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : इमाम शअबी चिड़िया, बिल्ली वग़ैरह के मुतअल्लिक़ फरमाते हैं कि अगर यह कुएँ में मर जाएं तो चालीस डोल पानी निकाला जाए।

हदीस नम्बर 20 : तहावी ने हज़रत हम्माद इब्ने सुलेमान तावई रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : आप फरमाते हैं कि जब कुएँ में मुर्ग़ी गिर कर मर जाए तो उस से चालीस या पचास डोल निकाले जायें फिर उस से वुज़ू किया जाए।

हदीस नम्बर 21 : तहावी शरीफ़ ने हज़रत मैसरह और ज़ादान से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ि अल्लाहु अंन्हु से रिवायत करते हैं कि आप ने फरमाया जब चूहा या कोई और जानवर कुएँ में मर जाए तो उसका पानी निकालो यहाँ तक कि पानी तुम पर ग़ालिब आ जाए।

हदीस नम्बर 22 : तहावी ने हज़रत इब्राहीम नख़ई ताबई से रिवायत की।

तरजमा : इब्राहीम नख़ई फ़रमाते हैं कि जब कुएँ में चूहा गिर जाए तो उस से कुछ डोल निकाले जायें।

हदीस नम्बर 23 : शैख़ अलाउद्दीन मुहद्दिस ने बहवाला तहावी हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की। (वल्लाहु आलम)

तरजमा : हज़रत अनस से रिवायत है कि आपने फरमाया कि जब चूहा कुएँ में गिर कर मर जाए और फौरन निकाल लिया जाए तो बीस डोल निकाले जायें।

हदीस नम्बर 24 : अबू बकर इब्ने अबी शैबा ने हज़रत ख़ालिद इब्ने मुसैलमा से रिवायत की।

तरजमा : हज़रत अली से पूछा गया इस बारे में कि कोई कुएँ में पेशाब कर दे फरमाया कि कुएँ का पानी निकाला जाए।

यह चौबीस रिवायतें बतौर नमूना पेश की गईं, जिन से मालूम हुआ कि गन्दी चीज़ गिर जाने से कुवाँ नजिस हो जाता है और पानी का निकालना उसकी पाकी है, अगर ज़्यादा तहक़ीक़ देखनी हो तो तहावी शरीफ़ और सहीहुल-बिहारी शरीफ़ का मुताला फरमायें।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यह है कि कुवाँ वग़ैरह नापाकी पड़ जाने से नापाक हो जायें क्योंकि जब नापाकी लग जाने से कपड़ा जिस्म बर्तन वग़ैरह तमाम चीज़ें नापाक हो जाती हैं तो पानी जो पतली चीज़ है जिसमें नजासत बहुत ज़्यादा सरायत कर जाती है। बदरज-ए-औला नापाक हो जाना चाहिए नीज़ जब दो मटके दूध, तेल, पतला घी, शहद, लस्सी नजासत पड़ने से नजिस हो

जाते हैं तो पानी उन चीज़ों से ज़्यादा पतला है वह भी ज़रूर नापाक हो जाना चाहिए वरना फ़र्क़ ब्यान करो कि दो मटके दूध क्यों नापाक हो जाता है और इतना पानी क्यों नहीं नजिस होता। इसी लिए सरकार सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फरमाते हैं कि सो कर जागो तो बग़ैर हाथा धोए पानी में न डाल दो। (मुस्लिम व बुख़ारी) पानी ख़्वाह दो कुल्ले हो या कम व बेश, देखो बेवुज़ू आदमी को पानी में हाथ डालने से मना फ़रमाया, हाँ नापाक चीज़ों के पाक करने के तरीक़े मुख़्तलिफ़ हैं, तांबे, शीशे के बर्तन पोंछ देने से पाक हो जाते हैं, नापाक जूता सिर्फ़ चलने फिरने और मिट्टी से रगड़ जाने से पाक हो जाता है, नजिस ज़मीन सिर्फ़ सूख जाने और असर नजासत जाते रहने से पाक हो जाती है, नजिस कपड़ा और जिस्म धोने से पाक होते हैं ऐसे ही नापाक कुवाँ पानी निकालने से पाक हो जाता है, नापाक दूध, तेल, पाक दूध व तेल के साथ मिल कर बह जाने से पाक हो जाते हैं। बहरहाल हक़ यह है कि कुवाँ वग़ैरह नजासत गिरने से नजिस हो जाता है फिर उनके पाक करने के मुख़्तलिफ़ तरीक़े हैं।

दूसरी फ़स्ल

इस मसले पर एतराज़ात व जवाबात

अब तक ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी इस मसला पर जिस क़द्र एतराज़ात कर सके हैं हम उनके जवाबात तफ़्सील वार अर्ज़ करते हैं, अगर उसके बाद कोई और एतराज़ हमारे इल्म में आया तो इंशाअल्लाह इस किताब के दूसरे ऐडीशन में उसका जवाब भी दिया जाएगा।

एतराज़ नम्बर 1 : तिर्मिज़ी शरीफ़ में हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : फरमाते हैं अर्ज़ किया गया कि या रसूलल्लाह क्या हम बिज़ाआ कुएँ से वुज़ू कर सकते हैं बिज़ाआ ऐसा कुवाँ था जिस में हैज़ के कपड़े, कुत्तों के गोश्त और बदबूदार चीज़ें डाली जाती थीं तो हुज़ूर ने फरमाया कि पानी पाक है उसे कोई चीज़ नापाक नहीं कर सकती।

बिज़ाआ मदीना पाक में एक कुवाँ था जिसमें हर क़िस्म की गन्दगी हत्ता कि मरे कुत्ते भी फेंक दिए जाते थे मगर इसके बावजूद सरकार ने कुएँ की नापाकी का हुक्म न दिया तअज्जुब है कि हुज़ूर तो बिज़ाआ कुएँ को कुत्ते, हैज़ के कपड़े और हर क़िस्म की गन्दगी गिरने पर भी नापाक नहीं फरमाते। मगर इमाम अबू हनीफ़ा एक क़तरा पेशाब गिर जाने पर भी सारा कुवाँ नापाक कह देते हैं, हन्फ़ियों का यह मसला हदीस के बिल्कुल ख़िलाफ़ है क्या अबू

हनीफ़ा हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से ज़्यादा पाक व सुथरे थे ?

जवाब : इस एतराज़ के चन्द जवाबात हैं, एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है क्योंकि यहाँ पानी में कोई क़ैद नहीं, कि कितना पानी नापाक नहीं होता, तो चाहिए कि घढ़े, लोटे में भी हैज़ के कपड़े, कुत्तों के गोश्त डाल कर पिया करो, क्योंकि पानी को कोई चीज़ नापाक करती ही नहीं।

दूसरे यह कि अगर यहाँ पानी से कुएँ का पानी मुराद हो और मतलब यह हो कि कुएँ को कोई चीज़ नापाक नहीं करती तो भी आपके ख़िलाफ़ है क्योंकि तुम कहते हो कि अगर नजासत से कुएँ के पानी का रंग या बू या मज़ा बदल जाये तो नजिस हो जाएगा। वह कौन सा कुवाँ है जो मरे कुत्तों, हैज़ के कपड़ों, और बदबूदार चीज़ों के गिरने के बावजूद उसका रंग बू, मज़ा न बदले, दिन रात का तजरबा है कि अगर एक मुर्ग़ी भी कुएँ में फूल फट जाए तो पानी में सख़्त तअफ़्फ़ुन आ जाता है, इस हदीस की रू से आपको फतवा देना चाहिए कि वहाबियों के कुवों में मुरदार कुत्ते, सुव्वर, हैज़ के कपड़े ख़ूब डाले जायें और तुम इसी बदबू दार पानी को पीते रहो, तुम ने बू और मज़ा बदलने की क़ैद कहाँ से लगाई?

तीसरे यह कि यह हदीस तमाम उन अहादीस के ख़िलाफ़ है जो हम पहली फस्ल में बयान कर चुके हैं तअज्जुब है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ठहरे पानी में पेशाब करने को भी मना फ़रमाते हैं और यहाँ मुरदार कुत्ते डालने से मुमानेअत नहीं फरमाते लिहाज़ा यह हदीस बिल्कुल क़ाबिल नहीं तमाम मशहूर हदीसों के ख़िलाफ़ है।

चौथे यह कि यह हदीस क़यासे शरई के भी ख़िलाफ़ है जैसा कि हम पहली फस्ल में अर्ज़ कर चुके हैं और जब अहादीस में टकराव हो तो जो हदीस ख़िलाफ़े क़यास हो वह वाजिबुत्तर्क है और जो मुताबिक़े क़यास हो वह वाजिबुल-अमल है लिहाज़ा उन अहादीस पर अमल करो जो हम पहली फस्ल में अर्ज़ कर चुके।

पाँचवें यह कि बिज़ाआ कुवाँ हमारे मुल्क के कुवों की तरह न था, बल्कि उसके नीचे पानी जारी था जैसा कि आज मक्का मुअज़्ज़मा के कुएँ-नहर ज़ुबैदा पर बने हुए हैं और मदीना मुनव्वरह के कुएँ नहर ज़रक़ा पर वाक़े हैं। बज़ाहिर कुएँ मालूम होते हैं, मगर दर हक़ीक़त वह आबे रवाँ की नहरें हैं चूंकि पानी जारी था, इसलिए जो गन्दगी बह गई पाक व साफ़ पानी आ गया न उस में बू थी न कोई गन्दगी, जारी नहर और जारी दरिया का हुक्म यही है।

चुनांचे इमाम तहावी ने इमाम वाक़ेदी से नक़्ल किया।

तरजमा : बिज़ाआ कुवाँ पानी का रास्ता था जो बाग़ों में जाता था उसमें पानी ठहरता न था।

इस सूरत में तमाम अहादीस मुत्तफ़िक़ हो गईं और मसला बिल्कुल हल हो गया लिहाज़ा कुवाँ गन्दगी गिरने से नापाक हो जाता है।

एतराज़ नम्बर 2 : तिर्मिज़ी शरीफ़ ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

फ़रमाते हैं कि मैंने सुना नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हालांकि आप से उस पानी के मुतअल्लिक़ सवाल हुआ जो जंगलों में होता है जिस पर दरिन्दे और जानवर वारिद होते हैं तो हुज़ूर ने फ़रमाया कि जब पानी दो मटके हो तो नापाकी को नहीं उठाता।

इस से मालूम हुआ कि दो मटके पानी नापाकी गिरने से नजिस नहीं होता, इमाम तिर्मिज़ी ने मुहम्मद इब्ने इसहाक़ से रिवायत की कि दो कुल्ले पाँच मश्कीज़ा होते हैं, जब पाँच मश्कीज़े पानी नापाक नहीं होता तो कुएँ में तो सैंकड़ों मश्कीज़े पानी होता है वह कैसे नापाक हो सकता है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं एक यह कि हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है क्योंकि इस से मालूम होता है कि दो मटके पानी कभी नापाक नहीं होता चाहे कितनी ही गंदगी गिरे ख़बस में मिक़्दार गंदगी की क़ैद नहीं तो चाहिए कि अगर दो मटके पानी में चार मटके पेशाब पड़ जाए और उसका बू, मज़ा रंग सब पेशाब का सा हो जाए तब भी वहाबी पीते रहें, रंग व बू न बदलने की क़ैद तुम ने कहाँ से लगाई? यह भी हदीस के ख़िलाफ़ है।

दूसरे यह कि **लम यहमिलिल-ख़ुब्सा** के यह मानी कैसे हुए कि नापाक नहीं होता उसके मानी हैं गंदगी बर्दाश्त नहीं करता यानी नापाक हो जाता है, जब यह एहतमाल भी मौजूद है, तो तुम्हारा इस्तिदलाल बातिल है।

तीसरे यह कि अगर यही मानी किए जाएं कि दो मटके पानी कभी नापाक नहीं होता तो यह हदीस उन तमाम हदीसों के ख़िलाफ़ है जो हम पहली फ़स्ल में ब्यान कर चुके कि हुज़ूर ने ठहरे पानी में पेशाब करने से मना फ़रमाया, ख़्वाह दो मटके हो या कम व बेश, और सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु ने चाहे ज़मज़म में एक हब्शी गिरने पर उसका पानी निकलवाया। यह क्यों वहाँ तो हज़ारों मटके पानी था। लिहाज़ा यह हदीस लाइक़े अमल नहीं।

चौथे यह कि **कुल्लतैने कुल्लतुन** का तस्नीया है, कुल्ला मटके को भी कहते हैं और इंसान की क़द व क़ामत को भी और पहाड़ की चोटी को भी यहाँ कुल्ला के मानी इंसानी क़द व क़ामत है और इस से गहराई का अंदाज़ा बताना मक़्सूद नहीं बल्कि लम्बाई का अंदाज़ा ब्यान करना मक़्सूद है। यानी जब पानी बह रहा हो और क़द व क़ामत इंसान की बक़द्र उसे बहने के लिए

फासिला मिल जाए तो अब किसी चीज़ से नजिस न होगा। क्योंकि वह पानी नहरों की तरह रवाँ व जारी गन्दगी को बहा ले जाएगा। फौरन दूसरा पानी आ जाएगा। इस मानी से अहादीस में टकराव भी नहीं होगा और हर हदीस वाजिबुल-अमल भी होगी। यह वजह बहुत बेहतर है क्योंकि अगर कुल्ला के मानी हों मटका तो पता न चलेगा कि कितना बड़ा मटका कहाँ का मटका और पाँच मुश्क मिक्दार मुकर्रर करना भी दुरुस्त नहीं कि हदीस में यह मिक्दार मज़्कूर नहीं। और यह ख़बर नहीं कि मुश्कीज़ा कितना बड़ा और कहाँ का। ग़र्ज़कि हदीस मुज्मल होगी। मुज्मल पर अमल ना मुम्किन है। पाँचवें यह कि इस हदीस में वह सूरत मुराद है कि दो कुल्ले पानी ज़मीन पर ख़ूब फैला हुआ बड़े हौज़ की मिक्दार में हो यानी सौ हाथ सतह हो गई हो अब चूंकि यह पानी तालाब के हुक्म में हो गया लिहाज़ा मामूली गन्दगी गिरने से नापाक न होगा। इस सूरत में भी अहादीस में तआरुज़ नहीं।

एतराज़ नम्बर 3 : हन्फियों का डोल बड़े कमाल वाला है कि नापाक कुएँ से सिर्फ़ नापाक पानी छांट कर निकाल लाता है पाक पानी छोड़ आता है। हैरत है कि जब कुएँ में चिड़िया मर गई जिस से सारा कुवाँ नापाक हो गया और हन्फियों ने उस में से सिर्फ़ तीस डोल निकाले तो या तो कहो कि सारा कुवाँ नापाक ही न हुआ था सिर्फ़ तीस डोल पानी नापाक था जिसे यह करामती डोल छांट कर निकाल लाया। अगर कुल कुवाँ नापाक हो गया था तो तीस डोल निकल जाने से सारा पानी पाक कैसे हो गया।

जवाब : यह करामत तो वहाबियों के डोल में भी ज़ाहिर होती है। जब कुएँ का पानी बू, मज़ा, रंग बदल जाने की वजह से नापाक हो जाए और कुवाँ चश्मा वाला हो जिसका पानी टूट न सके, अब वहाबी साहिबान उसे पाक करें। बताओ इस सूरत में कुल कुवाँ नापाक हुआ है या कुछ डोल अगर कुछ डोल पानी नापाक हुआ है तो वहाबियों का डोल वाक़ई करामाती है कि छांट छांट कर सिर्फ़ गन्दा पानी निकाल लाया और पाक पानी को हाथ न लगाया और अगर कुल कुवाँ नापाक हुआ था तो कुएँ का कुल पानी निकला भी नहीं पानी के आस पास की दीवारें धोई भी न गईं और कुवाँ पाक हो गया यह कैसे हुआ इसका जो जवाब वहाबी देंगे वही हमारी तरफ से समझ लें। जनाबे आली चिड़िया मर जाने से सारा ही कुवाँ नापाक हो जाता है मगर नापाक चीज़ों के पाक करने के तरीक़े मुख़्तलिफ़ हैं। कोई चीज़ सूख कर कोई जल कर कोई बह कर कोई सिर्फ़ पोंछ देने से पाक हो जाती है। ऐसे ही इस कुएँ का पानी सिर्फ़ आसानी के लिए चालीस डोल निकाल देने से पाक हो जाता है। देखो मनी नापाक है लेकिन जब कपड़े में लग कर ख़ुश्क हो जाए तो

सिर्फ़ मल कर छाड़ देने से कपड़ा पाक हो जाता है तुम्हारा भी यह अक़ीदा है कहिए यह कपड़ा बग़ैर धोए पाक कैसे हो गया। सिर्फ़ आसानी के लिए ऐसे ही आसानी के लिए सिर्फ़ चालीस डोल निकाल देने से सारा कुवाँ पाक हो जाता है।

एतराज़ नम्बर 4 : अगर चिड़िया चूहा मर जाने से कुवाँ नापाक हो जाता है तो नापाक पानी की वजह से कुएँ की दीवार भी नापाक हो गई और जब उसे पाक करने के लिए डोल डाला गया तो वह डोल व रस्सी भी नापाक हो गई तो चाहिए था कि उसे पाक करने के लिए दीवार भी धोई जाती और डोल रस्सी भी पाक की जाती।

जवाब : इस एतराज़ का जवाब नम्बर 3 के जवाब में गुज़र गया कि ऐसे मौक़ा पर शरीअत आसानी करती है कुएँ की दीवारें और डोल व रस्सी धोने में सख़्त दुश्वारी थी इसलिए उसकी माफ़ी दी गई, तुम भी अपने गन्दे कुएँ पाक करते वक़्त न कुएँ की दीवारें धोते हो न डोल व रस्सी। आपका यह क़्यास हदीस के मुक़ाबिल है और नस के मुक़ाबिल क़्यास दोड़ाना जाइज़ नहीं, हम पहली फ़स्ल में बता चुके हैं कि हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास वग़ैरहुम सहाबा रज़ि अल्लाहु अन्हुम ने चाहे ज़मज़म पाक किया मगर न उसकी दीवारें धोईं न डोल व रस्सी।

ख़ातमा

आख़िर किताब में हम चन्द अहम ज़रूरी मसाइल अर्ज़ करते हैं जिन से अह्ले सुन्नत अहनाफ़ के दिल बाग़ बाग़ हो जाएं। गुलशने तक़्लीद के ऐसे फूल सूंघाते हैं जिन से उनके दिमाग़ ईमान महक जाएं क्योंकि वहाबी ग़ैर मुक़ल्लेदीन की ख़ुश्क गुफ़्तगू सुनते सुनते दिल घबरा गया।

पहला मस्अला

हज़रत इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रज़िअल्लाहु अन्हु के मनाक़िब

ख़ुश्क मिज़ाज ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी हज़रत इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु के सख़्त दुश्मन हैं। उनकी जनाब में बहुत बकवास करते हैं उनके मसाइल पर फब्तियाँ कसते और मज़ाक़ उड़ाते हैं। कुछ बद नसीबों ने इमामे आज़म रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु की तारीख़े विलादत सग, और तारीख़े वफात बू कम जहाँ पाक, लिखी है, नऊज़ुबिल्लाह जैसे रवाफ़िज़ के नज़्दीक सहाबा किबार पर तबर्रा बेहतरीन इबादत है ऐसे ही इन वहाबियों के नज़्दीक हज़रत इमाम पर तबर्रा बेहतरीन मशग़ला, सच

है कि वहाबी और गिद के अदद एक हैं गद भी मुरदार ख़ोर है वहाबी गुज़रे हुए बुज़ुर्गों के तबर्राई ग़ीबत को कुरआने करीम ने मरे भाई का गोश्त खाना क़रार दिया है वहाबी और गिद अदद में भी एक मशग़ला में भी एक जैसे। ख़्याल रहे कि वहाबी के अदद चौबीस, चूहे के अदद चौबीस, यह तीनों एक ही जिन्स के हैं। वहाबी चूहे की तरह दीन कतरते हैं, गिर्द की तरह ग़ीबत करके मुरदार खाते हैं मुझे यह बकवास सुन कर सदमा हुआ दिल ने चाहा कि इस आली जनाब के कुछ हालात और मनाक़िब मुसलमानों को सुनाऊं, और बताऊं कि हज़रत इमाम का इस्लाम में क्या दरजा व मंज़िलत है। शायद रब तआला इन बुज़ुर्गों की मदह ख़्वानी को मेरे लिए कफ़्फ़ारा सैय्यात बना दे, और मुझे उन बुज़ुर्गों के गुलामों में हश्र नसीब फ़रमा दे, मुसलमानों अपने इमाम के मनाक़िब सुनें और ईमान ताज़ा करें।

इमामे आज़म का नाम व नसब : हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा का नाम शरीफ़ नौमान इब्ने साबित इब्ने ज़ौती है। हज़रत ज़ौती यानी इमाम के दादा फ़ार्सीयुन्नस्ल हैं। हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु के आशिक़े ज़ार और आपके ख़ास मुक़र्रेबीने बारगाह में से थे। आप ही की मुहब्बत से कूफ़ा में क़याम इख़्तियार किया, जो हज़रत अली मुर्तज़ा हैदरे कर्रार रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का दारुल-ख़िलाफ़ा था, हज़रत ज़ौती अपने फरज़न्द हज़रत साबित को जो बच्चे थे हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु के पास दुआ के लिए ले गए। हज़रत अली मुर्तज़ा ने साबित के लिए दुआ फ़रमाई और बहुत बरकत की बशारत दी, हज़रत इमाम हुज़ूर अली मुर्तज़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु की करामत व बशारत हैं।

हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा 80 हिजरी में कूफ़ा में पैदा हुए और १५० हिजरी में बग़दाद में वफ़ात पाई। ख़ैरज़ान क़ब्रिस्तान में दफन हुए, आपकी क़ब्र ज़ियारत गाहे ख़ास व आम है। सत्तर साल उम्र शरीफ हुई।

हज़रत इमाम ने बहुत सहाबा का ज़माना पाया, जिन में से चार सहाबा से मुलाक़ात की, अनस बिन मालिक जो बसरे में थे, अब्दुल्लाह इब्ने अबी औफ़ा जो कि कूफ़ा में थे, सुहैल इब्ने सअद साअदी जो मदीना मुनव्वरह में थे। अबू तुफैल आमिर इब्ने वासिला जो मक्का मुअज़्ज़मा में थे। इसके मुतअल्लिक़ और भी रिवायात, मगर यह क़ौल राजेह है। इमामे आज़म हज़रत हम्माद के शागिर्द रशीद और हज़रत इमाम जाफर सादिक़ रज़ि अल्लाहु अन्हु के तिल्मीज़े ख़ास और मख़्सूस सोहबत याफ़्ता हैं। दो साल तक इमाम जाफर सादिक़ रज़ि अल्लाहु अन्हु की मअ़ईय्यत नसीब हुई।

हज़रत इमाम को मंसूर बादशाह कूफ़ा से बग़दाद लाया, फिर आप से

क़ाज़ीयुल-क़ज़ात का ओहदा क़बूल करने की दरख़्वास्त की, आपने इंकार किया, इस पर आपको क़ैद कर दिया, और क़ैद में ही यह आफ़ताबे इल्म व अमल गुरूब हो गया। रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु।

इमाजे आज़म के मनाक़िब : हक़ीक़त यह है कि हज़रत इमामे आज़म के फ़ज़ाइल व मनाक़िब हमारी हद वअद से बाहर हैं, हज़रत इमाम हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का ज़िन्द-ए-जावेद मोजज़ा और हज़रत अमीरुल-मुमिनीन अली मुर्तज़ा हैदरे कर्रार रज़ि अल्लाहु अन्हु की न मिटने वाली करामत हैं। उम्मते मुस्तफ़वीया के चिराग़ दीनी मुश्किलात को हल फरमाने वाले हैं अल्हम्दुलिल्लाह अह्ले सुन्नत अहनाफ़ बड़े ख़ुश नसीब हैं हमारा रसूल रसूले आज़म सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हमारा पीर ग़ौसे आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु हमारा इमाम इमामे आज़म अज़्मत व इज़्ज़त हमारे ही नसीब में है बफ़ज़्लेही तआला क कर्रमहू हम तबर्रुक के लिए चन्द मनाक़िब अर्ज़ करते हैं हन्फी सुनें और बाग़ बाग़ हों।

(1) हुज़ूर सैय्यदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत इमामे आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु की पेशेन गोई और फज़ीलत निहायत एहतमाम से बयान फ़रमाई, चुनांचे मुस्लिम व बुख़ारी ने अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से और तबरानी ने हज़रत इब्ने मसऊद रज़ि अल्लाहु अन्हु से अबू नुऐम, शीराज़ी, तबरानी, ने क़ैस इब्ने साबित इब्ने उबादा से रिवायत की।

तरजमा : अगर ईमान सुरैया तारे के पास होता तो फार्सी औलाद में से कुछ लोग वहाँ से ले आते, मुस्लिम बुख़ारी की दूसरी रिवायत में है कि क़सम उसकी जिसके क़ब्ज़ा में मेरी जान है अगर दीन सुरैया तारे में लटका होता तो फारस का एक आदमी उसे हासिल कर लेता।

बताओ फार्सीयुन्नस्ल में इस शान का इमामे आज़म अबू हनीफ़ा नौमान इब्ने साबित रज़ि अल्लाहु अन्हु के सिवा कौन हुआ ?

(2) अल्लामा इब्ने हजर मक्की शाफ़ई रहमतुल्लाह अलैह ने हज़रत इमामे आज़म के फज़ाइल में एक मुस्तक़िल किताब लिखी जिसका नाम है ख़ैरातुल हस्सान फ़ी तरजमा अबी हनीफ़तुन्नौमान, उसमें एक हदीस नक़्ल फरमाई कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया।

सन् डेढ़ सौ में दुनिया की ज़ीनत उठाई जाएगी।

सन् डेढ़ सौ में हज़रत इमामे आज़म की वफ़ात शरीफ़ है, मालूम हुआ कि इमामे आज़म दुनियाए शरीअत की ज़ीनत शरीअत की रौनक़, इल्म व अमल की ज़ेबाइश थे, इमाम कुरदरी ने फरमाया कि इस हदीस से हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा की तरफ ही इशारा है।

(3) हज़रत इमामे आज़म दुनिया-ए-इस्लाम में पहले वह आलिमे दीन हैं जिन्होंने फ़िक्ह व इज्तिहाद की बुनियाद रख कर सारी उम्मते रसूल पर एहसाने अज़ीम फरमाया, बाक़ी तमाम अइम्मा जैसे इमाम शाफ़ई, इमाम मालिक, इमाम अहमद इब्ने हंबल वग़ैरहुम रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुम ने इसी बुनियाद पर इमारत क़ाइम की। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि इस्लाम में जो अच्छा व नेक तरीक़ा ईजाद करे उसे अपना भी सवाब मिलेगा और तमाम अमल करने वालों का भी।

(4) हज़रत इमाम आज़म तमाम फ़ुक़हा व मुहद्देसीन के बिला वास्ता या बिल-वास्ता उस्ताज़ हैं, यह तमाम हज़रात इमामे आज़म के शागिर्द चुनांचे इमाम शाफ़ई हज़रत इमाम मुहम्मद के सौतेले बेटे और उनके शागिर्द हैं। ऐसे ही इमाम मालिक ने हज़रत इमाम की तस्नीफ़ात से फ़ैज़ हासिल किया, और इमाम बुख़ारी मुहद्देसीन के उस्ताज़ हैं, और इमाम बुख़ारी के बहुत उस्ताज़ अलैहि शैख़ हन्फ़ी हैं, गोया आसमाने इल्म के सूरज इमामे आज़म हैं बाक़ी उलमा तारे।

(5) इमामे आज़म रहमतुल्लाह अलैहि के बिला वास्ता शागिर्द एक लाख से ज़्यादा हैं जिन में से अक्सर मुज्तहिद हैं जैसे इमाम मुहम्मद, इमाम अबू यूसुफ़, इमाम ज़ाफर, इमाम इब्ने मुबारक जो दुनियाए इल्म के चमकते हुए तारे हैं, हज़रत इमाम मुहम्मद साहब ने नौ सौ नव्वे दीनी शानदार किताबें तस्नीफ़ फरमाईं। जिन में से छः किताबें बड़े पाए की हैं जिन्हें कुतुब ज़ाहिरुर्रिवायह कहा जाता है और यह तमाम कुतुबे फ़िक्ह की असल मानी जाती हैं।

(6) तमाम नबियों के सरदार चार नबी हैं, आसमानी सहीफ़ों की सरदार चार कुतुब, फ़रिश्तों के सरदार चार फ़रिश्ते, सहाबा में अफ़ज़ल व आला चार यार, उलमा-ए-मुज्तहेदीन में अफ़ज़ल चार इमाम। फिर उन चार नबियों में हुज़ूर अफ़ज़ल। चार किताबों में कुरआन अफ़ज़ल, चार फरिश्तों में हज़रत जिब्रील अफ़ज़ज, चार यार में अबू बकर सिद्दीक़ अफ़ज़ल, चार इमामों में इमामे आज़म अफ़ज़ल, इसी लिए इमाम शाफ़ई ने फरमाया कि फ़ुक़हा अबू हनीफ़ा की औलाद हैं, वह उन सब के वालिद।

(7) इमामे आज़म जैसे आसमाने इल्म के सूरज हैं वैसे ही मैदाने अमल के शह सवार चुनांचे आपनें चालीस साल इशा के वज़ू से फ़ज्र की नमाज़ पढ़ी। चालीस साल ऐसे रोज़े रखे कि किसी को ख़बर न हुई, घर से खाना लाए, बाहर तलबा को खिला दिया, घर वाले समझे कि घर में खा कर तशरीफ़ लाए हमेशा माहे रमज़ान में इक्सठ कुरआन ख़त्म करते थे एक कुरआन दिन में एक रात में और एक सारे महीना में तरावीह में मुक़्तदियों के साथ और पचपन हज किए।

(8) इमामे आज़म रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का मज़ार पुर अनवार क़बूल दुआ के लिए अक्सीरे आज़म है चुनांचे हज़रत इमाम शाफ़ई कुद्देस सिर्रहू फरमाते हैं कि जब मुझे कोई हाजत पेश आती है तो मैं बग़दाद शरीफ़ इमामे आज़म के मज़ार शरीफ़ पर हाज़िर होता हूँ, दो रकाअत नफ़्ल पढ़ कर इमामे आज़म की क़ब्र शरीफ़ की बरकत से दुआ करता हूँ बहुत ही जल्द हाजत पूरी होती है। इमाम शाफ़ई जब इमामे आज़म कुद्देस सिर्रहू के क़ब्रे अनवर पर हाज़िर होते तो हन्फ़ी नमाज़ पढ़ते थे कि कुनूते नाज़िला न पढ़ते थे किसी ने पूछा इसकी वजह क्या है? फरमाया कि इस क़ब्र वाले का एहतराम व अदब करता हूँ। (शामी)

ख़्याल रहे कि इसका मतलब यह नहीं कि इमाम शाफ़ई बग़दाद शरीफ़ में इमाम रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु के मज़ार के अदब में सुन्नत तर्क फरमा देते थे, मतलब यह है कि कोई इमाम या मुक़ल्लिद यक़ीन से नहीं कह सकता कि मैं बरहक़ हूँ, दूसरे अइम्मा ग़लती पर बल्कि अपने हक़ होने का ज़न ग़ालिब करता है यह भी कहता है कि शायद दूसरे इमाम का क़ौल हक़ हो, अक़ाइद में यक़ीन है और अइम्मा के इख़्तिलाफ़ी मसाइल में हर एक को गुमानग़ालिब है, तो गोया हज़रत इमाम शाफ़ई ने यहाँ हाज़िर हो कर उस पर अमल किया जिसे इमाम आज़म सुन्नत समझते हैं इसमें एक सुन्नत का तर्क दूसरी सुन्नत पर अमल है लिहाज़ा इस पर कोई एतराज़ नहीं।

(9) इमामे आज़म रहमतुल्लाह अलैह ने सौ बार रब तआला को ख़्वाब में देखा, आख़िरी बार जो दुआ रब से पूछी, और रब ने जो जवाब दिया वह **रद्दुल-मुह्तार** में तफ़सील वार दर्ज है।

उम्मते मुहम्मदीया के बड़े बड़े औलिया अल्लाह, ग़ौस व कुतुब, अब्दाल, औताद हज़रत इमामे आज़म रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु के दामन से वाबस्ता हैं और आपके मुक़ल्लिद हैं जिस क़द्र औलिया मज़्हबे हन्फ़ी में हैं दूसरे मज़्हब में नहीं चुनांचे हज़रत इब्राहीम अदहम, शक़ीक़ बल्ख़ी, मारूफ़ करख़ी, हज़रत बायज़ीद बुस्तामी, फ़ुज़ैल इब्ने अयाज़ ख़ुरासानी, दाऊद इब्ने नसर इब्ने नुसैर इब्ने सुलेमान ताई, अबू हामिद लफ़ाफ़, ख़ज़रदी बल्ख़ी, ख़ल्फ़ इब्ने अय्यूब अब्दुल्लाह इब्ने मुबारक वली, फ़क़ीह, मुहद्दिस, वकीअ इब्ने जर्राह, शैख़ुल-इस्लाम अबू बकर इब्ने वराक़ तिर्मिज़ी जैसे सरदाराने औलिया हन्फ़ी हैं, और हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु के दामन से वाबस्ता हैं, ग़र्ज़कि मज़्हबे हन्फ़ी मज़्हबे औलिया है, आज भी तक़रीबन सारे औलिया अल्लाह हन्फ़ी ही हैं, फख़्र पाक व हिन्द हज़रत दातागंज बख़्श हिजवेरी जिनका आस्ताना मरजा ख़लाइक़ है हन्फ़ी थे, आपने अपनी किताब **कशफ़ुल-महजूब** में हज़रत

इमाम आज़म के बड़े फज़ाइल कश्फ़ से बयान फरमाए, इसी तरह तमाम चिश्ती, क़ादरी, नक़्शबन्दी, सहरवरदी मशाइख़ सब हन्फ़ी हैं।

(11) हज़रत इमाम आज़म का मज़्हब हन्फ़ी आलिम में इतना शाए हुआ, इतना फैला कि जहाँ इस्लाम है वहाँ मज़्हबे हन्फ़ी है अक्सर मुसलमान हन्फ़ी हैं। हरमैन तैय्यबैन में अक्सर हन्फ़ी बल्कि दुनिया-ए-इस्लाम के बहुत से ख़ित्ते ऐसे भी हैं जहाँ सिर्फ़ हन्फी मज़्हब ही है दूसरे मज़्हब को अवाम जानते भी नहीं, जैसे बल्ख़, बुख़ारा, काबुल, क़न्धार और तक़रीबन सारा हिन्दुस्तान और पाकिस्तान कि यहाँ शाफई, हंबली, मालिकी देखने में नहीं आते कुछ ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी जो कहीं के नहीं वह देखे जाते हैं मगर यह मुट्ठी भर जमाअत ऐसी गुम है कि इसका न होने की तरह है इस मक़्बूलियत से मालूम होता है कि इमामे आज़म मक़्बूल बारगाहे इलाही हैं और मज़्हबे हन्फ़ी इन्दल्लाह महबूब है।

(12) इमामे आज़म के मुख़ालेफ़ीन ने भी इमामे आज़म के फ़ज़ाइल व मनाक़िब में बहुत अज़ीमुश्शान किताबें लिखीं। चुनांचे अल्लामा इब्ने हजर मक्की ने ख़ैरातुल-हसान फी तरजमा अबी अनीफ़तुल-नौमान लिखी और सिब्त इब्ने जौज़ी ने किताबुल-इन्तिसार लेइमामे अइम्मुतल-अमसार दो जिल्दों में लिखी, इमाम जलालुद्दीन सुयूती शाफ़ई ने तबयीज़ुस्सहीफा फी मनाक़िबे अबी हनीफ़ा लिखी, अल्लामा यूसुफ़ इब्ने अब्दुल-हादी हंबली ने तनवीरुस्सहीफा फ़ी तरजमा अबी हनीफ़ा तहरीर फ़रमाई जिसमें इब्ने अब्दुल्लाह का क़ौल नक़्ल फरमाया वह फरमाते हैं कि मैंने इमाम अबू हनीफ़ा जैसा आलिम, फ़क़ीह, मुत्तक़ी, बेहतरीन न देखा।

ग़र्ज़कि उम्मते मरहूमा हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा कुद्देस सिर्रहू के फ़ज़्ल व कमाल के गवाह हैं, अगर मुट्ठी भर वहाबी उनकी शान में बकवास करें तो क्या ऐतबार, अगर चमगादड़ सूरज को बुरा कहे तो सूरज सियाह नहीं हो जाता, जैसे आज रवाफ़िज़ हज़राते सहाबा पर तअन व तशनीअ करते हैं। ऐसे ही वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिद हज़रात इमाम पर रज़ि अल्लाहु अन्हु।

(13) तमाम अइम्म-ए-मुज्तहेदीन में हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु का ज़माना हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से निहायत क़रीब है, कि आपकी विलादत पाक 80 हिजरी में है आप ताबई हैं, आपने चार सहाबा से मुलाक़ात व रिवायत की जिन्होंने आपकी ताबईयत का इंकार किया महज़ तअस्सुब से किया यह कैसे हो सकता है कि सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने अबी औफ़ा जैसे सहाबी इमामे आज़म के ज़माना में कूफ़ा में हूँ, और हज़रत इमाम उन से न मिलें, आज बुज़ुर्गों से मिलने दुनिया खिंची

आती है। तो सहाबा की शान का क्या पूछना, बहरहाल आप ताबई हैं और आपको सही हदीसें हुज़ूर से मिलीं, ख़ैरुल-कुरून में हुए।

ख़्याल रहे कि इमाम आज़म रहमतुल्लाह अलैह कि विलादत 80 हिजरी में है वफ़ात 150 हिजरी में उमर शरीफ़ 70 साल, मज़ार शरीफ़ बग़दाद में। इमाम मालिक की विलादत 90 हिजरी में वफ़ात 179 हिजरी में, उमर शरीफ़ 89 साल, मज़ार शरीफ़ मदीना मुनव्वरह में, इमाम शाफ़ई की विलादत शरीफ 150 हिजरी में, वफ़ात 204 हिजरी, उमर शरीफ़ 54 साल, आप इमाम आज़म की वफ़ात की दिन पैदा हुए। इमाम अहमद इब्ने हंबल की विलादत शरीफ़ 164 हिजरी में वफ़ात 241 हिजरी में, उमर शरीफ़ 77 साल।

(14) हज़रत इमाम आज़म रज़ि अल्लाहु अन्हु ने अह्ले बैत नुबुव्वत से ख़ास फ़ुयूज़ व बरकात हासिल किए, जो दूसरे अइम्मा को हासिल न हुए, क्योंकि इमाम आज़म हज़रत इमाम जाफर सादिक़ रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु की मज्लिसे पाक में दो साल हाज़िर रहे खुद फरमाते हैं। **लौलस्सनताने लहलकन्नौमानु** अगर वह दो साल न मिलते तो नौमान यानी मैं हलाक हो जाता।

(15) हज़रत इमाम आज़म रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु हज़रत अबू बकर सिद्दीक़ के मज़हरे अतम्म हैं। हज़रत अबू बकर सिद्दीक़ हुज़ूर अलैहिस्सलाम के ख़लीफ़ए अव्वल हैं, और इमामे आज़म हुज़ूर की उम्मत के मुज्तहिदे अव्वल, सिद्दीक़ अक्बर, जामे कुरआन हैं इमाम आज़म जामे मसाइल फ़िक़हीया और क़वाइदे दीनीया हैं हज़रत सिद्दीक़े अक्बर ने हुज़ूर के बाद पहले अदल व इंसाफ के क़वानीन ख़िलाफ़त की बुनियाद रखी, इमाम आज़म ने इज्तिहाद और तफ़क्क़ोह की बुनियाद रखी, अबू बकर सिद्दीक़ ने उम्मते मुस्तफ़वी की बरवक़्त मदद व इआनत की कि उन्हें इख़्तिलाफ़ से बचा लिया, शीराज़ा बिखरने न दिया, इमाम आज़म ने मुसलमानों की इतनी बड़ी मदद की कि उन्हें कुफ़्र व इल्हाद ज़िन्दक़ा की आंधियों से बचा लिया, आज उनके इज्तिहादे इल्मी की बरकत से उम्मते मुस्लेमा कुफ़्फ़ार व मुरतदीन के फ़ित्नों से महफ़ूज़ है।

(16) जैसे हुज़ूर ग़ौसे आज़म तमाम औलिया अल्लाह के सरदार हैं कि सब की गर्दन पर हुज़ूर ग़ौस पाक का क़दम है आप तरीक़त के इमाम अव्वल हैं, किसी ने किया ख़ूब कहा।

ग़ौसे आज़म दरमियाने औलिया
चूं जनाब मुस्तफ़ा दर अंबिया

ऐसे ही इमाम आज़म उलमा के सरदार हैं कि तमाम उलमा शरीअत आपके ज़ेरे साया हैं इसी लिए तरीक़त के इमाम अव्वल का लक़ब गौसे आज़म हुआ और शरीअत के इमाम अव्वल का लकब इमाम आज़म बग़दाद शरीफ़ मज्मा बहरैन है कि दोनों इमाम वहाँ आराम फरमा हैं।

दूसरा मस्अला

तक़्लीद की अहमियत

हमने रब तआला के फ़ज़्ल व करम से जा-अल-हक़ हिस्सा अव्वल में मसला तक़्लीद बहुत तफ़्सील से लिख दिया है जिसका जवाब आज तक वहाबी ग़ैर मुक़ल्लेदीन से न बन सका, अगर शौक़ हो तो वहाँ मुताला फ़रमाएं इस जगह किताब की तक्मील के लिए कुछ बतौर इख़्तिसार तक़्लीद की ज़रूरत, तक़्लीद के फवाइद, तक़्लीद न करने के नुक़्सानात अर्ज़ किए जाते हैं, रब तआला क़बूल फरमाए। आमीन।

ख़्याल रहे कि उम्मते मुहम्मदीया अला साहिबहा अफ़्ज़लुस्सलात व अकमलुत्तहीया में कुछ वह ख़ुश नसीब लोग हैं जिन्हें हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सोहबत मयस्सर हुई और उन्होंने अपनी आंखों से दीदार यार किया वह हज़रात आसमाने नुबुव्वत के तारे सारी उम्मत के हादी व इमाम हैं उनके हक़ में ख़ुद हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बशारत दी।

मेरे सहाबा तारों की तरह हैं तुम उन में से जिसकी पैरवी करोगे हिदायत पाओगे।

रब तआला ने उन्हें अपने हबीब सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सोहबत पाक की बरकत से गुमराही बद अक़ीदगी फ़िस्क़ व फुजूर से महफ़ूज़ व मामून रखा। ख़ुद्दार इरशाद फरमाता है।

रब तआला ने उन सहाबा पर परहेज़गारी का कलिमा लाज़िम फरमा दिया और वह उसके मुस्तहिक़ हैं।

दूसरी जगह सहाब-ए-किराम को मुख़ातब फरमाते हुए इरशाद फरमाता है।

ऐ सहाबाए किराम रब ने कुफ़्र व फ़िस्क़ और गुनाहों से तुम्हारे दिलों में नफ़रत डाल दी।

और तमाम सहाबा से रब ने जन्नती होने का वादा फरमा लिया कि इरशाद फरमाया।

रब ने सारे सहाबा से जन्नत का वादा फरमा लिया।

बल्कि रब तआला ने जमाअते सहाबा को तमाम जहान के ईमान का मेअ्यार बताया कि जिसका ईमान उनकी तरह हो वह मोमिन है जिसका ईमान उनके ख़िलाफ़ हो वह बेदीन है कि फरमाया।

अगर यह लोग तुम्हारे ईमान की तरह ईमान लाएं तो हिदायत पर होंगे।

अगर सहाबाए किराम के फ़ज़ाइल व मरातिब देखना हों तो हमारी किताब हज़रत अमीर मुआविया पर एक नज़र का मुताला करो। बहरहाल हुज़ूर की सोहबत शरीफ़ की बरकत से सहाबाए किराम के दिल रौशन सीने नूरानी थे। वह हज़रात फ़र्श पर कुदसी सिफ़ात के हामिल थे। न उन में दीनी झगड़े थे। न बहुत से फ़िर्क़े न मज़हबी इख़्तिलाफ़ न फ़ितने व फसाद लिहाज़ा उस ख़ैरुल-कुरून को बाक़ायदा तक़्लीद की ज़रूरत न थी वह तमाम जहान के इमाम थे वह किस की तक़्लीद करते।

बाद में मुसलमानों में मज़ाहिब का इख़्तिलाफ़े ख़्यालात का इंतिशार मसाइल की फरावानी फ़लसफ़ा व मंतिक़ का इल्हाक़ पैदा हुआ। तब उलमा-ए-मिल्लत ने कुरआन व हदीस से मसाइल इस्तिंबात फरमाए दीने मुहम्मदी के जुज़्ईयात को आईना की तरह साफ फ़रमा दिया उम्मत ने महसूस किया कि अब तक़्लीदे अइम्मा के बग़ैर चारा नहीं। ग़र्ज़कि बाद के मुसलमान तीन क़िस्म के हो गए, अवाम, उलमा, मुज्तहेदीन, अवाम ने उलमा की पैरवी की और उलमा ने अइम्मा मुज्तहेदीन की तक़्लीद को लाज़िम व ज़रूरी समझा। यह तक़्लीद व इज्तिहाद ज़रूरियाते ज़माना के लिहाज़ से लाज़िम हुई।

इसकी मिसाल यूं समझो कि अव्वलन जब तक ज़रूरत पेश न आई सहाबाए किराम ने कुरआने करीम भी किताबी शक्ल में जमा न फरमाया अह्दे उस्मानी में जब ज़रूरत पड़ी तो कुरआन किताबी शक्ल में जमा हुआ। फिर बहुत अरसा के बाद कुरआन में ज़ेर ज़बर लगाए गए। फिर बहुत अरसा के बाद उस में रुकूअ सिपारे मुरत्तब किए गए किसी सहाबी ने जमाए हदीस और हदीस के अक़्साम व अहकाम बनाने की ज़रूरत महसूस न फरमाई। बुख़ारी मुस्लिम वग़ैरह अह्दे सहाबा के बहुत बाद की किताबें हैं। ग़र्ज़कि दीनी ज़रूरतें बढ़ती गईं। यह चीज़ें बनती गईं, यही हाल अइम्मा की तक़्लीद का है जैसे आज यह नहीं कहा जा सकता कि कुरआन का जमा, ऐराब, सिपारे बनाना, इल्मे हदीस और कुतुबे हदीस बिदअत हैं अह्दे नबवी या अह्दे सहाबा में न थे। ऐसे ही यह भी कहना हिमाक़त है कि तक़्लीदे अइम्मा और इल्मे फ़िक़्ह बिदअत है अह्दे सहाबा में इसका रिवाज न था। आज अगर

जमा शुदह कुरआन और मुस्लिम बुख़ारी ज़रूरी हैं तो इमामों की तक़्लीद भी लाज़िम है। हम इस जगह निहायत इख़्तिसार से तक़्लीद की अहमीयत कुरआन हदीस, अमल उम्मत, अक़्ली दलाइल से साबित करते हैं। सुनिए और ईमान ताज़ा कीजिए, रब फरमाता है।

तरजमा : अगर तुम न जानते हो तो इल्म वालों से पूछो।

इस आयते शरीफ़ा से मालूम हुआ कि दीनी बात में अपनी अटकल न लगाए नावाक़िफ़ को ज़रूरी है कि वाक़िफ़ से पूछे जाहिल आलिम से पूछे, ग़ैर मुज्तहिद आलिम मुज्तहिद उलमा से दरयाफ़्त करें, इसी का नाम तक़्लीद है।

तरजमा : ऐ ईमान वालो अल्लाह की इताअत करो और रसूल की फरमांबरदारी करो और अपने में से अम्र वाले उलमा की।

कुरआने करीम पर अमल अल्लाह की इताअत है, हदीस शरीफ़ पर अमल हुज़ूर की फरमांबरदारी और फ़िक़्ह पर अमल ऊलुल-अम्र की इताअत है। यह तीनों इताअतें ज़रूरी हैं। इमाम राज़ी ने तफ़्सीरे कबीर में फ़रमाया कि यहाँ ऊलुल अम्र से मुराद उलमा-ए-दीन हैं न कि सलातीन। क्योंकि बादशाहों पर उलमा की इताअत बहरहाल ज़रूरी है। मगर उलमा पर बादशाहों की इताअत हर हाल में वाजिब नहीं सिर्फ़ उन ही अहकाम में वाजिब है जो शरीअत के मुवाफ़िक़ हों ऐसे ही अहकाम व सलातीन उलमा से अहकाम हासिल करेंगे।

अव्वल सब्क़त करने वाले मुहाजिरीन और अंसार और वह जिन्होंने उनकी इत्तिबा की, अल्लाह उन से राज़ी हुआ यह अल्लाह से राज़ी।

इस से पता लगा कि अल्लाह तआला मुसलमानों की तीन जमाअतों से राज़ी है। मुहाजिरीन, अंसार और ता-क़्यामत उनकी इत्तिबा व तक़्लीद करने वाले मुसलमान। ग़ैर मुक़ल्लिद इन तीनों जमाअतों से ख़ारिज क्योंकि न तो वह मुहाजिर सहाबी हैं न अंसारी, न उनके मुक़ल्लिद उनके नज़्दीक तक़्लीद शिर्क है।

उसकी राह चलो जो मेरी तरफ़ रुजू लाया।

इस आयत से मालूम हुआ कि हर मुसलमान पर लाज़िम है कि अल्लाह के मक़्बूल बन्दों का रास्ता इख़्तियार करे चारों इमाम ख़ुद भी अल्लाह के मक़्बूल बन्दे हैं और तमाम औलिया उलमा सालेहीन मुमिनीन उनके मुक़ल्लिद लिहाज़ा तक़्लीद मक़्बूलों का रास्ता है ग़ैर मुक़ल्लेदीयत वहाबियत मरदूदों का रास्ता है।

तरजमा : ऐ ईमान वालो अल्लाह से डरो और सच्चों के साथ रहो।

मालूम हुआ कि सिर्फ़ हमारा तक़्वा व परहेज़गारी बख़्शिश के लिए काफी नहीं। परहेज़गारी के साथ अच्छों की संगत भी लाज़िम है वरना रास्ता में डकैती का अन्देशा है चारों इमाम अच्छे हैं और उम्मत के सारे अच्छों ने तक़्लीद की सारे औलिया उलमा मुहद्देसीन मुफ़स्सेरीन मुक़ल्लिद गुज़रे ग़ैर मुक़ल्लिदों में अगर कोई वली गुज़रा हो तो दिखा दो। जिस शाख़ में फल फूल पत्ते न लगें वह चूल्हे के लाइक़ होती है क्योंकि उसका तअल्लुक़ जड़ से टूट चुका है ऐसे ही जिस फ़िर्क़ा में औलिया अल्लाह न हों वह दोज़ख़ के क़ाबिल है क्योंकि उसका तअल्लुक़ हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से टूट चुका है।

तरजमा : हमको हिदायत दे सीधे रास्ता की उनका रास्ता जिन पर तू ने इनाम किया।

इस से मालूम हुआ कि सीधे रास्ते की पहचान यह है कि इस पर औलिया अल्लाह उलमा सालेहीन हों देख लो सारे औलिया सालेहीन मुक़ल्लिद हैं। हुज़ूर ग़ौसे पाक, ख़्वाजा अजमेरी, ख़्वाजा बहाउद्दीन नक़्शबन्द, इमाम तिर्मिज़ी वग़ैरह जैसे पाया के बुज़ुर्ग मुक़ल्लेदीन गुज़रे लिहाज़ा तक़्लीद सीधा जन्नत का रास्ता है और वहाबीयत ग़ैर मुक़ल्लिदीयत टेढ़ा रास्ता जो दोज़ख़ तक पहुँचाएगा।

तरजमा : जो कोई हिदायत ज़ाहिर होने के बाद रसूल की मुख़ालिफ़त करे और मुसलमानों के राह के अलावा दूसरा रास्ता इख़्तियार करे जिधर वह फिरेगा उधर ही फ़ेर देंगे और उसे दोज़ख़ में पहुँचाएंगे।

इस आयत से मालूम हुआ कि जो सज़ा हुज़ूर की मुख़ालिफ़त करने वाले कुफ़्फ़ार की है वही सज़ा उन कलिमा गो बेदीनों की भी है जो मुसलमानों का रास्ता छोड़ कर अपनी डेढ़ ईंट की मस्जिद अलग बनाएं तक़्लीदे आम मुसलमानों का रास्ता है ग़ैर मुक़ल्लिद उन सब से अलाहिदा वह अपना अंजाम सोच लें।

तरजमा : इसी तरह हम ने तुम को दरम्यानी उम्मत बनाया ताकि तुम लोगों पर गवाह हो और नबी तुम्हारे गवाह।

इस आयत से मालूम हुआ कि मुसलमान रब तआला के दुनिया व आख़िर में गवाह हैं। जिस आदमी या जिस रास्ता या जिस मसला को आम मुसलमान अच्छा कहें वाक़ई अच्छा है और जिसको बुरा कहें वह वाक़या में बुरा। आम मुसलमान तक़्लीद को अच्छा कहते हैं। मुक़ल्लिद हैं और ग़ैर

मुक़ल्लिदों को बुरा जानते हैं लिहाज़ा तक़्लीद ही अच्छा रास्ता है और मुक़ल्लेदीन अच्छी जमाअत।

अहादीसे शरीफ़ा

इस बारे में अहादीस बहुत हैं कुछ बतौर नमूना पेश की जाती हैं।

हदीस नम्बर 1 : इब्ने माजा ने हज़रत अनस रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत की।

बड़े गिरोह की पैरवी करो क्योंकि जो मुसलमान की जमाअत से अलग रहा वह दोज़ख़ में अलाहिदा ही जाएगा।

मालूम हुआ कि हर मोमिन को मुसलमानों की बड़ी जमाअत के साथ रहना चाहिए। जमाअत से अलाहिदगी दोज़ख़ में जाने का रास्ता है। आम्मतुल-मुस्लेमीन मुक़ल्लिद हैं ग़ैर मुक़ल्लिद अपना अंजाम सोच लें।

हदीस नम्बर 2 ता 4 : मुस्लिम, तिर्मिज़ी, अहमद ने हज़रत हारसा अश्अरी से रिवायत की।

जो शख़्स बालिश्त बराबर जमाअत से निकल गया उसने इस्लाम का पट्टा अपनी गर्दन से उतार दिया। (मिश्कात क़िताबुल-इमारह)

हदीस नम्बर 5 : मुस्लिम व बुख़ारी ने अबू हुरैरह रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि ईमान मदीना मुनव्वरह की तरफ ऐसा सिमट आएगा जैसे सांप अपने सूराख़ की तरफ।

मालूम हुआ कि मदीना मुनव्वरह **हमेशा से इस्लाम** का मरकज़ है और रहेगा। वहाँ इंशाअल्लाह कभी शिर्क न होगा। अल्हम्दुलिल्लाह कि सारे हिजाज़ ख़ुसूसन मक्का मुअज़्ज़मा व मदीना में सारे मुसलमान मुक़ल्लिद थे और मुक़ल्लिद हैं वहाँ ग़ैर मुक़ल्लिद एक भी नहीं। नज़ीर हुसैन देहलवी, शरीफ़ हुसैन के ज़माना में हरमैन शरीफ़ैन गए ग़ैर मुक़ल्लदीयत की वजह से गिरफ़्तार कर लिए गए। वहाँ तक़य्या करके मुक़ल्लेदीन बन कर जान छुड़ाई फिर हिन्दुस्तान आ कर ग़ैर मुक़ल्लिद बन गए। नज़ीर हुसैन मुक़ल्लिदों के सर गरोह गुज़रे हैं अब अगरचेह वहाँ नज्दियों की सलतनत है मगर नज्दी भी अपने को ग़ैर मुक़ल्लिद कहते हुए डरते हैं अपने को हंबली कहते हैं। अगर तक़्लीद शिर्क होती तो हरमैन तैय्यबैन इस से पाक व साफ़ रहते।

हदीस नम्बर 6 : इमाम अहमद ने हज़रत मआज़ इब्ने जबल रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

फरमाया नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि शैतान इंसान का भेड़िया है जैसे भेड़िया रेवड़ से अलग रहने वाली या किनारा वाली या बिछड़ जाने वाली का शिकार करता है ऐसे ही शैतान जमाअते मुस्लेमीन से अलग रहने वाले का शिकार करता है। तुम घाटियों से बचो जमाअत और आम्मतुल-मुस्लेमीन के साथ रहो।

(7) मेरी उम्मत गुमराही पर कभी मुत्तफ़िक़ न होगी। जमाअत पर अल्लाह की रहमत है। जो जमाअत से अलग रहा वह दोज़ख़ में अलग हो कर जाएगा।

इन अहादीस से मालूम हुआ कि मुसलमान के नजात की सिर्फ़ यह सूरत है कि अपने अक़ाइद आम्मतुल-मुस्लेमीन के से रखे जो जमाअत मुस्लेमीन से अलग रहा शैतान के शिकार में आ गया। आम जमाअत मुस्लेमीन मुक़ल्लिद है। लिहाज़ा गै़र मुक़ल्लिद रहना जमाअत मुस्लेमीन से अलाहिदगी है।

अमल मुस्लेमीन : हमेशा से हर तबक़ा के मुसलमान मुक़ल्लिद हुए मुहद्देसीन, मुफ़स्सेरीन, फ़ुक़हा, औलिया अल्लाह इन में से कोई गै़र मुक़ल्लिद वहाबी नहीं। चुनांचे इमाम क़स्तलानी और ताजुद्दीन सुबकी ने साफ़ इमाम नुववी ने इशारतन फ़रमाया कि इमाम बुख़ारी शाफ़ई हैं। तिर्मिज़ी, अबू दाऊद, निसाई, दार कुतनी वग़ैरह तमाम मुहद्देसीन शाफ़ई हैं तहावी व इमाम ज़ैलई, ऐनी शारेह बुख़ारी, तैबी, अली क़ारी, अब्दुल-हक़ मुहद्दिस देहलवी वग़ैरहुम तमाम मुहद्देसीन हन्फ़ी हैं।

तफ़्सीरे कबीर, तफ़्सीरे ख़ाज़िन, बैज़ावी, जलालैन, तनवीरुल-मिक़्यास वाले सारे मुफ़स्सेरीन शाफ़ई हैं। तफ़्सीर मदारिक, तफ़्सीरं सावी सारे मुफ़स्सेरीन हन्फ़ी, फ़ुक़हा और औलिया अल्लाह सारे के सारे मुक़ल्लिद हैं। और आम औलिया अल्लाह हन्फ़ी हैं। जैसे कि हम पहले बयान कर चुके हैं। गै़र मुक़ल्लिद वहाबी सोचें कि उन में कितने मुहद्दिस, कितने मुफ़स्सिर, कितने फ़ुक़हा, कितने औलिया है। उनकी जड़ किस ज़मीन पर क़ायम है और वह किस दरख़्त की शाख़ या किस शाख़ का फल हैं।

अक़्ल का तक़ाज़ा भी यह है कि तक़्लीद बहुत ज़रूरी है फ़रीज़ा है और गै़र मुक़ल्लदीयत नज्दीयत ज़हरे क़ातिल है। ईमान के लिए सख़्त ख़तरनाक है। चन्द वजूह से। एक यह कि कुरआन व हदीस मसाइल निकालने के लिए आसान नहीं इन से मसाइल का इस्तिंबात सख़्त दुश्वार है इसी लिए रब तआला ने कुरआन सिखाने के लिए इतने बड़े रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को भेजा अगर इसे समझने के लिए सिर्फ़ अक़्ले इंसानी काफी होती

तो इसकी तालीम के लिए हुज़ूर सैयदुल-अंबिया न भेजे जाते। फरमाता है।
वह रसूल मुसलमानों को कुरआन व हिकमत सिखाते हैं।

जैसे कुरआन समझाने के लिए हुज़ूर भेजे गए ऐसे ही हदीस समझाने के लिए अइम्मा मुज्तहेदीन पैदा फरमाए गए जो लोग आज तक़लीद से मुँह फेरे हुए हैं वह कुरआन व हदीस में ऐसी ठोकरें खाते हैं कि ख़ुदा की पनाह। मैंने बड़े बड़े ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों को बारहा ऐलान किया कि हदीस समझना तो क्या तुम सिर्फ़ यही बता दो कि हदीस और सुन्नत में फ़र्क़ क्या है। हदीस किसे कहते हैं। और सुन्नत किसे। तुम अपने को अहले हदीस कहते हो, हम अह्ले सुन्नत हैं बताओ तुम में हम में क्या फर्क़ है? मगर यह फर्क़ हदीस से साबित किया जाए।

आज तक न बता सके और इंशाअल्लाह क़्यामत तक न बता सकेंगे। हमारा ऐलान आम है कि आज भी कोई वहाबी साहब तक्लीफ करके जवाब दें। हदीस समझना उस से मसाइल निकालना तो इन बेचारों को निस्बत ही क्या सिर्फ़ रफ़ा यदैन और आमीन बिल-ज़ेहर की चार हदीसें बे समझे रट लीं और अह्ले हदीस बन गए। हदीस समझना तो ख़ुदा के फ़ज़्ल से मुक़ल्लिदों का ही काम है। अगर फहमे हदीस का लुत्फ़ उठाना है तो हमारे हाशिया बुख़ारी अरबी यानी नईमुल-बारी का मुताला फरमाओ जिसमें बेफ़ज़्लेही तआला एक एक हदीस से आठ आठ दस दस मसाइल का इस्तिंबात किया है कि ईमान ताज़ा हो जाता है बतौर मिसाल एक आम मशहूर मुख़्तसर सी हदीस पेश करता हूं।

उहुद पहाड़ हम से मुहब्बत करता है हम उस से मुहब्बत करते हैं हम ने हस्बे ज़ैल मसाइल शरीअत व तरीक़त के मुस्तंबित किए।

(1) हुज़ूर की महबूबियत सिर्फ़ इंसानों से ख़ास नहीं बेअक़्ल जानवर, बेजान लकड़ी, पत्थर भी हुज़ूर के चाहने वाले हैं। हुस्ने यूसुफ़ लाखों ने देखा। मगर आशिक़ सिर्फ़ ज़ुलेख़ा। हुस्ने मुहम्मदी आज तक किसी ने न देखा मगर आशिक़ करोड़ों। हुज़ूर सारी मख़्लूक़ के महबूब हैं। क्यों न हों कि ख़ालिक़ के महबूब हैं।

(2) जिस इंसान को हुज़ूर से मुहब्बत न हो वह वह पत्थरों से ज़्यादा सख़्त और जानवरों से भी गया गुज़रा है।

(3) जब हुज़ूर पत्थर के दिल का हाल जानते हैं कि फरमाते हैं उहद हम से मुहब्बत करता है तो इंसानों के दिल के राज़ क्यों न जानें उन से कोई ग़ैब छुपा नहीं।

(4) हुज़ूर की बारगाह में इश्क़ व मुहब्बत और दिली कैफ़ियत ज़ुबान से

कहने की ज़रूरत नहीं वह दिल की गहराइयों को जानते हैं। उहद ने मुँह से कुछ न कहा। मगर उसके दिल का हाल हुज़ूर पर रौशन था। अगर हुज़ूर इंसानों के दिली हालात न जानें तो कल क़यामत में शफ़ाअत कैसे करेंगे जो भी हुज़ूर से शफ़ाअत की दरख़्वास्त करे तो हुज़ूर फरमाएं कि मुझे ख़बर नहीं तू मोमिन था या काफिर शफ़ाअत कैसे करूं क्योंकि बाज़ वह भी होंगे जो बग़ैर वज़ू किए फौत हुए।

(5) तमाम इबादतों का बदला जन्नत है मगर मुहब्बते मुस्तफ़्वी का नतीजा मुहब्बत है कि फरमाया उहुद हम से मुहब्बत करता है हम उस से मुहब्बत करते हैं। लिहाज़ा इश्क़े रसूल तमाम इबादात से आला है कि इसका बदला जन्नत वाला महबूब है।

बुख़ारी शरीफ़ की एक और हदीस सुनो और इस से ईमानी व इरफ़ानी मसाइल का इस्तिंबात मुलाहिज़ा करो ईमान ताज़ा करो।

हदीस : हुज़ूर दराज़ गोश पर सवार जा रहे हैं सामने दो क़बरें नमूदार हुईं दराज़ गोश दो पाँव से खड़ा हो गया। हुज़ूर उतर पड़े और फरमाया कि इन क़ब्र वालों पर अज़ाब हो रहा है जिसे देख कर ख़च्चर घबरा गया। उन में से एक तो ऊंटों का चरवाहा था जो ऊंटों के पेशाब की छींटों से परहेज़ न करता था। दूसरा चुग़लख़ोर था इसलिए अज़ाबे क़ब्र में गिरफ़्तार हुए। यह फरमा कर खुजूर की शाख़ की दो चीरें फ़रमा कर दोनों क़बरों पर गाड़ दीं और फरमाया कि जब तक यह तर है अज़ाबे क़ब्र में तख़्फ़ीफ़ होगी।

फ़वाइद : इस हदीस से चन्द फ़वाइद हासिल हुए।

(1) हुज़ूर की चश्मे मुबारक के लिए कोई चीज़ आड़ नहीं। आप पसे पर्दा भी देखते हैं। देखो अज़ाब हज़ारों मन मिट्टी के नीचे यानी क़ब्र के अन्दर हो रहा है। मगर निगाहे पाक मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम क़ब्र के ऊपर से मुलाहिज़ा फरमा रही है।

(2) जिस जानवर पर हुज़ूर सवार हो जाएं उस जानवर की आंख से भी हिजाब उठा दिए जाते हैं कि ख़च्चर ने हुज़ूर की बरकत से क़ब्र का अज़ाब देख लिया और भड़क गया। वरना हमारे ख़च्चर दिन रात क़ब्रिस्तान से गुज़रते हैं नहीं भड़कते। लिहाज़ा अगर हुज़ूर किसी वली पर नज़र करम फरमाएं तो उसकी निगाह से भी ग़ैबी हिजाब उठ जाएंगे।

(3) हुज़ूर हर शख़्स के ज़ाहिर व ख़ुफ़िया अगले पिछले तमाम आमाल जानते हैं कि फरमा दिया कि एक चुग़ल ख़ोर था। दूसरा पेशाब से परहेज़ न करता था हालांकि उन दोनों ने यह आमाल हुज़ूर के सामने न किए थे। लिहाज़ा हुज़ूर हमारे हर अमल से ख़बरदार हैं।

(4) हुज़ूर अज़ाबे इलाही से बचाना अज़ाब दूर कराना भी जानते हैं। गोया रूहानी बीमारियों और उनके इलाज से ख़बरदार हैं कि उन क़ब्र वालों का अज़ाब दफ़ा करने के लिए तर शाख़ें क़ब्रों पर गाड़ कर फरमाया कि इस से अज़ाब हल्का होगा।

(5) तर सब्ज़ा की तस्बीह की बरकत से मोमिन का अज़ाबे क़ब्र हल्का होता है लिहाज़ा अगर क़ब्र पर तिलावते कुरआन या ज़िक्रुल्लाह किया जाए तो मैयत को फाइदा ज़रूर होगा। क्योंकि मोमिन की तस्बीह व तहलील सब्ज़ा की तस्बीह व तहलील से आला है।

(6) अगरचे ख़ुश्क चीज़ें भी तस्बीह पढ़ती हैं **व इन मिन शैइन इल्ला युसब्बेहु बेहम्देही** मगर उनकी तस्बीह से अज़ाबे क़ब्र दफ़ा नहीं होता। ज़िक्र की तासीर के लिए ज़ुबान भी तासीर वाली चाहिए लिहाज़ा वहाबी वग़ैरह ख़ुशकों की तिलावते कुरआन वग़ैरह बे फाइदा है। मोमिन जिस के दिल में मुहब्बते मुस्तफ़ा की तरी व सब्ज़ी है उसका ज़िक्र तासीर वाला है।

(7) मोमिन की क़ब्र पर सब्ज़ा, फूल वग़ैरह डालना मुफ़ीद है कि उस से क़ब्र वाले को फाइदा है। हुज़ूर ने सब्ज़ शाख़ क़ब्र से लगाई और फरमाया कि जब तक यह तर रहेगी तब तक अज़ाब में तख़्फ़ीफ़ होगी।

(8) हलाल जानवर का पेशाब नापाक है इस से परहेज़ ज़रूरी है। उसकी छींटें अज़ाबे क़ब्र का बाइस है देखो ऊंट हलाल है मगर इसकी छींटें अज़ाबे क़ब्र का बाइस हुई।

यहाँ तक तो हमने आपको हाशिया बुख़ारी की कुछ सैर कराई। अब हमारे हाशिया अल-कुरआन की भी कुछ सैर कर लो। सिर्फ़ एक आयत के फवाइद अर्ज़ करता हूँ।

तरज़मा : जिन्नात को हज़रत सुलेमान की वफात न बताई मगर ज़मीन की दीमक ने जो आपका असा खाती थी।

हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम की वफ़ात बहालत नमाज़ हुई बैतुल-मुक़द्दस की तामीर हो रही थी आप इसी तरह लकड़ी के सहारे खड़े रहे छः माह के बाद दीमक ने लाठी खा ली। लाठी गिरने की वजह से आपका जिस्म शरीफ़ ज़मीन पर आ रहा। तब जिन्नात जो बैतुल-मुक़द्दस की तामीर कर रहे थे काम छोड़ कर भाग गए।

फ़ाइदे : इस आयत और वाक़या से चन्द फाइदे हासिल हुए।

(1) अंबियाए किराम के अज्साम वफ़ात के बाद गलने या बिगड़ने से महफ़ूज़ हैं कि हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम का जिस्म शरीफ़ छः माह तक क़ाइम रहा। मगर कोई फ़र्क़ न आया।

(2) अंबियाए किराम के अज्सामे शरीफ़ा को कीड़ा नहीं खा सकता। देखो दीमक ने हज़रत सुलेमान की लाठी खाई पाँव शरीफ़ न खाया लिहाज़ा याक़ूब अलैहिस्सलाम को यक़ीन था कि यूसुफ़ को भेड़िए ने न खाया यह फ़रज़न्द ग़लत कह रहे हैं।

(3) पैग़म्बर का कफ़न भी गलने मैला होने से महफ़ूज़ है। देखो हज़रत सुलेमान का लिबास शरीफ़, उन छः माह में न गला न मैला हुआ वरना जिन्नात को आपकी वफ़ात का पता चल जाता।

(4) अंबिया किराम बाद वफ़ात भी दुनियावी व दीनी हाजतें पूरी करते हैं। देखो हज़रत सुलेमान ने बाद वफ़ात मस्जिद बैतुल-मुक़द्दस की तक्मील करा दी।

(5) दीनी ज़रूरत की वजह से पैग़म्बर के दफ़न व कफ़न में देर लगा देना सुन्नते इलाहिया है। देखो रब तआला ने तक्मील मस्जिद के लिए हज़रत सुलेमान को बाद वफ़ात छः माह तक बग़ैर कफ़न दफ़न रखा लिहाज़ा सहाबा किराम का तक्मील ख़िलाफ़त के लिए हुज़ूर के कफ़न व दफ़न में ताख़ीर करना बिल्कुल सही था। क्योंकि तक्मील ख़िलाफ़त तक्मील मस्जिद से कहीं ज़्यादा अहम है।

(6) हार्ट फ़ेल यानी अचानक मौत अल्लाह के नेक बन्दों के लिए एताब नहीं बल्कि रहमत है देखो हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम की वफ़ात अचानक हुई मगर रहमत थी हाँ ग़ाफ़िल के लिए अज़ाब है कि उसे तौबा का वक़्त नहीं मिलता। लिहाज़ा हदीस शरीफ़ वाज़ेह है।

वहाबियो! बोलो आज तक कुरआन व हदीस के ऐसे ईमान अफ़रोज़ आरिफ़ाना मसाइल किसी वहाबी साहब के ज़हन शरीफ़ में भी आए। यह नेअमत तो अल्लाह तआला ने मुक़ल्लिदों को ही बख़्शी है। तुम ने सिर्फ़ ग़लत सलत तरजमे करना ही सीखे हैं।

हनफ़ी भाईयो! अगर तुम्हें इस जैसे सैकड़ों आरिफ़ाना, आशिक़ाना ईमानी मसाइल देखने का शौक़ हो तो हमारा **हाशियतुल-कुरआन** उर्दू और हाशियाए बुख़ारी अरबी का मुताला करो।

दूसरे यह कि कुरआन व हदीस तिब्बे ईमानी की दवाएं हैं। जब तिब्बे यूनानी की दवाएं हर शख़्स अपनी राय से नहीं कर सकता। अगर करेगा तो जान से हाथ धोएगा ऐसे ही कुरआन व हदीस से हर शख़्स मसला नहीं निकाल सकता। अगर निकालेगा तो वहाबियों की तरह ईमान से हाथ धोएगा।

तीसरे यह कि कुरआन व हदीस समुन्द्र हैं। जैसे समुन्द्र से हर शख़्स

मोती नहीं निकाल सकता ऐसे ही कुरआन व हदीस से हर शख़्स मसले नहीं निकाल सकता। तुम्हें मोती समुन्द्र से न मिलेंगे बल्कि जौहरी की दुकान से। ऐसे ही तुम्हें मसाइल कुरआन व हदीस से न मिलेंगे बल्कि इमाम अबू हनीफ़ा व शाफ़ई वग़ैरह रज़ि अल्लाहु अन्हुम की दुकानों से मिलेंगे।

चौथे यह कि दुनिया में हर शख़्स किसी पेशवा का मुक़ल्लिद होता है। खाना पकाना, कपड़ा सीना पहनना, ग़र्ज़कि दुनिया का कोई काम ऐसा नहीं जिस में उसके माहिरों की तक़्लीद न की जाए। दीन तो दुनिया से कहीं अहम है अगर इस में हर शख़्स बे नकीले ऊंट की तरह बेक़ैद हो कर जिसका जिस तरफ मुँह उठा उधर चल दिया तो दीन तबाह हो जाएगा। ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबियों को चाहिए कि पाँव में टोपी, सर पर जूता, टांगों में कुरता और कन्धे पर पाइजामा पहना करें। क्योंकि आम लोगों की तरह लिबास पहनने में तक़्लीद है यह हैं ग़ैर मुक़ल्लिद। यह क्या बात है कि आप हर काम में हर तरह तो मुक़ल्लिद और सिर्फ़ तीन चार मसला क़िराअत ख़ल्फ़ुल-इमाम, रफ़ा यदैन वग़ैरह में। ग़ैर मुक़ल्लिद अगर ग़ैर मुक़ल्लिद हो तो पूरे बनो हर काम अनोखा करो। हर बात निराली कहो।

पाँचवें यह कि बज़ाहिर अहादीस में इतना टकराव मालूम होता है कि ख़ुदा की पनाह, एक मसला के मुतअल्लिक़ जब अहादीस देखी जाएं तो चक्कर आ जाता है अगर तक़्लीद न की जाए सिर्फ़ हदीसें देखी जाएं तो हैरानी होती है कि या अल्लाह क्या करें किधर जाएं कोई वहाबी साहब दो रकाअत नमाज़ ऐसी पढ़ कर दिखा दें जिस में सारी हदीसों पर अमल हो एक एक मसला पर दस दस क़िस्म की रिवायतें मौजूद हैं। हुज़ूर वित्र में एक रकाअत पढ़ते थे, तीन पढ़ते थे, पाँच पढ़ते थे, सात पढ़ते थे, नौ, ग्यारह, तेरह रकाअतें पढ़ते थे। अब ग़ैर मुक़ल्लिद ऐसी वित्र पढ़ कर दिखा दें कि सब हदीसों पर अमल हो जाए एक वहाबी साहब ने आमीन बिल-जेहर की एक हदीस पढ़ी मैंने आमीन बिल-इख़फ़ा की पाँच पढ़ दीं। बेचारे मुँह तक्ते रह गए। यह काम मुज्तहिद का है कि देखे कौन हदीस नासिख़ है कौन मन्सूख़ कौन हदीस ज़ाहिरी मानी पर है कौन वाजिबुत्तावील। हदीस पर वह अमल करे जो मिज़ाज शनासे रसूल हो। और राज़ दार पैग़म्बर यह मिज़ाज शनासी। राज़ दारी हर ऐरे ग़ैरे का काम नहीं।

वहाबी और हदीस

ग़ैर मुक़ल्लिदों का असली नाम वहाबी है लक़ब नज्दी क्योंकि इनका मूरिसे आला मुहम्मद इब्ने अब्दुल-वहाब है जो नज्द का रहने वाला था। अगर इन्हें मूरिसे आला की तरफ़ निस्बत किया जाए तो वहाबी कहा जाता है और

अगर जाए पैदाइश की तरफ निस्बत दी जाए तो नज्दी जैसे मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादयानी की उम्मत को मिर्ज़ाई भी कहते हैं और क़ादयानी भी पहली निस्बत मूरिस की तरफ है। दूसरी निस्बत जाए पैदाइश की तरफ तमाम इस्लामी फ़िर्क़ों में ज़्यादा ख़तरनाक वहाबी फ़िर्क़ा है। जिसकी पेशीन गोई खुद हुज़ूर अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने की थी। कि नज्द के मुतल्लिक़ इरशाद फरमाया था।

तरजमा : नज्द में ज़लज़ले और फितने होंगे और वहाँ से एक शैतानी फ़िर्क़ा निकलेगा।

ग़र्ज़कि इस फ़िर्क़े का जनने वाला मुहम्मद इब्ने अब्दुल-वहाब नज्दी है और इसका हिन्दुस्तान में परवरिश करने वाला इस्माईल-देहलवी है। इस फ़िर्क़ा के हालात हमारी किताब जा-अल-हक़ हिस्सा अव्वल में मुलाहिज़ा फरमाओ। यह फ़िर्क़ा आम मुसलमानों को मुश्रिक और सिर्फ़ अपनी जमाअत को मुवह्हिद कहता है। मुक़ल्लिदों का जानी दुश्मन और अइम्मा अरबा हज़रत इमाम आज़म अबू हनीफा, इमाम शाफई, इमाम मालिक, इमाम अहमद बिन हंबल रज़ि अल्लाहु अन्हुम अजमईन की शाने अक़्दस में ऐसे तबर्रे करते हैं जैसे शीआ सहाबाए किराम की शान में।

मगर अपने ऐब छुपाने के लिए अपने को अह्ले हदीस या आमिल बिल-हदीस कहते हैं यह लोग पहले तो अपने को फख़्रिया तौर पर वहाबी कहते थे। चुनांचे उनकी बहुत कुतुब के नाम तोहफा वहाबिया वग़ैरह हैं। मगर अब वहाबी के नाम से चिड़ते हैं इनके अक़ाइद व आमाल निहायत ही गन्दे इस्लाम और मुसलमानों के दामन पर बद नुमा दाग़ हैं। हम यहाँ अह्ले हदीस नाम पर मुख़्तसर सा तब्सेरा करते हैं। ताकि मालूम हो कि इनका नाम भी झूठा है। मुसलमानों से उम्मीदे इंसाफ़ है और अल्लाह तआला और उसके महबूब सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से उम्मीदे क़बूल है।

ख़्याल रहे कि दुनिया में कोई अह्ले हदीस या आमिल बिल-हदीस हो सकता ही नहीं किसी का अह्ले हदीस या आमिल बिल-हदीस होना ऐसा ही नामुमकिन है जैसे दो नक़ीज़ें या दो ज़िदें जमा होना ग़ैर मुम्किन क्योंकि हदीस के लुग़वी मानी हैं बात गुफ़्तगू या कलाम। रब फरमाता है।

तरजमा : कुरआन के बाद कौन सी बात पर ईमान लाएंगे।

अल्लाह तआला ने सब से अच्छा कलाम नाज़िल फरमाया।

कुछ लोग वह हैं जो खेल की बातें व नाविल क़िस्से ख़रीदते हैं ताकि अल्लाह की राह से बहकाएं।

इस तीसरी आयत में नाविल क़िस्से कहानियों को हदीस फरमाया गया है।

इस्तिलाहे शरीअत में हदीस उस क़लाम व इबारत का नाम है जिस में हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अक़्वाल या आमाल इसी तरह सहाबाए किराम के अक़्वाल व आमाल बयान किए जाएं इस आमिल बिल-हदीस फ़िर्क़े से सवाल है कि तुम कौन सी हदीस पर आमिल हो लुग़वी पर या इस्तेलाही पर अगर लुग़वी हदीस पर आमिल हो तो चाहिए कि हर नाविल गो क़िस्सा ख़्वाँ अह्ले हदीस हो कि वह हदीस यानी बातें करता है हर सच्ची झूठी बात पर अमल करता है। अगर इस्तेलाही हदीस पर आमिल हो तो फिर सवाल यह होगा कि हर हदीस पर आमिल हो या कुछ पर दोम तो ग़लत है क्योंकि हुज़ूर के किसी न किसी फ़रमान पर हर शख़्स ही आमिल है। हुज़ूर फरमाते हैं कि सच नजात देता है झूठ हलाक करता है। हर मुश्रिक व काफिर इसका क़ाइल है वह सब ही अह्ले हदीस हो गए। तुम हन्फ़ी, शाफ़ई, मालकी, हंबली मुसलमानों को अह्ले हदीस क्यों नहीं मानते यह तो हज़ारहा हदीसों पर अमल करते हैं। और अगर अह्ले हदीस के मानी हैं, हुज़ूर की सारी हदीसों पर अमल करने वाले तो यह ना मुमकिन है क्योंकि हुज़ूर की बाज़ हदीसें मन्सूख़ हैं, कुछ नासिख़ बाज़ हदीसों में हुज़ूर के वह ख़ुसूसी आमाल शरीफ़ बयान हुए जो हुज़ूर के लिए मुबाह या फर्ज़ थे। हमारे लिए हराम हैं। जैसे मिंबर पर नमाज़ पढ़ना, ऊँट पर तवाफ़ फ़रमाना, हज़रत हुसैन सैय्युदश्शुहदा ख़ातमे आले अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु के लिए सज्दा लंबा फ़रमाना। हज़रत उमामा बिन्ते अबी अल-आस को कन्धे पर ले कर नमाज़ पढ़ाना, नौ बीवियाँ निकाह में रखना, बग़ैर महर निकाह होना, अज़्वाज में अद्ल वाजिब न होना बल्कि हदीस से साबित है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम कलिमा यूँ पढ़ते थे **ला इलाहा इल्लल्लाहु व इन्नी रसूलुल्लाहे** अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और मैं अल्लाह का रसूल हूँ। ग़ैर मुक़ल्लिद इसी हदीस पर अमल करके इस तरह कलिमा का विर्द करें अगर मिर्ज़ा क़ादयानी की तरह तमाम दुनिया उनकी तवाज़ो लानत से न करे तो हमारा ज़िम्मा। ग़र्ज़कि हदीस पर हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ऐसे अक़्वाल व आमाल भी ज़िक्र हैं जो हुज़ूर के लिए कमाल हैं हमारे लिए कुफ़्र।

इसी तरह हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के वह अफ़आले करीमा जो निस्यान या इज्तिहादी ख़ता से सरज़द हुए। हदीस में मज़्कूरा हैं आमिल बिल-हदीस साहिबान को चाहिए कि उन पर भी अमल किया करें ताकि हर हदीस पर आमिल हो लें। **बहरहाल कोई शख़्स हर हदीस पर अमल नहीं कर सकता जो इस मानी से अपने को अह्ले हदीस या आमिल बिल-हदीस कहे**

वह झूठा है जब नाम ही झूठ है तो अल्लाह के फ़ज़्ल से काम भी सारे खोटे ही होंगे। इसीलिए हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फरमाया।

तरजमा : लाज़िम पकड़ो मेरी और ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत को।

यह न फरमाया कि मेरी हदीस को लाज़िम पकड़ो क्योंकि हर हदीस लाइक़े अमल नहीं हर सुन्नत लाइक़े अमल है हुज़ूर के वह आमाले तैय्यबा जो मन्सूख़ भी न हुए हों हुज़ूर से ख़ास भी न हों ख़तअन निस्यानन भी सरज़द न हों बल्कि उम्मत के लिए लाइक़े अमल हों उन्हें सुन्नत कहा जाता है। लिहाज़ा हमारा नाम अह्ले सुन्नत बिल्कुल हक़ व दुरुस्त है कि हम बफ़ज़्लेही तआला हुज़ूर की हर सुन्नत पर आमिल हैं मगर वहाबियों का नाम अह्ले हदीस बिल्कुल ग़लत है कि हर हदीस पर अमल नामुम्किन।

अब हदीसों की यह छांट कि कौन सी हदीस मन्सूख़ है कौन मुहकम कौन हदीस हुज़ूर की ख़साइस में से है। कौन सबकी इत्तिबा के लिए क़ौन फेअ्ले इक़्तिदा के लिए है कौन नहीं। किस फरमान का क्या मंशा है। किस हदीस से क्या मसला सराहतन साबित है और कौन सा मसला इशारतन कौन दलालतन कौन इक़्तिज़ा यह सब कुछ इमाम मुज्तहिद ही बता सकते हैं। हम जैसे अवाम वहाँ तक नहीं पहुँच सकते जैसे कुरआन पर अमल कराना हदीस का काम है। ऐसे ही हदीस पर अमल कराना इमामे मुज्तहिद का काम। यूं समझो कि हदीस शरीफ़ रब तक पहुँचने का रास्ता है और इमाम मुज्तहिद उस रास्ता का नूर जैसे बग़ैर रौशनी राह तय नहीं होती बग़ैर इमाम व मुज्तहिद हुज़ूर की सुन्नतों पर अमल ना मुम्किन है। इसी लिए उलमा फरमाते हैं।

तरजमा : बग़ैर मुज्तहिद कुरआन व हदीस गुमराही का बाइस हैं।

रब तआला कुरआने करीम के मुतअल्लिक़ फरमाता है।

तरजमा : अल्लाह तआला कुरआन के ज़रिया बहुत को गुमराह कर देता है और बहुत को हिदायत देता है।

चकड़ालवी इसी लिए गुमराह हैं कि वह कुरआन शरीफ़ बग़ैर हदीस के नूर के समझना चाहते हैं बराहे रास्त रब तक पहुँचते हैं वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिद इसलिए राह से भटके हैं कि यह हदीस को बग़ैर इल्म की रौशनी और बग़ैर इमामे मुज्तहिद के नूर के समझना चाहते हैं। बराहे रास्त रब तक पहुँचते हैं वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिद इसलिए राह से भटके हैं कि यह हदीस को बग़ैर इल्म की रौशनी और बग़ैर इमाम मुज्तहिद के नूर के समझना चाहते हैं।

मुक़ल्लेदीन अह्ले सुन्नत का इंशाअल्लाह बेड़ा पार है कि उनके पास किताबुल्लाह भी है सुन्नते रसूलुल्लाह भी और सिराजे उम्मत इमामे मुज्तहिद का नूर भी।

ख़ुलासा कलाम यह है कि अह्ले हदीस बनना नामुम्किन और झूठ है। अह्ले सुन्नत बनना हक़ व दुरुस्त है। अह्ले सुन्नत वही हो सकेगा जो किसी इमाम का मुक़ल्लिद होगा। क़्यामत में रब तआला भी अपने बन्दों को इमामों के साथ पुकारेगा। रब फरमाता है।

तरजमा : उस दिन हम हर शख़्स को उसके इमाम के साथ बुलाएंगे।

ख़्याल रखो कि कुरआन व सुन्नत का समुन्द्र हम मुक़ल्लिद भी उबूर करते हैं। और ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी भी लेकिन हम तक़्लीद के जहाज़ के ज़रिया जिसके नाख़ुदा हज़रत इमाम आज़म अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु हैं उनकी ज़िम्मेदारी पर यह सफर कर रहे हैं। ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी ख़ुद अपनी ज़िम्मेदारी पर उस समुन्द्र में छलांग लगा रहे हैं इंशाअल्लाह मुक़ल्लिदों का बेड़ा पार है और वहाबियों का अंजाम ग़रक़ाबी है।

ख़ुदा का शुक्र है कि यह किताब यकुम रमज़ान 1376 हिज़री अप्रैल 1957 ई० रोज़ दो शंबा को हो कर 2 ज़िल–हिज्जा 1376 हिजरी यकुम जुलाई 1957 ई० बरोज़ दो शंबा यानी 3 माह दो दिन में इख़्तिताम को पहुँची। रब तआला अपने हबीब सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सदक़ा में इसे क़बूल फरमाए। मेरे लिए कफ़्फ़ार-ए-सैय्यात और सदक़ा जारिया बनाए मुसलमानों के लिए इसे नाफ़े बनाए। जो कोई इस किताब से फ़ाइदा उठाए वह मुझको बेकस गुनाहगार के लिए हुस्ने ख़ातमा और माफी सैय्येआत की दुआ करे कि इसी लालच में मैंने यह मेहनत की है।

व सल्लल्लाहु तआला अला ख़ैरे ख़ल्क़ेही व नूरे अरशेही सैय्यिदना मुहम्मदिन व आलेही व सहबेही अज्मईन आमीन बिरहमतेका या अरहमर्राहेमीन।

अहमद यार ख़ां नईमी अशरफ़ी बदायूंनी

2 ज़िल–हिज्जा 1376 हिजरी यौमे दो शंबा मुबारका

/मुताबिक़ यकुम जुलाई 1957 ई०
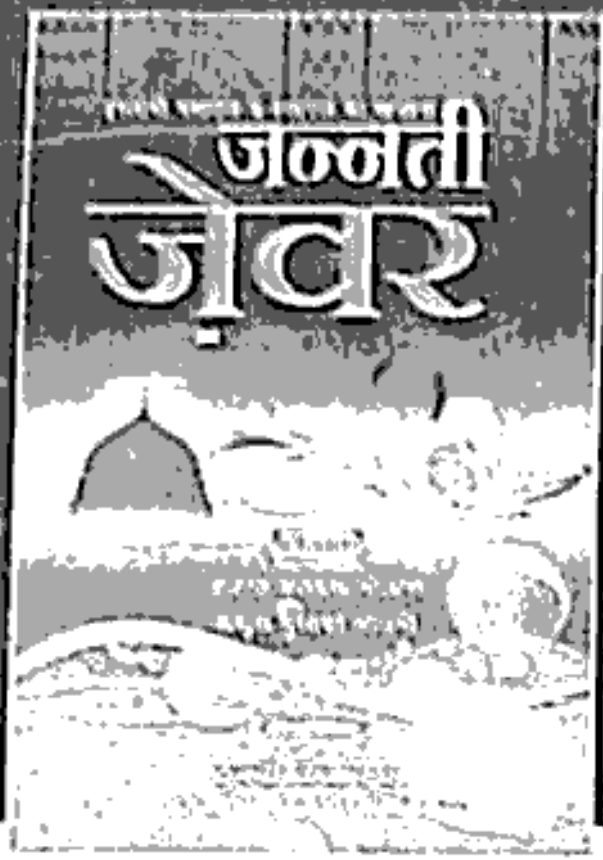
RAZAVI KITAB GHAR
423, Matia Mahal, Jama Masjid, Delhi-06, Ph.: 011-23264524
Mob.: 9350505879, E-mail : razavikitabghar@gmail.com